Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

1·5 v

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी वाला
आयुर्वेद एवं धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधि-अलंकृत

शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति,
बिरलाग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

तिथी 1202/9
पु०सं० 1202/9
भारती पुस्तकालय

राजस्थान राज्य-सरकार (शिक्षा विभाग) द्वारा मान्यता प्राप्त 'शिव-तत्त्व-दर्शन' तथा 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ लेखक—

वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी वाला

प्राक्कथन लेखक—

डॉ. ब्रजेन्द्र नाथ शर्मा, एम.ए., पी-एच. डी., डी. लिट्., एफ. आर. ए. एस. (लन्दन), भारतीय प्राचीन इतिहास, संस्कृत, कला, लिपि विशेषज्ञ, अध्यक्ष (पुरातत्त्व विभाग) राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली

१९८०

प्रकाशक—

शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति,

बिरलाग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

(क) लेखकाधीन—

लेखक—वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री, खेतड़ी वाला
आयुर्वेद एवं धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधि-अलंकृत

प्रथम संस्करण : १९८०

मूल्य : साठ रुपया

प्रकाशक—शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति
बिरलाग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश

मुद्रक—अर्चना प्रकाशन, अजमेर (राजस्थान)

पुस्तक प्राप्ति स्थान

पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री,
मेहतवास,
विरला ग्राम (नागदा), म० प्र०

ओम प्रकाश शर्मा,
६६/११ ग्रेसिम स्टाफ कॉलोनी
बिरला ग्राम (नागदा), म० प्र०

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

॥ ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः ॥

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

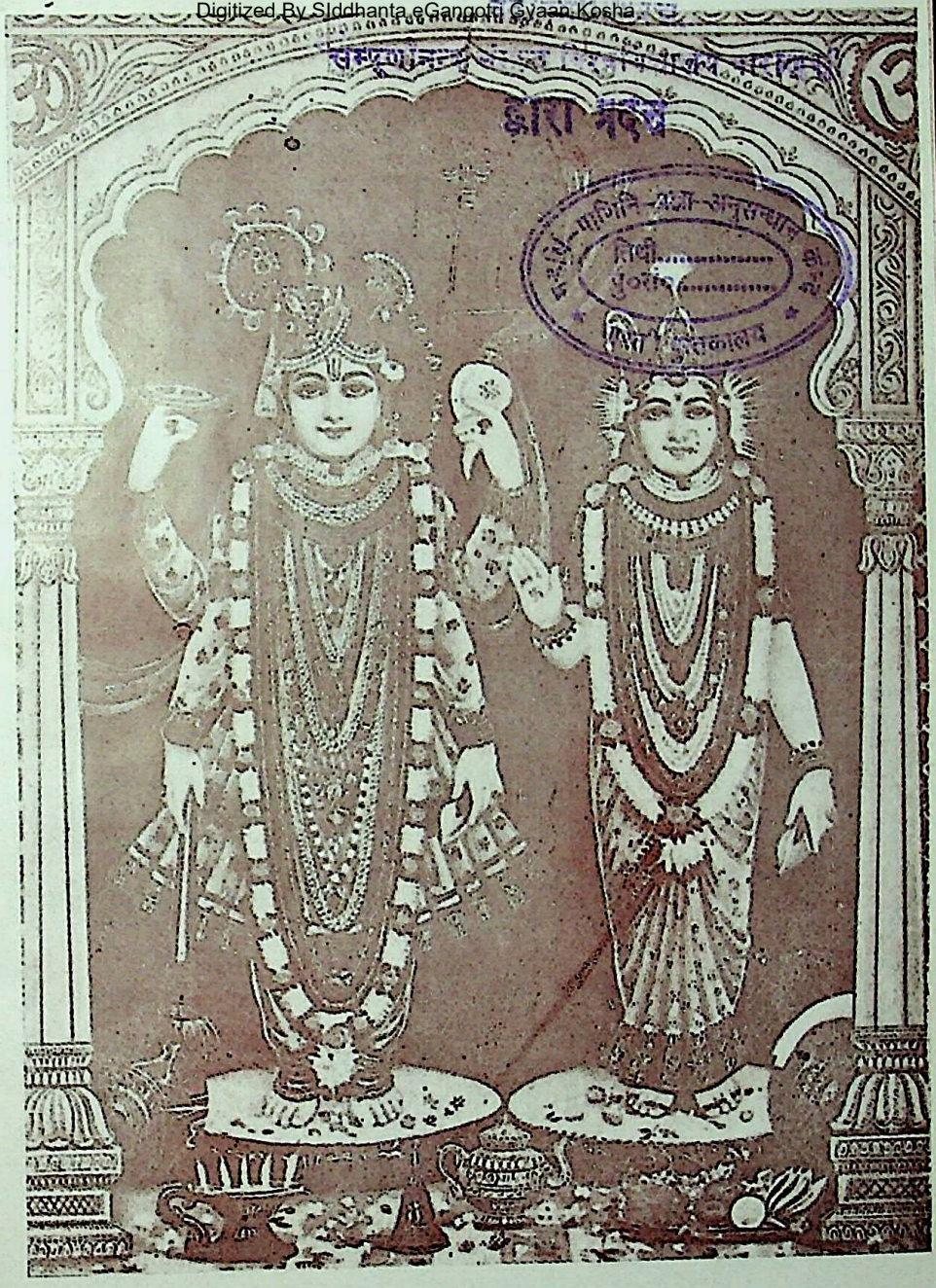

समर्पण—'विष्णु-तत्त्व-दर्शन,' जिससे चल-मति हो परम प्रशान्त,
रामप्रसाद समर्पित करता हे हरि ! लक्ष्मीकान्त ।

चैत्र शुक्ला ९ गुरुवार श्रीरामनवमी
सम्वत् २०३६ विक्रमी

रामप्रसाद शर्मा
खेतड़ी (राजस्थान) निवासी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शेषशायी भगवान् विष्णु

बिरला मन्दिर, बिरला ग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश

परिचय पृष्ठ (२६३)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

डॉ० गोपालकृष्ण मिश्र की
Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी
द्वारा प्रदत्त

॥ ॐ लक्ष्मीनारायण नमः ॥

श्रीमान्/श्रीमती डॉ० गोपाल किशोर जी मिश्र महोदय को

सादर सप्रेम भेंट, उपहार

रामप्रसाद शर्मा शास्त्री

की ओर से

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्राक्कथन

॥ ॐ ॥

सोमं राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे ।
आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ॥
(सामवेद पू० १।२।१०।१)

'जिस परमेश्वर के सोम, राजा, वरुण, अग्नि, आदित्य, विष्णु, सूर्य, ब्रह्मा और बृहस्पति नाम हैं, ऐसे अनन्त नामों वाले परमात्मा को हम सदा स्मरण करते हैं। क्यों कि वे जगत्पति परमेश्वर ही इस लोक और परलोक में हमको सुख प्रदान करने वाले हैं।'

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं, सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षःस्थलकौस्तभश्रियं, नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥

भगवान् विष्णु की पूजा स्तवन भारतवर्ष में अनादिकाल से प्रचलित है। विष्णु ही ब्रह्मा रूप से विश्व की रचना करते हैं, फिर उनके स्थित हो जाने पर विष्णु रूप से पालन करते हैं और अन्त में रुद्र रूप से संहार करते हैं—

ब्रह्मत्वे सृजते विश्वं स्थितौ पालयते पुनः ।
रुद्ररूपाय कल्पान्ते नमस्तुभ्यं त्रिमूर्तये ॥
(विष्णुपुराण १।१९।६६)

इस प्रकार से एक ही जनार्दन जगत् की सृष्टि, स्थिति और संहार के लिये ब्रह्मा, विष्णु और शिव—इन तीन संज्ञाओं को धारण करते हैं—

सृष्टिस्थित्यन्तकरणीं ब्रह्माविष्णुशिवात्मिकाम् ।
स संज्ञां याति भगवानेक एव जनार्दनः ॥
(विष्णु पुराण १।२।६६)

विष्णु स्रष्टा होकर अपनी ही सृष्टि करते हैं, पालक विष्णु होकर पाल्य रूप अपना ही पालन करते हैं और अन्त में स्वयं ही संहारक तथा स्वयं ही उपसंहृत होते हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश तथा समस्त इन्द्रियाँ और अन्तः-करण आदि जितना जगत् है सब पुरुष रूप है, और क्यों कि वे अव्यय विष्णु ही विश्वरूप और सब भूतों के अन्तरात्मा हैं, इसलिये ब्रह्मादि प्राणियों में स्थित सर्गादिक भी उन्हीं के उपकारक है। वे सर्वस्वरूप, श्रेष्ठ वरदायक और वरेण्य विष्णु, ब्रह्मादि अवस्थाओं द्वारा रचने वाले होते हैं वे ही रचे जाते हैं, वे ही पालन करते हैं, वे ही पालित होते है और वे ही संहार करते हैं। परिहास, भय, क्रोध, द्वेष, कामना अथवा स्नेह से एक बार विष्णु के पापनाशक नाम का उच्चारण करके बड़े-बड़े पापी भी रोग, शोक, रहित होकर विष्णु-लोक में चले जाते हैं—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हास्याद् भयात्तथा क्रोधाद् द्वेषात्कामादथापि वा ।।
स्नेहाद् वा सकृदुच्चार्य विष्णोर्नामाहारि च ।
पापिष्ठा अपि गच्छन्ति विष्णोर्धाम निरामयम् ।।
(स्कन्द पुराण, वै. वै. मा. २१।३६-३७)

इसी आशय की अभिव्यक्ति हमें नारदपुराण:—

नाम्नोऽस्ति यावती शक्तिः पापानि हरणे हरेः ।
तावत्कर्तुं न शक्नोति पातकं पातकी नरः ।।

तथा श्रीमद्भागवतपुराण:—

काम क्रोध भयं स्नेहमैक्यं सौहृदमेव च ।
नित्य हरौ विदधतौ यान्ति तन्मयतां हि ते ।।
(भागवतपुराण १०।२९।१५)

एवं अन्य पुराणों में भी मिलती है:—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ।।
(बृहन्नारदीय पुराण १।४१।१५)

अर्थात् कलियुग में हरिनाम सर्वोपरि है, इसके सिवा दूसरा कोई उपाय है ही नहीं। भगवान् कभी किसी का अमङ्गल नहीं करते क्योंकि वह तो स्वयं ही मङ्गल स्वरूप है:—

मङ्गलं भगवान् विष्णुर्मङ्गलं गरुडध्वजः ।
मङ्गलं पुण्डरीकाक्षो मङ्गलायतनो हरिः ।।
(गरुडपुराण; उ. ख. ३५।४६)

वैदिक साहित्य में विष्णु सूक्त ऋग्वेद मं. १ सूक्त १५४, ऋग्वेद मं. १ अध्याय २ सूक्त १५६, पुरुष सूक्त ऋग्वेद १०.९०, यजुर्वेद अध्याय ३१ भगवान् विष्णु के स्तवन के ही हैं। चारों वेदों में भगवान् विष्णु एवं उनके पर्याय नामों से तथा उनके अवतारों के नाम, चरित्र, महिमा यशोगान के अनेकों मन्त्र प्राप्त हैं। जिनमें से कितने ही मन्त्रों का प्रयोग लेखक ने इसी ग्रन्थ में प्रमाण, उदाहरण के रूप में भी किया है।

उपनिषद्, संहिता, पुराण, रामायण, महाभारत आदि अनेक धर्म ग्रन्थ भगवान् विष्णु के गुण, चरित्र, महिमा से भरे पड़े हैं।

भगवान् विष्णु के अवतार के विषय में पुराण शास्त्रों में विभिन्न प्रसङ्गों में उल्लेख हुआ है। वे साधु पुरुषों का उपकार करने, दूषित कर्म करने वालों का विनाश करने तथा धर्म स्थापन करने के लिए युग-युग में अवतार लेते हैं—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ।।
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।।
(श्रीमद्भागवदगीता ४।१-८)

ऐतिहासिक दृष्टि से शुंग काल (लगभग द्वितीय शताब्दी ईसवी पूर्व) में नगरी, विदिशा एवं मथुरा भागवत आन्दोलन के प्रमुख केन्द्रों के रूप में विकसित हो चुके थे। राजस्थान के चित्तोड़गढ़ में नगरी (माध्यमिका) के समीप घोसुण्डी नामक स्थान से उत्खनन स्वरूप एक लघुलेख प्राप्त हुआ था, जिसमें संकर्षण—वासुदेव की पूजा का उल्लेख है—

.....भगवद्भ्यां संकर्षण-वासुदेवाभ्यां (अनहिताभ्यां सर्वेश्वरा)भ्यां पूजा-शिला—प्राकारो नारायणवाटका.....प्रस्तुत लेख से विदित होता है कि यहां पर निर्मित देवग्रह में सम्भवतः संकर्षण और वासुदेव की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित थीं। डॉ. देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर के विचार में, भारत में यह प्राचीनतम वैष्णव मन्दिर था।

लगभग इसी काल का ही मध्य प्रदेश में विदिशा के निकट बेसनगर नामक स्थान पर एक शिला-स्तम्भ प्राप्त है। जिस पर उत्खनित लेख से ज्ञात होता है कि तक्षशिला निवासी हेलियोडोरस नाम यवनदूत ने भागवत धर्म का अनुयायी होने के पश्चात् देव देव वासुदेव की भक्ति में इस गरुडध्वज का निर्माण करवाया था—

[दे] वदेवस वा[सुदेव] स गरुडध्वजे अयं
कारिते इ [अ] हेलिओदोरेण भाग—
वतेन दियस पुत्रेण तखखिलाकेन
योन-दूतेन [आ] गतेन महाराजस
अन्तलिकितस उपंता सकासं रजो
कासी-पु[त्र] स[भा] गभद्रस त्रातारस
वसेन च[तु] दसेन राजेन वधमानस [।।]

मथुरा से विष्णु के बलराम अवतार की स्थानक मूर्ति जो शुंगकाल की बनी है, मिली थी, जो अब राज्य संग्रहालय लखनऊ में प्रदर्शित है। इसी काल की तुमैन (प्राचीन तुम्बवन, मध्य प्रदेश) से प्राप्त दो अन्य हलधर बलराम की पाषाण प्रतिमायें, श्री हरिसिंह गौड़ संग्रहालय, सागर में भी विद्यमान हैं। इसी प्रान्त के मल्हार नामक स्थान से प्राप्त लेखयुक्त भगवान् विष्णु की एक स्थानक

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha
मूर्ति उपलब्ध हुई है, जिसके चार हाथों में चक्र, शंख, गदा व असि स्पष्ट दिखाई देते हैं। यह मूर्ति भी द्वितीय शती ई. पूर्व की है।

मथुरा के निकट ही, 'मोरा' नामक गांव से प्राप्त एक प्रथम शताब्दी ई. के अभिलेख से विदित होता है कि महाक्षत्रप राजकुल के पुत्र महाक्षत्रप शोडास के राज्यकाल में बने एक देवगृह में वृष्णियों के पचवीरों की मूर्तियों की स्थापना हुई थी। इनमें से तीन मूर्तियाँ उपलब्ध भी हुई हैं। मथुरा से विष्णु की अनेक मूर्तियों के अतिरिक्त उनके कुछ विशेष अवतारों से संबधित मूर्तियाँ भी प्राप्त हैं, जिनमें राजकीय संग्रहालय, मथुरा में प्रदर्शित भगवान् वराह तथा बालक कृष्ण को यमुना पार गोकुल ले जाते हुए वासुदेवजी की मूर्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। कुषाण-गुप्त परिवर्तितकाल की मथुरा से प्राप्त एक अन्य वराह मूर्ति अमरीका के लास एन्जिलस काउण्टी म्यूजियम आफ आर्ट में भी सुरक्षित है।

गुप्तकाल में वैष्णव धर्म अपनी पराकाष्ठा पर था। इस युग में निर्मित अनेक वैष्णव प्रतिमायें मण्डोर, देवगढ़, रंगमहल, मथुरा, विदिशा एवं ऐरण आदि स्थानों से प्राप्त हुई हैं। वामन तथा वैकुण्ठ की मूर्तियाँ जो धातु-निर्मित हैं और कश्मीरकला का अनुपम उदाहरण हैं, राष्ट्रीय संग्रहालय बर्लिन में प्रदर्शित हैं। जोधपुर के निकट मण्डोर से प्राप्त दो प्रस्तरखण्डों पर भगवान् कृष्ण के जीवन से संबंधित अनेक प्रमुख दृश्यों का अंकन किया गया है, जिनमें शकटभंगलीला, गोवर्धनधारी, केशीवध, कालियदमन आदि प्रमुख हैं। यह अब सरदार संग्रहालय जोधपुर में सुरक्षित हैं। इसी के साथ बीकानेर के समीप रंगमहल से प्राप्त दो मृण्मूर्तियों में दानलीला तथा गोवर्धनधारी कृष्ण, अब बीकानेर संग्रहालय में तथा झांसी के समीप दो अन्य खण्डों पर जो अब राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में हैं, यशोदा कृष्ण को वसुदेव को देते हुए तथा शकटभंगलीला आदि प्रमुख हैं। देवगढ़ से ही मिले दो अन्य खण्डों पर रामायण के दृश्य अंकित हैं, जिनमें से एक पर अहिल्या-उद्धार व दूसरे पर राम-सीता की उपस्थिति में शूर्पणखा की नाक काटना दर्शाया गया है। अपसड़ तथा नचना-कुठरा नामक स्थानों में रामायण विषयक प्रतिमायें प्राप्त हुई हैं।

मध्यप्रदेश में पवाया से प्राप्त एक विशाल खण्ड पर त्रिविक्रम अवतार का अंकन है। यह अब ग्वालियर संग्रहालय में विद्यमान है। ऐरण में भी गुप्तकाल में एक विशाल विष्णुमन्दिर था जिसके सामने एक गरुडध्वज था। ऐसा ही एक गरुडध्वज दिल्ली में महरोली में स्थित है, जिसमें गरुड की आकृति नष्ट हो गई है। ऐरण से हमें विष्णुमूर्तियों के अतिरिक्त नृवराह, जो सागर से संग्रहालय में है, तथा शूकर वराह की मूर्तियाँ भी मिली हैं। विदिशा की मूर्तियों में विशेष रूप से उल्लेखनीय वहाँ की विशालतम शेषशायी विष्णु तथा वराह की मूर्तियाँ हैं। देवगढ़ के

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुप्रसिद्ध दशावतार मन्दिर पर नर-नारायण, गजेन्द्रमोक्ष तथा शेषशायी विष्णु की मूर्तियाँ अधिक प्रशंसनीय हैं। इसी काल की अहिच्छत्रा से प्राप्त एक मृण्मूर्ति जो लास एन्जिल्स काउइण्टी म्यूजियम् ऑफ आर्ट में है, में नर-नारायण को देवगढ़ मूर्ति की भाँति बैठे दर्शाया गया है। मथुरा से भी विष्णु एवं उनके अवतारों की गुप्त-कालीन अनेक मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। इनमें से सबसे सुन्दर मूर्ति अब राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली की शोभा बढ़ा रही है। मथुरा के स्थानीय संग्रहालय में कालिय-दमन, कृष्ण एवं त्रिविक्रम की मूर्तियाँ देखी जा सकती हैं। मथुरा से ही प्राप्त दो प्रस्तर फलक जिनपर कृष्णजीवन की कथाओं का अंकन है, अब पाकिस्तान के कराची संग्रहालय में भी प्रदर्शित हैं। वाराणसी से प्राप्त एक विशाल गोवर्धनधारी कृष्ण की मूर्ति भारत कलाभवन, काशी में प्रदर्शित है। लगभग इसी काल की कालिय-दमन कृष्ण की प्रस्तर प्रतिमायें नेपाल में भी प्राप्त हुई हैं, जो वहाँ की कला का सुन्दर उदाहरण है।

पूर्वमध्यकाल में शक्तिशाली प्रतिहार सम्राटों के आगमन के साथ वैष्णवधर्म को भी प्राबल्य मिला। सम्राट भोज ने एक नई प्रकार के सिक्के चलाये जिन्हें 'आदि वराह द्रम्म' कहा जाता है। इनके एक ओर नूवराह का अंकन मिलता है। जो कला की दृष्टि से हांसी दुर्ग में सुरक्षित तथा कन्नौज से प्राप्त वराह प्रतिमाओं से काफी साम्य रखता है। ऐसी मूर्तियों का वर्णन हमें अभिलेखों में भी मिलता है:—

जयति धरण्युद्धरणे घन-घोणाघात-घूर्णित-महीद्धः।
देवो वराहमूर्त्तिस्त्रैलोक्य-महागृह-स्तम्भः॥

इनके अतिरिक्त बैजनाथ, बजौरा, कन्नोज, एटा आदि से विष्णु के 'विश्वरूप' की कलात्मक मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं, जिनका विस्तृत विवरण भगवान् कृष्ण ने गीता में दिया है। इन्हीं मूर्तियों से प्रभावित लगभग आठवीं शती ई. की विष्णु की 'विश्वरूप' प्रतिमायें नैपाल में चन्गूनारायण नामक स्थान से प्राप्त हुई हैं। इसी युग की एक अद्वितीय मूर्ति, जो अब प्रयाग संग्रहालय में सुरक्षित है, में विष्णु एवं लक्ष्मी के विवाह को दर्शाया गया है। ऐसी अन्य मूर्ति अभी तक अज्ञात हैं।

प्रतिहारकालीन अनेक 'त्रिविक्रम' मूर्तियाँ ओसिया, राजिम, ग्वालियर, काशीपुर आदि स्थानों से प्रकाश में आई हैं। इनमें नीचे के भाग में राजा बलि द्वारा वामन रूपी विष्णु को तीन पग भूमि दान में दिये जाने का दृश्य है तथा मूल मूर्ति में विष्णु त्रिविक्रम के रूप में एक पैर ऊपर उठाये दिखाये गये हैं, जिसकी अँगुलियों के समीप 'राहु' के मुख का अंकन है। श्रीहर्ष ने इसका बड़ा सुन्दर वर्णन किया है:—

मां त्रिविक्रम! पुनीहि पदे ते किं लगन्नजनि राहुरूपानत्।
(नैषधचरित, २१।९७)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि बंगाल, बिहार, उड़ीसा तथा कर्नाटक से प्राप्त मध्यकालीन त्रिविक्रम-प्रतिमाओं में त्रिविक्रम के उठे हुए पैर के समीप राहुमुख के स्थान पर ब्रह्मा को गङ्गा के जल से पैर धोते हुए दिखाया जाता है, जिसका वर्णन पद्मपुराण एवं स्कन्द पुराण (प्रभास खण्ड. द्वारका माहात्म्य) में मिलता है—

नमस्ये त्वां भगवति विष्णुपादतलोद्भवे ।
गृहाणार्घ्यमिदं देवि गङ्गे त्वं हरिणा सह ।।

ग्वालियर संग्रहालय में रखी भगवान् नृसिंह की एक मूर्ति में उन्हें दानव हिरण्यकशिपु से युद्ध करने के उपरान्त उसको कस कर पकड़े दिखाया गया है। जैसा कि नृसिंहपुराण में लिखा है —

शस्त्रास्त्रवर्षचतुरं हिरण्यकशिपुं जवात् ।
प्रगृह्य तु बलाद्राजन् नरसिंहो महाबलः ।।
(नृसिंह पुराण ४५।२८)

ऊपर्युक्त प्रकार की अन्य पाषाण मूर्ति झांसी के संग्रहालय में भी प्रदर्शित है। लखनऊ तथा प्रयाग के संग्रहालय में रखी मूर्तियों में नृसिंह को गोद में लेटे हुए हिरण्यकशिपु के उदर को फाड़ते दिखाये गये हैं।

प्रतिहारयुगीन एक सुन्दर शिलापट्ट पर जो अब भरतपुर संग्रहालय में प्रदर्शित है, विष्णु के दशावतारों का बड़ी सजीवता से अंकन किया गया मिलता है।

उदयपुर के निकट आहाड़ संग्रहालय में गुहिलयुगीन लगभग १० वीं शती ई० के दो खण्डों पर कूर्म व मत्स्य अवतारों का अंकन मिलता है। इन अवतारों के अन्य अंकन हमें चम्बा तथा गढ़वा के अतिरिक्त आशुतोष संग्रहालय कलकत्ता, ग्वालियर संग्रहालय तथा अमेरिका के फिलाडेल्फिया म्यूजियम आफ आर्ट में रखी मूर्तियों में भी देखने को मिलता है।

मध्य प्रदेश में ओंकारेश्वर--मान्धाता के पास नर्मदा के किनारे 'चौबीस अवतार मन्दिर' है, जिसमें परमारकालीन विष्णु के बाईस अवतारों की मूर्तियाँ हैं। खुजराहो में भी कई वैष्णव मन्दिर हैं, जिनमें लक्ष्मण, वाराह, वामन आदि प्रमुख मन्दिर हैं, जिन पर विष्णु एवं उनके अवतारों की अनेक मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। जबलपुर जिले के विल्हरी नामक स्थान पर विष्णु-वराह का कल्चूरिकालीन देवालय है, जिसके बाहर वैकुण्ठ विष्णु, गरुडासीन लक्ष्मी-नारायण की कलात्मक मूर्तियाँ विद्यमान हैं।

पूर्वी भारत, विशेषकर बिहार एवं बंगाल में मध्यकाल में पालवंशीय शासकों का राज्य था जो बौद्धधर्म के अनुयायी होने के कारण 'परम सौगत' कहलाते थे। इन पाल-शासकों की धार्मिक सहिष्णुता की नीति के कारण हिन्दूधर्म

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को पनपने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी, जिसके फलस्वरूप विहार एवं बंगाल में अनेक विष्णु की मूर्तियाँ भक्तों द्वारा पूजा के हेतु बनाई गईं, हिन्दुओं ने स्वयं बुद्ध को विष्णु के एक अवतार के रूप में मान लिया था, जिसका स्पष्ट प्रमाण श्री हर्ष निर्मित नैषधचरित, जयदेव का गीत गोविन्द आदि ग्रन्थ हैं। उड़ीसा में पुरी का विख्यात मन्दिर है, जिसमें कृष्ण, बलदेव एव उनकी बहिन सुभद्रा की प्रतिमायें प्रतिष्ठित हैं।

दक्षिण भारत के एहोल एवं बादामी नामक स्थानों पर विष्णु एवं उनके अवतारों की अनेक मूर्त्तियाँ हैं। बादामी में शेषासन विष्णु, वराह, नृसिंह, त्रिविक्रम तथा कृष्ण लीला विषयक अनेक मूर्तियाँ प्रारम्भिक पश्चिमी चालुक्य कला, छठवीं शती ई. की महान् कलाकृतियाँ हैं।

तमिलनाडु में मद्रास के निकट महाबलीपुरम् में गोवर्धनधारी कृष्ण, शेषशायिन् आदि की विशाल मूर्तियाँ विद्यमान हैं, जिनका निर्माण पल्लवकाल सातवीं शताब्दी में हुआ था। उनके उत्तराधिकारी चोल शासकों के समय में भी अनेक वैष्णव (धातु एवं प्रस्तर) मूर्तियों का निर्माण हुआ, जिसमें संभवतः सबसे प्रसिद्ध मद्रास संग्रहालय में प्रदर्शित राम, सीता, लक्ष्मण एवं हनुमान की लगभग मनुष्य शरीर के बराबर की धातु प्रतिमायें हैं। इनकी समकालीन अर्थात् चोलकाल दशवीं शती ई. की धातु की कालिय-कृष्ण की मूर्ति अब राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में रखी है।

चोल वंश के पश्चात् विजयनगर शासकों का राज्य था। इनके समय में हनुमान की पूजा विशेष रूप से प्रचलित हुई, और साथ ही अनेक विशाल विष्णु की मूर्तियों का भी निर्माण हुआ। इसी युग की निर्मित विष्णु के धन्वन्तरि तथा हयग्रीव अवतार की मूर्तियाँ भी राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में सुरक्षित हैं।

कर्णाटक राज्य में स्थित हेलेविद एवं वेलूर के होयसल कालीन, बारहवीं शती ई. के देवालयों पर भी विष्णु एवं उनके विभिन्न अवतारों से संबंधित अनेक मूर्तियाँ आज भी देखी जा सकती हैं, जिनमें से कालिय-कृष्ण एवं पौराणिक कथाओं के दृश्य विशेष महत्त्व रखते हैं। सुदूर दक्षिण में केरल के समीप सुचीन्द्रम् नामक स्थान पर विष्णु के त्रिविक्रम अवतार की विलक्षण मूर्ति आज भी पूजी जाती है। इसके अतिरिक्त वहाँ 'गुरुवायूर' नामक भगवान् कृष्ण का एक प्राचीन देवालय है, जिसकी आज भी बड़ी महत्ता है। साधारण मान्यता के अनुसार गुरुवायूर की विलक्षण मूर्ति में कृष्ण के साक्षात् दर्शन हो जाते हैं।

विष्णु एवं उनके अवतारों की पृथक्-पृथक् मूर्तियों के अतिरिक्त विष्णु की अन्य देवताओं के साथ सयुक्त मूर्तियां भी प्राप्त होती हैं—जैसे हरिहर एवं हिरण्यगर्भ और सूर्य-नारायण आदि। मथुरा एवं विदिशा की गुप्तकालीन कला में सर्व

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रथम हरिहर प्रतिमायें मिलती हैं। हरिहर स्वरूप की दो, मनुष्य के शरीर के बराबर बड़ी प्रस्तर प्रतिमायें जो कन्नोज और फिरोजपुर से मिली, अब क्रमशः ब्रिटिश संग्रहालय लन्दन व कला संग्रहालय वोष्टन में विद्यमान हैं। विक्रम सम्वत् ११६१(११०४-११०५ई.) के नागपुर शिलालेख में हरिहर की वन्दना इस प्रकार से की गई है —

वैराग्यं च सरागतां च नृशिरोमालां च माल्यानि च
व्याघ्रानेकपचर्म्मणी च वसने चाहींश्च हारादि च।
यद्भूतिं च विलेपनं च भजते भीमं च भव्यं च त-
द्दिश्याद्भूपमुभारमारमणयोर्भुक्तिं च मुक्तिं च वः ।।

ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की संयुक्त प्रतिमा को हरिहर पितामह की संज्ञा दी जाती है, जिसका वर्णन वायुपुराण (५।१८-२१) के अतिरिक्त हमें भुवनदेव की 'अपराजितपृच्छा' में भी प्राप्त होता है—

एकपीठसमारूढमेकदेहनिवासिनम् ।
षड्भुजं च चतुर्वक्त्रं सर्वलक्षणसंयुतम् ।।
अक्षसूत्रं त्रिशूलं च गदां चैव तु दक्षिणे ।
कमण्डलुं च खटवाङ्ग चक्रं वामभुजे तथा ।।

उपर्युक्त आशय की मूर्तियाँ उत्तर प्रदेश में जागेश्वर से तथा राजस्थान में अर्थूणा और कटरा से उपलब्ध हैं। बाद वाली दोनों मूर्तियाँ अब अजमेर संग्रहालय में हैं।

हरिहर हिरण्यगर्भ प्रकार की मूर्तियों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्य एक साथ ही दिखाये जाते हैं। 'अपराजितपृच्छा' में ऐसी प्रतिमाओं का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। इनके अतिरिक्त विष्णु एवं सूर्य की संयुक्त प्रतिमा को सूर्य-नारायण कहा जाता है। सूर्य-नारायण की एक स्थानक मूर्ति झालावाड़ संग्रहालय में प्रदर्शित है।

अभी हाल में विष्णु एवं उनकी पत्नी लक्ष्मी की भी कुछ संयुक्त प्रतिमायें प्रकाश में आई हैं, जिसमें दाहिना भाग विष्णु व बायां भाग लक्ष्मी का है। कश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश से प्राप्त यह मूर्तियाँ जिनका वर्णन श्रीकुमार नामक केरल के ब्राह्मण (१६वीं शती ई.) ने अपने ग्रन्थ 'शिल्प रत्न' में किया है, भारतीय कला संग्रहालय, बर्लिन तथा लास एन्जिलिस काऊण्टी म्यूजियम आफ आर्ट्स, अमेरिका में प्रदर्शित है।

भगवान् विष्णु एवं उनके विभिन्न अवतारों का अध्ययन एक अत्यन्त व्यापक विषय है। इस विषय पर विभिन्न विद्वानों ने बहुत कार्य किया है और अभी भी कर रहे हैं। परन्तु दैवज्ञ पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा जो अनेक उपाधियों

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

से विभूषित हैं। उनकी लेखनी द्वारा प्रणयन किया गया विशाल ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' अपने प्रकार का प्रामाणिक अद्वितीय ग्रन्थ है जिसमें विभिन्न पुराणों एवं सैकड़ों प्राचीन ग्रन्थों का गूढ़ अध्ययन कर हम सभी को एक नई दिशा की ओर प्रेरित किया है। श्रद्धेयविद्वद्वरेण्य श्री शास्त्रीजी द्वारा पूर्व लिखित 'शिव-तत्त्व-दर्शन' एवं 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ भी यदि 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' की भांति 'विश्वकोश' माने जायें तो कहना अतिशयोक्ति न होगी।

श्री शास्त्रीजी प्राचीन धर्म ग्रन्थों के निष्णात एवं दार्शनिक तत्त्ववेत्ता भारत विख्यात महाविद्वान् हैं। अपने प्रस्तुत ग्रन्थ में निराकार से साकार भगवान् का विष्णु स्वरूप धारण एवं उनके विभिन्न अवतारों की मूल स्रोतों के आधार पर शास्त्रोक्त तत्त्वमीमांसा लिखकर न केवल हिन्दू जाति का वरन् सम्पूर्ण राष्ट्र का बड़ा उपकार किया है। जिसके लिये न केवल प्रत्येक भारतीय वरन् हिन्दूधर्म, साहित्य एवं संस्कृति में भी रुचि रखने वाले सभी विद्वान् एवं शोधकर्ता सदैव उनके अनुगृहीत रहेंगे।

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' के प्रथम, द्वितीय स्कन्ध में भगवान् विष्णु एवं उनके विभिन्न अवतारों के अतिरिक्त गणेश, सूर्य, शालग्राम, तुलसी व यमुना के प्रादुर्भाव तथा उनके चरित्रों की कथायें दी गई हैं और वैकुण्ठधाम एवं एक-सौ-आठ दिव्य विष्णु तथा उनके अवतारों के तीर्थ देवदर्शन का उनके माहात्म्य सहित परिचय लिखा गया है। तृतीय स्कन्ध में विष्णु, राम, कृष्ण का तत्त्व, विष्णु व उनके भक्तों के लक्षण व उनकी महिमा तथा उनके क्रिया योगों का विवेचन आदि लिखा गया है। इनके अतिरिक्त विष्णु व उनके अवतारों की प्रतिमा पूजन में ध्यान देने योग्य बातों का विशद वर्णन प्राप्त होता है। चतुर्थ स्कन्ध में भगवान् विष्णु एवं उनकी अवतार प्रतिमाओं की वेदोक्त, पुराणोक्त हिन्दी भाषार्थ सहित अनेक छोटी-बड़ी पूजा विधियाँ, उनकी प्रार्थना-स्तोत्र, जपादि के मन्त्र विवेचन, स्वस्ति मङ्गल प्रार्थना शान्ति पाठ सहित ग्रन्थ समापन प्रार्थना लिखी गई हैं, जो अत्यन्त उपयोगी हैं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि सभी विद्वान् 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का आदरपूर्वक अध्ययन कर पूर्ण लाभ प्राप्त करेंगे। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह श्री शास्त्रीजी को दीर्घायु प्रदान करे और वे ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रणयन कर समस्त हिन्दूधर्म एवं मानवजाति का कल्याण करें। ग्रन्थ में वेदोक्त मन्त्र एवं संस्कृत के जो श्लोक प्रयुक्त हुए हैं, प्रायः सभी का हिन्दी अनुवाद अथवा भावार्थ दिया गया है, जिससे वेदवाणी, संस्कृत के विद्वान् न होने वालों के लिये भी यह ग्रन्थ समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगा।

यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये॥

(यजुर्वेद अध्याय ३१ कण्डिका २०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जो सभी देवताओं को अपने तेज से तेजस्वी बनाता है, जो देवताओं में सर्वश्रेष्ठ इन्द्र अथवा अग्नि के रूप में स्थित है, जो सब देवताओं से पहले ब्रह्मा के रूप में प्रकट हुए, उस ब्राह्मो दीप्ति (ब्रह्मप्रकाश) आदित्य (सूर्य-नारायण) प्रजापति को मेरा नमस्कार है।'

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्ट दोहं
तीर्थास्पदं शिवविरिञ्चिनुतं शरण्यम्।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल ! भवाब्धिपोतं
वन्दे महापुरुष ! ते चरणारविन्दम् ।। (श्रीमद्भागवत)

दिनांक २०-११-७८

डॉ० ब्रजेन्द्रनाथ शर्मा
एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्.,
रॉयल एसियाटिक सोसाइटी, ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड के फैलो (एफ. आर. ए.एस.) लन्दन,
भारतीय प्राचीन इतिहास, संस्कृति, कला लिपि विशेषज्ञ, कीपर एण्ड अध्यक्ष (पुरातत्त्व विभाग),
राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली,
अनेक ग्रन्थों के प्रणेता एवं सैकड़ों शोधनिबन्ध लेखक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आमुख

श्री पंडित रामप्रसाद शर्मा, शास्त्री सनातनधर्मीय दृष्टिकोण रखने वाली आर्ष परम्परा के ऐसे महर्घ्यरत्न हैं जिनकी कान्ति आज की तिमिराच्छन्न वातावरण में पथभ्रष्ट मानवता को उसी प्रकार मार्गदर्शन कराने का प्रयास करती दृष्टिगोचर होती है, जिस प्रकार तारकावलि अमान्धकार में पथभ्रष्ट राही को।

इस अभिनव 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' से पूर्व श्री शास्त्रीजी 'शिव-तत्त्व-दर्शन' एवं 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' नामक दो ग्रन्थरत्न भारतीय धर्मप्राण जनता के हितार्थ प्रस्तुत कर चुके हैं। जिनका सुपठित, धर्मनिष्ठ, समाज में इतना आदर किया है कि श्री शास्त्रीजी को उसी माला में तीसरा मनका पिरोने के लिए कमर कस कर पुनः तीसरी बार साहित्य वारिधि मन्थन पूर्वक उसके नवनीत को भारतीय आस्तिक्य मनीषा के पोषणार्थ, निस्सारणार्थ मैदान में उतरना पड़ा है। वस्तुतः श्री शास्त्री जी जैसे अध्यवसायी मनस्वी के लिये 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' जैसे गम्भीर प्रणयन के लिये प्रवृत्त होना स्वाभाविक ही था क्यों कि शास्त्रों के अनुसार

'सर्वं विष्णुमय जगत्'

संसार का अणु-अणु भगवान् विष्णु से ओत प्रोत है, स्वयं भगवान् श्री कृष्ण ने शास्त्रों के इस कथन का अनुमोदन करते हुए श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है—

'मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव'

भगवान् विष्णु की महत्ता कितनी अपरिमेय है, इसका यत्किंचित् आभास केवल इस शास्त्रीय कथन से पाया जा सकता है—

'सर्वदेव नमस्कारं नारायणं प्रति गच्छति'

अर्थात् किसी भी देवता को नमस्कार करो वह पहुँचेगा भगवान् विष्णु को ही।

तैंतीस करोड़ देवताओं में भगवान् विष्णु को सर्वश्रेष्ठ बनाने वाली विशेषताएँ हैं, उनका सर्वाधिक करुणाशील होना, भक्तों का दुःख दूर करने के लिये सदैव तत्पर रहना, अतीव सहनशील होना आदि। इन सब का प्रमाण श्रीमद् भागवत के गजेन्द्रमोक्षस्तोत्र के ३०वें श्लोक से मिलता है—

एवं गजेन्द्रमुपवर्णित निर्विशेषं,
ब्रह्मादयो विविधलिङ्गभिदाभिमानाः।
नैते यदोपससृपुर्निखिलात्मकत्वात्,
तत्राखिलामरमयो हरिराविरासीत् ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो भगवान् विष्णु वेदों के लिये भी गुह्य हैं, जिन्हें शास्त्रों का सार कहा जाता है, प्राकृत शब्दों में जिनके गुणों का अनन्त विस्तार हुआ है, ज्ञान, कर्म उपासना द्वारा जिनका यथार्थ ज्ञान संभव नहीं है एवं जो संसार के प्राणियों का आत्मा है, उनका यथावत प्रतिपादन यद्यपि संभव नहीं है क्यों कि—

बौद्धिक बल से उस अद्भुत का, जितना अनुभव कर सकते हैं।
स्थूल, सूक्ष्म के क्रम से हम, उतना ही उसे समझते हैं॥
स्थूल, सूक्ष्म के गति क्रम से, जब नित्य सूक्ष्म रह जाता है।
तब वही सर्व-अप्रतिद्वन्द्वी, निजतन्त्र विष्णु कहलाता है॥
कब, कैसे, क्यों, किसलिये कहाँ, वह होता एक अनेकों है?
कह सकता नहीं कभी कोई, जानता वही अपने को है॥
वह जो चाहे कर सकता है, वह जो चाहे हो सकता है।
अपनी खिचड़ी का पहुँच तुल्य, प्राणी अनुमोदन करता है॥
(सूक्ति-सुधा)

इस स्थिति के होते हुए भी श्रीशास्त्रीजी ने वेद, पुराण, उपनिषदादि ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन कर विष्णु तत्त्व का सर्वाङ्गीण विवेचन इस एक ही ग्रन्थ में इस प्रकार विवेचित किया है कि भगवान् विष्णु के अनन्त ऐश्वर्य की एक झलक अनायास प्राप्त हो जाती है।

चार स्कन्धों में विभक्त इस ग्रन्थ रत्न में अवतार का कारण, उद्देश्य, स्वरूप, भगवान् विष्णु के विविध अवतार, भगवान् विष्णु का धाम, तुलसी, शालग्राम, उनके वाहनादि उनके मन्दिर आदि विष्णुपरक सभी विषयों का सर्वाङ्गीण परिचय सभी शास्त्रों, इतिहास ग्रन्थों, उपनिषदों, वेदों आदि का मन्थन कर इस प्रकार उनका स्वारस्य प्रस्तुत किया है कि व्यक्ति को अध्ययन करते हुये अनायास वह सब एकत्र प्राप्त हो जाता है, जो वर्षों की कठिन साधना और परिश्रम के पश्चात् भी संभव नहीं है।

पंच देवों में अप्रतिम भगवान् विष्णु आदि-अनादि काल से भारतीय आस्था के आधार रहे हैं और इसीलिये प्रमुखतः उनके मन्दिर के निर्माण का, पूजादि का विधान किया गया है—

शृङ्गाटके ग्राममध्ये, विष्णोर्वा शंकरस्य च।
गणेशश्च रवेर्देव्याः प्रसादात् क्रमतोन्यसेत्॥

श्री शास्त्रीजी ने उक्त ग्रन्थ के चतुर्थ स्कन्ध में सर्वविध पूजा विधान का प्रतिपादन कर सभी के लिये विष्णु अनुग्रह का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

इस अनुपम अथ च महर्घ्य कृति के लिये हम श्री पंडित रामप्रसादजी का अभिनन्दन करते हैं और भगवान् विष्णु से प्रार्थना करते हैं कि वे ऐसे ही ग्रन्थ

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

रत्नों के सर्जन के लिये श्री शास्त्रीजी को परम सामर्थ्य, तीक्ष्ण एवं अप्रतिहत बुद्धि तथा दीर्घायु द्वारा आप्यायित करें—

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हे देव श्रेष्ठ ! हे दयाधाम ! तव कृपादृष्टि का पा प्रसाद ।
हो सफल 'राम' का जग जीवन, औ मिटे पाठकों का विषाद ।।
जन 'तत्त्व' तुम्हारा जान प्रभो ! सश्रद्ध तुम्हारे चरण गहें ।
है काम्य 'वेद' का जो कुछ भी, तव दर्शन से वह विश्व लहे ।।

दिनांक ६ नवम्बर १९७८ई.
२१-१-१९८ गांधी बाजार,
समक्ष : उच्च न्यायालय,
हैदराबाद-५००००२
(आन्ध्र प्रदेश)

विद्याभास्कर
डॉ. वेद प्रकाश शास्त्री
एम. ए. (हिन्दी-संस्कृत स्वर्णपदक),
पी-एच. डी., डी.लिट्., डी. एस-सी,
साहित्याऽऽयुर्वेदरत्न,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

ग्रन्थकार—

वैद्य पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री (खेतड़ी वाला)

आयुर्वेद एवं धार्मिकाध्यात्मिक विविधोपाधिअलंकृत

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ ॐ लक्ष्मीनारायणाय नमः ॥

आत्म-निवेदन

विष्णु-तत्त्व का, जिस सत्कृति में दर्शन परम पुनीत है,
ज्ञानोदधि के मंथन का यह मङ्गलमय नवनीत है।
परब्रह्म की अतुल अनूपा लीलाओं का सार है,
'साधु-त्राण, दुर्दनुज-दलन' को निर्गुण का अवतार है॥

समस्त सनातन धर्मावलम्बी हिन्दू समाज में चाहे वह किसी भी जाति, मत, पंथ एवं धर्मानुयायी हों, भगवान् विष्णु तथा उनके अवतारों की मान्यता एवं उनकी उपासना पाई जाती है।

हमारे प्राचीन ग्रन्थ वेद, उपनिषद्, श्रुति, स्मृति, पुराण, रामायण, महाभारत आदि धर्मशास्त्रों में भगवान् विष्णु तथा उनके अवतारों के विषय में विविध प्रकार की प्रचुर साहित्य सामग्री बिखरी हुई पड़ी है, किन्तु वह सब वेदवाणी, संस्कृत में है इस कारण साधारण जन उसका ज्ञान लाभ करने से वंचित रहे हैं। इस विषय का यथोचित ज्ञान न होने के कारण हिन्दू समाज में अमान्यता, अश्रद्धा व अनेक प्रकार की भ्रान्तियों की वृद्धि हो रही है। वर्तमान समय में भारत-वर्ष की सर्वाधिक जनसंख्या के ज्ञान की माध्यम भाषा हिन्दी ही है। हिन्दी में इस प्रकार का कोई ग्रन्थ नहीं जो भगवान् विष्णु तथा उनके अवतार विषयक सब प्रकार का उत्तम ज्ञान जनसाधारण को करा सके। जनसाधारण से वरिष्ठ विद्वानों तक को भगवान् विष्णु तथा उनके अवतार विषयक अधिकाधिक साहित्य सामग्री सुव्यवस्थित रूप में एक ही पुस्तक में सुलभ हो सके, इसी उद्देश्य के साथ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' नामक पुस्तक सरल हिन्दी में लिखकर उक्त अभाव की पूर्ति का यह प्रयास किया गया है।

लेखक के पूर्वज शताब्दियों से वेद, वेदान्त, व्याकरण, ज्योतिष, पुराण, धर्मशास्त्रादि के पठन, मनन, स्वाध्याय को एक व्यसन के रूप में अपनाते रहे हैं। प्रातःस्मरणीय परमपूज्य स्वर्गीय पितामह पण्डित महासुखजी शर्मा वेद, वेदान्त, ज्योतिष, पुराण, धर्मशास्त्रादि के प्रकाण्ड विद्वान् थे तथा उनके तथा अन्य पूज्यपाद गुरुवर्य विद्वानों द्वारा प्राप्त शिक्षा, सम्पर्क व ज्ञानोपदेश के प्रभाव के कारण यह अकिंचन लेखक सन् १९६४ में जीविकोपार्जन भार से मुक्त होकर अपने वानप्रस्थ आश्रम के सदुपयोग हेतु इस प्रकार के धार्मिक आध्यात्मिक ग्रन्थों के अधिक पठन, मनन, स्वाध्याय में लग गया। भगवान् साम्ब सदाशिव की कृपा अनुग्रह तथा पूर्वजों के आशीर्वाद का आश्रय ग्रहण कर 'शिव-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ लिख डाला,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जिसका अनेक धर्मगुरुओं, धार्मिक आध्यात्मिक प्रबुद्ध वरिष्ठ विविध शास्त्रपाएँति विद्वानों ने अवलोकन करके अपने आशीर्वाद, मङ्गलकामनाएँ तथा सम्मतियाँ प्रदान करने का अनुग्रह किया। उसके प्रकाशन हेतु शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति का गठन हुआ और उस समिति ने अर्थ-संग्रह की व्यवस्था कर उसका प्रकाशन कराया। शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ का प्रकाशन होने पर सैकड़ों वरिष्ठ विद्वानों तथा अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने अपनी सम्मतियाँ एवं प्रशंसा पत्र प्रेषित किए। यदि उन सबको पुस्तकाकार किया जावे तो एक अच्छी बड़ी स्वतंत्र पुस्तक बन सकती है। राजस्थान राज्य-सरकार (शिक्षा विभाग) ने भी अपने विद्यालय पुस्तकालय संकेत क. ख. ग. घ. के लिये मान्यता प्रदान की। अनेकानेक ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं एवं अनेक अन्वेषणकर्ताओं की रिर्पोटों का तथ्यमय सारांश सप्रमाण संकलन करके अपनी वाङ्मयी पूजा के रूप में 'शिव-तत्त्व-दर्शन' का लेखन किया था। इसी प्रकार के प्रयास द्वारा द्वितीय ग्रन्थ 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' का लेखन और प्रकाशन हुआ, जिसका पूर्वलिखित ग्रन्थ से भी अधिक धर्माचार्यों, विद्वानों द्वारा समादर किया गया।

उसी प्रकार का अब यह तृतीय ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' नामक भगवान् विष्णु की वाङ्मयी पूजा के रूप में लिखा गया है। भूल त्रुटियाँ स्वभावतः इसमें भी रही होंगी। उनके लिये मैं पूज्यवर्यों से क्षमा प्रार्थी हूँ। कोई भूल त्रुटियाँ दृष्टि में आवें उनको मुझे अवश्य सूचित करें और उन पर ध्यान न देकर जो उत्तम मीठा सारयुक्त फल रुचिकर प्रतीत हो, ग्रहण करें, यही मेरा विनम्र निवेदन है।

विष्णु-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ भगवान् विष्णु के चतुर्भुज स्वरूप होने से चार स्कन्धों में विभाजित है। प्रत्येक स्कन्ध में शास्त्रसंगत अठारह-अठारह सोपान (अध्याय) हैं। प्रथम, द्वितीय स्कन्ध में भगवान् विष्णु तथा उनके चौवीस अवतार तथा ब्रह्मस्वरूप भगवान् गणपति, भगवान् सूर्य, तुलसी, शालग्राम, यमुनाजी के प्रादुर्भाव एवं उनके चरित्रों की कथाएँ, वैकुण्ठधाम, भगवान् के आयुध, वाहन, द्वारपालादि का महत्त्व भारत के एक सौ आठ भगवान् विष्णु तथा उनके अवतारों के दिव्य मन्दिर एवं तीर्थों का परिचय लिखा गया है। तृतीय स्कन्ध में भगवान् विष्णु, श्रीराम, श्रीकृष्ण का तत्त्व विवेचन, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश, सूर्य, आद्याशक्ति की ब्रह्म तत्त्व रूप में एकता, भगवान् विष्णु-शिव की एकता, भगवान् विष्णु तथा उनके भक्तों के लक्षण व उनकी महिमा व उनके प्रकारों का विवेचन, विविध पूजा क्रिया योग, व्रत, पूजोपचारों की महिमा, भगवान् की भक्ति-मुक्ति एवं मनोकामना सिद्धियाँ प्राप्त करने के विवेचन, भगवान् विष्णु व उनके विविध अवतारों की प्रतिमा पूजन में ध्यान देने योग्य बातों का विशद् वर्णन किया गया है। चतुर्थ स्कन्ध में भगवान् विष्णु व उनके अवतारों की प्रतिमाओं की छोटी-बड़ी वेदोक्त, पुराणोक्त, मानसिक आदि अनेक प्रकार की पूजा विधियाँ हिन्दी अनुवाद सहित,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उनकी प्रार्थना, स्तोत्र, जपादि के मन्त्र का विवेचन, स्वस्ति मङ्गल प्रार्थना, शान्ति पाठ सहित ग्रन्थ समापन प्रार्थना लिखी गई हैं।

किसी भी प्रकार का श्रेय या लाभ प्राप्त करने हेतु इसका लेखन नहीं किया गया है। अपने वानप्रस्थ-आश्रम जीवन का सदुपयोग अपनी वाङ्मयी पूजा के रूप में श्रीलक्ष्मी-पति भगवान् विष्णु एवं उनके अवतारों का स्मरण, नमन, अर्चना-पूजा हो जाये, यही इसका मुख्य उद्देश्य है।

लेखक एक स्वल्पबुद्धि मानव होकर परब्रह्म परमात्मा भगवान् विष्णु एवं उनके विविध अवतारों के तत्त्व के विषय में लेखनी उठाये—यह एक छोटा-सा पक्षी चन्द्रमा पर पहुँचने का प्रयास करे ऐसा है। भगवान् गणेशजी, माँ सरस्वती, कुमारी, कुमार, सिद्ध, किंनर, सूर्यादिनवग्रह, हनुमानजी, गरुड़जी, शेषजी, भगवान् विष्णु के आभूषण, परिधान, आयुध, पर्यङ्क, सिंहासन, इन्द्र, वरुण, कुबेर, अग्नि, गणों सहित भगवान् साम्ब-सदाशिव, भगवान् लक्ष्मीनारायण, सीता राम, राधा कृष्णादि समस्त विष्णु अवतार, जन्मदाता माता-पिता एवं सर्वपूर्वज पितृगण तथा गुरुवर्यों के चरणों में नमन कर ग्रन्थ लेखन का शुभारम्भ किया। उनकी कृपा से यह ग्रन्थ अत्यन्त शीघ्र तैयार होकर प्रस्तुत हो रहा है। यह कार्य परमपूज्य इष्टदेवों ने अपनी अलक्षित शक्ति प्रेरणा ज्ञानाभास द्वारा ही कराया है। जिसकी अनुभूति समय-समय पर अनेकों बार परोक्ष-अपरोक्ष रूप में लेखक को होती रही है।

इस पुण्यप्रद कार्य में जिन धर्म प्राण पूज्य महानुभावों, विद्वानों, धनी-मानी, सज्जनों, भाइयों, बहिनों द्वारा साहित्य संग्रह, परोक्ष, अपरोक्ष अर्थ संग्रह कार्य हुआ है। ग्वालियर रेयन, भारत कोमर्स इन्डस्ट्रीज के अनेक बड़े-छोटे अधिकारी, कर्मचारीगण तथा शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति के कार्यकर्ताओं के सम्मिलित करने पर एक बृहत्संख्या है। इनमें सर्वाधिक रुचि सहयोग बाबू दुर्गा प्रसादजी मण्डेलिया की रही है। इन सब ही के सुरुचि सहयोग चिरस्मरणीय रहेंगे। हम उन सब ही के प्रति आभारी हैं।

इस ग्रन्थ के साहित्यसंग्रह तथा हिन्दी संस्कृत के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के अनुवाद कराने में पण्डित ललित शङ्कर उपाध्याय एम. ए., एल-एल. बी. आलोट निवासी, ओमप्रकाश शर्मा बी. कॉम. लक्ष्मणगढ़ निवासी, डॉ. चन्द्रलेखा द्विवेदी एम. ए., पी-एच. डी., बिरलाग्राम, पण्डित नटवरलाल 'स्नेही', नागदा मण्डी, पण्डित हरिप्रसाद साहित्य रत्न, पण्डित धीरेन्द्र ओझा, एम.ए. नागदामण्डी, द्वारा भी समय-समय पर सहयोग मिला है।

आदरणीय डॉ. ब्रजेन्द्रनाथ जी शर्मा एम.ए., पी-एच. डी; डी-लिट्.; एफ. आर. ए.एस. (लन्दन), भारतीय प्राचीन इतिहास, संस्कृति, कला लिपि विशेषज्ञ,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कीपर एण्ड अध्यक्ष (पुरातत्त्व विभाग), राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली, अनेक ग्रन्थों के प्रणेता एवं सैकड़ों शोधनिबन्ध लेखक महोदय ने प्रस्तुत विष्णु-तत्त्व-दर्शन का प्राक्कथन लिखने का अनुग्रह किया है। आपने केवल भारत में ही (पुरातत्त्व) कलाकृतियों का अध्ययन नहीं किया है, अपितु आप श्री जॉन डी. राक फैलर थर्ड फण्ड की सहायता द्वारा विश्व के सभी देशों के संग्रहालयों में संगृहीत भारतीय कलाकृतियों का अध्ययन भी कर चुके हैं। अपने ऐतिहासिक विशेष अध्ययन द्वारा भगवान् विष्णु एवं उनकी अवतार प्रतिमाओं के विषय में अपने प्राक्कथन में बहुमूल्य साहित्य सामग्री का परिचय प्रस्तुत कर इस ग्रन्थ में एक अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण साहित्य की वृद्धि की है। जिसके द्वारा गत दो सहस्र वर्षों का प्रामाणिक इतिहास उपलब्ध होता है, इसके प्रति हम उनके अत्यन्त आभारी हैं।

'विद्याभास्कर' डॉ. वेद प्रकाशजी शास्त्री एम. ए., पी-एच. डी. एस-सी, साहित्य आयुर्वेदरत्न ने अपने विचार आमुख के रूप में लिखने का कष्ट किया है।

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ के प्रकाशन से पूर्व जिन परमपूज्यपाद धर्मगुरुओं, धर्ममर्मज्ञ वरिष्ठ विद्वानों ने ग्रन्थावलोकन एवं संक्षिप्त परिचय अवलोकन का कष्ट कर अपने आशीर्वाद, मङ्गलकामनाएँ एवं शुभ सम्मतियाँ प्रदान करने का अनुग्रह किया है। उन सब का मैं चिरकृतज्ञ ऋणी हूँ।

विष्णु-तत्त्व-दर्शनग्रन्थ के मुद्रणादि का प्रबन्धभार शिव-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ प्रकाशन समिति बिरला ग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश ने उठाया है। मैं समिति के सब कार्यकर्ताओं का आभारी हूँ।

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली ने मेरा पितृ समान आदर करते हुए, अपना ही कार्य मान कर मुद्रण प्रबन्धादि सभी कार्यों में पूर्ण सहयोग प्रदान किया है। मैं उनके प्रति भी आभारी हूँ।

पुस्तक मुद्रण में असावधानीवश कतिपय अशुद्धियाँ रह गई हैं, जिनका शुद्धि पत्र पुस्तक के अन्तिम भाग में लगाया गया है। कृपया पाठकगण शुद्धि पत्र के अनुसार शुद्ध पढ़ने का कष्ट करें।

यह परम पवित्र पुण्यप्रद वृहत्कार्य इतनी शीघ्रता से पूर्ण हो पाया है। इसका यह सब श्रेय उक्त पूज्यवर्यों, महानुभावों, विद्वानों, श्रीमानों, भाई-बहिनों को ही है। परमपिता भगवान् लक्ष्मीनारायण के चरणों में मैं करबद्ध प्रार्थना करता हूँ कि भगवान् उन सभी को सपरिवार सानन्द रहते हुए निरन्तर अपने-अपने कार्यों में उन्नति प्रदान करें। उनके विचार बुद्धि धार्मिक आध्यात्मिक विषयों में विशेष रुचिकर प्रगति करावें। अपना मन अविचल दृढ़ भगवद् भक्ति में सर्वदा लगाये रक्खें।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परम पूज्य गुरुवर्य, विद्वान्, साहित्य सेवी, अनुसंधानाभिलाषी, भाई, माताएँ, बहिनें अन्य भगवद्भक्त पाठकगण इस ग्रन्थ के पठन, मनन द्वारा परम पिता परमात्मा भगवान् विष्णु एवं उनके अवतार श्रीराम, कृष्णादि की भक्ति तथा विद्यालाभ प्राप्त करेंगे, यही मेरा परम सौभाग्य होगा, परिश्रम सफल होगा एवं जन्म कृतार्थ होगा।

मेरे परम इष्टदेव परम पिता परमात्मा भगवान् लक्ष्मीनारायण, सीताराम; राधाकृष्ण इस ग्रन्थ को मेरी वाङ्मयी पूजा के रूप में स्वीकार कर, आशीर्वाद प्रदान करें कि मेरा मन और चित्त परब्रह्म परमात्मा के ही चिन्तन मनन में सर्वदा लगा रहे।

यह 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ मैं परमपिता परमात्मा भगवान् लक्ष्मी-नारायण, सीताराम, राधाकृष्ण के चरण कमलों में मेरी सम्पूर्ण श्रद्धा एवं भक्ति से समर्पण करता हूँ। परमपिता परमात्मा देव सबको आनन्द मङ्गल प्रदान करें।

ॐ नमो भगवते तस्मै देहिनां परमात्मने।
नारायणाय भक्तानामेकनिष्ठाय शाश्वते॥

'समस्त देहधारियों के परमात्मा तथा भक्तों के प्रति एक मात्र निष्ठा रखने वाले उन सनातन भगवान् नारायण को नमस्कार है।' शुभम्।

चैत्र शुक्ला ९ गुरुवार सम्वत् २०३६ विक्रमी,
दिनांक ५ अप्रेल १९७९ ई० श्रीरामनवमी

विनीत
रामप्रसाद शर्मा
खेतड़ी (राजस्थान) निवासी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

अनुक्रम

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विषय क्रम			पृष्ठाङ्क
प्राक्कथन			४-१३
आमुख			१४-१६
आत्म निवेदन			१७-२१

प्रथम स्कन्ध

सोपान	१	मङ्गलाचरण	१
,,	२	भगवान् के अवतारों का विवेचन	७
,,	३	भगवान् सनकादि (१)	११
,,	४	भगवान् वराह (२)	१४
,,	५	देवर्षि नारद (३)	२१
,,	६	भगवान् नर-नारायण (४)	२८
,,	७	भगवान् कपिल मुनि (५)	३०
,,	८	भगवान् दत्तात्रेय (६)	४०
,,	९	भगवान् यज्ञ (७)	४८
,,	१०	भगवान् ऋषभदेव (८)	५०
,,	११	आदि राज पृथु (९)	५६
,,	१२	भगवान् मत्स्य (१०)	६४
,,	१३	भगवान् कूर्म (११)	६७
,,	१४	भगवान् धन्वन्तरि (१२)	७२
,,	१५	मोहिनी रूपधारी भगवान् (१३)	७३
,,	१६	भगवान् नृसिंह (१४)	७६
,,	१७	भगवान् वामन (१५)	८३
,,	१८	भगवान् हयग्रीव (१६)	९४

द्वितीय स्कन्ध

सोपान	१	भगवान् हरि (क) (१७)	९८
,,	२	गजेन्द्रोद्धारक भगवान् हरि (ख) (१७)	११०
,,	३	भगवान् परशुराम (१८)	११५
,,	४	भगवान् व्यास (१९)	१२२
,,	५	भगवान् हंस (२०)	१२७
,,	६	भगवान् श्री:राम (२१)	१२९
,,	७	भगवान् श्री कृष्ण (२२)	१३७

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सोपान	८	भगवान् बुद्ध (२३)	२७६
,,	९	भगवान् कल्कि (२४)	१७८
,,	१०	भगवान् विष्णु की उत्पत्ति	१८३
,,	११	विष्णु का वैकुण्ठ धाम	१८६
,,	१२	तुलसी शालीग्राम विवेचन	१९५
,,	१३	चतुर्भुजरूप धारी विष्णु	१९९
,,	१४	गोलोक से यमुना जी का अवतरण	२०८
,,	१५	भगवान् गणेश श्री कृष्ण के अवतार	२१४
,,	१६	सूर्य की उपासना	२३०
,,	१७	सब देवी-देवता विष्णुमय	२३५
,,	१८	भारत के अष्टोत्तर शत विष्णु	२४१

तृतीय स्कन्ध

सोपान	१	विष्णु तत्त्व विवेचन	२९१
,,	२	श्री राम तत्त्व विवेचन	३४६
,,	३	श्री राम के आदर्श गुण	३५९
,,	४	श्री कृष्ण तत्त्व विवेचन	३८२
,,	५	ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि एक ही हैं	३८९
,,	६	भगवान् शिव तथा विष्णु की महिमा	४०२
,,	७	तुलसी का ध्यान पूजन, स्तवन	४१२
,,	८	विष्णु की सेवा-पूजन क्रियायोग का विवेचन	४१६
,,	९	विभिन्न पुष्पों द्वारा विष्णु की पूजाविधि	४२२
,,	१०	एकादशी व्रत : विधि	४२६
,,	११	अजामिल को वैकुण्ठ धाम प्राप्ति	४३४
,,	१२	रुद्राक्ष की उत्पत्ति, आँवले की महिमा, तुलसी माहात्म्य	४४०
,,	१३	पुष्कर तीर्थ माहात्म्य वर्णन	४४८
,,	१४	नवधाभक्ति	४५२
,,	१५	उपासक के योगों का विवेचन	४६९
,,	१६	वैष्णव लक्षण, महिमा	४७५
,,	१७	अनाचार निषिद्ध, सदाचार का महत्त्व	४९०
,,	१८	विष्णु तथा उनके अवतार	४९६

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चतुर्थ स्कन्ध

सोपान	१	गणपति पूजाविधि	५१६
”	२	सर्वदेव पूजाविधि	५२९
”	३	सूर्यनारायण की पूजनविधि	५३१
”	४	हनुमानजी की पूजनविधि	५३५
”	५	पांचजन्यशंख-माहात्म्य, पूजाविधि	५४२
”	६	विष्णु के स्वरूपों की बृहत्पूजा विधि	५४६
”	७	षोडशोपचार पूजाविधि	५५९
”	८	द्वादशोपचार पूजाविधि	५५९
”	९	पंचोपचार पूजाविधि	५६०
”	१०	विष्णुस्वरूपों की बृहत्पूजाविधि (हिन्दी)	५६०
”	११	षोडशोपचार पूजाविधि (हिन्दी)	५७५
”	१२	द्वादशोपचार ” ”	५७५
”	१३	पंचोपचार पूजा	५७६
”	१४	भगवान् नारायण की मानसपूजा	५७६
”	१५	विष्णु लक्ष्मी की एकरूपता	५८१
”	१६	स्तोत्र, प्रार्थना	५८८
”	१७	ग्रन्थसमापन प्रार्थना	६२४
”	१८	स्वस्ति-मङ्गलकामना, ग्रन्थकार परिचय	६२८

परिशिष्ट

आशीर्वाद, मङ्गलकामना, सम्मतियाँ	६३९
शुद्धि-पत्र	६८०

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ॐ

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

मङ्गलाचरण

प्रथम स्कन्ध

सोपान १

गणपतिर्विघ्नराजो लम्बतुण्डो गजाननः ।
द्वैमातुरश्च हेरम्ब एकदन्तो गणाधिपः ॥
विनायकश्चारुकर्णः पशुपालो भवात्मजः ।
द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥
विश्वं तस्य भवेद्वश्यं न च विघ्नं भवेत क्वचित् ।

(पद्मपुराण सृ० ६१।३१-३३)

'गणपति, विघ्नराज, लम्बतुण्ड, गजानन, द्वैमातुर, हेरम्ब, एकदन्त, गणाधिप, विनायक, चारुकर्ण, पशुपाल और भवात्मज—ये बारह गणेशजी के नाम हैं। जो प्रातःकाल उठ कर इनका पाठ करता है, सम्पूर्ण विश्व उनके वश में हो जाता है तथा उसके सामने कभी विघ्न नहीं आते।

कुमारी च कुमारश्च गणेशश्च विनायकः ।
सिद्धाश्च किंनराश्चापि मङ्गलं प्रदिशन्तु नः ॥

(सनत्कुमार संहिता, ऋषिरात्र, अ. ६)

'कुमारी कुमार गणेश, विनायक, सिद्ध तथा किन्नरगण हमें मङ्गल प्रदान करें।'

देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां
विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना
धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥

(श्री देव्यथर्वशीर्षम् मंत्र १०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'प्राणरूप देवों ने जिस प्रकाशमान वैखरी वाणी को उत्पन्न किया, उसको अनेक प्रकार के प्राणी बोलते हैं। यह कामधेनुतुल्य आनन्ददायक और अन्न तथा बल देने वाली वाग्रूपिणी भगवती उत्तम स्तुति से संतुष्ट होकर हमारे समीप आने का अनुग्रह करें।'

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ।।

'नारायणी ! तुम सब प्रकार का मङ्गल प्रदान करने वाली मङ्गल-मयी हो। कल्याणदायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, तीन नेत्रों वाली एवं गौरी हो। आपको नमस्कार है।'

तस्मै नमः परमकारणकारणाय
दीप्तोज्ज्वलज्वलितपिङ्गललोचनाय।
नागेन्द्रहारकृतकुण्डलभूषणाय
ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नम शिवायः ।।

'जो कारण के भी परम कारण हैं, (अग्निशिखा के समान) अति-देदीप्यमान उज्ज्वल और पिङ्गल नेत्रों वाले हैं, सर्पराजों के हार कुण्डलादि से भूषित हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्रादि को भी वर देने वाले हैं, उन श्रीशंकरजी को नमस्कार करता हूँ।'

यः प्राणवायुजनितो गिरिशस्य शान्तः
शिष्योऽपि गौतमगुरुर्मुनि शङ्करात्मा।
हृद्यो हरस्य हरिबद्धरितां गतोऽपि
धी धैर्यशास्त्रविभवेऽतुलमाश्रये तम् ।।

'जो पूर्वजन्म में गौतम ऋषि के शंकरात्मा नामक शान्त शिष्य होने पर भी उनके गुरु के समान पात्र थे, शंकरजी के प्राणवायु से जिनका प्रादुर्भाव हुआ, जो हरि (वानर) भाव को प्राप्त होकर भी हरि (विष्णु) की भांति शंकरजी के हार्दिक प्रेमी हैं तथा बुद्धि, धैर्य और शास्त्र के वैभव में जिनकी कहीं समता नहीं है, उन श्रीहनुमानजी की मैं शरण लेता हूँ।'

भगवान् विष्णु के प्रमुख वाहन गरुड़जी तथा अन्य सब ही विष्णु वाहनों को नमस्कार करता हूँ, उनकी शरण लेता हूँ। भगवान् विष्णु के द्वारपालों को नमन करता हूँ। भगवान् विष्णु के पार्षद असंख्य हैं, उनमें से सोलह पार्षद प्रमुख हैं। उनके नाम क्रमशः विष्वक्सेन, सुषेण, जय, विजय, बल, प्रबल, नन्द, सुनन्द, भद्र, सुभद्र, चण्ड, प्रचण्ड, कुमुद, कुमुदाक्ष, शील

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और सुशील हैं। सभी को प्रेमपूर्वक नमन करता हूँ। भगवान् विष्णु के आभूषण, परिधान, आयुध तथा पर्यङ्क और सिंहासन सबको नमन करता हूँ।

श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये॥

मैं श्रीरामचन्द्र के चरणों को मन से स्मरण करता हूँ, श्रीरामचन्द्र के चरणों का वाणी से कीर्तन करता हूँ, श्रीरामचन्द्र के चरणों में सिर झुका कर प्रणाम करता हूँ तथा श्रीरामचन्द्र के चरणों की शरण लेता हूँ।

समस्तगोपनन्दनं हृदम्बुजैकमोदनं
नमामि कुञ्जमध्यगं प्रसन्नभानुशोभनम्।
निकामकामदायकं दृगन्तचारुसायकं
रसालवेणुगायकं नमामि कुञ्जनायकम्॥

जो समस्त गोपों को आनन्दित करने वाले और हृदय कमल को विकसित करने वाले, देदीप्यमान सूर्य के समान शोभायमान हैं, उन कुञ्ज-मध्यवर्ती श्यामसुन्दर को नमस्कार करता हूँ। जो कामनाओं को भलीभाँति पूर्ण करने वाले हैं, जिनकी चारु चितवन बाणों के समान है, सुमधुर वेणु बजाकर गान करने वाले उन कुञ्जनायक को नमस्कार करता हूँ।

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुवन्ति दिव्यैः स्तवै—
र्वेन्दैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः॥
(श्रीमद्भागवत १२।१३।१)

ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र रुद्र और मरुद्गण दिव्य स्तुतियों के द्वारा जिनके गुण गान में संलग्न रहते हैं, साम-संगीत के मर्मज्ञ ऋषि-मुनि, अङ्ग, पद, क्रम एवं उपनिषदों के सहित वेदों द्वारा जिनका ज्ञान करते रहते हैं, योगी लोग ध्यान के द्वारा निश्चल एवं तल्लीन मन से जिनका भावमय दर्शन प्राप्त करते रहते हैं; किन्तु यह सब करते रहने पर भी देवता, दैत्य, मनुष्य—कोई भी जिनके वास्तविक स्वरूप को पूर्णतया न जान सका, उन स्वयं प्रकाश परमात्मा को नमस्कार है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् ।
लक्ष्मीं प्रियसखीं भूमिं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ।।

(ऋग्वेदीय श्रीसूक्त २५)

'विष्णु की पत्नी, क्षमास्वरूपिणी, दिव्यरूपिणी, माधवप्रिया, माधवी लक्ष्मी को तथा उनकी प्रिय सखी अच्युत-वल्लभा भूमिदेवी को नमस्कार करता हूँ ।'

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।।

'जो शान्तस्वरूप हैं, शेषशायी हैं, कमलनाभ और सुरेश्वर हैं, जो विश्व के आधार, आकाश के समान निर्लेप, मेघवर्ण और सुन्दर शरीर वाले हैं तथा जो लक्ष्मीजी के आनन्दवर्धक, कमलनयन और योगियों के द्वारा ध्यानगम्य हैं । सर्वलोकों के एकमात्र स्वामी भव-भय-हारी भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ ।'

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

(गर्ग संहिता, वृन्दावनखण्ड, अध्याय १।२)

'मैं अज्ञानरूपी रतौंधी से अंध हो रहा था, जिन्होंने ज्ञानरूपी अञ्जन की शलाका से मेरी आँखें खोल दी हैं, उन श्रीगुरुदेव को नमस्कार है ।'

गुरुजन - जननी - जनक दें—
वर, हो परम प्रसन्न,
'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का लेखन
हो अविघ्न सम्पन्न ।

जीवकोपार्जन भारमुक्त होने के पश्चात् अपने वानप्रस्थ आश्रम के सदुपयोग हेतु भगवान् के स्मरण रूप में वेद, वेदान्त, श्रुति, स्मृति, पौराणिक प्रमाणों पर आधारित 'शिव-तत्त्व-दर्शन' तथा 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' दो ग्रन्थ साधारण हिन्दी भाषी से विद्वानों तक उपयोग किये जाने योग्य सरल-सुबोध हिन्दी भाषा में लिखकर भगवान् शिव तथा पराशक्ति भगवती माँ की सेवा में मुद्रित प्रकाशित होकर प्रस्तुत किए जा चुके हैं । अब मेरे हृदय में प्रेरणा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हो रही है कि परब्रह्म परमात्मा, जगत् पिता भगवान् विष्णु के विषय में भी, इसी भाँति अपनी वाङ्मयी पूजा के रूप में कुछ लिखकर, लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु की चरण सेवा में समर्पित किया जावे। इस आत्मप्रेरणा को भगवान् विष्णु की ही आज्ञा प्रसाद अनुग्रह मानकर शिरोधार्य करता हूँ।

हे! परम पिता परमात्मा भगवान् विष्णु मेरे लिए यह कार्य इसी प्रकार प्रतीत हो रहा है कि जैसे पंगु मनुष्य बड़ा पहाड़ लांघने की चेष्टा कर रहा हो। किन्तु, बार-बार मेरा ध्यान इस श्लोक की ओर आकर्षित होता है जो कि आपकी प्रार्थना में लिखा है

मूकं करोति वाचालं पङ्गुः लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्॥

'जिनकी कृपा से गूंगे बहुत बोलने लगते हैं, पंगु पहाड़ को लांघ जाते हैं, उन परमानन्द स्वरूप माधव की मैं वन्दना करता हूँ।'

हे! परमपिता परमात्मा आपके इस प्रकार की दया आधारों का ही आश्रय ग्रहण कर वसन्त ऋतुकालीन नवरात्र की शुभ पुण्यप्रदा श्रीराम नवमी के दिन इस शुभ कार्य का शुभारम्भ करता हूँ। आपके श्रीचरणों में बार-बार नमन कर प्रार्थना करता हूँ कि मुझ अज्ञ स्वल्प-बुद्धि चरण-सेवक से इस विषय में जो भी भूल-त्रुटियां होवें, उन्हें आप अपना मूढ़ बालक जान कर क्षमा करें, जिससे मैं आपकी इस कृपा, आभास, प्रेरणा का पालन करने का कुछ प्रयास कर सकूं।

भगवान् विष्णु के अनन्त नाम, अनन्त चरित अनन्त ही महिमा वर्णन शास्त्रों में मिलते हैं। विष्णु महिमा में लिखा है—

विष्णोर्नामैव पुंसां शमलमपनुदत् पुण्यमुत्पादयच्च
ब्रह्मादिस्थानभोगाद् विरतिमथ गुरोः श्रीपदद्वन्द्वभक्तिम्।
तत्वज्ञानं च विष्णोरिह मृतिजनन भ्रान्तिबीजं च दग्ध्वा
ब्रह्मानन्दैकसिन्धौ महति च पुरुषं स्थापयित्वा निवृत्तम्।

'भगवान् विष्णु का नाम ही मनुष्य के पापों का नाश करता, उनके लिए पुण्य को जन्म देता, उनके मन में ब्रह्मादि देवताओं के लोकों के भोग से वैराग्य उत्पन्न करता है। तत्पश्चात् गुरु के युगल श्रीचरणारविन्दों के लिए भक्ति बढ़ाता है और भगवान् विष्णु के तत्त्व का ज्ञान प्रदान करता है। इस लोक में जन्म और मृत्यु रूपी भ्रम के बीज को जलाकर साधन करने वाले को ब्रह्मानन्द के महान् समुद्र में निमज्जित करने के पश्चात् निवृत्त होता है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विपदो नैव विपदः सम्पदो नैव सम्पदः ।
विपद्विस्मरणं विष्णोः सम्पन्नारायणस्मृतिः ।।

'विपत्ति कोई विपत्ति नहीं, सम्पत्ति कोई सम्पत्ति नहीं है। भगवान् विष्णु को विस्मरण कर देना ही विपत्ति है, भगवान् विष्णु का स्मरण बनाये रखना ही सच्ची सम्पत्ति है।'

सकृत् स्मृतोऽपि गोविन्दो नृणां जन्मशतैः कृतम् ।
पापराशिं दहत्याशु तूलराशिमिवानलः ।।

'श्रीगोविन्द एक बार स्मरण किये जाने पर भी मनुष्यों के सैकड़ों जन्मों में किये हुए पापपुञ्ज को इस प्रकार तुरन्त ही भस्म कर देते हैं जिस प्रकार अग्नि रुई के ढेर को जला देती है।'

वस्तुतः यही सत्य है कि जिसके हृदय में मङ्गलायतन श्रीभगवान् विष्णु सुप्रतिष्ठित हो गये, उसके लिए नित्य निरतिशय आनन्द और मङ्गल ही है। भगवत्स्वरूप की अज्ञानमूलक विस्मृति में ही समस्त दुःख दैन्यादि जन्म पाते हैं। अतः सर्वोपरि आनन्द प्राप्त करने के लिए भगवान् विष्णु की शरण ग्रहण करते हैं।

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसाचतुर्भुजम् ।।

'जो शंङ्ख-चक्र धारण किये हैं, किरीट और कुण्डलों से विभूषित हैं, पीताम्बर ओढ़े हुए हैं; सुन्दर कमल के समान जिनके नेत्र हैं; हारयुक्त वक्षः स्थल पर कौस्तुभमणि की अनोखी शोभा हो रही है। उन चतुर्भुज भगवान् विष्णु को मैं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ।'

विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि ।
यो अस्कभायदुत्तरं सधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः ।।
(विष्णु-सूक्त, ऋग्वेद मं० सूक्त १५४ मन्त्र १)

'मनुष्यो ! मैं अत्यन्त तत्परता से सर्वव्यापी स्वयंप्रकाश विष्णु के पराक्रम का प्रवचन कर रहा हूँ, क्योंकि विष्णु ने ही पार्थिव रजस का निर्माण किया है। उन्होंने अपने तीन प्रकार से पादविन्यास किया। इसी कारण महापुरुष विशिष्ट रूप में उनका मान करते हैं और वे सर्वत्र विराजमान रहते हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीभगवान् के अवतारों का विवेचन

सोपान २

श्रीभगवान् के अवतार क्यों होते हैं ? इस रहस्य को बतलाते हुए श्रीमद्भगवद्गीता में श्री भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा है—

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया ॥
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम ।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥
जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय ४।४-९)

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा—'अर्जुन ! मैं अजन्मा, अविनाशी स्वरूप तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर रहते हुए अपनी प्रकृति में अधिष्ठित रह कर अपनी योगमाया से प्रकट होता हूँ। भारत ! जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने को उपर्युक्त रूप में प्रकट करता हूँ। साधु पुरुषों का परित्राण करने के लिये, पाप कर्म करने वालों का विनाश करने के लिये और धर्म की अच्छी तरह से स्थापना करने के लिये मैं युग-युग में प्रकट हुआ करता हूँ। अर्जुन ! मेरे जन्म और दिव्य (अप्राकृत-अलौकिक) हैं, इस प्रकार जो तत्त्व से जान लेता है वह फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता, वह मुझे ही प्राप्त होता है।'

श्रीमद्भागवत में लिखा है—

अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्त्वनिधेर्द्विजा ।
यथाविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥
ऋषयो मनवो देवा मनुपुत्रा महौजसः ।
कलाः सर्वे हरेरेव सप्रजापतयस्तथा ॥

(श्रीमद्भागवत अध्याय ३।२६-२७)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जैसे अगाध सरोवर से हजारों छोटे-छोटे नाले निकलते हैं, वैसे ही सत्त्वनिधि भगवान् श्रीहरि के असंख्य अवतार हुआ करते हैं। ऋषि, मनु, देवता, प्रजापति, मनुपुत्र और जितने भी महान् शक्तिशाली हैं, वे सबके सब श्रीभगवान् के ही अंश हैं।'

सर्वशक्तिमान् भगवान् अनन्त हैं, वह जीवों पर अनुग्रह करने के लिये अनेक प्रकार के स्वरूप शरीर धारण कर लेते हैं। उसी प्रकार उनके अवतरण तथा अवतार चरित्र भी अनन्त ही हैं। पुरुषावतार, गुणावतार, कल्पावतार, युगावतार, पूर्णावतार, अंशावतार, कलावतार, आवेशावतार आदि अनेक भेद हैं कल्पभेद से भगवान् के चरित्रों में भिन्नता भी होती हैं।

भागवतादि पुराण शास्त्रों में भगवान् के चौबीस अवतारों का विशेष रूप से उत्तम रोचक वर्णन पाया जाता है। यहाँ इनको ही संक्षेप में तथा कथाओं का क्रमबद्ध आदि से अन्त तक तारतम्य बना रहे, इसलिये कल्याण में प्रकाशित पं. शिवनाथजी दुबे, श्रीपाण्डुरङ्गजी शास्त्री, पं. रामाधारजी शुक्ला, श्रीगुरुचरणजी वर्णवाल तथा श्रीरामलालजी के लेखों को भी साभार सम्मिलित करके लिखा जा रहा है। श्रीमद्भागवत स्कन्ध ११।४ में भी चौबीस अवतारों का संक्षिप्त संकेत परिचय इस प्रकार लिखा हुआ प्राप्त होता है—

श्रीभगवान् विष्णु के चौबीस अवतारों का संक्षिप्त संकेत परिचय

राजोवाच

यानि यानीह कर्माणि यैर्यैः स्वच्छन्दजन्मभिः।
चक्रे करोति कर्ता वा हरिस्तानि ब्रुवन्तु नः॥
(श्रीमद्भागवत ११।४।१)

राजा निमि ने पूछा—योगीश्वरों! भगवान् स्वतन्त्रता से अपने भक्तों की भक्ति के वश होकर अनेकों प्रकार के अवतार ग्रहण करते हैं और अनेकों लीलाएँ करते हैं। आप लोग कृपा करके भगवान् विष्णु की उन लीलाओं का वर्णन कीजिये, जो वे अब तक कर चुके हैं, कर रहे हैं या करेंगे।

अब सातवें योगीश्वर द्रुमिलजी ने कहा है—राजन्! भगवान् अनन्त हैं, उनके गुण भी अनन्त हैं। जो यह सोचता है कि मैं उनके गुणों को गिन लूंगा; वह मूर्ख है, बालक है। यह तो संभव है कि कोई किसी प्रकार पृथ्वी के धूलि-कणों को गिन ले, परन्तु समस्त शक्तियों के आश्रय भगवान् के अनन्त गुणों का कोई कभी किसी प्रकार पार नहीं पा सकता। भगवान्

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ने ही पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश—इन पाँच भूतों की अपने-आपसे अपने-आप में सृष्टि की है। जब वे इनके द्वारा विराट शरीर, ब्रह्माण्ड का निर्माण करके उसमें लीला से अपने अंश अन्तर्यामीरूप से प्रवेश करते हैं, (भोक्ता रूप से नहीं क्योंकि भोक्ता तो अपने गुणों के फलस्वरूप जीव ही होता है) तब उन आदिदेव नारायण को 'पुरुष' नाम से कहते हैं, यही उनका पहला अवतार है। उन्हीं के इस विराट ब्रह्माण्ड शरीर में तीनों लोक स्थित हैं। उन्हीं की इन्द्रियों से समस्त देहधारियों की ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ बनी हैं। उनके स्वरूप से ही स्वतःसिद्ध ज्ञान का सञ्चार होता है। उनके श्वास-प्रश्वास से सब शरीरों में बल आता है तथा इन्द्रियों में ओज (इन्द्रियों की शक्ति) और कर्म करने की शक्ति प्राप्त होती है। उन्हीं के सत्त्व आदि गुणों से संसार की स्थिति, उत्पत्ति और प्रलय होते हैं। इस विराट् शरीर के जो शरीरी हैं, वे ही आदि-कर्ता नारायण हैं। पहले पहल जगत् की उत्पत्ति के लिये उनके रजोगुण के अंश से ब्रह्मा हुए, फिर वे आदि पुरुष ही संसार की स्थिति के लिये अपने सत्त्वांश से धर्म तथा ब्राह्मणों के रक्षक यज्ञपति विष्णु बन गये। फिर वे ही तमोगुण के अंश से जगत् के संहार के लिये रुद्र बने। इस प्रकार निरन्तर उन्हीं से परिवर्तनशील प्रजा की उत्पत्ति, स्थिति और संहार होते हैं।

दक्ष प्रजापति की एक कन्या का नाम मूर्ति था। वह धर्म की पत्नी थी। उसके गर्भ से भगवान् ने ऋषि श्रेष्ठ शान्तात्मा 'नर' और 'नारायण' के रूप में अवतार लिया। उन्होंने आत्मतत्त्व का साक्षात्कार कराने वाले उस भगवदाराधन का उपदेश दिया, जो वास्तव में कर्मबन्धन से छुड़ाने वाला और नैष्कर्म्य स्थिति को प्राप्त कराने वाला है। उन्होंने स्वयं भी वैसे ही कर्म का अनुष्ठान किया। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि उनके चरण-कमलों की सेवा करते रहते हैं। वे आज भी बद्रिकाश्रम में उसी कर्म का आचरण करते हुए विराजमान हैं।

भगवान् विष्णु ने अपने स्वरूप में एकरस स्थित रहते हुए भी सम्पूर्ण जगत् के कल्याण के लिये बहुत से कलावतार ग्रहण किये हैं। विदेहराज! हंस, दत्तात्रेय, सनक-सनन्दन-सनातन-सनत्कुमार और हमारे पिता ऋषभ के रूप में अवतीर्ण होकर उन्होंने आत्मसाक्षात्कार के साधनों का उपदेश किया है। उन्होंने हयग्रीव अवतार लेकर मधु-कैटभ नामक असुरों का संहार करके उन लोगों के द्वारा चुराये हुए वेदों का उद्धार किया है। प्रलय के समय मत्स्यावतार लेकर उन्होंने भावी मनु सत्यव्रत, पृथ्वी और औषधियों की—धान्यादि की रक्षा की और वाराहावतार ग्रहण करके पृथ्वी का रसातल से उद्धार करते समय हिरण्याक्ष का संहार किया। कूर्मावतार ग्रहण करके

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उन्हीं भगवान् ने अमृत-मन्थन का कार्य सम्पन्न करने के लिये अपनी पीठ पर मन्दराचल धारण किया और उन्हीं भगवान् विष्णु ने अपने शरणागत एवं आर्त भक्त गजेन्द्र को ग्राह से छुड़ाया। एक बार बालखिल्य ऋषि तपस्या करते-करते अत्यन्त दुर्बल हो गये थे। वे जब कश्यप ऋषि के लिये समिधा ला रहे थे तो थक कर गाय के खुर से बने हुए गड्ढे में गिर पड़े, मानों समुद्र में गिर गये हों। उन्होंने जब स्तुति की तब भगवान् ने अवतार लेकर उनका उद्धार किया। वृत्रासुर को मारने के कारण जब इन्द्र को ब्रह्महत्या लगी और वे उसके भय से भागकर छिप गये तब भगवान् ने उस हत्या से इन्द्र की रक्षा की। जब असुरों ने अनाथ देवाङ्गनाओं को बंदी बना लिया तब भी भगवान् ने ही उन्हें असुरों के चंगुल से छुड़ाया। जब हिरण्यकशिपु के कारण प्रह्लाद आदि संत पुरुषों को भय पहुँचने लगा तब उनको निर्भय करने के लिये भगवान् ने नृसिंहावतार ग्रहण किया और हिरण्यकशिपु को मार डाला। उन्होंने देवताओं की रक्षा के लिये देवासुर संग्राम में दैत्यपतियों का वध किया और विभिन्न मन्वन्तरों में अपनी शक्ति से अनेक कलावतार धारण करके त्रिभुवन की रक्षा की। फिर वामन-अवतार ग्रहण करके उन्होंने याचना के बहाने इस पृथ्वी को दैत्यराज बलि से छीन लिया और अदिति-नन्दन देवताओं को दे दिया। परशुराम अवतार ग्रहण करके उन्होंने ही पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रियहीन किया। परशुरामजी तो हैहयवंश का नाश करने के लिये मानों भृगुवंश में अग्निरूप से ही अवतीर्ण हुए थे। उन्हीं भगवान् ने रामावतार में समुद्र पर पुल बाँधा एवं रावण और उसकी राजधानी लङ्का को मटियामेट कर दिया। उनकी कीर्ति समस्त लोकों के मल को नष्ट करने वाली है। सीतापति भगवान् राम सदा-सर्वदा, सर्वत्र विजयी-ही-विजयी हैं। राजन्! अजन्मा होने पर भी पृथ्वी का भार उतारने के लिये वे ही भगवान् यदुवंश में जन्म लेंगे और ऐसे-ऐसे कर्म करेंगे, जिन्हें बड़े-बड़े देवता भी नहीं कर सकते। फिर आगे चलकर भगवान् ही बुद्ध के रूप में प्रकट होंगे और यज्ञ के अनधिकारियों को यज्ञ करते देखकर अनेक प्रकार के तर्क-वितर्कों से मोहित कर लेंगे और कलियुग के अन्त में कल्कि-अवतार लेकर वे ही दुष्ट अनधिकारी राजाओं का वध करेंगे।

एवंविधानि कर्माणि जन्मानि च जगत्पतेः।
भूरीणि भूरियशसो वर्णितानि महाभुज॥

(श्रीमद्भागवत ११।४।२३)

महाबाहु विदेहराज! भगवान् की कीर्ति अनन्त है। महात्माओं ने जगत्पति भगवान् के ऐसे-ऐसे अनेकों जन्म और कर्मों का प्रचुरता से गान भी किया है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीसनकादि (१)

सोपान ३

सृष्टि के प्रारम्भ काल में लोकपितामह ब्रह्माजी ने अनेक लोकों की रचना हेतु तपस्या की। विश्वपितामह के अखण्ड तप के प्रभाव से प्रसन्न होकर विश्वाधार भगवान् विष्णु ने महान् तपस्वी 'सन' नाम वाले सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार—इन निवृत्तिपरायण उर्ध्वरेता मुनियों के रूप में अवतार धारण किया। ये प्रकट होते ही मोक्षमार्गपरायण भगवान् के ध्यान में लगे रहने वाले सर्वदा विरक्त व नित्य सिद्धस्वरूप थे। उन्होंने ब्रह्माजी की सृष्टि-विस्तार की आज्ञा को स्वीकार नहीं किया। लोकपितामह ब्रह्माजी के आद्य मानसपुत्र और देवताओं से भी पूर्व उत्पन्न होने वाले उन सनकादि के मन में किसी भी प्रकार की कोई आसक्ति नहीं थी। वे प्रायः आकाशमार्ग से विचरण करते थे। एक समय में वे श्रीभगवान् के वैकुण्ठधाम में गये। वैकुण्ठधाम में रहने वाले सब ही शुद्ध पवित्र-सत्त्वमय, चतुर्भुज, पीत वस्त्र धारण किये हुये रहते हैं। श्रीभगवान् के दर्शनों की उत्कंठा से सनकादि वैकुण्ठ की दिव्य दुर्लभ, दिव्य दर्शनीय वस्तुओं की उपेक्षा करते हुए पाँच ड्योढ़ियों को पार करते हुए छठी ड्योढ़ी के आगे बढ़ रहे थे, उस समय भगवान् के पार्षद जय और विजय ने उन पाँच वर्ष के जैसी अवस्था दिखायी देने वाले दिगम्बर तेजस्वी कुमारों की हँसी उड़ाते हुए उन्हें आगे जाने से रोक दिया। भगवान् के दर्शन होने में व्यवधान होने के कारण सनकादि ने उन्हें दैत्यकुल में जन्म लेने का शाप दे दिया।

अपने प्राणप्रिय तथा अभिन्न सनकादि कुमारों के अनादर का समाचार मिलते ही वैकुण्ठनाथ श्रीहरि तत्क्षण ही वहाँ पहुँच गये। भगवान् श्रीहरि की अद्भुत, अलौकिक एवं दिव्य सौन्दर्यराशि के दर्शन कर सर्वथा विरक्त सनकादि कुमार चकित हो गये। वे अपलक नेत्रों से प्रभु की ओर निहारने लगे। उनका हृदय आनन्द-सिन्धु उच्छलित हो रहा था। उन्होंने वनमाला से सुशोभित श्रीलक्ष्मीपति भगवान् विष्णु की अनेक प्रकार से स्तुति करते हुए कहा—

योऽन्तर्हितो हृदि गतोऽपि दुरात्मनां त्वं
सोऽद्यैव नो नयनमूलमनन्त राद्धः।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह्यर्णव कर्णविवरेण गुहां गतो नः
पित्रानुवर्णितरहा भवदुद्भवेन ।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अ. १५ श्लोक ४६)

'अनन्त ! यद्यपि आप अन्तर्यामीरूप से दुष्टचित्त पुरुषों के हृदय में भी स्थित रहते हैं तथापि उनकी दृष्टि से ओझल ही रहते हैं। किन्तु आज हमारे नेत्रों के सामने तो आप साक्षात् विराजमान हैं। प्रभो ! जिस समय आपसे उत्पन्न हुए हमारे पिता ब्रह्माजी ने आपका रहस्य वर्णन किया था, उसी समय श्रवण रन्ध्रों द्वारा हमारी बुद्धि में तो आप आ विराजे थे; किन्तु प्रत्यक्ष दर्शन का महान् सौभाग्य तो हमें आज ही प्राप्त हुआ है।'

प्रादुश्चकर्थ यदिदं पुरुहूतरूपं
तेनेश निर्वृतिमवापुरलं दृशो नः।
तस्मा इदं भगवते नम इद्विधेम
योऽनात्मनां दुरुदयो भगवान् प्रतीतः ।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १५ श्लोक ५०)

'विपुलकीर्ति प्रभो ! आपने हमारे सामने जो यह मनोहर रूप प्रकट किया है, उससे हमारे नेत्रों को बड़ा ही सुख मिला है; विषयासक्त अजितेन्द्रिय पुरुषों के लिये इसका दृष्टिगोचर होना अत्यन्त कठिन है। आप साक्षात् भगवान् हैं और इस प्रकार स्पष्टतया हमारे नेत्रों के सामने प्रकट हुए हैं। हम आपको प्रणाम करते हैं।'

सनकादि की स्तुति सुनने के पश्चात् श्रीभगवान् हरि ने अत्यन्त मधुर वाणी में कहा—ब्राह्मणों की पवित्र चरण-रज को मैं अपने मस्तक पर धारण करता हूँ। जय-विजय ने मेरा अभिप्राय न समझ कर आप लोगों का अपमान किया है, इस कारण आपने इन्हें दण्ड देकर सर्वथा उचित ही किया है। लोकों के उद्धार करने हेतु पर्यटन करने वाले, सरलता व करुणा की मूर्ति सनकादि कुमारों ने भगवान् श्रीहरि की वाणी को सुनकर उनसे अत्यन्त विनीत स्वर में कहा—सर्वेश्वर ! इन द्वारपालों को आप जैसा उचित समझें वैसा ही ही दण्ड दें अथवा पुरस्कार रूप में इनकी वृत्ति बढ़ा दें; हम निष्कपट भाव से सब प्रकार आपसे सहमत हैं। हमने आपके इन निरपराध अनुचरों को शाप दिया है, इसके लिये हमें ही उचित दण्ड दें। हमें वह भी सहर्ष स्वीकार है। यह सुनकर श्रीभगवान् हरि ने कहा—

एतौ सुरेतरगतिं प्रतिपद्य सद्यः
संरम्भसम्भृतसमाध्यनुबद्धयोगौ ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूयः सकाशमुपयास्यत आशु यो वः
शापो मयैव निमितस्तदवैत विप्राः ।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १६ श्लोक २६)

'मुनिगण ! आपने इन्हें जो शाप दिया है—सच मानिये, वह मेरी प्रेरणा से ही हुआ है। अब ये शीघ्र ही दैत्य योनि को प्राप्त होंगे और वहाँ क्रोधावेश से बढ़ी हुई एकाग्रता के कारण सुदृढ़ योगसम्पन्न होकर फिर जल्दी ही मेरे पास लौट आयेंगे।'

यह सुनने के पश्चात् सनकादि ने सर्वाङ्ग सुन्दर भगवान् विष्णु और उनके धाम का दर्शन किया। प्रभु की परिक्रमा कर उनका गुणगान करते हुए वे चारों कुमार वहाँ से लौट गये। जय-विजय इनके शाप से तीन जन्मों तक क्रमशः हिरण्यकशिपु-हिरण्याक्ष, रावण-कुम्भकर्ण और शिशुपाल-दन्त-वक्त्र हुए।

उस समय जब भगवान् सूर्य की भाँति परम तेजस्वी सनकादि आकाश-मार्ग से भगवान् के अंशावतार महाराज पृथु के समीप पहुँचे, तब उन्होंने अपना अहोभाग्य मानते हुए उनकी विधिपूर्वक पूजा की और उनका चरणोदक अपने मस्तक पर धारण किया। उनको रत्नजड़ित सोने के सिंहासन पर बैठाकर हाथ जोड़कर विनय सहित निवेदन किया—मुनिश्वरो ! आपके दर्शन तो योगियों को भी दुर्लभ हैं; मुझसे ऐसा क्या पुण्य बना है, जिसके फलस्वरूप मुझे स्वतः आपका दर्शन प्राप्त हुआ। इस लौकिक संसार के दृश्य प्रपञ्च में फंसे रहने के कारण मनुष्य अपनी सर्वसाक्षी आत्मा को नहीं देख सकते; इसी प्रकार यद्यपि आप समस्त लोकों में विचरते हैं तो भी अनाधिकारी लोग आपको नहीं देख पाते। अपने अहोभाग्य की प्रशंसा करते हुए उन्होंने अत्यन्त आदरपूर्वक विनम्र शब्दों में कहा—आप संसार के दुःखों से संतप्त जीवों के परम हितकारी हैं; इसलिये मैं आपसे यह पूछना चाहता हूँ कि इस संसार में मनुष्य का किस प्रकार सरलता से कल्याण हो सकता है।

भगवान् सनकादि ने आदिराज पृथु का ऐसा प्रश्न सुनकर उनकी बुद्धि की प्रशंसा की और उन्हें विस्तारपूर्वक कल्याण का उपदेश देते हुए कहा—

धन और इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन करना मनुष्य के सभी पुरुषार्थों का नाश करने वाला है क्योंकि इनकी चिन्ता से वह ज्ञान और विज्ञान से भ्रष्ट होकर वृक्षादि स्थावर योनियों में जन्म पाता है। इसलिये जिसे अज्ञान्धकार से पार होने की इच्छा हो, उस पुरुष को विषयों में आसक्ति

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कभी नहीं करनी चाहिये; क्योंकि यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति में बड़ी बाधक है। जो मनुष्य मन और इन्द्रियरूप मगरमच्छों से घिरे हुए इस संसार-सागर को योगादि दुष्कर साधनों से पार करना चाहते हैं, उनका उस संसार-सागर से पार पहुंचना कठिन ही है; क्योंकि उन्हें कर्णधार रूप श्रीहरि का आश्रय नहीं है। अतः तुम तो भगवान् के आराधनीय चरण-कमलों को ही नौका बनाकर अनायास ही इस दुस्तर दुःख-समुद्र को पार कर लो।

भगवान् सनकादि के इस अमृतमय उपदेश को सुनकर आनन्दमय होकर आदिराज पृथु ने उनकी स्तुति करते हुए पुनः उनकी श्रद्धा-भक्ति पूर्वक सविधि पूजा की।

ऋषिगण प्रलय के कारण पहले कल्प का आत्मज्ञान भूल गये थे। श्रीभगवान् ने अपने इस अवतार में उन्हें भी यथोचित उपदेश किया, जिससे उन लोगों ने शीघ्र ही अपने हृदय में उस तत्त्व का साक्षात्कार कर लिया।

नारदजी को इन्होंने श्रीमद्भागवत का उपदेश किया था। ये सनकादि प्रमुख रूप से योगवेत्ता, सांख्यज्ञान-विशारद, धर्मशास्त्रों के आचार्य तथा मोक्ष धर्म के प्रवर्तक हैं। प्राणी मात्र के सच्चे शुभाकांक्षी हैं और अपने योगबल, विद्याओं तथा 'हरिःशरणम्' मन्त्र के जप-प्रभाव से सर्वदा पाँच वर्ष के ही कुमार बने रहने वाले हैं। ऐसे भगवान् सनकादि के चरणों में अनेक-अनेक बार प्रणाम।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १५-१६ के आधार से)

भगवान् वराह (२)

सोपान ४

श्री भगवान् हरि ने सनकादि के शाप का फल पाने के लिए जय-विजय पार्षदों को मर्त्यलोक में जाने की आज्ञा दे दी। ये जय-विजय पार्षद प्रजापति कश्यपजी के वीर्य द्वारा दिति के गर्भ में स्थापित हो गये और उन्होंने दिति के गर्भ से दोनों यमज (जुड़वाँ) पुत्र के रूप में जन्म ग्रहण किया। जो पहले जन्मा उसका नाम 'हिरण्यकशिपु' तथा जो बाद में जन्मा उसका नाम 'हिरण्याक्ष' रखा गया। वे दोनों दैत्य जन्म लेते ही पर्वताकार

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवं परम पराक्रमी हो गये। उन दैत्यों के पृथ्वी पर पैर रखते ही पृथ्वी, आकाश और स्वर्ग में अनेक उपद्रव होने लगे। अन्तरिक्ष में अन्धेरा छा गया और बिजली चमकने लगी, पृथ्वी और पर्वत कांपने लगे, भयानक आँधी चलने लगी। सर्वत्र अमङ्गल सूचक शब्द तथा प्रलयकारी दृश्य दृष्टिगोचर होने लगे। सनकादि के अतिरिक्त सभी जीव भयभीत हो गये। सब ही यह समझने लगे कि संसार का प्रलय होने वाला ही है।

हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष दोनों भाइयों में बड़ी प्रीति थी। दोनों ही एक-दूसरे को प्राणाधिक प्यार करते थे। दोनों ही महाबलशाली, अमित पराक्रमी एवं उद्धत थे। वे अपने सम्मुख किसी को कुछ नहीं समझते थे। हिरण्याक्ष ने अपनी विशाल गदा कंधे पर रखी और स्वर्ग में जा पहुँचा। इन्द्रादि देवताओं के लिये उसका सामना करना सम्भव नहीं था, सब भयभीत होकर छिप गये। निराश हिरण्याक्ष अपने प्रतिपक्षी को ढूँढने लगा, किन्तु उसके सम्मुख कोई टिक नहीं पाता था।

एक बार उसने विचार किया कि मर्त्यलोक में रहने वाले पुरुष पृथ्वी पर रहकर देवताओं का यजन करेंगे, इससे उनका बल, वीर्य और तेज बढ़ जायगा—यह सोच कर महान् असुर हिरण्याक्ष, ब्रह्माजी द्वारा सृष्टि-रचना की जाने पर उसे धारण करने की भूमि में जो धारणा-शक्ति थी, उसे ले जाकर जल के अन्दर-ही-अन्दर रसातल में चला गया। आधार-शक्ति से रहित होकर यह पृथ्वी रसातल में चली गयी।

मदोन्मत्त हिरण्याक्ष ने देखा कि उसके तेज के सम्मुख सभी देवता छिप गये हैं, तब वह महाबलवान् दैत्य जल-क्रीड़ा के लिये गम्भीर समुद्र में घुस गया। उसको देखते ही वरुण के सैनिक जलचर भयभीत होकर दूर भाग गये। वहाँ भी किसी को न पाकर वह समुद्र के ऊपर रहने वाली तरंगों पर ही अपनी गदा पटकने लगा। इस प्रकार अपने प्रतिपक्षियों को ढूँढते हुए वह वरुण की राजधानी विभावरीपुरी में जा पहुँचा। वहाँ वरुण देवता को बड़ी ही अशिष्टता से व्यंग्य कसते हुए प्रणाम करते हुए कहा, आपने कितने ही पराक्रमियों के वीर्यमद को चूर्ण किया है। एक बार तो आपने सम्पूर्ण दैत्यों को पराजित कर राजसूय यज्ञ भी किया था। कृपया अब मेरी युद्ध की क्षुधा का निवारण करने के लिए मुझे युद्ध की भिक्षा दीजिये।

उन्मत्त, पराक्रमी शत्रु के ऐसे व्यंग्य सहित वाक्यों को सुनकर वरुण देव क्रुद्ध तो बहुत हुए, पर प्रबल दैत्य को देखकर धैर्यपूर्वक उन्होंने कहा, भाई! अब तो मेरी युद्ध करने की इच्छा नहीं है। मेरी दृष्टि में श्रीभगवान् हरि के अतिरिक्त अन्य कोई योद्धा नहीं दिखाई देता, जो तुम्हारे जैसे वीर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुंगव को सन्तुष्ट कर सके, तुम उन्हीं के पास जाओ। उनसे भिड़ने पर तुम्हारा अहंकार शान्त हो जायगा। वे तुम-जैसे दैत्यों के संहार के लिए अनेक अवतार ग्रहण किया करते हैं।

× × × ×

पितामह ब्रह्माजी ने विश्व विस्तार विषय में विचार किया; वे देख चुके थे कि मरीचि आदि महान् शक्तिशाली ऋषियों से भी सृष्टि का विस्तार अधिक नहीं हुआ, अतः वे मन-ही-मन पुनः चिन्ता करने लगे—'अहो! बड़ा आश्चर्य है, मेरे निरन्तर प्रयत्न करने पर भी प्रजा की वृद्धि नहीं हो रही है। मालूम होता है, इसमें दैव ही कुछ विघ्न डाल रहा है।' जिस समय यथोचित क्रिया करने वाले श्री ब्रह्माजी इस प्रकार दैव के विषय में विचार कर रहे थे, उसी समय अकस्मात् उनके शरीर के दो भाग हो गये। 'क' ब्रह्माजी का नाम है, उन्हीं से विभक्त होने के कारण शरीर को 'काय' कहते हैं। उन दोनों विभागों से एक स्त्री-पुरुष का जोड़ा प्रकट हुआ।

यस्तु तत्र पुमान् सोऽभून्मनुः स्वायम्भुवः स्वराट्।
स्त्री याऽऽसीच्छतरूपाख्या महिष्यस्य महात्मनः॥
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १२ श्लोक ५३)

'उनमें जो पुरुष था, वह सार्वभौम सम्राट स्वायम्भुव मनु हुए और जो स्त्री थी, वह उनकी महारानी शतरूपा हुईं।'

पितामह ब्रह्माजी के एक भाग शरीर से 'नर' हुआ और दूसरे भाग से 'नारी'। ब्रह्माजी उनको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। 'नर की ओर देखकर उन्होंने कहा, मेरे मन के अनुरूप होने के कारण तुम्हारा नाम 'मनु' होगा और मुझ स्वयम्भू के पुत्र होने से तुम 'स्वायम्भुव' नाम से विख्यात होगे। तुम्हारे पास में अपने शत-शत रूपों से मन को आकृष्ट करने वाली जो सुन्दरी खड़ी है, यह 'शतरूपा' नाम से प्रसिद्ध होगी। तुम पति और यह तुम्हारी पत्नी होगी। मेरे आधे अङ्ग से बनने के कारण यह तुम्हारी अर्धाङ्गिनी होगी। तुम्हारे मध्य धर्म स्थित है, इसे साक्षी देकर तुम इसे सहधर्मिणी बना लो। तुम्हारे वंशज मनुष्य कहलायेंगे।

'स्वायम्भुव मनु ने अपने पिता ब्रह्माजी के सामने हाथ जोड़कर अत्यन्त विनयपूर्वक कहा—भगवन्! एक मात्र आप ही सम्पूर्ण प्राणियों के जीवनदाता हैं और आप ही सबको जीविका प्रदान करने वाले पिता हैं। हम ऐसा कौन सा उत्तम कार्य करें, जिससे आप संतुष्ट हों और लोक में हमारे यश का विस्तार हो।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वायम्भुव मनु की विनय को सुनकर ब्रह्माजी ने कहा—

प्रीतस्तुभ्यमहं तात स्वस्ति स्ताद्वां क्षितीश्वर ।
यन्निर्व्यलीकेन हृदा शाधि मेत्यात्मनार्पितम् ।।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १३ श्लोक ९)

'तात ! पृथ्वीपते ! तुम दोनों का कल्याण हो । मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ; क्योंकि तुमने निष्कपट भाव से 'मुझे आज्ञा दीजिये' यों कहकर मुझे आत्मसमर्पण किया है ।'

वीर ! पुत्रों को अपने पिता की इसी रूप में पूजा करनी चाहिये । उन्हें उचित है कि दूसरों के प्रति ईर्ष्या का भाव न रख कर जहाँ तक बने, उनकी आज्ञा का आदरपूर्वक सावधानी से पालन करें । तुम अपनी इस भार्या से अपने ही समान गुणवती सन्तति उत्पन्न करके धर्मपूर्वक पृथ्वी का पालन करो । राजन् ! प्रजापालन से मेरी बड़ी सेवा होगी और तुम्हें प्रजापालन करते देखकर भगवान् श्रीहरि भी तुमसे प्रसन्न होंगे । जिन पर यज्ञमूर्ति जनार्दन भगवान् प्रसन्न नहीं होते, उनका सारा श्रम व्यर्थ ही होता है; क्योंकि वे तो एक प्रकार से अपनी आत्मा का ही अनादर करते हैं ।

मनुजी ने कहा—

आदेशेऽहं भगवतो वर्तेयामीवसूदन ।
स्थानं त्विहानुजानीहि प्रजानां मम च प्रभो ।।
यदोकः सर्वसत्त्वानां मही मग्ना महाम्भसि ।
अस्या उद्धरणे यत्नो देव देव्या विधीयताम् ।।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १३ श्लोक १४-१५)

'पाप का नाश करने वाले पिताजी ! मैं आपकी आज्ञा का पालन अवश्य करूँगा; किन्तु आप इस जगत् में मेरे और भावी प्रजा के रहने के लिए स्थान बतलाइये । देव ! सब जीवों का निवास स्थान पृथ्वी इस समय प्रलय के जल में डूबी हुई है । आप इस देवी के उद्धार का प्रयत्न कीजिये ।'

पृथ्वी को इस प्रकार अथाह जल में डूबी हुई देखकर ब्रह्माजी बहुत देर तक मन में यह सोचते रहे कि 'इसको कैसे निकालूँ ।' जिस समय मैं लोक रचना में लगा हुआ था, उस समय पृथ्वी जल में डूब जाने से रसातल को चली गयी । हम लोग सृष्टिकार्य में नियुक्त हैं, अतः इसके लिये हमें क्या करना चाहिये ? अब तो जिनके संकल्प मात्र से मेरा जन्म हुआ है, वे सर्वशक्तिमान् श्रीहरि ही मेरा यह कार्य पूरा करें ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्यभिध्यायतो नासाविवरात्सहसानघ ।
वराहतोको निरगादङ्गुष्टपरिमाणकः ।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय १३ श्लोक १८)

'ब्रह्माजी इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि उनके नाशाछिद्र से अकस्मात् अँगूठे के बराबर आकार का एक वराह-शिशु निकला ।'

बड़े आश्चर्य की बात तो यही हुई कि आकाश में खड़ा हुआ वह वराह-शिशु ब्रह्माजी के देखते-देखते ही क्षण भर में हाथी के बराबर हो गया । उस विशाल वराह मूर्ति को देख कर मरीचि, सनकादि और स्वायम्भुव मनु सहित ब्रह्माजी अनेक प्रकार से विचार कर रहे थे । अहो ! शूकर के रूप में यह कौन ऐसा दिव्य प्राणी प्रकट हुआ है ? अभी-अभी मेरी नाक से अंगूठे के पौर के बराबर निकला था; किन्तु एक क्षण में ही यह इस प्रकार पहले हाथी के बराबर फिर एक क्षण में ही पर्वताकार हो गया है । अवश्य ही भगवान् अपनी माया के रूप में हम लोगों के मन को मोहित कर रहे हैं ।

यह सोच ही रहे थे कि भगवान् यज्ञपुरुष पर्वताकार होते ही गरजने लगे । वह गरजने की आवाज सभी दिशाओं में प्रतिध्वनित होने लगी । जिससे ब्रह्मा, मरीचि, सनकादि और श्रेष्ठ ब्राह्मणगण हर्ष से भर गये । मायामय वराह भगवान् की घुरघुराहट को सुनकर वे जनलोक, तपलोक और सत्यलोक निवासी मुनिगण तीनों वेदों के पवित्र मन्त्रों से उनकी स्तुति करने लगे । स्तुति सुनकर वराह भगवान् बड़े प्रसन्न हुए एक बार फिर गजराज की सी लीला करते हुए जल में घुस गये । उनका शरीर बड़ा कठोर था और नेत्रों से तेज निकल रहा था, त्वचा पर कड़े-कड़े बाल थे, दाढ़ें सफेद थीं । भगवान् स्वयं यज्ञ पुरुष हैं, तथापि शूकररूप धारण करने के कारण अपनी नाक से सूंघ-सूंघकर पृथ्वी का पता लगा रहे थे ।

वज्रमय पर्वत के तुल्य अत्यन्त कठोर और विशाल वराह भगवान् के कूदते ही महासागर में ऊँची-ऊँची लहरें उठने लगी । समुद्र जैसे व्याकुल होकर आकाश की ओर जाने लगा । वराह भगवान् बड़े वेग से जल को चीरते हुए रसातल में पहुँचे । वहाँ उन्होंने सम्पूर्ण प्राणियों की आश्रयभूता पृथ्वी को देखा । प्रभु को सम्मुख उपस्थित देखकर पृथ्वी ने प्रसन्न होकर उनकी अनेक प्रकार से स्तुति की—

'शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण करने वाले कमलनयन प्रभो ! आपको नमस्कार है । आज आप इस पाताल से मेरा उद्धार कीजिये । पूर्व-काल में आपसे ही मैं उत्पन्न हुई थी । प्रभो ! आपका जो पर तत्त्व है, उसे तो कोई भी नहीं जानता, अतः आपका जो रूप अवतारों में प्रकट होता है,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उसी की देवगण पूजा करते हैं। मन में जो कुछ संकल्प किया जाता है, चक्षु आदि इन्द्रियों से जो कुछ विषय रूप में ग्रहण करने योग्य है, बुद्धि द्वारा जो अनुमान होता है, वह सब आपका ही रूप है। हे पुरुषोत्तम! हे परमेश्वर! मूर्त-अमूर्त, दृश्य-अदृश्य तथा जो कुछ इस प्रसंग में मैंने कहा है वह सब आप ही हैं। अतः आपको नमस्कार है, बारम्बार नमस्कार है।'

पृथ्वी की स्तुति सुनकर भगवान् वराह ने घर्र-घर्र शब्द से गर्जना की और फिर विकसित कमल के समान नेत्रों वाले उन वराह भगवान् ने अपनी दाढ़ों से पृथिवी को उठा लिया और वे कमल-दल के समान श्याम और नीलाचल के सदृश विशालकाय भगवान् रसातल से बाहर निकले।

× × × ×

वरुण देवता ने जब हिरण्याक्ष को कह दिया कि युद्ध में तुमको भगवान् हरि ही सन्तुष्ट कर सकेंगे। हिरण्याक्ष भगवान् हरि का पता लगाने के लिए नारदजी के पास पहुँचा और नारदजी से कहा—मुझको भगवान् हरि से युद्ध करने की प्रबल इच्छा हो रही है, आप उनका पता बतलाइये। वे इस समय कहाँ मिलेंगे ?

नारदजी ने कहा—श्रीहरि ने अभी-अभी श्वेत वराह के रूप में समुद्र में प्रवेश किया है। यदि शीघ्रता करो तो तुम उन्हें पा सकोगे।

हिरण्याक्ष तत्काल ही रसतल की ओर दौड़ा और वहाँ पहुँच गया। वहाँ उसकी दृष्टि अपनी विशाल दाढ़ों की नोंक पर पृथ्वी को ऊपर की ओर ले जाते हुए वराह भगवान् पर पड़ी।

हिरण्याक्ष ने कहा—'अरे सूकर रूपधारी सुराधम! ठहर, मेरी शक्ति के सामने तुम्हारी योगमाया नहीं चल सकती। मेरे देखते हुए तू इस पृथ्वी को लेकर नहीं भाग सकेगा। निर्लज्ज कहीं का यह क्या कर रहा है।'

वराह भगवान् पृथ्वी को अपनी दाढ़ों पर रखे हुए, हिरण्याक्ष के दुर्वचनों का उत्तर नहीं दे रहे थे। क्योंकि वे भयभीत पृथ्वी को उचित स्थान पर पहले स्थापित करना चाहते थे। कुपित होकर हिरण्याक्ष ने पुनः कहा—'सत्य है, तेरे जैसे व्यक्ति ही ऐसे नहीं करने वाले कृत्य कर डालते हैं।'

वराह भगवान् ने पृथ्वी को जल के ऊपर लाकर व्यवहार योग्य स्थल पर स्थापित कर उसमें अपनी आधार शक्ति का संचार किया। उस समय हिरण्याक्ष के सामने ही भगवान् पर देवताओं ने पुष्प-वृष्टि की और ब्रह्माजी उनकी स्तुति करने लगे।

उस समय ही हिरण्याक्ष अपने हाथ में गदा लिये हुए अनर्गल प्रलाप करता हुआ दौड़ कर वहाँ आया। तब वराह भगवान् ने कज्जल के पहाड़

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सदृश हिरण्याक्ष से कहा—'मैं तो तेरे सामने कुछ नहीं' किन्तु 'अब तू अपनी इच्छानुसार प्रहार कर ले।' हिरण्याक्ष ने भगवान् वराह पर गदा चलाई, भगवान् वराह ऊपर उछलकर प्रहार बचा गये और हिरण्याक्ष पर गदा का प्रहार किया। उस गदा की चोट से हिरण्याक्ष अधिक जोश में आया और भगवान् वराह तथा हिरण्याक्ष में भयानक संग्राम हुआ। दोनों के वज्र तुल्य शरीर गदा की चोट से रक्त में सन गये। इस भयानक युद्ध को देखने के लिए ब्रह्माजी, देवता, ऋषिगण वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने प्रभु से प्रार्थना की, 'प्रभो! आप शीघ्र इसका वध कर डालिये।

हिरण्याक्ष ने अनेक प्रकार के छल-छद्म और अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग किया किन्तु वराह भगवान् पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता देखकर हिरण्याक्ष श्रीहत होने लगा। अन्त में श्रीभगवान् वराह ने हिरण्याक्ष की कनपटी पर एक तमाचा मारा, उसी की चोट से हिरण्याक्ष के नेत्र बाहर निकल आये। वह पृथ्वी पर घूमता हुआ कटे वृक्ष की तरह धराशायी हो गया और उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।

ब्रह्मादि देवताओं ने हिरण्याक्ष के भाग्य की प्रशंसा करते हुए कहा—मिथ्या उपाधि से मुक्ति प्राप्त करने के लिये योगीन्द्र-मुनीन्द्र जिस महामहिम परमेश्वर का ध्यान करते हैं, उन्हें भी ऐसी मृत्यु प्राप्त नहीं होती है। भगवान् के चरण प्रहार से उनका मुख देखते हुए इस दैत्यराज ने प्राण-त्याग किया, यह धन्य है।

इसके साथ ही सुरसमुदाय ने वराह भगवान् की स्तुति की—

जितं जितं तेऽजित यज्ञभावन
त्रयीं तनुं स्वां परिधुन्वते नमः।
यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरा-
स्तस्मै नमः कारणशूकरायते ।।
(श्रीमद्भागवत ३।१३।३४)

'भगवन्! अजित्! आपकी जय हो! जय हो! यज्ञपते! अपने वेदत्रयी रूप शरीर को फटकारने वाले आपको नमन है। आपके रोमकूपों में समस्त वैदिक यज्ञ छिपे हैं। पृथ्वी के उद्धार के लिये सूकर रूप धारण करने वाले आपको नमस्कार है।'

इसके पश्चात् वराह भगवान् कोकामुख स्थान पर (जो नेपाल राज्य की कोसी नदी के किनारे धवलागिरि शिखर पर वराह क्षेत्र है) चले गये और वहाँ वराह रूप त्याग कर अपना चतुर्भुज रूप धारण किया। इस स्थान पर कोकामुख नाम से तीर्थ है। वराह भगवान् की चतुर्भुज मूर्ति मन्दिर में विराजमान है। वराह भगवान् के चरणों में अनेक बार प्रणाम है।

(श्रीमद्भागवत, वाराह पुराण, नृसिंह पुराण, विष्णु पुराण के आधार से)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवर्षि नारद (३)

सोपान ५

अहो देवर्षिर्धन्योऽयं यत्कीर्तिं शार्ङ्गधन्वनः ।
गायन्माद्यन्निदं तन्त्र्या रमयत्यातुरं जगत् ।।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध प्रथम अध्याय ६ श्लोक ३९)

'ये देवर्षि नारद धन्य हैं; क्योंकि ये शार्ङ्गपाणि भगवान की कीर्ति को अपनी वीणा पर गा-गाकर स्वयं तो आनन्दमग्न होते ही हैं, साथ-साथ इस त्रितापतप्त जगत् को भी आनन्दित करते रहते हैं।'

श्रीभगवान् के अनन्य परम भक्त शिरोमणि नारदजी ने पितामह ब्रह्माजी के मन में विचार आते ही श्रीभगवान् के अंश से अवतार ग्रहण किया। इसके विषय में परम तपस्वी, सर्वदर्शी वीणापाणि नारदजी ने स्वयं अपने मुख से अपनी पूर्वजन्म चरित्र की कथा सुनाते हुए कहा—

अहं पुरातीतभवेऽभवं मुने
दास्यास्तु कस्याश्चन वेदवादिनाम् ।
निरूपितो बालक एव योगिनां
शुश्रूषणे प्रावृषि निर्विविक्षताम् ।।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अध्याय ५ श्लोक २३)

'पिछले कल्प में अपने पूर्व जीवन में मैं वेदवादी ब्राह्मणों की एक दासी का लड़का था। वे योगी वर्षा ऋतु में एक स्थान पर चातुर्मास्य कर रहे थे। बचपन में ही मैं उनकी सेवा में नियुक्त कर दिया गया था।'

मैं यद्यपि बालक था, फिर भी किसी प्रकार की चञ्चलता नहीं करता था, जितेन्द्रिय था, खेलकूद से दूर रहता था और योगियों की आज्ञानुसार उनकी सेवा करता था। मैं बोलता भी बहुत कम था। मेरे शील-स्वभाव को देखकर समदर्शी मुनियों ने मुझ सेवक पर अत्यन्त अनुग्रह किया। उनकी अनुमति प्राप्त करके वर्तनों में लगा हुआ जूँठन मैं एक बार खा लिया करता था। इससे मेरे समस्त पाप धुल गये। इस प्रकार उनकी सेवा करते-करते मेरा हृदय शुद्ध हो गया और वे लोग जैसा भजन-पूजन करते थे, उसीमें मेरी भी रुचि हो गई। उस सत्संग में उन लीलागान परायण महात्माओं के अनुग्रह से मैं प्रतिदिन श्रीकृष्ण की मनोहर कथाएँ सुना करता

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रद्धापूर्वक एक-एक पद श्रवण करते-करते प्रियकीर्ति भगवान् में मेरी रुचि हो गयी। जब भगवान् में मेरी रुचि हो गयी, तब उन मनोहरकीर्ति प्रभु में मेरी बुद्धि भी निश्चल हो गयी। उस बुद्धि से मैं इस सम्पूर्ण सत् और असत् रस जगत् को अपने परब्रह्मस्वरूप आत्मा में माया से कल्पित देखने लगा। इस प्रकार शरद् और वर्षा-इन दो ऋतुओं में तीनों समय उन महात्मा मुनियों ने श्रीहरि के निर्मल यश का सङ्कीर्तन किया और मैं प्रेम से प्रत्येक बात सुनता रहा। अब चित्त के रजोगुण और तमोगुण को नाश करने वाली भक्ति का मेरे हृदय में प्रादुर्भाव हो गया। मैं उनका बड़ा अनुरागी था; विनयी था।

उन लोगों की सेवा से मेरे पाप नष्ट हो चुके थे। मेरे हृदय में श्रद्धा थी, इन्द्रियों में संयम था एवं शरीर, वाणी और मन से मैं उनका आज्ञाकारी था। उन दीनवत्सल महात्माओं ने जाते समय कृपा करके मुझे उस गुह्यतम ज्ञान का उपदेश दिया, जिसका उपदेश स्वयं भगवान् ने अपने श्रीमुख से किया है। उस उपदेश से ही जगत् के निर्माता भगवान् कृष्ण की माया के प्रभाव को मैं जान सका, जिसके जान लेने पर उनके परमपद की प्राप्ति हो जाती है।

श्री पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण के प्रति समस्त कर्मों को समर्पित कर देना ही संसार के तीनों तापों की एकमात्र औषधि है। प्राणियों को जिस पदार्थ के सेवन से जो रोग हो जाता है, वही पदार्थ चिकित्साविधि के अनुसार प्रयोग करने से क्या उस रोग को दूर नहीं करता ? इसी प्रकार यद्यपि सभी कर्म मनुष्यों को जन्म-मृत्युरूप संसार के चक्र में डालने वाले हैं तथापि जब वे भगवान् को समर्पित कर दिये जाते हैं, तब उनका कर्मपना ही नष्ट हो जाता है। इस लोक में जो शास्त्रविहित कर्म भगवान् की प्रसन्नता के लिये किये जाते हैं, उन्हीं से पराभक्तियुक्त ज्ञान की प्राप्ति होती है। उस भगवदर्थ कर्म के मार्ग में भगवान् के आज्ञानुसार आचरण करते हुए लोग बार-बार भगवान् श्रीकृष्ण के गुण और नामों का कीर्तन तथा स्मरण करते हैं—

नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय धीमहि।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय नमः सङ्कर्षणाय च ॥
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अध्याय ५ श्लोक ३७)

'प्रभो ! आप भगवान् वासुदेव को नमस्कार है। हम आपका ध्यान करते हैं। प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और संकर्षण को भी नमस्कार है।'

इस प्रकार जो पुरुष चतुर्व्यूहरूपी भगवन्मूर्तियों के नाम द्वारा प्राकृत-मूर्तिरहित अप्राकृत मन्त्रमूर्ति भगवान् यज्ञपुरुष का पूजन करता है, उसी का

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ज्ञान पूर्ण एवं यथार्थ है। जब मैंने भगवान् की आज्ञा का इस प्रकार पालन किया, तब इस बात को जानकर भगवान् श्रीकृष्ण ने मुझे आत्मज्ञान, ऐश्वर्य और अपनी भावरूपा प्रेमाभक्ति का दान किया। जो लोग दुःखों के द्वारा बार-बार रौंदे जा रहे हैं, उनके दुःख की शान्ति इसीसे हो सकती है और कोई उपाय नहीं है।

नारदजी से यह कथा सुनने के पश्चात् श्रीव्यासजी ने पूछा—नारद जी ! जब आपको ज्ञानोपदेश करने वाले महात्मा चले गये, तब आपने क्या किया ? उस समय तो आपकी अवस्था बहुत छोटी थी। आपकी शेष आयु किस प्रकार व्यतीत हुई और मृत्यु के समय आपने किस विधि से अपने शरीर का परित्याग किया ? देवर्षे ! काल तो सब ही वस्तुओं को नष्ट कर देता है, उसने आपकी इस पूर्व कल्प की स्मृति का कैसे नाश नहीं किया।

श्रीनारदजी ने कहा—मुझे ज्ञानोपदेश करने वाले महात्मागण जब चले गये, तब मैंने इस प्रकार अपना जीवन व्यतीत किया—यद्यपि उस समय मेरी अवस्था बहुत छोटी थी। मैं अपनी माँ का इकलौता लड़का था। एक तो वह स्त्री थी, दूसरे मूढ़ और तीसरे दासी थी। मुझे उसके सिवा कोई सहारा नहीं था उसने अपने को मेरे स्नेहपाश में बाँध रखा था।

वह मेरे योगक्षेम की चिन्ता तो बहुत करती थी, परन्तु पराधीन होने के कारण कुछ कर नहीं पाती थी। यह संसार सब ईश्वराधीन है। मैं भी अपनी माँ के स्नेह बन्धन में बंधा हुआ उसी ब्राह्मण-बस्ती में रहा। एक दिन अकस्मात् मेरी माँ को साँप ने डस लिया और उसकी जीवनलीला समाप्त हो गयी। मैंने इसे भगवान् का अनुग्रह माना और उत्तर दिशा की ओर चल पड़ा। उस ओर चलते-चलते मुझे अनेक धन्य-धान्य से सम्पन्न देश, नगर, गाँव, किसानों की चलती-फिरती बस्तियाँ, खाने, खेड़े, नदी, पर्वतों के तटवर्ती पड़ाव, वाटिकाएँ, वन-उपवन, रंग-बिरंगे धातुओं से युक्त विचित्र पर्वत दिखायी पड़े; कहीं-कहीं हिंसक जानवरों से भरे विकट सघन-जंगल थे। कहीं-कहीं शीतल स्वच्छ जल से भरे हुए जलाशय जिनमें कमल भी खिले हुए थे। कहीं-कहीं सुन्दर-सुन्दर अनेक प्रकार की मीठी बोली बोलने वाले पक्षियों के कलरव सुनने व देखने में आये। यह सब देखते हुए मैं अकेला ही आगे बढ़ता चला जा रहा था। इस प्रकार का लम्बा मार्ग तय करते-करते एक घोर गहन वन में पहुँच गया। उसमें नरकट, बाँस, सेंठा, कुश, कीचक आदि विकट काँटों युक्त वृक्ष थे। उस वन की लम्बाई-चौड़ाई का भी कुछ अनुमान नहीं हो पा रहा था। उसमें साँप, सियार, भेड़िये, बाघ, भालू, सिंह आदि अनेक हिंसक जन्तु भरे पड़े थे। वन देखने में बड़ा भयावह लगता था।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनेक दिनों तक चलते-चलते मेरा शरीर और इन्द्रियाँ शिथिल हो गयीं। मुझे भूख-प्यास ने अत्यन्त व्याकुल बना दिया था।

आगे चलते-चलते एक सुन्दर स्वच्छ जल से युक्त नदी मिली। उसमें मैंने स्नान, जलपान और आचमन किया। इससे मेरी थकावट दूर हुई। उसी निर्जन वन में एक पीपल के वृक्ष के नीचे आसन लगा कर बैठ गया। उन महात्माओं से जैसा मैंने सुना था। हृदय में रहने वाले परमात्मा के उसी स्वरूप का मैं मन-ही-मन ध्यान करने लगा। भक्तिभाव से वशीकृत चित्त द्वारा भगवान् के चरण कमलों का ध्यान करते ही भगवत्-प्राप्ति की उत्कट लालसा से मेरे नेत्रों में आंसू छलछला आये और हृदय में धीरे-धीरे भगवान् प्रकट हो गये। व्यासजी ! उस समय प्रेमभाव के अत्यन्त उद्रेक से मेरा रोम-रोम पुलकित हो उठा। हृदय अत्यन्त शान्त और शीतल हो गया। उस आनन्द की बाढ़ में मैं ऐसा डूब गया कि मुझे अपना और ध्येय वस्तु का तनिक भी भान नहीं रहा। भगवान् का यह अनिर्वचनीय रूप समस्त शोकों का नाश करने वाला और मन के लिये अत्यन्त लुभावना था। सहसा उसे न देख मैं बहुत ही विकल हो गया और अनमना सा होकर आसन से उठ खड़ा हुआ।

मैंने उस स्वरूप के दर्शन पुनः करने की अनेक चेष्टाएं की किन्तु मैं उसे नहीं देख सका। मैं अतृप्त के समान आतुर हो उठा। इस प्रकार उस निर्जन वन में मुझे दर्शनों के लिए चेष्टा प्रयत्न करते हुए देखकर स्वयं भगवान् ने जो वाणी के विषय नहीं है, बड़ी गम्भीर व मधुर वाणी से मेरे शोक को शान्त करते हुए कहा—'खेद है कि इस जन्म में तुम मेरा दर्शन नहीं कर सकोगे। जिनकी वासनाएँ पूर्णतया शान्त नहीं हो गयी हैं, उन कच्चे रोगियों को मेरा दर्शन अत्यन्त दुर्लभ है। निष्पाप बालक ! तुम्हारे हृदय में मुझे प्राप्त करने की लालसा जाग्रत करने के लिये ही मैंने—एक बार तुम्हें अपने रूप की झलक दिखायी है। मुझे प्राप्त करने की इच्छा वाला साधक धीरे-धीरे अपने मन की सम्पूर्ण वासनाओं का भली प्रकार से त्याग कर देता है। अल्पकालीन सन्त सेवा से ही तुम्हारी चित्तवृति मुझमें स्थिर हो गयी है। अब तुम इस प्राकृतमलीन शरीर को छोड़कर मेरे पार्षद हो जाओगे। मुझे प्राप्त करने का तुम्हारा यह दृढ़ निश्चय कभी किसी प्रकार से नहीं टूटेगा। समस्त सृष्टि का प्रलय हो जाने पर भी मेरी कृपा से तुम्हें मेरी स्मृति बनी रहेगी।' आकाश के समान अव्यक्त सर्वशक्तिमान् महान् परमात्मा इतना कहकर चुप हो रहे। उनकी इस कृपा का अनुभव करके मैंने उन श्रेष्ठों से भी श्रेष्ठतर भगवान् को सिर झुकाकर प्रणाम किया। तब से ही मैं लज्जा-संकोच छोड़कर भगवान् के अत्यन्त रहस्यमय और मङ्गलमय नामों

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और लीलाओं का कीर्तन और स्मरण करने लगा। स्पृहा और मद-मत्सर मेरे हृदय से पहले ही निवृत हो चुके थे, अब में आनन्द से काल की प्रतीक्षा करता हुआ पृथ्वी पर विचरने लगा।

व्यासजी ! इस प्रकार से भगवान् की कृपा द्वारा मेरा हृदय शुद्ध हो गया, आसक्ति मिट गयी और मैं श्रीकृष्ण परायण हो गया। कुछ समय बाद, जैसे एकाएक बिजली-सी चमकी, वैसे ही अपने समय पर मेरी मृत्यु आ गयी। मुझे शुद्ध भगवत्पार्षद-शरीर प्राप्त होने का अवसर आने पर प्रारब्ध-कर्म समाप्त हो जाने के कारण पाञ्चभौतिक शरीर नष्ट हो गया। कल्प के अन्त में जिस समय भगवान् नारायण एकार्णव (प्रलयकालीन समुद्र) के जल में शयन करते हैं, उस समय उनके हृदय में शयन करने की इच्छा से इस सारी सृष्टि को समेट कर ब्रह्माजी जब प्रवेश करने लगे, तब उनके श्वास के साथ मैं भी उनके हृदय में प्रवेश कर गया। एक हजार चतुर्युगी बीत जाने पर जब ब्रह्मा जगे और उन्होंने सृष्टि करने की इच्छा की, तब उनकी इन्द्रियों से मरीचि आदि ऋषियों के साथ मैं भी प्रकट हो गया। तभी से मैं भगवान् की कृपा से वैकुण्ठादि में और तीनों लोकों में बाहर और भीतर बिना रोक-टोक विचरण किया करता हूँ। मेरे जीवन का व्रत भगवद्भजन अखण्ड-रूप से चलता रहता है। भगवान् की दी हुई इस स्वरब्रह्म से विभूषित वीणा पर तान छेड़ कर मैं उनकी लीलाओं का गान करता हुआ सारे संसार में विचरता हूँ। जब मैं उनकी लीलाओं का गान करने लगता हूँ, तब वे प्रभु जिनके चरण-कमल समस्त तीर्थों के उद्गम स्थान हैं और जिनका यशोगान मुझे बहुत ही प्रिय लगता है, बुलाये हुए की भाँति तुरन्त मेरे हृदय में आकर दर्शन दे देते हैं। जिन लोगों का चित्त निरन्तर विषय-भोगों की कामना से आतुर हो रहा है, उनके लिये भगवान् की लीलाओं का कीर्तन संसार-सागर से पार जाने का जहाज है, यह मेरा अपना अनुभव है। काम और लोभ की चोट से बार-बार घायल हुआ हृदय श्रीकृष्ण सेवा से जैसी प्रत्यक्ष शान्ति का अनुभव करता है, यम-नियम आदि योग मार्गों से वैसी शान्ति नहीं मिल सकती। व्यासजी ! आप निष्पाप हैं। आपने मुझसे जो पूछा था, वह सब अपने जन्म और साधना का रहस्य तथा आपकी आत्म तुष्टि का उपाय मैंने बतला दिया। देवर्षि नारदजी ने इस प्रकार कहकर जाने की अनुमति ली और वीणा बजाते हुए स्वच्छन्द विचरण करने के लिये वे चल पड़े।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अध्याय ५-६ के आधार से)

श्रीनारदजी भगवान् के मन के अवतार हैं। कृपासागर भगवान् की

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Chennai and eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जैसी भी इच्छा होती है, सर्वज्ञ और सर्वदर्शी वीणापाणि नारदजी उसी प्रकार वैसी ही चेष्टा और प्रयत्न करते हैं।

श्रीभगवान् नारदजी का ध्यान करने योग्य स्वरूप का शास्त्रों में इस प्रकार का वर्णन मिलता है—

'ब्रह्मतेज से सम्पन्न परम तपस्वी नारदजी गौर वर्ण और अत्यन्त सुन्दर शरीर वाले हैं। उनके मस्तक पर ऊपर उठी हुई शिखा शोभा पाती है। उनके कण्ठ में उत्तम सुन्दर तुलसी की पवित्र दिव्य माला सुशोभित है। अत्यन्त कान्तिमान् इन्द्रराज के प्रदत्त नवीन पती रंग के महीन दिव्य, शुभ और बहुमूल्य सुन्दर किनारीदार दो वस्त्र धारण किये हुये हैं। उनके हाथों में सुन्दर-मनोहर वीणा और खड़ताल हैं। वे प्रसन्नचित्त मुस्कान भरे हुए भगवान् के ध्यान में मग्न रहते हैं। उनके उन्नत ललाट पर परम वैष्णव तिलक शोभायमान है।'

असंख्य सद्गुणों से सम्पन्न महातेजस्वी नारदजी वेद, उपनिषदों के ज्ञाता, वेदान्त, योग, ज्योतिष, आयुर्वेद धर्मशास्त्र एवं संगीत आदि अनेक शास्त्रों के आचार्य हैं और भक्ति के तो वे मुख्याचार्य ही हैं। उनके द्वारा रचित नारद-पञ्चरात्र, नारद-भक्तिसूक्त, भागवत् मार्ग के प्रधान ग्रन्थ रत्न हैं। प्राणिमात्र की कल्याण-कामना करने वाले नारदजी श्रीहरि के मार्ग पर अग्रसर होने की इच्छा रखने वाले प्राणियों को सर्वदा सहयोग देते रहते हैं। मुमुक्षओं का मार्ग-दर्शन उनका प्रमुख कर्त्तव्य है। उन्होंने त्रिलोकी के कितने प्राणियों को किस प्रकार परम परमेश्वर के पावन पद-पद्मों में पहुँचा दिया इसकी गणना सम्भव नहीं। उनमें से कतिपय परम पावन हरिभक्तों के स्मरण संकेत किये जा रहे है—

प्रह्लाद भक्त की दृढ़ भक्ति से भगवान् नृसिंह अवतरित हुए। प्रह्लाद के भगवद्विश्वास एवं प्रगाढ़ निष्ठा में भगवान् नारद ही मुख्य हेतु थे। जब भक्त प्रह्लाद गर्भ में थे, उनकी माता दैत्येश्वरी कयाधू को भक्ति-ज्ञान का उपदेश किया। वही ज्ञान प्रह्लाद के जीवन और जन्म को सफल करने में हेतु बना। इसी प्रकार पिता के तिरस्कार से दुःख पाया हुआ ध्रुव कुमार, वन-गमन के समय नारदजी ने उन्हें भगवान् वासुदेव का मन्त्र दिया तथा उन्हें उपासना विधि भी सविस्तार बतलायी। जब दक्ष प्रजापति ने पञ्चजन की पुत्री असिक्नी से 'हर्यश्व' नामक दस हजार पुत्र उत्पन्न कर उन्हें सृष्टि-विस्तार का आदेश दिया और एतदर्थ वे सिन्धु नदी के समुद्र संगम पर नारायणसर स्थान में तपस्या के लिये पहुँचे, तब वहाँ नारदजी ने अपने अमृतोपम भगवान् भक्ति का उपदेश करके सबको विरक्त बना दिया। दक्ष-प्रजापति बड़े दुःखी हुए।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उन्होंने पुनः 'शबलाश्व' नामक एक हजार पुत्र उत्पन्न किये। नारदजी ने कृपापूर्वक उन्हें भी भगवान् के चरणारविन्दों की भक्ति की ओर लगा दिया। तब तो अत्यन्त क्रुद्ध होकर दक्ष-प्रजापति ने अजातशत्रु नारदजी को शाप दे दिया—'तुम लोक लोकान्तरों में भटकते रहोगे और तुम्हें कहीं भी दो घन्टे से अधिक ठहरने के लिये ठौर नहीं मिलेगी।' सन्त शिरोमणि नारदजी ने इसे प्रभु की मङ्गलमयी इच्छा समझकर शाप स्वीकार कर लिया।

व्यासजी ने जब वेदों का विभाग तथा पञ्चम वेद महाभारत की भी रचना कर डाली,—परन्तु व्यासजी अपने इस काम को अपूर्ण अनुभव करते हुए खिन्न हो रहे थे। उसी समय दयानिधान नारदजी, व्यासजी के पास पहुँच गये। व्यासजी के पूछने पर नारदजी ने कहा—

व्यासजी! आपने भगवान् के निर्मल यश का गान प्रायः नहीं किया है। मेरी ऐसी मान्यता है कि वह शस्त्र या ज्ञान सर्वथा अपूर्ण हैं, जिससे जगदाधार स्वामी सन्तुष्ट न हों। वह वाणी व ज्ञान आदर के योग्य नहीं, जिसमें भगवान् की परमपावनी भक्ति व उनके चरित्रों का पवित्र वर्णन न किया गया हो। व्यासजी! आप पूर्ण ज्ञानी हैं, आप भगवान् की ही कीर्ति का—उनकी प्रेममयी सुन्दर लीलाओं का वर्णन कीजिये। उससे बड़े-बड़े ज्ञानियों की जिज्ञासा पूर्ण होती है। किसी भी प्रकार की अपूर्णता को पूर्ण करने में तथा किसी भी प्रकार के दुःखों को दूर करने में इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। तत्पश्चात् नारदजी के उपदेशानुसार व्यासजी ने श्रीमद्भागवत महापुराण की रचना कर सन्तुष्टि या पूर्ण काम होने का आनंद प्राप्त किया।

जब अविनाशी नर-नारायण बदरिकाश्रम में घोर तपस्या करते हुए अत्यन्त दुर्बल हो गये थे। उन परम तेजस्वी प्रभू का दर्शन अत्यन्त दुर्लभ हो रहा था, उस समय नारदजी उनके पास पहुँच गये। तब नर-नारायण ने भगवत्सम्बन्धी अनेक प्रश्न किये। नारदजी ने उनके प्रश्नों का उत्तम प्रकार से समाधान कर सन्तोषित किया और उनके समीप दस हजार दिव्य वर्षों तक रहकर वे भजन एवं अनुष्ठान करते रहे।

सर्वोच्च ज्ञानसम्पन्न श्रीशुकदेवजी को ज्ञानोपदेश देते हुए महामुनि नारदजी ने कहा था—

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः।
संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम्॥
अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः।
आत्मनैव सहायेन यश्चरेत् स सुखी भवेत्॥

(महाभा. शान्ति. ३३०।२०,३०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संग्रह का अन्त है विनाश। ऊँचे चढ़ने का अन्त है नीचे गिरना। संयोग का अन्त है वियोग और जीवन का अन्त है मरण।

जो अध्यात्म विद्या में अनुरक्त, कामना शून्य तथा भोगाशक्ति से दूर है, जो अकेला ही विचरण करता है, वही सुखी होता है।

यही है सर्वोपरि ज्ञान का तत्त्वसार। इसको सर्वदा ध्यान में रखते हुए श्रीभगवान् की अर्चा-पूजा व उनके गुण लीलाओं का भजन-स्मरण, मनन, चिन्तन करना ही आत्मोधार का सर्वोपरि साधन है।

सुर, असुर, मनुष्यादि जीवमात्र के सुहृद, दयामय भगवान् की भक्ति के साक्षात् मूर्तरूप भगवान् वीणापाणि देवर्षि नारदजी के चरणों में बार-बार प्रणाम।

भगवान् नर-नारायण (४)

सोपान ६

धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां
नारायणो नर ऋषिप्रवरा प्रशान्तः।
नैष्कर्म्यलक्षणमुवाच चचार कर्म
योऽद्यापि चास्त ऋषिवर्यनिषेविताङ्घ्रिः॥

(श्रीमद्भागवत ११।४।६)

'दक्ष प्रजापति की कन्या का नाम मूर्ति था। वह धर्म की पत्नि थी। उनके गर्भ से भगवान् ने ऋषि श्रेष्ठ शान्तात्मा 'नर' और 'नारायण' के रूप में अवतार लिया। उन्होंने आत्म तत्त्व का साक्षात्कार कराने वाले उस भगवदाराधनरूप कर्म का उपदेश किया, जो वास्तव में कर्म बन्धन से छुड़ाने वाला और नैष्कर्म्य स्थिति को प्राप्त कराने वाला है। उन्होंने स्वयं भी वैसे ही कर्म का अनुष्ठान किया। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि उनके चरण कमलों की सेवा करते रहते हैं। वे आज भी बदरिकाश्रम में उसी कर्म का आचरण करते हुए विराजमान हैं।'

बहुत प्राचीन समय की बात है, इन्द्र को उनकी घोर तपस्या करते हुए देखकर आशंका हुई कि यह अपनी तपस्या के प्रभाव से मेरा धाम छीनना चाहते हैं। इसलिए उसने स्त्री, वसन्त आदि अनेक दल-बल के साथ कामदेव

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को उनकी तपस्या में विघ्न डालने के लिए भेजा। कामदेव को भगवान् की महिमा का ज्ञान न था; इसलिए वह अप्सरागण तथा वसन्त मन्द-सुगन्ध वायु के साथ बदरिकाश्रम में जाकर स्त्रियों के कटाक्ष बाणों से उन्हें घायल करने की चेष्टा करने लगा। आदिदेव नर-नारायण ने यह जानकर कि यह इन्द्र का कुचक्र है, भय से काँपते हुए काम आदि को हँस कर कहा—'कामदेव, मलयमारुत और देवाङ्गनाओ ! तुम लोग डरो मत; हमारा आतिथ्य स्वीकार करो।' उस समय उनके मन में किसी प्रकार का अभिमान या आश्चर्य नहीं था। जब नर-नारायण ऋषि ने उन्हें अभयदान देते हुए इस प्रकार कहा, तब कामदेव आदि के सिर लज्जा से झुक गये। उन्होंने दयालु भगवान् नर-नारायण से कहा—'प्रभो ! आपके लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि आप माया से परे और निर्विकार हैं। बड़े-बड़े आत्माराम और धीर पुरुष निरन्तर आपके चरण-कमलों में प्रणाम करते हैं।

आपके भक्त आपकी भक्ति के प्रभाव से देवताओं की राजधानी अमरावती का उल्लङ्घन करके आपके परमपद को प्राप्त होते हैं। इसलिये जब वे भजन करने लगते हैं, तब देवता लोग तरह-तरह से उनकी साधना में विघ्न डालते हैं। किन्तु जो लोग केवल कर्मकाण्ड में लगे रह कर यज्ञादि के द्वारा देवताओं को बलि के रूप में उनका भाग दे देते हैं, उन लोगों के मार्ग में वे किसी प्रकार का विघ्न नहीं डालते। परन्तु प्रभो ! आपके भक्तजन उनके द्वारा उपस्थित की हुई विघ्न बाधाओं से गिरते नहीं। बल्कि आपके कर-कमलों की छत्रछाया में रहते हुए वे विघ्नों के सिर पर पैर रखकर आगे बढ़ जाते हैं, अपने लक्ष्य से च्युत नहीं होते। बहुत से लोग तो ऐसे हैं जो भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी एवं आँधी-पानी के कष्टों को तथा रसनेन्द्रिय और जननेन्द्रिय के वेगों को, जो अपार समुद्रों के समान हैं, सह लेते हैं—पार कर जाते हैं। फिर भी वे उस क्रोध के वश में हो जाते हैं, जो गाय के खुर से बने गड्ढे के समान हैं और जिनसे कोई लाभ नहीं है—आत्मनाशक हैं। प्रभो ! वे इस प्रकार अपनी तपस्या को खो बैठते हैं।'

जब कामदेव, वसन्त आदि देवताओं ने इस प्रकार स्तुति की तब सर्वशक्तिमान् भगवान् ने अपने योगबल से उनके सामने बहुत-सी रमणियाँ प्रकट करके दिखलायीं, जो अद्भुत रूप-लावण्य से सम्पन्न और विचित्र वस्त्रालंकारों से सुसज्जित थीं तथा भगवान् की सेवा कर रही थीं। जब देवराज इन्द्र के अनुचरों ने उन लक्ष्मीजी के समान रूपवती स्त्रियों को देखा, तब उनके महान् सौन्दर्य के सामने उनका चेहरा फीका पड़ गया, वे श्रीहीन होकर उनके शरीर से निकलने वाली दिव्य सुगन्ध से मोहित हो गये। अब उनका सिर झुक गया। देव देवेश भगवान् नारायण हँसते हुए-से उनसे

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बोले—'तुम लोग इनमें से किसी एक स्त्री को, जो तुम्हारे अनुरूप है, ग्रहण कर लो। वह तुम्हारे स्वर्ग लोक की शोभा बढ़ाने वाली होगी।' देवराज इन्द्र के अनुचरों ने 'जो आज्ञा' कहकर भगवान् के आदेश को स्वीकार किया तथा उन्हें नमस्कार किया। फिर उनके द्वारा बनाई हुई स्त्रियों में से श्रेष्ठ अप्सरा उर्वशी को आगे करके वे स्वर्गलोग में गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने इन्द्र को नमस्कार किया तथा भरी सभा में देवताओं के सामने भगवान् नर-नारायण के बल और प्रभाव का वर्णन किया। उसे सुनकर देवराज इन्द्र अत्यन्त भयभीत और चकित हो गये।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ११ अध्याय ४ के आधार से)

काम, क्रोध और मोह आदि शत्रु तपस्या में महान् विघ्न करने वाले हैं। अहंकार और क्रोध करने के कारण तप का नाश हो जाता है। भगवान् नर-नारायण ने पुराण तथा स्वयं सर्वसमर्थ होकर भी काम, क्रोध, मोह, अहंकार को जीतकर तपश्चर्या में लगे रहने का आदर्श स्थापित करने के लिए अवतार ग्रहण किया और निरन्तर कठोर तपस्या में लगे रहते हैं। शास्त्रों की मान्यता है कि वे प्रभु अब भी बदरिकाश्रम में तप कर रहे हैं। अधिकारी पुरुषों को अब भी दर्शन प्राप्त हो जाते हैं।

भगवान् नर-नारायण के चरणों में बारम्बार प्रणाम।

भगवान् कपिलमुनि (५)

सोपान ७

तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं
स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम्।
जिज्ञासयाहं प्रकतेः पुरुषस्य
नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम्॥

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय २५ श्लोक ११)

'आप अपने भक्तों के संसाररूप वृक्ष के लिये कुठार के समान हैं; मैं प्रकृति और पुरुष का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से आप शरणागत वत्सल के शरण में हूँ। आप भागवत धर्म जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ हैं, आपको प्रणाम है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सृष्टि के प्रारम्भिक स्वायम्भुव मन्वन्तर काल में पितामह ब्रह्माजी को सृष्टि-संवर्द्धन की प्रबल इच्छा हो रही थी। उन्होंने स्वायम्भुव मनु को शतरूपा से विवाह करने की प्रेरणा की। इसके पश्चात् ब्रह्माजी ने अपने मानस पुत्र महर्षि कर्दम को भी प्रजा वृद्धि का आदेश दिया। महर्षि कर्दम ने पिता की आज्ञा स्वीकार कर विन्दुसर तीर्थ पर जाकर तप करने लगे। नियमानुसार धारणा-ध्यान से ऊपर समाधि में लगे रहते हुए श्रीहरि के भुवन मोहन सौन्दर्य का दर्शन लाभ ले रहे थे। दस हजार वर्षों तक इसी प्रकार चलता रहा कि एक दिन अचानक महर्षि के हृदय से वह प्राण प्रिय ध्यान मूर्ति अदृश्य हो गयी। व्याकुलता से उनकी आँखें खुली तो वह धन्य हो गये। महर्षि कर्दम की वह ध्यान-मूर्त्ति उनके परम ध्येय नीलकमल के समान रंग की मोहनी मूर्ति पीताम्बर धारण किये श्रीहरि उनके सम्मुख प्रत्यक्ष खड़े मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे। महर्षि कर्दम प्रभु के चरणों में लेट गये और फिर हाथ जोड़कर प्रेमपूर्ण हृदय से अत्यन्त मधुर वाणी में स्तुति करने लगे—'प्रभो! आप कल्पवृक्ष हैं। आपके चरण समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाले हैं। मेरा हृदय काम कलुषित है। मैं भी अपने अनुरूप स्वभाव वाली और गृहस्थ धर्म के पालन में सहायक शीलवती कन्या से विवाह करने के लिये आपके चरण-कमलों की शरण में आया हूँ। आप स्वरूप से निष्क्रिय होने पर भी माया के द्वारा सारे संसार का व्यवहार चलाने वाले हैं। थोड़ी सी उपासना करने वाले पर भी समस्त अभिलषित वस्तुओं की वर्षा करते रहते हैं। आपके चरण-कमल वन्दनीय हैं, मैं आपको बार-बार प्रणाम करता हूँ।'

'भगवान् श्रीहरि ने मुस्कराते हुए कर्दमजी से कहा—मुने! जिस कार्य के लिये तुम दीर्घकाल से मेरी अराधना कर रहे हो, वह अवश्य पूर्ण होगी। सात द्वीप पृथ्वी के सम्राट स्वायम्भुव मनु ब्रह्मावर्त में रहकर अपना शासन कर रहे हैं। वे परसों अपनी रूप-यौवन व गुण-शील सम्पन्ना देवहूति नामक कन्या को लेकर अपनी साध्वी पत्नि शतरूपा के साथ यहाँ आयेंगे, वह सर्वथा तुम्हारे योग्य हैं। स्वायम्भुव मनु महाराज उसको तुम्हें विधि सहित अर्पण कर देंगे। उस आदर्श देवी की कोंख से नौ कन्याएँ उत्पन्न होंगी। वे कन्याएँ मरीच्यादि ऋषियों से विवाहित होकर स्रष्टा की इच्छानुसार सृष्टि के बढ़ाने में सहायक होंगी।'

इसके पश्चात् सर्वान्तर्यामी भगवान् हरि ने कहा—

'तुम मेरी आज्ञा का भली प्रकार पालन करने से शुद्ध चित्त हो अपने सब कर्मों का फल मुझे अर्पण कर मुझको ही प्राप्त होओगे। महामुने! मैं अपने अंश कलारूप से तुम्हारे वीर्य द्वारा तुम्हारी पत्नी देवहूति के गर्भ से अवतीर्ण होकर सांख्यशास्त्र की रचना करूँगा।'

CC-0. Kamini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इतना कहकर श्रीहरि गरुड़ पर चढ़कर अपने धाम को पधार गये। महर्षि कर्दम वहाँ ही विन्दुसर पर महाराज स्वायम्भुव मनु की प्रतीक्षा करने लगे। उस समय वहाँ के वृक्ष, फल-पुष्पों के भार से लदे हुए अपनी अद्भुत शोभा फैला रहे थे। उन वृक्षों पर अनेक प्रकार के सुन्दर पक्षी निर्द्वन्द होकर प्रसन्नता से कलरव कर रहे थे।

अपने नित्यकर्म, अग्निहोत्र आदि कर्म से निवृत हो, तपाये हुए स्वर्ण के समान शरीर वाले, जटा-जूट मण्डिल, तपस्या की साक्षात् मूर्ति आश्रम के बाहर चबूतरे पर आकर बैठे। उसी समय आदिराज महाराज मनु अपनी भाग्यशालिनी पुत्री देवहूति के साथ उस परम पावन तीर्थ पर कर्दमजी महाराज के आश्रम पर पहुंचे। कर्दमजी महाराज के आश्रम पर पहुँचे। कर्दमजी महामुनि को देखते ही महाराज मनु आनन्द विह्वल हो गये। उन्होंने महामुनि के चरणों में प्रणाम किया। महर्षि ने उनको आशीर्वाद दिया और उनसे आश्रम में आने का कारण जानना चाहा।

महाराज मनु ने कहा 'महामुने! यह प्रियव्रत और उत्तानपाद नामक दो बन्धुओं की बहन मेरी प्रियपुत्री देवहूति है। इसने देवर्षि नारद के मुख से आपके रूप, आयु, विद्या, शील एवं तप आदि का वर्णन सुनकर आपको पतिरूप में प्राप्त करने का निश्चय कर लिया है। मैं अत्यन्त आदर एवं श्रद्धा के साथ इसे आपके कर-कमलों में समर्पित करने आया हूँ।

महर्षि कर्दमजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा—'मैं परम प्रतापी महाराज स्वायम्भुव मनु की परम लावण्यमयी, सर्वसद्गुणसम्पन्ना पवित्र कन्या का पाणिग्रहण अवश्य करूँगा और जब तक इसके सन्तान नहीं हो जायगी, तब तक मैं गृहस्थ-धर्म का पालन भी करूँगा। सन्तान होने के बाद मैं परमपिता परमात्मा को प्रसन्न करने के लिये तपस्या करने हेतु वन में चला जाऊँगा। इसे आप भली प्रकार से समझ लें।

स्वायम्भुव मनु तथा शतरूपा ने महर्षि कर्दमजी की बात सुनने के पश्चात् अपनी पुत्री देवहूति की प्रसन्नता का अनुभव करके उसका वहीं महर्षि के साथ विधिपूर्वक विवाह कर दिया और वस्त्राभूषण तथा पात्र आदि अनेक वस्तु अत्याधिक मात्रा में दिये।

पुत्री को वहाँ ही छोड़कर जाते समय मनु और शतरूपा के नेत्रों से जल बरसने लगा किन्तु महर्षि कर्दमजी के आश्वासन से धैर्य धारण कर वे रथ पर चढ़ कर और पुण्यप्रदा सरस्वती के दोनों तटों पर ऋषि-मुनियों की तपस्या और उनके आश्रमों की शोभा देखते हुए अपनी राजधानी बर्हिष्मति-पुरी में पहुँच गये

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीभगवान् हरि की प्रेरणा से ही महर्षि कर्दमजी के मन में कामना का अंकुर पैदा हुआ, नहीं तो परम तपस्यापरायण कर्दमजी सर्वथा निःस्पृह थे। स्वेच्छानुकूल पत्नी के लिए उन्होंने बहुत समय तक तप किया, किन्तु विवाह में भी उनकी किंचित् भोग बुद्धि नहीं थी। विवाह होने के पश्चात् तत्काल ही महर्षि पुनः तपस्या में लग गये: किन्तु सुकुमारी राजपुत्री देवहूति, राजघराने के सुख सुविधाओं में पली परम साध्वी ने अपना तन, मन और प्राण सब कुछ पति की सेवा में लगा दिये। वे अपने पतिदेव की छोटी-बड़ी सब ही सुविधाओं का निरन्तर ध्यान रख कर सेवा में लगी रहती। समिधाएँ, कुश, पुष्प, फल तथा जल वन में दूर-दूर तक जाकर उत्तम-उत्तम ढूंढकर लाती थी। आश्रम को झाड़-बुहार एवं गोमय से लीप पोत कर साफ-सुन्दर तथा पवित्र बनाये रखती। इस प्रकार कठिन परिश्रम, पति की सेवा हेतु करके अपना सुन्दर तथा सुकोमल शरीर सुखा कर काला कर लिया। उनके सुन्दर सुकोमल चिकने नागिन जैसे लम्बे बाल जटाओं के रूप में बदल गये। वह वल्कल वस्त्र धारण कर स्वयं भी तपस्विनी बन गयीं।

एक दिन नित्यकर्म तपश्चर्यादि से निवृत्त हो देवहूति को अपनी सेवा में लगे हुए देखकर महर्षि कर्दमजी बोले - 'राजकुमारी ! मेरी सहधर्मिणी ! मैं तेरी सेवा से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुमने मेरी सेवा के लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया है, अब मैं तुमको इसका प्रतिफल देना चाहता हूँ।'

महर्षि के योग-प्रभाव से तत्क्षण ही एक अत्यन्त अद्भुत दिव्य विमान वहाँ प्रकट हो गया। उसमें सभी उपकरण स्वर्ण एवं बहुमूल्य रत्नों के थे। उसमें सरोवर, वन-उपवन, शयन-कक्ष, विश्राम-कक्ष, क्रीडा-कक्ष, स्नान-शृङ्गार कक्ष, भोजनालय आदि अलौकिक साधन विद्यमान थे। सहस्रों अलौकिक दास-दासियाँ भी थीं। विविध प्रकार के दिव्य अलौकिक वस्त्राभूषण, गंधयुक्त अङ्गरागादि के भरे हुए अनेक मन्जूषाओं युक्त कक्ष भी उस विमान में थे। उसी समय अनेक दासियाँ विमान से बाहर आयीं और राजकुमारी देवहूति को विमान में लिवा ले गयीं। दासियों ने विमान के स्नान-कक्ष में देवहूति को दिव्य गन्धयुक्त अङ्गराग लगाकर, दिव्य गन्धयुक्त औषधियों से मिश्रित जल से स्नान कराया। दुर्लभ, दिव्य, चमत्कृत नाना प्रकार के वस्त्रालंकार से सुसज्जित किया। विमान के विविध-सुख-आनन्द प्रदान करने वाले सुन्दर सुसज्जित कक्ष में जहाँ महामुनि कर्दमजी विराजमान थे, दासियों ने देवहूति को प्रवेश कराया। देवहूति अपने परम तपोधन पति कर्दमजी के पास जाकर बैठीं। उस विमान में लोकोत्तर सब ही ऐश्वर्य विद्यमान थे।

ऐसे अद्भुत विमान पर निवास कर दुर्लभ सुखों का उपभोग करते हुए महर्षि ने मेरु पर्वत की घाटियों में विहार किया जो लोकपालों की विहार

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भूमि है। इस परम तेजोमय विमान पर महर्षि अपनी सती धर्मपत्नी देवहूति के साथ वैश्रम्भक, सुरसन, नन्दन, पुष्पभद्र और चैत्र-रथ आदि अनेक देवोपवनों, मानसरोवर तथा सभी लोकों में विचरते हुए विहार करते रहे। इस प्रकार अपनी प्राणप्रिया देवहूति को समस्त वसुन्धरा का परिभ्रमण कराकर महर्षि कर्दम अपने आश्रम पर लौट आये। देवहूति के नौ कन्याएँ उत्पन्न हुईं। वे कन्याएँ अनिन्द्य सुन्दरी थीं और उनके प्रत्येक अङ्ग से लाल कमल की सुगन्ध निकल रही थी।

एक दिन महर्षि कर्दमजी ने अपनी सहधर्मिणी देवहूति से कहा 'अब मैं अपने कथनानुसार त्यागपूर्ण जीवन एवं तपश्चर्या के लिये वन में जाऊंगा। तुम्हारे पिताजी के सम्मुख यह पहले ही निश्चय हो गया था।'

महर्षि की बात सुनकर देवहूति अधीर हो गयीं। नेत्रों में आंसू भर आये किन्तु अपने मनोभावों को मन में ही रख कर मुस्कराते हुए अत्यन्त प्रेमपूर्वक सुमधुर वाणी में कहा—'भगवान्! आपकी वाणी अक्षरशः पूर्ण हुई, तब भी मैं आपकी ही शरण हूँ। आप मुझे निर्भय और निश्चिन्त करें। मैं दुर्बल स्त्री हूँ। इन नौ कुमारियों को सत्पात्रों के हाथों में समर्पित करना है और आपके वन-गमन के पश्चात् मेरे जीवन-मृत्यु का दुःख निवारण करने वाला भी कोई होना चाहिये।' इसके पश्चात् अत्यन्त विनयपूर्वक निवेदन किया 'संसार में जिस मनुष्यों के कर्मों से न तो कोई तीर्थ-व्रत हुआ, न किसी प्रकार से भगवान् की सेवा ही हुई; वह मनुष्य तो जीते-जी मुर्दे के समान ही है। मैं अवश्य ही भगवान् की माया से ठगी गयी, जो आप जैसे मुक्ति-दाता पतिदेव को पाकर भी मैंने अब तक संसार-बन्धन से छूटने की इच्छा नहीं की।'

महर्षि कर्दमजी ने कहा – निर्दोष प्रिये, देवी देवहूति! तुम्हारी यह वैराग्यमय वाणी सुनकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। मुझे इसी समय जगत्पति श्री भगवान् विष्णु के वचनों की स्मृति हो आयी। 'तुम सर्वथा निश्चिन्त हो जाओ, मेरा साथ व्यर्थ नहीं जायगा। तुम्हारे अनेक प्रकार के व्रत, धर्म-कार्य सफल होकर रहेंगे। तुम संयम, नियम और तप करती हुई श्रीभगवान् का श्रद्धा भक्तिपूर्वक भजन करो। प्रत्येक प्रकार से दान धर्म का पालन करो। साक्षात् श्रीहरि तुम्हारे गर्भ से अवतीर्ण होकर मेरा, तुम्हारा और जगत् का अशेष मङ्गल करेंगे।'

महर्षि कर्दमजी की यह वाणी सुनकर परम तपस्वी अपने पतिदेव के वचन पर सुदृढ़ विश्वास के कारण देवहूति की प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। वे मन, वचन, कर्मों द्वारा अखिल भुवनेश्वर श्री भगवान् पुरुषोत्तम का स्मरण, चिन्तन, भजन-कीर्तन, पूजन-आराधन एवं उपासना करने लगी।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अन्ततः परम पुनीत क्षण उपस्थित हुआ। जलाशयों एवं सरिताओं के जल निर्मल हो गये। शीतल-मन्द सुगन्धित समीर बहने लगा। दिशाएँ स्वच्छ एवं प्रसन्न हो गईं। पृथ्वी और आकाश में सर्वत्र अलौकिक आनन्द छा गया। आकाश से सुरगण दिव्य पुष्पों की वर्षा करने लगे। परम सौभाग्यशालिनी माता देवहूति की कोंख से देवाधिदेव भगवान् नारायण कपिलमुनि अवतरित हुए।

कुछ समय पश्चात् महर्षि कर्दमजी ने लोकस्रष्टा ब्रह्माजी के आदेशानुसार अपनी पवित्र कन्याओं में से कला नाम की कन्या महर्षि मरीचि को, अनसूया अत्रि को, श्रद्धा अङ्गिरा को, हविर्भू पुलस्त्य को, गति पुलहक को, क्रिया क्रतु को, ख्याति भृगु को, अरुन्धती वसिष्ठ को और शान्ति अथर्वा ऋषि को सविधि विवाह द्वारा समर्पित कर दी। कन्याएँ प्रसन्नतापूर्वक अपने-अपने पतियों के साथ चली गयीं।

एक समय की बात है—महर्षि कर्दम अपने पुत्र के रूप में अवतरित ज्ञानावतार कपिलजी के पास पहुँच गये। उस समय भगवान् कपिल एकान्त में ध्यान मग्न बैठे हुए थे। महर्षि ने उनके चरणों में आदरपूर्वक प्रणाम किया तो वे संकोच में पड़ गये। इस पर महर्षि कर्दमजी ने स्तुति करते हुए कहा—

'आपका पाद-पीठ तत्त्वज्ञान की इच्छा से युक्त विद्वानों द्वारा सर्वदा वन्दनीय है तथा आप ऐश्वर्य, वैराग्य, यश, ज्ञान, वीर्य और श्री-इन छहों ऐश्वर्यों से पूर्ण हैं। मैं आपकी शरण हूँ।'

'प्रभो! आपके अनुग्रह द्वारा मेरी कर्मराशि समाप्त हो गयी। मैं देवर्षि-पितृ-ऋण से मुक्त हो गया। अब मेरा कुछ भी करना शेष नहीं रहा। अब तो मैं सर्वस्व, त्याग कर संन्यास ग्रहण करना चाहता हूँ और चाहता हूँ कि आपका चिन्तन करता हुआ शान्तिपूर्वक जीवन के शेष श्वास पूर्ण करूँ। आपने कृपा करके मेरे यहाँ पुत्ररूप में अवतार ग्रहण किया है, यह आपकी दयालुता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अब आप मुझे आज्ञा प्रदान करें।'

भगवान् कपिल देव ने महर्षि कर्दमजी को समुपदेश देते हुए कहा—

'मुने! मैं आज्ञा देता हूँ, तुम अपनी इच्छानुसार जाओ और सम्पूर्ण कर्म मुझे अर्पण करते हुए दुर्जय मृत्यु को जीत कर मोक्षपद प्राप्त करने के लिये भजन करो। मैं स्वयं प्रकाश और सम्पूर्ण जीवों के अन्तःकरण में रहने वाला परमात्मा ही हूँ। अतः अब तुम विशुद्ध बुद्धि के द्वारा अपने अन्तःकरण में मेरा साक्षात्कार कर लोगे, तब सब प्रकार के दुःखों से छूट कर निर्भय पद (मोक्ष) प्राप्त कर लोगे।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवं समुदितस्तेन कपिलेन प्रजापतिः ।
दक्षिणीकृत्य तं प्रीतो वनमेव जगाम ह ।।
व्रतं स आस्थितो मौनमात्मैकशरणो मुनिः ।
निःसङ्गो व्यचरत्क्षोणीमनग्निरनिकेतनः ।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ३ अध्याय २४ श्लोक ४१, ४२)

'भगवान् कपिल के इस प्रकार कहने पर प्रजापति कर्दमजी उनकी परिक्रमा कर प्रसन्नतापूर्वक वन को चले गये। वहाँ अहिंसामय सन्यास-धर्म का पालन करते हुए वे एकमात्र श्रीभगवान् की शरण हो गये तथा अग्नि और आश्रम का त्याग करके निःसङ्गभाव से पृथ्वी पर विचरने लगे।'

समदर्शिता एवं सर्वात्मभाव के कारण उनकी बुद्धि अन्तर्मुखी और शान्त हो गयी। सर्वान्तर्यामी जगत्पति भगवान् वासुदेव में चित्त स्थिर हो जाने के कारण वे सम्पूर्ण बन्धनों से मुक्त हो गये और करुणामय श्रीभगवान् की भक्ति के प्रभाव से उन्होंने उनका दुर्लभ पद प्राप्त कर अपना जीवन और जन्म सफल कर लिया।

एक दिन माता देवहूति ने विचार किया कि उनके पति परमात्मा के परमपद की प्राप्ति के लिये वन में चले गये हैं, पुत्रियाँ अपने-अपने पतिदेवों के आश्रय में सुखपूर्वक रहने लग गयी हैं। मेरे एक मात्र पुत्र, जो साक्षात् परम पुरुष के ज्ञानावतार हैं। महर्षि कर्दमजी की धर्मपत्नी एवं भगवान् कपिल की जननी होने के कारण वे अध्यात्म की सजीव मूर्ति थीं ही, अब उनके मन में भी अत्यधिक वैराग्य भर आया। अब उनको भी वृक्ष, लता, सर-सरिता के दर्शन में, पशु-पक्षी सब में असारता और नश्वरता के दर्शन होने लगे। देवदुर्लभ विमान के लोकोत्तर सुख एवं सहस्रों दास-दासियों की सेवा, अनेक प्रकार के भौतिक सुख, सबको उन्होंने एक क्षण में ही त्याग दिया। पुत्र के रूप में प्रकट भगवान् कपिल मुनि विन्दुसर के समीप लता-मण्डप में ध्यानावस्थित बैठे थे, माता देवहूति उनके पास गयीं और उनके चरणों में श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया।

भगवान् कपिलजी ने अत्यन्त सोच में पड़कर कहा - 'माता, आप यह क्या कर रही हैं ? मैं आपका पुत्र हूँ आप मुझे आज्ञा प्रदान करें।'

देवहूति ने कहा—'प्रभो ! यह सर्वथा सत्य है कि आपने इस पृथ्वी पर मुझे ही जननीपद पर प्रतिष्ठित होने का गौरवपूर्ण सौभाग्य प्रदान किया है; किन्तु लोकपितामह ने मुझे आपके प्राकट्य-काल में ही बतला दिया था कि आप निखिल-लोकपति साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर हैं, यह सर्वदा निर्भ्रान्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सत्य है। मैं विषयों की लालसाओं से घबरा गयी हूँ, इनकी कहीं कोई सीमा नहीं है। अब आप कृपापूर्वक मेरे अज्ञानान्धकार को अपनी ज्ञानरश्मियों से नष्ट कर दें। मेरा देह-गेहादि के प्रति महामोह आप दूर कर दें। मैं आपके चरणों में श्रद्धायुक्त प्रणाम करती हूँ। मैं आपकी शरण हूँ, मुझ पर दया करके मुझे ज्ञानोपदेश कर मेरा कल्याण करें।'

भगवान् कपिलमुनि अपनी माता देवहूति की ऐसी परम पवित्र वाणी को सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने मन-ही-मन अपनी माता देवहूति की प्रशंसा की।

भगवान् कपिलमुनि ने कहा—'माता ! अध्यात्म योग के द्वारा ही मनुष्य अपना सुनिश्चित परम कल्याण-साधन कर सकता है। वहाँ 'स्व' और 'पर', राग' और 'द्वेष' तथा 'दुःख' और 'सुख'— ये सब समाप्त हो जाते हैं। जिस समय प्राणी अहंता और ममता से उत्पन्न होने वाले काम-क्रोधादि से मुक्त और पवित्र होता है, वह सुख-दुःखादि द्वन्द्वों से मुक्त होकर समता की स्थिति में पहुँच जाता है। उस समय प्राणी ज्ञान-वैराग्य एवं भक्ति-परिपूरित हृदय से आत्मा को प्रकृति से परे, एकमात्र, भेदरहित, स्वयम्प्रकाश, सूक्ष्म, अखण्ड और उदासीन देखता है और प्रकृति को असमर्थ समझने लगता है। बुद्धिमान् मुनि सङ्ग या आसक्ति को ही बन्धन का हेतु बतलाते हैं; पर वही सङ्ग और आसक्ति मुक्त पुरुषों में होने से मुक्ति का हेतु बन जाती है। भगवत्प्राप्ति के लिये भगवान् की भक्ति के अतिरिक्त अन्य कोई सरल एवं सुगम साधन नहीं है।'

इस प्रकार से भगवान् कपिल ने धीरे-धीरे अत्यन्त विस्तारपूर्वक अपनी माता देवहूति को महदादि तत्त्वों की उत्पत्ति का क्रम समझाकर प्रकृति और पुरुष का विवेक प्राप्त होने पर मोक्ष की प्राप्ति कैसे होती है, समझा दिया। फिर उन्होंने पुरुषों की देह-गेह में आसक्ति का कुपरिणाम एवं अष्टांगयोग की विधि बतलाते हुए भक्ति का मार्ग भी बतलाया। उन्होंने माता देवहूति को स्पष्ट शब्दों में कहा—

'योगीजन ज्ञान-वैराग्ययुक्त भक्तियोग के द्वारा शान्ति प्राप्त करने के लिये मेरे निर्भय चरण-कमलों का आश्रय लेते हैं। संसार में मनुष्य के लिये सबसे बड़ी कल्याण प्राप्ति यही है कि उसका चित्त तीव्र भक्तियोग के द्वारा मुझमें लगाकर स्थिर हो जाय।'

सत्ययुग के प्रथम ऋषि-अवतार भगवान् कपिल ने अपनी माता देवहूति को भक्ति, ज्ञान और योग का सविस्तार उपदेश किया। उन्होंने अपनी माता को पूर्ण आत्मज्ञान से सम्पन्न बना दिया और जब उनको निश्चय हो

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गया कि उनकी माता ने परमार्थ तत्त्व रहस्य को भली भाँति समझ लिया है, तब विवेक-वैराग्य के सजीव मूर्तिमान् विग्रह भगवान् कपिल ने त्याग का आदर्श स्थापित करने का निश्चय कर अपनी परम विरक्ता ब्रह्मवादिनी माता के चरणों में प्रणाम किया। माता देवहूति ने भी भगवान् कपिल की गुरुभाव से पूजा और परिक्रमा की तथा बार-बार उनके चरणों में प्रणाम किया।

मोह-माया रहित भगवान् कपिल ने अपनी वन्दनीया माता देवहूति को वहीं सरस्वती के पावन तट पर सिद्धाश्रम में छोड़ दिया और वहाँ से पूर्व और उत्तर दिशा की मध्य दिशा ईशान कोण की ओर चल दिये। ज्ञान-सम्पन्न होने पर माता देवहूति पुत्र के विछोह से अधीर हो गयीं। उनके नेत्रों से स्नेहाश्रु बहने लगे। उस समय उनके मन की स्थिति जैसी हो रही थी; उसका वर्णन तो सदा के लिये जिस माता का इकलौता पुत्र बिछुड़ रहा हो, वही कर सकती है।

भगवान् कपिल के चले जाने पर उनकी माता देवहूति ने उनके द्वारा प्राप्त ज्ञान से अपने चित्त को एकाग्र कर लिया। उन्होंने थोड़े दिनों में ही सिद्धि प्राप्त कर ली। अब उनको अपने शरीर का ज्ञान भी नहीं रहा। कुछ दिनों तक उनके शरीर की रक्षा भी ओरों ने ही की। आत्मस्वरूप नित्यमुक्त परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त परम विरक्ता माता देवहूति का शरीर कब द्रवित होकर परम पुण्यमयी स्वच्छ-सलिलपूरिता सरिता के रूप में परिणत होकर बहने लगा, वे स्वयं भी नहीं जान सकीं। माता देवहूति ने जिस स्थल पर सिद्धि प्राप्त की वह 'सिद्धपुर' (मातृगया) के नाम से विख्यात है। शास्त्रों में इस क्षेत्र का नाम पवित्र 'धर्मारण्य' कहा गया है—

धर्मारण्यं हि तत्पुण्यमाद्यं च भरतर्षभ।
यत्र प्रविष्टमात्रो वै सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
अर्चयित्वा पितॄन् देवान् नियतो नियताशनः।
सर्वकाममयमृद्धस्य यज्ञस्य फलमश्नुते॥

(पद्मपुराण आदि. १२।८-९)

'भरतश्रेष्ठ! वह धर्मारण्य पुण्यमय आदि तीर्थ है, जहाँ व्यक्ति प्रवेश करते ही सभी पापों से मुक्त हो जाता है। यहाँ मितभोजी पुरुष नियमपूर्वक रहता हुआ देवता-पितरों की पूजा करके सर्वमनोरथप्रद यज्ञ का फल प्राप्त कर लेता है।'

(महर्षि कर्दम का यही आश्रम था और यहाँ ही भगवान् कपिल का अवतार हुआ था। यह स्थान—पश्चिम रेलवे की अहमदाबाद– दिल्ली

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लाइन पर मेहसाणा और आबू रोड़ स्टेशनों के मध्य सिद्धपुर स्टेशन है। स्टेशन से दो किलोमीटर दूर सरस्वती नदी के तट पर सिद्धपुर नगर है। सरस्वती नदी से विन्दु सरोवर एक किलोमीटर दूर है। विन्दु सरोवर लगभग चालीस फुट चौरस आकार में एक पक्का कुण्ड है, पक्के घाट बने हुए हैं। विन्दु सरोवर में स्नान करके यहाँ मातृ-श्राद्ध करते हैं। भारत में जैसे पितृ-श्राद्ध के लिए गया प्रसिद्ध है; वैसे ही मातृ-श्राद्ध के लिये यह सिद्धपुर प्रसिद्ध है। यहाँ विन्दुसरोवर के किनारे पर महर्षि कर्दम, माता देवहूति, भगवान् कपिल की मूर्तियाँ तथा और भी अनेक देवमन्दिर हैं।)

भगवान् कपिल ने अपनी माता से विदा ली और पुण्यप्रदा गङ्गाजी के तट पर पहुँचे। फिर उनके तट का सौन्दर्य देखते-देखते जहाँ गङ्गा-भागीरथी समुद्र में जाकर मिली है, जिसको गङ्गासागर कहते हैं; उस स्थान पर पहुँचने पर समुद्र ने शरीर धारण कर कपिल मुनि के चरणों में प्रणाम किया और सविधि पूजा की। आकाश से देवता तथा सिद्धगणों ने पुष्पवर्षा और स्तवन किया। भगवान् कपिल ने उस स्थान पर निवास करने की इच्छा प्रकट की, जिसको जानकर समुद्र असीम प्रसन्न हुआ और अपना परम सौभाग्य समझा। भगवान् कपिल उसी स्थान पर समुद्र के भीतर रहकर तपश्चरण करते हैं। प्रतिवर्ष एक दिन मकर संक्रान्ति के दिन समुद्र ने वहाँ से हट जाने का वचन दिया था, जिससे उस दिन वहाँ जाकर दर्शन करने वाले अक्षय पुण्यलाभ कर सकें।

भगवान् कपिल मुनि सांख्य-दर्शन-शास्त्र के प्रवर्तक हैं तथा भागवत धर्म के मुख्य बारह आचार्यों में से एक हैं। प्रतिवर्ष अब भी मकर संक्रान्ति के दिन गङ्गासागर संगम स्थान पर हजारों स्त्री-पुरुष भगवान् कपिल मुनि तथा उनके पुनीत आश्रम के दर्शन पूजन हेतु जाते हैं।

(यह गङ्गासागर स्थान कलकत्ता से ३८ मील दूर दक्षिण 'डाइमण्ड हारबर' स्टेशन है। वहाँ से नाव, जहाज द्वारा गङ्गासागर जाना होता है। कलकत्ता से सागरद्वीप ९० मील दक्षिण में है।)

भगवान् कपिलदेव मुनि के चरणों में बारम्बार प्रणाम !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् दत्तात्रेय (६)

सोपान ८

अत्रेरपत्यमभिकाङ्क्षत आह तुष्टो
दत्तो मयाहमिति यद् भगवन् स दत्तः ।
यत्पादपङ्कजपरागपवित्र देहा
योगर्द्धिमापुरुभयीं यदुहैहयाद्याः ।
(श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध अध्याय ७ श्लोक ४)

'महर्षि अत्रि भगवान् को पुत्ररूप में प्राप्त करना चाहते थे। उन पर प्रसन्न होकर भगवान् ने उनसे एक दिन कहा, 'मैंने अपने आपको तुम्हें दे दिया।' इसीसे अवतार लेने पर भगवान् का नाम 'दत्त' (दत्तात्रेय) हुआ। उनके चरण-कमलों के पराग से अपने शरीर को पवित्र करके राजा यदु और सहस्रार्जुन आदि ने योग की भोग और मोक्ष दोनों ही सिद्धियाँ प्राप्त की।'

महर्षि अत्रि के पुत्र होने से इनका नाम 'आत्रेय' भी है। 'दत्त' और 'आत्रेय' इन दोनों को मिलाने से भी इनका नम 'दत्तात्रेय' हो गया, इसलिये यही नाम इनका अधिक प्रयोग होता गया। यह निश्चयार्थ ज्ञान प्रदान करने वाले हैं, इसलिये इनको 'सद्गुरु' भी कहा जाता है।

महर्षि अत्रि की धर्मपत्नी अनसूयाजी के पतिव्रत धर्म पर सन्तुष्ट होकर इनको भी उनके पुत्र रूप में अवतार लेने का वरदान दिया था, जिसकी कथा इस प्रकार है—

एक समय भगवती लक्ष्मीजी, श्रीउमाजी तथा श्रीसावित्रीजी को अपने रूप तथा पातिव्रत का बड़ा अभिमान हो गया था। भगवान् चाहे अन्य किसी का अभिमान तो सहन कर भी लें किन्तु वे अपने भक्तों के हृदय में तो अभिमान के अंकुर पैदा होते ही उनका नाश कर देते हैं। यह दया उनके भक्तों पर सर्वदा ही बनी रहती है। उन्होंने विचार किया कि जगत् की परम पूजनीया देवियों को बड़ा गर्व हो गया है। उनके गर्व को दूर करने के निमित्त खेल की रचना कर डाली। देवर्षि नारदजी के मन में उन्होंने प्रेरणा की। उन्हें भी भगवान् की इच्छानुसार नया कौतुक चाहिये ही। वे लक्ष्मीजी के पास पहुँच गये। लक्ष्मीजी ने नारदजी का प्रसन्नतापूर्वक सत्कार किया और पूछा बहुत दिन से आये, किधर से आ रहे हो? नारदजी ने कहा, माताजी हम तो रमते राम हैं, जिधर मुँह किया उधर ही चल दिये। चौदह भुवनों

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में घूमते-घूमते चित्रकूट में पहुँच गया था। वहाँ अत्रि के आश्रम में गया, वहाँ महर्षि अत्रि की पतिव्रता धर्मपत्नी भगवती अनसूयाजी के दर्शन कर कृतार्थ हो गया। इस समय उनके समान कोई पतिव्रता सुन्दरी तीनों लोकों में नहीं है। तप के प्रभाव से ही उन्होंने सर्वपापहारिणी मंदाकिनी को प्रकट कर दिया। लक्ष्मीजी को यह सुन कर बहुत बुरा लगा और अपना अपमान समझ कर पूछा—क्या नारद! वह मुझ से भी बढ़कर हैं? नारदजी ने कहा—माता बुरा न मानें, मुझे तो आप उनके सामने पासंग बराबर भी नहीं मालूम होतीं। लक्ष्मीजी को उसी समय अनसूयाजी के प्रति डाह पैदा हो गया और मन में अनसूयाजी को नीचा दिखाने का निश्चय कर लिया। प्रकट में नारदजी से बोलीं, अच्छा! जैसी तुम्हारी इच्छा है, वैसा ही समझ लो। नारदजी शीघ्रता के साथ खिसक कर कैलास की ओर चल दिये।

लक्ष्मीजी ने तत्काल मुँह फुलाया, शृंगार उतार कर रख दिये और खिन्न मन कर सो रही। भगवान् विष्णु आये, उनकी ओर झांका तक नहीं, अनबोल पड़ी रहीं। भगवान् विष्णु ने अनेक प्रकार से अनुनय-विनय, प्रेमालाप वार्ताएँ कीं; तब बोलीं—मैं कहूँगी, वही करोगे, यह प्रतिज्ञा करो, तब बात करूंगी। भगवान् विष्णु ने कहा कि सत्य कहता हूँ, तुम कहोगी वही किया जावेगा। लक्ष्मीजी ने कहा—आपको चाहे कुछ भी करना पड़े, आपको अनसूया देवी का सतीत्व भंग करना पड़ेगा।

भगवान् मन-ही-मन हँसे और मन में ही कहने लगे, उसका सतीत्व भंग करने की किसकी सामर्थ्य है। मन में समझ गये कि नारदजी पहुँच कर अपना काम कर गये। प्रकट में लक्ष्मीजी से कहा, बस इतनी सी बात के लिये ही इतनी नाराज हो रही थीं। हम अभी जाते हैं, प्रयत्न करेंगे कि जब तक यह काम पूरा न होगा वापस नहीं आवेंगे। यदि तुमने ही बीच में कोई विघ्न-बाधा डाली तो? भगवान् गरुड़ पर चढ़कर अत्रि आश्रम की ओर चल दिये। लक्ष्मीजी बड़ी प्रसन्न हो गयीं।

उधर नारदजी कैलास पहुँच गये। सती उमादेवीजी अकेली बैठी पूजा कर रही थीं। नारदजी को आया देख उमाजी ने उनका स्वागत किया और पूजा के प्रसाद में से अमृत मिला हुआ एक लड्डू उठा कर नारदजी को दिया। नारदजी ने सट से एक ही बार में मुँह में डाल लिया और बोले, 'अहा! कैसा स्वादिष्ट लड्डू है, अमृत मिश्रित मालूम होता है किन्तु मिठास व स्वाद भगवती अनसूया के दिये लड्डू में आया वैसा इसमें नहीं आया। यह सुनते ही सती उमा ने सोचा प्रसाद का सुधामय मोदक खाकर नारद कह रहा है कि यह अनसूया के लड्डू के समान नहीं है। नारदजी से उमाजी ने तेवर चढ़ाकर कहा, यह अनसूया कौन है जिसके लड्डू की इतनी प्रशंसा कर रहा है? नारदजी ने उत्तर में कहा, 'माताजी! सती-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

साध्वी, महासुन्दरी अनसूया महर्षि अत्रि की प्राणप्रिया पत्नी है। आज संसार में उनके समान कोई भी पतिव्रता व सुन्दरी नहीं है।' उमाजी ने जोश में आकर कहा—क्या वह मुझसे भी कुछ बढ़कर है? नारदजी ने उपेक्षा के स्वर में कहा, माताजी आपकी और उनकी कमी वेशी के क्या-क्या अन्तर बताऊँ किन्तु उनकी समानता में मुझे तो आपका सौन्दर्य तथा पातिव्रत फीका ही लगा।

उसी समय सतीजी भगवान् शिवजी के पास जा कर कहने लगीं—'आप तो कहते थे मैं सबसे सुन्दर और पतिव्रताओं में शिरोमणि हूँ।' शिव ने कहा क्या इसमें तुमको कुछ सन्देह है? सती ने कहा—महाराज, अब तक सन्देह नहीं था किन्तु नारद कहता है—अत्रि पत्नी अनसूया के सामने आपका पातिव्रत आदि फीका है। यह सुनते ही शिवजी बोले, नारद कहाँ है? बुलाकर मेरे पास लाओ। उमाजी नारदजी को बुलाने आई तो नारदजी कहाँ थे, वे तो कभी के नौ-दो ग्यारह हो चुके थे। सती ने लौटकर कहा—महाराज वह तो चला गया किन्तु आप ही बतलावें इसमें सच क्या है? भोलेनाथ कुछ अनमने से हुए फिर कहा—देवि! नारद ठीक कहता था। आप अनसूया की समानता तो नहीं कर सकतीं।' सती ने उसी समय भगवान् शंकर के चरण-कमलों को दोनों हाथों से कस कर पकड़ लिया और अपना मस्तक भी उनके चरणों में टेक कर कहा—'मैं न आपके चरण छोड़ूंगी और न ही मेरा मस्तक आपके चरणों से दूर करूंगी जब तक कि आप मुझे संसार की सर्वश्रेष्ठा सुन्दर-सती शिरोमणि नहीं बना देंगे।' भगवान् शिवजी ने कहा—मैं सत्य कहता हूँ, तुम कहती हो वैसा ही करने की कोशिश करूँगा किन्तु तुम बीच में कोई गड़बड़ मत करना। उठो, मेरे पैर छोड़ो मैं अभी इस काम के लिये जा रहा हूँ। सती उठकर खड़ी हो गयीं। भोलेनाथ मन-ही-मन हँसे और सोचने लगे जो दूसरों के लिये खाई खोदता है, उसके लिये कुआ पहले से खुदा हुआ तैयार मिलता है। शिवजी ने उसी समय नन्दी को बुलाया और उस पर सवार हो अत्रि के आश्रम की ओर चल पड़े।

उधर नारदजी ब्रह्मलोक में पहुँच गये और माता ब्रह्माणीजी के चरणों में प्रणाम किया। माताजी ने नारदजी का स्वागत किया व बोलीं, बेटा! कहाँ-कहाँ घूमता रहता है। कभी तो हमारे पास भी आया कर, अब कहाँ से आ रहा है, क्या-नया समाचार है?

माताजी सब कुशल है। मर्त्यलोक में एक बड़ी अद्भुत बात देखी। ब्रह्माणी जी ने बीच में ही कहा—वह क्या बात है? नारदजी बोले, माताजी क्या बताऊँ। इस समय अत्रि-पत्नी अनसूयाजी का पातिव्रत सौन्दर्य इस प्रकार बढ़ा हुआ है, वे चाहें वही हो जाता है। यह सुनते ही अमर्ष के साथ बोलीं, तो क्या वह मुझसे भी बढ़कर हो गयी हैं? नारदजी बोले—माताजी! मैं आपके सामने क्या कहूँ, आप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मेरी माँ हैं; पुत्र के लिये माँ से बढ़कर क्या हो सकता है ? मगर ऋषि-मुनि सब ही यह कहते हैं कि अनसूया के बराबर इस समय कोई नहीं है।

माता ब्रह्माणीजी नारदजी की यह बात सुनकर उदास और चिन्तातुर हो गयीं। उस समय ब्रह्माजी अपनी सभा में बैठे थे। उसी समय सभा में से आवश्यक कार्य कहला कर ब्रह्माजी को बुला लिया। ब्रह्माजी आये उससे पहले ही नारद जा चुके थे। ब्रह्माणीजी ने उन्हें एकान्त में कहा, महाराज ! आप सत्य कहो, इस समय संसार में सबसे सुन्दर पतिव्रता कौन हैं ? ब्रह्माजी ने कहा, इस समय यह क्या प्रश्न है ? इस समय संसार में तुमसे बढ़कर सुन्दर पतिव्रता कौन है ? यह सुनकर ब्रह्माणी फिर बोली – चापलूसी की बात मत कहो, मैंने तो सुना है कि इस समय अनसूया से बढ़ कर अन्य कोई नहीं है। ब्रह्माजी बोले—यह तो बहुत उत्तम बात है। वह तो तुम्हारी ही पुत्रवधू है, तुमको यह जान कर प्रसन्नता होनी चाहिये। तुमको ईर्ष्या व चिन्ता क्यों हुई। उसी समय ब्रह्माणीजी रोष में आकर कहने लगी आपके अनेक मानसपुत्र हैं, उनके अनेक पुत्रवधुएँ हैं। इससे क्या है। आप जैसे भी हो, कुछ भी करें किन्तु आपको अनसूया को पातिव्रत धर्म से च्युत करना है।

उसी समय सर्वज्ञ भगवान् ब्रह्माजी ने ध्यान लगाया तो सब बातें उन्हें ज्ञात हो गईं कि भगवान् ही कुछ कौतुक करना चाहते हैं। फिर वह सम्हल कर हँसते हुए बोले, अच्छी बात है, मैं अभी जाता हूँ। यह कहकर हंस पर सवार हो अत्रि आश्रम को चल दिये। ब्रह्माणीजी प्रसन्न हो गयीं।

महामुनि अत्रि के आश्रम के पास महापुण्यप्रदा मन्दाकिनी के तट पर तीनों देवों का साक्षात्कार व प्रणाम नमस्कार हुआ। तीनों ने अपने-अपने आने का कारण कह सुनाया। भगवान् तो सब जानते ही थे; इसलिये वे बोले हम तीनों को साधू का वेष धारण करके अनसूया के पातिव्रत की परीक्षा करनी चाहिये। सबने यह बात स्वीकार कर साधु का वेश धारण किया और अनसूया के आश्रम पर पहुँच गये। उस समय महामुनि अत्रि आश्रम पर नहीं थे। साधु वेश में तीनों मुनियों को आश्रम पर आया देखकर, अनसूयाजी ने पाद्य, अर्घ्य, आचमन देकर कन्द, फूल-फल भेंट किये; किन्तु मुनियों ने आतिथ्य को स्वीकार नहीं किया। अनसूया ने पूछा—महाराज ! मुझसे क्या अपराध हुआ है, आप पूजा को क्यों नहीं स्वीकार करते ? मुनियों ने कहा—आप हमें एक वचन दें तो हम आपकी पूजा ग्रहण करेंगे, अन्यथा ग्रहण नहीं करेंगे। अनसूयाजी ने कहा—अतिथि का सत्कार करना तो बहुत आवश्यक है। आप जिस प्रकार से प्रसन्न हों, उसी प्रकार से मैं करने के लिये तैयार हूँ। तब मुनियों ने कहा—'देवी ! आप अपने सब अङ्गों पर से वस्त्र उतार कर अलग रख देवें और वस्त्र विहीन होकर हमारा आतिथ्य सत्कार करें।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह सुनते ही पतिव्रता अनसूया असमञ्जस में पड़ गयीं। ये मुनि हैं या मुनि वेष में अन्य कोई छलिया हैं, जो ऐसा सदाचारहीन प्रस्ताव कर रहे हैं। उन्होंने भगवान् का ध्यान लगा कर देखा तो सब रहस्य समझ में आ गया और बोलीं – 'मैं वस्त्र विहीन होकर आपका आतिथ्य सत्कार करूँगी। भगवान् से प्रार्थना की कि यदि मैं सच्ची पतिव्रता हूँ, मैंने कभी भूल से भी स्वप्न में भी पर-पुरुष का काम भाव से चिन्तन न किया हो तो आप तीनों छह-छह माह के बच्चे बन जायँ।'

पतिव्रता श्रीअनसूया का इतना कहना था कि तीनों छह-छह माह के दूध पीने वाले बच्चे बनकर पालने पर कुलबुलाने लग गये। माता ने निर्वस्त्र होकर अपना स्तन्य पान कराया और पालने में सुला दिया। इतने में महामुनि अत्रि भी आ गये। तीनों सुन्दर सुकुमार बच्चों को देखकर आश्चर्यचकित होकर पूछा—'देवी ! ये देवस्वरूप, परम सुन्दर अत्यन्त मनोहर बालक किसके हैं ? अनसूयाजी ने कहा—'भगवान् ! आपके ही बच्चे हैं।' महामुनि अत्रि ने कहा - हमारे ऐसे भाग्य कहाँ ? अनसूयाजी ने फिर कहा—'नहीं, महाराज ! हटा दें। आपके ही हैं। भगवान् ने स्वतः ही कृपा की है।' मुनि ने ध्यान किया तो उन्हें सब रहस्य ज्ञात हो गया। अनसूयाजी उन सब को खिलाती-पिलाती, पुचकार कर प्यार करती। तीनों बच्चे बने हुए भगवान् उमंग में भरकर माँ के साथ बालकों की तरह ही क्रीड़ाएँ करते।

जब अनेक दिन बीत गये, तीनों ही देवता अपने-अपने स्थानों पर नहीं पहुँचे तब तो तीनों ही देवियाँ चिन्तातुर हो गयीं। वे विचार करने लगीं—इतने दिन हो गये, कहाँ रह गये ? अन्ततः तीनों ही अधीर हो गयीं और स्वयं ही अपने पतिदेवों की खोज के लिए घर से चल पड़ी। देवयोग से तीनों की चित्रकूट में भेंट हो गयीं। परस्पर मिलने पर एक दूसरी ने अपनी-अपनी कथा सुनायी। परस्पर वार्तालाप हुआ तो यह सब करतूत नारदजी की ही ज्ञात होने पर तीनों महादेवियाँ नारदजी के प्रति क्रोध कर अनेक प्रकार से उन्हें कोसने लगीं। उसी समय नारदजी भी रामधुन गाते हुए पहुँचे और तीनों माताओं को जा प्रणाम किया। नारदजी के पहुँचते ही तीनों माताओं का आक्रोश दूर हो गया और नम्रतापूर्वक सुमधुर वाणी में पूछने लगी, 'भैय्या नारद ! तुमको तो सब बातें ज्ञात हैं। तीनों देवता कहाँ चले गये ?

नारदजी ने हँसते हुए कहा, मैं आजकल भगवान् के भजन में लगा हुआ हूँ; अधिक बातें करने का समय नहीं हैं। वे तीनों ही अनसूयाजी के पास खेल रहे हैं; वह अनसूयाजी का आश्रम दिखायी दे रहा है, वहीं तीनों चली जाओ।

तीनों महादेवियों ने कहा – हम आश्रम के अन्दर कैसे जावें ? अनसूयाजी नाराज तो नहीं हो जायेंगी ? हमें उनका बड़ा डर लग रहा हैं। नारदजी ने हँसी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रोकते हुए कहा, 'आप भूल कर भी सीधे ही आश्रम के अन्दर नहीं चली जाना, अगर उनकी विना आज्ञा पाये चली गयीं तो वह अपने पातिव्रत के प्रभाव से तुम तीनों को भस्म कर देंगी।'

नारदजी के सामने तीनों गिड़गड़ायीं और घबड़ायी हुई बोली, नारद ! तुम सब बातें बता दो, वे तीनों कहाँ हैं ? नारदजी अपनी हँसी को रोकते हुए मंद-मंद मुस्कराते हुए बोले—सुनती हो, तीनों ते-ते, पे-पे बोलते हैं, तीनों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो रही है। माता के समान अनसूयाजी का बोबा पीते हैं। सती जहाँ बैठाती हैं, वहाँ ही बैठते हैं। जहाँ लिटाती हैं, वहीं लेट जाते हैं। अब आप तीनों तो उनकी आशा छोड़ दो। जब बढ़ते-बढ़ते विवाह योग्य हो जायेंगे तब अनसूयाजी उनका दूसरा विवाह करेंगी। अब आप तीनों तो तपस्वी वेष धारण कर, हरे राम की धुन लगाओ। इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है। अब तो आप तीनों ही समझ गईं होंगी कि अनसूयाजी के समान इस संसार में अन्य कोई दूसरी सती नहीं है।

तीनों महादेवियों ने कहा—ये सब तुम्हारे ही बोये हुए बीज हैं। अब तुम जीते, हम हारीं। अब हम उनसे कैसे मिल सकती हैं, तुम्हीं कोई उपाय बताओ। हमने जैसा किया वैसा ही फल पाया। किसी दूसरे से ईर्ष्या-डाह करना बड़ा ही पाप है। किसी गुणवान् से कभी ईर्ष्या नहीं करना चाहिये।

नारदजी ने कहा—अब आई है बात समझ में। अब पश्चाताप करने से ही सब पाप दूर होंगे। अब आप तीनों ही अनसूयाजी की शरण में जाओ, वहाँ ही आपका कल्याण होगा। इसके अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं है।

तीनों आश्रम के पास पहुँच गईं किन्तु दरवाजा बन्द होने के कारण अन्दर जाने का किसी को भी साहस नहीं हुआ। सम्भव है अनसूयाजी अन्दर न हों, स्नानादि से निवृत होने बाहर गयी हों। यदि अन्दर हैं और बिना आज्ञा लिये अन्दर चली जावें तो सम्भव है, नाराज हो जायें। आश्रम के पास एक वट वृक्ष था तीनों उस पर चढ़ कर देखने लगीं। तीनों ही छोटे-छोटे मुन्ने बने हुए एक पालने में किलक रहे हैं। पैरों से दुलत्तियाँ झाड़ रहे हैं। भगवान् विष्णु ने लक्ष्मीजी को देखा और ते-ते, पे-पे बोल पड़े। लक्ष्मीजी हाथ से बुलाने का संकेत करते हुए बोलीं—यहाँ ऐसा स्वांग बनाये क्यों पड़े हो, बाहर आ जाओ। तीनों ने तीनों को नन्हे-मुन्ने बने हुए देखा, मन में बहुत लजायीं। तीनों देवता तो सती अनसूयाजी के तप के प्रभाव में थे। बाहर चले जाना कोई वश की बात तो थी नहीं। तीनों देवी अनसूयाजी के तप प्रभाव से शंकित हो रही थीं; न जाने कैसा शाप दे दें। इतने में ही अनसूयाजी गीले वल्कल वस्त्रों से दिखाई दीं। तीनों शीघ्रता से वृक्ष से नीचे उतर आयीं और कुटिया के दरवाजे पर साहस कर खड़ी हो, माताजी प्रणाम, माताजी प्रणाम कहते हुए बोलीं, क्या हम अन्दर आवें ?

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनसूया माता बोली— तुम कौन हो ? तीनों ही एक साथ बोल उठी 'हम आपकी पुत्रवधू हैं।'

माता अनसूयाजी ने कहा— घर तो बहुओं का ही होता है, अपने घर में आने के लिए क्या पूछना है। तीनों लज्जा और संकोच में भरी हुई अन्दर गयीं और माता अनसूयाजी के पैर छुए। माता अनसूयाजी ने आशीश देते हुए कहा तुम तो बड़ी अवस्था वाली हो अपने-अपने पति की प्यारी हो; मेरे नन्हे-मुन्ने तो अभी छोटे-छोटे ही हैं। उसी समय महामुनि अत्रि भी वहाँ आ गये। तीनों बहुएँ लज्जा करती हुई एक ओर हो गईं। अत्रिजी ने पूछा— देवी ! ये तीनों कौन हैं ? अनसूयाजी ने कहा— भगवन् ! ये आपकी पुत्रवधू हैं।

महामुनि अत्रि ने कहा—देवी ! तुम बड़े कौतुक रच डालती हो। अभी तीन पुत्र बनाये थे, जो छह-छह महीने के बराबर ही हैं और अभी से इनके लिए इतनी बड़ी-बड़ी बधूएँ भी आ गईं। एक-एक हाथ के बच्चों की पाँच-पाँच हाथ की बहुएँ, यह बड़ी विचित्र बात है। अनसूयाजी ने कहा - महाराज ! इसमें क्या नुकसान की बात है ? कहते हैं—बड़ी बहू बड़े भाग्य होते हैं। बच्चे भी एक दिन बड़े हो ही जायेंगे। महामुनि अत्रि महाराज हँसने लगे और सा॰ का सारा रहस्य समझ गए एवं अपनी पूजा की कुटिया में जा विराजे।

तीनों महादेवियों ने अनसूयाजी के पैर पकड़ लिए; माताजी हमने अपने किये का फल पा लिया; हमें क्षमा करें। अब हमें अपने पतिदेवों को देने की कृपा करें।

अनसूयाजी ने कहा—मैंने आपको कब मना किया। अपने-अपने पतियों को अपनी-अपनी गोद में उठा कर ले जाओ, ये इस समय तो सो रहे हैं।

तीनों देवियों ने एक साथ ही कहा—'माताजी हमें अधिक लज्जित न करो। कोई सुने देखेगा तो क्या कहेगा। हमारी संसार में हँसी न कराओ। वे जैसे आये थे, वैसे ही कर दीजिये।'

तीनों देवियों के ऐसा कहने पर अनसूयाजी का हृदय द्रवित हो गया। उन्होंने हाथ में जल लेकर बच्चों पर छींटे दिये कि तीनों देवता अपने-अपने पूर्ण स्वरूपों में अपने-अपने वाहनों पर विराजमान थे।

महासती अनसूयाजी ने उसी समय तीनों देवताओं की पूजा, स्तुति, प्रदक्षिणा की। अनसूयाजी की पूजा स्तुति से प्रसन्न होकर तीनों महादेवों ने कहा—महापतिव्रते ! हम आपके पातिव्रत से अत्यन्त प्रसन्न और सन्तुष्ट हैं। आप हमसे जो भी चाहो वरदान मांग लो। सती अनसूयाजी ने तीनों देवों को नमस्कार किया और गद्गद् वाणी से कहा— यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो आप तीनों ही मेरे पुत्र हो जायें। तीनों देवताओं ने प्रसन्न होकर तथाऽस्तु कहा। हम तीनों हो अपने-अपने अंशों से आपके पुत्र होंगे।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनसूयाजी को यह वरदान देकर सामने ही लाज में भरी हुई नीचे मुख किये हुए लक्ष्मीजी, सती उमाजी और ब्रह्माणीजी को देखकर तीनों देवताओं ने पूछा—देवियो ! वतलाओ आजकल संसार में सबसे श्रेष्ठ सती कौन हैं ? तीनों देवियों ने लज्जा से भरे हुए मुख से एक स्वर में कहा —पुण्यश्लोका प्रातःस्मरणीया भगवती माता अनसूयादेवीजी ही सर्वश्रेष्ठ सती हैं। इनसे बढ़कर अन्य कोई नहीं है।

(पूज्य श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी द्वारा लिखित कथा के आधार पर।)

धन्या सा जननी लोके धन्योऽसौ जनकः पुनः।
धन्या स च पतिः श्रीमान् येषां गेहे पतिव्रता ।।

(स्कन्ध पुराणे काशी ख. पूर्वार्ध अध्याय ४।६०)

'संसार में वह माता धन्य है, वह पिता धन्य है, तथा वह सौभाग्यशाली पति धन्य है जिसके घर में पतिव्रता स्त्री मौजूद है।'

त्रिदेव अपने वरदान के अनुसार—ब्रह्माजी सोम के रूप में, भगवान विष्णु-दत्तात्रेय के रूप में और भगवान् शंकर दुर्वासा के रूप में महासती अनसूया के पुत्र वनकर अवतरित हुए।

भगवान् विष्णु ने दत्तात्रेय के रूप में अवतरित होकर जगत् का वहुत बड़ा उपकार किया। कृतयुग में उन्होंने श्रीकार्तिक स्वामी, श्रीभगवान् गणेश और भक्त प्रह्लाद को उपदेश दिया। त्रेता में अलर्क आदि को योगविद्या तथा अध्यात्म का उपदेश प्रदान कर कृतार्थ किया। राजा पुरुरवा और राजा आयु भी दत्तात्रेय की कृपा के ऋणी बने थे। द्वापर में भगवान् परशुराम तथा हैहयाधिपति राजा कार्तवीर्य आदि को भगवान् दत्तात्रेय का अनुग्रह प्राप्त हुआ था और वे उन्हीं की कृपा से तेजस्वी तथा यशस्वी हुए। कलियुग में भी भगवान् शंकराचार्य, गोरक्षनाथ, महाप्रभु, सिद्ध नागार्जुन—ये सब भगवान् दत्तात्रेय के उपदेशों द्वारा धन्य हो गए। श्री संत ज्ञानेश्वर महाराज, श्रीजनार्दन स्वामी, श्री संत एकनाथ. श्री संत दासोपन्त, श्री संत तुकाराम इन भक्तों ने दत्तात्रेय का दर्शन प्राप्त किया था। श्री भगवान् दत्तात्रेय भक्तों का करुण-क्रन्दन सुनने पर तत्काल उनके समीप पहुँच जाते हैं।

भगवान् दत्तात्रेय के ज्ञानोपदेश अनेक पुराणादि धर्म ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। सर्वाधिक स्पष्ट उपदेश श्रीमद्भागवत एकादश स्कन्ध अध्याय ७ से ९ में इच्छुक भक्तों के पढ़ने योग्य है। उत्तम होता हटा दें कि सारांश का यहाँ भी दिग्दर्शन कराया जाता किन्तु स्थानाभाव के कारण यहाँ उनके उपदेश का एक श्लोक ही तत्त्व-सार रूप में दर्शाते हुए इस अध्याय का समापन करते हैं।

लब्ध्वा सुदुर्लभमिदं बहुसम्भवान्ते
मानुष्यमर्थदमनित्यमपीह धीरः।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तूर्णं यतेत न पतेदनुमृत्यु यावन्—
निःश्रेयसाय विषयः खलु सर्वतः स्यात् ।।
(श्रीमद्भागवत ११।९।२९)

'यद्यपि यह मनुष्य शरीर है तो अनित्य ही मृत्यु सदा इसके पीछे लगी रहती है परन्तु इससे परम पुरुषार्थ की प्राप्ति हो सकती है; इसलिए अनेक जन्मों के बाद यह अत्यन्त दुर्लभ मनुष्य-शरीर पाकर बुद्धिमान् पुरुष को चाहिए कि शीघ्र से शीघ्र, मृत्यु के पहले ही मोक्ष-प्राप्ति का प्रयत्न कर ले। इस जीवन का मुख्य उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति ही है। विषय भोग तो सभी योनियों में प्राप्त हो सकते हैं; इसलिये उनके संग्रह में यह अमूल्य जीवन समय नहीं खोना चाहिए।'

जूनागढ़ (गुजरात) का गिरनार पर्वत श्री दत्तात्रेय भगवान् का सिद्धपीठ स्थान है। अब भी यहाँ वे अवधूत रूप में रहते हैं। उनको पहचान लेना सरल नहीं है, किन्तु अब भी कभी-कभी किन्हीं भाग्यशाली को उनके दर्शन हो जाते हैं।

भगवान् दत्तात्रेय के चरणों में अनेक बार प्रणाम।

●

भगवान् यज्ञ (७)

सोपान ९

जातो रुचेरजनयत् सूयमान् सुयज्ञ
आकूतिसूनुरमरानथ दक्षिणायाम् ।
लोकत्रयस्य महतीमहरद् यदार्तिं
स्वायम्भुवेन मनुना हरिरित्यनूक्तः ।।
(श्रीमद्भागवत स्कन्ध २ अध्याय ७ श्लोक २)

'उन्हीं प्रभु ने रुचि नामक प्रजापति की पत्नी आकूति के गर्भ से सुयज्ञ के रूप में अवतार ग्रहण किया। उस अवतार में उन्होंने दक्षिणा नाम की पत्नी से सुयम नाम के देवताओं को उत्पन्न किया और तीनों लोकों के बड़े-बड़े संकट हर लिये। इसीसे स्वायम्भुव मनु ने उन्हें 'हरि' के नाम से पुकारा।''

स्वायम्भुव मन्वन्तर के समय की बात है, स्वायम्भुव मनु की पत्नी शतरूपा के गर्भ से महाभागा आकूति का जन्म हुआ। उनका विवाह रुचि प्रजापति के साथ

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हुआ था। इन्हीं आकूति के गर्भ से पृथ्वी पर धर्म का प्रचार करने हेतु आदि भगवान् ने 'यज्ञ' नाम से अवतार लिया। इन्हीं परमप्रभु ने यज्ञ का प्रचार किया और इन्हीं के नाम से यह प्रचलित हुआ। उसके द्वारा ही देवताओं की शक्ति बढ़ी और देवताओं की शक्ति से समस्त सृष्टि शक्तिशालिनी हुई।

विरक्तः कामभोगेषु शतरूपापतिः प्रभुः।
विसृज्य राज्यं तपसे सभार्यो वनमाविशत्॥

(श्रीमद्भागवत ८।१।७)

'भगवान् स्वायम्भुव मनु ने समस्त कामनाओं और भोगों से विरक्त होकर राज्य छोड़ दिया। वे अपनी पत्नी शतरूपा के साथ तपस्या करने के लिए वन में चले गये।'

वे पवित्र सुनन्दा नदी के तट पर एक पैर से खड़े होकर नीचे दिये हुए मंत्र-मय उपनिषद् स्वरूप श्रुति का निरन्तर जप करने लगे। वे तपस्या करते हुए प्रति-दिन श्रीभगवान् की स्तुति करते थे—

'जिनकी चेतना के स्पर्शमात्र से यह विश्व चेतन हो जाता है किन्तु यह विश्व जिन्हें चेतना का दान नहीं कर सकता; जो इसके खो जाने पर प्रलय में भी जागते रहते हैं, जिनको यह नहीं जान सकता; परन्तु जो इसे जानते हैं—वही परमात्मा हैं। यह सम्पूर्ण विश्व और इस विश्व में रहने वाले समस्त चर-अचर प्राणी सब उन परमात्मा से ही ओतप्रोत हैं। इसलिए संसार के किसी भी पदार्थ में मोह न करके उसका त्याग करते हुए ही जीवन-निर्वाह मात्र के लिए उपभोग करना चाहिए। तृष्णा का सर्वथा त्याग कर देना चाहिए। भला, ये संसार की सम्पत्तियाँ किसकी हैं? भगवान् सबके साक्षी हैं। उन्हें बुद्धि-वृत्तियाँ या नेत्र आदि इन्द्रियाँ नहीं देख सकतीं। उनकी ज्ञानशक्ति अखण्ड है। समस्त प्राणियों के हृदय में रहने वाले उन्हीं स्वयंप्रकाश असङ्ग परमात्मा की शरण ग्रहण करो जिनका न आदि है न अन्त, फिर मध्य तो होगा ही कहाँ से? जिनका न कोई अपना है न कोई पराया है और न बाहर न भीतर है; वे विश्व के आदि, अन्त, मध्य, अपने-पराये से बाहर और भीतर हैं, सब कुछ हैं। उन्हीं की सत्ता से विश्व की सत्ता है। वही अनन्त वास्तविक सत्य परब्रह्म हैं। वही परमात्मा विश्वरूप हैं। उनके अनन्त नाम हैं। वे सर्वशक्तिमान् सत्य, स्वयंप्रकाश, अजन्मा और पुराणपुरुष हैं। वे अपनी माया-शक्ति के द्वारा ही विश्वसृष्टि के जन्म आदि को स्वीकार कर लेते हैं और अपनी विद्या-शक्ति के द्वारा उसका त्याग करके निष्क्रिय, सत्यस्वरूप मात्र रहते हैं। इसी से ऋषि-मुनि नैष्कर्म्यस्थिति अर्थात् ब्रह्म से एकत्व प्राप्त करने के लिये पहले कर्मयोग का अनुष्ठान करते हैं। प्रायः कर्म करने वाला पुरुष ही अन्त में निष्क्रिय होकर कर्मों से छुट्टी पा लेता है। यों तो सर्वशक्तिमान् भगवान् भी कर्म करते हैं परन्तु वे

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आत्मलाभ से पूर्णकाम होने के कारण उन कर्मों में आसक्त नहीं होते। अतः उन्हीं का अनुसरण करके अनासक्त रहकर कर्म करने वाले भी कर्म-बन्धन से मुक्त ही रहते हैं। भगवान् ज्ञानस्वरूप हैं इसलिए उनमें अहङ्कार का लेश भी नहीं है। वे सर्वतः परिपूर्ण हैं इसलिए उन्हें किसी वस्तु की कामना नहीं है। वे बिना किसी प्रेरणा के स्वच्छन्द रूप से ही कर्म करते रहते हैं। वे अपनी ही बनाई हुई मर्यादा में स्थित रहकर अपने कर्मों के द्वारा मनुष्यों को शिक्षा देते हैं। वे ही समस्त धर्मों के प्रवर्तक और उनके जीवनदाता हैं। मैं उन्हीं प्रभु की शरण में हूँ।

(यह श्रुति श्रीमद्भागवत के स्कन्ध ८ अध्याय ९-१६ का हिन्दी अनुवाद है, विद्वान् पाठक पाठ करने के लिये वहाँ देख सकते हैं।)

इस प्रकार से स्तुति और जप करते हुए उनको सौ वर्ष से भी अधिक समय हो गया। उन्होंने अत्यन्त कठोर तपश्चरण किया। एकाग्रचित्त से इस मन्त्रमय उपनिषद्-स्वरूप श्रुति का पाठ करते-करते उनको अपने शरीर की सुधि भी नहीं रही। उस समय भूख से सताये हुए अनेक असुर एवं राक्षस इकट्ठे हो गये। वे ध्यानमग्न परम तपस्वी मनु महाराज और शतरूपा को खाने के लिए उन पर टूट पड़े। यह देखकर अन्तर्यामी भगवान् यज्ञपुरुष अपने याम नामक पुत्रों के साथ शीघ्र वहाँ पहुँच गये और राक्षसों से वहाँ घोर भयानक संग्राम हुआ। अन्ततः राक्षसों का संहार हुआ और वे पराजित हो गये।

भगवान् यज्ञ के बल एवं प्रभाव को देखकर देवताओं को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। देवताओं ने उस समय भगवान् से देवेन्द्र-पद स्वीकार करने की प्रार्थना की। देवताओं की प्रसन्नता के लिये भगवान् ने इन्द्रासन पर विराजमान होकर इन्द्र का पद भार सम्भाल कर उत्तम इन्द्र-पद-पालन का आदर्श स्थापित किया। भगवान् यज्ञ और उनकी धर्मपत्नी दक्षिणा से अत्यन्त तेजस्वी व सुन्दर बारह पुत्र उत्पन्न हुए। वे ही स्वायम्भव मन्वन्तर में 'याम' नामक बारह देवता हुए।

श्री यज्ञ भगवान् की जय हो। उन्हें बारम्बार प्रणाम !

●

भगवान् ऋषभदेव (८)

सोपान १०

प्राचीन समय की बात है आग्नीध्र के पुत्र राजा नाभि के कोई सन्तान नहीं थी, इसलिए उन्होंने अपनी भार्या मेरुदेवी सहित पुत्र की कामना लिए हुए एकाग्रता-पूर्वक भगवान् यज्ञपुरुष का यजन किया। यद्यपि सुन्दर अङ्गों वाले श्रीभगवान् द्रव्य,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देश, काल, मन्त्र, ऋत्विज, दक्षिणा और विधि—इन यज्ञ के साधनों से सहज में नहीं मिलते तथापि वे भक्तों पर कृपा तो करते ही हैं। जब महाराज नाभि ने श्रद्धा-भक्तिपूर्वक विशुद्ध भाव से उनकी आराधना की, तब उनका चित्त अपने भक्त का अभीष्ट कार्य सिद्ध करने के लिये उत्सुक हो उठा। वे यज्ञ के मध्य ही मन और नयनों को आनन्दित करने वाले अवयवों से युक्त अतिसुन्दर हृदयाकर्षक रूप में प्रकट हो गये।

उनके श्रीअङ्ग में रेशमी पीताम्बर था, वक्षःस्थल पर सुमनोहर श्रीवत्स चिह्न सुशोभित था, भुजाओं में शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म तथा गले में वनमाला और कौस्तुभमणि की शोभा थी। सम्पूर्ण शरीर अङ्ग-प्रत्यङ्ग की कान्ति को बढ़ाने वाले किरणजालमण्डित मणिमय मुकुट, कुण्डल, कङ्कण, करधनी, हार, बाजूबन्द और नूपुर आदि आभूषणों से विभूषित था। ऐसे परम तेजस्वी चतुर्भुजमूर्ति पुरुष विशेष को प्रकट हुआ देख ऋत्विज, सदस्य और यजमान आदि सभी लोग ऐसे आह्लादित हुए जैसे निर्धन पुरुष अपार धनराशि पाकर फूला नहीं समाता। फिर सभी ने सिर झुकाकर अत्यन्त आदरपूर्वक प्रभु की अर्घ्य द्वारा पूजा की, ऋत्विजों ने उनकी स्तुति की।

ऋत्विजों ने प्रभु के गुणगान व स्तुति करने के पश्चात् निवेदन किया—प्रभो! राजर्षि नाभि और उनकी पत्नी मेरु देवी आपके ही समान पुत्र चाहते हैं।

भगवान् नारायण ने कहा—'ऋषियो! आप लोगों ने बड़ा दुर्लभ वर मांगा है।' श्रीभगवान् ने मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा। मैं अद्वितीय हूँ, अतएव आप लोगों की वचन की रक्षा के लिये मैं स्वयं ही महाराज नाभि के यहाँ अवतरित होऊँगा; क्योंकि मेरे समान तो मैं ही हूँ, अन्य दूसरा कोई नहीं है।'

इस प्रकार कहकर भगवान् अन्तर्धान हो गये और कुछ दिनों के बाद महाराज नाभि की परम सौभाग्यशालिनी पत्नी मेरुदेवी की कुक्षि से दिगम्बर संन्यासी और ऊर्ध्वरेता मुनियों का धर्म प्रकट करने के लिये शुद्ध सत्त्वमय विग्रह से प्रकट हुए।

नाभिनन्दन के अङ्ग विष्णु के वज्र-अंकुश आदि चिह्नों से युक्त थे। पुत्र के अत्यन्त सुन्दर सुगठित शरीर, कीर्ति, तेज, बल, ऐश्वर्य, यश, पराक्रम और शूरवीरता आदि गुणों के कारण महाराज नाभि ने उनका नाम 'ऋषभ' (श्रेष्ठ) रखा।

ब्रह्मण्योऽन्यः कुतो नाभेर्विप्रा मङ्गलपूजिताः।
यस्य बर्हिषि यज्ञेशं दर्शयामासुरोजसा॥
(श्रीमद्भागवत ५।४।७)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महाराज नाभि के समान ब्राह्मणभक्त दूसरा कौन हो सकता है— जिनकी दक्षिणादि से सन्तुष्ट हुए ब्राह्मणों ने अपने मन्त्रबल के द्वारा उन्हें यज्ञशाला में साक्षात् भगवान् विष्णु के दर्शन करा दिये।

महाराज नाभि परमप्रभु ऋषभदेव का पुत्र के समान लालन-पालन करने करने लगे। पुत्र को स्नेह भरी दृष्टि से देखते, प्यार से उन्हें बुलाते, गोद में लेकर प्यार करते और अत्यधिक आनन्द का अनुभव करने लगे। जब वे शिक्षा ग्रहण करने योग्य हुए तब उनको गुरुकुल में रखा गया। शीघ्रातिशीघ्र गुरु द्वारा सब ही प्रकार की शिक्षाएँ ग्रहण कर गुरुदेव को यथोचित दक्षिणा देकर उन्होंने गृहस्थ में प्रवेश करने की आज्ञा ली। लोगों को गृहस्थ धर्म की शिक्षा देने के लिये देवराज इन्द्र की पुत्री जयन्ती से विवाह किया। उसके बाद सब प्रकार के राजकीय कार्यों में अपने पिता को पूर्ण सहयोग देकर राजकार्यों में दक्ष होने का राष्ट्र के नागरिकों द्वारा विश्वास प्राप्त कर लिया। सम्पूर्ण राष्ट्र के नागरिक, मन्त्री आदि सब ही ऋषभदेव को अत्यन्त स्नेह की दृष्टि से देखने लगे। महाराज नाभि भी उनके राज्य कार्यों की दक्षता से प्रसन्न थे। अतएव शुभ मुहूर्त देख महाराज नाभि ने ऋषभदेव को राजपद पर अभिषिक्त कर दिया और स्वयं अपनी सती पत्नी मेरु देवी के साथ तप करने वन में चले गये। वे उत्तर दिशा में हिमालय के अनेक शिखरों को पार करते हुए गन्धमादन पर्वत पर भगवान् नर-नारायण के पास बदरिकाश्रम पहुँचे। वहाँ वे परम-प्रभु के नर-नारायण रूप की उपासना एवं उनका चिन्तन करते हुए उन्हीं में विलीन हो गये।

ऋषभदेव राज्य-शासन का भार अपने कन्धों पर आ जाने के कारण राज्य कार्यों को अपने पूर्ण मानवोचित न्याय से सावधानीपूर्वक तत्परता से करने लगे। उनकी राज्य व्यवस्था, शासनप्रणाली सर्वथा अनुकरणीय तथा प्रशंसनीय थी। उनके शासन में प्रजा व राजकीय अमात्य आदि सब ही सन्तुष्ट थे और अपने-अपने धर्माचरणों का आश्रम ग्रहण कर यथोचित कार्यों का संचालन करते थे। कोई भी दण्ड पाने योग्य आचरण नहीं करता था।

सम्पूर्ण प्रजा ऋषभदेव को अत्यधिक आदर और सम्मान करती थी। ऋषभदेव ने लोक मर्यादा की रक्षा के लिये गृहस्थाश्रम-धर्म का पालन किया और उनसे सौ पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें सबसे बड़े सर्वाधिक गुणवान एवं महायोगी भरत जी थे। वे इतने प्रतापी राजा हुए कि उन्हीं के नाम पर इस अजनाभ खण्ड का नाम भारतवर्ष प्रख्यात हो गया।

भरत से छोटे कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इन्द्रस्पृक, विदर्भ और कीकट ये नौ राजकुमार भारतवर्ष में पृथक्-पृथक् देशों के प्रजापालक नरेश हुए। ये सब ही नरेश तपस्वी, धर्माचरण सम्पन्न एवं भगवद्भक्त थे। इन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दस राजकुमारों से छोटे कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस और करभाजन ये नौ राजकुमार बाल ब्रह्मचारी, भागवतधर्म का प्रचार करने वाले एवं बड़े भगवद्भक्त थे। ये योगी एवं संन्यासी हो गये। इनसे छोटे महाराज ऋषभदेव के इक्यासी पुत्र वेदज्ञ, कर्मकाण्डी, सदाचारी, मातृ-पितृ भक्त, विनीत, शान्त तथा महान् थे। वे निरन्तर यज्ञ, देवार्चन एवं पुण्य कर्मों के करने से ब्राह्मण हो गये।

एक समय की बात है—महाराज ऋषभदेव भ्रमण करते हुए पुण्यभूमि ब्रह्मावर्त में पहुँचे, जहाँ के शासक उनके चतुर्थ पुत्र ब्रह्मावर्त थे। वहाँ उन्होंने प्रख्यात महर्षियों के समुदाय के साथ अपने अत्यन्त विनयी एवं शीलवान् पुत्रों को भी बैठे हुए देखा। यह सुअवसर पाकर ऋषभदेव ने अपने पुत्रों को सम्बोधन करते हुए जगत् के कल्याण हेतु अत्यन्त सुन्दर उपदेश किया। ऋषभदेव ने कहा—

'पुत्रो ! इस मर्त्यलोक में यह मनुष्य-शरीर दुःखमय विषयभोग प्राप्त करने के लिए ही नहीं है। यह भोग तो विष्ठाभोजी शूकर-कूकरादि को भी प्राप्त होते ही रहते हैं। इस शरीर से दिव्य तप ही करना चाहिए, जिससे अन्तःकरण शुद्ध हो; अन्तःकरण शुद्ध होने से ही अनन्त ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है।'

नून प्रमत्तः कुरुते विकर्म
यदिन्द्रियप्रीतय आपृणोति।
न साधु मन्ये यत आत्मनोऽय—
मसन्नपि क्लेशद आस देहः॥

(श्रीमद्भागवत ५।५।४)

'मनुष्य अवश्य प्रमादवश कुकर्म करने लगता है, उसकी वह प्रवृत्ति इन्द्रियों को तृप्त करने के लिए ही होती है। मैं इसे अच्छा नहीं समझता क्योंकि इसी के कारण आत्मा को यह सतत और दुःखदायक शरीर प्राप्त होता है।'

'जब तक मनुष्य श्रीहरि के चरणों का आश्रय नहीं ग्रहण करता, उन्हीं का नहीं हो जाता, तब तक उसको जन्म-मरण से छुटकारा नहीं मिल सकता। अतएव प्रत्येक माता-पिता एवं गुरु का परम पुनीत कर्त्तव्य है कि वह अपनी संतति एवं शिष्य को विषयासक्ति एवं काम्य कर्मों से सर्वथा पृथक् रहने की शिक्षा दे।' फिर संसार के नाशवान् होने तथा भगवान् की भक्ति करने का माहात्म्य बतलाते हुए कहा –

'जो अपने प्रिय सम्बन्धी को भगवद्भक्ति का उपदेश देकर मृत्युरूपी फाँसी से नहीं छुड़ाता, वह गुरु, गुरु नहीं होता; वह स्वजन, स्वजन नहीं है; वह पिता, पिता नहीं है; वह माता, माता नहीं है। पुत्रो ! तुम सम्पूर्ण चराचर भूतों को मेरा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ही शरीर समझ कर शुद्ध बुद्धि से पद-पद पर उनकी सेवा करो, यही मेरी सच्ची पूजा है।

अपने सुशिक्षित एवं भक्त पुत्रों को सम्बोधन करते हुए जगत् को इस प्रकार के उत्तम उपदेश देकर ऋषभदेवजी ने अपने बड़े पुत्र को राज-पद पर अभिषिक्त कर दिया और स्वयं विरक्त जीवन का आदर्श प्रस्तुत करने के लिए राजधानी से बाहर चले गए। भगवान् ऋषभदेव सर्वथा ज्ञानस्वरूप थे; किन्तु लोक दृष्टि से प्राणियों को शिक्षा देने एवं परमहंस धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए उन्होंने उन्मत्तों की तरह का वेष धारण कर लिया।

अपनी राजधानी से बाहर जाने के पश्चात् उनका जिस ओर मुख होता उसी ओर चले जाते। बुद्धि-सागर होकर भी उनका पागलों जैसा आचरण होने लगा। वे किसी के कोई प्रश्न करने पर भी गूंगे की तरह व्यवहार करते। धूलि-भरे मैले शरीर से जिस ओर मन में आती उसी ओर दौड़ने लग जाते। बच्चे उनके पीछे तालियाँ बजाते, पत्थर फेंकते, गालियाँ देते, कोई उन्हें डंडे से पीट देता, कोई उन पर थूक देता किन्तु ऋषभदेव सर्वथा शान्त और मौन रहकर यह सब सहन करते रहते और अपनी इच्छानुसार आगे बढ़ते हुए चले जाते। जहाँ कोई कुछ दे देता, उन्हें इच्छा होती तो खा लेते। यदि इच्छा न होती तो कैसा ही उत्तम पदार्थ क्यों न हो, वे नहीं खाते थे। उनको अपने मनुष्य शरीर होने के प्रति भी अनासक्ति थी और उनका मैं-पन का भी भाव दूर हो गया था। वे धूलि से लिपटी काया तथा रूखे बढ़े हुए बालों की उलझी हुई लटें एवं पागलों जैसा वेष लिये घूमते रहते थे। आगे कुछ समय निकलने पर वे अजगर-वृत्ति से रहने लगे। भूख-प्यास की भी कोई चेष्टा नहीं रही। शरीर पर अनेक प्रकार से मैल तथा मिट्टी की पपड़ी जम गई किन्तु उनके शरीर में से एक प्रकार की अलौकिक सुगन्ध निकलती थी, जो कोसों दूर तक फैल जाती थी। इस प्रकार से मोक्षपति भगवान् ऋषभदेव अनेक प्रकार की योग क्रियाओं का आचरण करते हुए आनन्द मग्न रहने लगे। यद्यपि इस प्रकार का आचरण लौकिक रूप में सबके आचरण करने योग्य नहीं है। यह स्थिति शास्त्र से परे है।

जब भगवान् ऋषभदेव ने संसार के सारहीन होने का पूर्ण अनुभव कर लिया और अपने को जीवन्मुक्त अवस्था में पहुँच जाने का आनन्द प्राप्त कर रहे थे, उस समय समस्त सिद्धियाँ उनकी सेवा में आकर उपस्थित हुईं और उनसे किसी भी प्रकार से कोई सेवा प्रदान करने के लिए प्रार्थना की; किन्तु ऋषभदेव ने सेवा की आज्ञा देना तो दूर, उन्हें तत्क्षण ही वहाँ से चले जाने की आज्ञा दी।

भगवान् ऋषभदेव तो सर्व समर्थ महासिद्ध हो चुके थे, उन्हें सिद्धियों की आवश्यकता ही क्या रह गयी थी। सिद्धियाँ उनकी चरण-रज का स्पर्श प्राप्त करने को

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लालायित व व्याकुल रहतीं, परन्तु उसको वह पुण्यमयी मुनि-वन्दित चरण-रज भी नहीं मिलती थी। भगवान् ऋषभदेव को तो साधकों, भक्तों एवं योगाभ्यासियों के सम्मुख एक आदर्श स्थापित करना था। मन अत्यन्त चंचल होता है, यह तो जरा-सुविधा मिलने या असावधानी होने से घातक प्रहार कर बैठता है, पतन के महान् गड्ढे में ढकेल देता है। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह और भय आदि शत्रुओं का तथा कर्म-बन्धन का मूल तो यह मन ही है; इस पर कोई भी बुद्धिमान् कैसे विश्वास कर सकता है? इसलिए भगवान् ऋषभदेव ने साक्षात् पुराण पुरुष भगवान् आदि नारायण के अवतार होने पर भी अपने ईश्वरावतार होने के प्रभाव को छिपाये हुए अवधूतों जैसा वेष और पागलों जैसा आचरण करते हुए, मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले पारमहंस्य-धर्म का पालन किया। ज्ञानी तो अपनी योग-दृष्टि द्वारा उन्हें ईश्वरावतार समझते थे; किन्तु सर्वसाधारण को उनके वास्तविक स्वरूप का तनिक भी परिचय होना कठिन था। संकल्प-शून्य होकर उनका शरीर प्रारब्धवश पृथ्वी पर डोल रहा था। इस प्रकार वे दिगम्बर-वेष में—कोङ्क, वेङ्क, कुटक और कर्नाटक आदि दक्षिणी भागों में मुख में पत्थर दबाये घूमते रहे। उन्मत्त हुये वे कुटकाचल के निर्जन वन में विचरण कर रहे थे।

जिस समय ऋषभदेव को पाञ्चभौतिक शरीर त्याग देने की इच्छा हुई, उसी दिन सहसा प्रबल झंझावात से घर्षण के कारण बांसों के वन में आग लग गयी और वह आग अपनी तेज लाल-लाल लपटों से समस्त वन को भस्मसात् करने लगी। ऋषभदेवजी भी वहाँ विद्यमान थे। उनको शरीर में तनिक भी आसक्ति और मोह होता तो उसकी रक्षा के लिए उद्योग करते किन्तु उनकी तो सर्वत्र समबुद्धि हो चुकी थी। अतएव वे शान्तभाव से चुपचाप वहीं बैठे रहे और उनका नश्वर शरीर अग्नि की भयानक ज्वाला में जलकर भस्म हो गया। इस प्रकार शरीर छोड़कर भगवान् ऋषभदेव ने योगियों को देहत्याग की विधि की शिक्षा दी—

अयमवतारो रजसोपप्लुतकैवल्योपशिक्षणार्थः ।।

(श्रीमद्भागवत ५।६।१२)

'भगवान का यह अवतार रजोगुण से भरे हुए लोगों को मोक्षमार्ग की शिक्षा देने के लिए ही हुआ था।'

भगवान् ऋषभदेव को बारम्बार नमस्कार है!

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आदिराज पृथु (९)

सोपान ११

सभी लोगों की कुशल चाहने वाले भृगु आदि मुनियों ने देखा कि राजा अङ्ग के विरक्त होकर राज-पाट, घर-बार छोड़ कर चले जाने से अब पृथ्वी की रक्षा करने वाला कोई नहीं रह गया है, सब लोग पशुओं के समान उच्छृङ्खल आचरण वाले होते जा रहे हैं।

वीर मातरमाहूय सुनीथां ब्रह्मवादिनः।
प्रकृत्यसम्मतं वेनमभ्यषिञ्चन् पतिं भुवः॥

(श्रीमद्भागवत ४।१४।२)

'तब ब्रह्मवादी मुनियों ने वेन की माता सुनीथा की सम्मति से, मन्त्रियों के सहमत न होने पर भी अङ्ग के पुत्र वेन को भूमण्डल के राज्य-पद पर अभिषिक्त कर दिया।'

वेन अपने नाना (मातामह) के स्वभाव का दुराचारी, अनाचारी व नास्तिक था। वह राज्य पर अभिषिक्त होते ही प्रजा पर अत्याचार करने लगा। उसकी दुष्टता से प्रजा अत्यन्त कष्ट पाकर दुःख पाने लगी। उसने राजकीय घोषणा करा दी—

न यष्टव्यं न दातव्यं न होतव्यं कथंचन।
भोक्ता यज्ञस्य कस्त्वन्यो ह्यहं यज्ञपतिः प्रभुः।

(विष्णु पुराण १।१३।१४)

'भगवान यज्ञपुरुष मैं ही हूँ, मुझसे अतिरिक्त यज्ञ का भोक्ता और स्वामी हो ही कौन सकता है। इसलिये कोई यज्ञ, दान और हवन आदि न करे।'

'यह घोषणा सुनकर महर्षियों ने राजा के पास जाकर उसे समझाते हुए कहा—बड़े-बड़े यज्ञों द्वारा हम लोग सर्वयज्ञेश्वर देवाधिदेव श्रीभगवान् श्रीहरि की पूजा करेंगे, उसका षष्ठांश फल आपको भी प्राप्त होगा। इस प्रकार यज्ञों द्वारा यज्ञपुरुष भगवान् विष्णु प्रसन्न होकर हम लोगों के साथ आपकी भी इच्छाओं की पूर्ति करेंगे। आप ऐसी आज्ञा प्रसारित करें, जिससे धर्म का क्षय न हो।'

वेन ने महर्षियों की उपेक्षा करते हुए कहा—ब्राह्मणो! मेरी आज्ञा का पालन करो। कोई भी दान, यज्ञ और हवन न करे। मेरी आज्ञा का पालन ही तुम लोगों का धर्म है। तुम जिसको यज्ञेश्वर मानते हो, वह 'हरि' कहलाने वाला कौन है?

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृपा करने और दण्ड देने की सामर्थ्य रखने वाले सभी देवता राजा के शरीर में ही निवास करते हैं। राजा ही सर्वदेवमय होता है।

पापात्मा वेन की आज्ञा सुनकर मुनियों ने विचार किया कि यह अधर्माचरण राजा, समस्त प्रजा व राज्य को भ्रष्ट कर देगा। यह सर्वेश्वर भगवान् प्रभु की भी निन्दा करता है। क्रुद्ध हुए महर्षियों ने कुश के तिनकों को मन्त्राभिषिक्त करके उनके द्वारा ही उसे मार डाला।

वेन की माता सुनीथा ने वेन के मृत शरीर को सुरक्षित रखा। उधर राजा के न रहने से सर्वत्र अराजकता का बोलबाला हो गया। प्रजा अधिक कष्ट पाने लगी। ऐसी स्थिति को देखकर ऋषियों ने मन्त्रोच्चारणपूर्वक वेन के शरीर की दाहिनी जङ्घा का मन्थन किया। उससे जले हुए ठूंठ के समान काला अत्यन्त छोटा और छोटे मुख वाला एक पुरुष उत्पन्न हुआ। उसने अत्यन्त आतुरता से पूछा—ब्राह्मणो ! 'मैं क्या करूँ ?' ब्राह्मणों ने कहा - 'निषीद (बैठ)।' अतः वह 'निषाद' कहलाया। उक्त निषादरूप द्वार से वेन का सम्पूर्ण पाप निकल गया। इसके पश्चात् महर्षियों ने उस पुत्रहीन राजा वेन की भुजाओं का मन्थन किया। उससे एक सुन्दर स्त्री-पुरुष का जोड़ा प्रकट हुआ।

महर्षियों ने कहा—'यह पुरुष-स्वरूप भगवान् विष्णु की विश्वपालनी कला द्वारा प्रकट हुये हैं। यह यशस्वी पुरुष 'पृथु' नामक सम्राट होंगे। यह स्त्री-स्वरूप में जो प्रकट हुई है, यह उन परम पुरुष की शक्ति श्रीलक्ष्मीजी का अवतार है। इस सर्वशुभलक्षण सम्पन्ना परम सुन्दरी का नाम 'अर्चि' होगा। यह सम्राट पृथु की धर्मपत्नी होंगी। पृथु के दाहिने हाथ में चक्र और चरणों में कमल का चिह्न देखकर ऋषियों ने कहा—पृथु के वेश में स्वयं श्रीहरि के अंश से यह अवतरित हुए हैं और भगवान् विष्णु की नित्य सहचारी लक्ष्मीजी ने ही अर्चि के रूप में पृथ्वी पर पदार्पण किया है।

महर्षियों ने इतने में ही देखा कि महाराज पृथु के शरीर पर इन्द्र के समान परम सुन्दर तेजस्वी कवच और मुकुट भी लगे हुए हैं। उनकी कमर में सुन्दर तलवार बँधी थी, उनके हाथों में धनुष बाण थे। धर्म और अर्थ का दर्शन कराने वाली अत्यन्त सूक्ष्म-बुद्धि भी उन्हें स्वतः ही हो गई। वेद-वेदान्त का पूर्ण ज्ञान भी प्राप्त था। वे धनुर्वेद के पारंगत विद्वान् थे।

महाराज पृथु ने उसी समय हाथ जोड़कर महर्षियों से कहा—आप लोग आज्ञा प्रदान करें, मैं आपकी क्या सेवा करूं।

देवताओं और महर्षियों ने कहा—वेननन्दन ! जिस कार्य द्वारा निश्चितरूप से धर्म की सिद्धि होती हो, वही कार्य निर्भय होकर करो। प्रिय और अप्रिय का

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विचार छोड़कर काम, क्रोध और लोभ का त्याग करके समस्त प्राणियों में समभाव रखो। लोक में जो कोई भी मनुष्य धर्म से विचलित हो, उसको सनातन धर्म पर दृष्टि रखते हुए अपने भुजबल द्वारा परास्त करके दण्ड दो और प्रतिज्ञा करो कि 'मैं मन, वाणी और क्रिया द्वारा इस पृथ्वी पर ब्रह्म (वेद) का निरन्तर पालन करूंगा। वेद में लिखी हुई जो धर्म-नीति है और नित्य-धर्म हैं, उनका निश्शङ्क होकर पालन करूंगा। कभी भी स्वच्छन्द नहीं होऊँगा। मेरे लिये ब्राह्मण अदण्डनीय होंगे तथा मैं सम्पूर्ण जगत् को वर्णसंकरता और धर्मसंकरता से बचाऊँगा।'

महाराज पृथु ने कहा—पूज्य महात्माओ! मैं संकल्प लेता हूँ कि आपकी इन आज्ञाओं का पालन करूंगा और महाभाग ब्राह्मण सर्वदा मेरे लिये वन्दनीय होंगे।

महाराज पृथु के दृढ़ आश्वासन से महर्षिगण अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। उसी समय महाराज पृथु का अभिषेक किये जाने का प्रबन्ध किया गया। नदी, समुद्र, पर्वत, सर्प, गौ, पक्षी, मृग, स्वर्ग, पृथ्वी तथा अन्य सब प्राणी व देवता उपस्थित हुए। महाराज पृथु का अभिषेक किया गया। सभी ने अनेक प्रकार के बहुमूल्य उपहार भेंट किये। उस समय महारानी अर्चि के साथ उनकी अद्भुत शोभा प्रकट हो रही थी।

इसके पश्चात् भविष्यद्रष्टा ऋषियों की प्रेरणा से वन्दीजनों ने महाराज पृथु की योग्यता व उनके भावी पराक्रमों का वर्णन कर उनकी स्तुति की। महाराज ने वन्दीजनों की प्रशंसा करते हुए उन्हें अभीष्ट वस्तुएँ देकर संतुष्ट किया। साथ ही ब्राह्मणादि चारों वर्णों, सेवकों, मन्त्रियों, पुरोहितों, पुरवासियों, देश-वासियों, विभिन्न व्यवसायियों आदि का यथोचित सत्कार किया।

अत्यन्त दुबले-पतले, भूख से सताये हुए जीर्ण-शीर्ण शरीरों वाली जनता ने आकर महाराज पृथु से निवेदन किया—हम लोग भूख से मरे जा रहे हैं। आप हमारे अन्नदाता, प्रजापालक बने हैं, हम आपकी शरण में आये हैं। हमारे प्राण बचाने के लिये आप अन्न की व्यवस्था करें। समस्त राज्य में दुर्भिक्ष पड़ा हुआ है। राजा वेन के पापाचरण के कारण पृथ्वी का अन्न नष्ट हो चुका है।

अपनी परम प्यारी प्रजा को इस प्रकार भूख से बिलबिलाती देख कर आदि सम्राट पृथु ने विचार किया कि पृथ्वी ने अन्न तथा औषधियों को अपने अन्दर कर लिया है। महाराज पृथु ने तत्काल ही अपना 'आजगव' नामक दिव्य धनुष उठाया और उस पर दिव्य बाण चढ़ाया तथा पृथ्वी का लक्ष्य करके बाण छोड़ना ही चाहते थे; कि उनके क्रोध को देखकर पृथ्वी काँप उठी और भयभीत होकर गौ-रूप धारण कर अपने प्राण लेकर भागी। समस्त दिशाओं, आकाश व स्वर्ग तक पृथ्वी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भागती चली गई किन्तु सभी स्थानों में उसको धनुष पर अपना तीक्ष्ण बाण चढ़ाये अत्यन्त क्रुद्ध हुये, आँखे लाल किये सम्राट पृथु को अपने पीछे-पीछे ही आते देखा। विवश होकर अपने प्राण बचाने के लिये काँपती हुई पृथ्वी ने परम पराक्रमी महाराज पृथु से निवेदन किया—'महाराज ! मुझे मारने से आपको स्त्री-वध का पाप लगेगा।'

महाराज पृथु ने कहा—'जहाँ एक दुष्ट को मार डालने से बहुतों के प्राण बच सकते हैं और वे सुखी हो सकते हों, ऐसे समय पर उसे मार डालना भी पुण्य-प्रद होता है।

पृथ्वी ने कहा—मेरे मार देने पर आपकी जनता का आधार ही नष्ट हो जायगा।

महाराज पृथु ने कहा—'वसुधे ! मेरी आज्ञा का उल्लङ्घन करने पर तो मैं तुझे अवश्य मार ही डालूंगा, फिर मैं अपने योगबल से जनता को धारण करूंगा।

पृथ्वी ने महाराज पृथु के चरणों में प्रणाम और स्तुति करके फिर कहा—पापात्माओं के द्वारा दुरुपयोग होता देखने पर मैंने सब प्रकार के बीजों को अपने में रोक लिया था। अधिक समय हो जाने से वे मेरे उदर में पच गये हैं। आपकी आज्ञा हो तो मैं दुग्ध के रूप में दे सकती हूँ। आप जनता के हितार्थ बछड़ा प्रस्तुत करें, जिससे वात्सल्यवश मैं उन्हें दुग्ध के रूप से निकाल सकूँ। आप मुझे समतल करने का भी कष्ट करें, जिससे वर्षा ऋतु व्यतीत होने पर भी मेरे ऊपर इन्द्र का बरसाया हुआ जल सर्वत्र बना रहे। मेरी आर्द्रता (गीलापन) सुरक्षित रहे, शुष्क न हो जाय। यह आपके लिये भी बहुत मङ्गलकारक होगा।

इति प्रियं हितं वाक्यं भुव आदाय भूपतिः।
वत्सं कृत्वा मनुं पाणावदुहत्सकलौषधीः॥

(श्रीमद्भागवत ४।१८।१२)

'पृथ्वी के कहे हुए ये प्रिय और हितकारी वचन स्वीकार कर, महाराज पृथु ने स्वायम्भुव मनु को बछड़ा बना अपने हाथ में ही समस्त धान्यों को दुह लिया।'

महाराज पृथु ने फिर पृथ्वी को समतल किया, औषधि-अन्नादि का उत्पादन आरम्भ कराया। बीच-बीच में ऊँचे, लम्बे, चौड़े पर्वतों का निर्माण किया। इससे पूर्व पृथ्वी के समतल न होने से पुर और ग्राम आदि का विभाग नहीं था। उस समय अन्न, गोरक्षा, कृषि और व्यापार का भी कोई क्रम नहीं था। यह सब महाराज पृथु ने आरम्भ किया।

महाराज पृथु के राज्य में सर्वत्र सुख-शान्ति थी। प्रजा सब प्रकार से निश्चिन्त रहते हुए अपने-अपने धर्म का पालन करती थी। वहाँ रोग-शोक जैसी वस्तु

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नहीं थी। महाराज पृथु के राज्य में किसी को बुढ़ापा, दुर्भिक्ष तथा आधि-व्याधि का कष्ट नहीं था। राजा की ओर से रक्षा की पूर्ण व उचित व्यवस्था थी। वहाँ किसी को हिंसक जीव-जन्तुओं, चोरों का कोई भय नहीं था। किसी पर कोई अत्याचार नहीं कर सकता था। यही नहीं भगवान् विष्णु के अंशावतार महाराज पृथु के राज्य-शासन में इच्छानुसार वस्तुएँ स्वयं ही प्राप्त हो जाती थीं।

अकृष्टपच्या पृथिवी सिद्धचन्त्यन्नादि चिन्तया।
सर्वकामदुघा गावः पुटके पुटके मधु॥
(विष्णु पुराण १।१३।५०)

'पृथ्वी बिना जोते-बोये धान्य पकाने वाली थी। केवल मन में चिन्तना करने से ही अन्न सिद्ध हो जाता था। गौएँ कामधेनुरूप थी और पत्ते-पत्ते में मधु रहता था।

महाराज पृथु के चरणों में समस्त जगत् देवता के समान सिर झुकाता था। यदि वे सागर की ओर जाते तो सागर का जल स्थिर हो जाता। पर्वत भी उन्हें मार्ग दे देते थे। उनके रथ की पताका सर्वदा फहराती रहती थी।

महाराज पृथु अत्यन्त धर्मात्मा तथा परमभगवद्भक्त थे। उन्हें एहलौकिक विषय भोगों की तनिक भी इच्छा नहीं थी। सांसारिक कामनाएँ स्पर्श तक नहीं कर सकी थीं। वे सर्वदा वही कार्य करते जिससे भगवान् प्रसन्न हो। उन्होंने भगवान को सन्तुष्ट करने के लिए मनु के क्षेत्र ब्रह्मावर्त्त में, जहाँ पुण्यप्रदा सरस्वती पूर्वमुखी होकर बहती है, सौ अश्वमेध-यज्ञों की दीक्षा ली। श्रीभगवान् हरि की कृपा से उस यज्ञानुष्ठान से उनका बड़ा उत्कर्ष हुआ किन्तु यह बात देवताओं के राजा इन्द्र को सहन नहीं हो सकी। सौ श्रौतयाग करने के फलस्वरूप ही जीव को इन्द्रपद प्राप्त होता है। ऐसी स्थिति में दूसरा कोई 'शतक्रतु' हो जाय, यह उन्हें कैसे सहन हो सकता था। जब महाराज पृथु अन्तिम यज्ञ द्वारा यज्ञपति श्रीभगवान् की आराधना कर रहे थे, इन्द्र ने यज्ञ का घोड़ा चुरा लिया। अनेक प्रकार से कपटवेश धारण कर वे घोड़े को चुरा लेते और महर्षि अत्रि की आज्ञा से पृथु के महारथी पुत्र विजिताश्व उनके यज्ञ का घोड़ा छीनकर वापस ले आते।

जब महाराज पृथु को इन्द्र के इस छल-कपट का पता चला, वे इन्द्र पर क्रुद्ध होकर दण्ड देने के लिए अपना धनुष उठाकर उस पर तीक्ष्ण बाण चढ़ाने को उद्यत हुए।

यज्ञ में बैठे हुए ऋत्विज महर्षियों ने क्रोधित हो रहे महाराज पृथु को रोकते हुए कहा—'राजन्! यज्ञदीक्षा लेने के पश्चात् शास्त्र विहित यज्ञपशु के अतिरिक्त अन्य किसी का वध करना उचित नहीं है। यज्ञ के घोड़े को चुराने वाला आपका

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वेषी इन्द्र आपकी उत्तम कीर्ति के समक्ष निस्तेज हो रहा है। हम कभी भी विफल नहीं होने वाले आह्वान मन्त्रों के द्वारा उसे अग्नि में हवन करके भस्म कर देते हैं। आप तो यज्ञ की दीक्षा लेकर यज्ञ में बैठने वालों की मर्यादा का पालन कीजिये।'

यजमान महाराज पृथु के परामर्शानुसार याजकों ने क्रोधपूर्वक मन्त्रों द्वारा इन्द्र का आह्वान किया। वे स्रुवा से आहुति देना ही चाहते थे, उसी समय जगत् पितामह ब्रह्माजी ने वहाँ उपस्थित होकर उन्हें ऐसा करने से रोकते हुए कहा—राजन्! यज्ञसंज्ञक इन्द्र तो श्रीभगवान् की ही मूर्ति है। यज्ञ के द्वारा आप जिन देवताओं को सन्तुष्ट करना चाहते हैं, वे सब इन्द्र के ही अङ्ग हैं और उसे आप यज्ञ द्वारा भस्म कर देना चाहते हैं। आप तो भगवान् हरि के अनन्य भक्त हैं। आपको तो मोक्ष प्राप्त करना है। अतएव आपको इन्द्र पर क्रोध नहीं करना चाहिये। आप यज्ञ बंद कर दीजिये।'

महाराज पृथु ने श्रीब्रह्माजी की आज्ञानुसार यज्ञ की वहाँ ही पूर्णाहुति कर दी। उनकी सहिष्णुता, विनय एवं निष्काम भक्ति से भगवान् विष्णु अत्यन्त प्रसन्न हुए। भक्तों पर अनुग्रह करने वाले प्रभु, इन्द्र के साथ वहाँ उसी समय उपस्थित हो गये। इन्द्र अपने कर्मों से लज्जित होकर महाराज पृथु के चरणों में गिरना ही चाहते थे कि महाराज ने उन्हें अत्यन्त प्रीतिपूर्वक हृदय से लगा लिया और उनके मन की मलिनता दूर कर दी।

जब महाराज पृथु ने त्रैलोक्य सुन्दर, भुवन मोहन भगवान् विष्णु की ओर देखा तो उनको अपार आनन्द हुआ। नेत्रों में जल भर आया, इससे भली प्रकार से प्रभु का दर्शन भी नहीं कर पा रहे थे।

भगवानथ विश्वात्मा पृथुनोपहृतार्हणः।
समुज्जिहानया भक्त्या गृहीतचरणाम्बुजः॥

(श्रीमद्भागवत ४।२०।१९)

'फिर महाराज पृथु ने विश्वात्मा, भक्तवत्सल भगवान् का पूजन किया और क्षण-क्षण में उमड़ते हुए भक्तिभाव में निमग्न होकर प्रभु के चरण पकड़ लिये।'

श्रीहरि भगवान् वहाँ से जाना चाहते थे किन्तु पृथु के प्रति जो उनका वात्सल्य भाव था, उसने उन्हें वहीं रोक लिया। वे अपने कमलदल के समान नेत्रों से उनकी ओर देखते ही रह गये, वहाँ से नहीं जा सके।

उस समय श्रीभगवान् ने ज्ञान, वैराग्य तथा राजनीति के अनेक गूढ़ रहस्यों को बतलाते हुए कहा, 'राजन्! तुम्हारे गुणों और स्वभावों ने मुझको वश में कर लिया है; अतः तुम्हें जो इच्छा हो, वही वर मुझसे माँग लो। उन क्षमा आदि से

CC-0, Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रहित यज्ञ, तप अथवा योग के द्वारा मुझको पा लेना सरल नहीं है; मैं तो उन्हीं के हृदय में रहता हूँ, जिनके चित्त में समता रहती है।'

भगवान् प्रभु के चरण-कमल पृथ्वी को स्पर्श कर रहे थे। उनका एक कर-कमल गरुड़जी के कंधे पर था। महाराज पृथु ने अपने नेत्रों में आये हुए जल को पोंछते हुए, भगवान् के मुखारविन्द को देखते हुए अत्यन्त विनम्र मृदुवाणी से निवेदन किया—

'मोक्षपति प्रभो! आप वर देने वाले ब्रह्मादि देवताओं को भी वर देने में समर्थ हैं। कोई भी बुद्धिमान् पुरुष आपसे देहाभिमानियों के भोगने योग्य विषयों को कैसे मांग सकता है? वे तो नारकीय जीवों को भी मिलते हैं। अत मैं इन तुच्छ विषयों को मांग कर क्या करूं? मुझे तो उस मोक्षपद की भी इच्छा नहीं है, जिसमें महापुरुषों के हृदय से उनके मुख द्वारा निकला हुआ आपके चरण-कमलों का मकरन्द नहीं है—जहाँ आपकी कीर्ति-कथा सुनने का सुख नहीं प्राप्त होता। इसलिए मेरी तो यही प्रार्थना है कि आप मुझे दस हजार कान प्रदान करा दीजिये, जिनसे मैं आपके लीला-गुणों को सुनता रहूँ।'

श्रीभगवान् विष्णु ने कहा—'तुम्हारी अनुरक्ति मुझमें सर्वदा बनी रहे।' इस प्रकार वरदान प्रदान कर महाराज पृथु द्वारा की हुई पूजा को ग्रहण कर श्रीभगवान् अपने धाम को पधार गये।

आदिराज महाराज पृथु ने गङ्गा-यमुना के मध्यवर्ती क्षत्र प्रयागराज को अपना निवास-स्थान बना लिया। वे सर्वथा अनासक्त भाव से तत्परतापूर्वक प्रजा का पालन करते थे। वे अनेक बार अनेक-अनेक प्रकार के महोत्सव किया करते थे। एक बार एक महासत्र में देवता, ब्रह्मर्षि और राजर्षि भी उपस्थित थे। उन सबका यथा-योग्य स्वागत-सत्कार करने के पश्चात् परम भागवत महाराज पृथु ने सबके सम्मुख प्रजा के उपदेश देते हुए कहा—

'प्रिय प्रजाजन! अपने इस राजा के पारमार्थिक हित के लिए आप लोग परस्पर दोष-दृष्टि छोड़कर अपने हृदय से सर्वेश्वर प्रभु को स्मरण करते हुए अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहिये। आपका स्वार्थ भी इसी में है और इस प्रकार मुझ पर भी आपका परम अनुग्रह होगा। इस पृथ्वी पर मेरे जो प्रजानन सर्वगुरु श्रीहरि की निष्ठापूर्वक अपने-अपने धर्मों के द्वारा निरन्तर पूजा करते हैं, उनकी मुझ पर बड़ी कृपा है।' भगवान् की महिमा का निरूपण करने के साथ ही उन्होंने क्लेशों की निवृत्ति तथा मोक्ष-प्राप्ति का साधन भगवद्भजन को ही बतलाया। उन्होंने सबको धर्म का उपदेश दिया और अन्त में अभिलाषा व्यक्त की कि 'ब्राह्मण-कुल, गोवंश और भक्तों के सहित भगवान् मुझ पर सर्वदा प्रसन्न रहें।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महाराज पृथु के उपदेश और विचारों को सुनकर सबने ही उनकी प्रशंसा की।' उसी समय लोगों ने आकाश से सूर्य के समान तेजस्वी चार सिद्ध महात्माओं को उतरते हुए देखा। महाराज पृथु ने सनकादि कुमारों को पहचान कर उन्हें श्रेष्ठ रत्न जड़ित स्वर्णनिर्मित सिंहासन पर बैठाया और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक हृदय से उनकी विधिवत् पूजा की। उनका चरणोदक अपने मस्तक पर चढ़ाया और हाथ जोड़कर अत्यन्त विनयपूर्वक उन्होंने सनकादि से निवेदन किया—प्रभो! आपने मेरे यहाँ पधारने की कृपा कर मेरा बड़ा उपकार किया है। मैं किन शब्दों में आपके प्रति आभार व्यक्त करूं। अब आप मुझ पर अनुग्रह करके यह बतलाने का कष्ट करें कि इस पृथ्वी पर प्राणियों का सुगमता से कैसे कल्याण हो सकता है।'

सनकादि कुमारों ने महाराज पृथु पर अत्यन्त प्रसन्न होकर कहा—धन और इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन त्याग कर भगवान् की भक्ति करने से ही प्राणियों का कल्याण हो सकता है। इससे सरल अन्य कोई मार्ग नहीं है।

सनकादि के अमृतमय उपदेशों को सुनकर महाराज पृथु कृतार्थ हो गये और उनकी अनेक प्रकार से पूजा व स्तुति करते हुए निवेदन किया कि मैं आपके उपकार का बदला क्या और किस प्रकार दे सकता हूँ। वे आत्मज्ञानियों में परम श्रेष्ठ सनकादि महाराज पृथु के शील-गुण की प्रशंसा करते हुए सबके सामने ही आकाश मार्ग द्वारा प्रस्थान कर गये।

इस प्रकार प्रजाजनों के हित, जीवन-निर्वाह की पूर्ण व्यवस्था तथा उत्तम साधुजनोचित धर्म का पालन करते हुए पृथु की आयु ढलते लगी। उन्होंने विचार किया कि अब मुझे अन्तिम पुरुषार्थ के लिये प्रयत्न करना चाहिए और उन्होंने पृथ्वी का राज्य-भार अपने पुत्र को सौंपकर अपनी सहधर्मिणी अर्चि के साथ वे तपस्या के लिए वन में चले गये।

वहाँ महाराज पृथु ने सनकादि के उपदेशों के अनुसार अनेक प्रकार से अत्यन्त कठोर तपस्याएँ की। एक दिन आसन पर बैठे-बैठे ही अपने परम आराध्य श्रीहरि में मन लगाकर उन्होंने योग धारण के द्वारा अपना भौतिक शरीर त्याग दिया।

अपने पुण्यमय पति के तपस्या समय में उनकी सुकुमारी महारानी अर्चि ने अत्यन्त कृष व दुर्बल होते हुए भी उनकी प्रत्येक प्रकार से सेवा की। वे निर्जन बीहड़ जंगलों में समिधा, कुश, पुष्प, फल एकत्र करके लाती और पवित्र स्वच्छ जल लाकर पति के भजन में सतत योगदान करती रहीं। जब उन्होंने पति के निष्प्राण शरीर को देखा, तब पहले तो करुण विलाप किया और इसके पश्चात् आदिराज पृथु महाराज की महारानी अर्चि ने धैर्य धारण कर लकड़ियाँ एकत्र करके चिता तैयार की। फिर पति के निर्जीव शरीर को स्नानादि द्वारा शुद्ध कर चिता पर रख दिया। इसके अनन्तर उन्होंने स्वयं स्नान कर अपने पति को जलाञ्जलि दी। फिर अन्तरिक्ष

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में उपस्थित देवताओं की स्तुति की, चिता की तीन परिक्रमा कर स्वयं प्रज्वलित अग्नि में प्रवेश कर गयीं।

महारानी अर्चि को अपने वीर पति पृथु का अनुगमन करते देखकर सहस्रों वरदायिनी देवियों ने उनकी स्तुति की। देव-वाद्य बजने लगे और आकाश से पुष्पों की वर्षा होने लगी। देवाङ्गनाओं ने परम सती महारानी अर्चि की प्रशंसा करते हुए कहा—

'अवश्य ही अपने अचिन्त्य कर्म के प्रभाव से यह सती हमें लाँघकर अपने पति के साथ उच्चतर लोकों को जा रही है। इस लोक में कुछ ही दिनों का जीवन होने पर भी जो लोग भगवान् के परमपद की प्राप्ति कराने वाला आत्म-ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, उनके लिए संसार में और कौन पदार्थ दुर्लभ है।'

स्तुवतीष्वमरस्त्रीषु पतिलोकं गता वधूः।
य वा आत्मविदां धुर्यो वैन्यः प्रापाच्युताश्रयः॥

(श्रीमद्भागवत ४।२३।२९)

'जिस समय देवाङ्गनाएँ इस प्रकार स्तुति कर रही थीं; भगवान् के जिस परमधाम को आत्मज्ञानियों में श्रेष्ठ भगवत्प्राण महाराज पृथु गये, महारानी अर्चि भी उसी पतिलोक को गयीं।'

महारानी अर्चि सहित महाराज पृथु को बारम्बार नमस्कार है!

भगवान् मत्स्य (१०)

सोपान १२

नूनं त्वं भगवान् साक्षाद्धरिर्नारायणोऽव्ययः।
अनुग्रहाय भूतानां धत्से रूपं जलौकसाम्॥
नमस्ते पुरुषश्रेष्ठ स्थित्युत्पत्त्यप्ययेश्वर।
भक्तानां नः प्रपन्नानां मुख्यो ह्यात्मगतिर्विभो॥

(श्रीमद्भागवत ८।२४।२७-२८)

'आप अवश्य ही साक्षात् सर्वशक्तिमान् सर्वान्तर्यामी अविनाशी श्रीहरि हैं। जीवों पर अनुग्रह करने के लिए ही आपने जलचर का रूप धारण किया है। पुरुषोत्तम! आप जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के स्वामी हैं। आपको मैं नमस्कार करता हूँ। प्रभो! हम शरणागत भक्तों के लिए आप ही आत्मा और आश्रय हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कृतयुग के आरम्भ समय में एक सत्यव्रत नामक विख्यात राजर्षि थे। ये ही वर्तमान महाकल्प में श्राद्धदेव नाम से प्रसिद्ध विवस्वान् के पुत्र हुए, उनको भगवान् ने वैवस्वत् मनु बना दिया था। राजा सत्यव्रत बड़े क्षमाशील, समस्त श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न और सुख-दुःख को समान समझने वाले एक वीर पुरुष थे। ये अपने पुत्र को राज्य भार सौंप कर तपस्या के लिए वन में चल गये और मलय पर्वत के शिखर पर उत्तम योग का आश्रय ग्रहण कर महान् कठिन तपस्या में लग गये। घोर तपस्या के दस हजार वर्ष बीतने के पश्चात् चतुर्मुख ब्रह्माजी राजा के समक्ष प्रकट हुए और कहा—'मैं तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न हूँ, वर मांगो।' राजा ने पितामह के चरणों में प्रणाम करके कहा—'पितामह ! मैं आपसे केवल एक ही उत्तम वर प्राप्त करना चाहता हूँ। प्रलयकाल उपस्थित होने पर मैं चराचर समस्त भूत समुदाय की रक्षा करने में समर्थ हो सकूँ।' यह सुनकर विश्वात्मा ब्रह्मा 'एवमस्तु' (यही होगा) यह वर देकर अन्तर्धान हो गये। देवताओं ने राजा पर पुष्प वृष्टि की।

एक दिन राजर्षि सत्यव्रत नदी में स्नान करके तर्पण कर रहे थे। इतने में ही जल के साथ उनकी अञ्जलि में एक छोटी सी मछली आ गयी। राजा ने जल के साथ उसे फिर नदी में डाल दिया। तब उस मछली ने बड़ी करुणा के साथ राजा से कहा—'राजन् ! आप बड़े दयालु हैं। आप जानते ही हैं कि बड़े-बड़े जल जन्तु अपनी जाति वाले छोटे-छोटे जल-जन्तुओं को खा जाते हैं; फिर आप मुझे इस नदी के जल में क्यों छोड़ रहे हैं।'

राजा सत्यव्रत मछली की यह दीनतापूर्ण वाणी सुनकर उसे अपने कमण्डलु में रख कर आश्रम पर ले आये। एक ही रात्रि में वह मछली इस प्रकार बढ़ गई कि कमण्डलु में नहीं समा सकी और राजा से बोली—'राजन् ! अब इस कमण्डलु में मेरा निर्वाह नहीं हो सकता, अतः मेरे लिए कोई बड़ा स्थान नियत कीजिये।'

राजर्षि सत्यव्रत ने उसको कमण्डलु से निकाल कर एक अत्यन्त बड़े पानी के मटके में रख दिया, वह थोड़ी देर में उसमें भी नहीं समाई और राजा से पुनः बोली 'यह स्थान भी मेरे लिए पर्याप्त नहीं है, मुझे रहने के लिए दूसरा बड़ा स्थान दीजिये।' राजा सत्यव्रत ने उस मछली को उठा कर एक बड़े सरोवर में डाल दिया परन्तु थोड़े ही समय में उस सरोवर के जल को भी घेर लिया और कहा—'राजन्! यह भी मेरे सुखपूर्वक रहने के लिए पर्याप्त नहीं है।' इस प्रकार राजा उसे अन्यान्य अगाध जलराशि वाले सरोवरों में छोड़ते गये और वह उन्हें अपने शरीर-वृद्धि से परिव्याप्त करती गयी। तब राजा ने उसे समुद्र में डाल दिया। समुद्र में छोड़े जाते समय उस लीलारूपधारी मत्स्य ने पुनः कहा—'वीरवर नरेश ! समुद्र में बहुत से बड़े शरीरधारी मगरमच्छ रहते हैं, वे मुझे निगल जायेंगे, अतः आप मुझे समुद्र में मत डालिये।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मत्स्य भगवान् की यह मधुर वाणी सुनकर राजा सत्यव्रत की बुद्धि मोहाच्छन्न हो गयी और उन्होंने विनम्र वाणी में कहा – 'हमें इस मत्स्य रूप से मोहित करने वाले आप कौन देवता हैं ? आपने कुछ ही समय में एक सौ योजन विस्तार वाले सरोवरों को भी आच्छादित कर लिया। ऐसा पराक्रमशाली जलजन्तु तो हमने कहीं न देखा न सुना ही था। आप निश्चय ही साक्षात् सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापी अविनाशी श्रीहरि हैं। जीवों पर अनुग्रह करने के लिए ही आपने यह जलचर रूप धारण किया है। पुरुष श्रेष्ठ ! आप जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के कर्ता हैं; आपको नमस्कार है। विभो ! हम शरणागत भक्तों के आप ही आत्मा और आश्रय हैं। यद्यपि आपके सभी लीलावतार प्राणियों के अभ्युदय के लिए ही होते हैं तथापि मैं यह जानना चाहता हूँ कि आपने यह मत्स्य रूप किस उद्देश्य से धारण किया है ?'

राजा सत्यव्रत के पूछने पर मत्स्य भगवान् ने कहा—'शत्रुसूदन ! आज से सातवें दिन भूलोक आदि तीनों लोक प्रलयपयोधि में निमग्न हो जायेंगे। उस समय प्रलयकाल की जलराशि में त्रिलोकी के डूब जाने पर मेरी प्रेरणा से एक विशाल नौका तुम्हारे पास आयेगी। तब तुम समस्त औषधियों, छोटे-बड़े सभी प्रकार के पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाले फल-फूल, अन्नादि के बीजों और प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को लेकर सप्तर्षियों के साथ उसी बड़ी नाव पर चढ़ जाना और निश्चिन्त होकर उस एकार्णव के जल में विचरण करना। उस समय प्रकाश नहीं रहेगा, केवल ऋषियों के दिव्य तेज का ही सहारा रहेगा। जब झंझावात के प्रचण्ड वेग से नाव डगमगाने लगेगी, उस समय मैं इसी रूप में तुम्हारे पास उपस्थित होऊँगा। तब तुम वासुकि नाग के द्वारा उस नाव को मेरे सींग से बाँध देना। इस प्रकार जब तक ब्राह्मी निशा रहेगी, तब तक मैं तुम्हारे तथा ऋषियों के द्वारा अधिष्ठित उस नाव को प्रलय सागर से खींचता हुआ विचरण करूंगा। उस समय तुम्हारे प्रश्न करने पर मैं उनका उत्तर दूँगा, जिनसे मेरी महिमा, जो 'परब्रह्म' नाम से विख्यात है, तुम्हारे हृदय में प्रस्फुटित हो जायेगी।' राजर्षि सत्यव्रत को इस प्रकार कह कर मत्स्य भगवान् वहाँ से अन्तर्हित हो गये।

राजा सत्यव्रत भगवान् के बतलाये हुए उस काल की प्रतीक्षा करने लगे। वे कुशों (डाभ) को बिछा कर उस पर ईशान कोण की ओर मुख करके बैठ गये और मत्स्यरूपधारी श्रीहरि के चरणों का चिन्तन करने लगे। इतने में ही राजा ने देखा कि समुद्र अपनी मर्यादा भंग करके चारों ओर से पृथ्वी को डुबाता हुआ बढ़ रहा है और भयंकर मेघ वर्षा कर रहे हैं। तब उन्होंने भगवान् की आज्ञा का ध्यान किया और देखा कि नाव आ गयी है। उसी समय महाराज सत्यव्रत औषधि, समस्त प्रकार के बीजों और सप्तर्षियों को साथ लेकर उस नाव पर सवार हो गए। तब

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सप्तर्षियों ने प्रसन्न होकर कहा—'राजन् ! केशव भगवान् का ध्यान कीजिये । वे ही इस समय हम लोगों की संकट से रक्षा करके कल्याण करेंगे ।'

राजा सत्यव्रत के ध्यान करते ही श्रीहरि मत्स्यरूप धारण करके उस प्रलय काल में प्रकट हो गए । उस समय उनका शरीर स्वर्ण के समान देदीप्यमान तथा चार लाख कोस के विस्तार वाला हो रहा था । उनके एक सींग भी था । राजा ने भगवान् के पूर्व कथनानुसार उस नाव को वासुकि नाग द्वारा मत्स्य भगवान् के सींग में बाँध दिया और स्वयं प्रसन्न होकर उन मधुसूदन भगवान् की स्तुति करने लगे ।

राजा सत्यव्रत के स्तवन कर चुकने पर मत्स्यरूपधारी पुरुषोत्तम भगवान् ने प्रलयपयोधि में विहार करते हुए उन्हें तत्त्वज्ञान का उपदेश किया, जो 'मत्स्य पुराण' नाम से प्रसिद्ध है ।

प्रलयपयसि धातुः सुप्तशक्तेर्मुखेभ्यः
श्रुतिगणमपनीतं प्रत्युपादत्त हत्वा ।
दितिजमकथयद् यो ब्रह्म सत्यव्रतानां
तमहमखिलहेतुं जिह्ममीनं नतोऽस्मि ।।
(श्रीमद्भागवत ८।२४।६१)

'प्रलयकालीन समुद्र में जब ब्रह्माजी सो गये थे, उनकी सृष्टि-शक्ति लुप्त हो चुकी थी, उस समय उनके मुखों से निकली हुई श्रुतियों को चुराकर हयग्रीव दैत्य पाताल में ले गया था । भगवान् ने उसे मार कर वे श्रुतियाँ ब्रह्माजी को लौटा दीं एवं राजर्षि सत्यव्रत तथा सप्तऋषियों को ब्रह्मतत्त्व का उपदेश किया । उन समस्त जगत् के परम कारण लीलामत्स्य भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ ।'

भगवान् की कृपा से राजा सत्यव्रत ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न होकर इस कल्प में वैवस्वत मनु हुए ।

भगवान् कूर्म (११)

सोपान १३

एक समय की बात है भगवान् शङ्कर के अवतार श्रीदुर्वासाजी पृथ्वी पर घूम रहे थे । घूमते-घूमते उन्होंने एक विद्याधरी के हाथों में सन्तातक पुष्पों की एक दिव्यमाला देखी । उस माला की उत्तम गन्ध से वह क्षेत्र सुवासित हो रहा था ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दुर्वासाजी ने वह उत्तम, सुन्दर माला विद्याधर सुन्दरी से माँग ली। विद्याधरी ने प्रणाम करके आदरपूर्वक वह माला दुर्वासाजी को दे दी।

दुर्वासाजी ने वह माला अपने मस्तक पर डाल ली और वे पृथ्वी पर विचरने लगे। इसी समय उन्होंने उन्मत्त ऐरावत हाथी पर चढ़े हुए देवराज इन्द्र को देवताओं सहित आते हुए देखा। दुर्वासाजी ने वह माला अपने सिर पर से उतार कर देवराज इन्द्र के ऊपर फेंक दी। देवराज इन्द्र ने उसको लेकर ऐरावत के मस्तक पर डाल दी, उस मदोन्मत्त हाथी ने उसकी गन्ध से आकर्षित हो उसे सूँड से सूंघ कर पृथ्वी पर फेंक दी। यह देखकर मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाजी अत्यन्त क्रोधित हो गये और कहा—

'अरे ऐश्वर्य के मद से दूषित चित्त इन्द्र! तू बड़ा ढीठ है, तूने मेरी दी हुई माला को पृथ्वी पर फेंका है। इसलिये तेरा यह त्रिभुवन भी शीघ्र ही श्रीहीन हो जायगा।' तब तो इन्द्र घबराये और तुरन्त ही ऐरावत हाथी से उतर कर श्रीदुर्वासा मुनि के चरणों में गिर कर अनेक प्रकार से अनुनय-विनय करने लगे। किन्तु मुनि-श्रेष्ठ दुर्वासाजी ने इस प्रकार कहा—अरे! आज त्रिलोकी में ऐसा कौन है जो मेरे प्रज्वलित जटाकलाप और टेढ़ी भृकुटि को देख कर भयभीत न हो जाय? तू मुझसे बारम्बार अनुनय-विनय का ढोंग क्यों करता है? इससे क्या होगा? मैं तुझे क्षमा नहीं कर सकता।

इस प्रकार कह कर महामुनि दुर्वासा वहाँ से चले गये और इन्द्र भी ऐरावत पर चढ़ कर अपनी अमरावती को चले गये। तभी से इन्द्र के तीनों लोक, वृक्ष-लता आदि क्षीण हो जाने से श्रीहीन और सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट होने लगे। यज्ञों का होना बन्द हो गया। सम्पूर्ण लोक लोभादि के वशीभूत हो जाने से तत्त्व शून्य, सामर्थ्य-हीन हो गये। श्रीहीनों में सत्त्व कहाँ हो सकता है? बिना सत्त्व के गुण कैसे ठहर सकते हैं? बिना गुणों के पुरुष में बल, शौर्य आदि सभी का अभाव हो जाता है और निर्बल तथा अशक्त पुरुष सभी से अपमानित होता है। अपमानित होने पर प्रतिष्ठित पुरुष की बुद्धि बिगड़ जाती है।

इस प्रकार त्रिलोकी के श्रीहीन और सत्त्व रहित हो जाने पर दैत्य और दानवों ने देवताओं पर चढ़ाई कर दी और दैत्यों द्वारा देवता परास्त हो गये। तब इन्द्रादि समस्त देवता अग्निदेव को आगे कर पितामह ब्रह्माजी के पास गये। देवताओं ने प्रणाम कर ब्रह्माजी को समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा—'देवताओं! तुम दैत्य दलन परावरेश्वर भगवान् विष्णु की शरण में जाओ, जो संसार की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के कारण हैं; जो चराचर के ईश्वर, प्रजापतियों के स्वामी, सर्वव्यापक; अनन्त और अजेय हैं तथा जो अजन्मा एवं शरणागतवत्सल हैं। उनकी शरण में जाने पर वे तुम्हारा मङ्गल करेंगे। समस्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवताओं से इस प्रकार कह लोक पितामह ब्रह्माजी भी उनके साथ क्षीर सागर के उत्तरी तट पर गये। वहाँ पहुँचकर ब्रह्माजी ने समस्त देवताओं के साथ श्रीविष्णु भगवान् की अति मङ्गलमय वाक्यों द्वारा स्तुति की—

नमोऽस्तु तस्मा उपशान्त शक्तये
स्वाराज्यलाभप्रतिपूरितात्मने।
गुणेषु मायारचितेषु वृत्तिभि—
र्न सज्जमानाय नभस्वदूतये॥
स त्वं नो दर्शयात्मानमस्मत्करणगोचरम्।
प्रपन्नानां दिदृक्षूणां सस्मितं ते मुखाम्बुजम्॥

(श्रीमद्भागवत ८।५।४४-४५)

'जो माया निर्मित गुणों में दर्शनादि वृत्तियों के द्वारा आसक्त नहीं होते, जो वायु के समान सदा-सर्वदा असङ्ग रहते हैं, जिनमें समस्त शक्तियाँ शान्त हो गई हैं उन अपने आत्मानन्द के लाभ से परिपूर्ण आत्मस्वरूप भगवान् को हमारा नमस्कार है। प्रभो! हम आपके शरणागत हैं और चाहते हैं कि मन्द-मन्द मुस्कान से युक्त आपका मुखकमल अपने इन्हीं नेत्रों से देखें। आप कृपा करके हमें उसका दर्शन कराइये।'

देवताओं के स्तवन से सन्तुष्ट होकर अमित तेजस्वी, मङ्गल-धाम एवं नयनानन्द दाता भगवान् विष्णु मंद-मंद मुस्कराते हुए उन्हीं के बीच प्रकट हो गये। देवताओं ने पुनः दयामय, सर्व समर्थ प्रभु की स्तुति करते हुए अपना अभीष्ट निवेदन किया—

त्वामार्त्ताः शरणं विष्णो प्रयाता दैत्यनिर्जिताः।
वयं प्रसीद सर्वात्मंस्तेजसाप्याययस्व नः॥

(विष्णु पुराण १।९।७२)

'विष्णो! दैत्यों द्वारा परास्त हुए हम लोग आतुर होकर आपकी शरण में आये हैं; सर्वस्वरूप! आप हम पर प्रसन्न होइये और अपने तेज से हमें सशक्त कीजिये।'

मेघ के समान गम्भीर वाणी द्वारा जगत्पति भगवान् विष्णु ने देवताओं से कहा—'पुनः सशक्त होने के लिये तुम्हें जरा-मृत्यु-निवारिणी सुधा अपेक्षित है। यह अमृत समुद्र-मन्थन से प्राप्त होगा।' यह काम अकेले तुम देवताओं से नहीं हो सकेगा। इसके लिये तुम लोग साम नीति का अवलम्बन कर असुरों से सन्धि कर लो। अमृत-पान के प्रश्न पर वे भी सहमत हो जायेंगे। फिर समुद्र में सारी औषधियाँ

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लाकर डाल दो। इसके उपरान्त मन्दरगिरि को मथानी एवं नागराज वासुकि की नेति बनाकर मेरी सहायता से समुद्र-मन्थन करो। तुम्हें निश्चय ही सुफल प्राप्त होगा; पर आलस्य और प्रमाद त्याग कर शीघ्र ही अमृत प्राप्ति के लिये प्रयत्न करो।'

भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्धान हो गये। इन्द्र देवताओं को साथ लेकर दैत्यराज बलि के पास गये। बुद्धिप्रवीण इन्द्र ने उनको अपने बन्धुत्व की बातें कहीं और भगवान् की आज्ञानुसार बलि को अमृत प्राप्ति के लिए समुद्र-मन्थन की बात कही। 'अमृत प्राप्त होने पर देवता और दैत्यों का समान भाग होगा।' इस लाभ के लोभ से दैत्येश्वर बलि ने इन्द्र के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उस समय दैत्यराज के सेनापति शम्बर, अरिष्टनेमि तथा मन्त्रिगण जो वहाँ उपस्थित थे, सभी दैत्यों ने इसका समर्थन किया।

समस्त पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाली उत्तम-उत्तम औषधियाँ, तृण, लता, क्षुप, वृक्षादि लाकर क्षीर सागर में डाल दिये गये। देवताओं और दैत्यों ने अपना भेदभाव त्याग कर मन्दराचल पर्वत को उखाड़ कर क्षीरसागर की ओर ले चले; किन्तु वे मन्दराचल पर्वत को अधिक दूर नहीं ले जा सके। विवश होकर उन्होंने उसे बीच में ही पटक दिया। उस सोने के मन्दरगिरि के गिरने से कितने ही देवता और दैत्य हताहत हो गये।

देवता और दैत्यों के हतोत्साह होते ही भगवान् गरुड़ पर चढ़े हुये वहाँ प्रकट हो गये। उनकी अमृतमयी कृपा-दृष्टि से मृत देवता उसी समय पुनः जीवित हो गये और उनकी शक्ति भी पूर्ववत् ही हो गयी। सर्वसमर्थ भगवान् विष्णु ने एक हाथ से ही मन्दराचल को उठा कर गरुड़ की पीठ पर रखा और देवता तथा दैत्यों सहित जाकर उसको क्षीरसागर के तट पर रख दिया।

देवता और दैत्यों ने मन्दराचल को समुद्र में डाल कर नागराज वासुकि की नेति बनायी। सर्वप्रथम भगवान् नागराज वासुकि के मुख की ओर गये। उनको देखकर अन्य देवता भी वासुकि के मुख की ओर ही चले गये।

यह देखकर दैत्यों ने विरोध करते हुए कहा—'पूँछ सर्प का अशुभ अङ्ग है। हम इसे नहीं पकड़ेंगे। ऐसा कह कर सब दैत्य लोग दूर जाकर खड़े हो गये।

देवता बिना किसी प्रकार की आपत्ति के पूँछ की ओर आ गये। दैत्यगण उसी समय मुख की ओर जाकर उत्साह से समुद्र-मन्थन करने लगे; किन्तु मन्दरगिरि के नीचे कोई भी ठहरने का आधार नहीं होने से वह नीचे समुद्र में डूबने लगा। यह देखकर अचिन्त्यशक्ति-सम्पन्न श्रीभगवान् विशाल एवं विचित्र प्रकार का कच्छप रूप धारण कर समुद्र में मन्दरगिरि के नीचे जा लगे। कच्छपावतार भगवान् की पीठ पर मन्दरगिरि ऊपर उठ गया। देवता और दैत्य जोरों से समुद्र-मन्थन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करने लगे। भगवान् आदि कच्छप की सुविस्तृत पीठ पर मन्दरगिरि अत्यन्त तीव्रता से घूम रहा था और श्रीभगवान् को ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे कोई उनकी पीठ खुजला रहा है।

समुद्र-मन्थन का कार्य सम्पन्न हो जाय; इसलिये श्रीभगवान् विष्णु शक्ति-संवर्द्धन के लिये असुरों में असुर रूप से, देवताओं में देवरूप से और वासुकि नाग में निद्रारूप से प्रविष्ट हो गये और मन्दरगिरि को ऊपर से दूसरे महान् पर्वत की भाँति अपने हाथों से दबाकर स्थित हो गये। श्रीभगवान् विष्णु की इस लीला को देखकर ब्रह्मा, भगवान् त्रिनेत्र शिव तथा इन्द्रादि देवगण स्तुति करते हुए उनके ऊपर दिव्य पुष्पों की वृष्टि करने लगे।

समुद्र मन्थन होने से उसके भीतर से हलाहल विष प्रकट हुआ। उसको भगवान् शंकर ने अपने कण्ठ में धारण कर लिया। इससे कण्ठ में नीला दाग पड़ जाने के कारण वे 'नीलकण्ठ' नाम से प्रसिद्ध हुए। इसके पश्चात् वारुणी देवी प्रकट हुयीं, उसको असुरों ने ग्रहण किया, तत्पश्चात् उच्चैःश्रवा घोड़ा, ऐरावत हाथी, पारिजात वृक्ष तथा दिव्य अप्सराएँ निकलीं जो इन्द्र ने प्राप्त कर लिये। गौएँ निकली वह वेदवादी ऋषियों को प्राप्त हो गयीं। तदनन्तर कौस्तुभमणि निकली वह भगवान् विष्णु ने धारण की, तदनन्तर लक्ष्मीजी का प्रादुर्भाव हुआ, भगवान् विष्णु को प्राप्त हुयीं। सम्पूर्ण देवताओं ने उनका दर्शन पूजन किया, इससे वे लक्ष्मीवान् हो गये। तदनन्तर भगवान् के अंशभूत धन्वन्तरि जो आयुर्वेद के प्रवर्तक हैं हाथ में अमृतकलश लिये हुए प्रकट हुये। दैत्यों ने उनके हाथ से अमृत छीन लिया और उसमें से आधा देवताओं को देकर वे चलते बने। उनमें जम्भ आदि दैत्य प्रधान थे। उन्हें जाते देख भगवान् विष्णु ने स्त्री का सुन्दर रूप धारण किया। उस सुन्दर स्त्री को देख कर दैत्य मोहित हो गये और कहा—'सुमुखि ! तुम हमारी भार्या हो जाओ और यह अमृत लेकर हमें पिलाओ।' स्त्रीरूपधारी भगवान् ने उनके हाथ से अमृत ले लिया और उसे देवताओं को पिला दिया। उस समय राहु चन्द्रमा का रूप धारण करके अमृत पीने लगा। तब सूर्य और चन्द्रमा ने उसके कपट-वेश को प्रकट कर दिया। यह देखकर भगवान् विष्णु ने चक्र से उसका सिर काट डाला। उसका सिर अलग हो गया और भुजाओं सहित धड़ अलग रह गया। भगवान् ने दया कर उसे अमर बना दिया। तब ग्रहस्वरूप राहु ने श्रीभगवान् हरि से कहा—'इन सूर्य और चन्द्रमा को मेरे द्वारा अनेकों बार ग्रहण लगेगा। उस समय जो लोग कुछ दान-धर्म करें, वह अक्षय हो। भगवान् विष्णु ने 'तथाऽस्तु कह कर सम्पूर्ण देवताओं के साथ राहू की बात का अनुमोदन किया। इसके पश्चात् भगवान् ने स्त्रीरूप त्याग दिया।

अपनी पीठ पर मन्दराचल पर्वत को रख कर कच्छपावतार धारण करने वाले श्रीभगवान् को बारम्बार प्रणाम है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् धन्वन्तरि (१२)

सोपान ४१

श्री भगवान् विष्णु की आज्ञानुसार देवताओं सहित महाराज इन्द्र दैत्यराज वलि के पास पहुँचे, सागर-मन्थन द्वारा अमृत प्राप्त करने का महत्व वतला कर देवताओं ने दैत्यों को अपना मित्र वना कर समुद्र-मन्थन का प्रस्ताव स्वीकार करा लिया। तदनन्तर देवता और दैत्यों ने मिलकर अनेक प्रकार की उत्तम औषधियों को क्षीर सागर में डाल दिया। मन्दराचल पर्वत को मथानी और वासुकि नाग को नेति वना कर समुद्र-मन्थन आरम्भ किया, निराधार मन्दराचल समुद्र में डूवने लगा। उस समय भगवान् विष्णु कच्छप का रूप धारण कर मन्दराचल को अपनी पीठ पर धारण करने के लिये समुद्रतल में चले गये और मन्दराचल को अपनी पीठ पर स्थापित कर डूबने से वचा लिया। जव भगवान् ने देखा कि मन्दराचल इधर-उधर डुल रहा है, समुद्र का मन्थन ठीक नहीं हो रहा है; तव स्वयं ने मन्दराचल को अपनी शक्ति द्वारा ऊपर से दवा कर समुद्र-मन्थन कार्य कराया। हलाहल विष, कामधेनु, ऐरावत हाथी, उच्चैःश्रवा अश्व; अप्सराएँ, कौस्तुभ मणि, वारुणी, शङ्ख, कल्पवृक्ष, चन्द्रमा, लक्ष्मीजी और कदली वृक्ष उससे प्रकट हो चुके थे। अमृत प्राप्ति के लिये वार-वार समुद्र-मन्थन हो रहा था, तव अपने हाथ में अमृत कलश लिये हुए, भगवान् धन्वन्तरि साक्षात् विष्णु के अंश से प्रकट हुये। इस कारण उनका स्वरूप भी मेघ वर्ण श्याम विष्णु के समान एवं दिव्य था। भगवान् धन्वन्तरि शौर्य एवं प्रतिभा सम्पन्न थे।

अमृत का वितरण हो जाने के पश्चात् इन्द्र ने उनसे देवताओं का वैद्यराज पद स्वीकार करा कर अपनी अमरावती पुरी में रहने की प्रार्थना की। भगवान् धन्वन्तरि इन्द्र की इस इच्छा को स्वीकार कर वहीं रहने लग गये। कुछ समय पश्चात् पृथ्वी पर व्याधियाँ फैलीं। विविध प्रकार की व्याधियों द्वारा लोग कष्ट पाने लगे। उस समय इन्द्र की प्रार्थना से ही भगवान् धन्वन्तरि ने काशीराज दिवोदास के रूप में पृथ्वी पर अवतार धारण किया। उनको आदिदेव, अमरवर, अमृत योनि एवं अब्ज आदि नामों से सम्बोधित किया गया।

जगत्-कल्याणार्थ, वृद्ध अवस्था एवं व्याधियों को नष्ट करने के लिये ही स्वयं भगवान् श्रीविष्णु ने धन्वन्तरि के रूप में कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी के दिन अवतार लिया था। तव से ही आयुर्वेद-प्रेमी भगवान् धन्वन्तरि के भक्तगण इसी तिथि को प्रतिवर्ष धन्वन्तरि जयन्ती महोत्सव मनाते हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवान् कृशानसुरसंघनिपीडिताङ्गान्
दृष्ट्वा दयालुरमृतं वितरीतुकामः
पाथोधिमन्थनविधौ प्रकटोऽभवद्यो
धन्वन्तरिः स भगवानवतात् सदा नः ।।

'असुरों के द्वारा पीड़ित होने से जो दुर्बल हो रहे थे, उन देवताओं को अमृत पिलाने की इच्छा से ही भगवान् धन्वन्तरि समुद्र-मन्थन द्वारा प्रकट हुए थे। वे हमारी सर्वदा रक्षा करें।

भगवान् धन्वन्तरि के चरणों में बारम्बार नमस्कार है।

श्री मोहिनीरूपधारी भगवान् (१३)

सोपान १५

बुढ़ापा-मृत्यु को दूर कर देने वाले अमृत को प्राप्त करने के लिये देवता और राक्षसों ने मिल कर क्षीरसागर का मन्थन किया। अनेक अद्भुत अलौकिक वस्तुओं के पश्चात् जब श्वेतवस्त्रधारी भगवान् धन्वन्तरि अमृत-कलश लिये प्रकट हुए, तब अमृत पीने के लिए आतुर दैत्य उनके हाथ से अमृत-घट छीन कर भाग खड़े हुए। प्रत्येक राक्षस अद्भुत शक्ति और अमर कर देने वाला असृत सर्वप्रथम पीने के के लिए उत्सुक हो रहा था। किसी को धैर्य नहीं, किसी को विश्वास नहीं, सभी सशङ्क और चिन्तित थे कि कहीं कोई एक ही समस्त अमृत को न पी जाय। अमृत-घट को प्राप्त करने के लिये परस्पर छीना-झपटी और तू-तू मैं-मैं करने लगे। सबके मन में यह भी भय हो रहा था, कहीं परस्पर की छीना-झपटी में अमृत-घट गिर जायगा तो क्या होगा? किन्तु अपना स्वार्थ छोड़कर वस्तुस्थिति का विचार कौन करता? राक्षसों से धर्म और न्याय की आशा व्यर्थ थी। दुर्बल और उदास देवता लोग निराश होकर दूर खड़े हो गये। कोई उपाय समझ में नहीं आ रहा था।

तेऽन्योन्यतोऽसुराः पात्रं हरन्तस्त्यक्तसौहृदाः।
क्षिपन्तो दस्युधर्माणा आयान्तीं ददृशुः स्त्रियम् ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अहो रूपमहो धाम अहो अस्या नवं वयः।
इति ते तामभिद्रुत्य पप्रच्छुर्जातहृच्छयाः ।।
(श्रीमद्भागवत ८।९।१-२)

'असुर आपस के सद्भाव और प्रेम को छोड़कर एक-दूसरे की निन्दा कर रहे थे और डाकू की तरह एक-दूसरे के हाथ से अमृत-कलश छीन रहे थे। इसी बीच उन्होंने देखा एक बड़ी सुन्दरी स्त्री उनकी ओर चली आ रही है। वे सोचने लगे—'कैसा अनुपम सौन्दर्य है। शरीर में से कितनी अद्भुत छटा छिटक रही है! तनिक इसकी नयी उम्र तो देखो!' बस, अब वे आपस की लाग-डाँट भूलकर उसके पास दौड़ गये। उन लोगों ने काममोहित होकर उससे पूछा—

'कमलनयनी! तुम कौन हो? कहाँ से आ रही हो? क्या करना चाहती हो? सुन्दरी, तुम किसकी कन्या हो? तुम्हें देख कर हमारे मन में खलबली मच गयी है।' उन मोहिनीरूपधारी भगवान् को देखकर सब-के-सब मोहित, सब-के-सब मुग्ध हो रहे थे। असुरों ने अद्भुत छटा बिखेरती उस त्रिलोक्-मोहिनी से कहा—'सुन्दरी, तुम उचित निर्णय कर दो, हम सब ही कश्यप के पुत्र हैं और अमृत प्राप्ति के लिए हमने समान रूप से श्रम किया है। तुम इसको हम दैत्यों और देवताओं में निष्पक्ष भाव से वितरित कर दो, जिससे हमारा यह विवाद समाप्त हो जाय।'

असुरों ने जब इस प्रकार प्रार्थना की, तब लीला से स्त्री-वेष धारण करने वाले भगवान् ने तनिक मुस्करा कर और तिरछी-चितवन से उनकी ओर देखते हुए कहा—

कथं कश्यपदायादाः पुंश्चल्यां मयि सङ्गताः।
विश्वासं पण्डितो जातु कामिनीषु न याति हि ।।
(श्रीमद्भागवत ८।९।९)

'आप लोग महर्षि कश्यप के पुत्र हैं और मैं कुलटा हूँ। आप लोग मुझ पर न्याय का भार क्यों डाल रहे हैं? विवेकी पुरुष स्वेच्छाचारिणी स्त्रियों का कभी विश्वास नहीं करते।'

मोहिनी की इस प्रकार से परिहास भरी वाणी सुन कर दैत्यों के मन में और भी विश्वास हो गया। उन लोगों ने रहस्यपूर्ण भाव से हँसकर अमृत का कलश मोहिनी के हाथ में दे दिया और कहा—'हमें आप पर विश्वास है।'

अत्यन्त मोहग्रस्त करने वाली मोहिनी ने कहा—'मेरी वितरण-पद्धति में यदि आप लोगो को तनिक भी आपत्ति न हो तो मैं यह कार्य कर सकती हूँ। अन्यथा यह काम आप लोग स्वयं कर लें।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मोहिनी की ऐसी मीठी वाणी सुनकर दैत्यों ने कहा—'हमें कोई आपत्ति नहीं है। आप निष्पक्ष भाव से अमृत वितरण करने में स्वतन्त्र हैं।'

देवता और दैत्य—दोनों ने एक दिन उपवास कर स्नान किया। नूतन वस्त्र धारण कर अग्नि में आहुतियाँ दीं। ब्राह्मणों से स्वस्तिपाठ कराया और पूर्वाग्र कुशों के आसनों पर पृथक्-पृथक् पंक्ति में सब बैठ गये।

असीम सौन्दर्यपूर्ण मोहिनी ने अपने सुन्दर कोमल हाथों में अमृत-कलश ले लिया। सोने के बने हुए घुंघरू मोहिनी के आभूषणों में लगे हुये थे। उनकी एक साथ सुमधुर झंकार ने असुरों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। देवता और राक्षसों की दृष्टि भुवन-मोहिनी की ओर लग गयी। मोहिनी ने मुस्कराते हुए राक्षसों की ओर दृष्टिपात किया। वे सब आनन्दमग्न हो गये।

मोहिनी रूप धारण किये विश्वात्मा भगवान् ने दैत्यों की ओर मुस्कान भरी दृष्टि से देखते हुए, दूर की पंक्ति में बैठे हुए देवताओं को अमृत पान कराना आरम्भ किया। त्रिलोक-दुर्लभ मोहिनी की रूपराशि से मोहित तथा अपने स्वयं के वचनों से आवद्ध असुरगण चुपचाप अपने क्रम की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनको लावण्यमयी मोहिनी की प्रेम-प्राप्ति की पूर्ण आशा थी।

छाया-पुत्र राहु को अपने क्रम की प्रतीक्षा का धैर्य नहीं रहा और वह तत्काल देवताओं का वेष धारण कर सूर्य-चन्द्रमा के समीप बैठ गया। उसको क्रमानुसार अमृत मिला। अमृत उनके कण्ठ के नीचे उतर भी नहीं पाया था कि सूर्य-चन्द्रमा दोनों देवताओं ने इङ्गित कर दिया और दूसरे ही क्षण भगवान् विष्णु के अक्षम्य तीव्र चक्र द्वारा उनका मस्तक कटकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

दैत्यों ने आश्चर्यचकित दृष्टि से देखा तो मोहिनीरूपधारी के स्थान पर शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी सजल मेघश्याम वर्ण भगवान् विष्णु खड़े हुए दिखायी दिये। असुरों का मोह भंग हुआ। उन्होंने क्रोधित होकर शस्त्र उठा लिये और भयानक देवासुर संग्राम शुरू हो गया।

यह सम्पूर्ण सृष्टि भगवान् मायापति की लीला का ही विलास है। काम के वशीभूत सभी प्रभु के उस माया रूप पर लुब्ध और आकृष्ट हैं। आसुरी भाव से अमर कर देने वाला अमृत कदापि प्राप्त होना संभव नहीं है। वह तो दयामय भगवान् की निष्काम चरण सेवा, शरण द्वारा ही सम्भव है—

असदविषयमम्ङ्घ्रि भावगम्यं प्रपन्ना—
नमृतममरवर्यानाशयत् सिन्धुमथ्यम्।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कपटयुवतिवेषो मोहयन्यः सुरारीं—
स्तमहमुपसृतानां कामपूरं नतोऽस्मि ।।

(श्रीमद्भागवत ८।१२।४७)

'दुष्ट पुरुषों को भगवान् के चरण कमलों की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती। वे तो भक्तिभाव से युक्त पुरुष को ही प्राप्त होते हैं, इसीसे उन्होंने स्त्री का मायामय मोहिनीरूप धारण कर दैत्यों को मोहित किया और अपने चरण-कमलों के शरणागत देवताओं को समुद्र-मन्थन द्वारा निकले हुए अमृत का पान कराया। केवल उन्हीं की बात नहीं—चाहे जो भी उनके चरणों की शरण ग्रहण करे, वे उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण कर देते हैं।'

मैं उस प्रभु के चरण-कमलों में नमस्कार करता हूँ।

●

भगवान् नृसिंह (१४)

सोपान १६

नमो भगवते तुभ्यं पुरुषाय महात्मने।
हरयेऽद्भुतसिंहाय ब्रह्मणे परमात्मने ।।

(श्रीमद्भागवत ७।१०।१०)

'भगवन् ! आपको नमस्कार है। आप सबके हृदय में विराजमान हैं, उदार शिरोमणि स्वयं परब्रह्म परमात्मा हैं। अद्भुत नृसिंहरूपधारी श्रीहरि के चरण में मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ।'

कृतयुग के समय की बात है, जय-विजय नामक द्वारपालों ने वैकुण्ठलोक में भगवान् विष्णु के पास जाने से सनकादि बाल ऋषियों को रोक दिया था। तब सनकादि ने तीन जन्मों तक उन्हें असुर बन कर रहने का शाप दे दिया था, उसी के प्रभाव से दिति के गर्भ से दोनों, हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष के रूप में उत्पन्न हुए। हिरण्याक्ष को तो भगवान् विष्णु ने वराहावतार धारण करके मार दिया। भाई के वध से दुःखी होकर हिरण्यकशिपु दैत्यों और दानवों को अत्याचार करने के लिये आज्ञा और उत्साह देकर स्वयं महेन्द्राचल पर्वत पर तपस्या के लिये चला गया। उसके मन में शत्रुता की आग भभक रही थी, अतः वह विष्णु से बदला लेने के विचार से कठिन व घोर तपस्या में लग गया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्र ने देखा कि दैत्यों के अधिपति हिरण्यकशिपु तपस्या में लग गये हैं, उनके राज्य की सम्भाल करने वाला कोई योग्य दैत्य नहीं है। इन्द्र ने दैत्यों पर चढ़ाई कर दी, दैत्यगण युद्ध में परास्त होकर अनाथों की भाँति भाग-भाग कर रसातल में चले गये। इन्द्र ने हिरण्यकशिपु के रक्षारहित राजमहल में प्रवेश करके राजरानी कयाधू को बन्दी बना लिया। उस समय वह गर्भवती थी, इसलिये उसको वे अपनी नगरी अमरावती की ओर ले जा रहे थे। मार्ग में देवर्षि नारदजी से भेंट हो गई।

नारदजी ने पूछा—'इन्द्र ! इसको कहाँ ले जा रहे हो।' इन्द्र ने निवेदन किया—देवर्षे ! इसके गर्भ में हिरण्यकशिपु का अंश है, उसको मार कर इसे मैं छोड़ दूंगा।' यह सुन कर नारदजी ने कहा —'देवराज ! इसके गर्भ में बहुत बड़ा भगवद्भक्त है, उसको मारना तुम्हारी शक्ति से बाहर है, इसलिये इसको छोड़ दो।' नारदजी के कहने का गौरव मानते हुए इन्द्र ने कयाधू को छोड़ दिया और वे अमरावती को चले गये। नारदजी कयाधू को अपने आश्रम पर अपने साथ ले आये और उसको कहा—'बेटी ! जब तक तुम्हारा पति तपस्या से लौट कर नहीं आ जाता, तुम तब तक यहाँ सुखपूर्वक निवास करो। समय-समय पर नारदजी गर्भस्थ बालक को लक्ष्य करके कयाधू को अनेक प्रकार से तत्त्व ज्ञान का उपदेश किया करते थे। यही बालक जन्म लेने पर परम भक्त प्रह्लाद हुआ।

जब हिरण्यकशिपु की तपस्या से त्रिलोकी संतप्त हो उठी और देवताओं में भी खलबली मच गई, तब वे सब संगठित होकर ब्रह्माजी की शरण में गये और उन्होंने हिरण्यकशिपु को तप से विरत करने की प्रार्थना की। ब्रह्माजी हंस पर आरूढ़ होकर वहाँ आये, जहाँ हिरण्यकशिपु तपस्या कर रहा था। उसके शरीर को चींटियाँ चाट गयी थीं, केवल हड्डियों में प्राण ही अवशेष थे और बाँबी का आकार दिखाई पड़ रहा था। ब्रह्माजी ने अपने कमण्डलु का जल-हाथ में लेकर उस बाँबी पर छिड़का, उसी समय हिरण्यकशिपु अपने असली रूप में निकल आया। तब ब्रह्माजी ने कहा—

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते तपः सिद्धोऽसि काश्यप।
वरदोऽहमनुप्राप्तो व्रियतामीप्सितो वरः॥

(श्रीमद्भागवत ७।३।१७)

'बेटा ! हिरण्यकशिपु ! उठो, उठो। तुम्हारा कल्याण हो। कश्यपनन्दन ! अब तुम्हारी तपस्या सिद्ध हो गई। मैं तुम्हें वर देने के लिये आया हूँ। तुम्हारी जो इच्छा हो, बेखटके माँग लो।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऐसी तपस्या तो आज तक न किसी ने की है और न आगे कोई करेगा ही। दैत्यशिरोमणे! इसी से प्रसन्न होकर मैं तुम्हें, जो कुछ माँगो दिये देता हूँ। तुम तो मरने वाले शरीरधारी हो और मैं अमर हूँ। अतः मेरा यह दर्शन विफल नहीं हो सकता।

यह सुनकर हिरण्यकशिपु ने कहा—'प्रभो! यदि आप मुझे अभीष्ट वर देना चाहते हैं तो ऐसा कर दीजिये कि आपके बनाये हुए किसी प्राणी से चाहे वह मनुष्य हो या पशु-पक्षी, प्राणी हो या अप्राणी, देवता हो या दैत्य अथवा नागादि किसी से भी मेरी मृत्यु न हो। भीतर-बाहर, दिन में रात्रि में, आपके बनाये प्राणियों के अतिरिक्त और भी किसी जीव से, अस्त्र-शस्त्र से, पृथ्वी या आकाश में कहीं भी मेरी मृत्यु न हो। युद्ध में कोई मेरा सामना न कर सके। मैं समस्त प्राणियों का एकच्छत्र सम्राट हो जाऊँ। देवताओं में आप-जैसी महिमा मेरी भी हो और तपस्वियों एवं योगियों के समान अक्षय ऐश्वर्य मुझे भी प्राप्त हो जाय।'

ब्रह्माजी उनकी तपस्या से प्रसन्न तो थे ही, अतः उसको मुँहमाँगा वरदान देकर वहाँ ही अन्तर्धान हो गये। हिरण्यकशिपु अपनी राजधानी में चला आया। कयाधू भी नारदजी के आश्रम से राजमहल ले आयी गई। उसके गर्भ से भागवत रत्न प्रह्लाद उत्पन्न हुए। हिरण्यकशिपु के चार पुत्र थे। उनमें सबसे छोटे प्रह्लाद थे, अतः उन पर हिरण्यकशिपु का विशेष स्नेह था। उन्होंने अपने गुरुपुत्र 'षण्ड' और 'अमर्क' को बुलवाया और शिक्षा देने के लिये प्रह्लाद को उनके साथ आश्रम में पहुँचा दिया। प्रह्लाद गुरु-गृह में शिक्षा प्राप्त करने लगे। प्रह्लाद कुशाग्रबुद्धि होने के कारण गुरु की दी हुई शिक्षा को शीघ्र ही ग्रहण कर हृदयंगम कर लेते थे। साथ ही उनका भगवद्भक्ति भी बढ़ती जा रही थी। वे वहाँ अन्य असुर-बालकों को भी भगवद्भक्ति की शिक्षा देने लगे।

एक दिन हिरण्यकशिपु ने गुरु-गृह से प्रह्लाद को अपने पास बुलाया और बड़े प्रेम से अपनी गोद में बैठा कर स्नेह-दुलार करते हुए कहा—'बेटा! अपनी पढ़ी हुई अच्छी से अच्छी कोई बात सुनाओ।' तब प्रह्लाद ने भगवद्भक्ति की सुन्दर शब्दों में अनेक प्रकार से प्रशंसा की। वह सुनते ही हिरण्यकशिपु क्रोध से आगबबूला हो गया और उसने प्रह्लाद को अपनी गोद से उठा कर भूमि पर पटक दिया तथा असुरों से कहा, इसको मार डालो। हिरण्यकशिपु की यह आज्ञा सुन कर प्रह्लाद को मार डालने के लिए असुरों ने उन पर विभिन्न अस्त्रों का प्रयोग किया, परन्तु वे सब ही निष्फल हो गये। तत्पश्चात् उन्हें हाथियों से कुचलवाया, विषधर सर्पों से से डंसवाया, पुरोहितों द्वारा कृत्या राक्षसी उत्पन्न करायी, पहाड़ की चोटी पर चढ़ा कर नीचे डलवा दिया, शम्बासुर से अनेक प्रकार की माया का प्रयोग करवाया, अन्धेरी कोठरियों में बन्द करा दिया, विष पिलाया, भोजन बन्द कर दिया, बर्फीले

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्थान में, दहकती हुई आग में और समुद्र में डलवाया, आँधी में उड़वाया, पहाड़ों के नीचे दबवा दिया, परन्तु किसी भी उपाय से प्रह्लाद का बाल भी बाँका नहीं हुआ।

एक दिन गुरु-पुत्रों ने हिरण्यकशिपु के पास जाकर कहा कि प्रह्लाद ने पाठशाला के अन्य विद्यार्थियों की बुद्धि भी एकमात्र भगवान् में स्थिर कर दी है। हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को पुनः अपने निकट बुलाया और उसको अनेक प्रकार से डराने-धमकाने लगा। उसने कहा—'रे दुष्ट! जिसके बल पर तू ऐसी बहकी-बहकी बातें कह रहा है, तेरा वह ईश्वर कहाँ है? यदि वह सर्वत्र है तो इस खम्भे में क्यों नहीं दिखाई देता?'

तब प्रह्लाद ने कहा—'मुझे तो वे प्रभु खम्भे में ही दिखाई दे रहे हैं।' यह सुनकर हिरण्यकशिपु क्रोध के मारे अपने को संभाल नहीं सका, उसी समय हाथ में खड्ग लेकर सिंहासन से कूद पड़ा और बड़े जोर से उस खम्भे में एक घूंसा मारा उसी समय उस खम्भे से बड़ा भयंकर शब्द हुआ ऐसा जान पड़ता था, जैसे कोई ब्रह्माण्ड ही फट गया हो। उस शब्द को सुन कर हिरण्यकशिपु घबराया हुआ सा इधर-उधर देखने लगा कि यह शब्द करने वाला कौन है, परन्तु उसे सभा के भीतर ऐसा कुछ भी दिखाई नहीं दिया। इतने में ही वहाँ बड़ी अद्भुत अलौकिक घटना हुई—

सत्यं विधातुं निजभृत्यभाषितं
व्याप्तिं च भूतेष्वखिलेषु चात्मनः।
अदृश्यतात्यद्भुतरूपमुद्वहन्
स्तम्भे सभायां न मृगं न मानुषम्॥
(श्रीमद्भागवत ७।८।१८)

'इसी समय अपने सेवक प्रह्लाद और ब्रह्मा की वाणी सत्य करने और समस्त पदार्थों में अपनी व्यापकता दिखाने के लिये सभा के भीतर उसी खम्भे में बड़ा ही विचित्र रूप धारण करके भगवान् प्रकट हुए। वह रूप न तो पूरा-पूरा सिंह का ही था और न मनुष्य का ही।'

जिस समय हिरण्यकशिपु शब्द करने वाले को खोज रहा था, उसी समय उसने खम्भे के भीतर से निकलते उस अद्भुत प्राणी को देखा। वह सोचने लगा—'अहो!' यह न तो मनुष्य है न पशु, फिर यह नृसिंह के रूप में कौन सा अलौकिक जीव है? जिस समय हिरण्यकशिपु इस उधेड़-बुन में लगा हुआ था, उसी समय उसके ठीक सामने ही भगवान् नृसिंह खड़े हो गये। उनका रूप बड़ा ही भयानक था।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उनकी तपाये हुए सोने के समान पीली-पीली भयावनी आँखें थीं, चमचमाते हुए गर्दन तथा मुँह के बालों से उनका चेहरा भरा-भरा दिख रहा था; उनकी बड़ी विकराल दाढें थीं; तलवार के समान लपलपाती हुई तथा छुरे की धार के सदृश उनकी तीखी जीभ थी, टेढ़ी भौहों के कारण उनका मुख और भी भीषण था; उनके कान निश्चल एवं ऊपर की ओर उठे हुए थे, उनकी फूली हुई नासिका और खुला हुआ मुख पर्वत की गुफा के समान अद्भुत जान पड़ता था, फटे हुए जबड़ों के कारण उसकी भीषणता बहुत बढ़ गई थी। उनका विशाल शरीर स्वर्ग का स्पर्श कर रहा था; गर्दन कुछ नाटी और मोटी थी; छाती चौड़ी और कमर पतली थी; चन्द्रमा की किरणों के समान सफेद रोएँ सारे शरीर पर चमक रहे थे; चारों ओर सैकड़ों भुजाएँ फैली हुई थीं; जिनके बड़े-बड़े नख आयुध का काम कर रहे थे। भय के मारे भगवान् नृसिंह के निकट जाने का साहस किसी को नहीं होता था। भगवान् ने अपने चक्र आदि आयुधों द्वारा सारे दैत्य-दानवों को खदेड़ दिया।

तत्पश्चात् हिरण्यकशिपु सिंहनाद करता हुआ हाथ में गदा लेकर नृसिंह भगवान् पर टूट पड़ा। तब भगवान् भी कुछ देर तक उसके साथ युद्ध लीला करते रहे। अन्त में उन्होंने बड़ा भय दिखाने वाला अट्टहास किया, जिससे हिरण्यकशिपु की आँखें बन्द हो गयीं। तब भगवान् ने उसे उसी प्रकार से झपट कर दबोच लिया, जैसे साँप चूहे को पकड़ लेता है। फिर उसको सभा भवन के दरवाजे पर ले जाकर अपनी जांघों पर आड़ा गिरा लिया और खेल-खेल में ही अपने तीक्ष्ण नखों से कलेजे को फाड़ दिया। उस समय उनकी क्रोधभरी आँखों की ओर देखा भी नहीं जा सकता था। वे अपनी लपलपाती हुई जीभ से दोनों जबड़ों को चाट रहे थे। उनके मुख और गरदन के बालों पर खून के छींटे दिखाई दे रहे थे।

नखाङ्कुरोत्पाटितहृत्सरोरुहं
विसृज्य तस्यानुचरानुदायुधान्।
अहन् समन्तान्नखशस्त्रपाणिभि—
र्दोर्दण्डयूथोऽनु पथान् सहस्रशः॥

(श्रीमद्भागवत ७।८।३१)

'उन्होंने अपने तीखे नखों से हिरण्यकशिपु का कलेजा फाड़ कर उसे जमीन पर पटक दिया। उस समय हजारों दैत्य-दानव हाथों में शस्त्र लेकर भगवान् पर प्रहार करने के लिए आये। पर भगवान् ने अपनी भुजारूपी सेना से, लातों से और नखरूपी शस्त्रों से चारों ओर खदेड़-खदेड़ कर उन्हें मार डाला।'

उस समय भगवान् नृसिंह के गरदन के बालों के झटके से बादल भी तितर-बितर हो रहे थे। उनके नेत्रों की ज्वाला से सूर्यादि ग्रहों का तेज भी फीका पड़

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गया। उनके श्वास के धक्कों से समुद्र तक क्षुब्ध हो उठे थे। उनके सिंहनाद से भयभीत होकर दिग्गज चिंघाड़ने लगे। उनकी गरदन के बालों से टकरा कर देवताओं के विमान अस्त-व्यस्त हो गये। स्वर्गलोक डगमगा गया। पैरों के धमाके से भूकम्प आ गया। पर्वत भी उड़ने लगे। उनके तेज की चकाचौंध से दिशाओं का ज्ञान होना बंद हो गया। उनका क्रोध बढ़ता जा रहा था। वे हिरण्यकशिपु के राजभवन के सर्वोच्च सिंहासन पर विराजमान हो गये। उनकी क्रोधपूर्ण मुखाकृति को देखकर किसी का भी साहस नहीं, जो उनके निकट जाकर उन्हें प्रसन्न करने की चेष्टा करे।

जब स्वर्ग में देवाङ्गनाओं को यह समाचार मिला कि नृसिंहरूपधारी भगवान् के हाथों हिरण्यकशिपु की जीवन-लीला समाप्त हो गई, तब वे आनन्द से खिल उठीं और नृसिंह भगवान् पर बारम्बार पुष्पों की वर्षा करने लगीं। इस समय ब्रह्मा, इन्द्र, शंकर आदि देवगण, ऋषि, पितर, सिद्ध, विद्याधर, महानाग, मनु, प्रजापति, गन्धर्व, अप्सराएँ, चारण, यक्ष, किम्पुरुष, वेताल, किंनर; और भगवान् के सभी पार्षद उनके पास आये और थोड़ी दूर पर स्थित होकर सभी ने अञ्जलि बाँध कर अलग-अलग नृसिंह भगवान् की स्तुति की। इस प्रकार स्तवन करने पर भी जब भगवान् का क्रोध शान्त नहीं हुआ; तब देवताओं ने लक्ष्मीजी को उनके निकट भेजा, परन्तु भगवान् के उस उग्ररूप को देखकर वे भी भयभीत हो गयीं और उनके पास न जा सकीं।

प्रह्लादं प्रेषयामास ब्रह्मावस्थितमन्तिके।
तात प्रशमयोपेहि स्वपित्रे कुपितं प्रभुम्॥

(श्रीमद्भागवत ७।९।३)

'तब ब्रह्माजी ने अपने पास ही खड़े प्रह्लाद को यह कह भेजा कि 'बेटा! तुम्हारे पिता पर ही भगवान् कुपित हुए थे। अब तुम ही उनके पास जाकर उन्हें शान्त करो।'

प्रह्लाद 'जो आज्ञा' कह कर भगवान् के निकट जा, हाथ जोड़ पृथ्वी पर साष्टाङ्ग लेट गये। अपने चरणों में एक नन्हें से बालक को पड़ा देखकर भगवान् का हृदय दया से भर आया। उन्होंने प्रह्लाद को उठाकर उनके सिर पर अपना कर-कमल रख दिया। फिर तो प्रह्लाद के बचे-खुचे सभी अशुभ संस्कार नष्ट हो गये। उसी समय उनको परमतत्त्व का साक्षात्कार हो गया। उन्होंने भावपूर्ण हृदय तथा निर्निमेष नयनों से भगवान् को निहारते हुए प्रेम-गद्गद् वाणी द्वारा स्तुति की।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रह्लाद द्वारा स्तुति करने से नृसिंह भगवान् सन्तुष्ट हो गए और उनका क्रोध जाता रहा। तब वे प्रेम और प्रसन्नता से बोले—

'भद्र प्रह्लाद! तुम्हारा कल्याण हो। असुरोत्तम! मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो अभिलाषा हो, मांग लो। मैं मनुष्यों की कामना पूर्ण करने वाला हूँ। आयुष्मान्! जो मुझे प्रसन्न नहीं कर लेता, उसके लिए मेरा दर्शन दुर्लभ है। जब मेरे दर्शन हो जाते हैं, तब प्राणी के हृदय में किसी प्रकार की जलन नहीं रह जाती। मैं समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाला हूँ, इसलिए सभी कल्याणकामी भाग्यवान् साधुजन जितेन्द्रिय होकर अपनी समस्त वृत्तियों से मुझे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं।'

प्रह्लाद ने कहा—'मेरे वरदशिरोमणि स्वामी! यदि आप मुझे मुँह मांगा वरदान देना चाहते हैं तो ऐसी कृपा कर दीजिये कि मेरे हृदय में कभी किसी कामना का बीज अङ्कुरित ही नहीं हो।'

यह सुनकर नृसिंह भगवान ने कहा—'वत्स प्रह्लाद! तुम्हारे-जैसे एकान्त प्रेमी भक्त को यद्यपि किसी वस्तु की अभिलाषा नहीं रहती, तथापि तुम केवल एक मन्वन्तर तक मेरी प्रसन्नता के लिए इस लोक में दैत्याधिपतियों के समस्त भोग स्वीकार कर लो। यज्ञभोक्ता ईश्वर के रूप में मैं ही समस्त प्राणियों के हृदय में विराजमान हूँ, अतः तुम मुझे अपने हृदय में देखते रहना और मेरी लीला-कथाएँ सुनते रहना। समस्त कर्मों के द्वारा मेरी ही आराधना करके अपने प्रारब्ध-कर्म का क्षय कर देना। भोग के द्वारा पुण्य कर्मों के फल और निष्काम पुण्य कर्मों के द्वारा पाप का नाश करते हुए समय पर शरीर का त्याग करके समस्त बन्धनों से मुक्त होकर तुम मेरे पास आ जाओगे। देवलोक में भी लोग तुम्हारी विशुद्ध कीर्ति का गान करेंगे। इतना ही नहीं, जो भी हमारा और तुम्हारा स्मरण करेगा, वह समस्त कर्म-बन्धनों से मुक्त हो जायगा।'

इसके पश्चात् प्रह्लाद ने कहा—'दीनबन्धो! मेरी एक प्रार्थना यह है कि मेरे पिता ने आपको भातृहन्ता समझ कर आपसे और आपका भक्त जानकर मुझसे जो द्रोह किया है, उस दुस्तर दोष से उनको आप कृपा करके मुक्त कर दीजिये।'

तब नृसिंह भगवान् ने हिरण्यकशिपु की पवित्रता को प्रमाणित करते हुए प्रह्लाद को उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करने की आज्ञा दी और स्वयं ब्रह्मा द्वारा की गयी स्तुति को सुनकर उन्हें वैसा वर देने से मना करते हुए वे वहीं अन्तर्धान हो गये।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ७ अध्याय ५ से १० के आधार से)

ऐसे अद्भुत अलौकिक रूप धारण करने वाले भगवान् नृसिंह के चरणों में बारम्बार प्रणाम!

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् वामन (१५)

सोपान १७

बहुत प्राचीन समय की बात है, देवताओं और दैत्यों में संग्राम हुआ। देवता पराजित हो गए और दैत्यों ने अपना अधिकार जमा लिया।

देवराज इन्द्र का जब स्वर्ग पर अधिकार नहीं रहा, वह सुमेरुगिरि पर्वत पर अपनी माता अदिति के सुन्दर आश्रम पर गये। माता अदिति के चरणों में प्रणाम कर अपनी समस्त करुण कहानी सुनाई। माता अदिति के आदेशानुसार वहाँ से इन्द्र ने अन्य देवताओं सहित परम तपस्वी मरीचिनन्दन कश्यपजी के पास पहुँच कर प्रणाम करके हाथ जोड़कर उनको निवेदन किया—'पिताजी! महाबलशाली दैत्यराज बलि, युद्ध में हमारे लिए अजेय हो गया है, इसलिए आप कोई ऐसा उपाय कीजिये, जो हम देवताओं के लिए श्रेयस्कर व पुष्टिवर्द्धक हो।'

महर्षि कश्यपजी अपने पुत्रों को साथ लेकर ब्रह्माजी की परमोत्कृष्ट विशाल सभा में पहुँचे और सर्वकाम प्रदायिनी सभा में पद्मासन पर विराजमान ब्रह्माजी का दर्शन कर उनके चरणों में प्रणाम किया। ब्रह्माजी के चरण स्पर्श करते ही वह सब पापों से मुक्त हो गये। कश्यपजी के साथ समस्त देवताओं को आया देखकर देवेश्वर ब्रह्माजी ने उनको उत्तर दिशा में स्थित क्षीरसागर के उत्तर तट पर जाकर कठिन तप करने की आज्ञा दी।

देवताओं ने पितामह ब्रह्माजी की आज्ञा शिरोधार्य कर प्रणाम किया और वे श्वेतद्वीप में पहुँचने के लिए उत्तर दिशा की ओर चल पड़े। थोड़ी देर में ही वे क्षीराब्धि के तट पर पहुँच गये। फिर वहाँ से वे सातों समुद्रों, काननों सहित पर्वतों तथा अनेक पुण्यसलिला नदियों को पार करके पृथ्वी के अन्त में पहुँच गए। वहाँ चारों ओर अन्धकार-ही-अन्धकार व्याप्त था। वहाँ महर्षि कश्यपजी एक निष्कण्टक स्थान पर पहुँच कर ब्रह्मचर्य एवं मौनपूर्वक वीरासन से बैठ गये और उन्होंने सहस्र-वार्षिक दिव्य व्रत की दीक्षा ले ली, क्योंकि उनको सहस्रनेत्रधारी योगाधिपति भगवान् नारायण को स्तुति द्वारा प्रसन्न करना था। इसी प्रकार से सभी देवता क्रमशः तपस्या में लीन हो गए। तदनन्तर महर्षि कश्यपजी ने भगवान् नारायण को प्रसन्न करने के लिए वेदोक्त 'परमस्तव' नामक स्तोत्र द्वारा उनकी स्तुति की।

मरीचिपुत्र द्विजवर कश्यपजी के स्तवन करने से भगवान् प्रसन्न हो गये और उन्होंने गम्भीर वाणी में कहा—'देवगण! आपका मङ्गल हो। आप कोई अभीष्ट वर मांग लें। मैं आप लोगों पर प्रसन्न हूँ और वर देना चाहता हूँ।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कश्यपजी ने कहा—'सुरश्रेष्ठ ! यदि आप हम सब पर प्रसन्न हैं तो मैं सब देवगण की ओर से एकमत होकर याचना करता हूँ कि आप स्वयं अदिति के गर्भ से इन्द्र के छोटे भाई के रूप में उत्पन्न हों।' उधर वर प्राप्ति की कामना से देवमाता अदिति ने भी वर प्रदान करने वाले भगवान् से पुत्र के रूप में अवतरित होने की प्रार्थना की। सभी देवताओं ने एक साथ निवेदन किया कि 'महेश्वर ! आप ही हम सब देवताओं के त्राता, भर्ता, दाता और आश्रय बनें।'

भगवान् विष्णु ने कहा—'देवगण ! आप लोगों के जो भी शत्रु हों, वे सब एक साथ मिल कर भी मेरे सामने क्षणमात्र भी नहीं ठहर सकेंगे। मैं यज्ञ-भाग के अग्रभोजी समस्त असुरों का संहार करके सभी देवताओं को 'हव्याशी' तथा पितृगण को 'कव्याशी' बनाऊँगा। सुरश्रेष्ठ ! आप जिस मार्ग से आये हैं, उसी मार्ग से लौट जावें।'

भगवान् विष्णु की आज्ञा सुन कर कश्यपजी सहित सब देवगण प्रसन्न हो गए और भगवान् विष्णु की पूजा व उन्हें प्रणाम कर कश्यपाश्रम की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँच कर उन्होंने अदिति को भी सब बातें समझा कर घोर तपस्या के लिए तैयार कर लिया। उस समय महर्षियों को दैत्यों द्वारा तिरस्कृत होते हुए देख कर अदिति के मन में महान् दुःख हो रहा था; वह सोचती थी कि 'मेरा पुत्र उत्पन्न करना ही व्यर्थ हो गया।' इसलिये वे भी इन्द्रियों को वश में करके भगवान् विष्णु की आराधना में तत्पर हो गयीं। अनेक प्रकार के कठिन व्रत-नियम पालन करते हुए सर्वव्यापी भगवान् की स्तुति करने लगी।

अदिति के स्तवन से प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु सब से अलक्षित रहते हुए अदिति के सम्मुख प्रकट हो गये और बोले—

देवमातर्भवत्या मे विज्ञातं चिरकाङ्क्षितम्।
यत् सपत्नैर्हृतश्रीणां च्यावितानां स्वधामतः॥

(श्रीमद्भागवत ८।१७।१२)

'देवताओं की जननी अदिति ! तुम्हारी चिरकालीन अभिलाषा को मैं जानता हूँ। शत्रुओं ने तुम्हारे पुत्रों की सम्पत्ति छीन ली है, उन्हें उनके लोक (स्वर्ग) से खदेड़ दिया है।'

आत्मजान्सुसमृद्धांस्त्वं प्रत्याहृतयशः श्रियः।
नाकपृष्ठमधिष्ठाय क्रीडतो द्रष्टुमिच्छसि॥

(श्रीमद्भागवत ८।१७।१५)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'अदिति ! तुम चाहती हो कि तुम्हारे पुत्र धन और शक्ति से समृद्ध हो जायँ उनकी कीर्ति और ऐश्वर्य उन्हें फिर से प्राप्त हो जाय तथा वे स्वर्ग पर अधिकार जमा कर पूर्ववत् विहार करें।'

'महाभागा अदिति ! धर्मज्ञे ! तुम जिन-जिन वरों को प्राप्त करने की इच्छा रखती हो, वे सभी मेरी कृपा से निस्संदेह तुम्हें मिल जायेंगे। मेरा दर्शन कभी निष्फल नहीं होता।'

अदिति ने कहा—'भक्तवत्सल प्रभो ! यदि आप मेरी भक्ति से प्रसन्न हैं तो मुझे यह वरदान दीजिये कि 'मेरा पुत्र इन्द्र त्रिलोकी का अधिपति हो जाय और असुरों ने उसका राज्य तथा यज्ञभाग छीन लिया है, वह सब आपकी कृपा से मेरे पुत्र को प्राप्त हो जाय।' केशव ! मेरे पुत्र का राज्य चला गया, इसका मुझे लेशमात्र भी दुःख नहीं है; परन्तु यज्ञभाग का छिन जाना मेरे हृदय में शूल-सा चुभ रहा है।'

यह सुनकर भगवान् विष्णु वरदान देते हुए बोले—

कृतः प्रसादो हि मया तव देवि यथेप्सितम्।
स्वांशेन चैव ते गर्भे सम्भविष्यामि कश्यपात्॥
तव गर्भसमुद्भूतस्ततस्ते ये सुरारयः।
तानहं निहनिष्यामि निर्वृता भव नन्दिनि॥

(वामन पुराण २८।१०-११)

देवि ! तुम्हारी कामना के अनुसार ही मैं कार्य करूँगा। मैं महर्षि कश्यप के द्वारा अपने अंश से तुम्हारे गर्भ में प्रवेश करूँगा। इस प्रकार तुम्हारे गर्भ से उत्पन्न होने के पश्चात् जो कोई भी देवताओं के शत्रु होंगे, उन सबका मैं संहार करूँगा। नन्दिनी ! तुम शांति धारण करो।'

अदिति से इस प्रकार कह कर भगवान् अन्तर्हित हो गये। उस समय अदिति को यह जान कर कि स्वयं भगवान् मेरे गर्भ से जन्म लेंगे, महान् हर्ष हुआ। वह बड़े प्रेम से अपने पतिदेव कश्यप की सेवा में लग गयीं। कश्यपजी भी तत्त्वदर्शी थे। उन्होंने समाधि योग के द्वारा यह जान लिया कि भगवान् का अंश उनके अन्दर प्रविष्ट हो गया है। तब जैसे वायु लकड़ी में अग्नि का आधान करती है, उसी प्रकार कश्यपजी ने समाहित चित्त से अपनी तपस्या द्वारा चिरसंचित वीर्य का अदिति में आधान किया। इस प्रकार भगवान् विष्णु अदिति के गर्भ में प्रविष्ट होकर क्रमशः बढ़ने लगे।

जब ब्रह्माजी को यह बात ज्ञात हुई कि अदिति के गर्भ में स्वयं अविनाशी भगवान् आये हैं, तब उन्होंने भगवान् के रहस्यमय नामों से उनकी स्तुति की।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समय को जाते देर नहीं लगती। गर्भ स्थिति के दसवें मास में भगवान् के प्रकट होने का समय आया। उस समय चन्द्रमा श्रवण नक्षत्र पर था। भाद्रपद शुक्ल पक्ष की द्वादशी तिथि और अभिजित् मुहूर्त्त था। सब ही नक्षत्र मङ्गलप्रद योग में स्थित थे। ऐसे शुभ समय में भगवान् अदिति के गर्भ से प्रकट हुए। उस समय उनका अलौकिक स्वरूप था—

भगवान् के चार भुजाएँ थीं। जिनमें शङ्ख, गदा, कमल और चक्र सुशोभित थे। शरीर पर पीताम्बर शोभा दे रहा था। कमल के समान विशाल सुन्दर नेत्र थे। श्यामवर्ण शरीर था। कानों में मकराकृति कुण्डलों की कान्ति से मुख-कमल की शोभा उल्लसित हो रही थी। वक्षःस्थल में श्रीवत्स चिह्न, हाथों में कंगन, भुजाओं में बाजूबन्द, मस्तक पर किरीट, कमर में करधनी लड़ियाँ और पैरों में सुन्दर नूपुर शोभा दे रहे थे। कण्ठ में कौस्तुभमणि और गले में वनमाला की शोभा हो रही थी। वे अपनी प्रभा से प्रजापति कश्यपजी के अन्धकार को दूर कर रहे थे।'

भगवान् के जन्म लेने के समय दिशाएँ निर्मल हो गयीं। नदी और सरोवरों का जल स्वच्छ हो गया। प्रजा के हृदय में असीम आनन्द छा रहा था। सब ऋतुएँ एक साथ अपना-अपना गुण प्रकट कर रही थीं। स्वर्गलोक, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, गौ, द्विज और पर्वत इनके हृदय में हर्ष का संचार हो गया। शीतल-मन्द-सुगन्ध वायु चलने लगी। आकाश निर्मल हो गया। सभी प्राणियों की बुद्धि धर्म में प्रवृत्त हो गई। आकाश में शङ्ख, ढोल, मृदंग, डफ और नगारे बजने लगे। दुन्दुभियों की तुमुल ध्वनि होने लगी। अप्सराएँ नाचने लगीं। गन्धर्व गान करने लगे। मुनि, देवता, मनु, पितर और अग्नि स्तुति करने लगे। सिद्ध, विद्याधर; किम्पुरुष, किंनर, चारण, यक्ष, पक्षी, मुख्य-मुख्य नागगण और देवताओं के अनुचर नाचने-गाने और भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे और पुष्पवृष्टि द्वारा उस आश्रम को छा दिया। लोक पितामह ब्रह्माजी भी भाव भरी स्तुति करने लगे। अदिति अपने गर्भ से प्रकट हुए परम पुरुष परमात्मा को देखकर आश्चर्यचकित और परमानन्दित हो गयी। प्रजापति कश्यपजी भी भगवान् को अपनी योगमाया से शरीर धारण किये हुए देख विस्मित हो गये और 'जय हो ! जय हो !' कहने लगे।

यत् तद् वपुर्भाति विभूषणायुधै—
रव्यक्तचिद् व्यक्तमधारयद्धरिः।
बभूव तेनैव स वामनो वटुः
संपश्यतोर्दिव्यगतिर्यथा नटः॥
तं वटुं वामनं दृष्ट्वा मोदमाना महर्षयः।
कर्माणि कारयामासुः पुरस्कृतप्रजापतिम्॥

(श्रीमद्भागवत ८।१८।१२-१३)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् स्वयं अव्यक्त एवं चित्स्वरूप हैं। उन्होंने जो परम कान्तिमय आभूषण एवं आयुधों से युक्त वह शरीर ग्रहण किया था, उसी शरीर से कश्यप और अदिति के देखते-देखते वामन ब्रह्मचारी का रूप धारण कर लिया, ठीक उसी प्रकार से, जैसे नट अपना वेष बदल लेता है। क्यों न हो, भगवान् की लीला तो अद्भुत है ही ! भगवान् को ब्रह्मचारी के रूप में देखकर महर्षियों को बड़ा आनन्द हुआ। उन लोगों ने कश्यप प्रजापति को आगे करके उनके जातकर्म आदि संस्कार करवाये।'

महर्षियों ने उनका उपनयन-संस्कार सम्पन्न कराया। उस समय वामन बटुक को महर्षि पुलह ने यज्ञोपवीत, पुलस्त्य ने दो श्वेत वस्त्र, अगस्त्य ने मृगचर्म, भारद्वाज ने मेखला, ब्रह्मपुत्र मरीचि ने पलाशदण्ड, वशिष्ठ ने अक्षसूत्र, अङ्गिरा ने कुश का बना हुआ वस्त्र, सूर्य ने छत्र, भृगु ने एक जोड़ी खड़ाऊ और बृहस्पति ने कमण्डलु प्रदान किया। इस प्रकार उपनयन संस्कार होने के पश्चात् वामन ने अङ्गों सहित वेदों और शास्त्रों का अध्ययन करके एक ही मास में समस्त शास्त्रों में निपुणता प्राप्त कर ली। तब उन्होंने महर्षि भारद्वाज से कहा—

ब्रह्मन् व्रजामि देह्याज्ञां कुरुक्षेत्रं महोदयम्।
तत्र दैत्यपतेः पुण्यो ह्यमेधः प्रवर्तते॥

(वामन पुराण ८९।५२)

'ब्रह्मन् ! मैं महोदय (कान्यकुब्ज) मण्डल के अन्तर्गत परम पवित्र कुरुक्षेत्र में जाना चाहता हूँ, वहाँ दैत्यराज बलि का अश्वमेध यज्ञ हो रहा है, उसके लिए मुझे आज्ञा दीजिये।'

महर्षि ने कहा—'आपकी जैसी इच्छा हो उसी प्रकार करें, हम आपको क्या आज्ञा दें। हम लोग भी यहाँ से अब शीघ्र ही बलि के यज्ञ में जावेंगे।' भगवान् वामन ब्रह्मचारी के वेष में छत्र-दण्ड-कमण्डलु आदि से सुसज्जित होकर दैत्यराज बलि के यज्ञ में पहुँचने के लिये कुरुक्षेत्र की ओर चले। देवगुरु बृहस्पति उनके आगे-आगे मार्ग दिखाते जा रहे थे। इस प्रकार वे महर्षियों के साथ-साथ ही आगे बढ़ रहे थे।

उधर अमित तेजस्वी राजा बलि को दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने विधिपूर्वक अश्वमेध यज्ञ के लिये दीक्षित कर रखा था। दैत्यराज बलि श्वेत वस्त्र, श्वेत पुष्पों की माला, श्वेत चन्दन से विभूषित हो रहे थे। उनकी पीठ पर मोर पङ्ख चिह्नित मृगचर्म बँधा हुआ था। वे हयग्रीव, क्षुर, मय और बाणासुर आदि सदस्यों से घिरे हुए बैठे थे। उनकी पत्नी ऋषि-कन्या विन्ध्यावली भी जो सहस्रों नारियों में प्रधान थी, यज्ञकर्म में दीक्षित थी। शुक्राचार्य ने शुभ लक्षण सम्पन्न श्वेत वर्ण वाले यज्ञिय

CC-0. Pandit Kamya Nath Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अश्व को पृथ्वी पर विचरने के लिये छोड़ दिया था और तारकाक्ष को उसकी रक्षा में नियुक्त कर दिया था। इस प्रकार यज्ञ कार्य सुचारु रूप से चल रहा था। इतने में ही पृथ्वी काँपने लगी, समुद्रों में ज्वार-भाटा उठने लगा, दिशाएँ क्षुभित हो गयीं। असुरों ने यज्ञ भाग ग्रहण करना छोड़ दिया। यह देख बलि ने शुक्राचार्यजी से पूछा —'गुरुदेव ! सहसा ये जो उत्पात खड़े हुए हैं, इसका क्या कारण है ?'

तब वेदज्ञ श्रेष्ठ महाबुद्धिमान् शुक्राचार्यजी दीर्घकाल तक ध्यानावस्थित होने के पश्चात् कहने लगे —'दानव श्रेष्ठ ! जगद्योनि सनातन परमात्मा श्रीविष्णु भगवान् ने वामन रूप धारण कर कश्यप के घर में अवतार लिया है और निश्चय ही वे तुम्हारे इस यज्ञ में आ रहे हैं। उनके ही पाद-प्रक्षेप से यह पृथ्वी चलायमान हो रही है, पर्वत कांप रहे हैं और सागर क्षुब्ध हो उठे हैं। पृथ्वी उन जगदीश्वर को वहन करने में समर्थ नहीं। उन्होंने ही देव, असुर, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस सहित समूची पृथ्वी को धारण कर रखा है तथा वे ही जल, अग्नि, पवन, आकाश और समस्त देवताओं, मनुष्यों एवं असुरों को भी धारण करते हैं। जगद्धाता विष्णु की यह माया दुरत्यय है। उन्हीं के संनिधान से देवता यज्ञभागभोजी हो गये हैं, इसी कारण तीनों अग्नियाँ आसुर भाग को ग्रहण नहीं कर रही हैं।'

शुक्राचार्य की बात सुनकर अपार प्रसन्नता के कारण बलि के शरीर में रोमांच हो आया और बलि ने कहा—'ब्रह्मन् ! मैं धन्य हो गया। मैंने पूर्वजन्म में कोई महान् पुण्य कर्म किया था। जिसके फलस्वरूप स्वयं यज्ञपति भगवान् मेरे यज्ञ में पधार रहे हैं। मुझसे बढ़कर दूसरा और कौन भाग्यशाली होगा, क्योंकि योगी लोग सर्वदा योग साधना के द्वारा भगवान् के दर्शन की अभिलाषा करते हैं किन्तु उनका दर्शन नहीं हो पाता, वे ही भगवान् मेरे यज्ञ में पधारेंगे ! इसलिये गुरुदेव ! अब मेरे लिये जो कर्त्तव्य हो, उसकी आज्ञा प्रदान करने की कृपा कीजिये।'

शुक्राचार्य ने कहा—'दैत्यराज ! वेदों के प्रमाण से देवता ही यज्ञभाग के अधिकारी हैं, किन्तु तुमने दानवों को यज्ञ भाग का भोक्ता बना दिया है। ये भगवान् देवताओं का कार्य सम्पन्न करना चाहते हैं, अतः जब वे देवों की उन्नति के लिये उद्यत होकर तुमसे कोई याचना करें तो तुमको यही कहना चाहिये कि 'देव ! मैं यह देने में समर्थ नहीं हूँ'।'

बलि ने कहा—'ब्रह्मन् ! जब मैं किसी याचक को निराश नहीं करता, तब संसार के पाप समूह को नष्ट करने वाले भगवान् विणु के कुछ मांगने पर मैं नांही कैसे कर सकता हूँ ? जो भगवान अनेक प्रकार व्रत, उपवास, तपस्याओं द्वारा प्राप्त किये जाते हैं, वे ही भगवान् मेरे पास आकर कुछ मांग लेवें इससे बढ़कर मेरा और कौन सा अहोभाग्य हो सकता है ? अहो ! शौचादि गुण सम्पन्न पुरुषों द्वारा जिनकी प्रसन्नता के लिये अनेक भाँति के यज्ञानुष्ठान किये जाते हैं, वे ही भगवान्

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुझसे याचना करेंगे ! पूर्वजन्म में मैंने कोई पुण्यकर्म और उत्तम प्रकार की तपस्या की है तो मेरे दिये हुए दान को स्वयं श्रीभगवान् हरि ग्रहण करेंगे। गुरुदेव ! परमेश्वर के पधारने पर मैं नाहीं कैसे कह सकता हूँ ? मेरे प्राण भले ही चले जावें किन्तु मैं नाहीं नहीं करूंगा। यदि इस यज्ञ में भगवान् ने मुझसे याचना कर ली तो निश्चय ही मेरा मनोरथ पूर्ण हो जायगा। वे भगवान् गोविन्द मुझसे मेरा मस्तक भी माँग लें तो मैं वह भी उन्हें समर्पित कर दूंगा। निश्चय ही यज्ञ में पूजित हुए श्रीहरि मुझ पर प्रसन्न हैं, इसलिये निस्सन्देह वे दर्शन देकर मेरा कल्याण करने के लिये ही आ रहे हैं। यदि क्रुद्ध होकर देवभाग में रुकावट डालने हेतु मुझको मारने के लिये ही आ रहे हैं तो भी उन अच्युत के हाथ से मारा जाना मेरे लिये अति उत्तम होगा। मुनिश्रेष्ठ ! यह जानकर भगवान् गोविंद के यहाँ आने पर आपको दान देने में विघ्न नहीं करना चाहिये।'

यह सुनकर महर्षि शुक्राचार्य कुपित हो गये और बलि को शाप देते हुए बोले—

दृढं पण्डितमान्यज्ञः स्तब्धोऽस्यस्मदुपेक्षया।
मच्छासनातिगो यस्त्वमचिराद्भ्रश्यसे श्रियः॥

(श्रीमद्भागवत ८।२०।१५)

'मूर्ख ! तू है तो अज्ञानी, परन्तु अपने को बहुत बड़ा पण्डित मानता है। तू मेरी उपेक्षा करके गर्व कर रहा है। तूने मेरी आज्ञा का उल्लङ्घन किया है, इसलिये शीघ्र ही तू अपनी लक्ष्मी खो बैठेगा।'

महर्षि शुक्राचार्य इस प्रकार से कह ही रहे थे, तब ही भगवान् वामन ने देवगुरु बृहस्पति को आगे करके सुरगण के साथ उस यज्ञशाला में प्रवेश किया। तब बलि ने अपने पुरोहित शुक्राचार्य से फिर कहा—'ब्रह्मन् ! जो सभी प्राणियों के हृदय के साक्षी, सर्वदेवमय और अचिन्त्य हैं, वे ही भगवान् जनार्दन माया से वामन रूप धारण करके मुझसे इच्छानुसार याचना करने के लिये मेरे घर पधारे हैं।'

इस प्रकार वामन भगवान् को यज्ञशाला में प्रविष्ट हुआ देख कर उनके प्रभाव से सभी असुरगण विक्षुब्ध हो उठे और उनके तेज से उन सबकी कान्ति फीकी पड़ गई तथा उस महायज्ञ में पधारे हुए वसिष्ठ, विश्वामित्र, गर्ग और अन्यान्य महर्षि भय से थर्रा उठे, परन्तु बलि ने अपने जन्म को सफल हुआ माना। उस समय संक्षुब्ध होने के कारण कोई किसी से कुछ बोल न सका। सभी ने उन देव-देवेश्वर भगवान् की पूजा की। तब असुरराज बलि तथा मुनीश्वरों को विनम्र हुआ देख कर देवदेवेश्वर वामनरूपधारी साक्षात् भगवान् विष्णु उस यज्ञ में यज्ञ, अग्नि, यजमान, ऋत्विज, यज्ञकर्माधिकारी सदस्य और द्रव्य-सम्पत्ति आदि की प्रशंसा करने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लगे। यह सुनकर सभी ब्राह्मणों ने साधुवाद दिया। तत्पश्चात् जिनके शरीर में अति हर्ष होने के कारण रोमाञ्च हो रहा था, वे राजा बलि अर्घ्य लेकर भगवान् वामन की पूजा करने लगे। उस समय महारानी विन्ध्यावली अपने हाथों में झारी लेकर जल गिरा रही थीं और बलि वामन भगवान् के पद पखार रहे थे। यह देखकर चारों ओर से बलि के भाग्य की सराहना हो रही थी। दैत्यराज बलि ने भगवान् वामन के चरणोदक को अपने सिर पर धारण करके भगवान् से कहा—'विप्रवर! सुनिये! सुवर्ण और रत्नों के ढेर, गज, महिष, स्त्रियाँ, वस्त्र, अलङ्कार, गौएँ, अन्य बहुत सी धातुएँ और सारी पृथ्वी-मेरी इन सम्पत्तियों में जो भी आपको प्रिय लगे अथवा जो अभीप्सित हो, वह कृपया बतलाने का कष्ट करें, मैं सब देने के लिये तैयार हूँ।'

दैत्यराज बलि के ऐसे प्रेम वचन सुनकर वामनरूपधारी भगवान् विष्णु मन्द-मन्द हँसते हुए गम्भीर वाणी में बोले—

ममाग्निशरणार्थाय देहि राजन् पदत्रयम्।
सुवर्णग्रामरत्नादि तदर्थिभ्यः प्रदीयताम्॥

(वामन पुराण ३१।४७)

'राजन्! सुवर्ण, ग्राम, रत्न आदि पदार्थ उनकी याचना करने वालों को दीजिये। मुझे तो अग्निहोत्र के लिए केवल तीन पग भूमि प्रदान कीजिये।'

बलि ने कहा—'मानव श्रेष्ठ! तीन पग भूमि से आपका क्या प्रयोजन सिद्ध होगा? आप सैकड़ों हजारों पग क्यों नहीं मांग लेते।'

भगवान् वामन ने कहा—

एतैः पदैर्दैत्यपते कृतकृत्योऽस्मि मार्गणे।
अन्येषामर्थिनां वित्तमिच्छया दास्यते भवान्॥

(वामन पुराण ३१।५१)

'दैत्यपते! मैं तो इन तीन पगों की याचना से ही कृत-कृत्य हूँ। आप अन्य याचकों को उनकी इच्छानुसार धन दीजियेगा।'

वामन के वचन सुन कर बलि ने अपनी पत्नी विन्ध्यावली तथा पुत्र बाणासुर की ओर देखकर कहा—'देखो, ये केवल शरीर से ही वामन नहीं हैं, इनको वस्तुएँ भी छोटी ही प्रिय हैं, जो मुझसे तीन पग भूमि ही मांग रहे हैं। पत्नी और पुत्र से इस प्रकार कह कर बलि ने पुनः भगवान् से कहा—'विष्णो! हाथी, घोड़े, पृथ्वी, दासियाँ और सुवर्ण आदि जो पदार्थ और जितनी भी मात्रा में चाहें, आपकी इच्छानुसार मांग लें। विष्णो! आप याचक हैं और मैं जगत्पति दाता हूँ—ऐसी दशा में तीन पग पृथ्वी दान करने में लज्जा आती है। इसलिए आप जरा स्वस्थ-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चित्त होकर याचना करें। मैं रसातल, भूलोक अथवा स्वर्गलोक इनमें से कौन सा लोक आपको प्रदान करूँ ?

भगवान् वामन ने कहा—

गजाश्वभूहिरण्यादि तदर्थिभ्यः प्रदीयताम्।
एतावदेव सम्प्रार्थी देहि राजन् पदत्रयम्॥

(वामन पुराण ९२।१५)

'राजन् ! हाथी, घोड़े, भूमि, स्वर्ण आदि उन-उन वस्तुओं के याचकों को दीजिये, मैं तो केवल तीन पग भूमि ही मांग रहा हूँ। मुझे उतना ही दीजिये।'

महात्मा वामन के इस प्रकार कहने पर दैत्यराज बलि ने लौटे से जल लेकर उन्हें तीन पग भूमि दान करने का संकल्प किया। उसी समय अद्‌भुत घटना घटी। भगवान् वामन के हाथ में संकल्प का जल पड़ते ही वे वामन से अवामन हो गये और क्षण भर में उन्होंने अपना सर्वदेवमय रूप प्रकट कर दिया। अब वे अखिल ज्योति तथा परमोत्कृष्ट तप की मूर्ति थे।

भगवान् वामन् के उस सर्वदेवमय स्वरूप को देख कर महाबली दैत्य उसी प्रकार उनके निकट नहीं जा सके, जैसे पतिंगे अग्नि के पास नहीं जाते हैं। इसी बीच महादैत्य चिक्षुर ने भगवान् के पादाङ्गुष्ठ को दाँतों से पकड़ लिया। तब भगवान् हरि ने अंगुष्ठ से ही उसकी ग्रीवा पर प्रहार किया और पैरों तथा हाथों के द्वारा ही सारे असुरों को मार डाला। तत्पश्चात् उन्होंने एक पग (पैंड) नाप से चरा चर सहित पृथ्वी अपने अधिकार में कर ली। पुनः दूसरा पग ऊपर की ओर बढ़ाने पर उस महारूप के दाहिने चन्द्रमा और बायें सूर्य आ गये। इस प्रकार आध पग (पैंड) में उन्होंने स्वर्ग, महः, जन और तपोलोक को तथा आधे से समूचे आकाश को आच्छादित कर लिया। तीसरे पग (पैंड) के आगे बढ़ाने पर वह ब्रह्माण्डोदर का भेदन करके निरालोक प्रदेश में जा पहुँचा। इसी समय भगवान् के पैर के आगे बढ़ने से अण्डकटाह के फूट जाने से विष्णु पद से जल की बूँदें झरने लगीं। इसीलिए तपस्वी लोग इसे 'विष्णुपदी' कह कर स्तुति करते हैं। इस प्रकार तीसरे पग (पैंड) के पूर्ण न होने पर सर्वव्यापी भगवान् विष्णु, बलि के निकट आकर क्रोध में भरे हुए होठों को कंपाते हुए बोले—

ऋणे भवसि दैत्येन्द्र बन्धनं घोरदर्शनम्।
त्वं पूरय पदं तन्मे नो चेद् बन्धं प्रतीच्छ मे॥

(वामन पुराण ९२।३४)

'दैत्येन्द्र ! अब तो तुम ऋणी हो गये, जिसके परिणामस्वरूप घोर बन्धन की प्राप्ति होती है। इसलिए या तो तुम मेरा तीसरा (पैंड) पूरा करो अन्यथा मेरे बन्धन में आ जाओ।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस प्रकार से भगवान् के वचनों को सुन कर बलि-पुत्र बाणापुर ने हँस कर देवदेवेश्वर से निवेदन किया—'जगत्पते ! आप तो स्वयं भुवनेश्वरों के पिता हैं; फिर भी थोड़ी-सी पृथ्वी की याचना करके मेरे पिता से इतनी विस्तृत भूमि क्यों मांग रहे हैं ? विभो ! आपने जितनी पृथ्वी की सृष्टि की थी, वह समस्त ही मेरे पिता ने आपको दे दी। आप वाक् चातुर्य द्वारा उन्हें क्यों बांध रहे हैं ?'

'इन दैत्यराज ने पहले जिस शक्ति से आपके सामने प्रतिज्ञा की थी, उसी शक्ति से ये अब भी पूजा करने में समर्थ हैं। इसलिए प्रभो ! इन पर कृपा कीजिये, बन्धन की आज्ञा मत दीजिये। श्रुतियों में आपके ही कहे हुए ऐसे वचन मिलते हैं हैं कि उत्तम पात्र, पवित्र देश और पुण्यकाल में दिया हुआ दान विशेष सुखदायक होता है। वह पूरा का पूरा आप चक्रपाणि में वर्तमान है। जैसे—भूमि का दान है वहीं सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाले अजितात्मा देव-देवेश्वर आप पात्र हैं; ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रों के योग में चन्द्रमा वर्तमान है—ऐसा पुण्यकाल है और कुरुक्षेत्र जैसा प्रसिद्ध पुण्यदेश है। देव ! आप तो स्वयं श्रुतियों के आदिकर्ता और व्यवस्थापक हैं; ऐसी दशा में भला मुझ जैसा मन्दबुद्धि व्यक्ति आपको उचित-अनुचित की शिक्षा कैसे दे सकता है। लोकनाथ ! जब आपने वामन रूप से तीन पग (पैंड) भूमि की याचना की है, तब फिर लोकवन्दित विश्वमयरूप से उसे क्यों ग्रहण कर रहे हैं ? आप कृपया उसी रूप से दान भी ग्रहण कीजिये। विष्णो ! ऐसी स्थिति में आप मेरे पिता को क्यों बाँध रहे हैं ? फिर भी विभो ! जैसी आपकी इच्छा हो, वैसा कीजिये।'

बलिपुत्र बाणापुर की तर्कयुक्त विनय सुन कर भगवान् वामन ने कहा—"बलिनन्दन ! तुमने जो अभी तर्कयुक्त बातें कही हैं, उनका सारयुक्त उत्तर देता हूँ, सुनो ! मैंने पहले तुम्हारे पिता से कहा था—'राजन् ! मुझे मेरे प्रमाण से तीन पग भूमि प्रदान कीजिये।' अतः मैंने उसी का पालन किया है। क्या तुम्हारे पिता असुरराज बलि मेरे प्रमाण को नहीं जानते थे, जो उन्होंने निश्शङ्क होकर मेरे शरीर के नाप के अनुसार तीन पग भूमि दान कर दी ? यदि मैं चाहूँ तो एक ही डग से भूः, भुवः आदि सभी लोकों का नाप लूँ। मैंने तो बलि के हित के लिए ही इन्हें दो पग में नापा है। इसलिए तुम्हारे पिता ने जो मेरे हाथ में संकल्प का जल दिया है, उसके प्रभाव से मैंने उसको एक कल्प की आयु प्रदान की है।" बलिकुमार बाणासुर को इस प्रकार कहने के पश्चात् भगवान् त्रिविक्रम ने असुरराज बलि से मधुरवाणी में कहा—

इन्द्रसेन महाराज याहि भो भद्रमस्तुते ।
सुतलं स्वर्गिभिः प्रार्थ्यं ज्ञातिभिः परिवारितः ॥
न् त्वामभि भविष्यन्ति लोकेशाः किमुतापरे ।
त्वच्छासनातिगान् दैत्यांश्चक्रं मे सूदयिष्यति ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रक्षिष्ये सर्वतोऽहं त्वां सानुगं सपरिच्छदम् ।
सदा सन्निहितं वीर तत्र मां द्रक्ष्यते भवान् ।।

(श्रीमद्भागवत ८।२२।३३-३५)

'महाराज इन्द्रसेन ! तुम्हारा कल्याण हो। अब तुम अपने भाई-बन्धुओं के साथ उस सुतललोक में जाओ, जिसे स्वर्गवासी भी चाहते रहते हैं। बड़े-बड़े लोकपाल भी अब तुम्हें पराजित नहीं कर सकते, दूसरों की तो बात ही क्या है। मैं तुम्हारी, तुम्हारे अनुचरों की और भोग-सामग्री की भी सब प्रकार से रक्षा करूँगा। वीरवर ! तुम मुझे वहाँ सदा अपने पास ही देखोगे।'

सनातन पुरुष भगवान् के इस प्रकार कहने पर दैत्यराज बलि के नेत्रों में आँसू छलक आये। प्रेम के उद्रेक से उनका गला भर आया। उन्होंने हाथ जोड़कर गद्गद् वाणी से भगवान् को निवेदन किया—

अहो प्रणामाय कृतः समुद्यमः
प्रपन्नभक्तार्थविधौ समाहितः ।
यल्लोकपालैस्त्वदनुग्रहोऽमरै-
रलब्धपूर्वोऽपसदेऽसुरेऽर्पितः ।।

(श्रीमद्भागवत ८।२३।२)

'प्रभो ! मैंने तो आपको पूरा प्रणाम भी नहीं किया, केवल प्रणाम करने मात्र की चेष्टा भर की। उसीसे मुझे यह फल मिला, जो आपके चरणों के शरणागत भक्तों को प्राप्त होता है। बड़े-बड़े लोकपाल और देवताओं पर आपने जो कृपा कभी नहीं की, वह मुझ जैसे नीच असुर को सहज ही प्राप्त हो गयी।'

इत्युक्त्वा हरिमानम्य ब्रह्माणं संभवं ततः ।
विवेश सुतलं प्रीतो बलिर्मुक्तः सहासुरैः ।।

(श्रीमद्भागवत ८।२३।३)

इस प्रकार निवेदन करते ही बलि वरुण के पाशों (बन्धनों) से मुक्त हो गये। तब उन्होंने भगवान् ब्रह्माजी और शंकरजी को प्रणाम किया और इसके बाद बड़ी प्रसन्नता से असुरों सहित सुतललोक की यात्रा की।'

इस प्रकार भगवान् मधुसूदन ने बलि से स्वर्ग का राज्य लेकर इन्द्र को दे दिया, देवगण को यज्ञभागभोजी बना दिया, अदिति की कामना पूर्ण की और स्वयं उपेन्द्र बनकर वे सारे जगत् का शासन करने लगे।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ८ अध्याय १८ से २३ के आधार से)

वामन भगवान् के चरणों में बारम्बार प्रणाम !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् हयग्रीव (१६)

सोपान १८

प्रलयकाल में जब पृथ्वी एकार्णव में विलीन हो गयी, सर्वविद्या-सम्पन्न भगवान् विष्णु योगनिद्रा का आश्रय ग्रहण कर शेषशय्या पर शयन कर रहे थे। भगवान् विष्णु की नाभि से सहस्रदल कमल प्रकट हुआ। उस सहस्रदल पद्म पर सम्पूर्ण लोकों के पितामह, लोकस्रष्टा सिन्दूरवर्ण भगवान् हिरण्यगर्भ व्यक्त हुए। परम तेजोमय ब्रह्माजी ने देखा तो चारों ओर जल-ही-जल दिखाई दिया। जिस कमलपत्र पर लोकस्रष्टा ब्रह्माजी बैठे थे, उस पर क्षीरसागर में शयन करने वाले भगवान् विष्णु की प्रेरणा द्वारा पहले से ही रजोगुण और तमोगुण की प्रतीक जल की दो बूंदें पड़ी थीं।

उनमें से एक बूंद पर आदिअन्तरहित श्रीभगवान् की दृष्टि पड़ी तो वह तमोमय मधुनामक दैत्य के रूप में परिणत हो गयी। वह दैत्य मधु के रंग का अत्यन्त सुन्दर स्वरूप वाला था। जल की दूसरी बूंद भगवान् की प्रेरणा से ही "कैटभ" नामक महान् शक्तिशाली पराक्रमी दैत्य के रूप में परिणत हो गयी। वे दोनों ही दैत्य अत्यन्त वीर तथा महाबलवान् थे।

कमल-नाल के सहारे-सहारे वे दोनों दैत्य चलकर जहाँ अत्यन्त तेजस्वी ब्रह्माजी बैठे हुए थे, वहाँ उनके पास पहुँच गये। लोकपितामह सृष्टि-रचना में लगे हुए थे और उनके समीप ही अत्यन्त सुन्दर स्वरूप धारण किये हुए चारों वेद थे। उन महाबली, महाकाय दैत्यों की दृष्टि वेदों पर पड़ते ही उन्होंने वेदों का हरण कर लिया। श्रुतियों को लेकर वे पूर्वोत्तर महासागर में प्रविष्ट होकर रसातल में पहुँच गये।

लोकस्रष्टा ब्रह्माजी को जब वेद (श्रुति) अपने पास नहीं दिखायी दिये तो वे अत्यन्त दुःखी होकर मन-ही-मन विलाप करने लगे। वेद ही मेरे नेत्र, वेद ही मेरी अद्भुत शक्ति, वेद ही मेरे परम आश्रय एवं वेद ही मेरे उपास्य देव हैं। उनके नष्ट हो जाने से आज मुझ पर भयानक विपत्ति आ पड़ी है। मेरा यह दुःख कौन दूर करेगा ? वेदों का उद्धार कौन करेगा ? फिर उन्होंने सर्वसमर्थ और सर्वान्तर्यामी भगवान् श्रीनारायण से इस प्रकार प्रार्थना की—

प्रथितः पुण्डरीकाक्ष प्रधानगुणकल्पितः।
त्वमीश्वरः स्वभावश्च स्वयम्भूः पुरुषोत्तमः॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वया विनिर्मितोऽहं वै वेदचक्षुर्वयोतिगः।
ते मे वेदा हृताश्चक्षुरन्धो जातोऽस्मि जागृहि ॥
ददस्व चक्षूंषि मम प्रियोऽहं ते प्रियोऽसि मे।

(वहाभारत शान्तिपर्व ३४७।४४-४५½)

कमलनयन ! आपका पुत्र मैं शुद्ध सत्त्वमय शरीर से उत्पन्न हुआ हूँ। आप ईश्वर, स्वभाव, स्वयम्भू एवं पुरुषोत्तम हैं। आपने मुझे वेदरूपी नेत्रों से युक्त बनाया है। आपकी ही कृपा से मैं कालातीत हूँ—मुझ पर काल का वश नहीं चलता। मेरे नेत्ररूप वे वेद दानवों द्वारा हर लिये गये हैं, अतः मैं अंधा-सा हो गया हूँ। प्रभो ! निद्रा त्याग कर जागिये। मुझे मेरे नेत्र वापस दीजिये, क्योंकि मैं आपका प्रिय भक्त हूँ और आप मेरे प्रियतम स्वामी हैं।

ब्रह्माजी की यह श्रद्धाभक्तिपूर्ण करुण स्तुति सुन कर देवदेवेश भगवान् नारायण तत्क्षण अपनी निद्रा त्याग कर उठ खड़े हुए। श्रुतियों का उद्धार करने के लिए सर्वात्मा परम प्रभु अत्यन्त सुन्दर एवं कान्तिमान् हयग्रीव के रूप में प्रकट हुए। उनकी गरदन और मुखाकृति घोड़े की-सी थी। उनका वह परम पवित्र मुखारविन्द वेदों का आश्रय था। तारकखचित स्वर्ग उनका मस्तक था और अंशुमाली की रश्मियों के तुल्य उनके बाल चमक रहे थे। आकाश-पाताल उनके कान, पृथ्वी, ललाट, गङ्गा और सरस्वती उनके नितम्ब तथा दो सागर उनके भ्रू थे। सूर्य और चन्द्र उनके नेत्र, संध्या नासिका, ओंकार संस्कार (आभूषण) और विद्युत् जिह्वा थी। पितर उनके दशन, ब्रह्मलोक ओष्ठ तथा कालरात्रि उनकी ग्रीवा थी। इस प्रकार अत्यन्त अद्भुत, अत्यन्त तेजस्वी, अत्यन्त शक्तिशाली, अत्यन्त पराक्रमी एवं अत्यन्त बुद्धि-वैभव-सम्पन्न, आदिअन्तरहित भगवान् ने श्रीहयग्रीव का रूप धारण कर महासमुद्र में प्रवेश किया और वे रसातल में जा पहुँचे।

भगवान् हयग्रीव ने वहाँ रसातल में सामगान का सस्वर गायन आरम्भ किया। भगवान् की लोकोपकारिणी सुमधुर ध्वनि रसातल में सर्वत्र फैल गयी। मधु और कैटभ दोनों दैत्यों ने सामगान का चित्ताकर्षक सुमधुर गायन स्वर सुनकर वेदों को कालपाश में बांध कर रसातल में दूर फैंक दिया और उक्त मङ्गलकारिणी सुमधुर ध्वनि की ओर दौड़ पड़े।

भगवान् हयग्रीव ने यह अच्छा अवसर देखकर तुरन्त ही वेदों को रसातल से निकाल कर ब्रह्माजी को दे दिया और पुनः महासागर के पूर्वोत्तर भाग में वेदों के आश्रय अपने हयग्रीव रूप की स्थापना कर पुनः पूर्वरूप धारण कर लिया। भगवान् हयग्रीव वहाँ ही रहने लगे।

मधु और कैटभ जहाँ से सुमधुर ध्वनि आ रही थी, वहाँ पहुँचे तो कुछ भी नहीं दिखायी दिया। अतएव वे पुनः बड़े वेग से रसातल में पहुँचे। वहाँ वेदों को

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाकर वे अत्यन्त आश्चर्यचकित व क्रुद्ध हुए। शत्रु को ढूंढने के लिए वे दोनों दैत्य तत्काल अत्यन्त शीघ्रता से रसातल के ऊपर पहुँचे। वहाँ उन्होंने देखा कि महासागर की विशाल लहरों पर चन्द्रमा के तुल्य गौर वर्ण के सुन्दरतम भगवान् श्रीनारायण शेषनाग की शय्या पर अनिरुद्ध-विग्रह में शयन कर रहे हैं।

दैत्यों ने अट्टाहस करते हुए कहा—'निश्चय ही इसी ने रसातल से वेदों को चुराया है। पर यह कौन है? किसका पुत्र है? यहाँ कैसे आया? यह कहाँ से आया? और यहाँ सर्पशय्या पर क्यों शयन कर रहा है?'

मधु-कैटभ ने अत्यन्त कुपित होकर उसी समय भगवान् श्रीनारायण को जगाया। त्रैलोक्य सुन्दर भगवान् विष्णु ने नेत्र खोल कर चारों ओर देखा तो उन्होंने जान लिया कि ये दैत्य युद्ध करने को कटिबद्ध हैं। भगवान् उठे और उनका दोनों दैत्यों से भयानक युद्ध आरम्भ हो गया। भगवान् विष्णु का उन महान् पराक्रमी दैत्यों से अनेक वर्षों तक केवल बाहुयुद्ध चलता रहा। वे अपनी महान् शक्ति के मद से उन्मत्त तथा श्रीभगवान् की महामाया से मोह में पड़े हुए थे। उनकी बुद्धि भ्रमित हो गयी।

भगवान् श्रीहरि ने हँसते हुए कहा—'अब तक मैं कितने ही दैत्यों से युद्ध-कर चुका हूँ किन्तु तुम्हारी तरह शूर-वीर मुझे कोई नहीं मिले। मैं तुम लोगों की युद्धकला से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम लोग कोई इच्छित वर मांग लो।'

अहंकार में भरे हुए दैत्यों ने कहा 'विष्णो! हम तुमसे क्या मांग लें? तुम हमें क्या दोगे?' और कहा 'हम तुम्हारी वीरता से बहुत प्रसन्न हैं। तुम ही हम लोगों से कोई वर मांग लो।' भगवान् विष्णु ने कहा—

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावभावपि।
किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मया॥

(मार्कण्डेय पुराण ८१।७४)

'यदि तुम दोनों मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथ से मारे जाओ। बस, इतना-सा ही वर मैंने मांगा। इस समय दूसरे किसी वर से क्या लेना है?'

'हम तो ठगे गये।' भगवान् की वाणी सुन कर चकित होकर दैत्यों ने देखा, सर्वत्र जल-ही-जल है। तब उन्होंने श्रीभगवान् से कहा—'जनार्दन! तुम देवताओं के स्वामी हो। तुम मिथ्याभाषण नहीं करते। पहले तुमने ही हमें वर देने के लिए कहा था इसलिए तुम भी हमारा अभिलषित वर दे दो।' अत्यन्त उदास होकर दैत्यों ने श्रीभगवान् से निवेदन किया—

'आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता॥'

(मार्कण्डेय पुराण ८१।७६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जहां पृथ्वी जल में डूबी हुई न हो – जहाँ सूखा स्थान हो, वहीं हमारा वध करो।'

'महाभाग ! जलशून्य स्थान पर ही मैं तुम्हें मार रहा हूँ। श्रीभगवान् विष्णु ने सुदर्शन चक्र को स्मरण किया और अपनी विशाल जांघों को जल पर फैलाकर मधुकैटभ को जल पर ही स्थल दिखला दिया और हँसते हुए उन्होंने दैत्यों से कहा—'इस स्थान पर जल नहीं है, तुम लोग अपना मस्तक रख दो। आज से मैं भी सत्यवादी रहूँगा और तुम भी।'

कुछ समय तक मधु और कैटभ दोनों महादैत्य भगवान् की वाणी की सत्यता पर विचार करते रहे। फिर उन्होंने भगवान् की दोनों सटी हुई विशाल एवं विचित्र जांघों पर चकित होकर अपना मस्तक रख दिया और श्रीभगवान् ने तत्काल अपने तीक्ष्ण चक्र से उन्हें काट डाला। दैत्यों का प्राणान्त हो गया और उनके चार हजार कोस-वाले विशाल शरीर के रक्त से सागर का समग्र जल लाल हो गया।

इन प्रकार वेदों से सम्मानित और श्रीनारायण भगवान् सुरक्षित होकर लोकस्रष्टा ब्रह्मा सृष्टि कार्य में जुट गये।

(मार्कण्डेय पुराण के आधार से)

भगवान् हयग्रीव को बारम्बार नमस्कार है !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वितीय स्कन्ध

भगवान् हरि (क) (१७)

सोपान १

स्वायम्भुव मनु के महाबलवान् धर्मज्ञ पुत्र उत्तानपाद के दो पत्नियाँ थीं। उनमें से उत्तानपाद की प्रेयसी पत्नी सुरुचि से पिता का अत्यन्त लाडला उत्तम नामक पुत्र हुआ। उस राजा की दूसरी पत्नी सुनीति नाम की राजमहिषी थी, उससे उसका विशेष प्रेम न था। उसका पुत्र ध्रुव हुआ।

एक दिन राजसिंहासन पर बैठे हुए पिता की गोद में अपने भाई उत्तम को देखकर ध्रुव की इच्छा भी पिता की गोद में बैठने को हुई, किन्तु राजा ने अपनी प्रेयसी सुरुचि के सामने, गोद में चढ़ने के लिये उत्कण्ठित होकर प्रेमवश आये हुए ध्रुव का आदर नहीं किया। अपनी सौत के पुत्र को गोद में चढ़ने के लिए उत्सुक और अपने पुत्र को गोद में बैठे हुए देखकर सुरुचि ने कहा—

न वत्स नृपतेर्धिष्ण्यं भवानारोढुमर्हति।
न गृहीतो मया यत्त्वं कुक्षावपि नृपात्मजः॥
बालोऽसि बत नात्मानमन्यस्त्रीगर्भसम्भृतम्।
नूनं वेद भवान् यस्य दुर्लभेऽर्थे मनोरथः॥
तपसाऽऽराध्य पुरुषं तस्यैवानुग्रहेण मे।
गर्भे त्वं साधयात्मान यदीच्छसि नृपासनम्॥'

(श्रीमद्भागवत ४।८।११-१३)

'बच्चे! तू राजसिंहासन पर बैठने का अधिकारी नहीं है। तू भी राजा का ही बेटा है, इससे क्या हुआ? तुझको मैंने तो अपनी कोख में नहीं धारण किया। तू अभी नादान है, तुझे पता नहीं कि तूने किसी दूसरी स्त्री के गर्भ से जन्म लिया है, तभी तो ऐसे दुर्लभ विषय की इच्छा कर रहा है। यदि तुझे राजसिंहासन की इच्छा है तो तपस्या करके परम पुरुष श्री नारायण की आराधना कर और उनकी कृपा से मेरे गर्भ में आकर जन्म ले।'

विमाता के ऐसे कठोर वचन सुनकर वह बालक ध्रुव कुपित होकर पिता को छोड़ कर अपनी माता सुनीति के पास चला गया। उस अबोध बालक के ओष्ठ कुछ-कुछ काँप रहे थे तथा आँखों में आँसू आ रहे थे। माता के पूछने पर ध्रुव ने उसको सब बातें बतला दीं। अपने पुत्र को सिसक-सिसक कर ये बातें कहते हुए

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha
सुन कर दुःखिनी सुनीति खिन्न-चित्त हो लम्बी सांस लेते हुए अपनी आँखों में आँसू भर कर और ध्रुव को अपनी गोद में बैठाकर बोली—

आतिष्ठ तत्तात विमत्सरस्त्व—
मुक्तं समात्रापि यदव्यलीकम् ।
आराधयाधोक्षजपादपद्मं
यदीच्छसेऽध्यासनमुत्तमो यथा ।।

(श्रीमद्भागवत ४।८।१९)

'बेटा ! सुरुचि ने तेरी सौतेली माँ होने पर बात बिलकुल ठीक कही है, अतः यदि राजकुमार के रूप में उत्तम सिंहासन पर बैठना चाहता है तो द्वेषभाव छोड़कर उसी का पालन कर। बस श्रीअधोक्षज भगवान् के चरण कमलों की आराधना में लग जा।'

'संसार का पालन करने के लिये सत्त्व गुण को अङ्गीकार करने वाले उस हरि के चरणों की आराधना करने से ही तेरे परदादा श्रीब्रह्माजी को वह सर्व श्रेष्ठ पद प्राप्त हुआ है, जो मन और प्राणों को जीतने वाले मुनियों के द्वारा भी वन्दनीय है। इसी प्रकार तेरे दादा स्वायम्भुव मनु ने भी बड़ी-बड़ी दक्षिणाओं वाले यज्ञों के द्वारा अनन्य भाव से उन्हीं भगवान् की आराधना की थी, तभी उन्हें दूसरों के लिये अति दुर्लभ, लौकिक, अलौकिक तथा मोक्षसुख की प्राप्ति हुई। बेटा ! तू भी उन भक्तवत्सल श्रीभगवान् का ही आश्रय ले। जन्म-मृत्यु के चक्र से छूटने की इच्छा करने वाले मुमुक्षु लोग निरन्तर उन्हीं के चरण-कमलों के मार्ग की खोज किया करते हैं। बेटा ! उन कमल-लोचन श्रीहरि के अतिरिक्त मुझे तो तेरे दुःख को दूर करने वाला और कोई दिखाई नहीं देता।

ध्रुव ने अपनी माता के चरणों में मस्तक रख कर प्रार्थना की 'माँ ! मुझे आज्ञा दो।' निश्चय ही मैं अब परम पुरुष परमात्मा से अप्राप्य वस्तु प्राप्त करूंगा। तू प्रसन्न मन से मुझे आशीष दे।

नेत्रों से आँसू पोंछती हुई माता सुनीति ने अधीर होकर कहा—बेटा ! मेरे तन, मन और प्राण की समस्त आशीष तेरे लिए है, पर बेटा ! अभी तू निरा बालक है। तेरी आयु घर-त्यागने योग्य नहीं है। तू अभी घर में ही रह कर दान-धर्म, पुण्य कर्म द्वारा भगवान् विष्णु की प्रीतिपूर्वक उपासना कर। समय पर प्रभु प्राप्ति के लिए घर का त्याग भी कर लेना।

ध्रुव ने कहा—'माँ ! तू बिलकुल ठीक कहती है। किन्तु मेरा मन छटपटा रहा है। प्रभु के पास जाने में अब एक क्षण का विलम्ब भी मुझे सहन नहीं हो

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रहा है। मुझे राजसिंहासन की इच्छा नहीं है। मैं अलभ्य लाभ प्राप्त करने के लिए भगवान् हरि के चरणों में अवश्य जाऊँगा। दया करके तू मुझे आज्ञा दे दे।'

माता सुनीति ने कहा—

विष्णोराराधने नाहं वारये त्वां सुपुत्रक।
जिह्वा मे शतधा यातु यदि त्वां वारयामि भोः॥

'बेटा! मैं तुम्हें भगवान् श्रीविष्णु की आराधना से नहीं रोकती। यदि मैं ऐसी चेष्टा करूँ तो मेरी जीभ सैंकड़ों टुकड़े होकर गिर पड़े क्योंकि श्रीभगवान् की आराधना से सम्पूर्ण असम्भव सम्भव हो जाता है।'

माता सुनीति ने ध्रुव की दृढ़ निष्ठा देख कर नील-कमलों की माला पहना कर उसको अपनी गोद में बैठाकर उसके सिर पर हाथ फेर कर आज्ञा देते हुए कहा—'सर्वान्तर्यामी, सर्वसमर्थ, करुणालय भगवान् श्रीहरि तुम्हारा कल्याण करें। बेटा! जा! कण-कण में व्याप्त श्रीहरि तुम्हारा सर्व प्रकार से मङ्गल करें। तू उनकी कृपा प्राप्त कर।'

आँसू भरे नेत्रों से पाषाणवत् खड़ी हुई माता सुनीति को छोड़ कर दृढ़ निश्चयी ध्रुव अपने पिता के नगर से निकल पड़े। नगर के बाहर वे एक उपवन में पहुँचे। वहाँ ध्रुव ने पहले से ही आये हुए सात मुनीश्वरों को काले मृगचर्म के आसनों पर बैठे हुए देख कर प्रणाम किया और अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहा—

'महात्माओ! मैं सुनीति से उत्पन्न राजा उत्तानपाद का पुत्र ध्रुव हूँ। मैं आत्मग्लानि के कारण आपके पास आया हूँ।'

ऋषियों ने कहा—राजकुमार! अभी तो तुम पाँच ही वर्ष के बालक हो। अभी तुम्हारे निर्वेद का कोई कारण दिखाई नहीं देता। तुम्हारे पिता राजा उत्तानपाद जीवित हैं; फिर तुम्हें क्यों चिन्ता हुई। तुम्हारी कोई व्याधि भी नहीं जान पड़ती, फिर तेरी ग्लानि का क्या कारण है? यदि कोई हेतु है तो वह बतलाओ।

ध्रुव ने समस्त कहानी ऋषियों को सुनायी और कहा—द्विजवरो! मुझे न तो धन की इच्छा है और न राज्य की, मैं तो केवल एक उसी स्थान की इच्छा करता हूँ जिसे अब से पहले किसी ने प्राप्त न किया हो। मुनिश्रेष्ठ! आप मुझे तो भली प्रकार से यही बतलाने की कृपा करें कि क्या करने से वह सबसे अग्रगण्य स्थान प्राप्त हो सकता है।

ऋषियों ने यह सुन कर आपस में वार्ता करते हुए कहा—'अहो! क्षात्रतेज कैसा प्रबल है, जिससे इतनी छोटी अवस्था के बालक में भी इतनी अक्षमा है कि अपनी विमाता के वचन उसके हृदय से नहीं हटते।'

महर्षि मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु तथा वसिष्ठ ने कहा—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परः पराणां पुरुषो यस्य तुष्टो जनार्दन।
स प्राप्नोत्यक्षयं स्थानमेतत्सत्यं मयोदितम् ॥

(विष्णु पुराण १।११।४४)

'जो परा प्रकृति आदि से भी परे हैं, वे परम पुरुष जनार्दन जिससे संतुष्ट होते हैं, उसी को वह अक्षय पद मिलता है, यह हम सत्य-सत्य कहते हैं।'

ध्रुव ने कहा—महर्षिगणो ! मुझ विनीत को आपने आराध्यदेव तो बता दिया। अब उसको प्रसन्न करने के लिए मुझे किस मन्त्र को जपना चाहिये—वह बतलाने की कृपा करें। उस महापुरुष की किस प्रकार आराधना करनी चाहिये, वह आप लोग मुझसे प्रसन्नतापूर्वक कहें।

ऋषिगण ने कहा—राजकुमार ! विष्णु भगवान् की आराधना में तत्पर पुरुषों को जिस प्रकार उनकी उपासना करनी चाहिये, वह तू हमसे यथावत् श्रवण कर। मनुष्य को चाहिए कि चित्त को सम्पूर्ण बाह्य विषयों से हटाकर उसे एकमात्र उन जगदाधार में ही स्थिर कर दे। राजकुमार ! इस प्रकार एकाग्रचित्त होकर तन्मय भाव से जो कुछ जपना चाहिये, वह हमसे सुन—'ॐ पुरुष, प्रधान हिरण्यगर्भ, अव्यक्तरूप, शुद्ध ज्ञानस्वरूप वासुदेव को नमस्कार है।' इस (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) मन्त्र को पूर्वकाल में तेरे पितामह भगवान् स्वायम्भुव मनु ने जपा था। तब उनसे संतुष्ट होकर श्रीजनार्दन ने उन्हें त्रिलोकी में दुर्लभ मनोवाञ्छित सिद्धि प्रदान की थी। उसी प्रकार तू भी इस (मन्त्र) का निरन्तर जप करता हुआ श्रीगोविन्द को प्रसन्न कर।

राजकुमार ध्रुव ने उन सब महर्षियों को प्रणाम किया और वहाँ से वन की ओर चल पड़े। भगवान् के चरण-कमलों का सहारा ग्रहण करने वाले भक्तों को देवर्षि नारदजी सहयोग, सहायता प्रदान करने हेतु तत्काल पहुँच जाते हैं। देवर्षि नारदजी से बालक ध्रुव की रास्ते में ही भेंट हो गयी। देवर्षि नारद ने ध्रुव के मस्तक पर अपना पापनाशक व मङ्गलमय वरद कमल-हस्त फेरते हुए स्नेह भरे हुए मृदु शब्दों में कहा—'बेटा ! अभी तेरी आयु बहुत छोटी है और परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति अत्यन्त दुष्कर है। बड़े-बड़े योगीन्द्र-मुनीन्द्र तथा देवताओं को भी उनका दर्शन बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है। अतएव अपनी जननी की आज्ञा मानकर घर को लौट जाओ। वहीं योगाभ्यास एवं अनेक प्रकार के शुभ कर्मों के द्वारा संतोषपूर्वक जीवन व्यतीत करो। बड़े होने पर भगवान् की प्राप्ति के लिए तपस्या करना।

अत्यन्त विनयपूर्वक ध्रुव ने देवर्षि नारदजी को निवेदन किया—मैं क्षत्रिय-कुलोत्पन्न बालक हूँ। माता सुरुचि की कटूक्ति मेरे हृदय में वर्छी की अनी की भाँति

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चुभ रही है। मैं त्रैलोक्य-दुर्लभ पद की प्राप्ति के लिए कटिबद्ध हूँ। मेरे पूर्वजों ने जो नहीं पाया है, वह श्रेष्ठ पद मुझे अभीष्ट है। आप कमलयोनि ब्रह्मा के पवित्र पुत्र हैं और जगत् के अशेष मङ्गल के लिए वीणा बजाते, हरिगुण गाते त्रैलोक्य में विचरण किया करते हैं। आप मुझ पर भी दया करके उन सुर-नर-मुनि वन्दित परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग बतलायें।

नारदजी ने कहा—बेटा ! तुम्हारी माता सुनीति ने तथा सप्तऋषियों ने जो तुम्हें मार्ग बतलाया और उपदेश किया है, वही भगवान् वासुदेव की प्राप्ति का एक मात्र उपाय है—

परं ब्रह्म परं धाम योऽसौ ब्रह्म तथा परम्।
तमाराध्य हरिं याति मुक्तिमप्यतिदुर्लभाम्॥
प्राप्नोष्याराधिते विष्णौ मनसा यच्छदिच्छसि।
त्रैलोक्यान्तर्गतं स्थानं किमु वत्सोत्तमोत्तमम्॥
(विष्णु पुराण १।११।४६, ४९)

'जो परब्रह्म, परमधाम और जो सबसे बड़े और श्रेष्ठ हैं, उन हरि की आराधना करने से मनुष्य अति दुर्लभ मोक्षपद को भी प्राप्त कर लेता है। हे वत्स ! विष्णु भगवान् की आराधना करने पर तू अपने मन से जो कुछ चाहेगा, वही प्राप्त कर लेगा, फिर त्रिलोकी के उत्तमोत्तम स्थान की तो बात ही क्या है।' फिर अत्यन्त प्रसन्न होकर देवर्षि नारदजी ने अत्यन्त प्यार से ध्रुव को बतलाया –

तत्तात गच्छ भद्रं ते यमुनायास्तटं शुचि।
पुण्यं मधुवनं यत्र सांनिध्यं नित्यदा हरेः॥
(श्रीमद्भागवत ४।८।४२)

'बेटा ! तेरा कल्याण होगा, तू श्री यमुनाजी के तटवर्ती परम मधुवन में जा, वहाँ क्षीहरि का नित्य निवास है।'

वहाँ कालिन्दी के निर्मल जल में त्रिकाल स्नान कर, नित्थकर्मों से निवृत्त हो, आसन बिछाकर बैठना और प्राणायाम के द्वारा इन्द्रियों के दोषों को दूर कर मन से परम पुरुष परमात्मा का इस प्रकार ध्यान करना—

'वे दया के समुद्र भगवान् श्रीहरि मन्द-मन्द मुस्करा रहे हैं। उनके श्रीअङ्गों से आनन्द और प्रेम-सुधा की वर्षा हो रही है। उन भुवन मोहन प्रभु की नासिका, भौंहें, कपोल, अधरपल्लव, दन्त पङ्क्तियाँ—सभी परम सुन्दर और दिव्य हैं। उनके वक्ष पर श्रीवत्स चिह्न है। उनके सुन्दर कण्ठ में अत्यन्त सुगन्धित माला शोभा दे रही है और उससे दिव्यातिदिव्य मधुर सुगन्ध निकल रही है। उनके चार भुजाएँ

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं, जिनमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित हैं। श्रीअङ्गों पर किरीट, कुण्डल, केयूर और कङ्कणादि आभूषण सुशोभित हैं। परम दिव्य श्याम सुन्दर मङ्गलमय श्रीविग्रह पर पीताम्बर अत्यन्त शोभा पा रहा है। कटिप्रदेश में सुवर्ण की करधनी सुशोभित है। देव-ऋषि वन्दित चरण कमलों में अद्भुत सुवर्णमय पैंजनी शोभा दे रही हैं। मानस-पूजा करने वाले भक्तों के हृदयरूपी कमल की कर्णिका पर वे भक्त वत्सल प्रभु अपने नखमणिमण्डित मनोहर पादारविन्दों को स्थापित कर विराज रहे हैं। वे प्रभु हमारी ओर अत्यन्त कृपापूर्ण दृष्टि से निहार रहे हैं। इस प्रकार श्रीभगवान् का ध्यान करते रहने से मन उनकी सौन्दर्य सुधा में डूब जाता है।'

देवर्षि नारदजी ने अत्यन्त कृपापूर्वक ध्रुव को आगे बतलाया कि सप्तमहर्षियों के बतलाये हुए 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' मन्त्र को उपर्युक्त ध्यान के साथ जप करता रह। यह भगवान् वासुदेव का परम पवित्र एवं परम गुह्य मन्त्र है। जल, पुष्प, पुष्पमाला, मूल और फलादि सभी पूजा सामग्रियाँ और तुलसी आदि प्रभु-पूजा के जिन-जिन उपचारों का विधान किया गया है, उन्हें मन्त्र-मूर्ति वासुदेव को इस द्वादशाक्षर मन्त्र से ही अर्पित करना।

देवर्षि नारदजी के इस उपदेश को ध्यानपूर्वक श्रवण कर सुनीतिकुमार ध्रुव ने उनकी परिक्रमा की और उनके चरणों में प्रणाम किया। इसके अनन्तर श्रीनारद-जी के आदेशानुसार वे परम पवित्र मधुवन के लिए चल पड़े।

सुनीतिकुमार ध्रुव चलते-चलते मधुवन पहुँच गये। वहाँ उन्होंने पहले श्रीयमुनाजी को प्रणाम कर स्नान किया। रात्रि में उपवास कर प्रातःकाल पुनः स्नान कर देवर्षि-महर्षियों के उपदेशानुसार श्रीहरि की आराधना आरम्भ कर दी। उन्होंने उपासना-काल में एक मास तक प्रति तीसरे दिन शरीर-निर्वाह के लिये कैथ और बेर का फल लिया, दूसरे मास में छः-छः दिन के बाद वे सूखे घास और पत्ते खाकर भक्तवत्सल प्रभु की उपासना करते रहे। तीसरे मास वे नवें दिन केवल जल पीकर भजन में लगे रहे। चौथे माह बारह दिनों के अन्तर से केवल वायु पीकर परमात्मा के ध्यान और भजन में लगे रहे। पाँचवें मास में उत्तानपादनन्दन ध्रुव श्वास रोक कर एक पैर पर खड़े हो हृदयस्थित भगवान् वासुदेव का चिन्तन करने लगे। उनकी चित्तवृत्ति सर्वथा शान्त एवं स्थिर होकर कमल-नयन प्रभु में ही लीन हो गयी थी। ध्रुव के द्वारा सम्पूर्ण तत्त्वों के आधार पर ब्रह्म की धारणा की जाने पर त्रैलोक्य काँप उठा ध्रुव के एक पैर पर खड़े होने से उनके अँगूठे से दब कर आधी पृथ्वी एक ओर झुक गयी। इनके इन्द्रिय एवं प्राणों को रोक कर अनन्य बुद्धि से परब्रह्म परमात्मा का ध्यान करने एवं उनकी समष्टि प्राण से अभिन्नता हो जाने के कारण जीवमात्र का श्वास-प्रश्वास रुक गया। इससे लोक और लोकपाल सभी व्याकुल हो गये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ध्रुव की इस प्रकार कठिन घोर तपस्या को देखकर देवाधिपति इन्द्र को भय हो गया कि यह किस देवता का पद प्राप्त करना चाहते हैं। उनको तप से विरत करने के लिये अपने साथ कुष्माण्ड-नामक उपदेवताओं को अपने साथ लेकर अनेक प्रकार के मायावी व भयानक रूपधारण कर ध्रुव का ध्यान भङ्ग करना प्रारम्भ किया। विभिन्न प्रकार के माया-रूपधारी-राक्षस-राक्षसियाँ जिनके हाथों में भयानक शस्त्र थे। मारो, काटो, खा जाओ, पकड़लो तथा विभत्स चीत्कार करने लगे। एक माया की सुनीति प्रकट हो गयी और विलाप करते हुए कहने लगी—बेटा ! तू ऐसे भयानक वन में क्यों आ गया, यहाँ क्या कर रहा है ? यह तेरा कष्ट मुझसे नहीं देखा जा रहा है। सौत की कटूक्तियों से कष्ट पायी हुयी माता को छोड़ देना तुझे उचित नहीं है। क्या मैंने इसी दिन के लिए तुम्हें पाला था ? फिर बड़े जोर से चिल्लायी—'अरे बेटा ! भाग-भाग। देख, इस निर्जन भयावने वन में कितने क्रूर राक्षस अनेक प्रकार के डरावने अस्त्र लिये दौड़े चले आ रहे हैं। अनेक प्रकार के हिंसक जीव-सिंह, व्याघ्र, भेड़िये, शृगाल प्रकट हुए व हृदय को कँपा देने वाले उपद्रव करने लगे। परन्तु, श्रीहरि से एकाकार हुए ध्रुव का मन किसी भी प्रकार से तनिक भी विचलित नहीं हुआ। वे तो नव-नीरद-वपु भगवान् विष्णु के ध्यान में ही तन्मय रहे।

ध्रुव पर माया का कोई प्रभाव पड़ता न देख कर और सबके श्वास-प्रश्वास की गति अवरुद्ध हो जाने के कारण भयभीत होकर देवता शरणागतवत्सल श्रीहरि के पास पहुँचे और उन्होंने अत्यन्त करुण स्वर में कहा—'प्रभो ! ध्रुव की तपस्या से व्याकुल होकर हम आपकी शरण आये हैं। हमें पता नहीं; वह इन्द्र, सूर्य, कुबेर, वरुण, चन्द्रमा या अन्य किस देवता के पद की कामना करता है। आप हम पर प्रसन्न हों, ध्रुव को तप से निवृत्त कर हमें शांति प्रदान कीजिये।'

श्रीभगवान् ने देवताओं को आश्वस्त करते हुए कहा—'देवताओ ! मेरे प्रिय भक्त ध्रुव को इन्द्र, सूर्य, वरुण अथवा कुबेर आदि किसी के भी पद की अभिलाषा नहीं है। उसकी इच्छा मैं पूर्ण करूंगा। आप लोग निश्चिन्त होकर अपने-अपने स्थानों को जायें, मैं जाकर उसे तप से निवृत्त करता हूँ।'

मायातीत देवाधिदेव प्रभु के वचन सुनकर इन्द्रादि देवताओं ने प्रभु के चरण-कमलों में प्रणाम किया तथा वे अपने-अपने स्थानों को चले गये। इधर परम पुरुष श्रीभगवान् ध्रुव के तप से प्रसन्न होकर उनके सम्मुख चतुर्भुजरूप में प्रकट हो गये।

नवघनश्याम चतुर्भुजरूपधारी भगवान् ने प्रकट होकर ध्रुव से कहा—'सुनीति कुमार ! मैं तुम्हारी तपस्या से अत्यन्त प्रसन्न होकर तुम्हें वर देने आया हूँ। मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा—तुम अपना इच्छित वर मांग लो।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ध्रुव जिस देदीप्यमान मूर्ति का अपने हृदय-कमल में ध्यान कर रहे थे, वह सहसा लुप्त हो गयी। तब घबरा कर ध्रुव ने अपनी आँखें खोल दीं और उन्होंने अपने सम्मुख परम प्रभु को देखा। वे उनके चरणों में लोट गये। प्रणाम के अनन्तर ध्रुव हाथ जोड़कर खड़े हो गये। उनका रोम-रोम प्रेम से पुलकित हो रहा था। वे त्रैलोक्य पावन, परम दिव्य, अलौकिक और परम दुर्लभ कल्याणमयी भगवान् की परम सौन्दर्यमयी कृपामय मूर्ति को अपलक नेत्रों से निहारते हुए उनकी स्तुति करना चाहते थे, परन्तु प्रभु-स्तवन किस प्रकार से करें, वे जानते नहीं थे।

उस समय सर्वान्तर्यामी प्रभु ने अपने हाथ में लिये हुए श्रुतिरूप शङ्ख से बालक के कपोल को स्पर्श कर दिया। ध्रुव के मन में तत्काल ही हंसवाहिनी सरस्वती प्रकट हो गयीं। उन्हें वेदमयी दिव्यवाणी प्राप्त हुई और वे अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक अपने परमाराध्य परम प्रभु का स्तवन करने लगे—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
भूतादिरादिप्रकृतिर्यस्य रूपं नतोऽस्मि तम्॥
शुद्धः सूक्ष्मोऽखिलव्यापी प्रधानात्परतः पुमान्।
यस्य रूपं नमस्तस्मै पुरुषाय गुणाशिने॥

(विष्णुपुराण १।१२।५३-५४)

'पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि, अहङ्कार और मूल-प्रकृति ये सब जिनके रूप हैं, उन भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ। जो अति शुद्ध, सूक्ष्म, सर्वव्यापक हैं और प्रधान से भी परे जिनका रूप है, उन गुणभोक्ता परम पुरुष को मैं नमस्कार करता हूँ।'

कल्पान्त एतदखिलं जठरेण गृह्णन्
शेते पुमान् स्वदृगनन्तसखस्तदङ्के।
यन्नाभिसिन्धुरुहकाञ्चनलोकपद्म—
गर्भे द्युमान् भगवते प्रणतोऽस्मि तस्मै॥

(श्रीमद्भागवत ४।९।१४)

'भगवन्! कल्प का अन्त होने पर योगनिद्रा में स्थित जो परम पुरुष इस सम्पूर्ण विश्व को अपने उदर में लीन करके शेषजी के साथ उन्हीं की गोद में शयन करते हैं तथा जिनके नाभि-समुद्र से प्रकट हुए सर्वलोकमय सुवर्णवर्ण कमल से परम तेजोमय ब्रह्माजी उत्पन्न हुए, वे भगवान् आप ही हैं, मैं आपको प्रणाम करता हूँ।'

'प्रभो! ये मङ्गलमय, त्रैलोक्यपावन चरण-कमल सदा सर्वदा मेरे हृदय-धन के रूप में बने रहें। मुझे कभी इनका विछोह न हो। मैं पहले यहाँ माता

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुरुचि की कटूक्ति से आहत होकर दुर्लभ-पद-प्राप्ति की कामना लेकर आया था, किन्तु अब मुझे कोई इच्छा नहीं है। अब तो मैं केवल इन चरण-कमलों का भ्रमर बन कर रहना चाहता हूँ। मुझे क्षण भर के लिये आपकी विस्मृति न हो मैं यही चाहता हूँ, दयामय! अचिन्त्यशक्तिसम्पन्न परमात्मन्! आप सदा-सर्वदा मेरे बने रहें बस, मेरी यही कामना है। नाथ! आप इसकी पूर्ति कर दें।'

श्रीभगवान् ने ध्रुव से अत्यन्त स्नेहपूर्वक कहा—'बालक! मेरा दर्शन होने से तेरी तपस्या सफल हो गयी। मेरा दर्शन अव्यर्थ होता है। तुम्हारी लौकिक कामनाओं की पूर्ति भी अवश्य होगी। पूर्वजन्म में तू मुझसे निरन्तर एकाग्रचित्त रखने वाला मातृ-पितृ-भक्त, धर्माचरण-सम्पन्न ब्राह्मण था। कुछ ही दिनों में एक अत्यन्त सुन्दर राजपुत्र से तेरी मैत्री हो गयी। उसके वैभव को देखकर तुम्हारे मन में भी राजपुत्र होने की कामना उदित हुई, उसी के फलस्वरूप तूने दुर्लभ स्वायम्भुव मनु के वंश में उत्तानपाद के पुत्र के रूप में जन्म लिया। अब अपनी आराधना के फलस्वरूप मैं तुझे त्रैलोक्यदुर्लभ, सर्वोत्कृष्ट ध्रुव (निश्चल) पद दे रहा हूँ, जो सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि आदि ग्रहों, सभी नक्षत्रों, सप्तर्षियों और सम्पूर्ण विमानचारी देवगणों से ऊपर है। साथ ही तुझे एक कल्प तक की स्थिति दे रहा हूँ।'

'तेरी माता सुनीति भी प्रज्वलित तारे के रूप में तेरे समीप ही एक विमान पर उतने ही दिनों तक रहेंगी। प्रातः सायं तेरा गुणगान करने वाले भी पुण्य के भागी होंगे।'

भगवान् हरि ने ध्रुव से फिर कहा—'तपस्या के लिये अपने पिता के वन में जाने के पश्चात् तू राज्य का अधिकारी होगा और अनेक बड़ी-बड़ी दक्षिणाओं वाले यज्ञ करते हुए छत्तीस हजार वर्ष तक पृथ्वी का शासन करेगा और फिर अन्त में तू सम्पूर्ण लोकों द्वारा वन्दनीय अत्यन्त दुर्लभ और परम सुखद मेरे धाम में पहुँच जायेगा, जहाँ जाकर फिर इस जगत् में कोई लौट कर नहीं आता।'

सुनीतिनन्दन ध्रुव को इस प्रकार वर देकर ध्रुव से पूजित श्रीभगवान् वासुदेव अपने धाम को पधार गये तथा भगवान् के विछोह से उदास हुए ध्रुव अपने नगर के लिये चल पड़े।

× × × ×

उधर देवर्षि नारदजी ने ध्रुव को भगवान् वासुदेव का ध्यान व तपश्चर्या विधि का उपदेश देकर राजा उत्तानपाद के पास पहुँच कहा—'राजन्! तुम कुछ उदास दिखाई दे रहे हो तुम्हारी चिन्ता का क्या कारण हैं?'

राजा उत्तानपाद ने बिलखते हुए कहा—'मैं बड़ा ही स्त्रैण और निष्ठुर हूँ। मेरी दुष्टता के कारण मेरा पाँच वर्ष का अबोध बालक गृह त्याग कर वन में

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चला गया। मालुम नहीं, वह कैसा है, उसको हिंस्र जन्तुओं ने खा लिया या उसका और कुछ हो गया ? वह बालक प्रेम करके मेरी गोद में आना चाहता था किन्तु मैंने उसे प्यार नहीं दिया। मेरी पत्नी ने उसे बड़ी कटूक्तियाँ कहीं यह सब मेरे ही पाप का परिणाम है, परन्तु अब मैं उस बात से अधीर और अशान्त हूँ। मेरे दुःख की सीमा नहीं है। अब मैं क्या करूं ? कहाँ जाऊँ ? कुछ समझ में नहीं आता।'

नारदजी ने राजा उत्तानपाद को आश्वस्त करते हुए कहा—'ध्रुव के रक्षक सर्वसमर्थ भगवान् हरि हैं, तुम उसकी चिन्ता मत करो। वह बालक देव-दुर्लभ पद प्राप्त कर सकुशल लौट आयेगा। ध्रुव अत्यन्त यशस्वी होगा।'

राजा उत्तानपाद को नारदजी इस प्रकार से कह कर चले गये। किन्तु राजा निरन्तर पुत्र की चिन्ता में ही घुलने लगे। राज कार्यों में उनका मन ही नहीं लग पा रहा था।

× × × ×

'दुर्लभ मणि सम्मुख आ जाने पर भी मैं काँच ही ले बैठा।' ध्रुव का मन अत्यन्त दुःखी और उदास था। 'भगवान् की सेवा के स्थान पर मैंने दुर्लभ पद ले लिया।' मैं बड़ा ही मूढ़ और अभागा हूँ। इस प्रकार सोचते और अपने आराध्य का स्मरण करते हुए वे अपनी राजधानी के समीप पहुंच गये।

कुमार ध्रुव नगर के समीप आ गये हैं, यह समाचार राजा उत्तानपाद ने सुना तो उन्हें सहसा विश्वास नहीं हुआ। किन्तु देवर्षि नारद के वचनों का स्मरण कर वे अत्यन्त प्रसन्न हो गये। उन्होंने इस सुखद संवाद लाने वाले को बहुमूल्य हार उतार कर दे दिया। नगर-द्वार-चौराहे, सब सजाये गये। माङ्गलिक वाद्य बजने लगे। प्रजा की प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। राजा उत्तानपाद, ध्रुव की माँ सुनीति तथा सुरुचि पुत्र का मुख देखने के लिये अधीर हो रहे थे। राजा ब्राह्मणों, अपने कुल के वृद्धों, राज्य मन्त्रियों और बन्धुजनों को साथ ले, स्वर्ण-जटित रथों पर आरूढ़ होकर नगर के बाहर पहुँचे। उनके आगे-आगे शङ्ख-दुन्दुभि आदि वाद्य बज रहे थे। सुनीति और सुरुचि उत्तम के साथ पालकियों पर बैठकर वहाँ पहुँची।

उपवन के समीप पहुँचते ही महाराज उत्तानपाद ने ध्रुव को देखा और तुरन्त रथ से उतर पड़े। उन्होंने अपने बालक ध्रुव को छाती से लगा लिया। उनके नेत्रों से जल बरसने लगा तथा श्वांस जोर से चलने लगी। राजा अपने बिछुड़े हुए पुत्र ध्रुव के सिर पर बार-बार हाथ फेर रहे थे। उनके नेत्रों से आँसू रुक नहीं रहे थे। ध्रुव ने अपने पिता के चरणों में मस्तक टेक दिया। इसके

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पश्चात् माता सुरुचि के चरणों में मस्तक टेक कर ध्रुव ने प्रणाम किया। उन्होंने स्नेहवश आशीर्वाद दिया, 'चिरंजीवी रहो।' जिस पर भगवान् कृपा करते हैं, उन पर सबकी कृपा स्वतः हो जाती है।

ध्रुव अपने भाई उत्तम के गले मिले और अपनी माता सुनीति के चरणों में अपना सिर नवाया, तब माता सुनीति की विचित्र दशा हो गयी। बिछुड़े हुए बछड़े को पाकर जिस प्रकार गाय की प्रसन्नता की सीमा नहीं रहती, उसी प्रकार माता सुनीति की प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। उन्होंने अपने प्यारे बच्चे ध्रुव को गले से लगाया, उस समय वह सब कुछ भूल गयीं। उनको अपने तन-मन की भी सुधि नहीं रही। उनके नेत्रों से प्रसन्नता के आँसू और स्तनों से दुग्ध की धारा बहने लगी।

पुरवासियों ने महारानी की प्रशंसा करते हुए कहा—'महारानी! आपने निश्चय ही विश्ववन्द्य भगवान् हरि की उपासना की है, जो आपका खोया हुआ बालक लौट कर आ गया। श्रीहरि की आराधना करने वाले तो दुर्जय मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेते हैं।'

ध्रुव के दर्शनों से लोगों के नेत्र तृप्त नहीं हो रहे थे। उनके प्रति सभी अपना स्नेह प्रदर्शित कर रहे थे। उसी समय महाराज उत्तानपाद ध्रुव को और उत्तम को भी हाथी पर चढ़ा कर राजधानी में प्रवेश करने के लिये चल पड़े। मार्ग उत्तम प्रकार से सजाया गया था, अनेक स्थानों पर तोरणद्वार बने हुए थे, ध्वज-पताकाएँ फहरा रही थी। मार्ग में ऊँची अटारियों पर ध्रुव पर प्रजा-परिजन पुष्प, पुष्पमाला, खील, बताशे एवं शुभ माङ्गलिक द्रव्यों की वर्षा कर रहे थे। इस प्रकार ध्रुव को राजभवन में प्रवेश कराया गया।

देवर्षि नारदजी के कथनानुसार उत्तानपाद ध्रुव का भक्तिपरायण, अत्यन्त तेजस्वी जीवन देख कर मन-ही-मन आश्चर्यचकित हो रहे थे। ध्रुव की तरुण अवस्था होने पर उनका बुद्धि-चातुर्य एवं उन पर प्रजा का स्नेह, प्रेम तथा अपनी वृद्धावस्था देखकर महाराज उत्तानपाद उनको राज्य पर अभिषिक्त कर स्वयं तपश्चर्या के लिए वन में चले गये।

परम भगवद्भक्त ध्रुव सम्राट के राज्य में प्रायः बड़े-बड़े यज्ञ हुआ करते थे। सर्वत्र सुखी-शान्ति का साम्राज्य था। सत्य, क्षमा, दया, उपकार, त्याग, तप प्रभृति सर्वत्र दिखाई देते थे। सर्वत्र श्रीभगवान् का भजन-पूजन और कीर्तन होता था। मिथ्याचार, दुराचार, अपराध की प्रजा के मन में कभी कल्पना भी नहीं थी।

ध्रुवजी अत्यन्त शीलवान् ब्राह्मणभक्त, दीनवत्सल एवं मर्यादा के रक्षक थे। वे सर्वदा यज्ञादि पावन-कर्म एवं भगवच्चिन्तन में लगे रहते थे। उन्होंने देखा, राजकार्य करते छत्तीस हजार वर्ष बीत गये और ये संसार की समस्त वस्तुएँ काल

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के गाल में पड़ी हुई हैं, अतएव अब तो उन्हें अपने आराध्य के भजन में ही दिन व्यतीत करने चाहिये।

उन्होंने अपने पुत्र उत्कल का राजतिलक किया और वे बदरिकाश्रम को चले गये। वहाँ स्नानादि से निवृत्त होकर वे आसन पर बैठे और प्राणायाम द्वारा वायु को वश में कर लिया। फिर वे श्रीहरि के ध्यान में तन्मय हो गये। ध्रुवजी प्रेमोन्मत्त होकर भगवान् वासुदेव का ध्यान कर रहे थे। उनका रोम-रोम पुलकित होता और नेत्रों से अश्रु झरने लगते। कुछ समय पश्चात् उनका देहाभिमान भी जाता रहा। मैं कौन हूँ और कहाँ हूँ, इसकी भी स्मृति उनको नहीं रही।

एक समय अचानक उन्होंने देखा, जैसे चन्द्रमा उनके सम्मुख उतर रहा हो। समीप आने पर उन्होंने देखा, एक सुन्दर विमान है। उससे चारों ओर प्रकाश छिटक रहा है। उससे दो अत्यन्त सुन्दर श्याम वर्ण, किशोर, चतुर्भुज पार्षद उतरे। वे सुन्दर वस्त्र एवं दिव्य आभूषणों से अलंकृत थे। उनको श्रीभगवान् विष्णु के पार्षद जानकर ध्रुवजी उठ कर खड़े हो गए। उन्होंने श्रीभगवान् का नाम लेते हुए उनको प्रणाम किया और हाथ जोड़े, सिर नीचा किये वे श्रीभगवान् के नाम का जप एवं उनके चरणों का ध्यान करने लगे।

भगवान् के पार्षद सुनन्द और नन्द ने ध्रुव के समीप जाकर मुस्कराते हुए कहा—'भक्तवर ध्रुव! आपका मङ्गल हो। आपने पाँच वर्ष की आयु में ही तप करके भगवान् वासुदेव का दर्शन प्राप्त कर लिया था। हम उन्हीं परम प्रभु के आदेश से आपको उस लोक में ले चलने के लिए आये हैं, जहाँ सप्तर्षि भी नहीं पहुँच सके। केवल नीचे से ही देखते रहते हैं। सम्पूर्ण नक्षत्र मण्डल उसकी परिक्रमा करते हैं। यह श्रेष्ठ विमान पुण्य श्लोक शिखामणि प्रभु ने आपके लिए भेजा है। आप इस पर बैठ जावें।'

ध्रुव ने स्नान और संध्या-वन्दनादि कर्म किया। बदरिकाश्रम के मुनियों को प्रणाम कर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। इसके अनन्तर उक्त श्रेष्ठ विमान की पूजा एवं उसकी परिक्रमा कर प्रभु के पार्षदों का पूजन किया व पार्षदों को प्रणाम कर सुवर्ण के समान कान्तिमान दिव्य रूप धारण कर उस सुन्दर प्रकाशमान विमान पर चढ़ने को तैयार हुए। इतने में ही ध्रुवजी ने देखा कि काल मूर्तिमान होकर उनके सामने खड़ा है। तब वे मृत्यु के सिर पर पैर रख कर उस अद्भुत विमान पर चढ़ गये। उस समय आकाश में दुन्दुभि, मृदङ्ग और ढ़ोल आदि बजने लगे, श्रेष्ठ गन्धर्व गान करने लगे और पुष्पों की वर्षा होने लगी।

विमान पर चढ़ते ही ध्रुव के मन में विचार आया—'क्या, मैं अपनी जन्म-दायिनी जननी को छोड़ कर अकेला ही वैकुण्ठ धाम जाऊँगा?'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुनन्द और नन्द पार्षदों ने ध्रुव के मन की बात जान कर कहा—'वह देखिये ! आपकी परम पूजनीय माताजी दूसरे विमान पर आगे-आगे जा रही हैं।'

ध्रुव ने देखा, दूसरा विमान विद्युत्कान्ति की भाँति प्रकाश बिखेरता हुआ आकाश में चला जा रहा है। ध्रुव सर्वथा निश्चित होकर श्रीहरि की मूर्ति का स्मरण करते हुए विमान पर आरूढ़ होकर अविचल परम धाम को चले गये।

यह विष्णुधाम (दिव्यधाम) सब ओर अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हो रहा है। इसी के प्रकाश से तीनों लोक प्रकाशित हैं। इसमें जीवों पर निर्दयता करने वाले पुरुष नहीं जा सकते हैं। यहाँ तो उन्हीं की पहुँच होती है, जो दिन-रात प्राणियों के कल्याण के लिये शुभ-कर्म करते रहते हैं और जो ऐहलौकिक सुखों का त्याग करके भगवान् की आराधना में लगे रहते हैं।

शान्ताः समदृशः शुद्धाः सर्वभूतानुरञ्जनाः।
यान्त्यञ्जसाच्युतपदमच्युतप्रिय बान्धवाः॥
(श्रीमद्भागवत ४।१२।३७)

'जो शान्त, समदर्शी, शुद्ध और सब प्राणियों को प्रसन्न रखने वाले हैं तथा भगवद्भक्तों को ही अपना एक मात्र सच्चा सुहृद् मानते हैं—ऐसे लोग ही सुगमता से इस भगवद्धाम को प्राप्त कर लेते हैं।'

(विष्णु पुराण अंश १ अध्याय ११-१२, श्रीमद्भागवत स्कन्ध ४ अध्याय ८, ९, १०, १२ के आधार से)

भक्तप्रवर ध्रुव और भगवान् श्रीहरि को बारंबार प्रणाम।

गजेन्द्रोद्धारक भगवान् श्रीहरि (ख) (१७)

सोपान २

गजेन्द्रो भगवत्स्पर्शाद् विमुक्तोऽज्ञानबन्धनात्।
प्राप्तो भगवतो रूपं पीतवासाश्चतुर्भुजः॥
स वै पूर्वमभूद् राजा पाण्ड्यो द्रविडसत्तमः।
इन्द्रद्युम्न इति ख्यातो विष्णुव्रतपरायणः॥
(श्रीमद्भागवत ८।४।६-७)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'गजेन्द्र भगवान् का स्पर्श प्राप्त होते ही अज्ञान के बन्धन से मुक्त हो गया। उसे भगवान् का ही रूप प्राप्त हो गया। वह पीताम्बरधारी एवं चतुर्भुज बन गया। गजेन्द्र पूर्व जन्म में द्रविड़ देश का पाण्डयवंशी राजा था। उसका नाम इन्द्रद्युम्न था। वह भगवान् का एक श्रेष्ठ उपासक एवं अत्यन्त यशस्वी था।'

वह भगवान् की आराधना में ही अधिक समय व्यतीत करते थे। यद्यपि उनके राज्य में सर्वत्र सुख-शान्ति थी, प्रजा सब प्रकार से सन्तुष्ट थी; उनका विश्वास था, श्रीभगवान् ही मेरे राज्य की सब व्यवस्था करते हैं। उनका ही राज्य है, वही चिन्ता करें। वह तो अधिक समय तक अपने इष्ट परम प्रभु की उपासना में दत्त चित्त रहते थे। राजा इन्द्रद्युम्न के मन में भगवद्-आराधना की लालसा दिन-प्रतिदिन उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी, एक दिन उन्होंने राज्य त्याग दिया और मलय पर्वत पर जाकर रहने लग गये। तपस्वी-वेष धारण कर लिया। राजा इन्द्रद्युम्न ने मौन व्रत धारण कर लिया और वे स्नानादि से निवृत होकर निरन्तर परब्रह्म परमात्मा की आराधना में तल्लीन रहने लग गए। उनका मन और प्राण भी सर्वदा श्रीहरि के चरण-कमलों के ध्यान में ही लगा रहता। इसके अतिरिक्त उन्हें जगत् की कोई वस्तु नहीं सुहाती और न उनको राज्य, कोष, प्रजा, पत्नि आदि किसी प्राणी-पदार्थ की स्मृति ही होती थी।

एक समय की बात है, राजा इन्द्रद्युम्न प्रतिदिन की भाँति अपने नियमानुसार स्नानादि से निवृत होकर सर्वसमर्थ प्रभु की उपासना में तल्लीन थे; उन्हें बाह्य जगत् का तनिक भी ध्यान न था। संयोगवश उसी समय महर्षि अगस्त्य अपने शिष्यों सहित वहाँ आ पहुँचे। राजा तो मौन व्रत धारण किये हुये परम प्रभु के ध्यान में निमग्न हो रहे थे। महर्षि अगस्त्यजी का पाद्य, अर्घ्य, स्वागतादि नहीं होने से वे कुपित हो गए। राजा इन्द्रद्युम्न को उन्होंने शाप दे दिया—

'इस राजा ने गुरुजनों से शिक्षा नहीं ग्रहण की है, अभिमानवश परोपकार से निवृत्त होकर मनमानी कर रहा है। ब्राह्मणों का अपमान करने वाला यह हाथी के समान जड़-बुद्धि है, इसीलिए इसे वही घोर अज्ञानमयी हाथी की योनि प्राप्त हो।'

क्रुद्ध महर्षि अगस्त्य भगवद्भक्त राजा इन्द्रद्युम्न को शाप देकर चले गये। राजा ने इसको भगवान् का मङ्गलमय विधान समझकर प्रभु के चरणों में शीश नवा दिया।

× × × ×

क्षीर सागर में दस हजार योजन लम्बा-चौड़ा और बहुत ऊँचा एक त्रिकूट नामक पर्वत था। वह पर्वत अत्यन्त सुन्दर ऐवं श्रेष्ठ था। उस पर्वतराज त्रिकूट की तराई में ऋतुमान नामक भगवान् वरुण का एक क्रीड़ा कानन था। उसके चारों ओर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिव्य वृक्ष सुशोभित थे। वे वृक्ष सर्वदा पुष्पों और फलों में लदे रहते थे। उस कानन में एक अत्यन्त सुन्दर एवं विशाल सरोवर था। उसमें कमलों के खिले हुए पुष्पों की अद्भुत शोभा हो रही थी। उन पर भ्रमर गुंजार करते थे। उसके तट पर चारों ओर अत्यन्त सुन्दर, उत्तम, मृदु सुगन्धित पुष्पों वाले वृक्ष शोभा दे रहे थे। वे वृक्ष प्रत्येक ऋतु में हरे भरे और पुष्पित रहते थे। वहाँ देवाङ्गनाएँ क्रीड़ा करने के लिए आया करती थीं।

उस भगवान् वरुण के क्रीड़ा-कानन ऋतुमान के समीप श्रेष्ठ त्रिकूट पर्वत के गहन वन में हथिनियों के साथ अत्यन्त शक्तिशाली और अमित पराक्रमी एक गजेन्द्र रहता था। वह श्रेष्ठ गजों में अग्रगण्य और यूथपति था। वह यूथपति गजेन्द्र अपनी हथिनियों, कलभों और दूसरे हाथियों के साथ वन में विचरण किया करता था। उस अत्यन्त बलशाली गजेन्द्र की महान् शक्ति के कारण हिंसक जंगली पशु वहाँ सर्वदा सशङ्कित रहते थे। उसके गण्ड से चूने वाली मदधारा की गंध से सब हिंसक पशु दूर भाग जाते थे।

एक समय गर्मी के दिनों में मध्याह्न काल में प्रचण्ड धूप पड़ रही थी। गजेन्द्र अपने साथियों सहित अत्यन्त तीव्र प्यास से व्याकुल होकर कमलों की गंध से युक्त सुगंधित वायु का आनन्द ग्रहण करता हुआ, उक्त अत्यन्त सुन्दर, चित्ताकर्षक, विशाल सरोवर के तट पर पहुंचा।

अपने साथियों सहित गजेन्द्र ने उक्त सरोवर के निर्मल, शीतल और मीठे सुगन्धयुक्त जल में प्रवेश किया। पहले तो सबने जल पीकर अपनी तृषा शांत की। तत्पश्चात् उक्त जल में स्नान करके सबने अपना श्रम दूर किया। तदन्तर उन्होंने वहाँ जल-क्रीड़ा आरम्भ की। उक्त गजेन्द्र अपनी सूँड में जल भर कर उसकी फुहारों से हथिनियों को स्नान कराने लगा तथा कलभों के मुँह में सूँड डाल कर उन्हें जल पिलाने लगा। दूसरे हाथी और हथिनियों ने भी अपनी सूँडों की फुहारों द्वारा गजेन्द्र को स्नान कराया और जल द्वारा वे गजेन्द्र का सत्कार कर रहे थे।

अचानक गजेन्द्र ने सूँड उठाकर चीत्कार की। मालूम नहीं किधर से एक वृहत बलशाली मगर ने आकर उसका पैर पकड़ लिया। गजेन्द्र ने अपना पैर छुड़ाने के लिये पूर्ण शक्ति लगाकर प्रयत्न किया; किन्तु उसका वश नहीं चला, पैर नहीं छुटा पाया। अपने स्वामी गजेन्द्र को ग्राहग्रस्त देखकर हथिनियों, कलभ व अन्य सभी गज अत्यन्त व्याकुल और भयभीत हो गये। वे सूँड उठा कर चिंघाड़ने और गजेन्द्र को छुड़ाने के लिये सरोवर के भीतर-बाहर दौड़ने लगे तथा एक-एक ने और अनेकों ने मिल मिल कर अनेक प्रयत्न किये; किन्तु वे सफल नहीं हुये।

महर्षि अगस्त्य के शाप से महाराज इन्द्रद्युम्न ही गजेन्द्र हो गए थे और गन्धर्व-श्रेष्ठ हूहू महर्षि देवल के शाप से ग्राह हो गए थे। वे भी अत्यन्त बलशाली,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पराक्रमी थे। दोनों महावलशालियों का संघर्ष हो रहा था। गजेन्द्र बाहर खींच रहे थे और ग्राह गजेन्द्र को जल में ले जा रहे थे। सरोवर का जल गंदला हो गया। कमल-दल क्षत-विक्षत हो गए। दोनों का यह संघर्ष एक हजार वर्षों तक चलता रहा। दोनों ही जीवित रहे। इस दृश्य को देख कर देवगण भी चकित हो गए।

अन्ततः गजेन्द्र का शरीर शिथिल हो गया। उसके शरीर की शक्ति क्षीण हो चली और मन का उत्साह जाता रहा, परन्तु जलचर होने के कारण ग्राह की शक्ति में कोई अन्तर नहीं पड़ा। उसकी शक्ति बढ़ गयी और वह अधिक उत्साह-पूर्वक पूर्ण शक्ति से गजेन्द्र को खींच कर जल में ले जाने लगा।

इत्थं गजेन्द्रः स यदाऽप संकटं
प्राणस्य देही विवशो यदृच्छया।
अपारयन्नात्मविमोक्षणे चिरं
दध्याविमां बुद्धिमथाभ्यपद्यत ॥

न मामिमे ज्ञातय आतुरं गजाः
कुतः करिण्यः प्रभवन्ति मोचितुम्।
ग्राहेण पाशेन विधातुरावृतो-
ऽप्यहं च तं यामि परं परायणम् ॥

(श्रीमद्भागवत ८।२।३१-३२)

'इस प्रकार देहाभिमानी गजेन्द्र अकस्मात् संकट में पड़ गया और अपने को छुड़ाने में सर्वथा असमर्थ हो गया। बहुत देर तक उसने अपने छुटकारे के उपाय पर विचार किया, अन्त में वह इस निश्चय पर पहुँचा कि यह ग्राह विधाता की फाँसी है। इसमें फँसकर मैं आतुर हो रहा हूँ। जब मुझे मेरे बराबर के हाथी भी इस विपत्ति से न उबार सके, तब ये बेचारी हथिनियाँ तो छुड़ा ही कैसे सकती हैं? इसलिए अब मैं सम्पूर्ण विश्व के एक मात्र आश्रय भगवान् की ही शरण लेता हूँ।'

गजेन्द्र को, इस प्रकार मन में विचार निश्चय होते ही अपने पूर्व जन्म की निरन्तर भगवदाराधना के फल स्वरूप स्मृति हो आई और वह पूर्व जन्म में सीखे हुए श्रेष्ठ स्तोत्र के द्वारा परम प्रभु की स्तुति करने लगा—

'जो जगत् के मूल कारण हैं और सबके हृदय में पुरुष रूप में विराजमान हैं एवं समस्त जगत् के एकमात्र स्वामी हैं, जिनके कारण इस संसार में चेतना जाग्रत होती है—उन भगवान् के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। प्रलयकाल में सब कुछ नष्ट हो जाने पर भी जो महामहिम परमात्मा बने रहते हैं, वे प्रभु मेरी रक्षा करें। नट की भाँति अनेक वेष धारण करने वाले प्रभु का वास्तविक स्वरूप एवं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रहस्य देवता भी नहीं जानते, फिर अन्य कोई उसका वर्णन कैसे करे। वे प्रभु मेरी रक्षा करें। जिन कल्याणमय प्रभु के दर्शन के लिये सन्त-महात्मागण सर्वस्व त्याग कर वन में जितेन्द्रिय हो अखण्ड तपश्चरण करते हैं, वे परमात्मा मेरी रक्षा करें। मैं सर्वशक्तिमान्, सर्वैश्वर्यमय, सर्वसमर्थ प्रभु के चरणों में नमस्कार करता हूँ। मैं जीवित रहना नहीं चाहता। इस अज्ञानमय योनि में रह कर क्या करूँगा ? मैं तो आत्मप्रकाश को आच्छादित करने वाले अज्ञान के आवरण से मुक्त होना चाहता हूँ, जो काल क्रम से अपने आप नहीं छूट सकता; किन्तु केवल भगवत्कृपा और तत्त्वज्ञान द्वारा ही नष्ट होता है। अतएव मैं उन श्रीहरि के चरणों में प्रणाम करता हूँ, जिनकी कृपा से जीवन और मृत्यु के कठोर पाश से जीव सहज ही छूट जाता है। हे प्रभो ! आपकी माया के वश होकर जीव अपने स्वरूप को नहीं जान पाता। आपकी महिमा का पार नहीं है। आप अनादि, अनन्त, सर्वशक्तिमान्, सर्वान्तर्यामी एवं सौन्दर्य-माधुर्य निधि हैं। मैं आपकी शरण हूँ, आप मेरी रक्षा करें।'

गजेन्द्र की स्तुति सुन कर सर्वात्मा सर्वदेवरूप श्रीहरि प्रकट हो गये। गजेन्द्र को पीड़ित देखकर श्रीहरि वेदमय गरुड़ पर आरूढ़ होकर अत्यन्त शीघ्रता से उक्त सरोवर के तट पर गजेन्द्र के पास पहुँच गये।

सोऽन्तः सरस्युरुबलेन गृहीत आर्तो
दृष्ट्वा गरुत्मति हरिं ख उपात्तचक्रम्।
उत्क्षिप्य साम्बुजकरं गिरमाह कृच्छ्रा-
न्नारायणाखिलगुरो भगवन् नमस्ते ॥

(श्रीमद्भागवत ८।३।३२)

सरोवर के भीतर बलवान् ग्राह ने गजेन्द्र को पकड़ रखा था और वह अत्यंत व्याकुल हो रहा था। जब उसने देखा कि आकाश में गरुड़ पर सवार होकर हाथ में चक्र लिये भगवान् श्रीहरि आ रहे हैं, तब अपनी सूँड में कमल का एक सुन्दर पुष्प लेकर उसने ऊपर को उठाया और बड़े कष्ट से बोला—'नारायण ! जगद्गुरो ! भगवन् ! आपको नमस्कार है।'

गजेन्द्र को अत्यन्त पीड़ित देख कर सर्वशक्तिमान् श्रीहरि गरुड़ की पीठ से कूद पड़े और गजेन्द्र के साथ ही ग्राह को भी सरोवर से बाहर खींच लाये। इसके उपरान्त श्रीहरि ने तुरन्त अपने तीक्ष्ण चक्र से ग्राह का मुँह फाड़ कर गजेन्द्र को मुक्त कर दिया।

ब्रह्मादि देवगणों ने श्रीहरि की प्रशंसा करते हुए उनके ऊपर स्वर्गीय पुष्पों की वृष्टि करने लगे। दुन्दुभियाँ बज उठीं। गन्धर्व नृत्य और गान करने लगे। सिद्ध, ऋषि-महर्षि परब्रह्म श्रीहरि का गुणानुवाद गाने लगे।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ग्राह ने दिव्य शरीर धारण कर लिया। उसने भगवान् श्रीहरि के चरणों में सिर नवा कर प्रणाम किया और फिर वह भगवान् हरि के गुणों की प्रशंसा करने लगा। भगवान् श्रीहरि के मङ्गलमय वरद हस्त कमल के स्पर्श से पापमुक्त होकर शाप हूहू गन्धर्व ने भी प्रभु की परिक्रमा की और उनके त्रैलोक्यवन्दित चरण-कमलों में प्रणाम कर वह अपने लोक को चला गया।

भगवान् श्रीहरि ने गजेन्द्र का उद्धार कर उसको अपना पार्षद बना लिया। गन्धर्व, सिद्ध और देवगण उनकी इस लीला का गान करने लगे। गजेन्द्र की स्तुति से प्रसन्न होकर एवं सर्वभूतस्वरूप श्रीहरि ने सब लोगों के सामने कहा—

ये मां स्तुवन्त्यनेताङ्ग प्रतिबुध्य निशात्यये।
तेषां प्राणात्यये चाहं ददामि विमलां मतिम्॥

(श्रीमद्भागवत ८।४।२५)

'प्यारे गजेन्द्र! जो लोग ब्राह्म मुहूर्त में जगकर तुम्हारी की हुई स्तुति से मेरा स्तवन करेंगे, मृत्यु के समय उन्हें मैं निर्मल बुद्धि का दान करूँगा।'

श्रीहरि ने पार्षदरूप गजेन्द्र को अपने साथ लिया और गरुड़ारूढ़ हो अपने दिव्यधाम को प्रस्थान कर गये।

(श्रीमद्भागवत ८।२-४ के आधार से)

पार्षदरूप गजेन्द्र और भगवान् श्रीहरि को नमस्कार हैं।

(यह गजेन्द्र स्तुति श्रीमद्भागवत स्कन्ध ८ अध्याय ३ में है। भगवान् श्रीहरि के नाम से ध्रुव चरित्र में तथा गजेन्द्र उद्धार में अवतार लेने का वर्णन प्राप्त होता है। इसलिये यह दोनों कथाएँ ही एक ही संख्या में गणना की जाकर संकेत (क), (ख) द्वारा लिखी गयी हैं।)

भगवान् परशुराम (१८)

सोपान ३

महाराज रेणु की पुत्री, महर्षि जमदग्नि की पतिपरायणा पत्नी के गर्भ से वसुमान्, वसुषेण, वसु, विश्वावसु व सबसे छोटे परशुराम, ये पाँच पुत्र उत्पन्न हुए। परशुराम निखिल सृष्टि के नायक भगवान् विष्णु के आवेशावतार हैं। परशुराम प्रकट होते ही भगवान् शंकर की आराधना के लिए कैलाश पर्वत को चले गये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परशुराम की तपश्चर्या भक्ति से देवाधिदेव महादेव अत्यन्त प्रसन्न हो गए और उन्होंने वर मांगने के लिए कहा। परशुरामजी ने कहा—'प्रभो! आप कृपा करके मुझे कभी कुण्ठित नहीं होने वाला अमोघ अस्त्र प्रदान कीजिये।'

भगवान् शंकर ने उनको अनेक अस्त्र-शस्त्रों सहित दिव्य परशु प्रदान किया। वह दिव्य परशु भगवान् शंकर के उसी महातेज से निर्मित हुआ था, जिससे श्रीविष्णु का सुदर्शन चक्र और देवराज इन्द्र का वज्र बना था। अत्यन्त तीक्ष्ण धार वाला अमोघ परशु धारण करने के कारण भगवान् राम का परशु सहित नाम 'परशुराम' हो गया।

परशुरामजी बालकपन से ही अत्यन्त वीर, पराक्रमी, अस्त्र-शस्त्र विद्या के प्रेमी, त्यागी, तपस्वी एवं सुन्दर थे। धनुर्वेद की विधिवत् शिक्षा उन्होंने अपने पिता से ही प्राप्त की थी। ये 'रुरु' नामक मृग की चर्म धारण करते थे। कंधे पर धनुर्बाण एवं हाथ में दिव्य परशु लेकर चलते समय ये वीर-रस की सजीव मूर्ति प्रतीत होते थे। पिता के चरणों में इनकी अनन्य भक्ति थी।

एक समय की बात है, संध्या का समय था; परशुरामजी की माता रेणुका अपने आश्रम से जल लेने यमुना-तट पर गयीं। संयोगवश उसी समय वहाँ गन्धर्व राज चित्ररथ अप्सराओं सहित आकर जल-क्रीड़ा करने लगा। रेणुका का भाव दूषित हो गया। यह बात महर्षि जमदग्नि को ज्ञात हो गई। माता रेणुका जल लेकर आश्रम पर लौटी तो क्रुद्ध होकर महर्षि ने अपने उपस्थित चारों पुत्रों से कहा—'इस पापिनी का वध कर दो।' चारों पुत्र मातृ स्नेह के कारण चुपचाप खड़े रहे।

जब परशुराम जी वन से लौटकर आये, क्रुद्ध हुए महर्षि जमदग्नि ने आज्ञा दी—'बेटा! तुम अपनी दुष्टा माता और इन चारों भाइयों का सिर उतार लो।' परशुरामजी अपने पिता के तपोबल से पूर्ण परिचित थे। उन्होंने तुरन्त ही परशु उठाया और माता सहित अपने चारों भाइयों का मस्तक काट कर अलग कर दिया।

महर्षि जमदग्नि का क्रोध शान्त हो गया और उन्होंने परशुरामजी से कहा—'धर्मज्ञ राम! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम इच्छित वर माँग लो।'

परशुरामजी ने हाथ जोड़कर कहा—'पिताजी! मेरी माता जीवित हो जावें और उन्हें मेरे द्वारा मारे जाने की स्मृति न रहे। इनका वह मानस पाप भी दूर हो जाये। मेरे चारों भाई भी जीवित हो जावें। युद्ध में मेरा कोई सामना न कर सके और मैं दीर्घायु प्राप्त करूँ।'

महर्षि जमदग्नि ने प्रसन्न होकर कहा—'ऐसा ही होगा, इन सबके सिर इनके धड़ से सटा दो।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एक समय हैहयवंशीय महाराज कृतवीर्य के परम पराक्रमी पुत्र, माहिष्मती पुरी (आधुनिक महेश्वर) के नरेश वीरवर सहस्रार्जुन महर्षि जमदग्नि के आश्रम में उपस्थित हुए। महर्षि ने अपनी कामधेनु के द्वारा सेना सहित राजा का अद्भुत स्वागत-सत्कार किया। वीर शिरोमणि सहस्रार्जुन ने महर्षि से कहा—'यह कामधेनु मुझे दे दीजिये।'

महर्षि जमदग्नि ने कहा—'राजन्! यह कामधेनु तो मेरे समस्त धर्म-कर्मों की जननी है। यज्ञिय सामग्री, देवता, पितर और अतिथियों का सत्कार ही नहीं, इसी गौ के द्वारा मेरे सारे इहलौकिक तथा पारलौकिक कर्म सम्पन्न होते हैं। मैं इसको देने का विचार भी कैसे कर सकता हूँ।'

राज्यशक्तिसम्पन्न नरेश सहस्रार्जुन ने बलपूर्वक कामधेनु को छीन लिया और सेना सहित अपनी माहिष्मतीपुरी की ओर चलते बने। सवत्सा कामधेनु ऋषि की ओर फिर-फिर कर रंभाती जा रही थी। दुष्ट क्षत्रिय लोग उसको दण्ड-प्रहार करते हुए हाँके लिया जा रहे थे।

परम वीतराग, क्षमा की साक्षात् मूर्ति ब्राह्मण-ऋषि के नेत्रों में आँसू भर आये, किन्तु वह कुछ बोल न सके। चुपचाप श्री भगवान् के ध्यान में बैठ गए।

समिधा लिए वन से लौटकर तपस्या की मूर्ति और परम तेजस्वी परशुरामजी ने अपनी माता के मुख से गो-हरण का संवाद सुना तो क्रोध से काँप उठे और अपनी माता से कहा—'माँ! मैं अपने पिता का मलिन और उदास मुँह नहीं देख सकता। माँ! मैं उस कृतघ्न और दुष्ट नरेश को यथोचित दण्ड देकर, कामधेनु को लेकर आऊँगा, तब ही पूज्य पिताजी के चरणों में प्रणाम निवेदन करूंगा।'

माता रेणुका कुछ बोल भी न सकी कि उग्रता की प्रचण्ड मूर्ति परशुरामजी अत्यन्त शीघ्रता से धनुष, अक्षय तूणीर और परशु ले सहस्रार्जुन के पीछे दौड़े। तपस्या से दीप्त, गौर वर्ण, बिखरी हुई काली जटाएँ, कटि में रुरु मृग का चर्म, कंधे पर धनुष, पीठ पर अक्षय तूणीर, दाहिने हाथ में विद्युत समान चमचमाता दिव्य अमोघ परशु, हृदय में क्रोध की ज्वाला लिये और लाल-लाल नेत्रों से अङ्गार बरसाते, वायु वेग से दौड़ते हुए परशुराम-जैसे महाकाल की प्रचण्ड मूर्ति सहस्रार्जुन को निगल जाने के लिए दौड़ रही हो।

उद्धत कार्तवीर्य अपनी माहिष्मतीपुरी में प्रविष्ट भी नहीं हो पाया था कि पितृभक्त, परम तेजस्वी ऋषिकुमार परशुराम की गर्जना सुन कर सहम गया। अपने पीछे प्रज्वलित अग्नि तुल्य परशुराम को युद्ध के लिए आता हुआ देखकर उसने अत्यन्त उपेक्षा-भाव से अपने सैनिकों से कहा—'ब्राह्मण कामधेनु लेने आया है, इसे मार डालो।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किन्तु जब उनके लक्षाधिक सशस्त्र वीर सैनिक कुछ ही क्षणों में परशुरामजी के प्रचण्ड परशु की भेंट हो गये, तब उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही। कार्तवीर्य ने एक साथ पाँच सौ धनुषों से पाँच सौ तीक्ष्ण शरों की वर्षा परशुरामजी पर की, परन्तु उनके एक ही धनुष के एक साथ छूटे हुए सहस्त्र शरों की वर्षा से कार्तवीर्य के शर बीच में ही नष्ट हो गये और उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग से रक्त की धाराएँ निकलने लगीं। परम धीर सहस्रार्जुन घबरा गया। धनुर्बाण से सफलता की आशा न देख कर वह परशुरामजी को पर्वत के नीचे दबा कर मार डालने लिए पर्वत उखाड़ना ही चाहता था कि मूषक पर बिलाव की भाँति सहस्रार्जुन पर परशुरामजी चढ़ बैठे। उन्होंने उसकी सहस्र भुजाओं को काट कर पृथ्वी पर फेंक दिया और उसका सिर धड़ से अलग करके वे क्रोध के प्रज्वलित विग्रह की भाँति चारों ओर शत्रुओं की प्रतिक्षा करने लगे। सहस्रार्जुन के दस हजार पुत्र युद्ध भूमि से भाग गये।

परशुरामजी ने एक ओर अत्यन्त भयभीत और चकित हुई कामधेनु को देखा तो जैसे पाषण द्रवित हो गया हो, परशुरामजी के नेत्रों से जल की दो बूंदे टपक पड़ी। उन्होंने तत्काल ही गाय के गले में अपनी लम्बी बाँहें डाल दी तथा उस पर हाथ फेर कर स्नेहपूर्वक लेकर चल पड़े।

वत्स सहित कामधेनु को लेकर परशुरामजी आश्रम में पहुँचे और महर्षि जमदग्नि के चरणों में प्रणाम किया।

क्षमामूर्ति महर्षि जमदग्नि ने अशांत चित्त से परशुरामजी को कहा—'ब्राह्मण का सर्वोपरि धर्म क्षमा है। सार्वभौम नृपति का वध ब्रह्म हत्या के समान पाप है। तुम्हारे लिए प्रायश्चित आवश्यक है।'

परशुरामजी ने सिर झुका कर शांतिपूर्वक कहा—'पिताजी! प्रेमपूर्वक स्वागत करने वाले तपस्वी ब्राह्मण की गाय बलपूर्वक छीन ले जाने वाले नराधम और परम पातकी का वध पाप नहीं; किन्तु आपके आदेशानुसार मैं प्रायश्चित अवश्य करूँगा। आपकी प्रत्येक आज्ञा मुझे शिरोधार्य है।'

महर्षि जमदग्नि के आदेशानुसार निस्स्पृह तपस्वी परशुरामजी ने अपने हृदय में भुवनमोहन परम प्रभु की मङ्गलमयी छबि का ध्यान एवं मुख से उनके सुमधुर नामों का धीरे-धीरे कीर्तन करते हुए तीर्थयात्रा के लिए प्रस्थान किया। परशुरामजी एक वर्ष में पिता के बतलाये हुए सम्पूर्ण तीर्थों का सविधि पर्यटन करके अपने आश्रम में लौटे, तब उन्होंने माता-पिता के चरणों में अत्यन्त भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और उन्होंने भी अपने निष्पाप तपस्वी पुत्र को अत्यन्त प्रसन्न होकर शुभाशीर्वाद प्रदान किया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वीर सहस्रार्जुन के कायर पुत्र परशुरामजी के सम्मुख तो नहीं ठहर सके, प्राण-भय से भाग गये; किन्तु वे अपने पिता के वध का बदला लेने के लिए सर्वदा अवसर देखते रहते थे। एक बार जब उन्हें ज्ञात हुआ कि इस समय अपने चारों भाइयों सहित परशुराम वन में दूर चले गए हैं, तब वे नर-राक्षस महर्षि जमदग्नि के आश्रम पर पहुँचे और चोरी से ध्यानरत महर्षि का मस्तक उतार लिया और उसको अपने साथ लेकर, आश्रम को उजाड़ते हुए भाग गए।

'हा राम ! हा राम !!'—माता का इस प्रकार का करुण क्रन्दन को सुनकर परशुरामजी भागते हुए आश्रम पर पहुँचे। उन्होंने अपने परम पूज्य पिता की हत्या देखी तो वे अपना अक्षय तूणीर सहित धनुष और तीक्ष्ण परशु लेकर उनके पीछे दौड़े। माहिष्मतीपुरी में पहुँचते ही वे सहस्रार्जुन के सहस्रों पुत्रों को अपने अमोघ परशु से काटने लगे। साक्षात् काल की भाँति वे दुष्ट क्षत्रियों को काट रहे थे। माहिष्मतीपुरी जैसे रक्त में डूब गयी। सहस्रार्जुन के पाँच पुत्र जयध्वज, शूरसेन, वृषभ, मधु और ऊर्जित किसी प्रकार लुक-छिपकर प्राण बचाकर भागने में समर्थ हुए, परन्तु अत्युग्र पर परशुरामजी क्रूरकर्मी क्षत्रियों का वध करते ही रहे। वे नगर-नगर और गाँव-गाँव में जाकर पृथ्वी के भारभूत कुकर्मी और पातकी क्षत्रियों का संहार करने लगे। उन्होंने पृथ्वी क्षत्रिय-शून्य समझ कर अपने पिता के सिर को धड़ से जोड़ कर उनका विधिवत् दाह-संस्कार किया। महर्षि जमदग्नि को स्मृतिरूप संकल्पमय शरीर तथा सप्तर्षियों में सातवां स्थान मिला।

भगवान् परशुरामजी ने पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रियों से हीन कर दिया। वे क्षत्रियों को ढूंढ-ढूंढ कर एकत्र करते और कुरुक्षेत्र में ले जाकर उनका वध कर डालते। इस प्रकार परशुरामजी ने क्षत्रियों के रक्त से पाँच सरोवर भर दिये। वह स्थान 'समन्त पञ्चक' नाम से प्रसिद्ध है।

उन सरोवरों के रक्तरूपी जल से भगवान् परशुराम ने अपने पितरों का तर्पण किया। परशुरामजी के ऋचीक आदि पितृगण प्रसन्न होकर उनके समीप आये और उन्हें इच्छित वर मांगने के लिए कहा। अपने पितरों के चरणों में प्रणाम कर तपस्वी परशुरामजी ने प्रार्थना की—

यदि मे पितरः प्रीता यद्यनुग्राह्यता मयि।
यच्च रोषाभिभूतेन क्षत्रमुत्सादितं मया॥
अतश्च पापान्मुच्येऽहमेष मे प्रार्थितो वरः।
ह्रदाश्च तीर्थभूता मे भवेयुर्भुवि विश्रुताः॥

(महाभारत आदि. २।८-९)

'यदि आप सब हमारे पितर मुझ पर प्रसन्न हों और मुझे अपना अनुग्रह-पात्र समझते हैं तो मैंने जो क्रोधवश क्षत्रिय वंश का विध्वंस किया है, इस कुकर्म के

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाप से मैं मुक्त हो जाऊँ। ये मेरे बनाये हुए सरोवर पृथ्वी में प्रसिद्ध तीर्थ हो जायँ। यही वर मैं आप लोगों से चाहता हूँ।'

पितरों ने परशुरामजी से कहा—'ऐसा ही होगा, किन्तु अब शेष क्षत्रिय वंश का संहार मत करना। उन्हें क्षमा कर देना।'

अपने पूज्य पितरों द्वारा वरदान एवं आदेश प्राप्त कर जमदग्निनन्दन शांत हो गये। उस समय सम्पूर्ण वसुन्धरा परशुरामजी के अधीन थी। उनका विरोध करने का साहस किसी में नहीं था, किन्तु उन्हें राज्य-सुख एवं वैभव की कोई कामना नहीं थी। फलतः उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वी कश्यपजी को दान कर दी।

जब श्रीभगवान् के आवेशावतार परशुरामजी ने समूची पृथ्वी को तृण तुल्य समझ कर दान कर दिया, तब महर्षि कश्यपजी ने उनसे कहा—'अब तुम मेरी पृथ्वी छोड़ दो और अपने लिए समुद्र से स्थान मांग लो।'

परशुरामजी तुरन्त वहाँ से महेन्द्र पर्वत पर चले गये। उस समय महर्षि भारद्वाज के यशस्वी पुत्र द्रोण धनुर्वेद, दिव्यास्त्रों एवं नीतिशास्त्र के ज्ञान के लिए भगवान् परशुराम से पास महेन्द्र पर्वत पर पहुँचे।

द्रोण ने परशुरामजी को प्रणाम करते हुये अपना परिचय दिया—'मैं आङ्गिरस कुलोत्पन्न महर्षि भरद्वाज का अयोनिज पुत्र द्रोण हूँ। मैं धन की इच्छा से आपके पास आया हूँ, आप मुझ पर दया करें।'

परम विरक्त परशुराम ने द्रोण से कहा—

शरीरमात्रमेवाद्य मया समवशेषितम्।
अस्त्राणि वा शरीरं वा ब्रह्मन्नेकतमं वृणु॥

(महाभारत आदि० १६५।१०)

'ब्रह्मन्! अब तो केवल मैंने अपने शरीर को ही बचा रखा है (शरीर के सिवाय सब कुछ दान कर दिया)। अतः अब तुम मेरे अस्त्रों अथवा यह शरीर-दोनों में से किसी एक को मांग लो।'

द्रोण ने निवेदन किया—'प्रभो! आप मुझे सम्पूर्ण अस्त्र, उनके प्रयोग तथा उपसंहार की विधि प्रदान करें।'

रेणुकानन्दन ने अपने सब अस्त्र द्रोण को दे दिये। आचार्य द्रोण भृगुनन्दन परशुरामजी से दुर्लभ ब्रह्मास्त्र का भी ज्ञान प्राप्त कर पृथ्वी के अत्यधिक शक्तिशाली बन गये।

राजा युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के समय महातपस्वी व्यास, देवल, असित तथा महर्षियों के साथ जामदग्न्य (परशुराम) ने भी उनका अभिषेक किया था।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भीष्म पितामह वे भी इनसे अस्त्र-विद्या सीखी थी। उन्होंने अपने मुखार-विन्द से कहा था—'एक वार मुझसे मेरे गुरु परम तेजस्वी परशुरामजी का युद्ध हुआ। परशुरामजी के पास रथ नहीं था। तव मैंने कहा—ब्रह्मन् ! मैं रथ पर बैठा हूँ और आप पृथ्वी पर खड़े हैं। इस कारण मैं आपसे युद्ध नहीं करूँगा। मुझसे युद्ध करने के लिये आप कवच पहन कर रथारूढ़ हो जायें। तव परशुरामजी ने मुझसे युद्ध-भूमि में मुस्कराते हुये कहा—

रथो मे मेदिनी भीष्म वाहा वेदाः सदश्ववत्।
सूतश्च मातरिश्वा वै कवचं वेदमातरः॥
सुसंवीतो रणे ताभिर्योत्स्येऽहं कुरुनन्दन॥

(महाभारत, उद्योग १७९।३-४)

'कुरुनन्दन भीष्म ! मेरे लिये तो पृथ्वी ही रथ है, चारों वेद ही उत्तम अश्वों के समान मेरे वाहन हैं, वायुदेव ही सारथि हैं और वेदमाताएँ (गायत्री, सावित्री और सरस्वती) ही कवच हैं। इन सवसे आवृत एवं सुरक्षित होकर मैं रणक्षेत्र में युद्ध करूँगा।'

इतना कह कर पराक्रमी परशुरामजी ने मुझे अपने तीक्ष्ण शरों से घेर लिया। उस समय मैंने देखा—'परशुरामजी एक नगर तुल्य विस्तृत, अद्भुत एवं दिव्य विमान पर वैठे हैं। उसमें दिव्य अश्व जुते थे। वह स्वर्ग निर्मित रथ प्रत्येक रीति से सजा हुआ था। उसमें सम्पूर्ण श्रेष्ठ आयुध रखे हुये थे। परशुरामजी ने सूर्य-चन्द्र-खचित कवच धारण कर रखा था और उनके प्रिय सखा वेदवेत्ता अकृत-व्रण उनके सारथि का कार्य कर रहे थे।'

परम पराक्रमी, परम तेजस्वी, परम तपस्वी, परम पितृभक्त भगवान् परशु-रामजी के साथ मेरा भयानक सग्राम हुआ। सुहृदों के समझाने से युद्ध वंद हुआ तो मैंने परमर्षि परशुराम जी के समीप जाकर उनके चरणों में प्रणाम किया। परशु-रामजी ने मुस्कराकर मुझसे कहा—

त्वत्समो नास्ति लोकेऽस्मिन् क्षत्रियः पृथिवीचरः।
गम्यतां भीष्म युद्धेऽस्मिंस्तोषितोऽहं भृशं त्वया॥

(महाभारत, उद्योग १८५।३६)

'भीष्म ! इस जगत् में भूतल पर विचरने वाला कोई भी क्षत्रिय तुम्हारे समान नहीं है। जाओ, इस युद्ध में तुमने मुझे वहुत संतुष्ट किया है।'

श्रीपरशुरामजी कल्पान्त-स्थायी हैं। किसी-किसी भाग्यशाली पुण्यात्मा को अब भी उनके दर्शन हो जाते हैं।

(अग्नि पुराण अध्याय ४, नृसिंह पुराण अध्याय ४६ तथा महाभारत के आधार से)

भगवान् परशुरामजी के चरणों में वारम्वार प्रणाम है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् व्यास (१६)

सोपान ४

द्वापरे समनुप्राप्ते तृतीये युगपर्यये।
जातः पराशराद्योगी वासव्यां कलया हरेः॥

(श्रीमद्भागवत १।४।१४)

'इस वर्तमान चतुयुगी के तीसरे युग द्वापर में महर्षि पराशर के द्वारा वसु-कन्या सत्यवती के गर्भ से भगवान् के कलावतार योगीराज व्यासजी का जन्म हुआ।'

इनका जन्म यमुनाजी के द्वीप स्थान में हुआ था। इसलिये उनको 'पाराशर्य' और 'द्वैपायन' भी कहते हैं। उनका वर्ण घन नील था, अतएव वे 'कृष्णद्वैपायन' नाम से प्रख्यात हैं। बदरी वन में रहने के कारण वे 'बादरायण' भी कहे जाते हैं। उन्हें अङ्गों और इतिहासों सहित सम्पूर्ण वेद और परमात्मतत्त्व का ज्ञान स्वतः प्राप्त हो गया था। जिसको दूसरे व्रतोपवासनिरत यज्ञ, तप और वेदाध्ययन से भी प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

पृथ्वी पर पदार्पण करते ही अचिन्त्य-शक्तिशाली व्यास ने अपनी जननी से कहा—आवश्यकता पड़ने पर तुम जब भी मुझे स्मरण करोगी, मैं अवश्य तुम्हारा दर्शन करूँगा और वे माता की आज्ञा से तपश्चरण में लग गये।

प्रारम्भ में वेद एक ही था। ऋषिवर अङ्गिरा ने उसमें से सरल तथा भौतिक उपयोग के छन्दों को पीछे से संगृहीत किया। वह संग्रह 'अथर्वाङ्गिरस' या 'अथर्ववेद' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। परम पुण्यमय सत्यवतीनन्दन ने मनुष्यों की आयु और शक्ति अत्यन्त क्षीण होते देख कर वेदों का व्यास (विभाग) किया। इसीलिये वे 'वेदव्यास' नाम से प्रसिद्ध हुए।

फिर वेदार्थ-दर्शन की शक्ति के साथ अनादि पुराण को लुप्त होते देखकर भगवान् कृष्णद्वैपायन ने पुराणों का प्रणयन किया। उन पुराणों में निष्ठा के अनुरूप आराध्य की प्रतिष्ठा कर उन्होंने वेदार्थ चारों वर्णों के लिये सहज-सुलभ कर दिया। अष्टादश पुराणों के अतिरिक्त बहुत से उपपुराण तथा अन्य भी भगवान् व्यासदेव द्वारा ही निर्मित हैं।

पुराण ग्रन्थों में अत्यन्त विस्तृत वर्णन प्राप्त हैं। कल्प भेद से उनमें चरित्र-भेद भी पाये जाते हैं। समस्त चरित्र इस कल्प के अनुरूप हों तथा समस्त धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष-सम्बन्धी सिद्धान्त भी उनमें एकत्र हो जाय—इस निश्चय

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

से वेदव्यास जी ने महान् ग्रन्थ महाभारत की रचना की। महाभारत को 'पञ्चम वेद' और 'कार्ष्णवेद' भी कहा जाता है। श्रुतियों का सारांश भगवान् व्यासजी ने महाभारत में एकत्र कर दिया है। इस महान् ग्रन्थ-रत्न को भगवान् व्यासजी अपने मुख से बोलते जाते थे और उसको साक्षात् भगवान् गणेशजी अपनी कलम द्वारा लिखते गये हैं।

जब व्यासजी ने, महाभारत लिखने के लिए भगवान् गणेशजी से प्रार्थना की तब गणेशजी ने कहा—'लिखते समय यदि मेरी लेखनी क्षण भर भी न रुके तो मैं यह कार्य कर सकता हूँ।'

जीवमात्र के परम हितैषी व्यासजी ने कहा—'मुझे यह स्वीकार है, किन्तु आप भी बिना समझे एक अक्षर भी न लिखें।'

कहा जाता है कि भगवान् व्यासजी ने आठ हजार आठ सौ ऐसे श्लोकों की रचना की है, जिनका ठीक-ठीक अर्थ वे और उन के पुत्र श्रीशुकदेवजी ही समझते हैं। जब गणेशजी ऐसे श्लोकों का अर्थ समझने के लिए कुछ देर रुक जाते थे; तब तक व्यासजी कितने ही श्लोकों की रचना कर डालते थे। इस प्रकार यह पञ्चम वेद लिखा गया।

भगवान् द्वैपायन ने ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद का अध्ययन क्रमशः अपने शिष्यों पैल, जैमिनि, वैशम्पायन और सुमन्तु को और महाभारत का अध्ययन रोमहर्षण सूत को कराया था।

सर्वश्रेष्ठ वरदायक, महान् पुण्यमय, यशस्वी वेदव्यासजी राजा जनमेजय के सर्प यज्ञ की दीक्षा लेने का संवाद पाकर वेद-वेदाङ्गों के पारंगत महाविद्वान् शिष्यों के साथ उनके यज्ञ मण्डप में पहुँचे। उनको देखकर राजा जनमेजय अत्यन्त हर्षित हुए और उन्होंने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक पराशरनन्दन व्यासजी को सुवर्णमय सिंहासन पर बैठाया। फिर उन्होंने पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय द्वारा उनकी विधिवत् पूजा की।

राजा जनमेजय के अनुरोध से महर्षि व्यास ने अपने शिष्य वैशम्पायन को वहाँ महाभारत सुनाने की आज्ञा दी। अतएव विप्रवर वैशम्पायन ने वेद वेत्ताओं में श्रेष्ठ, त्रिकालदर्शी, परम पवित्र गुरुदेव व्यासजी के चरणों में प्रणाम किया और उन्होंने राजा जनमेजय, सभासद्गण तथा अन्य उपस्थित नरेशों के सम्मुख विस्तारपूर्वक व्यास-विरचित कौरव-पाण्डवों का सुविस्तृत इतिहास 'महाभारत' सुनाया।

धृतराष्ट्र के पुत्रों द्वारा अधर्मपूर्वक पाण्डवों को राज्य से बहिष्कृत कर दिये जाने पर सर्वज्ञ व्यासजी वन में उनके पास पहुँचे। वहाँ उन्होंने कुन्ती सहित पाण्डवों को धैर्य बंधाया और उनकी एकचक्रा नगरी के समीप एक ब्राह्मण के घर में रहने की व्यवस्था कर दी। फिर उनको अपनी एक मास तक वहीं प्रतीक्षा करने का आदेश देकर वे लौट गये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सत्यव्रतपरायण व्यासजी एक मास के बाद पुनः पाण्डवों के पास पहुँचे। उनसे उनका कुशल-संवाद पूछ कर धर्म सम्बन्धी और अर्थविषयक चर्चा की। फिर उन्होंने महाराज पृषत की पौत्री सती-साध्वी कृष्णा के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाकर पाण्डवों को उसके स्वयंवर में पाञ्चाल नगर जाने की प्रेरणा दी। व्यासजी ने पाण्डवों से कहा कि 'सती द्रौपदी तुम्हीं लोगों की पत्नी नियत की गयी है।'

पाण्डव पाञ्चाल नगर पहुँचे और स्वयंवर में अर्जुन ने लक्ष्यवेध कर सती द्रौपदी की जयमाला प्राप्त की; किन्तु जब माता कुन्ती के आदेशानुसार युधिष्ठिर आदि पाँचों भाइयों ने एक साथ द्रौपदी के साथ विवाह करना चाहा, तब महाराज द्रुपद ने इसे सर्वथा अनुचित और अधर्म समझ कर आपत्ति की। उसी समय निग्रहानुग्रहसमर्थ व्यासजी वहाँ पहुँच गये। वहाँ उन्होंने महाराज द्रुपद को पाण्डवों एवं द्रौपदी के इस जीवन के पूर्व का विवरण ही नहीं बतलाया, उनको दिव्य दृष्टि प्रदान कर उनके परम तेजस्वी स्वरूप का दर्शन भी करा दिया। फिर तो महाराज द्रुपद ने प्रसन्नतापूर्वक द्रौपदी का विवाह युधिष्ठर आदि पाँचों भाइयों के साथ कर दिया।

फिर जब महाराज युधिष्ठिर ने भगवान् श्रीकृष्ण के सत्परामर्श से राजसूय यज्ञ की दीक्षा ली, तब परब्रह्म के ज्ञाता कृष्णद्वैपायन व्यासजी परम वेदज्ञ ऋत्विजों के साथ वहाँ पहुँचे। उक्त यज्ञ में स्वयं उन्होंने ब्रह्मा का काम संभाला और यज्ञ सम्पन्न होने पर देवर्षि नारद, देवल और असित मुनि को आगे करके महाराज युधिष्ठिर का अभिषेक किया।

अपने पौत्र युधिष्ठिर से विदा होते समय व्यासजी ने अन्य बातों के अतिरिक्त उनसे कहा—'राजन्! आज से तेरह वर्ष बाद दुर्योधन के पातक तथा भीम और अर्जुन के पराक्रम से क्षत्रिय-कुल का महासंहार होगा और उसके निमित्त तुम बनोगे; किन्तु इसके लिये तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि काल सबके लिये अजेय है।'

इतनी बात कह कर ज्ञानमूर्ति व्यासजी ने अपने वेदज्ञ शिष्यों सहित कैलास पर्वत के लिये प्रस्थान किया।

शुद्धात्मा व्यासजी विपत्तिग्रस्त, सरल एवं निश्छल पाण्डवों की समय-समय पूरी सहायता करते रहे। जब दुरात्मा दुर्योधन ने छलपूर्वक पाण्डवों का सर्वस्व अपहरण कर उन्हें बारह वर्षों के लिये वन में भेज दिया, तब उसे प्रसन्नता हुई; किन्तु उसे इतने से ही संतोष नहीं हुआ। उसने कर्ण, दुश्शासन और शकुनि के परामर्श से अरण्यवासी पाण्डवों को मार डालने का निश्चय कर लिया तथा शस्त्रसज्ज हो वे रथ पर बैठे ही थे कि दिव्यदृष्टिसम्पन्न व्यासजी तत्काल वहाँ पहुँच गये और दुर्योधन को समझाकर उसे इस भयानक अपकर्म से विरत किया। इसके अनन्तर वे तुरन्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महाराज धृष्टराष्ट्र के पास पहुँचे और उनसे कहा—'वत्स ! जैसे पाण्डु मेरे पुत्र हैं, वैसे ही तुम भी हो, उसी प्रकार ज्ञानसम्पन्न विदुरजी भी हैं। मैं स्नेहवश ही तुम्हारे और सम्पूर्ण कौरवों के हित की बात कहता हूँ। तुम्हारा दुष्ट पुत्र दुर्योधन क्रूर ही नहीं, अत्यन्त मूढ़ भी है। तनिक सोचो, छलपूर्वक राज्यलक्ष्मी से वञ्चित पाण्डवों के मन में तेरह वर्षों तक अरण्यवास की यातना सहते-सहते तुम्हारे पुत्रों के प्रति कितना भयानक विष भर जायगा। वे तुम्हारे दुष्ट पुत्रों को कैसे जीवित रहने देंगे। इतने पर दुर्योधन उनका नृशंसतापूर्वक वध कर डालना चाहता है। यदि दुर्योधन की इस कुप्रवृत्ति की उपेक्षा हुई, उसे नहीं रोका गया तो तुम्हारे सहित तुम्हारे निर्मल वंश को कलङ्कित ही नहीं होना पड़ेगा, उसका सर्वनाश भी हो जायगा। उचित तो यह है कि तुम्हारा पुत्र दुर्योधन एकाकी ही पाण्डवों के साथ वन में जाय। उनके संसर्ग से उसकी बुद्धि शुद्ध होकर उसके वैर-भाव का शमन हो सकता है।

अथवा जायमानस्य यच्छीलमनुजायते।
श्रूयते तन्ममहाराज नामृतस्यापसर्पति॥

(महाभारत वन० ८।११)

'किन्तु महाराज ! जन्म के समय किसी प्राणी का जो स्वभाव होता है, वह मृत्युपर्यन्त बना रहता है, यह बात मेरे सुनने में आयी है।'

'राजन् ! महर्षि मैत्रेय वन में पाण्डवों से मिल कर आ रहे हैं। वे निश्चय ही सत्सम्मति प्रदान करेंगे। उनकी आज्ञा मान लेने में ही कौरव कुल का हित है।' इस प्रकार कह कर व्यास जी चले गये।

दुर्योधन ने महर्षि मैत्रेय की उपेक्षा की, इस कारण उन्होंने उसे अत्यन्त अनिष्टकर शाप दे दिया।

अरण्यवास के समय एक बार जब युधिष्ठिर अत्यन्त चिन्तित थे, तब त्रिकाल दर्शी व्यासजी उनके पास पहुँचे और उन्होंने युधिष्ठिर को समझाया—'भरत श्रेष्ठ! अब तुम्हारे कल्याण का सर्वश्रेष्ठ अवसर उपस्थित हो चला है। तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारे शत्रु शीघ्र ही पराजित हो जावेंगे।'

इस प्रकार धर्मराज युधिष्ठिर को आश्वस्त करते हुये सर्वसमर्थ व्यासजी ने अर्जुन के लिये युधिष्ठिर को मूर्तिमती सिद्धितुल्य 'प्रतिस्मृति' नामक विद्या प्रदान कर दी, जिसके द्वारा उन्हें देवताओं के दर्शन की क्षमता प्राप्त हो गयी। इतना ही नहीं, व्यासजी ने पाण्डवों के लिये और भी अनेक शुभ सम्मतियाँ प्रदान कीं।

भगवान् व्यास ने संजय को भी दिव्य दृष्टि प्रदान कर दी, जिससे उन्होंने महाभारत युद्ध ही नहीं देखा, अपितु भगवान् श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से निस्सृत

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीमद्भगवद्गीता का भी श्रवण कर लिया, जिसे महाभाग पार्थ के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं सुन पाया था। इतना ही नहीं, उक्त दिव्यदृष्टि के प्रभाव से संजय ने श्रीभगवान् के विश्वरूप का भी अत्यन्त दुर्लभ दर्शन प्राप्त कर लिया।

पराशरनन्दन व्यास कृपा की मूर्ति ही थे। एक बार उन्होंने मार्ग में आते हुए रथ के कर्कश स्वर को सुन कर प्राण-भय से भागते एक क्षुद्र कीट को देखा। कीट से उन्होंने वार्तालाप किया तथा अपने तपोबल से उसे अनेक योनियों से निकाल कर शीघ्र ही मनुष्य-योनि प्राप्त करा दी। फिर क्रमशः क्षत्रिय-कुल एवं ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर उस भूतपूर्व कीट ने दयामय व्यासजी के अनुग्रह से अत्यन्त दुर्लभ सनातन ब्रह्मपद प्राप्त कर लिया।

महर्षि व्यास की शक्ति अलौकिक थी। एक बार जब वे वन में धृतराष्ट्र और गान्धारी से मिलने गए, तब सपरिवार युधिष्ठिर भी वहीं उपस्थित थे। धृतराष्ट्र और गान्धारी पुत्र शोक से दुःखी थे। धृतराष्ट्र ने अपने कुटुम्बियों और स्वजनों को देखने की इच्छा व्यक्त की। रात्रि में महर्षि व्यास के आदेशानुसार धृतराष्ट्र आदि गङ्गा तट पर पहुँचे। व्यासजी ने गङ्गा जल में प्रवेश किया और दिवंगत योद्धाओं को पुकारा। फिर तो जल में युद्ध काल का सा कोलाहल सुनायी देने लगा। साथ ही पाण्डव और कौरव—दोनों पक्षों के योद्धा और राजकुमार भीष्म और द्रोण के पीछे निकल आये। सबकी वेष-भूषा, शस्त्र-सज्जा, वाहन और ध्वजाएँ पूर्ववत् थीं। सभी ईर्ष्या-द्वेषशून्य दिव्य-देहधारी दीख रहे थे। वे रात्रि में अपने स्नेही सम्बन्धियों से मिले और सूर्योदय के पूर्व भगवती भागीरथी में प्रवेश कर अपने-अपने लोकों के लिए चले गये।

जो स्त्रियाँ पतिलोक में जाना चाहती हों, इस समय गङ्गाजी में डुबकी लगा लें। व्यासजी के ये वचन सुन जिन वीरगति प्राप्त योद्धाओं की पत्नियों ने गङ्गाजी में प्रवेश किया, वे दिव्य वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर विमान में बैठकर और सबके देखते-देखते ही अभीष्ट लोक के लिए प्रयाण कर गयीं।

नागयज्ञ की समाप्ति पर जब यह कथा परीक्षित् के पुत्र जनमेजय ने महर्षि वैशम्पायन से सुनी, तब उन्हें इस अद्भुत घटना पर सहसा विश्वास न हुआ और उन्होंने इस पर शङ्का की। वैशम्पायन ने उसका बड़ा ही युक्तियुक्त आध्यात्मिक समाधान किया। (महाभारत आश्रम वासिक २४) पर वे इस पर भी न माने और कहा कि 'भगवान् व्यास यदि मेरे पिताजी को भी उसी वयो- रूप में ला दें तो मैं विश्वास कर सकता हूँ।'

भगवान् व्यास ने, जो उस समय वहीं उपस्थित थे, जनमेजय पर पूर्ण कृपा की। फलतः शृङ्गी, शमीक एवं मन्त्री आदि के साथ राजा परीक्षित् वहाँ उसी रूप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वय में प्रकट हो गये। अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान में सब सम्मिलित भी हुए और वहीं अन्तर्हित हो गए।

महर्षि व्यास मूर्तिमान् धर्म थे। हिन्दू-जाति तो उनकी चिर ऋणी रहेगी। हिन्दू-संस्कृति का वर्तमान स्वरूप उन्हीं की देन है। भगवान् व्यासजी कल्प के अन्त तक रहेंगे। आद्य शंकराचार्य तथा कितने ही महापुरुषों ने उनका दर्शन-लाभ किया है। अब भी श्रद्धा-भक्तिसम्पन्न अधिकारी महात्मा उनके दर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

दया-धर्म-ज्ञान एवं तप की परमोज्ज्वल मूर्ति उन महामहिम व्यासजी महाराज के चरण-कमलों में बार-बार प्रणाम।

भगवान् हंस (२०)

सोपान ५

एक समय की बात है, लोकपितामह चतुर्मुख ब्रह्माजी अपनी दिव्य सभा में बैठे थे। उसी समय उनके मानस पुत्र सनकादि चारों कुमार दिगम्बर-वेष में वहाँ पहुँच गये और उन्होंने अपने पिता श्रीब्रह्माजी के चरण-कमलों में प्रणाम किया। फिर ब्रह्माजी के आज्ञा प्रदान करने पर पृथक्-पृथक् आसनों पर बैठ गये। सभा के अन्य सभी सदस्य तेजस्वी सनकादि कुमारों के सम्मान में पहले खड़े हुए फिर सर्वथा मौन एवं शांत होकर बैठे रहे।

कुमारों ने अत्यन्त विनयपूर्वक जिज्ञासा निवेदन की—'परम पूज्य पिताजी! चित्त गुणों अर्थात् विषयों में प्रविष्ट रहता है और गुण भी चित्त की एक-एक वृत्ति में समाये रहते हैं। इनका परस्पर आकर्षण है, स्थायी सम्बन्ध है। फिर मोक्ष चाहने वाला अपना चित्त विषयों से कैसे हटा सकता है? उसका चित्त गुणहीन अर्थात् निर्विषय कैसे हो सकता है? क्योंकि यदि मनुष्य-जीवन प्राप्त कर मोक्ष की सिद्धि नहीं की गयी तो सम्पूर्ण जीवन ही व्यर्थ हो जायगा।'

देवशिरोमणि, स्वयम्भू एवं प्राणियों के जन्मदाता होने पर भी ब्रह्माजी ने इन प्रश्नों में संदेह का बीज कहा है, वे इसका पता नहीं लगा सके, प्रश्न का मूल कारण नहीं समझ सके। वे आदि पुरुष परब्रह्म परमात्मा का ध्यान करने लगे।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सबके सम्मुख सहसा अत्यन्त सुन्दर परमोज्ज्वल एवं तेजस्वी महाहंस के रूप में श्रीभगवान् प्रकट हो गए। उक्त हंस के अलौकिक तेज से प्रभावित होकर ब्रह्मा, सनकादि तथा अन्य सभी सभासद् उठ कर खड़े हो गये। सबने हंसरूपी श्री भगवान् के चरणों में श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया। इसके अनन्तर पाद्य-अर्घ्यादि से विधिवत् पूजा करके उनको पवित्र और सुन्दर आसन पर बैठाया।

भगवान् का कथन है—

दृष्ट्वा मां त उपव्रज्य कृत्वा पादाभिवन्दनम्।
ब्रह्माणामग्रतः कृत्वा पप्रच्छुः को भवानिति॥
(श्रीमद्भागवत ११।१३।२०)

'मुझे देखकर सनकादि, ब्रह्माजी को आगे करके मेरे पास आये और उन्होंने मेरे चरणों की वन्दना करके मुझसे पूछा कि आप कौन हैं?'

हंसरूप में प्रकट हुए भगवान् ने विचित्र उत्तर दिया—'मैं क्या उत्तर दूँ?' इसका निर्णय तो आप लोग ही कर सकते हैं। यदि इस पाञ्चभौतिक शरीर को आप 'आप' कहते हैं, तो शरीर की दृष्टि से पृथिवी, वायु, जल, तेज और आकाश से निर्मित रस, रक्त, मेदा, मज्जा, अस्थि और शुक्र वाला शरीर पञ्चभूतात्मक होने के कारण अभिन्न ही हैं और आत्मा के सम्बन्ध में आप लोगों का यह प्रश्न ही नहीं बनता। वह तो सदा सर्वत्र समान रूप से व्याप्त है ही।'

कुछ रुक कर मुस्कराते हुए भगवान् हंस ने कहा—'अब आप लोग ही सोचें और निर्णय करें कि चित्त में गुण हैं या गुणों में चित्त समाया हुआ है। स्वप्न का द्रष्टा, देखने की क्रिया और दृश्य—यह सब क्या पृथक्-पृथक् होते हैं?'

भगवान् हंस ने सनकादि से कहा—

'मन से, वाणी से, दृष्टि से तथा अन्य इन्द्रियों से भी जो कुछ ग्रहण किया जाता है, वह सब मैं ही हूँ, मुझसे भिन्न और कुछ नहीं है। यह सिद्धान्त आप लोग तत्त्व विचार के द्वारा सरलता से समझ लीजिये।'

'यह चित्त चिन्तन करते-करते विषयाकार हो जाता है, विषय चित्त में प्रविष्ट हो जाते हैं, यह बात सत्य है तथापि विषय और चित्त—ये दोनों ही मेरे स्वरूपभूत जीव के देह हैं—उपाधि हैं। अर्थात् आत्मा का चित्त और विषय के साथ कोई सम्बन्ध ही नहीं है।'

इति मे छिन्नसन्देहा मुनयः सनकादयः।
सभाजयित्वा परया भक्त्या गृणत संस्तवैः॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तैरहं पूजितः सम्यक् संस्तुतः परमर्षिभिः।
प्रत्येयाय स्वकं धाम पश्यतः परमेष्ठिनः॥

(श्रीमद्भागवत ११।१३।४१-४२)

परम प्रभु हंस के उत्तर से सनकादि मुनियों का सन्देह दूर हो गया। उन्होंने श्रद्धा और भक्ति से भगवान् हंस की पूजा और स्तुति की। तदनन्तर ब्रह्माजी के सम्मुख ही महाहंसरूपधारी श्रीभगवान् अदृश्य होकर अपने पवित्र धाम को चले गए।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ११ अध्याय १३ के आधार से)

महाहंसरूपधारी श्रीभगवान् को बार-बार प्रणाम।

भगवान् श्रीराम (२१)

सोपान ६

कर्मयोगेश्वरं धीरं रामं सत्यवतां वरम्।
रक्षितारं च धर्मस्य वन्देऽहं पुरुषोत्तमम्॥
हन्तारं भयविघ्नानां दातारं सुखसम्पदाम्।
त्रातारं साधुलोकानां नेतारं राममाश्रये॥

'जो कर्मयोगेश्वर, धैर्यसम्पन्न, सत्यवादियों में सर्वश्रेष्ठ और धर्म के रक्षक हैं, उन पुरुषोत्तम श्री राम की मैं वन्दना करता हूँ। जो भय और विघ्नों के नाश करने वाले, सुखसम्पत्ति के दाता और साधु समाज के रक्षक हैं, उन लोकनायक श्रीराम का मैं आश्रय ग्रहण करता हूँ।'

प्राचीन काल की बात है। ब्रह्मा आदि देवताओं के प्रार्थना करने पर साक्षात् लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु ही राजा दशरथ के चार पुत्र स्वरूपों में प्रकट हुए। तत्पश्चात् कुछ काल के अनन्तर मुनीश्वर विश्वामित्र अयोध्या में आये। उन्होंने अपने यज्ञ की रक्षा के लिये श्रीराम और लक्ष्मण को राजा दशरथ से माँगा। तब राजा दशरथ ने मुनि के शाप से डरकर अपने प्राणों से भी प्रिय पुत्र श्रीराम और लक्ष्मण को उनको सौंप दिया। तब वे दोनों भाई मुनीश्वर विश्वामित्र के यज्ञ में जाकर उसकी रक्षा करने लगे। श्रीराम ने ताड़का सहित सुबाहू को मार कर मारीच

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को मानवास्त्र से दूर फेंक दिया, फिर मुनि ने उनका बड़ा सत्कार किया। तदनन्तर विश्वामित्रजी उन्हें राजा विदेह के नगर मिथिला में ले गये। वहाँ महाराज जनक ने विश्वामित्रजी का भली-भाँति सत्कार करके उनसे पूछा—'महर्षे! ये दोनों बालक किस क्षत्रिय-कुल-नरेश के पुत्र हैं? मुनिवर विश्वामित्रजी ने राजा जनक को बतलाया कि 'ये दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण अयोध्या नरेश महाराज दशरथ के पुत्र हैं।' यह सुनकर विदेहराज जनक बड़े प्रसन्न हुए; फिर महर्षि विश्वामित्र जनक से बोले 'इन्हें धनुष दिखाओ, जो महादेवजी की धरोहर है और सीता के स्वयंवर के लिये तोड़ने की शर्त के साथ रखा गया है।' विश्वामित्रजी का यह वचन सुनकर राजा जनक ने तत्काल तीन सौ सेवकों द्वारा उस धनुष को मँगवा कर आदरपूर्वक उन्हें दिखालाया। श्रीराम ने महादेव जी के उस धनुष को उसी क्षण बायें हाथ से उठा लिया और उस पर प्रत्यञ्चा चढ़ाकर खींचते हुए सहसा ही उसे तोड़ डाला। इससे मिथिलानरेश को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने श्रीराम और लक्ष्मण की पूजा करके उन्हें वैदिक विधि के अनुसार अपनी दोनों कन्याएँ दे दी। मुनिवर विश्वामित्र से यह जानकर कि राजा रशरथ के दो पुत्र और हैं, जनक ने उन पुत्रों के साथ महाराज दशरथ को बुलवाया और अपने भाई की दो पुत्रियों का उन दोनों भाइयों के साथ ब्याह कर दिया। तदनन्तर मिथिलानरेश के द्वारा भली-भाँति सम्मानित हो मुनि की आज्ञा ले अपने चारों विवाहित पुत्रों के साथ महाराज दशरथ अयोध्या-पुरी के लिये प्रस्थित हुए। मार्ग में श्रीरामचन्द्रजी ने भृगुवंशी परशुरामजी के गर्व को शान्त किया और पिता तथा भाइयों के साथ वे बहुत वर्षों तक आनन्दपूर्वक रहे।

तदनन्तर राजा दशरथ यह देखकर कि मेरे पुत्र श्रीराम जानने योग्य सभी तत्त्वों को जान चुके हैं, उन्हें प्रसन्नतापूर्वक युवराज पद पर अभिषिक्त करने के लिये उद्यत हुए। यह जानकर राजा की सबसे अधिक प्रियतमा छोटी रानी कैकेयी ने हठ पूर्वक राम के राज्याभिषेक को रोका और अपने पुत्र भरत के लिए उस अभिषेक को पसन्द किया। तब माता कैकेयी की प्रसन्नता के लिए पिता की आज्ञा ले, राम-चन्द्रजी अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ चित्रकूट पर्वत पर चले गये और वहीं मुनिवेष धारण करके उन्होंने कुछ काल तक निवास किया।

इधर भरतजी पिता के मरने का समाचार सुनकर अपने नाना के घर से अयोध्या आये। यहाँ उन्हें मालूम हुआ कि पिताजी 'हा राम! हा राम!!' की रट लगाते हुए परलोकवासी हुए हैं, तब भरत ने कैकेयी को धिक्कार देकर श्रीरामचन्द्र जी को लौटा लाने के लिये वनको प्रस्थान किया, भरतजी के साथ माताएँ, गुरु वसिष्ठजी, महाराज जनकजी, छोटे भाई शत्रुघ्न एवं सभी राज्यमंत्री भी चित्रकूट पहुँचे और धर्म के शाश्वत स्तम्भ श्रीरामचन्द्रजी को अपने साथ अयोध्या चलने के लिये अनुरोध करते रहे, किन्तु भरत-प्राणाधार श्रीराम की प्रतिज्ञापूर्ति के दृढ़ निश्चय

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को समझकर उनके कुलगुरु महात्मा वसिष्ठजी ने भरतजी को एकान्त में ले जाकर उनके सम्मुख गुप्त रहस्य बतलाते हुए कहा—

रामो नारायणः साक्षाद् ब्रह्मणा याचितः पुरा ।
रावणस्य वधार्थाय जातो दशरथात्मजः ।।
योगमायापि सीतेति जाता जनकनन्दिनी ।
शेषोऽपि लक्ष्मणो जातो राममन्वेति सर्वदा ।।
रावणं हन्तुकामास्ते गमिष्यन्ति न संशयः ।
कैकेय्या वरदानादि यद् यन्निष्ठुरभाषणम् ।।
सर्वं देवकृतं नो चेदेवं साभाषयेत् कथम् ।
तस्मात्त्यजाग्रहं तात रामस्य विनिवर्तने ।।

(अध्यात्म रामायण २।९।४३-४६)

'भगवान् राम साक्षात् नारायण हैं। पूर्वकाल में ब्रह्माजी के प्रार्थना करने पर उन्होंने रावण को मारने के लिये दशरथ के यहाँ पुत्ररूप में जन्म लिया है। इसी प्रकार योगमाया ने जनकनन्दिनी सीता के रूप से अवतार लिया है। शेषजी लक्ष्मण रूप से उत्पन्न होकर सदा उनका अनुगमन कर रहे हैं। वे रावण को मारना चाहते हैं, इसलिये निस्संदेह वन को जायेंगे। कैकेयी के जो कुछ भी वरदान माँगना और निष्ठुर भाषण आदि कार्य हैं, वे सब देवताओं की प्रेरणा से ही हुए हैं, नहीं तो वह ऐसे वचन कैसे बोल सकती थी। इसलिये, हे ! तात तुम राम को लौटाने का आग्रह छोड़ दो।'

अन्ततः भरतजी भगवान् राम की आज्ञा मानकर श्रीरामजी की चरण-पादुका राज्यसिंहासन पर स्थापित कर राज्य चलाने की अनुमति पाकर अयोध्या को लौट आये।

श्रीराम क्रमशः अत्रि, सुतीक्ष्ण तथा अगस्त्य के आश्रमों पर गये। इन सब स्थानों में बारह वर्ष बिताकर श्रीरघुनाथजी भाई लक्ष्मण और पत्नी के साथ पञ्चवटी में गये और वहाँ रहने लगे। जनस्थान में शूर्पणखा नामकी राक्षसी रहती थी।

एक दिन की बात है। श्रीराम लक्ष्मण और सीता सहित पुण्यतोया गोदावरी में स्नान कर लौटे और पूर्वाह्ण काल के होम, पूजा आदि कार्य पूर्ण कर अपनी पर्णशाला में बैठे ही थे। उसी समय लंकाधिपति रावण की दुराचारिणी बहिन शूर्पणखा दण्डकारण्य में घूमती हुई वहाँ आ पहुँची। उसने श्रीराम के लोकोत्तर सौन्दर्य को देखा तो चकित हो गयी। कामासक्त होकर निर्लज्ज शूर्पणखा ने परम-प्रभु श्रीराम से उनकी पत्नी बनने का प्रस्ताव कर दिया। श्रीराम ने उसे सुमित्रा-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुमार के पास भेज दिया; किन्तु मूर्खा शूर्पणखा को व्यङ्गपूर्वक श्रीलक्ष्मण ने पुनः प्रभु श्रीराम के पास भेजा। भैरववादिनी विकराल शूर्पणखा साक्षात् मृत्यु की भाँति सुकुमारी सीता को खाने के लिये दौड़ी। भगवान् श्रीराम ने हुँकार से उसे रोक कर क्रोधपूर्वक लक्ष्मण से कहा—

क्रूरैरनार्यैः सौमित्र परिहासः कथंचन।
न कार्यः पश्य वैदेहीं कथंचित् सौम्य जीवतीम्॥

(वाल्मीकि रामायण ३।१८-१९)

'सुमित्रानन्दन! क्रूर कर्म करने वाले अनार्यों से किसी प्रकार का परिहास भी नहीं करना चाहिये। सौम्य! देखो न, इस समय सीता के प्राण किसी प्रकार बड़ी मुश्किल से बचे हैं।'

परमश्रद्धेय श्रीराम के वचन सुनकर लक्ष्मण अत्यन्त क्रुद्ध हो गये और उन्होंने तलवार से शूर्पणखा के नाक-कान काटकर उसे विकृत बना दिया।

तब उस राक्षसी से प्रेरित होकर युद्ध के लिये आये हुए चौदह हजार राक्षसों सहित खर, दूषण और त्रिशिरा को श्रीरामचन्द्रजी ने नष्ट कर दिया। यह समाचार सुनकर राक्षसों का राजा रावण वहाँ आया। उसने मारीच को सुवर्णमय मृग के रूप में दिखाकर उसके पीछे दोनों भाइयों को आश्रम से दूर हटा दिया और सीता को हर लिया। उस समय जटायु ने उसका मार्ग रोका; परन्तु उसको मार कर सीता को लंका में ले गया। दोनों भाई श्रीराम और लक्ष्मण जब लौट कर आश्रम पर आये तो सीता का हरण हो चुका था। अब वे सब ओर उसकी खोज करने लगे। मार्ग में जटायु को पड़ा देखा। उसके मरने पर दोनों भाइयों ने उसका दाह-संस्कार किया। फिर कबन्ध को मारकर शबरी पर कृपा की। वहाँ से ऋष्यमूक पर्वत पर आये। तत्पश्चात् हनुमानजी के कहने से अपने मित्र वानरराज सुग्रीव के शत्रु वालि का वध करके श्रीराम ने सुग्रीव को वानरों का राजा बनाया। फिर सुग्रीव की आज्ञा से सीता की खोज के लिये सब ओर वानर गये। हनुमान आदि वानर सीता को ढूँढते हुये दक्षिण समुद्र के तट पर गये। वहाँ सम्पाति के कहने के उन्हें यह निश्चय हो गया कि सीताजी लंका में है।

तदनन्तर अकेले हनुमानजी दूसरे तट पर बसी हुई लंकापुरी में गये और वहाँ रामप्रिया सती सीता को उन्होंने देखा तथा रामचन्द्रजी की अगूँठी उन्हें देकर अपने प्रति उनके मन में विश्वास उत्पन्न किया, फिर उन दोनों भाइयों का कुशल-समाचार सुनाकर उनसे चूड़ामणि प्राप्त की। तदनन्तर अशोक-वाटिका को उजाड़ कर सेना सहित अक्षयकुमार को मारा और मेघनाद के बन्धन में आकर रावण से वार्तालाप किया और सीता की आज्ञा ले समुद्र लाँघकर श्रीरामचन्द्रजी से उनका समाचार निवेदन किया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सीता राक्षसराज रावण के निवास स्थान में रहती है—यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजी भी वानर-सेना के साथ समुद्र के तट पर पहुँचे। फिर समुद्र की अनुमति लेकर उन्होंने महासागर पर पर्वतीय शिलाखण्डों से पुल बाँधा और उसके द्वारा दूसरे तट पर पहुँच कर छावनी डाली।

तदनन्तर अपने छोटे भाई विभीषण के समझाने पर भी रावण को यह बात नहीं रुची कि सीता अपने पति को दे दी जाय। रावण ने विभीषण को लात से मारा और विभीषण राम की शरण में चले गये। तब श्रीरामचन्द्रजी ने लंका को चारों ओर से घेर लिया। तदनन्तर रावण ने क्रमशः अपने मन्त्रियों, अमात्यों, पुत्रों और सेवकों को युद्ध के लिये भेजा; किन्तु वे सब श्रीराम-लक्ष्मण तथा कपीश्वरों द्वारा नष्ट कर दिये गये। लक्ष्मण ने इन्द्रविजयी मेघनाद को तीखे बाणों से मार डाला। धर्ममूर्ति श्री राम के साथ युद्ध में सभी बड़े-बड़े वीर और बन्धु-बान्धवगण मार डाले गये। तब निराश होकर उसने अपने भाई कुम्भकर्ण को जगाया और उसके सम्मुख अपनी समस्त संकटापन्न स्थिति स्पष्ट की तथा उससे त्राण दिलाने की बात कही। रावण की बात सुनकर कुम्भकर्ण बहुत जोर से हँसा और कहा—"राजन्! आपने जब पहले सब से सलाह ली थी, तब उस समय मैंने जो बात आप से कही थी, वही पाप का फल आज उपस्थित हो गया है। मैंने तो आप से पहले ही कहा था कि श्रीराम साक्षात् परब्रह्म नारायण हैं और सीता योग माया हैं; किंतु आप तो समझाने पर भी नहीं समझ रहे थे।' (अध्यात्म रामायण ६।७।५७-५८)

इतना ही नहीं, कुम्भकर्ण ने अत्यन्त आदर और प्रीति के साथ रावण को श्रीराम की भक्ति करने की प्रेरणा दी। उनका भजन कर जीवन सफल बनाने का सदुपदेश देते हुए उसने अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक कहा—

अवताराः सुबहवो विष्णुर्लीलानुकारिणः।
तेषां सहस्रसदृशो रामो ज्ञानमयः शिवः॥
राम भजन्ति निपुणा मनसा वचसानिशम्।
अनायासेन संसारं तीर्त्वा यान्ति हरेः पदम्॥

(अध्यात्म रामायण ६।७।६८-६९)

'भगवान् विष्णु के अनेक अवतार हुए हैं और उन सभी ने भगवान् विष्णु की लीलाओं के अनुसार ही लीला की थी; किन्तु यह शिवस्वरूप ज्ञानमय रामावतार वैसे एक सहस्र अवतारों के समान है। जो चतुर लोग रात-दिन मन और वचन से भगवान् राम का भजन करते हैं, वे बिना प्रयास ही संसार को पार कर श्रीहरि के धाम को जाते हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रावण ने अत्यन्त कुपित होकर कुम्भकर्ण से कहा—'मैंने तुम्हें ज्ञानोपदेश के लिये जगाकर नहीं बुलाया है। या तो मेरी बात मानकर युद्ध करो, अन्यथा जाकर सोओ। तुम्हें नींद सता रही होगी।'

रावण को रुष्ट जानकर उसी का पक्ष लेकर महाकाय कुम्भकर्ण युद्ध के लिये चला गया और वहाँ भगवान् श्रीराम से घोर युद्ध करते हुए श्रीराम के द्वारा युद्ध में मारा गया। जब कुम्भकर्ण के मरने का समाचार मिला तो रावण अपने शेष समस्त दल - बल सहित युद्ध करने आया। वह भी भगवान् श्रीराम के बाण द्वारा मारा गया।

उसी समय रावण की पत्नियाँ वहाँ आकर विलाप करने लगीं। विभीषण रावण के क्रूर कर्मों का स्मरण कर उसके निष्प्राण शरीर को घृणा की दृष्टि से देख रहे थे। उस समय सर्व सुहृद् करुणामय श्रीराम ने विभीषण को रोती-कलपती स्त्रियों को धैर्य बँधाने का आदेश देते हुये अत्यन्त शान्तिपूर्वक कहा—

मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम्।
क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव॥

(वाल्मीकि रामायण ६।१११।१००-१०१)

'वैर मरने तक ही रहता है। मरने के बाद उसका अन्त हो जाता है। अब हमारा प्रयोजन भी सिद्ध हो चुका है, अतः इस समय जैसे यह तुम्हारा भाई है वैसा ही मेरा भी है, इसलिए इसका दाह-संस्कार करो।'

विभीषण ने रावण की अन्त्येष्टि की, जलाञ्जलि देने के अनन्तर उसे पृथिवी पर सिर रखकर प्रणाम किया तथा रावण-पत्नियों को अनेक प्रकार के मधुर वचनों से धैर्य बँधाया।

इसके पश्चात् श्रीराम ने अपनी प्रियतमा सीता की अग्नि परीक्षा ली और विभीषण को राक्षसों का आधिपत्य, लंका तथा एक कल्प की आयु देकर अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करके सुग्रीव और विभीषण के साथ पुष्पक विमान द्वारा अयोध्या को प्रस्थान किया। भरतजी नन्दिग्राम में रहते थे। उन्हें साथ लेकर श्रीरामचन्द्रजी अयोध्या में गये। फिर चारों भाइयों ने अपनी सब माताओं को प्रणाम किया। तदनन्तर पुरोहित वसिष्ठजी की आज्ञा लेकर भाइयों ने श्रीराम का राजा के पद पर अभिषेक किया। भगवान् श्रीरामजी प्रजा का औरस पुत्र की भाँति पालन करने लगे। धर्म के ज्ञाता श्रीराम ने लोक निन्दा से डर कर सीतादेवी को त्याग दिया। गर्भवती सीता वाल्मीकि मुनि के आश्रम पर जाकर सुख से रहने लगीं। वहाँ उन्होंने दो पुत्र उत्पन्न किये, जिनके नाम कुश और लव थे। महर्षि वाल्मीकि ने उन दोनों के जातकर्म आदि संस्कार शास्त्रोक्त विधि से किये। उन उदारबुद्धि महर्षि ने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रामायण महाकाव्य की रचना करके उन दोनों बालकों को पढ़ाया। वे दोनों बालक मुनियों के यज्ञों में रामायण का गान करते थे। इसके कारण उनकी सर्वत्र ख्याति फैल गयी।

एक समय श्रीरामचन्द्रजी का अश्वमेध यज्ञ प्रारम्भ होने पर वे दोनों भाई कुश और लव उस यज्ञ में गये। वहाँ उन दोनों के मुख से अपने चरित्र का गान सुन कर श्रीरामचन्द्रजी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने यज्ञसभा में सीता के साथ महर्षि वाल्मीकि को बुलवाया। जगदम्बा सीता ने वहाँ आकर अपने दोनों पुत्र श्रीरामचंद्रजी को सौंप दिये और सम्पूर्ण सभासदों, ऋषियों, महर्षियों, राजाओं एवं विद्वानों तथा जन-समुदाय के सम्मुख हाथ जोड़े, दृष्टि नीची किये सतीत्व की परमोज्ज्वल दिव्यमूर्ति सीता ने कहा—

रामादन्यं यथाहं वैमनसापि न चिन्तये।
तथा मे धरणी देवी विवरं दातुमर्हति॥

(अध्यात्म रामायण ७।७।४०)

'यदि मैं भगवान् राम के अतिरिक्त अन्य पुरुष का मन से चिन्तन नहीं करती तो पृथिवी देवी मुझे अपने अन्दर स्थान दें।'

उसी क्षण पृथ्वी फटी और सबके सम्मुख एक अद्भुत एवं दिव्य सिंहासन पर, जिसे महापराक्रमी नागों ने धारण कर रखा था, पृथ्वी की अधिष्ठात्री देवी भी दिव्यरूप में प्रकट हुईं और अपनी प्राण प्रिया पुत्री सीता को अत्यन्त प्यार से गोद में ले लिया। जानकी रसातल में प्रविष्ट हो गयीं। उनके ऊपर दिव्यतम-सुमन-वृष्टि होने लगी।

प्रजापालक मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम के नेत्र भर आये। उन्होंने रोते हुए अपने दोनों बालकों को हृदय से लगा लिया और अपनी पर्णशाला की ओर ले चले। साक्षात् धर्ममूर्ति सीता के पाताल प्रवेश से श्रीराम का जीवन सूना प्रतीत होने लगा। यज्ञ-कार्य सम्पन्न होने पर श्रीराम ने अयोध्या में प्रवेश किया। तब से श्रीरामचन्द्रजी केवल ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए इस पृथ्वी पर यज्ञानुष्ठान में ही लगे रहे।

दीर्घकाल होने पर पुत्र-पौत्रों से घिरी माता कौशल्या ने कालधर्म के अनुसार अपना शरीर त्याग दिया। सुमित्रा और कैकेयी ने भी उनका अनुसरण किया। वे तीनों महामहिमामयी देवियाँ परलोक में अपने पति दशरथजी से मिलकर प्रसन्न हो गईं।

तदनन्तर एक समय काल और दुर्वासा मुनि श्रीरामचन्द्रजी के पास आये। भद्रे! काल को ब्रह्माजी ने भेजा था और वे श्रीराम से वैकुण्ठधाम में पधारने के लिये प्रार्थना करने आये थे। उन्होंने एकान्त में आकर श्रीराम से कहा—'इस समय

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कोई भी यहाँ न आये। यदि कोई आये तो आप उसका वध कर डालें।' श्रीराम ने ऐसा करने की प्रतिज्ञा की। तत्पश्चात् रघुनाथजी ने लक्ष्मण को बुलाकर कहा—'तुम यहाँ द्वार पर खड़े रहो। किसी को भीतर न आने देना। यदि कोई भीतर प्रवेश करेगा तो वह मेरा वध्य होगा।' तब लक्ष्मण 'बहुत अच्छा' कहकर श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा के पालन में लग गये। इतने में ही दुर्वासा राजद्वार पर लक्ष्मण के समीप आये। उन्हें आया देखकर लक्ष्मण ने प्रणाम करके कहा—'भगवान्! दो घड़ी प्रतीक्षा कीजिये। इस समय श्रीरघुनाथजी मन्त्रणा में लगे हैं।' उन्होंने लक्ष्मण की बात सुनकर उनसे क्रोधपूर्वक कहा—'मुझे भीतर जाने दो, नहीं तो मैं अभी तुम्हें भस्म कर दूँगा।' दुर्वासा का वचन सुनकर लक्ष्मणजी घबरा गये वे मुनि से भयभीत हो अपने बड़े भाई को उनके आगमन की सूचना देने के लिए स्वयं भीतर चले गये। लक्ष्मण को आया देखकर कालदेव उठे। उनकी मन्त्रणा पूरी ही चुकी थी। वे श्रीराम से बोले—'आप अपनी प्रतिज्ञा का पालन कीजिये।' ऐसा कहकर श्रीराम से विदा ले वे चले गये। तब धर्मात्माओं में श्रेष्ठ भगवान् श्रीराम राजभवन से निकले और दुर्वासा मुनि को संतुष्ट करके उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें भोजन कराया। भोजन कराकर उन्हें प्रणाम किया और विदा करके लक्ष्मण से कहा—'भैया लक्ष्मण! धर्म के कारण बड़ा भारी संकट आ गया। क्योंकि तुम मेरे वध्य हो गये। दैव प्रबल है। मैंने तुझे त्याग दिया। (यही तुम्हारा वध है।') अब तुम जहाँ चाहो, चले जाओ।' तब सत्य-धर्म में स्थित रहने वाले श्रीराम को प्रणाम करके लक्ष्मणजी दक्षिण दिशा में जाकर एक पर्वत के ऊपर तपस्या करने लगे। तदनन्तर भगवान् श्रीराम भी ब्रह्माजी की प्रार्थना से साकेतधाम और कौसल-प्रान्त के समस्त प्राणियों के साथ शान्तभाव से अपने परमधाम को चले गये। उस समय सरयू के गोप्रतार घाट में श्रीराम का चिन्तन करके जिन लोगों ने गोता लगाया, वे दिव्य शरीर धारण करके योगि-दुर्लभ श्रीराम-धाम में चले गये। लक्ष्मण जी कुछ काल तक तप में लगे रहे; फिर तपस्या एवं योगबल से युक्त हो श्रीराम का अनुगमन करते हुए अविनाशी धाम में प्रवेश कर गये।

भगवान् श्रीराम ने विष्णु स्वरूप में परिवर्तित होकर ब्रह्माजी से कहा—पितामह! यह सम्पूर्ण विशाल जीव, जन-समुदाय मेरे स्नेहवश मेरे पीछे-पीछे आया है। ये सभी यशस्वी और मेरे भक्त हैं। मेरे लिये समस्त लौकिक सुखों का परित्याग करने वाले ये सर्वथा मेरे अनुग्रह के पात्र हैं। ब्रह्माजी ने श्रीभगवान् को उत्तर दिया—

यच्च तिर्यग्गतं किंचित् त्वामेवमनुचिन्तयत्।
प्राणांस्त्यक्ष्यति भक्त्या तत् संतानेषु निवत्स्यति॥
सर्वे ब्रह्मगुणैर्युक्ते ब्रह्मलोकादनन्तरे।

(वाल्मीकि रामायण ७।११०।१९-२०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'पशु-पक्षियों की योनि में पड़े हुए जीवों में से जो कोई आपका ही भक्तिभाव से चिन्तन करता हुआ प्राणों का परित्याग करेगा, वह भी संतानक-लोकों में ही निवास करेगा। यह सन्तानक-लोक ब्रह्मलोक (साकेत) के ही निकट है। यह ब्रह्म के सत्यसंकल्पत्व आदि उत्तम गुणों से युक्त सभी है। उसी में ये आपके भक्तजन निवास करेंगे।'

(वाल्मीकि रामायण, अध्यात्मरामायण के आधार से)

परम दयामूर्ति भगवान् श्रीरामजी के चरणों में परम श्रद्धा-भक्तिपूर्वक बारम्बार प्रणाम।

●

भगवान् श्रीकृष्ण (२२)

सोपान ७

नमस्ते वासुदेवाय, नमः सङ्कर्षणाय च।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय, सात्वतां पतये नमः॥

(श्रीमद्भागवत १०।४०।२१)

'अपने भक्त वैष्णवजन तथा यदुवंश के स्वामी, वासुदेव, संकर्षण (बलराम), प्रद्युम्न (श्रीकृष्ण के पुत्र) तथा अनिरुद्ध (श्रीकृष्ण के पौत्र) के रूप में चतुर्व्यूह रूप से प्रकट होने वाले, हे प्रभो! मैं आपको प्रणाम करता हूँ।'

द्वापर युग के समय की बात है। दैत्यों के अत्याचारों से पीड़ित पृथ्वी दुःख से अत्यन्त व्याकुल होकर गौ का रूप धारण कर रोती हुई ब्रह्माजी के पास पहुँची और अत्यन्त करुण वाणी में निवेदन किया—'पितामह! पूर्वकाल में देवासुर-संग्राम के समय जो-जो दैत्य और असुर मारे गये थे, वे अब सभी कंस आदि के रूप में उत्पन्न हुये हैं। देव! उनके क्रूरकर्मों के भार से मैं अत्यन्त दुःखी हूँ। मेरे इस कष्ट को दूर करने का आप उपाय करें।'

पृथ्वी को आश्वस्त करते हुए पितामह भगवान् शंकर एवं अन्य देवताओं को साथ लेकर क्षीर सागर के तट पर पहुँचे और लोकस्रष्टा ब्रह्माजी ने अपनी भक्ति के प्रभाव द्वारा शयन करते हुए भगवान् विष्णु को जगाया और अत्यन्त श्रद्धाभक्ति से उनकी पूजा की तथा हाथ जोड़ कर उनकी स्तुति की।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नमामि देवं नरनाथमच्युतं नारायणं लोकगुरुं सनातनम् ।
अनादिमव्यक्तमचिन्त्यमव्ययं वेदान्तवेद्यं पुरुषोत्तमं हरिम् ।।
आनंदरूपं परमं परात्परं चिदात्मकं ज्ञानवतां परां गतिम् ।
सर्वात्मकं सर्वगतैकरूपं ध्येयस्वरूपं प्रणमामि माधवम् ।।
हत्वासुरान् पाति युगे युगे सुरान् स्वधर्मसंस्थान् भुवि संस्थितो हरि ।
करोति सृष्टिं जगतः क्षयं यस्तं वासुदेवं प्रणतोऽस्मि केशवम् ।।
(नरसिंह पुराण ५३।११-१२, १६)

'मैं सम्पूर्ण जीवों के स्वामी भगवान् अच्युत को, सनातन लोक गुरु भगवान् नारायण को नमस्कार करता हूँ, जो अनादि अव्यक्त, अचिन्त्य और अविनाशी हैं, उन वेदान्त वेद्य पुरुषोत्तम श्रीहरि को प्रणाम करता हूँ। जो भगवान् प्रत्येक युग में पृथ्वी पर अवतार ले देवद्रोही दानवों का वध करके अपने धर्म में स्थित देवताओं की रक्षा करते हैं तथा जो इस जगत् की सृष्टि एवं संहार करते हैं, उन सर्वान्तर्यामी भगवान् केशव को प्रणाम करता हूँ।'

भगवान् विष्णो ! जिस प्रकार (पूर्व काल में) वराह, नृसिंह आदि रूपों में देवताओं का हित किया है, उसी प्रकार आज भी प्रसन्न होकर पृथ्वी का भार दूर करें। देव ! आपको सादर नमस्कार हैं।

पद्मयोनि की उपर्युक्त स्तुति से प्रसन्न होकर शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये नवनीरदवपु सर्वेश्वर भगवान् विष्णु प्रकट हो गये और उन्होंने कहा—पितामह ! देवताओ ! मैं तुम्हारी इस स्तुति से बहुत ही प्रसन्न हूँ। देवगण ! यह स्तोत्र पाठ करने वाले के समग्र पापों को नष्ट कर देने की सामर्थ्य रखता है। यद्यपि मैं श्री हरि के रूप में भक्तिमान् पुरुष को भी कठिनता से प्राप्त होता हूँ, तथापि इस स्तोत्र के प्रभाव से मैं प्रत्यक्ष प्रकट हो गया हूँ। आप लोग अपना मनोरथ कहें। (यह पूर्ण स्तोत्र नरसिंह पुराण अध्याय ५३ में प्राप्य है।)

ब्रह्माजी ने कहा—'करुणा सिन्धु ! पुरुषोत्तम ! पृथ्वी असुरों के अत्याचारों से अत्यन्त पीड़ित और भयभीत है। आप वसुधा का भार उतार कर इस कष्ट को दूर करें। हमारे सबके उपस्थित होने का यही कारण है।'

भगवान् ने कहा—'आप सब लोग अपने-अपने स्थान को लौट जाइये। मेरी गौर और श्याम-दो शक्तियाँ वसुदेव की पत्नी देवकी के गर्भ से अवतरित होकर दैत्यों को निर्मूल कर पृथ्वी पर धर्म की स्थापना करेंगी। पृथ्वी का यह कष्ट दूर हो जायेगा।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीभगवान् के आश्वासन द्वारा प्रसन्न होकर सब देवताओं ने प्रणाम किया और अपने-अपने स्थान को लौट गये।

× × ×

देवमीढ यदुवंशी के श्रेष्ठ धर्मज्ञ पुत्र वसुदेव का विवाह कंस के पिता उग्रसेन के छोटे भाई देवक की परम सुन्दरी पुत्री देवकी के साथ हुआ। विवाह के पश्चात् अपनी चचेरी बहन देवकी को महाबली शूरवीर कंस अत्यन्त स्नेहवश रथ में सवार कराकर स्वयं रथ हाँकता हुआ विदा करने जा रहा था। उसी समय आकाश-वाणी हुई—'कंस! जिस देवकी को तुम परमोत्साह से विदा कर रहे हो, इसी के गर्भ से उत्पन्न आठवें पुत्र के हाथ से तुम्हारी मृत्यु होगी।' आकाशवाणी सुन कर मृत्यु के भय से डरकर उसी समय देवकी को मार डालने के लिए उद्यत हो गया। कंस को ऐसे क्रूर पाप कर्म करने में कभी लज्जा नहीं आती थी।

देवमीढ के यशस्वी कुमार वसुदेव ने कहा—'आप इस बात से ही क्यों भय-भीत हो रहे हो? इसके जो भी सन्तान होगी उसे उत्पन्न होते ही मैं आप को दे दूँगा। आप विवाह जैसे सुमाङ्गलिक अवसर पर स्त्री जाति, अपनी बहन की हत्या करके अत्यन्त पाप एवं कलङ्क की बात न करें। आप मुझ पर विश्वास करें।'

कंस ने वसुदेवजी की सत्यता पर विश्वास किया। वसुदेवजी के कहने पर देवकी के मारने का विचार छोड़ दिया; किन्तु उसने देवकी और वसुदेव को विदा नहीं किया और अपने ही महलों में सुविधा युक्त प्रबन्ध के साथ रहने की व्यवस्था कर दी। कुछ समय पश्चात् उनको हथकड़ी-बेड़ी लगाकर बंदी-गृह में रख दिया। बन्दी-गृह में उत्पन्न छह पुत्रों को उनके उत्पन्न होते ही कस ने लेकर मार डाला। सातवाँ गर्भ अनन्त के अंश से प्रकट हुआ। उसके कुछ दिन गर्भ में रहने पर ही भगवती योगमाया ने उसको देवकी के गर्भ से खींचकर रोहिणी के उदर में स्थापित कर दिया। गर्भ का संकर्षण होने से (खींचने से) उस बालक का जन्म हुआ, इसलिये वह 'संकर्षण' नाम से विख्यात हुआ।

महाभागा देवकी के आठवें गर्भ में साक्षात् श्रीहरि पधारे। देवकी के अङ्ग-प्रत्यङ्ग में अलौकिक तेज प्रकट होने लगा। उसे देखकर कंस अत्यन्त भयभीत और सावधान होकर भगवान् के जन्म की प्रतीक्षा करने लगा। प्राण के मोह और मृत्यु-भय से वह पागलों की सी चेष्टा करने लगा।

आसीनः संविशंस्तिष्ठन् भुञ्जानः पर्यटन् महीम्।
चिन्तयानो हृषीकेशमपश्यत् तन्मयं जगत्॥

(श्रीमद्भागवत १०।२।२४)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'वह (कंस) उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते और चलते-फिरते सर्वदा ही श्रीकृष्ण के चिन्तन में लगा रहता। जहाँ भी उसकी दृष्टि जाती, जहाँ कुछ खड़का होता, वहाँ उसे श्रीकृष्ण ही दीख पड़ते। इस प्रकार उसको सारा जगत् ही श्रीकृष्णमय दिखाई देने लगा।'

धीरे-धीरे श्री भगवान् हरि के प्रकट होने की अत्यन्त शुभवेला आयी। साक्षात् ब्रह्माजी और नारदजी सुर-समुदाय के साथ वंदीगृह में पहुँचे और परम प्रभु का स्तवन कर विदा हो गये।

भाद्रपद मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि। रोहिणी नक्षत्र। अर्द्ध रात्रि की मनोरम वेला। आकाश में सजल घन मन्द-मन्द गर्जन करते हुए हर्ष व्यक्त कर रहे थे। अत्यन्त सुन्दर सुखद मन्द समीर वह रहा था और पृथ्वी का परम पुण्य और भाग्य उदय हुआ। निखिल सृष्टि के स्वामी गौ, ब्राह्मण एवं सन्तों के प्रतिपालक, धर्मप्राण जगत्पति चतुर्भुज रूप में वसुदेव-देवकी के सम्मुख प्रकट हुए। वन्दीगृह धन्यातिधन्य होता हुआ उद्भासित हो उठा। वसुदेव-देवकी के समस्त दुःख, उनकी सब कठिनता व यातनाएँ सर्वदा के लिये दूर हो गईं। वसुदेव जी के पुत्र होने से वे सनातन भगवान् 'वासुदेव' कहलाये।

वसुदेवजी ने गद्‌गद् कंठ से श्रीभगवान् हरि की स्तुति करके कहा—

जातोऽसि देवदेवेश शङ्खचक्रगदाधरम्।
दिव्यरूपमिदं देव प्रसादेनोपसंहर॥
अद्यैव देव कंसोऽयं कुरुते मम घातनम्।
अवतीर्णं इति ज्ञात्वा त्वमस्मिन्मम मन्दिरे॥

(विष्णु पुराण ५।३।१०-११)

'देवदेवेश्वर! यद्यपि आप (साक्षात् परमेश्वर) प्रकट हुए हैं, तथापि देव! कृपापूर्वक अब अपने इस शङ्ख-चक्र-गदाधारी दिव्य रूप का उपसंहार कीजिये। देव! यह पता लगते ही कि आप मेरे इस गृह में अवतीर्ण हुए हैं, कंस इसी समय मेरा वध कर देगा।'

महाभागा देवकी ने भी विश्वात्मा प्रभु की स्तुति की; किन्तु कंस से भयभीत होने के कारण उन्होंने भी निवेदन किया।

उपसंहर विश्वात्मन्नदो रूपमलौकिकम्।
शङ्खचक्रगदापद्मश्रिया जुष्टं चतुर्भुजम्॥

(श्रीमद्भागवत १०।३।३०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'विश्वात्मन् ! आपका यह रूप अलौकिक है। आप शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म की शोभा से युक्त अपना यह चतुर्भुज रूप छिपा लीजिये।'

श्री भगवान् ने माता देवकी को कहा—'माता ! स्वायम्भुव मन्वन्तर की बात है। तुम लोगों ने मुझ में मन लगाकर देवताओं के बारह हजार वर्षों तक कठोर तप किया और मेरा दर्शन होने पर मुझ—जैसे पुत्र की कामना व्यक्त की। फलस्वरूप मैं पृश्निगर्भ के नाम से तुम दोनों का पुत्र हुआ। दूसरे जन्म में तुम अदिति और वसुदेवजी कश्यप हुए। उस समय मैं 'उपेन्द्र' नामक तुम लोगों का पुत्र हुआ। शरीर छोटा होने से मुझे वामन भी कहते थे। तीसरे जन्म में अब मैं तुम्हारा पुत्र हुआ हूँ। अब वात्सल्य युक्त चिन्तन से तुम दोनों को मेरे परमपद की प्राप्ति होगी।'

इतना कहकर सनातन पुरुष भगवान् उसी समय द्विभुज रूप धारण कर नवजात शिशु बन गये। समस्त पहरेदार भगवान् की माया से मोहित होकर और नशे में हो रहे की भाँति सो गये। यह सुअवसर देखकर वसुदेवजी भगवान् की प्रेरणा से अपने नवजात शिशु (पुत्र) को एक टोकरी में सुलाकर अपने मस्तक पर रखकर बंदी गृह से बाहर निकल पड़े। बाहर वर्षा हो रही थी भगवान् शेषनाग प्रभु पर अपने फनों की छाया कर रक्षा के लिए पीछे-पीछे चलने लगे। अगाध जल से उफन रही यमुनाजी का जल वसुदेव जी के जल में पैर रखते ही इतना कम हो गया कि वसुदेव जी सानन्द यमुना पार कर गोकुल ग्राम पहुँच गये। वहाँ योगमाया की कृपा से सभी लोग प्रगाढ़ निद्रा में सोये हुए थे। वसुदेवजी ने अपने पुत्र को नन्द-पत्नी यशोदा के पास में सुला दिया। कुछ ही समय पूर्व उन्हें एक कन्या उत्पन्न हुई थी; किन्तु माया से मोहित एवं तमोगुण से आच्छादित हुई वे प्रगाढ़ निद्रा में सोई हुई थीं। वसुदेवजी उनकी कन्या जो यशोदा के पास सोई हुई थी, को लेकर लौट आये और बन्दीगृह में प्रवेश कर अपने हाथ पैरों में बेड़ी-हथकड़ी डाल कर पूर्ववत् बंदी हो गये।

नवजात शिशु का रुदन सुनकर पहरेदार कंस के पास पहुँचे। बालक होने का समाचार सुनते ही कंस दौड़ा उसने प्रसूति-गृह में पहुँचकर कन्या को देवकी के हाथों में से छीन लिया। उस नवजात कन्या को पत्थर की शिला पर पटकने के लिये घुमाया, उसी समय कंस के हाथों में से छूट कर वह कन्या आकाश में सायुधाभरण अष्टभुजा होकर खड़ी दिखाई दी। उसने कहा—'मूर्ख ! तुझे मारने वाला तेरा शत्रु प्रकट हो चुका है। देवताओं के सर्वस्व वे हरि ही तुम्हारे पूर्वजन्म में काल थे, इसी प्रकार से समझ कर तू शीघ्र अपने कल्याण का उपाय कर।'

वे प्रकाश स्वरूपा अष्टभुजाधारी भगवती सम्पूर्ण आकाश मण्डल को प्रकाशित करती हुई अन्तर्धान हो गयीं। खिन्नचित्त कंस ने लौट कर वसुदेव और देवकी को

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बन्धन मुक्त कर दिया। दूसरे दिन कंस ने अपने मन्त्रियों को बुलाकर मन्त्रणा की असुर मन्त्रियों ने नवजात शिशुओं, ऋषियों, गायों एवं ब्राह्मणों आदि को मार डालने की सलाह दी।

उधर गोकुल ग्राम के आनन्द का क्या कहना! जहाँ नन्द बाबा के घर पुत्र-रत्न का जन्म हुआ। मैया यशोदा की गोद में सच्चिदानन्द घनश्याम स्वयं भगवान् आगये। सर्वत्रमङ्गलगीत-वाद्य, उत्सव, दान, धर्म होने लगे। आनन्द ही मूर्त्तरूप होकर आनन्दपूर्वक नर्तन कर रहा था। जातकर्म-संस्कार कराया गया। देवता और पितरों की विधिवत् पूजा हुई। गौएँ, गोप और गोपियाँ सभी सजधज कर सोल्लास, सानन्द उत्सव मना रहे थे। जैसे पृथ्वी पर स्वर्ग ही उतर आया हो। भगवान् श्री कृष्ण के पधारने से व्रज लक्ष्मी जी का क्रीड़ा-क्षेत्र ही हो गया।

कुछ दिनों के पश्चात् नन्द बाबा कंस का कर चुकाने के लिये मथुरा गये। संवाद मिलते ही वसुदेवजी उनसे बड़े प्रेम से मिले। उन्होंने रोहिणी और अपने पुत्र सहित व्रज के कुशल-क्षेम समाचार पूछकर नन्दजी से कहा—कंस का कर चुका देने के अनन्तर आप शीघ्रतापूर्वक व्रज में लौट जायँ, क्योंकि वहाँ आजकल कुछ न कुछ उपद्रव होते ही रहते हैं। वसुदेवजी के परामर्शानुसार नन्दजी व्रज के लिए तुरन्त चल पड़े।

गोकुल में कंस की आज्ञा का पालन करने के लिए पूतना नामक राक्षसी अपने स्तनों में महाविष लगाये हुए घूम रही थी। वह जिस बच्चे को अपना स्तन पान कराती थी, वह तत्काल ही काल के गाल में चला जाता था। वह क्रूर राक्षसी पूतना अत्यन्त मनोहारी वेष बनाये हुए नन्द बाबा के घर पहुँची। पहुँचते ही वह नन्दलाल को गोद में लेकर अपना महाविष लगाया हुआ स्तन पान कराने लगी। श्रीकृष्ण ने उसका स्तन मुख में लेते ही इस प्रकार दबाया कि उसके प्राण ही निकल गये और वह महाभयंकर शब्द करती हुई विकराल स्वरूप धारण कर पृथ्वी पर गिर पड़ी। गोपियाँ आश्चर्यचकित होकर दौड़ीं और पूतना के वक्ष पर खेलते हुए श्रीकृष्ण को उठाकर अपनी छाती से लगा लिया और बिना ब्याई हुई गाय के पुच्छ को उस पर घुमाकर भगवान् के नामों का उच्चारण करके उसकी रक्षा के लिये प्रार्थना करने लगीं। मैया यशोदा तो अत्यन्त ही घबरा गयी थीं। मथुरा से लौटकर नन्द बाबा ने जब यह समाचार सुना तो भगवान् का नाम लेते हुए उन्होंने श्रीकृष्ण को अपनी गोद में ले लिया और उनकी मङ्गला-कामना के लिए भगवान् से प्रार्थना की।

श्रीकृष्ण तीन महीने के ही हुये थे। नन्द बाबा के घर में करवट बदलने का उत्सव मनाया जा रहा था। माता यशोदा ने श्रीकृष्ण को एक छकड़े के नीचे पालने में सुला दिया था। जब श्रीकृष्ण के नेत्र खुले, वे स्तनपान के लिए रोते हुये अपने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नन्हें-नन्हें पैरों की दुल्लतियाँ पटकने लगे। उनकी इस प्रकार की दुल्लती से ही विशाल छकड़ा उलट गया। छकड़े पर रखी हुई दूध, दही की मटकियाँ उलट कर गिर पड़ीं। मैया ने यह दृश्य देखकर ग्रह उपद्रव समझा और ब्राह्मणों द्वारा शान्ति कराकर उनका आशीर्वाद ग्रहण किया।

एक समय श्रीकृष्ण खेल रहे थे। तृणावर्त नामक राक्षस आया और श्रीकृष्ण को उठाकर आकाश में उड़ गया; किन्तु श्रीकृष्ण ने उसका कण्ठ इस प्रकार से दबाया कि वह मर कर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

एक दिन यदुवंशियों के कुल-पुरोहित श्री गर्गाचार्य गोकुल आये। वहाँ नन्द बाबा के परामर्शानुसार (कंस के भय से) अधिक उत्सव न मना कर, एकान्त गोशाला में ही सूक्ष्म रूप से स्वस्तिवाचनादि के साथ दोनों बालकों का नाम करण-संस्कार सम्पन्न कर दिया। रोहिणीजी के पुत्र का नाम रौहिणेय, राम, बल और संकर्षण तथा छोटे साँवले यशोदानन्दन का नाम 'श्रीकृष्ण' रखकर, गर्गाचार्य ने कहा—

य एतस्मिन् महाभागाः प्रीतिं कुर्वन्ति मानवाः।
नारयोऽभिभवन्त्येतान् विष्णुपक्षानिवासुराः॥
तस्मान्नन्दात्मजोऽयं ते नारायणसमो गुणैः।
श्रिया कीर्त्यानुभावेन गोपायस्व समाहितः॥

(श्रीमद्भागवत १०।८।१८-१९)

'जो मनुष्य तुम्हारे इस साँवले-सलोने शिशु से प्रेम करते हैं, वे बड़े भाग्यवान् हैं। जैसे विष्णु भगवान् के कर-कमलों की छत्रछाया में रहने वाले देवताओं का असुर पराभव नहीं कर सकते, वैसे ही इससे प्रेम करने वालों का भीतरी या बाहरी किसी भी प्रकार के शत्रु पराभव नहीं कर सकते। नन्दजी! चाहे जिस दृष्टि से देखें—गुण में, सम्पत्ति और सौन्दर्य में, कीर्ति और प्रभाव में तुम्हारा यह बालक साक्षात् भगवान् नारायण के समान है। तुम बड़ी सावधानी और तत्परता से इसकी रक्षा करो।'

कुछ ही दिनों में बलराम और श्रीकृष्ण घुटनों के बल चलने लगे। उनकी बाल-लीलाएँ अत्यन्त मधुर और मनोहारिनी थीं। जिन्हें देख-देखकर माता रोहिणी, मैया यशोदा और व्रज-गोपियाँ तथा गोप अत्यन्त प्रसन्न व सुखी होते थे। उनके आनन्द की सीमा नहीं थी। इस प्रकार देखते-देखते व्रज के जीवन-धन वे दोनों अलौकिक बालक पैरों के बल खड़े होकर चलने लगे। वे गोकुल की गलियों में व्रज गोपों के साथ घूमते और विविध प्रकार की मनोहर क्रीड़ाएँ करते रहते। श्रीकृष्ण ग्वाल-बालों के साथ गोपियों के घरों में घुस कर अनेक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

युक्तियों द्वारा उनका दही और मक्खन लेकर स्वयं खाते, अपने साथियों को खिलाते तथा बन्दरों को बाँट देते। भाग्यवती गोपियाँ ऐसे अनेक मनभावने दृश्य देख-देख कर निहाल हो जातीं, पर मैया यशोदा के सम्मुख प्रेमोपालम्भ भी देतीं। मैया सबकी मनुहार करके उनके मङ्गल की आशीश प्राप्त करती।

एक दिन उनके समवयस्क बालकों ने माता यशोदा से कहा—यह कन्हैया मिट्टी खाता है, इसके गलाफू में मिट्टी की डगली है। माता यशोदा के पूछने पर, कन्हैया ने सर्वथा अस्वीकार किया और अपना मुख खोल दिया। उस समय माता यशोदा ने पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, सर, सरिता, समुद्र, सम्पूर्ण चराचर प्राणी और अनन्त सृष्टि का दृश्य उनके मुख में देखा तो भय से काँपने लगीं; किन्तु कुछ ही क्षणों में योगमाया के प्रभाव से यशोदा मैया वह अद्भुत दृश्य भूल गयीं और फिर श्रीकृष्ण का पूर्ववत् पुत्र की भाँति लाड-दुलार करने लगीं। पूर्वजन्म की तपश्चर्या व परम पिता भगवान् के अनुग्रह से नन्द यशोदा पुत्र के रूप में उस परब्रह्म परमात्मा को अपनी गोद लेकर इस प्रकार की देवदुर्लभ, अलौकिक, मधुर-मनोहर लीलाओं का आनन्द प्राप्त कर रहे थे।

एक दिन श्रीकृष्ण माता यशोदा के बार-बार मनाने, समझाने पर भी अपनी चञ्चलता से नहीं रुक रहे थे, तब मैया यशोदा ने कुपित होकर उनके कटिभाग में रस्सी बाँधकर उस रस्सी को ऊखल से बाँध दिया और कहा—'अब क्या करेगा ?' और मैया यशोदा अपने गृह कार्य में लग गयीं।

धनाध्यक्ष कुबेर के लाडले पुत्र नलकूबर और मणिग्रीव शापग्रस्त होकर दो जुड़वाँ अर्जुन के वृक्षों के रूप में स्थित थे, उनके उद्धार का निश्चय कर ऊखल घसीटते हुए उन वृक्षों के पास गये। वे दोनों वृक्षों के बीच में से घुसकर दूसरी ओर निकल गये, किन्तु ऊखल तिरछा होकर अटक गया। समस्त बल पौरुष एवं पराक्रम के केन्द्र श्रीकृष्ण के तनिक-सा झटका देते ही वे दोनों वृक्ष जड़ से उखड़ कर भयानक शब्द के साथ पृथ्वी पर गिर पड़े। उस समय उनमें से दो तेजस्वी पुरुष निकले और उन्होंने हाथ जोड़ कर श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुए कहा—

वाणी गुणानुकथने श्रवणौ कथायां
हस्तौ च कर्मसु मनस्तव पादयोर्नः।
स्मृत्यां शिरस्तव निवासजगत्प्रणामे
दृष्टिः सतां दर्शनेऽस्तु भवत्तनूनाम्॥

(श्रीमद्भागवत् १०।१०।३८)

'प्रभो ! हमारी वाणी आपके मङ्गलमय गुणों का गान करती रहे। हमारे कान आपकी रसमयी कथा के श्रवण में लगे रहें, हमारे हाथ आपकी सेवा में

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और मन आपके चरण-कमलों की स्तुति में रम जायँ। यह सम्पूर्ण जगत् आपका निवास-स्थान है। हमारा मस्तक सबके सामने झुका रहे। सन्त आपके प्रत्यक्ष शरीर है। हमारी आँखें उनका दर्शन करती रहें।'

भगवान् श्रीकृष्ण ने हँसते हुए कहा – नलकूबर ! मणिग्रीव ! तुम्हारा अभीष्ट तुम्हें प्राप्त हो गया है। अब तुम दोनों मुझे स्मरण करते हुए अपने स्थान पर जाओ।'

नलकूबर और मणिग्रीव ऊखल में बँधे हुए प्रभु के चरणों में बार-बार प्रणाम एवं उनकी परिक्रमा कर विदा हुए। दाम (डोरी)से उदर में बाँध दिये जाने के कारण ही श्रीकृष्ण का नाम 'दामोदर' भी हो गया।

वृक्षों के गिर पड़ने का भयानक शब्द सुनकर गोप, गोपियाँ, रोहिणी, यशोदा और नन्द बाबा भी दौड़ कर आये। वहाँ ऊखल में बँधे हुए श्रीकृष्ण को मुस्कराते हुए देखकर सभी विस्मित-चकित हो गये। नन्द बाबा ने झटपट रस्सी की गाँठ खोल डाली। फिर प्रतिदिन नये-नये उपद्रवों के होने के कारण नन्द बाबा ने प्रधान-प्रधान सब ही गोपों को एकत्र कर मन्त्रणा की। वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध श्रेष्ठ गोप उपनन्द के परामर्शानुसार सभी गोप ग्वाल अपनी गायों और परिवारों को साथ लेकर वृन्दावन पहुँच गये। वहाँ सब लोगों ने अपने रहने का समुचित प्रबन्ध किया।

गोओं, गोपों और गोपियों को सुखी प्रसन्न करते हुए बलराम और श्रीकृष्ण गाय और बछड़ों को चराने लगे। गोप बालकों के साथ जब वे गाय बछड़ों को चराने वन में जाते, वहाँ अनेक प्रकार के मनोहर खेल-क्रीड़ाएँ करते हुए गोप-बालकों को आनन्दित करते रहते थे। एक दिन वहाँ वन में कालिन्दी कूल स्थान पर एक राक्षस बछड़े का रूप धारण करके आया। श्रीकृष्ण ने उसकी पूँछ पकड़ कर घुमाते हुए बड़े जोर से कैथ के वृक्ष पर फेंक दिया। उसके तुरन्त प्राण निकल गये। तब सब ग्वाल-बालों ने अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण की प्रशंसा की।

इसी प्रकार से एक दिन कंस का भेजा हुआ बकासुर नामक राक्षस आया उसको मार डाला। एक दिन श्रीकृष्ण गायों को चरने के लिए छोड़कर गोप-बालकों के साथ अनेक भाँति के मनोहर खेल खेलने लगे, तब ही पूतना और बकासुर का छोटा भाई अघासुर कंस की प्रेरणा से क्रोधोन्मत्त होकर विशाल अजगर का रूप धारण कर गुफा के समान मुँह खोल कर मार्ग में लेट गया। कौतूहलवश समस्त गोप-बालक उसके उदर में प्रवेश कर छटपटाने लगे। श्रीकृष्ण भी असुर का उद्देश्य समझ कर स्वयं उसके मुँह में प्रवेश कर गये और अन्दर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जाकर अपने शरीर को इतना बढ़ाया कि उसका साँस लेना भी रुक गया। आँखें फट गयीं, उसके प्राण ब्रह्मरन्ध्र फोड़ कर निकल गये। श्रीकृष्ण ने अपने सभी साथियों के प्राणों की रक्षा की और वे सब आनन्द से उसके बाहर निकल आये। इसके पश्चात् यमुनाजी में स्नान कर पुनः गायों को चराने के लिए छोड़कर शीतल छाँह में सभी गोप-बालकों के साथ भोजन करने बैठे। हास-परिहास और विनोद के साथ वंशीधर भोजन कर रहे थे और उधर गाय-बछड़े चरते हुए दूर निकल गये। सभी साथियों को वहीं प्रतीक्षा करने के लिए कहकर श्रीकृष्ण स्वयं उन्हें ढूँढने चले।

नन्दनन्दन श्रीकृष्ण की मानवी लीलाओं को देखकर कमलयोनि ब्रह्माजी मोहग्रस्त हो गये। उन्होंने पहले बछड़ों को और भगवान् श्रीकृष्ण के चले जाने पर ग्वाल-बालों को भी अन्यत्र ले जाकर रख दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गये।

श्रीकृष्ण गाय-बछड़ों को ढूँढते हुए दूर तक गये फिर भी उन्हें गाय-बछड़े नहीं मिले, तब वापस उस स्थान पर आये जहाँ भोजन कर रहे थे। वहाँ गोप-बालक भी नहीं मिले। उन्हें इधर-उधर स्थानों पर ढूँढ लिया। अन्ततः उनको ब्रह्माजी की करतूत समझ कर उनका अहंकार दूर करने के लिए उन्हें अपनी दिव्य माया का ऐश्वर्य दिखलाना उचित समझा। भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं गोप-बालक तथा गाय बछड़ों के रूप में हो गये। सभी पूर्ववत रूप-रंग अवस्था व संख्या में थे, कहीं किंचित् भी अन्तर या भेद नहीं था। श्रीकृष्ण गोप-बालकों एवं गाय-बछड़ों के साथ प्रतिदिन वन में गो-चारण करने जाते तथा सायंकाल खेलते-कूदते और गाते-बजाते घर पहुँचते।

इस प्रकार एक वर्ष होने को आया। ब्रह्माजी ने ब्रज में आकर देखा तो वे अपने छिपाये हुए, गाय-बछड़ों एवं ग्वालों को यथा स्थान मूर्च्छित और श्रीकृष्ण के साथ ज्यों-के-त्यों दूसरे गोप-बालक और गाय-बछड़ों को देखकर आश्चर्य चकित हो गये। उनके देखते-ही-देखते सभी ग्वाल-बाल गाय-बछड़े उन्हें शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी चतुर्भुज श्यामल विश्वमोहन के रूप में दिखाई दिये। यह भगवान् की अद्भुत लीला देखकर ब्रह्माजी श्रीकृष्ण के चरणों में पृथ्वी पर दण्ड की भाँति लोट गये। उन्होंने अपने प्रेम के आँसुओं से श्रीकृष्ण के अरुण चरणों को गीला कर दिया। उन्होंने स्वतन करते हुए कहा—

नौमीड्य तेऽभ्रवपुषे तडिदम्बराय
गुञ्जावतंसपरिपिच्छलसन्मुखाय।
वन्यस्रजे कवलनेत्रविषाणवेणु—
लक्ष्मश्रिये मृदुपदे पशुपाङ्गजाय॥

(श्रीमद्भागवत १०।१४।१)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'प्रभो ! एक मात्र आप ही स्तुति करने योग्य हैं। मैं आपके चरणों में नमस्कार करता हूँ। आपका यह शरीर वर्षाकालीन मेघ के समान श्यामल है, इस पर स्थिर बिजली के समान झिलमिल-झिलमिल करता हुआ पीताम्बर शोभा पाता है, आपके गले में घुँघची की माला, कानों में मकराकृति कुण्डल तथा सिर पर मोर पंखों का मुकुट है, इन सबकी कान्ति से आपके मुख पर अनोखी छटा छिटक रही है। वक्षःस्थल पर लटकती हुई वनमाला और नन्हीं-सी हथेली पर दही-भात का कौर। बगल में बेत और सींग तथा कमर की फेंट में आपकी पहचान बनाने वाली बाँसुरी शोभा पा रही है। आपके कमल-से सुकोमल परम सुकुमार चरण यह गोपाल-बालक का सुमधुर वेष। मैं और कुछ नहीं जानता, बस मैं तो इन्हीं चरणों पर निछावर हूँ।'

५. भगवान् श्रीकृष्ण की परिक्रमा तथा उनके चरणों में प्रणाम कर ब्रह्माजी अपने धाम पधार गये। ग्वाल-बालों, गाय-बछड़ों को पहले ही उन्होंने यथास्थान पहुँचा दिया था।

एक दिन बलराम और श्रीकृष्ण अपने सखा श्रीराम, सुबल और स्तोककृष्ण को प्रसन्न करने के लिये एक सघन तालवृक्ष पर पहुँच गये। वहाँ उन्होंने ताड़ के कुछ फल तोड़ कर गिराये ही थे कि गधे के रूप का अत्यन्त बलशाली धेनुकासुर क्रोध-पूर्वक बलरामजी पर दुलत्ती झाड़ने लगा। बलरामजी ने उसके पीछे के दोनों पैरों को पकड़ इतने जोर से घुमाकर ताड़ के वृक्ष पर दे मारा कि उसके प्राण निकल गये, वह ताड़ का वृक्ष भी टूटकर गिर पड़ा। उस ताड़वृक्ष के गिरने से उसके आस-पास के और अनेक ताड़-वृक्ष भी टूटकर भयानक शब्द करते हुए गिर पड़े। धेनुका-सुर की मृत्यु का संवाद पाकर उसके भाई-बन्धु कुपित होकर बलरामजी पर टूट पड़े। बलरामजी ने धेनुकासुर की भाँति ही सबके पिछले पैर पकड़-पकड़ कर घुमा-घुमाकर ताड़ के वृक्षों पर दे मारा। इस प्रकार खेल-खेल में ही उन्होंने वहाँ के सभी असुरों को मार डाला। सभी गोप-बालक अत्यन्त प्रसन्न हुए।

एक दिन नन्द-यशोदा आदि गोप-गोपियों को संवाद मिला कि उनके प्राणाधार कमल-लोचन श्रीकृष्ण अत्यन्त विषभरे हुए कालियह्रद में कूद पड़े हैं। सभी गोप-गोपियाँ भयविह्वल होकर हाहाकार करते हुए महादुःख से पागलों की भाँति दौड़े हुए कुण्ड पर पहुँचे। अत्यन्त क्रुद्ध होकर कालिय सुर-मुनि-वन्दित श्रीकृष्ण पर टूट पड़ा, किन्तु चञ्चल श्रीकृष्ण ने उसके प्रत्येक फन को कुचल डाला। कालिय रक्त-वमन करता हुआ मूर्च्छित हो गया। वह गरुड़ के भय से रमणक द्वीप त्यागकर उक्त ह्रद में आकर बस गया था। होश में आने पर उसने श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण की और अपनी पत्नियों सहित स्तवन किया—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नमः कृष्णाय रामाय वसुदेवसुताय च ।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय सात्वतां पतये नमः ।।

(श्रीमद्भागवत १०।१६।४५)

'आप शुद्धसत्वमय वसुदेव के पुत्र वासुदेव, सङ्कर्षण एवं प्रद्युम्न और अनिरुद्ध भी हैं। इस प्रकार चतुर्व्यूह के रूप में आप भक्तों तदा यादवों के स्वामी हैं। श्रीकृष्ण ! हम आपको नमस्कार करते हैं।'

भगवान् यशोदानन्दन ने उसके मस्तक पर अपने चरणचिह्न स्थापित कर उसको सपरिवार यमुना-कुण्ड से बाहर निकाल दिया। वह भगवान् श्यामसुन्दर के चरणों में सपरिवार प्रणाम कर पुनः रमणक द्वीप में चला गया। नन्दादि गोपगणों के जी-में-जी आया। यमुना का जल निर्विष होकर अमृत तुल्य हो गया। भगवान् श्रीकृष्ण के कुण्ड से बाहर आने पर मैया यशोदा ने विलाप करते हुए अपनी छाती से लगाया, नन्दबाबा एवं सब ही गोपों ने उनको प्यार किया, आशीर्वाद दिया। घर पहुँचने पर नन्दबाबा ने बहुत-सा-सुवर्ण और गौएँ दान में देने का संकल्प किया।

अधिक देर और थकान होने के कारण सब व्रजवासी और गायें रात्रि को वहीं रह गये। गर्मी का समय था। अचानक सूखे वन में आग लग गयी। समस्त व्रजवासी अग्नि से घिरकर चीत्कार करते हुए श्रीकृष्ण को पुकारने लगे। अपने स्वजनों को विकल-विह्वल हुए देखकर श्रीकृष्ण ने उस भयंकर अग्नि का पान कर लिया। इस प्रकार करुणानिधि ने व्रजवासियों पर आयी हुई आपदा को दूर कर दिया।

एक दिन गोचारण कराते समय वन में जब गोप-बालक खेल रहे थे। प्रलम्बासुर राक्षस गोप-बालक का वेष बनाकर गोप-बालकों में मिल गया। खेल-खेल में बलरामजी को अपनी पीठ पर बैठाकर बहुत दूर ले गया और अपना भयानक वेष प्रकट कर दिया। फिर बलरामजी को उठाकर बड़ी तीव्रता से आकाश में ले उड़ा, किन्तु बलरामजी ने एक ही मुष्ठिक का प्रहार कर उसे पृथ्वी पर पटक दिया। पड़ते ही वह काल के गाल में चला गया। ग्वाल-बाल अत्यन्त चकित होकर बलरामजी की सराहना करने लगे।

एक समय श्रीकृष्ण ग्वाल-बालों के साथ खेल-कूद में तन्मय थे उनकी गायें उस समय चरती-चरती बहुत दूर जाकर एक गहन वन में प्रवेश कर गयीं। वे गर्मी और तृषा से व्याकुल होकर मुञ्जाटवी (सरकण्डों के वन) में घुस गयीं। गायों को न पाकर गोप-बालक और श्रीकृष्ण अत्यन्त चिन्तित हो, उनका नाम लेकर पुकारते-पुकारते उक्त वन के पास पहुँचे, किन्तु वहाँ वन में सब ओर से दावाग्नि लग गई।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उसी समय प्रबल पवन भी चलने लगा। प्रज्वलित अग्नि की लपटों को अपनी ओर बढ़ते देख कर गोप-बालकों ने श्रीकृष्ण से अत्यन्त करुण प्रार्थना की।

सबको विकल-विह्वल होता हुआ देखकर श्रीकृष्ण ने जोर से कहा—'तुम लोग अपने नेत्र बन्द कर लो।' ग्वाल-बालों ने अपने-अपने नेत्र बन्द किये तो पूर्ववत् अपने को गाय-बछड़ों सहित भाण्डीर वट के पास पाया। गोपेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण की दावाग्नि-पान-लीला को तो गोप-बालक नहीं समझ सके, परन्तु अपनी रक्षा से उन्होंने इतना अवश्य समझा कि श्रीकृष्ण कोई देवता हैं।

सन्ध्या समय बलराम और श्रीकृष्ण, समस्त ग्वाल-बाल अपने-अपने गाय बछड़ों के साथ नाचते-कूदते व्रज की ओर लौटते। सबके बीच में श्रीकृष्ण मयूर-मुकुट धारण किये सुमधुर वंशी बजाते हुए आया करते। गोप-गोपियाँ उस समय उनकी सुन्दर छवि देखने की बाट जोहा करते थे।

एक बार शरत्काल आरम्भ होने पर नन्द आदि गोपों ने इन्द्रपूजा का महान् आयोजन किया, किन्तु श्रीकृष्ण ने इन्द्र-पूजा स्थगित करा दी और उसके स्थान पर गोवर्द्धन का पूजनोत्सव मनाया गया। अपनी उपेक्षा से इन्द्र अत्यन्त कुपित हुए और सम्पूर्ण व्रज-मण्डल को जल में डुबा देने के उद्देश्य से सात दिनों तक अनवरत रूप से भयानक वर्षा करते रहे; किन्तु सर्वसमर्थ, सर्वेश्वर, प्राणधन श्रीकृष्ण ने महान् पर्वत गोवर्द्धन को उखाड़कर अनायास ही छत्र की भाँति धारण कर लिया। उसके नीचे समस्त व्रजवासी, गौएँ एवं गोवत्स सभी सुखपूर्वक रहने लगे। उन्हें किंचित् भी कष्ट का भान नहीं हो सका।

यह देखकर शचीपति इन्द्र अत्यन्त भयभीत हुए। उन्होंने तत्काल वर्षा बन्द कर दी और स्वयं गिरिराज की ओर चल पड़े। त्रिलोकवन्दित नन्दनन्दन ने वृष्टि बन्द होने पर उस महान् पर्वत को यथास्थान रख दिया। नन्द आदि वयोवृद्ध गोप श्रीकृष्ण की इस लीला से अत्यन्त चकित हो उनकी प्रशंसा तथा उनके मङ्गल के लिये श्रीहरि से प्रार्थना करने लगे।

तभी सुरेन्द्र लज्जित हुए, वहाँ पहुँच कर श्रीकृष्ण के चरणों में प्रणाम किया और करबद्ध होकर हर्षगद्गद् वाणी द्वारा उनका स्तवन किया—

नमस्तुभ्यं भगवते पुरुषाय महात्मने।
वासुदेवाय कृष्णाय सात्वतां पतये नमः॥
स्वच्छन्दोपात्तदेहाय विशुद्धज्ञानमूर्तये।
सर्वस्मै सर्वबीजाय सर्वभूतात्मने नमः॥

(श्रीमद्भागवत १०।२७।१०-११)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'भगवन् ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। आप सर्वान्तर्यामी पुरुषोत्तम तथा सर्वात्मा वासुदेव हैं। आप यदुवंशियों के एकमात्र स्वामी, भक्तवत्सल एवं सबके चित्त को आकर्षित करने वाले हैं। मैं आपको वार-वार नमस्कार करता हूँ। आपने जीवों के समान कर्मवश होकर नहीं, स्वतन्त्रता से अपने भक्तों की तथा अपनी इच्छा के अनुसार शरीर स्वीकार किया है। आपका यह शरीर भी विशुद्ध ज्ञान स्वरूप हैं। आप सब कुछ हैं, सबके कारण हैं और सबके आत्मा हैं। मैं आपको वार-वार नमस्कार करता हूँ।'

इसके अनन्तर देवेन्द्र ने गोविन्द का आकाश गङ्गा के अमृतमय जल से अभिषेक कर उनकी दिव्य वस्त्राभूषण से भक्तिपूर्वक पूजा की। इसके पश्चात् गोकुल के स्वामी गोविन्द की अनुमति प्राप्त होने पर वे स्वर्ग के लिए प्रस्थित हुए।

व्रजवासियों का विनाश करने के लिये क्रूर कंस दुष्ट दैत्यों को क्रमशः भेजता ही जा रहा था। एक दिन सन्ध्या समय जब श्रीकृष्ण व्रज में प्रवेश कर रहे थे, अरिष्ठासुर नामक महाकाय दैत्य वृषभ का रूपधारण कर व्रज में उपद्रव करने लगा। उसकी क्रूरता से गोप-भयभीत हो गये। वह श्रीकृष्ण को मारने का मुख्य लक्ष्य कर उनकी ओर सींग नीचे करके बड़े वेग से दौड़ा। श्रीकृष्ण ने उसके सींगों को पकड़ कर इस प्रकार घुमाया कि गर्दन ऐंठ जाने के कारण वह असुर पसीने-पसीने होकर छट-पटाने लगा। श्रीकृष्ण ने उसका सींग उखाड़कर उसे इस प्रकार पीटा कि तड़प-तड़प कर उसने प्राण त्याग दिये।

इसी प्रकार एक दिन महाबली केशी नामक दैत्य घोड़े के वेष में श्रीकृष्ण को मार डालने के लिए व्रज में आया। उसके उपद्रव से व्रजवासी घबराकर चीत्कार करने लगे। श्रीकृष्ण ने धैर्य बँधाते हुए उस घोड़े के मुँह में अपना हाथ डाल दिया और हाथ को इतना बढ़ा दिया कि उसकी साँस ही रुक गयीं, नेत्र उलट गये तथा तड़पते हुए उसके प्राण विसर्जन हो गये। देवताओं ने यह दृश्य देखकर श्रीमधुसूदन की स्तुति करते हुए पुष्प वृष्टि की।

भगवान् श्रीकृष्ण सर्वदा गोपालन एवं व्रजवासियों को अलौकिक आनन्द प्रदान करने में ही लगे रहते थे। एक दिन वे गोप-बालकों के साथ गायों को पर्वत पर चरने के लिए छोड़कर उनके साथ चोर, रक्षक और भेड़ बनकर खेलने लगे। इसी बीच मायावियों के आचार्य मयासुर का प्रबल पराक्रमी अत्यन्त मायावी पुत्र व्योमासुर ग्वाले का वेष धारण कर उन गोप-बालकों में सम्मिलित हो गया। खेल में वह चोर बनकर एक-एक ग्वाल-बालक को चुराकर पर्वत की गुफा में डालकर उनका मुँह विशाल शिला से बन्द कर देता। केवल चार-पाँच बालकों के शेष रहने पर श्रीकृष्ण ने असुर की चाल समझी और बलपूर्वक उसे पृथ्वी पर पटक दिया

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा निष्ठुरतापूर्वक उसका गला दबाकर मार डाला। गुफा के द्वार से शिला हटा कर गोप-बालकों को गुफा से बाहर निकाल लाये। इस प्रकार परब्रह्म परमात्मा नन्द-यशोदा के ही नहीं व्रज को सम्पूर्ण जीव धारियों के, अनन्य सहचर, प्रेमी, सुहृद और आनन्द देने वाले थे। सभी श्रीकृष्ण को प्राणों से भी अधिक प्रिय जानने वाले थे। इसी प्रकार श्रीकृष्ण भी सबको अपने प्राणों की ही भाँति समझते थे। व्रज में सर्वत्र श्रीकृष्ण की ही आश्चर्यजनक, किन्तु अत्यन्त मधुर, आदर्श एवं जीवन में नवीन चेतना, नवीन हुल्लास, नया जीवन, नयी स्फूर्ति, नवीन प्राण, नूतन ज्योति प्रकाशित करने वाली लीलाओं का स्मरण, चिन्तन और गायन होता रहता है।

एक दिन संन्ध्या समय दुरात्मा कंस के भेजे हुए महान् भागवत श्वफल्क के पुत्र अक्रूर वहाँ पहुँचे। मार्ग में मिट्टी पर टिके हुए कमल, यव, अंकुश आदि चिह्नों से युक्त असाधारण पद छाप देखकर वह भाव विह्वल होकर नेत्रों में जल भर लाये। भगवान् व्रजचन्द्र के दर्शन की तीव्र लालसा लिए हुए वे गो-दोहन स्थान पर पहुँचे। वहाँ पीताम्बरधारी मयूरमुकुट धारण किये वनमाली को देखकर अक्रूरजी हर्ष से गद्गद् हो गये और उनके चरणों में प्रणाम किया। श्यामसुन्दर ने भी अपने कर-कमलों से उन्हें स्पर्श कर प्रीति पूर्वक खींचकर उनका गाढ़ आलिङ्गन किया। इसके अनन्तर अक्रूरजी ने अनन्त प्रभु नीलाम्बरधारी बलराम को देखा तो आँसू भरे हुए नेत्र, बद्धाञ्जलि उनके सम्मुख खड़े हो गये। बलरामजी ने भाग्यवान् अक्रूर जी को अत्यन्त प्रेम से गले लगाया। फिर उनका एक हाथ श्रीकृष्ण ने और दूसरा हाथ बलभद्र ने पकड़ लिया और उसको घर पर ले गये।

घर पर पहुँचने पर यशोदानन्दन ने अक्रूरजी का बहुत सम्मान सत्कार स्वागत किया। नन्दबाबा ने भी अतिशय प्रीति से उनका कुशल-क्षेम पूछा। अन्त में नन्द बाबा को अक्रूरजी ने बतलाया 'देवर्षि नारदजी ने श्रीकृष्ण को यहाँ रखे जाने तथा बलभद्र को पालित होने का सारा संवाद कंस को बता दिया। दुष्ट कंस कुपित होकर महामना वसुदेव और महाभागा देवकी को पुनः बन्दी गृह में डाल कर समूचे यदुवंशियों के विनाश पर तुल गया है। इसी षड्यन्त्र की सिद्धि के लिये उपहार लेकर श्रीकृष्ण बलराम सहित आप लोगों को ले आने के लिए मुझे यहाँ भेजा है।'

नन्दबाबा सहम गये। माता यशोदा भी घबरा गयीं। सम्पूर्ण गोपियाँ विकल-विह्वल हो गयीं; किन्तु श्रीकृष्ण के आश्वासन से मथुरा यात्रा की तैयारी होने लगी। प्रातःकाल अक्रूरजी ने हाथ जोड़कर यशोदा को प्रणाम किया और उन्होंने मैया यशोदा को विश्वास दिलाते हुए कहा—'महाभागे! अब मैं जाऊँगा। मुझ पर कृपा कीजिये। ये महाबाहु श्रीकृष्ण महाबली कंसको मारकर सम्पूर्ण

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जगत् के राजा होंगे; इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। अतः आप निश्चिन्त होकर प्रसन्न हो जायँ। इस प्रकार उनसे विदा ले अक्रूरजी श्रीकृष्ण और बलराम को रथ पर चढ़ाकर ले चले। व्रज-गोपिकाएँ रोती, कलपती और बिलखती रहीं। माता यशोदा की व्याकुलता तो वे ही जानती थीं। नन्दराय अन्य गोपों के साथ अपने-अपने छकड़ों पर उपहार लेकर प्रस्थित हुए।

अक्रूरजी का रथ जब यमुना-तट पर पहुँचा तो वे दोनों भाइयों की अनुमति से उन्हें रथ पर बैठे छोड़कर यमुना-स्नान करने के लिये चले गये। स्नानोपरान्त उन्होंने यमुना-जल में डुबकी लगाकर गायत्री जप करना आरम्भ किया तो वहाँ श्रीकृष्ण बलराम को देखकर घबरा गये। उन्होंने बाहर रथ की ओर देखा तो रथ पर दोनों भाई बैठे हुए दिखाई दिये। उन्होंने पुनः डुबकी लगायी, तब फिर बलभद्र सहस्र फन वाले शेषनाग एवं श्रीकृष्ण साक्षात् परम प्रभु उन्हें दीखने लगे। भगवान् की वह दिव्य झाँकी देखकर अक्रूरजी के नेत्रों में प्रेमाश्रु भर आये। भाव विह्वल होकर अविनाशी प्रभु का स्तवन करते हुए उन्होंने कहा—

नमस्ते वासुदेवाय सर्वभूतक्षयाय च।
हृषीकेश नमस्तुभ्यं प्रपन्नं पाहि मां प्रभो ।।

(श्रीमद्भागवत १०।४०।३०)

'प्रभो! आपही वासुदेव, आप ही समस्त जीवों के आश्रय (संकर्षण) हैं तथा आप ही बुद्धि और मन के अधिष्ठातृ देवता हृषीकेश हैं। मैं आपको बार-बार नमस्कार करता हूँ। प्रभो! आप मुझ शरणागत की रक्षा करें।'

प्रसीद सर्व सर्वात्मन् क्षराक्षरमयेश्वर।
ब्रह्माविष्णुशिवाख्याभिः कल्पनाभिरुदीरितः ।।

(विष्णु पुराण ५।१८।५१)

'हे सर्वस्वरूप! हे सर्वात्मन्! हे क्षराक्षरमय ईश्वर! आप प्रसन्न होइये। एक आप ही ब्रह्मा, विष्णु और शिव नाम की कल्पनाओं द्वारा वर्णन किये जाते हैं।'

स्नान, नित्यकर्म से निवृत्त होकर अक्रूरजी से रथ के समीप पहुँचने पर मंद-मंद मुस्कराते हुए श्रीकृष्ण ने कहा—'अक्रूरजी! आप बड़े आश्चर्य चकित दीख रहे हैं। क्या बात है?'

अक्रूरजी ने अश्रु भरे हर्ष गद्गद् कण्ठ से कहा—'यह महान् आश्चर्यमय जगत् जिस सर्वात्मा का स्वरूप है, उन्हीं का दर्शन मुझे हो रहा है। उस आश्चर्य के सम्बन्ध से अधिक क्या निवेदन करूँ? चलिये, हमें शीघ्र मथुरा पहुँचना है।' और उन्होंने सर्वेश्वर को चढ़ाये हुए रथ को आगे बढ़ाया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मथुरापुरी के नगर-द्वार पर ही कृष्ण-बलभद्र को छोड़कर अक्रूरजी कंस के पास पहुँचे और इनके आगमन का संवाद सुनाकर अपने घर चले गये।

कुछ समय के पश्चात् श्रीकृष्ण-बलदेव भी मथुरा नगरी की शोभा देखते हुए राजपथ से चले जा रहे थे। उनकी अलौकिक शोभा, सौन्दर्य देखकर मथुरावासी चकित और निहाल हो रहे थे। मार्ग में उन्होंने वस्त्र रंगने वाले धोबी को देखकर उससे उत्तमोत्तम वस्त्र माँगे। कंस के उस अभिमानी रजक (धोबी) ने वस्त्र न देकर उन्हें अनेक दुर्वचन कहे। तब श्रीकृष्ण ने क्रुद्ध होकर ऐसा तमाचा मारा कि वह धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ा और धोबी के अधीन काम करने वाले भय के मारे भाग गये। बलरामजी व श्रीकृष्ण ने नीले, पीले वस्त्रों को धारण कर लिया, अन्य दूसरे गोप-बालकों को भी पहना दिये। तदनन्तर वे दरजी के पास गये, दरजी ने उन वस्त्रों को काट-छाँट कर उनके शरीर पर जिस प्रकार से ठीक लगें, उसी प्रकार से बनाकर तुरंत उन्हें सजा दिया कि वे सब ठीक-ठीक फब गये।

तस्य प्रसन्नो भगवान् प्रादात् सारूप्यमात्मनः।
श्रियं च परमां लोके बलैश्वर्यस्मृतीन्द्रियम्॥

(श्रीमद्भागवत १०।४१।४२)

'भगवन् श्रीकृष्ण उस दर्जी पर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने उसे लोक में भरपूर धन-सम्पत्ति, बल-ऐश्वर्य अपनी स्मृति और दूर तक देखने-सुनने आदि की इन्द्रिय सम्बन्धी शक्तियाँ प्रदान कीं और मृत्यु के बाद अपना सारूप्य मोक्ष भी दे दिया।'

इसके बाद वे सुदामा माली के घर गये। दोनों भाइयों को देखते ही सुदामा उठ कर खड़ा हुआ और पृथ्वी पर सिर टेक कर उन्हें प्रणाम किया और बड़े प्रेम से उनकी पूजा की। सत्कार किया। विविध प्रकार से सुगन्धित पुष्पों की मालाएँ पहना कर अपने भाग्य की सराहना करते हुए उसने उनकी बड़ी स्तुति की। भगवान् श्रीकृष्ण ने प्रसन्न होकर उनका जीवन सार्थक करते हुए उनके बिना माँगे ही उसके घर अचला लक्ष्मी का निवास प्रदान करते हुए कहा—

बलहानिर्न ते सौम्य धनहानिरथापि वा।
यावद्दिनानि तावच्च न नशिष्यति संततिः॥
भुक्त्वा च विपुलान्भोगांस्त्वमन्ते मत्प्रसादतः।
ममानुस्मरणं प्राप्य दिव्यं लोकमवाप्स्यसि॥

(विष्णुपुराण ५।१९।२५-२६)

'सौम्य! तेरे बल और धन का ह्रास कभी न होगा और जब तक सूर्य की सत्ता रहेगी, तब तक तेरी सन्तान का उच्छेद न होगा। तू भी यावज्जीवन विपुल

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भोग भोगता हुआ अन्त में मेरी कृपा से मेरा स्मरण करने के कारण दिव्य लोक को प्राप्त होगा।'

माली की पूजा ग्रहण कर बलराम-श्रीकृष्ण पुनः राजपथ पर आ गये, उस समय नवयौवनसम्पन्ना कुब्जा अनुलेपन पात्र लिये जा रही थी। श्रीकृष्ण और बलभद्र के अलौकिक सौंदर्य से अत्यन्त आकृष्ट हो उसने अपना परिचय देते हुए कहा—'मैं प्रख्यात अनेक वक्रा राजा कंस के अनुलेपन कार्य में नियुक्त हूँ। यह अनुलेपन सर्व प्रकार से आपके योग्य है।' इस प्रकार कह कर उसने श्रीकृष्ण-बलभद्रजी को चन्दन का अनुलेपन प्रस्तुत किया। उक्त सुन्दर महासुगन्धित चन्दनादि से अनुलिप्त होकर श्रीकृष्ण ने कुब्जा की ठोड़ी और जहाँ उसके शरीर में वक्रता (टेढापन) थी, वह अपनी अंगुलियों से दबाकर ही नितान्त सीधे सुन्दर शरीर वाली कर दिया। तब महासुन्दरी कुब्जा उनका पीताम्बर पकड़कर अपने घर ले जाने का आग्रह करने लगी। भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा—'मैं तुम्हारे घर भी आऊँगा।' और फिर मुस्कराते हुए जगत् मोहन भाई बलभद्रजी के साथ यज्ञशाला में पहुँच गये।

वहाँ उन्होंने बहुमूल्य अलंकारों से सज्जित तथा अनेक प्रकार से पूजा किये हुए इन्द्रधनुष के समान धनुष को देखते ही रक्षक सैनिकों के रोकने पर भी कौतूहलपूर्वक उस धनुष को उठा लिया और उसकी प्रत्यञ्चा खींचकर उसके आधे क्षण में ही तोड़कर दो टुकड़े कर डाले। धनुर्भङ्ग की तीव्र ध्वनि से इतना घोर शब्द हुआ कि सम्पूर्ण मथुरापुरी गूँजकर हिल गयी।

धनुष के टूटने पर उसके रक्षक सैनिकों तथा अन्य असुरों ने श्रीकृष्ण-बलदेव पर आक्रमण कर दिया। तब तो कुपित होकर दोनों भाइयों ने धनुष के टूटे हुए टुकड़े उठा लिये और उन दोनों से ही पीट-पीट कर उन सबको मार डाला और निश्चिन्त होकर यज्ञशाला के प्रधान द्वार से बाहर आकर राजपथ पर विचरण करते हुए अपने डेरे पर लौट आये और खीर आदि उत्तम मधुर पदार्थों का भोजन किया, और कंस की आगामी गति-विधियों का पता लगा कर वहीं आराम से सो गये।

प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त होकर, नगारे की ध्वनि सुनकर पीताम्बर और नीलाम्बरधारी श्रीकृष्ण-बलराम रङ्गभूमि की ओर चले। रङ्गभूमि के प्रवेश-द्वार पर अत्यन्त बलवान् कुवलयापीड हाथी को खड़ा कर रखा था। केशिनिषूदन एवं रोहिणीनन्दन के समीप आते ही कंस के आदेश पालन हेतु महावत ने कुवलयापीड के द्वारा उन पर आक्रमण कर दिया। तब राम-श्याम ने अत्यन्त क्रुद्ध हो हाथी को पटक कर उसके दाँत उखाड़ लिये तथा उन्हीं दाँतों से हाथी और महावत

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को मारकर हाथी दाँत कंधे पर रखे झूमते हुए अत्यन्त सावधानीपूर्वक रङ्गशाला में पहुँचे। उस समय उनकी अद्‌भुत शोभा हो रही थी। भगवान् श्रीकृष्ण ने हाथ में हाथी दाँत लेकर अपने कंधे पर टिका रखा था, शरीर रक्त और हाथी के मद की बूँदों से सुशोभित था और मुख-कमल पर पसीने की बूँदे झलक रही थीं। उस समय उनकी शोभा देखने ही योग्य थी।

गोप-बालकों सहित रङ्गशाला में प्रवेश करते हुए श्रीकृष्ण-बलदेव पर सबके नेत्र टिक गये। दोनों अलौकिक अपनी-अपनी दृष्टि से सबको महान् दिखाई दे रहे थे।

उस रङ्गभूमि में तुरही आदि बाजे बजने लगे और कंस के सम्मुख अत्यन्त अनीतिपूर्वक चाणूर और मुष्टिक जैसे महाकाय महाबलशाली मल्ल किशोर श्रीकृष्ण और बलराम से लड़ने लगे, किन्तु इतने पर भी जब उन महामल्लों की शक्ति क्षीण होने लगी, तब घबराकर कंस ने बाजे बंद करवा दिये, किन्तु उसी क्षण आकाश में अनेक बाजे तूर्य आदि एक साथ ही बजने लगे—

जय गोविन्द चाणूरं जहि केशव दानवम्।
अन्तर्द्धानगता देवास्तमूचुरतिहर्षिताः॥

(विष्णु पुराण ५।२०।७२)

'देवगण अत्यन्त हर्षित होकर अलक्षित-भाव से कहने लगे—"हे गोविन्द! आपकी जय हो! हे केशव! आप शीघ्र ही इस चाणूर दानव को मार डालिये।"

कंस के दुरुद्देश्य को समझकर भगवान् श्रीकृष्ण ने चाणूर को एवं रोहिणी-नन्दन ने मुष्टिक को आकाश में घुमाकर तथा घूँसों एवं जानु के प्रहार से मार-डाला। इसी प्रकार से मल्लराज कूट, शल और तोशल भी मारे गये। तब कंस क्रोध से नेत्र लाल करके श्रीकृष्ण-बलदेव, समस्त गोप-बालकों तथा नन्दादि गोपों के विरुद्ध आदेश देने लगा। इस पर अत्यन्त कुपित होकर असुरारि श्रीकृष्ण हँसते हुए कंस के मञ्च पर चढ़ गये और उसके केशों को पकड़ कर उसे पृथ्वी पर पटक दिया तथा उसके ऊपर स्वयं कूद पड़े। उनके कूदते ही कंस का प्राणान्त हो गया। भगवान् कृष्ण ने मृतक कंस के केश पकड़कर उसको रङ्गभूमि में चारों ओर घसीटा। यह देखकर शेष मल्ल दैत्य भय के मारे प्राण बचाकर भाग गये। किन्तु कंस के कङ्क और न्यग्रोध आदि आठ छोटे भाइयों ने अपने भाई का बदला लेने के लिये श्रीकृष्ण-बलराम पर आक्रमण कर दिया, किन्तु अग्नि में पड़ने वाले पतंगों की भाँति वे भी क्षणमात्र में मृत्यु को प्राप्त हो गये।

तदुपरान्त तुरन्त उन दोनों भाइयों ने अपने माता-पिता को बन्धनमुक्त कर उनके चरणों में मस्तक टेककर प्रणाम किया। देवकी और वसुदेव के सुख-सौभाग्य

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का समय आया। अब उनके दुःख के दिन बीत गये; परन्तु उन्होंने मन-ही-मन अपने पुत्र को श्रीनारायण का अवतार समझ कर अपने हृदय से नहीं लगाया। विश्वात्मा श्रीहरि ने उन्हें पुनः योगमाया से मोहित कर दिया, तब देवकी-वसुदेव ने उनको अपनी गोद में ले हृदय से चिपका कर परमानन्द प्राप्त किया।

अनेक भाँति से अपने माता-पिता को सान्त्वना देकर श्रीकृष्ण अपने नाना उग्रसेन के पास गये और उनके चरणों में प्रणाम करके उनको भी बन्धनमुक्त किया। उन्हें भी सान्त्वना देकर मथुरा के राजसिंहासन पर उनका अभिषेक कर दिया। अक्रूर आदि श्रेष्ठ यदुवंशियों को बुलाकर राज्य के विशेष पदों पर नियुक्त किया। देवकीनन्दन ने कंस के भय से इधर-उधर दूर भाग कर चले गये यदु, अन्धक, मधु, दाशार्ह और कुकुर आदि वंशों में उत्पन्न सजातीय सम्बन्धियों को को ढूँढ-ढूँढ कर बुलवाया और उन लोगों को प्रचुर धन-सम्पत्ति देकर पुनः सम्मानपूर्वक बसाया।

इसके पश्चात् भगवान् वासुदेव और बलराम नन्दबाबा के पास पहुँचे। नन्दराय बाबा ने उन्हें गले लगा लिया। श्रीकृष्ण ने उनकी मैया यशोदा, गौओं, गो-वत्सों, गोपों एवं गोप-बालकों की—सभी की अपने प्रति सहज अद्भुत प्रीति की अनेक भाँति से प्रशंसा की तथा पुनः व्रज में आने का आश्वासन देकर उन्हें भाँति-भाँति के वस्त्रालंकार तथा पात्र आदि देकर विदा किया। पुत्रों से बिछुड़ते हुए वृद्ध नन्दबाबा के नेत्र बरसने लगे। श्रीकृष्ण-बलराम बार-बार उनके चरणों में प्रणाम करते रहे। जीवन की सम्पूर्ण निधि गँवाये वणिक् की भाँति नन्दराय दुःखी हृदय से व्रज वापस लौट गये।

अथ शूरसुतो राजन् पुत्रयोः समकारयत्।
पुरोधसा ब्राह्मणैश्च यथावद् द्विजसंस्कृतिम्॥

(श्रीमद्भागवत १०।४५।२६)

'इसके पश्चात् वसुदेवजी ने अपने पुरोहित गर्गाचार्य तथा अन्य विद्वान् ब्राह्मणों से दोनों पुत्रों का विधिवत् द्विजाति-समुचित यज्ञोपवीत-संस्कार करवाया।'

फिर वे दोनों भाई अवन्तिका (उज्जैन) में सांदीपनि मुनि के पास विद्या पढ़ने के लिए गये। अत्यन्त संयमपूर्वक रहने वाले दोनों ब्रह्मचारी बालकों ने गुरु की सेवा करते हुए केवल चौंसठ दिनों में सम्पूर्ण वेद-वेदाङ्ग तथा चौंसठ कलाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया। फिर उन्होंने गुरु दक्षिणा के रूप में गुरु के मरे हुए पुत्र को यमपुरी से लौटा कर पूर्ववत् शरीरयुक्त करके दे दिया। तदनन्तर वे गुरु की आज्ञा से मथुरा लौट आये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इधर श्रीकृष्ण के द्वारा दुर्धर्ष वीर कंस के मारे जाने का समाचार पाकर उसका श्वशुर मगधराज जरासंध अत्यन्त कुपित हुआ। तेईस अक्षौहिणी सेना से एक-एक यदुवंशियों के विनाश का निश्चय कर उसने मथुरापुरी को घेर लिया। तब भगवान् वासुदेव ने अपने पूर्वकालीन सनातन सारथि का स्मरण किया और तुरंत सारथि दारुक सुग्रीव-पुष्पक नामक महान् रथ लिए उपस्थित हो गया। उस देव दुर्जय रथ पर गरुड चिह्न युक्त ध्वजा फहरा रही थी। उस रथ में शङ्ख-चक्र गदादि सभी अस्त्र-शस्त्र विद्यमान थे। इसी प्रकार बलभद्रजी के पास भी उनका अभीष्ट महान् हल और सुनन्द नामक मूसल आकाश से प्राप्त हो गये। फिर भगवान् श्री कृष्ण-बलरामजी के साथ रथारूढ़ हो शत्रु से युद्ध करने चले। उस समय वासुदेव ने चतुर्भुज रूप धारण कर लिया था।

चतुर्भुजवपुर्भूत्वा शङ्खचक्रगदासिभृत्।
किरीटी कुण्डली स्रग्वी संग्रामाभिमुखं ययौ॥

(पद्मपुराण, उ. ख. २७३।१४)

'भगवान् ने चतुर्भुज रूप धारण करके हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा और तलवार ले ली तथा मस्तक पर किरीट धारण किया। दोनों कानों में कुण्डल तथा गले में वनमाला धारण करके संग्राम की ओर प्रस्थान किया।

भयानक घोर संग्राम हुआ। जरासंध की तेईस अक्षौहिणी सेना मार डाली गयी और रोहिणीनन्दन बलराम जरासंध को पकड़कर, उसका गला दबाकर मूसल से उस पर प्रहार करना ही चाहते थे कि दयामय श्रीकृष्ण ने उसे छुड़ा दिया। अत्यन्त अपमानित होकर जरासंध युद्ध-भूमि से वापस लौटा।

इस प्रकार सत्रह बार तेईस-तेईस अक्षौहिणी सेना के साथ मगधराज मथुरा पर चढ़ आया, किन्तु प्रत्येक बार उसकी समस्त सेना गाजर-मूली की भाँति काट दी गयी और प्रत्येक बार श्रीकृष्ण की सहायता से यदुवंशी जरासंध को अत्यन्त उपेक्षा पूर्वक छोड़ते गये।

जिस समय मगधराज जरासंध अपनी विशाल वाहिनी सेना द्वारा मथुरा को अठारहवीं बार घेरने वाला था, उसी समय पृथ्वी का अद्वितीय वीर कालयवन अपनी तीन करोड़ म्लेच्छों की सेना के साथ मथुरा पर चढ़ बैठा। नीति-निपुण श्रीकृष्ण ने तुरन्त विश्वकर्मा के द्वारा समुद्र के बीच में एक विशाल एवं श्रेष्ठ नगर का निर्माण कराया। देवराज इन्द्र ने भगवान् के लिए दिव्य सुधर्मा सभा भेज दी। तब भगवान् श्रीकृष्ण ने उक्त सम्पूर्ण सुविधाओं से सम्पन्न द्वारकानगरी में अपने समस्त स्वजन-सम्बन्धियों को अचिन्त्य महाशक्ति योगमाया के द्वारा पहुँचा दिया और शेष प्रजा की रक्षा के लिए बलरामजी को नियुक्त कर उनके परामर्श

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

से नवनीरदवपु नन्दकुमार पीताम्बर एवं गले में कमलों की माला धारण किये, अस्त्र-शस्त्र रहित, एकाकी नगर के द्वार से बाहर निकल गये। नारदजी के बतलाये हुए अनुसार श्रीवत्सचिह्नाङ्कित, कमलनयन, चतुर्भुज भुवनमोहन प्रभु को जाते देख कर कालयवन भी बिना किसी शस्त्र के युद्ध का निश्चय कर उनके पीछे दौड़ा। प्रभु उसके आगे भागे। भागते-दौड़ते प्रभु एक गुफा में प्रवेश कर गये। कालयवन भी उनके पीछे-पीछे गुफा में चला गया वहाँ उसने एक व्यक्ति को दुपट्टा ओढ़े हुए सोते देखा। उसने कुपित होकर कठोर पाद-प्रहार किया तो इक्ष्वाकुवंशी महाराज मांधाता के पुत्र मुचुकुन्द की निद्रा टूट गई और उसकी कुपित दृष्टि पड़ते ही कालयवन वहीं जलकर भस्म हो गया। फिर महाराज मुचुकुन्द ने श्रीभगवान् का दर्शन किया तो अत्यन्त पुलकित होकर उसने भगवान् से प्रार्थना करते हुए कहा—

चिरमिह वृजिनार्तस्तप्यमानोऽनुतापै—
रवितृषषड्मित्रोऽलब्धशान्तिः कथंचित्।
शरणद समुपेतस्त्वत्पदाब्जं परात्म—
न्नभयमृतमशोकं पाहि माऽऽपन्नमीश॥

(श्रीमद्भागवत १०।५१।५८)

'भगवन्! मैं अनादिकाल से अपने कर्मफलों को भोगते-भोगते अत्यन्त आर्त हो रहा था, उनकी दुःखद ज्वाला रात-दिन मुझे जलाती रहती थी। मेरे छः शत्रु (पाँच इन्द्रिय और एक मन) कभी शान्त न होते थे, उनकी विषयों की प्यास बढ़ती ही जा रही थी। कभी किसी प्रकार एक क्षण के लिए भी मुझे शान्ति नहीं मिली। शरणदाता! अब मैं आपके भय, मृत्यु और शोक से रहित चरण-कमलों की शरण में आया हूँ। समस्त जगत् के एक मात्र स्वामी! परमात्मन्! आप मुझ शरणागत की रक्षा कीजिये।'

इक्ष्वाकुनन्दन राजा मुचुकुन्द ने भगवान् की परिक्रमा की और उनके चरण-कमलों में प्रणाम कर गुफा से बाहर निकले तथा तन, मन और प्राण से श्री भगवान् आराधना के लिए श्रीबदरिकाश्रम में चले गये। इधर भगवान् मथुरा में लौट आये।

कालयवन की विशाल सेना अब तक मथुरापुरी को घेरे हुए पड़ी थी। श्री कृष्ण ने म्लेच्छों की उस विशाल वाहिनी का संहार कर उनका समस्त धन छीन लिया और उसे बैलों आदि पर लदवाकर द्वारकापुरी भिजवा दिया। इसी समय पुनः मगधराज अठारहवीं बार तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर आ गया। श्रीकृष्ण और बलराम उससे बचकर निकल गये। किन्तु जरासंध उनका पीछा करता रहा। दोनों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भाई प्रवर्षण पर्वत की ओट में जा छिपे। जरासंध ने उस पर्वत के चारों ओर आग लगा दी। उसने समझा कि श्रीकृष्ण-बलभद्र इस अग्नि में जलकर भस्म हो गये, पर वे सर्वात्मा सुरक्षित निकलकर द्वारकापुरी में पहुँच गये। वहाँ सभी यदुवंशी स्वर्गीय सुखों का उपभोग करने लगे।

इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न रैवत नाम के नरपति की सर्व शुभ लक्षणों से युक्त रेवती नामक एक परम सुन्दरी कन्या थी। उन्होंने अत्यन्त आदरपूर्वक उसका विवाह रोहिणीनन्दन श्रीबलरामजी के साथ कर दिया। बलरामजी ने प्रसन्नतापूर्वक वैदिक-विधि से रेवती का पाणिग्रहण किया।

विदर्भराज धर्मात्मा भीष्मक के रुक्मी, रुक्मरथ, रुक्मबाहु, रुक्मकेश और रुक्ममाली नामक पाँच पुत्र एवं एक अत्यन्त रूपवती कन्या थी। वह लक्ष्मी के अंश से उत्पन्न हुई थी। उसका नाम 'रुक्मिणी' था। भीष्मक का बड़ा पुत्र रुक्मी अपनी बहन रुक्मिणी का विवाह चेदिनरेश राजा दमघोष के पुत्र शिशुपाल के साथ करना चाहता था, किन्तु रुक्मिणी का बाल्यकाल से ही श्रीकृष्ण के प्रति अनुराग था और वे उन्हें ही पतिदेव के रूप में प्राप्त करना चाहती थीं।

रुक्मी के परामर्श से महाराज भीष्मक जब रुक्मिणी के विवाह की तैयारी करने लगे, तब रुक्मिणी ने भगवान् श्रीकृष्ण को अपना पति बनाने के उद्देश्य से तुरन्त अपने पुरोहित पुत्र को द्वारकापुरी भेज दिया।

ब्राह्मण देवता द्वारका में श्रीकृष्ण और बलराम से मिले। उन्होंने ब्राह्मण का बड़ा ही स्वागत-सत्कार किया। फिर उनके मुख से रुक्मिणी का सन्देश प्राप्त कर श्रीकृष्ण ने अपने सारथि दारुक को स्मरण किया। वह भगवान् के दिव्य रथ में शैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प और बलाहक नामक चार घोड़े जोतकर ले आया। उसमें सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्र रखे हुए थे। उक्त रथ पर पुरोहित पुत्र के साथ श्रीकृष्ण आरूढ़ हुए। दारुक सारथि ने रथ को पवन-वेग से हाँकना आरम्भ किया। उनके पीछे-पीछे बलभद्रजी भी यदुवंशियों की सेना के साथ कुण्डिनपुर के लिए शीघ्रता से चल पड़े।

कुण्डिनपुर में विवाह की तैयारी हो रही थी शिशुपाल अपने विवाह में श्रीकृष्ण एवं यदुवंशियों के विरोधी शाल्व, जरासंध, दन्तवक्त्र, विदुरथ और पौण्ड्रक आदि सहस्रों वीर मित्रों को ससैन्य लेकर आया था। विवाह के दिन भीष्मक-पुत्री रुक्मिणी बहुमूल्य वस्त्राभरणों को धारण कर भगवती पार्वती की पूजा के लिए अपनी सखियों के साथ नगर के बाहर आयीं। सन्ध्या का समय था। श्रीकृष्ण वहाँ पहुँच गये और पार्वती-पूजन के पश्चात् जब रुक्मिणी अपने रथ की ओर चलीं, तब उनको भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन हुए।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तां राजकन्यां रथमारुरुक्षतीं
जहार कृष्णो द्विषतां समीक्षताम् ।
रथं समारोप्य सुपर्णलक्षणं
राजन्यचक्रं परिभूय माधवः ।।
(श्रीमद्भागवत १०।५४।५५)

'राजकुमारी रुक्मिणीजी रथ पर चढ़ना ही चाहती थीं कि भगवान् श्रीकृष्ण ने समस्त शत्रुओं के देखते-देखते उनकी भीड़ में से रुक्मिणीजी को उठा लिया और सैकड़ों राजाओं के सिर पर पाँव रखकर उन्हें अपने रथ पर बैठा लिया, जिसकी ध्वजा पर गरुड़ का चिह्न लगा हुआ था।'

भगवान् श्रीकृष्ण रुक्मिणीजी को लेकर द्वारका की ओर चल पड़े। यह देख कर जरासंध आदि राजाओं ने रुक्मी के साथ चतुरङ्गिणी सेना लेकर श्रीकृष्ण का पीछा किया।

तब बलरामजी अपने रथ से कूद पड़े और अपने हल तथा मूसल से शत्रुओं की सेना का संहार करने लगे। कुछ ही देर में समस्त शत्रु-सैन्य का विनाश कर डाला। बचे-खुचे सैनिक अपने प्राण बचा कर भाग गये।

उधर रुक्मी श्रीकृष्ण से युद्ध कर रहा था। श्रीकृष्ण ने उसे पकड़कर उसी के दुपट्टे से रथ के पीछे बाँध दिया और फिर हँसते हुए तीक्ष्णधारयुक्त छुरे से उसके सिर को मूँड कर उसे छोड़ दिया। अपमानित होने के कारण उसने अपनी राजधानी में पैर नहीं रखा, एक दूसरा नगर बसाकर वहीं रहने लगा।

श्रीकृष्ण-रुक्मिणी के द्वारका पहुँचने पर बड़ा आनन्दोत्सव मनाया गया तथा शुभ मुहूर्त्त में वैदिक-रीति से देवकीनन्दन श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी का पाणि-ग्रहण किया। फिर पत्नी सहित श्रीकृष्ण ने ब्राह्मणों, राजाओं और बड़े भाई बलराम के चरणों में अत्यन्त आदरपूर्वक मस्तक झुका कर प्रणाम किया। सबकी शुभकामना एवं आशीर्वाद प्राप्त कर भगवान् श्रीकृष्ण एक विशाल सुखमयी अट्टालिका में आनन्दपूर्वक रहने लगे।

श्रीनिकेतन भगवान् श्रीकृष्ण से रुक्मिणी की कोंख से उन्हीं के तुल्य सौंदर्य, वीर्य, सौशील्य आदि सद्गुणों से सम्पन्न कामदेव के अंश प्रद्युम्नजी का जन्म हुआ। प्रद्युम्नजी दस दिन के भी नहीं हुए थे कि उन्हें अपना मारने वाला शत्रु समझकर शम्बरासुर ने हरण कर लिया और सुदूर लवण समुद्र की उत्ताल तरंगों में फेंक दिया। वहाँ उन्हें एक मत्स्य निगल गया। उसे पकड़कर धीवर ने शम्बरा-सुर को भेंट दिया। वह मत्स्य उसके भोजनालय में मायावती (जो माया की सम्पूर्ण

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विद्याओं में पारंगत रति ही थी) के पास पहुँचा। मत्स्य के चीरने पर अत्यन्त रूपवान् शिशु को देखकर वह चकित हुई ही थी कि देवर्षि नारदजी ने वहाँ पहुँच कर उनका परिचय देते हुए विश्वासपूर्वक सावधानी से प्रीतिपूर्वक पालन करने के लिये कहा। मायावती ने उनका अत्यन्त प्रीतिपूर्वक पालन किया। नवयौवन सम्पन्न होने पर मायावती ने उन्हें समस्त स्थिति बतलाते हुए कहा—'नाथ! आप मेरे पति हैं और आपकी माता आपके बिना बड़ा क्लेश पा रही होंगी।' यह सुनकर प्रद्युम्न जी अत्यन्त कुपित होकर शम्बरासुर से युद्ध करने लगे। उन्होंने शम्बरासुर की सात मायाओं को जीतकर स्वयं ने आठवीं का प्रयोग किया तथा सेना सहित शम्बरासुर को मार कर अपनी अनुपम लावण्यवती पत्नी मायावती के साथ विमान में बैठकर द्वारकापुरी पहुँचे। उसी समय सर्वान्तर्यामी भगवान् श्रीकृष्ण के साथ नारदजी ने अन्तःपुर में जाकर रुक्मिणीजी को उनके पुत्र और पुत्रवधू का वृतान्त सुना दिया। तब आनन्द निमग्न होकर देवकीजी, वसुदेवजी, भगवान् श्रीकृष्ण, बलरामजी रुक्मिणीजी तथा अन्य स्त्रियों ने नव-दम्पति का माङ्गलिक सत्कार कर हृदय से लगा लिया। सर्वत्र प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। मङ्गलवाद्य बजने लगे।

× × × × ×

सत्राजित् के तप से प्रसन्न होकर भगवान् सूर्यदेव ने उसको प्रतिदिन आठ भार स्वर्ण प्रदान करने वाली अत्यन्त प्रकाशित स्यमन्तक-मणि देदी थी। उस मणि को द्वारकाधीस श्रीकृष्ण ने महाराज उग्रसेन को देने के लिए कहा तो सत्राजित् ने स्पष्ट अस्वीकार कर दिया।

एक दिन सत्राजित् का भाई प्रसेन उक्त स्यमन्तक-मणि को अपने गले में धारण कर आखेट के लिए वन में गया। वहाँ उसे घोड़े सहित एक सिंह ने मार डाला और उस मणि को छीन लिया। वह मणि सहित गुफा में प्रवेश करने ही जा रहा था कि ऋक्षराज जाम्बवान् ने उसे मार डाला और उक्त मणि को उन्होंने गुफा में ले जाकर बच्चे को खेलने के लिये दे दी।

'स्यमन्त-मणि लेने के लिए सम्भवतः श्रीकृष्ण ने ही मेरे भाई को मार डाला है।' प्रसेन के न लौटने पर, सत्राजित् के यह कहने पर लोगों में काना-फूसी होने लगी। तब अपना कलङ्क दूर करने के लिए भगवान् श्रीकृष्ण कुछ यदुवंशियों को साथ लेकर वन में गये। वहाँ उन लोगों ने प्रसेन और उसके घोड़े को मरा हुआ देखा तथा कुछ ही दूर आगे जाने पर पर्वत पर सिंह को भी मरा पाया। लोगों को समझते देर न लगी कि सिंह ने प्रसेन और घोड़े को तथा बलवान् रीक्ष ने सिंह को मार डाला है।

भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने साथी यदुवंशियों को बाहर बैठा दिया और अकेले ही हाथ में शार्ङ्ग-धनुष और गदा लिए हुए अन्धकाराच्छन्न ऋक्षराज की

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुफा में प्रवेश किया। उक्त गुफा में अनेक मणियों से प्रकाशित अत्यन्त स्वच्छ भवन निर्माण कराया हुआ था। वहाँ एक धाय ने जाम्बवान् के पुत्र को पालने में सुलाकर उसके ऊपरी भाग में उस मणि को लटका दिया था और उक्त मनोहर पालने को धीरे-धीरे हिलाती हुई वह बालक को लोरियाँ सुना रही थी और लोरी गाते हुए वह कहती जा रही थी—

सिंह प्रसेनमवधीत् सिंहो जाम्बवताहतः।
सुकुमारक मा रोदीस्तव ह्येष स्यमन्तकः॥

(पद्मपुराण, उ. ख. २७६।१९)

'प्रसेन को सिंह ने मारा और सिंह जाम्बवान् के हाथ से मारा गया है। सुन्दर कुमार! रोओ मत! यह स्यमन्तक-मणि तुम्हारी ही है।'

उसी समय अपरिचित पुरुष को भीतर आया देखकर धाय भयमान कर चिल्ला उठी। उसका चिल्लाना सुनकर जाम्बवान् अपने कक्ष से बाहर आया तो श्रीकृष्ण को सर्वथा अपरिचित समझ क्रोधपूर्वक मारने को दौड़ा। फिर तो जाम्बवान् और श्रीकृष्ण में युद्ध होने लगा। कई दिन बीत जाने पर जाम्बवान् की शक्ति का ह्रास होने लगा। उनके शरीर का प्रत्येक जोड़ टूटने लगा, तब उन्हें अपने प्रभु दशरथनन्दन श्रीराम के वचन स्मरण हो आये और उन्होंने समझ लिया कि 'पृथ्वी का भार उतारने के लिए मेरे प्राणनाथ श्रीराम अवतरित हो गये हैं और मेरा मनोरथ पूर्ण करने के लिए ही यहाँ पधारे हैं।' तब पृथ्वी पर दण्ड की भाँति लोटकर श्रीभगवान् के चरणों को पकड़कर ऋक्षराज ने नेत्रों से जल बर्षाते हुए कहा—'प्रभो! मेरे पूर्वकाल की युद्ध की अभिलाषा आपने अब पूर्ण कर दी। मैं आपके पहले अवतार से ही आपका भक्त हूँ। मैंने अनजान में अपने स्वामी से युद्ध किया, एतद्‌र्थ दयामय स्वामी! आप मुझे कृपापूर्वक क्षमा कर दें।'

जाम्बवान् ने अनेक भाँति से स्तुति कर भगवान् श्रीकृष्ण को रत्नमय सिंहासन पर बैठाया तथा श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उनकी विविध प्रकार से पूजा की और फिर सर्वदा उनकी पूजा के लिए उन्होंने अपनी अत्यन्त लावण्यवती पुत्री जाम्बवती सहित स्यमन्तक-मणि भी भेंट कर दी।

गुफा के बाहर बारह दिनों तक प्रतीक्षा करने के पश्चात् भगवान् के साथ आये हुए यदुवंशी अत्यन्त दुःखी हो द्वारका को लौट गये। सभी द्वारकावासी अत्यन्त दुःखित हो सत्राजित् की निन्दा करने लगे और अपने प्राणवल्लभ श्रीकृष्ण के सकुशल लौट आने के लिए देवाराधना में लग गये। उसी समय अपनी नवीन पत्नी जाम्बवती के साथ स्यमन्तक-मणि लिए श्रीकृष्ण भी लौट आये। फिर तो द्वारका-वासियों की प्रसन्नता की सीमा न रही। भगवान् श्रीकृष्ण ने मणि सत्राजित् को

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लौटा दी, किन्तु सत्राजित् अत्यन्त लज्जित हो मुँह लटकाये हुए लौटा। उसने अपने अपराध का दोष दूर करने के लिए शील-स्वभाव, सुन्दरता, उदारता आदि सद्गुणों की खान अपनी पुत्री सत्यभामा के साथ स्यमन्तक-मणि भी भगवान् को विधिवत् विवाह करके समर्पित कर दी; किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने स्यमन्तक-मणि सत्राजित् को ही लौटा दी।

× × × × ×

सर्वज्ञ भगवान् श्रीकृष्ण और बलरामजी कुन्ती सहित पाण्डवों के जल मरने के समाचार से व्यथित होकर कुलोचित व्यवहार का पालन करने के लिए भीष्म-पितामह, कृपाचार्य, विदुर, गान्धारी और द्रौणाचार्य से मिलकर समवेदना और सहानुभूति प्रकट करने के लिए हस्तिनापुर पहुँचे और इधर उनकी अनुपस्थिति में अक्रूर और कृतवर्मा ने शतधन्वा को बहकाकर सत्राजित् की हत्या करा दी तथा शतधन्वा ने उक्त स्यमन्तक-मणि ले ली।

अपने पिता की मृतदेह को कड़ाहे में रखवा कर रोती हुई सत्यभामा हस्तिनापुर पहुँची और श्रीभगवान् को अपने पिता की हत्या का समाचार कह सुनाया। श्रीकृष्ण और बलराम तुरंत द्वारका लौट आये।

जब शतधन्वा को ज्ञात हुआ कि श्रीकृष्ण मुझे मारना चाहते हैं, तब उसने कृतवर्मा और अक्रूर से सहायता माँगी; किन्तु उनकी ओर से निराशापूर्ण उत्तर पाकर अपने प्राण जाने के भय से घोड़े पर चढ़कर भाग पड़ा। भगवान् श्रीकृष्ण और बलराम भी रथ पर चढ़कर उसके पीछे लगे। मिथिला के निकट एक उपवन के समीप शतधन्वा का अश्व गिर पड़ा, तब वह पैदल ही भागा। श्रीकृष्ण भी रथ से कूद कर पैदल ही उसके पीछे दौड़े और अपने तीक्ष्ण चक्र में ऊसका सिर काट लिया; किन्तु उसके पास भी स्यमन्तक-मणि न पाकर उन्होंने लौटकर यह बात बलरामजी को बतला दी। बलरामजी विदेहराज जनकजी से मिलने चले गये और श्रीकृष्ण को उन्होने द्वारका लौटा दिया। इधर अक्रूर और कृतवर्मा भी भय के मारे द्वारका से भाग गये।

श्रीभगवान् ने अपना दूत भेजकर अक्रूर को बुलवाया और उनका बड़ा स्वागत-सत्कार किया। फिर श्रीकृष्ण ने कहा—'चाचाजी मैं जानता हूँ, स्यमन्तक-मणि आपके पास है। यद्यपि अब उस मणि पर मेरे पुत्रों का अधिकार होना चाहिए, फिर भी वह आपके पास ही रखिये। बलरामजी, सत्यभामा और जाम्बवती आदि मेरी बात का विश्वास नहीं करते। आप केवल मणि को इन लोगों को दिखलाकर इनका सन्देह-निवारण कर दीजिये।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीभगवान् कृष्ण की वाणी से आश्वास्त होकर अक्रूरजी ने वस्त्र में लपेटी हुई सूर्यदीप्ति-तुल्य वह मणि निकाल कर उन्हें दे दी। भगवान् श्रीकृष्ण ने उक्त मणि अपने सभी यदुवंशियों, सत्यभामा, जाम्बवती आदि को दिखाकर अपना कलङ्क दूर कर दिया और समर्थ होने पर भी उन्होंने अपने वचन के अनुसार उक्त स्यमन्तक-मणि अक्रूरजी को लौटा दी।*

लाक्षा-भवन से पाण्डवों के सकुशल बचकर निकल जाने का समाचार चारों ओर फैल गया था। अतएव भगवान् श्रीकृष्ण सात्यकि आदि यदुवंशियों के साथ उनसे मिलने इन्द्रप्रस्थ पधारे पाण्डवों को जैसे नवजीवन ही मिल गया। माता कुन्ती ने कहा—

न तेऽस्ति स्वपरभ्रान्तिर्विश्वस्य सुहृदात्मनः।
तथापि स्मरतां शश्वत् क्लेशान् हंसि हृदि स्थितः॥

(श्रीमद्भागवत १०।५८।१०)

"मैं जानती हूँ कि तुम सम्पूर्ण जगत् के परम हितैषी ही नहीं आत्मा हो। 'स्व' और 'पर' की भ्रान्ति तुम्हारे अन्दर नहीं है। ऐसी बात होने पर भी श्रीकृष्ण! जो सर्वदा तुम्हें स्मरण करते हैं, उनके हृदय में आकर तुम बैठ जाते हो और उनकी क्लेश-परम्परा को सदा के लिए मिटा देते हो।"

भगवान् श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थवासियों के लिए कृतार्थ करते हुए वर्षा ऋतु के चार मास वहीं रहे। एक दिन अर्जुन गाण्डीव धनुष और अक्षय तूणीर लिये श्रीकृष्ण के साथ रथ पर चढ़कर आखेट के लिये वन में गये। वहाँ तृषाधिक्य के कारण यमुना में जल पीने पहुँचे तो वहाँ कालिन्दी को श्रीकृष्ण-प्राप्ति के लिये तप करते हुए देखा। कालिन्दी की अतिशय प्रीति देखकर सर्वज्ञ श्रीकृष्ण उन्हें रथ पर बैठाकर युधिष्ठर के पास पहुँचे।

सर्वसमर्थ श्रीकृष्ण ने पाण्डवों की प्रत्येक सुख-सुविधा का ध्यान रखते हुए विश्वकर्मा के द्वारा अत्यन्त उत्तम भवन बनवा दिया। अग्नि देव को खाण्डव-वन का

---

* भगवान् श्रीकृष्ण को यह मिथ्या कलङ्क क्यों लगा?

चाँद चोथ को देखियो, मोहन भादू मास।
ताहि लग्यो कलङ्क यह, अतिमन भयो उदास॥

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को चन्द्र दर्शन करने से मिथ्या कलङ्क लगता है। अतएव उस दिन चन्द्र-दर्शन नहीं करना चाहिये और कदाचित् उस दिन चन्द्रमा दिखाई दे जाय तो इस स्यमन्तक-मणि की कथा पढ़ने-सुनने से दोष निवारण हो जाता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आहार प्रदान किया और अर्जुन को गाण्डीव धनुष, चार श्वेत घोड़े, एक रथ, दो अक्षय बाण वाले तरकस तथा अभेद्य कवच प्रदान किये।

कुछ दिनों के बाद कंसारि श्रीकृष्ण सबकी अनुमति ले द्वारका लौटे और वहाँ शुभमुहूर्त्त में सविधि कालिन्दी का पाणि-ग्रहण कर उन्हें कृतार्थ किया।

अवन्ती के राजा विन्द और अनुविन्द की सुन्दरी बहन मित्रवृन्दा भगवान् श्रीकृष्ण को हृदय से अपना पति बनाना चाहती थी, पर उनके भाई इसके विरुद्ध थे। भगवान् श्रीकृष्ण ने भरी राजसभा में राजाओं का मान-मर्दन करते हुए उनका हरण कर ले आये और उन्हें विधिपूर्वक अपनी पत्नी बना लिया।

कोसल नरेश नग्नजित् की पुत्री नाग्नजिती का सात दुर्जय बैलों को एक साथ नाथकर विवाह किया। भगवान् श्रीकृष्ण की फूआ श्रुतकीर्ति के पुत्रों ने अपनी बहन भद्रा का विवाह उनके साथ कर दिया। मध्यप्रदेश के राजा की अत्यन्त सुलक्षणा पुत्री लक्ष्मणा को भगवान् देवकीनन्दन अकेले ही स्वयंवर से हर लाये।

× × ×

'पृथ्वीपुत्र भौमासुर ने देवताओं को युद्ध में जीतकर वरुण का जल बर्षाने वाला छत्र, मन्दराचल का मणिपर्वत नामक शिखर—यहाँ तक कि देवमाता अदिति के दो तेजस्वी कुण्डल भी छीनकर देवता, सिद्ध, असुर और राजाओं को बलपूर्वक लाकर अपने अन्तःपुर में बंद कर रखा है। वह गगन में विचरण करने वाला आकाश में ही नगर बसाकर उसके भीतर रहता है। उक्त नगर तीक्ष्ण छुरे की धारा-सदृश पाशों से घिरा सर्वथा सुरक्षित है।' देवराज इन्द्र की यह व्यथा भरी हुई कथा सुनकर देवदेवेश्वर खड़े हो गये और उन्होंने विनतानन्दन गरुड़ को स्मरण किया।

सर्वदेववन्दित गरुड़ तुरन्त प्रभु-चरणों में उपस्थित हुए। भगवान् श्रीकृष्ण ने सत्यभामा सहित गरुड़ पर आसीन होकर, अत्यन्त वेग से नरकासुर के नगर प्राग्ज्योतिषपुर पहुँचकर अपने चक्र से उसके पाशों को काट डाला। मुर-नामक राक्षस कुपित होकर सम्मुख आया तो एक ही झटके में मृत्यु का ग्रास बन गया। फिर मुर के पुत्र ताम्र, अन्तरिक्ष, श्रवण, विभावसु, वसु, नभस्वान् और अरुण ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिये पीठ नामक दैत्य के सेनापतित्व में सहस्रों दानवों के साथ मुरारि पर आक्रमण कर दिया, पर वे क्षणा-धर्म में ही त्रैलोक्येश्वर के हाथों मुक्त हो गये। फिर दैत्यदल का दलन करने वाले प्रभु ने प्राग्ज्योतिषपुर में प्रवेश किया। वहाँ नरकासुर ने पूर्ण शक्ति से श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया, पर प्रभु के चक्र ने उसके दो टुकड़े कर दिये। उसके सहस्रों सैनिक काल-कवलित हुए। शेष प्राण बचा कर भाग गये। पुत्र की मृत्यु हो जाने से दुःखी पृथ्वी ने प्रभु की स्तुति करते हुए कहा—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदाहमुद्धृता नाथ त्वया सूकरमूर्तिना ।
त्वत्स्पर्शसम्भवः पुत्रस्तदायं मय्यजायत ।।
सोऽयं त्वयैव दत्तो मे त्वयैव विनिपातितः ।
गृहाण कुण्डले चेमे पालयास्य च संततिम् ।।
प्रसीद सर्वभूतात्मन्नरकेण तु यत्कृतम् ।
तत्क्षम्यतामदोषाय त्वत्सुतस्त्वन्निपातितः ।।

(विष्णुपुराण ५।२९।२३-२४,२९)

'हे नाथ ! जिस समय वराहरूप धारण कर आपने मेरा उद्धार किया था, उसी समय आपके स्पर्श से यह पुत्र उत्पन्न हुआ था। इस प्रकार आपने ही मुझे यह पुत्र दिया था और अब आपने ही इसको नष्ट कर दिया, आप ये कुण्डल लीजिये और अब इसकी संतान की रक्षा कीजिये। हे सर्वभूतात्मन् ! आप प्रसन्न होइये और इस नरकासुर के सम्पूर्ण अपराध क्षमा कीजिये। निश्चय ही अपने पुत्र को निर्दोष करने के लिये आपने उसे स्वयं मारा है।'

'तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो।' यह कहकर भगवान् श्रीकृष्ण ने अन्तःपुर में जाकर सोलह हजार एकसो कन्याएँ देखीं। ये सब अपने उद्धारक श्यामसुन्दर के दिव्य सौन्दर्य एवं अलौकिक तेज से प्रभावित होकर उन्हें अपना पति मान बैठीं। सर्वान्तर्यामी श्रीकृष्ण ने उन्हें पालकियों ने बैठाकर ससम्मान द्वारका भिजवा दिया। इसके साथ ही नरकासुर की अतुल सम्पत्ति, सहस्रों हाथी और घोड़े भी द्वारका भेजकर भगवान् ने देवमाता अदिति के कुण्डल, वरुण का छत्र और मणिपर्वत गरुड़ की पीठ पर रखे और सत्यभामा सहित स्वर्ग पहुँचे। वहाँ उन्होंने माता अदिति के चरणों में प्रणाम कर उनके कुण्डल दिये तो उन्होंने भगवान् की स्तुति करते हुए कहा—

यैः स्वधर्मपरैर्नाथ नरैराराधितो भवान् ।
ते तरन्त्यखिलामेतां मायामात्म विमुक्तये ।।

(विष्णुपुराण ५।३०।१६)

'हे नाथ ! जो स्वधर्म परायण पुरुष आपकी आराधना करते हैं, वे अपने मोक्ष के लिये इस सम्पूर्ण माया को पार कर जाते हैं।'

भगवान् श्रीकृष्ण-माता अदिति से आशीष् प्राप्तकर, सत्यभामा के इच्छानुसार नन्दनवन से पारिजात वृक्ष (कल्पवृक्ष) ले, गरुड़ पर रखकर द्वारका के लिये प्रस्थान किया। समाचार पाकर देवताओं सहित देवेन्द्र शस्त्रास्त्रों से सज्जित हो प्रभु से युद्ध करने लगे, परन्तु कुछ ही देर में पराजित होकर उन्हें लौट जाना पड़ा।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वारका लौटकर भगवान् ने पारिजात महावृक्ष को सत्यभामा के गृहोद्यान में लगा दिया और शुभमुहूर्त्त में नरकासुर के बन्धन से मुक्त सोलह हजार एकसो कन्याओं से उतने ही रूपधारण कर विधिपूर्वक विवाह किया। जगत्स्रष्टा विश्व-रूपधारी भगवान् श्रीकृष्ण रात्रि में उन सभी महिमामयी भाग्यशालिनी पत्नियों के साथ रहकर उन्हें अलौकिक सुख प्रदान करते थे।

× × ×

परम भक्त बली का बससे बड़ा पुत्र सहस्रबाहु बाणासुर अत्यन्त सुन्दर नगर शोणितपुर में राज्य करता था। उसकी पुत्री उषा एक दिन स्वप्न में श्रीकृष्ण के परम सुन्दर पौत्र प्रद्युम्नकुमार अनिरुद्ध का दर्शन कर उन पर मोहित हो व्याकुल हो गयी। बाणासुर के मन्त्री कुम्भाण्ड की प्रिय पुत्री, चित्रकला में सुपटु उषा-सहचरी चित्ररेखा ने चित्रों के माध्यम से उषा के प्रियतम को पहचान लिया और योगविद्या में निपुण होने के कारण वह द्वारका से रात्रि में अनिरुद्ध को ले आयी। इस प्रकार अनिरुद्ध उषा के अन्तःपुर में उसकी प्रेमपूर्ण सेवा से प्रसन्न होकर रहने लगे।

कुछ समय पश्चात् जब यह बात बाणासुर को ज्ञात हो गयी तो अपनी सेना सहित वहाँ पहुँचा, अनिरुद्धजी ने समस्त सेना को मार भगाया तो बाणासुर ने नागपाश का प्रयोग कर उनको बाँध लिया। यह संवाद नारदजी ने श्रीकृष्ण और बलरामजी के पास पहुँचा दिया।

श्रीकृष्ण गरुड़ पर चढ़कर और बलभद्र यदुवंशियों सहित अत्यन्त शीघ्रता से शोणितपुर पहुँच गये। भयानक युद्ध होने लग गया। पूर्वकाल में बाणासुर के तप से संतुष्ट होकर पार्वती-वल्लभ आशुतोष शिव ने उसकी रक्षा का वरदान दे दिया था, इसलिये वे स्वयं उपस्थित होकर युद्ध करने लगे, किन्तु केतु के जृम्भणास्त्र से जँभाई लेते हुए रथ में एक ओर सो गये। तब भगवान् श्रीकृष्ण ने बाणासुर की भुजाओं का बन काट डाला, केवल दो भुजाएँ शेष रह गयीं, तब महामहेश्वर ने श्रीकृष्ण से प्रार्थना की—

अस्मत्संश्रयदृप्तोऽयं नापराधी तवाव्यय।
मया दत्तवरो दैत्यस्ततस्त्वां क्षमयाम्यहम् ॥

(विष्णुपुराण ५।३३।४४)

'हे अव्यय! यह आपका अपराधी नहीं है, यह तो मेरा आश्रय पाने से ही गर्वीला हो गया है। इस दैत्य को मैंने ही वर दिया था, इसलिये मैं ही आपसे इसको क्षमा दिलाता हूँ।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'आपने वर दिया है, तब यह अवश्य जीवित रहे।' भगवान् श्रीकृष्ण ने त्रिनयन से अत्यन्त आत्मीयता एवं प्रीति पूर्वक कहा। 'आपकी वाणी की रक्षा के लिये मैं चक्र को रोक लेता हूँ। इसे आपने अभय दिया है, वह सब मैंने भी दिया।' फिर श्रीकृष्ण ने वृषभध्वज से कहा—

योऽहं स त्वं जगच्चेदं सदेवासुरमानुषम्।
मत्तो नान्यदशेषं यत्तत्त्वं ज्ञातुमिहार्हसि॥

(विष्णुपुराण ५।३३।४८)

'आप यह भली प्रकार समझ ले कि जो मैं हूँ, वह आप हैं, तथा देव, असुर और मनुष्यों सहित यह सम्पूर्ण जगत् मुझ से भिन्न नहीं है।'

भगवान् नीलकण्ठ विदा हुए। तदनन्तर बाणासुर ने भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में प्रणाम कर अनिरुद्ध को बन्धनमुक्त करके उनकी वस्त्राभूषणों से पूजा की और उन्हें अपनी प्राणप्रिय पुत्री उषा का दान कर दिया। फिर प्रसन्नतापूर्वक भगवान् श्रीकृष्ण, हलायुध, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और उषा तथा समस्त यदुवंशी सेना द्वारका लौटी। द्वारका में आनन्दोत्सव मनाया गया।

× × × × ×

एक दिन साम्ब, प्रद्युम्न, चारुभानु और गद आदि यदुवंशी परस्पर वार्तालाप कर रहे थे कि कूप में एक पर्वत तुल्य विशाल गिरगिट पड़ा हुआ है। जगदुद्धारक श्रीकृष्ण ने यह बात सुनी और तत्काल कूप पर पहुँचे। उन्होंने गिरगिट को पकड़ने के लिए उसका स्पर्श किया तो वह तेजस्वी स्वर्गीय देवता समान हो गया। उसने श्रीकृष्ण के चरणों में प्रणाम कर कहा कि 'प्रभो! भूल से ब्राह्मण को दान की हुई एक गाय दूसरे ब्राह्मण को दान-रूप में देने से मेरी यह दुर्गति हुई थी। अब मैं आपके परम पावन कर-कमलों के स्पर्श से मेरे सारे पाप-ताप दूर हो गये। मैं धन्य हो गया।'

परम धर्मात्मा एवं महादानी इक्ष्वाकुनन्दन राजा नृग ने देवदेवेश्वर श्रीकृष्ण के चरण-कमलों में बार-बार वन्दना की एवं उनकी आज्ञा द्वारा श्रेष्ठ विमान में बैठकर परधाम को गये।

श्रीकृष्ण ने यदुवंशियों को समझाया—'ब्राह्मणों का सदा सम्मान करो। ब्राह्मणों का धन कभी भूल से भी मेरे कोष में न आये, क्योंकि जो ब्राह्मणों के धन की इच्छा करते हैं—उसे छीनने की तो बात ही क्या? वे इस जगत् में अल्पायु, शत्रुओं से पराजित और राज्यभ्रष्ट होते हैं और मृत्यु के बाद भी वे दूसरों को कष्ट देने वाले सर्प होते हैं।' इस प्रकार उपदेश देकर भगवान् श्रीकृष्ण अपने महलों में चले गये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करूषनरेश पौण्ड्रक लोगों के बहकाने से अपने आपको श्रीभगवान् का अवतार समझने लगा। उसने श्रीकृष्ण के पास सन्देश भेजा—

'भगवान् वासुदेव मैं हूँ। मैंने जगत् की रक्षा के लिए पृथ्वी पर अवतार लिया है। तुम अपना मिथ्या 'वासुदेव' नाम त्याग कर मेरी शरण में आ जाओ, अन्यथा युद्ध करो।'

उस समय पौण्ड्रक काशीराज के पास था। भगवान् श्रीकृष्ण काशी पहुँचे। वहाँ पौण्ड्रक दो अक्षौहिणी सेना के साथ श्रीकृष्ण से युद्ध करने लगा। उसके मित्र काशीराज ने भी तीन अक्षौहिणी सेना के साथ उसकी सहायता की।

पौण्ड्रक ने भगवान् विष्णु की तरह पीताम्बर धारण कर रखा था। शङ्ख, चक्र, तलवार, गदा, शार्ङ्ग धनुष और श्रीवत्सचिह्न भी धारण किये हुए थे। उसके वक्षःस्थल पर कृत्रिम कौस्तुभमणि थी और कण्ठ में वनमाला पहन रखी थी। रथ की ध्वजा पर गरुड़चिह्न और मस्तक पर बहुमूल्य मुकुट और कानों में मकराकृत कुण्डल भी लगा रखे थे।

यह देखकर भगवान् श्रीकृष्ण को हँसी आ गई। युद्ध होने लगा। कुछ ही देर में पौण्ड्रक और काशीराज की विशाल वाहिनी तहस-नहस हो गई। भगवान् ने अपने बाणों द्वारा पौण्ड्रक के रथ को तोड़-फोड़ दिया और चक्र से उसका मस्तक काट लिया और एक ही बाण से काशीराज का सिर धड़ से ऊपर उड़ा कर उनके अन्तःपुर में गिरा दिया। उसको देखकर काशी-निवासी अत्यन्त विस्मय में पड़ गये।

इस प्रकार पौण्ड्रक और काशीराज को मुक्ति प्रदान कर भगवान् श्रीकृष्ण द्वारिका लौट गये।

× × × × ×

जरासंध के बंदीगृह में पड़े हुए बीस हजार दुःखी नरेशों की उनके दूत के मुख से मुक्ति की प्रार्थना सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण ने पत्नियों सहित इन्द्रप्रस्थ के लिए प्रस्थान किया। पाण्डवों ने अपने प्राणाधार वासुदेव भगवान् के वहाँ पहुँचने पर स्वागत-सत्कार किया। उनको असीम आनन्द प्राप्त हो रहा था। धर्मराज युधिष्ठर ने प्रार्थना करते हुए कहा—

त्वत्पादुके अविरतं परि ये चरन्ति
ध्यायन्त्यभद्रनशने शुचयो गृणन्ति।
विन्दन्ति ते कमलनाभ भवापवर्ग—
माशासते यदि त आशिष ईश नान्ये॥

(श्रीमद्भागवत १०।७२।४)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'कमलनाभ ! आपके चरण-कमलों की पादुकाएँ समस्त अमङ्गलों को नष्ट करने वाली हैं। जो लोग निरन्तर उनकी सेवा करते हैं, ध्यान और स्तुति करते हैं, वास्तव में वे ही पवित्रात्मा हैं। वे जन्म-मृत्यु के चक्कर से छुटकारा पा जाते हैं और यदि वे सांसारिक विषयों की अभिलाषा करें तो उन्हें उनकी भी प्राप्ति हो जाती है। परन्तु जो आपके चरण-कमलों की शरण नहीं ग्रहण करते, उन्हें मुक्ति तो मिलती ही नहीं, सांसारिक भोग भी नहीं मिलते।'

फिर भगवान् के परामर्श से महान् राजसूय-यज्ञ का निर्णय हुआ और महाराज युधिष्ठिर ने अपने भाइयों को दिग्विजय का आदेश दिया। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन और भीम के साथ ब्राह्मणों के वेष में जरासंध की राजधानी गिरिव्रज पहुँचे। इस त्रिमूर्ति को देखकर जरासंध ने प्रणाम के अनन्तर इनकी पूजा करके कहा—'द्विजवरो ! आप लोगों ने किस कारण से पधारने का कष्ट किया है ? आज्ञा दें। मैं अवश्य आपकी अभिलाषा पूरी करूँगा।'

सम्पूर्ण चराचर के वन्दनीय श्रीभगवान् बोले—

'राजन् ! हम क्रमशः कृष्ण, अर्जुन और भीम हैं। तुम हम तीनों में से किसी एक के साथ द्वन्द्व-युद्ध स्वीकार करो।'

जरासंध ने कहा—'अच्छी बात है। मैं भीम के साथ युद्ध स्वीकार करता हूँ।' सत्ताईस दिनों तक युद्ध चलता रहा। अन्ततः भगवान् के संकेत से भीम ने जरासंध के चीर कर दो टुकड़े कर दिये।

फिर भगवान् ने बन्दी नरपतियों को मुक्त कर जरासंध के पुत्र सहदेव के द्वारा उनको वस्त्राभूषणों से सम्मानित कराया। मुक्त नरेशों ने श्रीभगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में प्रणाम कर उनकी स्तुति की और उनसे भक्ति का वरदान प्राप्त कर अपनी-अपनी राजधानियों को चले गये।

इसके पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ पहुँचे। वहाँ राजसूय-यज्ञ का आयोजन हुआ। अग्रपूजा किसकी होनी चाहिए, इस पर अधिक देर तक विचार-विमर्श होते देखकर श्रीभगवान् की महिमा और उनके प्रभाव से परिचित सहदेव ने कहा—

विविधानीह कर्माणि जनयन् यदवेक्षया।
ईहते यदयं सर्वः श्रेयो धर्मादिलक्षणम्॥
तस्मात् कृष्णाय महते दीयतां परमार्हणम्।
एवं चेत् सर्वभूतानामात्मनश्चार्हणं भवेत्॥

(श्रीमद्भागवत १०।७४।२२-२३)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'समग्र जगत् श्रीकृष्ण के ही अनुग्रह से अनेकों प्रकार के कर्मों का अनुष्ठान करता हुआ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप पुरुषार्थों का सम्पादन करता है। इसलिए सबसे महान् भगवान् श्रीकृष्ण की ही अग्रपूजा होनी चाहिये। इनकी पूजा करने से समस्त प्राणियों की तथा अपनी भी पूजा हो जाती है।'

'सर्वोत्तम ! सभी सभासदों के उच्चघोष से प्रमोद्रेक से विह्वल धर्मराज युधिष्ठिर ने भगवान् श्रीकृष्ण के जगद्वन्द्य, सुर-मुनि पूजित, परम दुर्लभ, पावनतम चरण-कमलों को पखार कर चरणोदक का पान किया, उसे मस्तक पर चढ़ाया और अपने नेत्रों में लगाया तथा प्रेमानन्दपूरित हृदय से पीताम्बरादि बहुमूल्य वस्त्राभूषणों से श्रीभगवान् श्रीकृष्ण की पूजा कर वे 'आपकी जय हो ! आपकी जय हो ! का उच्चघोष करने लगे। आकाश से विविध रंगों के सुमनोहर सुगन्धित पुष्पों की वर्षा होने लगी।

यह देखकर शिशुपाल जल उठा। उसने सर्वशक्ति सम्पन्न, महामहिम श्रीभगवान् श्रीकृष्ण के लिये अपशब्दों का प्रयोग करना आरम्भ किया। श्रीकृष्ण कुछ देर तो उसके दुर्वचन सहन करते रहे, किन्तु अन्त में उन्होंने सुदर्शन चक्र से उसका मस्तक उतार लिया। शिशुपाल के शरीर से एक ज्योति निकलकर श्रीभगवान् में समा गयी।

महाराज-युधिष्ठिर ने विधिपूर्वक यज्ञ सम्पन्न कर अवभृथ-स्नान किया। भगवान् श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ से द्वारिका पहुँचे तो उन्होंने देखा कि शिशुपाल के सखा शाल्व ने अपने अद्भुत विमान सौभ पर आरूढ़ होकर सम्पूर्ण द्वारकापुरी को त्रस्त कर रखा है। प्रद्युम्न, सात्यकि, चारुदेष्ण, साम्ब, भाइयों के साथ अक्रूर, कृतवर्मा, भानुविन्द, गद, शुक्र, सारण आदि बहुत से वीर यदुवंशियों के साथ शाल्व से घमासान भयंकर युद्ध कर रहे थे, किन्तु मायावी शाल्व के सामने वे उसके सैनिकों का तो संहार करते जा रहे थे, पर स्वयं शाल्व माया से बच जाता। यदुवंशी पीड़ित हो रहे थे। मायापति श्रीहरि ने शाल्व की माया नष्ट करदी। उनके आयुधों की दुस्सह चोट से शाल्व का विमान खण्ड-खण्ड होकर समुद्र में जा गिरा, पर शाल्व गदा लेकर श्रीकृष्ण के सम्मुख आ डटा। दयामय भगवान् ने देर करना उचित न समझ कर अपने परम तेजस्वी सुदर्शन चक्र से धृष्ट शाल्व का मस्तक उतार लिया।

अपने मित्र शिशुपाल, शाल्व और पौण्ड्रक के वध का समाचार पाकर हाथ में वज्रतुल्य गदा लेकर दन्तवक्त्र अकेला ही श्रीकृष्ण से बदला लेने पैदल ही पहुँच गया। मुरारि भी कौमोदकी गदा लेकर सामने आ डटे। दन्तवक्त्र के भयानक गदा-प्रहार को सहन कर मधुसूदन खड़े रहे और जब भगवान् वासुदेव ने बदले में उसके वक्षःस्थल पर अपनी कौमोदकी गदा का भीषण प्रहार किया, तब उसका वक्ष चूर्ण-चूर्ण हो गया, उसकी आंखें निकल आयीं और रक्त-वमन करता हुआ वह काल के

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गाल में समा गया। शिशुपाल के ही समान दन्तवक्त्र के मृत शरीर से अत्यन्त सूक्ष्म-ज्योति निकलकर देवकीनन्दन में समा गयी।

दन्तवक्त्र की मृत्यु का समाचार पाकर उसका भाई विदूरथ अत्यन्त कुपित हो तलवार हाथ में लेकर श्रीकृष्ण के पास आ गया। वह भगवान् श्रीकृष्ण पर प्रहार करने ही वाला था कि उन्होंने अपने चक्र से उसका मस्तक उतार कर उसे अपने दुर्लभ धाम पहुँचा दिया।

इस प्रकार शाल्व, दन्तवक्त्र और विदूरथ को मारकर भगवान् श्रीकृष्ण ने द्वारिकापुरी में प्रवेश किया। द्वारिका में सर्वत्र आनन्दोत्सव मनाया जाने लगा। द्वारका-वासियों को भगवान् श्रीकृष्ण नित्य-नूतन सुख प्रदान करते रहे।

× × ×

भगवान् श्रीकृष्ण और बलभद्र के सहपाठी, बालसखा, ब्रह्मज्ञानी विषयों से विरक्त, शान्तचित्त और जितेन्द्रिय सुदामा नामक दरिद्र ब्राह्मण अपनी साध्वी पत्नी के अनुरोध से भगवान् श्रीकृष्ण से मिलने द्वारिकापुरी पहुँचे। भगवान् श्रीहरि ने देखते ही अत्यन्त प्रीतिपूर्वक उन्हें गले से लगा लिया। श्रीभगवान् के नेत्रों में प्रेम के आँसू बहने लगे। उन्होंने अपने मित्र को अपने दिव्य एवं अनुपम रत्न-जटित सिंहासन पर बैठाया और उनके पाँव पखार कर चरणोदक अपने मस्तक पर चढ़ाया। भगवती रुक्मिणी ने चँवर डुलाया। भगवान् ने विविध प्रकार के दुर्लभ व्यञ्जनों का अपने परम मित्र ब्राह्मणदेव को भोजन कराया, रसमय ताम्बूल चवाने को दिया और परमानन्द प्रदान करने वाले, दुर्लभ, परमोत्तम, सुन्दर, नरम-नरम बिछोने लगे हुए अपने पर्यङ्क पर उन्हें लिटाकर उनके चरण दवाये।

कल्पतरु के समान भक्तों के मनोरथ पूर्ण करने वाले, शरणागतवत्सल श्रीकृष्ण की ब्राह्मण भक्ति देखकर सुदामाजी मन-ही-मन उनकी प्रशंसा करने लगे। दूसरे दिन प्रेममूर्ति भगवान् श्रीकृष्ण ने सुदामा से कहा—

'ब्रह्मन्! आप अपने घर से मेरे लिए क्या उपहार लाये हैं? सुदामा ने संकोचवश अपना सिर नीचा कर लिया, किन्तु भिक्षा के रूप में माँगकर लाये हुए चार मुट्ठी चिउड़ों की पुटलिया भगवान् श्रीकृष्ण ने उनके पास से खिसका कर छीन ली और कहा भाभीजी के भेजे हुए उपहार को अब तक आप दबाये ही बैठे थे।

नन्वेतदुपनीतं मे परमप्रीणनं सखे।
तर्पयन्त्यङ्ग मां विश्वमेते पृथुकतण्डुलाः॥

(श्रीमद्भागवत १०।८१।९)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बड़े प्रेम और आदर से कहा—'प्यारे मित्र ! यह तो तुम मेरे लिये अत्यन्त प्रिय भेंट लाये हो। ये चिउड़े तो केवल मुझे ही नहीं, बल्कि सारे संसार को तृप्त करने के लिए पर्याप्त हैं।'

इति मुष्टिं सकृज्जग्ध्वा द्वितीयां जग्धुमाददे।
तावच्छ्रीर्जगृहे हस्तं तत्परा परमेष्ठिनः॥

(श्रीमद्भागवत १०।८१।१०)

'ऐसा कहकर वे उसमें से एक मुट्ठी चिउड़ा खा गये और दूसरी मुट्ठी ज्यों ही भरी, त्यों ही रुक्मिणी के रूप में स्वयं भगवती लक्ष्मीजी ने भगवान् श्रीकृष्ण का हाथ पकड़ लिया। क्योंकि वे तो एक मात्र भगवान् के ही परायण हैं, उन्हें छोड़कर और कहीं जा नहीं सकतीं।'

रुक्मिणीजी ने कहा—'मनुष्य को इसलोक तथा परलोक में सम्पूर्ण सम्पत्तियाँ दिलाने के लिए यह एक मुट्ठी चिउड़ा ही बहुत है। आप तो इतने से ही परम प्रसन्न हो जाते हैं।'

दूसरे दिन भगवान् से विदा होकर जब सुदामा रिक्त हस्त (खाली हाथ) घर के लिए चले, तब उन्होंने श्रीभगवान् की बड़ी कृपा समझी। वे प्रभु की ब्राह्मण-भक्ति, उनकी प्रीति एवं उनके स्वभाव की मन-ही-मन सराहना करते हुए अपने घर के पास पहुँच गये। वहाँ वे द्वारिका जैसी ही दूसरी स्वर्गीय नगरी और उसका वैभव देखकर विस्मित हो गये। बहुमूल्य वस्त्र एवं स्वर्णाभरणों से अलंकृत उनकी पत्नी ने उनकी आरती उतारी और अत्यन्त सुन्दर सुखदायक महल में ले गईं, तब वे गद्गद् होकर कहने लगे—

तस्यैव मे सौहृदसख्यमैत्री
दास्यं पुनर्जन्मनि जन्मनि स्यात्।
महानुभावेन गुणालयेन
विषज्जतस्तत्पुरुषप्रसङ्गः॥

(श्रीमद्भागवत १०।८१।३६)

'मुझे जन्म-जन्म उन्हीं का प्रेम, उन्हीं की हितैषिता, उन्हीं की मित्रता और उन्हीं की सेवा प्राप्त हो। मुझे सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं सदा सर्वदा उन्हीं गुणों के एकमात्र निवास-स्थान महानुभाव भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में मेरा अनुराग बढ़ता जाय और उन्हीं के प्रेमी भक्तों का सत्सङ्ग प्राप्त हो।'

इस प्रकार अपनी बुद्धि से निश्चय कर ब्राह्मण सुदामा त्यागपूर्वक अनासक्त भाव से सर्वात्मा, सर्वसुहृद, भक्त-प्राणधन, ब्राह्मणभक्त श्रीकृष्ण के ध्यान में तल्लीन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हो गये। जीवन के दिन पूरे हो जाने पर अन्त में सुदामा ने सन्तों के एकमात्र आश्रय भगवद्धाम को प्राप्त कर लिया।

× × × × ×

पाण्डवों के तो प्राण सर्वस्व भगवान् श्रीकृष्ण ही थे। प्रत्येक विपत्ति में श्रीकृष्ण उनके सहायक थे। द्यूत में पराजित विवश पाण्डवों की पत्नी द्रौपदी को निर्वस्त्र करने के लिए दुष्ट दुश्शासन ने अपनी सम्पूर्ण शक्ति ही लगा दी, तब आपने वस्त्रावतार धारण कर उसकी लाज बचाई। दुर्योधन ने महर्षि दुर्वासा को वन में पाण्डवों का सर्वनाश करने के लिए भेजा था; किन्तु शाक का पत्ता ग्रहण कर विश्वात्मा श्रीकृष्ण ने विश्व को तृप्त कर दिया और इस प्रकार महर्षि को भयभीत होकर भागने के लिए विवश कर दिया। प्रेमपरवश श्यामसुन्दर विदुर के घर केले के छिलकों को खाकर लक्ष्मी के परोसे हुए अमृतमय व्यञ्जनों को भी भूल गये। वे पाण्डवों के संधि-दूत ही नहीं बने, युद्ध में अर्जुन के सारथि भी बन गये और गीता का ज्ञान प्रदान कर उनमें नवीन प्रेरणा एवं शक्ति भर दी। पितामह भीष्म की प्रतिज्ञा की रक्षा की। रक्षा के लिये अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग कर शस्त्र उठा लिया और विरोधियों के अमोघ अस्त्रों से अनेक बार पाण्डवों की रक्षा की। पाण्डव विजयी हुए। युधिष्ठिर राजा बने। उनका एकमात्र वंशधर अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से मृत्यु के मुख में चला ही गया था, यदि उनके सर्वस्व श्रीकृष्ण ने उसकी रक्षा न की होती।

पृथ्वी के भारभूत राजाओं का वध करने के पश्चात् श्रीभगवान् ने अमित-बल-वैभव उन्मत्त यदुकुल का भी संहार ही हो जाना उचित समझा। इसका निमित्त महर्षि कण्व का शाप बना और सम्पूर्ण यदुवंशी परस्पर लोहमय सरकण्डों से युद्ध कर मर मिटे।

फिर तो श्रीभगवान् का सुग्रीव-पुष्पक (अथवा मेघवपु) नामक रथ घोड़ों से आकृष्ट हो दारुक के देखते-देखते समुद्र के मध्य मार्ग से चला गया। इसके अनन्तर कमललोचन पद्मनाभ के शङ्ख, चक्र, गदा, शार्ङ्गधनुष, तूणीर और खड्ग आदि दिव्य आयुध उनकी परिक्रमा कर सूर्य-पथ से चले गये।

इस प्रकार सबका संहार कर भगवान् श्रीकृष्ण घुटने पर अपना पैर रखे अनेक लताओं से आवृत पीपल वृक्ष के नीचे बैठे हुए यह मर्त्यधाम छोड़कर जाने का विचार कर ही रहे थे। उसी समय जरा नामक व्याध (बहेलिया) ने दूर से श्रीभगवान् के सुकोमल चरण-कमल को मृग समझ कर अपना तीक्ष्ण बाण छोड़ दिया। व्याध ने जब पास में जाकर देखा कि वहाँ देवोपम चतुर्भुज पुरुष के सुकोमल अरुण चरण से रक्त प्रवाहित हो रहा है। भय के मारे व्याध काँपता हुआ अपने अपराध के लिए क्षमा याचना करने लगा।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीकृष्ण ने उस व्याध को अभय ही नहीं किया बल्कि उनकी प्रेरणा से आकाश मार्ग द्वारा एक विमान आया और दयासागर भगवान् ने उसी समय उस व्याध को उस विमान में बैठाकर स्वर्गधाम में पहुँचा दिया।

तदनन्तर निखिल सृष्टि के स्वामी, सर्वव्यापी, सर्वेश्वर, करुणा-सागर, भक्त-प्राणधन, परब्रह्म पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण अपने नित्यधाम गोलोक के लिए प्रस्थित हो गये।

'ऐश्वर्य, धर्म, यश, शोभा, ज्ञान और वैराग्य सब से पूर्णपुरुष, लीलावतार भगवान् श्रीकृष्ण ने मुक्ति का द्वार ही खोल रखा था। आविर्भाव से लीलासंवरण तक उन्मुक्त हस्त से उन करुणासागर ने मोक्ष-वितरण किया। पुण्यात्मा, महात्मा और भक्त ही नहीं, तृण-लता-गुल्म-पादप, सर-सरिता-सागर, रजःकण, चर अचर और अत्यन्त पापात्मा और दुरात्मा, जिन्होंने उन भुवन-पावन करुणामय दाता का दर्शन, उनका स्पर्श, उनका वन्दन एवं उनसे सम्भाषण ही नहीं किया, जिन्होंने उन यशोदानन्दन से बैर, उनसे युद्ध किया, उन्हें अपना शत्रु समझकर उन्हें मार डालना चाहा—जिन्होंने उन समदर्शी श्यामसुन्दर को प्यार किया, जो उनकी विरहाग्नि में तिल-तिल जलते रहे, उनका तो कहना ही क्या, जिन्होंने उन वनमाली को कठोर दुर्वचन कहे - सब-के-सब उस परमानन्द सिन्धु के अनुग्रह द्वारा परमानंद सिन्धु में सदा के लिये निमज्जित हो गये। उनका जन्म-मरण से सदा के लिए छुटकारा हो गया।

धन्य थे वे गोप, गोपकुमार, गोप-वधुएँ, गोपकन्याएँ, नन्द-यशोदा, गौएँ, गो-वत्स, वृन्दावन, मथुरा, गिरिराज, वसुदेव-देवकी, कुब्जा, सम्पूर्ण यदुवंशी और कंस, जरासंध, शिशुपाल, शाल्व और विदूरथ आदि असंख्य स्वेच्छाचारी, क्रूरकर्मी असुर जिन्हें अखिलात्मा श्रीहरि के निरन्तर स्मरण, चिन्तन, दर्शन एवं उनकी क्षणिक संनिधि का परम पुण्यमय अवसर प्राप्त हो गया, वे निहाल हो गये। उनका जीवन-जन्म सफल हो गया।

य इदमनुश्रृणोति श्रावयेद् वा मुरारे-
श्चरितममृतकीर्तेर्वर्णितं व्यासपुत्रैः।
जगदघभिदलं तद्भक्तसत्कर्णपूरं
भगवति कृतचित्तो याति तत्क्षेमधाम॥

(श्रीमद्भागवत १०।८५।५९)

'भगवान् श्री कृष्ण की कीर्ति अमर है, अमृतमयी है। उनका चरित्र जगत् के समस्त पाप-तापों को छिन्न-भिन्न करने वाला तथा भक्तजनों के कर्णकुहरों में

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आनन्द-सुधा प्रवाहित करने वाला है। इसका वर्णन स्वयं व्यासनन्दन भगवान् श्री शुकदेवजी ने किया है। जो इसका श्रवण करता है अथवा दूसरे को सुनाता है, उसकी सम्पूर्ण चित्तवृति भगवान् में लग जाती है और वह उन्हीं के परम कल्याण स्वरूप धाम को प्राप्त होता है।'

वृन्दावन विहारी द्वारिकाधीश भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में बारम्बार प्रणाम है।

भगवान् बुद्ध (२३)

सोपान ८

ततः कलौ सम्प्रवृत्ते सम्मोहाय सुरद्विषाम्।
बुद्धो नाम्ना जनसुतः कीकटेषु भविष्यति॥

(श्रीमद्भागवत १।३।२४)

'कलियुग आ जाने पर मगधदेश (विहार) में देवताओं के द्वेषी दैत्यों को मोहित करने के लिये अजन के पुत्ररूप में आपका बुद्धावतार होगा।'

वर्तमान समय में प्रख्यात बौद्ध-धर्म के प्रवर्तक महाराज शुद्धोदन के यशस्वी पुत्र गौतम बुद्ध के रूप में अवतरित हुए थे। पुराण वर्णित और आधुनिक इतिहास कथाओं में यह विवाद का विषय है; किन्तु लेखक का मन्तव्य यहाँ पौराणिक अवतार वर्णन ही है।

पुराण वर्णित भगवान् बुद्धदेव का प्राकट्य गया के समीप कीकट देश में होना और उनके पिता का नाम 'अजन' उपर्युक्त श्लोक में बतलाया गया है।

दैत्यों की शक्ति बढ़ गयी थी। उनके सम्मुख देवता टिक नहीं सके, दैत्यों के भय से प्राण लेकर भाग गये। दैत्यों ने देवधाम स्वर्ग पर अधिकार कर लिया। वे स्वच्छन्द होकर देवताओं के वैभव का उपभोग करने लगे; किन्तु उन्हें प्रायः चिन्ता बनी रहती थी कि पता नहीं, कब देवगण समर्थ होकर पुनः स्वर्ग छीन लें। सुस्थिर साम्राज्य की कामना से दैत्यों ने सुराधिप इन्द्र का पता लगाया और उनसे पूछा—'हमारा अखण्ड साम्राज्य स्थिर रहे, इसका उपाय बतलाइये।' देवाधिप इन्द्र ने शुद्ध भाव से उत्तर दिया—'सुस्थिर शासन के लिये यज्ञ एवं वेदविहित आचरण आवश्यक है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दैत्यों ने वैदिक आचरण एवं महायज्ञ का अनुष्ठान प्रारम्भ किया। फलतः उनकी शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। स्वभाव से ही उद्दण्ड और निरंकुश दैत्यों का उपद्रव बढ़ गया। जगत् में आसुर-भाव का प्रसार होने लगा।

असहाय और निरुपाय दुःखी देवगण जगत्पति श्रीविष्णु के पास गये। उनसे करुण प्रार्थना की। भगवान् ने उन्हें आश्वासन दिया।

श्रीभगवान् ने बुद्ध का रूप धारण किया उनकी वेषभूषा अत्यन्त मलिन थी। वे स्नान नहीं करते थे। दाँत भी साफ नहीं करते थे। उनके कथनानुसार इन क्रियाओं से हिंसा होती थी। उनके हाथ में सर्वदा मार्जनी (झाड़ू) रहती थी और वे मार्ग को मार्जनी (झाड़ू) से बुहारते हुए उस पर चरण रखते जाते थे।

इस प्रकार अत्यन्त अपवित्र वेष में भगवान् बुद्ध दैत्यों के समीप पहुँचे और उनको उपदेश दिया—'यज्ञ करना पाप है। यज्ञ से जीव हिंसा होती है। यज्ञ की प्रज्वलित अग्नि में कितने ही जीव-जन्तु भस्म हो जाते हैं। देखो, मैं जीव हिंसा से बचने के लिये कितना प्रयत्नशील रहता हूँ। पहले झाड़ू लगाकर पथ स्वच्छ करता हूँ, तब उस पर पैर रखता हूँ।'

अत्यन्त मलिन एवं अपवित्र वेष धारण करने वाले संन्यासी बुद्धदेव के उपदेश से दैत्यगण प्रभावित हुए। उन्होंने यज्ञ एवं वैदिक आचरण का परित्याग कर दिया। वे अहिंसा को ही परमधर्म मानने लग गये। परिणामतः कुछ ही दिनों में उनकी शक्ति क्षीण हो गयी।

फिर क्या था, देवताओं ने उन शक्तिहीन दुर्बल एवं प्रतिरोधहीन दैत्यों पर आक्रमण कर दिया। असमर्थ दैत्य पराजित हुए और प्राण-रक्षार्थ यत्र-तत्र भाग खड़े हुए। देवताओं का स्वर्ग पर पुनः अधिकार हो गया।

इस प्रकार संन्यासी के वेष में भगवान् बुद्ध ने त्रैलोक्य का मङ्गल किया।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अध्याय ३, आग्नेय महापुराण
अध्याय १६ के आधार से)

भगवान् बुद्धदेव को नमस्कार है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् कल्कि (२४)

सोपान ६

अथासौ युगसंध्यायां दस्युप्रायेषु राजसु।
जनिता विष्णुयशसो नाम्ना कल्किर्जगत्पतिः ।।

(श्रीमद्भागवत १।३।२५)

'बहुत समय पश्चात् जब कलियुग का अन्त समीप होगा और राजा प्रायः लुटेरे हो जायेंगे, तब जगत् के रक्षक भगवान् विष्णुयश नामक ब्राह्मण के घर कल्कि रूप में अवतीर्ण होंगे।'

अभी कलियुग का प्रथम चरण ही चल रहा है। कलि के पाँच हजार से कुछ ही अधिक वर्ष बीते हैं। इतना समय बीतने पर ही मानव जाति का मानसिक ह्रास एवं नैतिक पतन हो गया है, यह सर्वविदित है। यह स्थिति दिन-प्रति-दिन बढ़ती जायगी। ज्यों-ज्यों कलियुग आता जायगा त्यों-त्यों ही धर्म, सत्य, पवित्रता, क्षमा, दया, आयु, बल और स्मरणशक्ति सबका उत्तरोत्तर लोप होता जायगा। व्यावहारिक सत्य और ईमानदारी समाप्त हो जाएँगे छल, कपट, वाक्पटु व्यक्ति ही कुशल विद्वान् बड़ा महात्मा आदमी समझा जायगा। अर्थहीन व्यक्ति ही असाधु मूर्ख माने जायेंगे। धर्म, तीर्थ, माता-पिता, गुरुजन शास्त्र उपेक्षित और तिरस्कृत होंगे। मनुष्य जीवन का सर्वश्रेष्ठ पुरुषार्थ उदर-भरण ही होगा। धर्म का सेवन यश, बड़ाई, धन प्राप्त करने के लिए ही किया जायगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों में जो शक्तिसम्पन्न होगा, वही शासन करेगा। उस समय के राजा अत्यन्त दुष्ट एवं निष्ठुर होंगे। वे इतने लोभी होंगे कि उनमें और लुटेरों में कोई अन्तर नहीं रह जायगा। उनसे भयभीत होकर प्रजा वनों और पर्वतों में छिपकर तरह-तरह के शाक, कन्द-मूल, मांस, फल-फूल, और बीज-गुठली आदि से अपनी क्षुधा (भूख) मिटायेगी। समय पर वृष्टि नहीं होगी, वृक्ष फल-फूल विहीन होंगे। भयानक सूखा, भयानक सर्दी और भयानक गर्मी पड़ेगी। शासक कर-पर-कर लगाते जायेंगे। प्राणि मात्र धर्म की मर्यादा त्यागकर स्वच्छन्द मार्ग का अनुसरण करेंगे। मनुष्यों की परमायु सोलह वर्ष की ही हो जागयी। कल्किपुराण में लिखा है—

दम्भाचारदुराचारास्तातमातृविहिंसकाः।
वेदहीना द्विजादीनाः शूद्रसेवापराः सदा ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कुतर्कवादबहुला धर्मविक्रयिणोऽधमा ।
वेदविक्रयिणो व्रात्या रसविक्रयिणस्तथाः ।।
मांसविक्रयिणः क्रूराः शिश्नोदरपरायणाः ।
परदाररता मत्ता वर्णसङ्करकारकाः ।।
ह्रस्वाकाराः पापसाराः शठा मठनिवासिनः ।
षोडशाद्वायुषः श्यालबान्धवा नीचसङ्गमाः ।।

(कल्कि पुराण १।१।२४-२७)

कलि के प्रभाव से प्राणियों के शरीर छोटे-छोटे, क्षीण, रोगग्रस्त होने लगेंगे। वेदमार्ग प्रायः नहीं रह जायगा। वानप्रस्थी, संन्यासी आदि विरक्त जीवन व्यतीत करने वाले गृहस्थों की भाँति जीवन व्यतीत करने लगेंगे। मनुष्यों का स्वभाव क्रोध, पाप, अनाचारमय हो जायगा। वे केवल गधों-जैसी बुद्धि वाले तथा गृहस्थी का भार ढोने वाले ही होंगे। धर्म-कर्म का लेश भी नहीं रहेगा। लोग एक दूसरे का धन हड़पने, लूटने, छल-छिद्रों द्वारा प्राप्त करने की ही योजनाओं में बुद्धि का प्रयोग करेंगे। दूसरे का धन प्राप्त करने के लिये वध कर देने में भी संकोच नहीं करेंगे। मनुष्य प्रायः जप, पूजा-पाठ, देवाराधना रहित तथा चोर और नास्तिक होंगे।

पुत्रः पितृवधं कृत्वा पिता पुत्रवधं तथा ।
निरुद्वेगो बृहद्वादी न निन्दामुपलप्स्यते ।।
म्लेच्छीभूतं जगत् सर्वं भविष्यति न संशयः ।
हस्तो हस्तं परिमुषेद् युगान्ते समुपस्थिते ।।

(महाभारत, वन. १९०।२८, ३८)

'पुत्र पिता का और पिता पुत्र का वध करके भी उद्विग्न नहीं होंगे। अपनी प्रशंसा के लिये लोग बड़ी-बड़ी बातें बनायेंगे, किन्तु समाज में उनकी निन्दा नहीं होगी।.....उस समय सारा जगत् म्लेच्छ हो जायगा—इसमें संशय नहीं। एक हाथ दूसरे हाथ को लूटेगा—सगाभाई भी भाई के धन को हड़प लेगा।'

अधर्म बढ़ जायगा, धर्म विदा हो जायगा। स्त्रियाँ अपने पतियों की सेवा करना छोड़ देंगी। वे कठोर स्वभाव वाली और सदा कटुवादिनी होंगी। वे पति की आज्ञा में नहीं रहेंगी। पथिकों को माँगने पर भी कहीं अन्न-जल अथवा ठहरने के लिये स्थान नहीं मिलेगा। सर्वत्र पाप-पीड़ा, दुःख-दारिद्र्य, क्लेश-अनीति, अनाचार और हाहाकार व्याप्त हो जायेंगे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उस समय सम्भल-ग्राम में विष्णुयशा नामक एक अत्यन्त पवित्र, सदाचारी एवं श्रेष्ठ ब्राह्मण होंगे। वे सरल एवं उदार होंगे। वे भगवान् के अत्यन्त अनुरागी भक्त होंगे। उन्हीं अत्यन्त भाग्यशाली ब्राह्मण विष्णुयशा के यहाँ कवि, प्राज्ञ और सुमन्त्रक नामक माता-पिता, गुरु, ब्राह्मण भक्त पुत्र होने के पश्चात् समस्त सद्गुणों के एक मात्र आश्रय, निखिल सृष्टि के सर्जक, पालक एवं संहारक परब्रह्म परमेश्वर भगवान् कल्कि के रूप में अवतरित होंगे। उनके रोम - रोम से अदभुत तेजोमयी किरणें छिटकती रहेंगी। वे महान् बुद्धि एवं पराक्रम से सम्पन्न, महात्मा, सदाचारी तथा सम्पूर्ण प्रजा के शुभैषी होंगे।

मनसा तस्य सर्वाणि वाहनान्यायुधानि च ।।
उपस्थास्यन्ति योधाश्च शस्त्राणि कवचानि च ।
स धर्मविजयी राजा चक्रवर्ती भविष्यति ।।
स चेमं संकुलं लोकं प्रसादमुपनेष्यति ।
उत्थितो ब्राह्मणो दीप्तः क्षयान्तकृदुदारधीः ।।

(महाभारत, वन. १९०।९४-९६

'(विष्णुयशा के बालक के), चिन्तन करते ही उनके पास इच्छानुसार वाहन, अस्त्र-शस्त्र, योद्धा और कवच उपस्थित हो जायेंगे। वह धर्म-विजयी चक्रवर्ती राजा होगा। वह उदार बुद्धि, तेजस्वी ब्राह्मण दुःख से व्याप्त हुये इस जगत् को आनन्द प्रदान करेगा। कलियुग का अन्त करने के लिए ही उसका प्रादुर्भाव होगा।'

भगवान् शंकर स्वयं कल्कि भगवान् को शस्त्रास्त्र की शिक्षा देंगे। भगवान् परशुराम उनको वेदोपदेश देंगे। कल्कि पुराण में लिखा है—

महेन्द्राद्रिस्थितो रामः समानीयाश्रमं प्रभुः ।।
प्राह त्वां पाठयिष्यामि गुरुं मा विद्धि धर्मतः ।
भृगुवंशसमुत्पन्नं जामदग्न्यं महाप्रभुम् ।।
वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञं धनुर्वेदविशारदम् ।
कृत्वा निःक्षत्रियां पृथिवीं दत्वा विप्राय दक्षिणाम् ।।
महेन्द्राद्रौ तपस्तप्तुमागतोऽहं द्विजात्मज ।
त्वं पठात्र निजं वेदं यच्चान्यच्छास्त्रमुत्तमम् ।।

(कल्कि पुराण १।३।१-४)

'भगवान् कल्कि को महेन्द्र पर्वत निवासी परशुराम उन्हें अपने आश्रम पर ले गये। वहाँ पहुँचने पर परशुरामजी ने उनसे कहा—मैं भृगुवंश में उत्पन्न महर्षि

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जमदग्नि का पुत्र वेद-वेदाङ्ग के तत्त्व को जानने वाला धनुर्वेदविद्याविशारद परशुराम हूँ। मैंने इस पृथ्वी को क्षत्रिय-विहीन करके ब्राह्मणों को दक्षिणा स्वरूप दे दिया था। अब तुम मुझे धर्मपूर्वक गुरु मानो, मैं तुमको शिक्षा दूँगा। मैं इस महेन्द्र पर्वत पर तपस्या करने आया हूँ, तुम यहाँ वेदाध्ययन करो तथा अन्य जो शास्त्र पढ़ने की इच्छा हो, वह पढ़ो।'

वे वेदाध्ययन के पश्चात् रमा और पद्मा नाम की दो राजपुत्रियों के साथ विवाह करेंगे। भगवान् शङ्करजी को स्तवन द्वारा प्रसन्न कर वरदान व शस्त्रास्त्र प्राप्त कर बल, बुद्धि सम्पन्न हो जायेंगे। माता-पिता, गुरुजनों को सेवा-भक्ति द्वारा प्रसन्न करते हुए पुत्र, पौत्रादि से सम्पन्न होंगे।

वे देवदत्त नामक शीघ्रगामी, सुन्दर अश्व पर आरूढ़ होकर राजा के वेष में छिपकर रहने वाले, पृथ्वी में सर्वत्र फैले हुए दस्युओं एवं नीच स्वभाव वाले सम्पूर्ण म्लेच्छों का संहार कर डालेंगे। वे परम पुण्यमय भगवान् कल्कि भूमण्डल के सम्पूर्ण पातकियों, दुराचारियों एवं दुष्टों का विनाश कर अश्वमेध-नामक महान् यज्ञ करेंगे और उस यज्ञ में सम्पूर्ण पृथ्वी ब्राह्मणों को दान में दे देंगे।

भगवान् कल्कि दस्यु-वध में सर्वदा तत्पर रहेंगे। जिन-जिन देशों पर विजय प्राप्त करेंगे, उन-उन देशों में काले मृगचर्म, शक्ति, त्रिशूल तथा अन्य अस्त्र-शस्त्रों की स्थापना करेंगे। वहाँ उत्तमोत्तम ब्राह्मण उनका श्रद्धाभक्तिपूर्वक स्तवन करेंगे और भगवान् कल्कि उन ब्राह्मणों का यथोचित सम्मान सत्कार करेंगे।

वीरवर कल्कि भगवान् के कर कमलों से पृथ्वी के सम्पूर्ण दस्युओं, दुराचारियों का विनाश और अधर्म का नाश हो जायगा। तदनन्तर स्वाभाविक ही धर्म का उत्थान होना प्रारम्भ होगा।

स्थापयित्वा च मर्यादाः स्वयम्भुविहिताः शुभाः।
वनं पुण्ययशःकर्मा रमणीयं प्रवेक्ष्यति॥
तच्छीलमनुवर्त्स्यन्ति मनुष्या लोकवासिनः।

(महाभारत, वन. १९१।२-३)

'उनका यश तथा कर्म-सभी परम पावन होंगे। वे ब्रह्माजी की चलायी हुई मङ्गलमयी (वेदोक्त) मर्यादाओं की स्थापना करके (तपस्या के लिये) रमणीय वन में प्रवेश करेंगे। फिर इस जगत् के निवासी मनुष्य (प्रजाजन) उनके शील-स्वभाव का अनुकरण करेंगे।'

मङ्गलमय भगवान् कल्कि के अङ्गराग को स्पर्श कर बहने वाली वायु ग्राम, नगर, जनपद एवं देश की सारी प्रजा के मन में पवित्रता के भाव भर देगी। उनमें

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सहज सात्विकता, धर्मपरायणता उदित हो जायगी। फिर उनकी संतति सतयुग की मर्यादानुकूल हृष्ट-पुष्ट, दीर्घायु, धर्माचरण वाली हो जायगी। कल्कि पुराण में लिखा है—'जब भगवान् कल्कि ने अधर्म को नष्ट कर पुनः धर्म की स्थापना करदी, सब लोग सुखी हो गये, तब देवताओं ने आकर भगवान् कल्कि से प्रार्थना की—हे नाथ! अब पृथ्वी सत्य और धर्म से अविरोधपूर्वक शासित है। यदि आपकी हम पर कृपा है तो अब इसे त्याग कर वैकुण्ठ के लिए प्रस्थान कीजिये।'

कल्किस्तेषामिति वचः श्रुत्वा परमहर्षितः।
पात्रामित्रैः परिवृतश्चकार गमने मतिम्॥
पुत्रानाहूय चतुरो महाबलपराक्रमान्।
राज्ये निक्षिप्य सहसा धर्मिष्ठान् प्रकृतिप्रियान्॥

(कल्कि पुराण ३।१९।१३-१४)

'देवताओं के इन वचनों को सुनकर कल्किजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और वे अपने सुपात्र मित्रों सहित वैकुण्ठ गमन की इच्छा करने लगे। उन्होंने प्रजावत्सल, महाबली एवं धार्मिक अपने चारों पुत्रों (जय, विजय, मेघमाल और बलाहक) को बुलाकर राज्याभिषेक कर दिया।'

सुन्दर प्रकाशमान विमान पर आरूढ़ होकर कल्कि भगवान् अपने धाम को पधार गये।

इस प्रकार सर्वभूतात्मा सर्वेश्वर भगवान् कल्कि के पूर्वमन्वन्तर में अवतरित होने पर पुनः सतयुग प्रतिष्ठित हुआ था। इसी भाँति अब भी समय आने पर पुनः इस पृथ्वी पर भगवान् कल्कि अवतरित होकर सतयुग को प्रतिष्ठित करेंगे। सनातन धर्म ग्रन्थों की यही मान्यता है।

सजलजलददेहो वातवेगैकवाहः
करधृतकरवालः सर्वलोकैकपालः।
कलिकुलवनहन्ता सत्यधर्मप्रणेता
कलयतु कुशलं वः कल्किरूपः स भूपः॥

(कल्कि पुराण ३।२१।३८)

'जलयुक्त मेघ जैसे वर्णवाले, वायु के समान वेग वाले, अश्वारूढ़ होने वाले, हाथ में तलवार धारण करने वाले, सत्य-धर्म के प्रणेता, राजाओं के सहित निवास करने वाले, कलियुग के परिवार रूपी वन का हनन करने वाले भगवान् कल्किजी हमारा कल्याण करें।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध १ अध्याय ३, आग्नेय महापुराण अध्याय १६, कल्किपुराण, महाभारत के आधार से)

भगवान् कल्कि के चरणों में बारम्बार प्रणाम।

परब्रह्म द्वारा श्रीभगवान् विष्णु की उत्पत्ति का विवेचन

सोपान १०

'सृष्टिस्थित्यन्तकरणाद् ब्रह्माविष्णुशिवात्मिकाम्'

(विष्णुपुराण)

'सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के कारण भगवान् ब्रह्मा, विष्णु और शिव तीन स्वरूपों में अवतार धारण करते हैं।'

नाहो न रात्रिर्न नभो न भूमिर्नासीत्तमो ज्योतिरभूच्च नान्यत्।
श्रोत्रादिबुद्ध्यानुपलभ्यमेकं प्राधानिकं ब्रह्म पुमांस्तदासीत्॥

(विष्णु पुराण १।२।२३)

'उस समय (प्रलयकाल में) न दिन था, न रात्रि थी, न आकाश था न पृथ्वी थी, न अन्धकार था, न प्रकाश था और न इनके अतिरिक्त कुछ और ही था (बस) श्रोत्रादि इन्द्रियों का और बुद्धि आदि का अविषय एक परम ब्रह्म पुरुष ही प्रधान तत्त्व के रूप में था।'

चौबीस तत्त्वों में पृथक्-पृथक् नाना शक्तियाँ हैं। अतः वे परस्पर पूर्णतया मिले बिना संसार की रचना नहीं हो सकती। इसलिये एक दूसरे के आश्रय में रहने वाले और एक ही संघात की उत्पत्ति के लक्ष वाले महत्तत्त्व से लेकर विशेष पर्यन्त प्रकृति के इन सभी विकारों से पुरुष से अधिष्ठित होने के कारण परस्पर मिलकर सर्वथा एक होकर प्रधान (प्रकृति) के अनुग्रह से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई। जल के बुलबुले के समान क्रमशः तत्त्वों से (भूतों से) बढ़ा हुआ वह गोलाकार और महान् अण्ड तेजपुञ्ज ब्रह्म-रूप विष्णु का अति उत्तम प्राकृत वास-स्थान हुआ। उसमें वे अव्यक्त स्वरूप जगत्पति विष्णु स्वयं हरि विराजमान हुए। उस अण्ड में ही पर्वत द्वीपादि के सहित समुद्र,ग्रहगण सहित सम्पूर्ण लोक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तथा देव, असुर और मनुष्यादि विविध प्राणिवर्ग थे। वह अण्ड पूर्व-पूर्व की अपेक्षा दस-दस गुना अधिक जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि भूतों से और अहंकार से आवृत था तथा वे सब भूत और अहंकार महत्तत्त्व से घिरे हुए थे और इन सबके सहित वह महत्तत्त्व भी अव्यक्त प्रधान से आवृत था। इस प्रकार यह अण्ड इन सात प्राकृत आवरणों से घिरा हुआ था। उसमें स्थित हुए अव्यक्त स्वयं विश्वेश्वर भगवान् हरि जो प्रयोजनवश स्वरूपतः मूर्तिमान विष्णु ही होते हैं। वही भगवान् नारायण सर्वश्रेष्ठ परमपुरुष हैं। उन परम प्रभु के मन में सृष्टि-विषयक संकल्प उत्पन्न हुआ। उन्होंने विचार किया—'मैंने जगत् रचना तो कर दी, फिर पालन भी तो मुझे ही करना है। यह सारा कर्म-प्रपञ्च है। सम्यक् रूप से स्वरूप धारण किये बिना यह कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता है। अतः एक ऐसी सगुण मूर्ति का निर्माण करूँ, जिससे इस जगत् की रक्षा हो सके।'

परब्रह्म परमात्मा का संकल्प सत्य होकर रहता है। वे प्रभु इस प्रकार विचार कर ही रहे थे, इतने में ही एक प्राक्तनी विशिष्ट स्वरूप धारिणी सृष्टि उनके सामने प्रकट हो गई इसमें पुराण पुरुष भगवान् नारायण ही प्रकट हो गये और उन्होंने लोकत्रय को अपने वैष्णव शरीर में प्रविष्ट होते देखा। फिर वह प्रभु के शरीर से बाहर आया। उस अवसर पर उन्हें अपने प्राचीन वरदान की बात याद आई, जो भगवान् ने सन्तुष्ट होकर वाणी आदि को दिया था। वह बहुत पुराना प्रसङ्ग है। भगवान् नारायण ने उस समय वर देते हुए कहा था—'तुम्हें सभी बातें-वस्तुएँ विदित होंगी। तुम सबके कर्ता होओगे। सम्पूर्ण प्राणिवर्ग तुम्हें नमस्कार करेगा। तुम्हारे द्वारा तीनों लोकों की रक्षा होगी। अतः तुम 'विष्णु' नाम धारण करो। तुम सनातन पुरुष हो देवताओं और ब्राह्मणों की सम्यक् प्रकार से सदा रक्षा करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। देव! तुम्हें सर्वज्ञता प्राप्त हो जाय—इसमें कोई अन्यथा विचार नहीं है।'

इस प्रकार वर देकर भगवान् नारायण अपने प्राकृत रूप में स्थित हो गये। फिर अब विष्णु को भी पहले की बात ध्यान में आ गई। सोचा—'अरे! मैं तो वही शक्ति सम्पन्न पुरुष हूँ।' तब उन महान् तपस्वी प्रभु ने ऐश्वर्य के प्रभाव से योग-निद्रा का स्मरण किया। तत्क्षण ही वे देवी आ गयीं। स्त्री-पुरुष के संयोग से उत्पन्न होने वाली प्रजाओं का भार उन पर सौंप दिया। 'मैं उन परम प्रभु भगवान् नारायण का ही तो रूप हूँ'—ऐसा विचार कर फिर वे सो गये। उनके सो जाने पर उनकी नाभि से एक बड़ा सा कमल निकला। सात द्वीपों वाली पृथ्वी, समुद्र और वन-ये सब-के-सब उस कमल पर विराजमान थे। उस कमल के रूप का विस्तार आकाश से पाताल तक फैला हुआ था। उसकी कर्णिका पर सुमेरु पर्वत सुशोभित हो रहा था। सबके बीच में ब्रह्माजी थे। अपने ऐसे वैराज रूप को प्रत्यक्ष

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देखकर परम पुरुष परमात्मा को बड़ा हर्ष हुआ। फिर उनके भीतर जो पवन देव थे, उन्होंने व्यवहार के लिए वायु का सृजन किया। साथ ही कहा—'तुम अज्ञान पर विजय करने वाले ज्ञानस्वरूप इस शङ्ख को धारण करो।' फिर श्रीहरि ने कहा—अज्ञान का नाश करने के लिए तुम्हारे हाथ में यह तलवार सदा शोभा पाती रहे। अच्युत! भयङ्कर कालचक्र को काटने के लिए यह चक्र धारण कर लो। हे केशव! पापराशि नष्ट हो जाय, एतदर्थ यह गदा धारण करना आवश्यक है। समस्त भूतों को उत्पन्न करने वाली यह वैजयन्ती माला तुम्हारे कण्ठ में सदा सुशोभित होती रहे। चन्द्रमा और सूर्य ये दोनों श्रीवत्स और कौस्तुभ के स्थान पर शोभा पायें। पवन चलने में सबसे पराक्रमी कहा गया है। वह तुम्हारे लिए गरुड़ बन जाय। तीनों लोकों में विचरने वाली देवी लक्ष्मी सदा आपकी आश्रिता रहें। आपकी तिथि द्वादशी हो और आप अपने अभीष्ट रूप से विराजें। इस द्वादशी तिथि के दिन स्त्री अथवा पुरुष जो कोई भी आपके प्रति श्रद्धा रखते हुए घृत के आधार पर रहे, वह स्वर्ग में स्थान पाने का अधिकारी हो जाय।'

वे ही परम पुरुष भगवान् नारायण 'विष्णु' इस नाम से विख्यात हुए। देवता और दानव—ये सब उन्हीं की मूर्तियाँ हैं। स्वयं वे ही अपने आप विभिन्न रूप धारण करते हैं। उनके द्वारा ही असुरों का संहार होता है और देवता व उत्तम पुरुषों की रक्षा होती है। उन्हें ही वेदान्त पुरुष कहा जाता है वे ही प्रभु प्रत्येक युग में सब जगह विचरते हैं। जो उन्हें मनुष्य मानता है, उसे बुद्धिहीन समझना चाहिये। पापों का नाश करने वाला यह भगवान् विष्णु की उत्पत्ति का प्रसङ्ग है। जो इसका पठन श्रवण करता है, वह स्वर्गलोक में जाकर आदर-सम्मान प्राप्त करता है।

(विष्णुपुराण अंश १ अध्याय २, वराह पुराण अध्याय १ के आधार से)

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम्।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्॥

'जो शङ्ख-चक्र धारण किये हैं, किरीट और कुण्डलों से विभूषित हैं, पीताम्बर ओढ़े हुए हैं, सुन्दर कमल के समान जिनके नेत्र हैं और हारयुक्त वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि की अनोखी शोभा हो रही है। उन चतुर्भुज भगवान् विष्णु को मैं सिर झुका कर प्रणाम करता हूँ।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु का वैकुण्ठधाम-श्वेतद्वीप

सोपान ११

अखिल विश्व प्रपञ्च के ब्रह्माण्डनायक श्रीभगवान् विष्णु के वैभव का वर्णन शेष शारदा भी करने में समर्थ नहीं। श्रुति-शास्त्रों ने भी नेति-नेति कह कर ही विश्राम कर लिया। किन्तु वह इतना मनोरम, आकर्षक तथा आनन्दप्रद है कि मनीषि-वृन्द उसकी विवेचना में सर्वदा ही बखान करते रहे हैं।

अनन्त आकाश में प्रकाशमान असंख्य तारावलियों को देखकर मन आश्चर्य चकित हो जाता है। इस सृष्टि की इयत्ता का ज्ञान किसी को भी नहीं। इस समस्त सृष्टि में परम सत्ता अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट है, वही 'विष्णु' शब्द वाच्य है। यह सृष्टि उन्हीं विष्णु के एकांश में है। उनकी ही एक पाद् विभूति है—यह त्रिगुण-मयी है।

श्रीविष्णु की त्रिपाद-विभूति सच्चिदानन्दमयी है। वह परमपद, परमव्योम,, सनातन आकाश, दिव्यस्थान, परमस्थान, परागति, अनामयपद, शाश्वत-पद महाविभूति, नित्यविभूति, ब्रह्मपुर, ब्रह्मलोक और वैकुण्ठ नाम से अभिहित है।

वैकुण्ठ नित्य है, अनादि है, इसका कभी उदय और अस्त नहीं होता। वह नित्योदित है। यह वैकुण्ठ जड़ प्रकृति का बना हुआ नहीं है। वह चेतन है, स्वयं-प्रकाश है। वह शुद्ध सत्त्व है। इसलिये उसकी अनादिषड्गुणमयता स्वयं सिद्ध है। इस रहस्य का उद्घाटन करते हुए कहा है—

लोकं वैकुण्ठनामानं दिव्यं षाड्गुण्यसंयुतम्।
अवैष्णवानामप्राप्यं गुणत्रयविवर्जितम्॥

(ब्रह्मतंत्र)

'वैकुण्ठ-नामक श्रीविष्णु भगवान् का जो दिव्यधाम है, उसमें प्रकृति के तीनों गुणों का अस्तित्व नहीं है। वहाँ तो ज्ञानादि षड्गुण का ही विलास है।'

वेदों में लिखा है—

'विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः॥'

(ऋग्वेद १।१५४।५)

'श्रीविष्णु भगवान् के परमपद में मधु का निर्झर है।'

'परमं पदमवभाति भूरि॥'

(ऋग्वेद १।१५४।६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'वह परमपद अत्यन्त प्रकाशमान है।'

'तद्विष्णोः परम पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।।'

(यजुर्वेद ६।५)

'भक्तजन श्रीविष्णु भगवान् के परमपद का सदा दर्शन करते रहते हैं।'

'त्रिपादस्यामृतं दिवि ।।'

(ऋग्वेद १०।९०।३, यजुर्वेद ३१।३, सामवेद ६१९)

'श्रीभगवान् की एकपाद्-विभूति यहाँ है और त्रिपाद्-विभूति जो अमृत स्वरूप है, उस प्रकाशमान द्युलोक में है।'

प्रार्थना का एक यह मन्त्र है—

प्र तत् ते अद्य शिपिविष्ट नामा-
ऽर्यः शंसामि वयुनानि विद्वान् ।
तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान्
क्षयन्तमस्य रजसः पराके ।।

(ऋग्वेद ७।१००।५)

'हे अणु-अणु में व्यापक प्रभो ! आपके लीला चरित्रों को जानने वाला मैं मित्रावरुणनन्दन वसिष्ठ आपके नाम का स्तवन (गान) कर रहा हूँ। मैं बलहीन हूँ। आप बल के निधान हैं। आप इस रजोगुण से परे (अपने दिव्य धाम में) निवास करते हैं। मैं आपकी स्तुति कर रहा हूँ।'

उपनिषदों में लिखा है—

तेषामसौ विरजो ब्रह्मलोकः ।

(प्रश्नोपनिषद् १।१६)

'तपस्वी, ब्रह्मचर्य व्रती, सत्य-निष्ठ, निश्छल, निष्प्रञ्च जीव ब्रह्मलोक के अधिकारी हैं।'

सोऽध्वन. पारमाप्नोति तद्विष्णो. परमं पदम् ।

(कठोपतिषद् १।३।९)

'विज्ञान-सारथि साधक श्रीविष्णु के उस परमपद को प्राप्त कर लेता है।'

दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येषः ।

(मुण्डकोपनिषद् २।२।७)

'यह परमात्मा दिव्य ब्रह्मपुर में निवास करता है।'

रामायण, महाभारत, पुराणादि ग्रन्थों में भी इसका अनेक स्थानों में वर्णन प्राप्त होता है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यद् वाऽऽकाशं सनातनम् ।

(वा. रामायण ७।११०।१०)

'ब्रह्माजी ने भगवान् रामचन्द्रजी से प्रार्थना की 'हे प्रभो ! आपकी इच्छा हो तो सनातन आकाश को चलिये ।'

ब्रह्मणः सदनादूर्ध्वं परं स्थानं प्रचक्षते ।
देवापि यन्न पश्यन्ति सर्वतेजोमयं शुभम् ।।
अत्यर्कानलदीप्तं तत् स्थानं विष्णोर्महात्मनः ।
स्थानमेतन्महाभाग ध्रुवमक्षयमव्ययम् ।।

(महाभारत)

'ब्रह्माजी के सत्यलोक से परे परमस्थान है, जिसका दर्शन देवताओं को भी दुर्लभ है । वह पवित्र, सूर्य और अग्नि से भी अधिक भासमान, निश्चल, अविनाशी और अपरिणामी स्थान परमात्मा श्री विष्णु का धाम है ।'

एकान्तिनः सदा ब्रह्मध्यायिनो योगिनश्च ये ।
तेषां तु परमं स्थानं यद् वै पश्यन्ति सूरयः ।।

(विष्णु पुराण १।६।३९)

'ब्रह्मचिन्तक, योगाभ्यासी और एकान्तभाव से भगवदुपासक उसी परम-स्थान को प्राप्त होते हैं, जिसका दर्शन नित्यमुक्त सूरि-जन किया करते हैं ।'

त्रिपाद् विभूतिर्नित्या स्याद् ।

(पद्मपुराण)

'श्रीभगवान् की त्रिपाद्-विभूति नित्य है ।'

त एकदा भगवतो वैकुण्ठस्यामलात्मनः ।
ययुर्वैकुण्ठनिलयं सर्वलोकनमस्कृतम् ।।
यत्र चाद्यः पुमानास्ते भगवान् शब्दगोचरः ।

(श्रीमद्भागवत ३।१५।१३,१५)

'ब्रह्माजी के मानस-पुत्र सनकादि एक दिन निखिल-हेय-प्रत्यनीक श्रीभगवान् वैकुण्ठ के सर्वलोक-नमस्कृत वैकुण्ठधाम को गये, जहाँ श्रुति प्रतिपाद्य आद्य-पुरुष श्रीविष्णु विराजमान रहते हैं ।'

श्वेतद्वीपश्च क्षीरोदे चोपद्वीपो मनोहरः ।
तत्रैव भगवान् विष्णुः सेवितः सिन्धुकन्यया ।।

(नारदपञ्चरात्र २।२।८४)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'क्षीर सागर में श्वेतद्वीप नामक एक मनोहर उपद्वीप है, जिसमें भगवान् विष्णु सिन्धुकन्या लक्ष्मी द्वारा सेवित हैं।'

नित्यापरिच्छिन्नमहासुखान्त्यकाष्ठावतस्तादृशवैभवस्य।
साक्षाद्रमानाथपदारविन्दक्रीडाभराजस्रविभूषितस्य॥
तत्प्रेमभक्तैः सुलभस्य वक्तुं वैकुण्ठलोकस्यपरं किमीशे।
अद्वैत दुर्वासनया मुमुक्षा विद्धात्मनां हृद्यपि दुर्लभस्य॥

(वृहद्भागवतामृत २।३।९६-९७)

'उस वैकुण्ठ लोक की क्या प्रशंसा की जाय। वहाँ नित्य अपरिच्छिन्न महासुख और उनके अनुरूप पराकाष्ठा के वैभव विद्यमान हैं। वह साक्षात् लक्ष्मीनाथ के चरणारविन्दों की विविध प्रकार की विहारस्थलियों से विभूषित है। वह उनके प्रेम द्वारा श्रेष्ठ भक्तों को सुलभ है और उन मुमुक्षुओं को मन से भी दुर्लभ है, जिनकी आत्माएँ अद्वैत ब्रह्म की दुर्वासना से दूषित हैं।'

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त विष्णुधाम, वैकुण्ठ, श्वेतद्वीप, गोलोक, साकेतलोक का वर्णन महानारायणोपनिषद् के आठ अध्यायों में, महाभारत के शान्तिपर्व के अध्याय (३३५-३३६) तथा (३४३) में, गर्गसंहिता गोलोक खण्ड अध्याय (२) में, ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय (२) में, ब्रह्मतन्त्र में तथा लोकालोकप्रकाश ग्रन्थों में सविस्तार विवेचन उपलब्ध होता है। उन्हीं के आधार पर यहाँ संक्षिप्त रूप में ज्ञान कराने हेतु वर्णन दिया जा रहा है—

यद्यपि भगवान् विष्णु स्वरूपतः सर्वत्र व्याप्त-विद्यमान हैं। तथापि रूपतः वे वैकुण्ठ, श्वेतद्वीप-भगवद्धाम आदि नाम वाले परमधामों में सर्वदा विराजमान रहते हैं और उन धामों में उनके परिकर तथा भक्तों के द्वारा उनकी सेवा, उपासना और पूजा अनवरत होती रहती है। भगवान् विष्णु सर्वलोकमय हैं। उनके धाम नित्य हैं। सनकादि का कथन है आपके मस्तक में द्युलोक और भुजाओं में भूलोक व्याप्त है। तीनों लोक आपके उदर में स्थित हैं। आप ही सनातन पुरुष हैं। त्रिगुणातीत, अविकारी और अलौकिक वैष्णवधाम सत्त्व, रज, तम, विकार, माया आदि से परे हैं। यह भगवद्धाम सर्वश्रेष्ठ है। उससे परे कोई दूसरा लोक नहीं है। इस भगवद्धाम में किसी भी प्रकार से कोई क्लेश, मोह, भय आदि नहीं हैं। जिस भूलोक में हमारा यह भारतवर्ष है, वह भूलोक अनन्त ब्रह्माण्डों के ठीक मध्य में है। अर्थात् हमारे प्रथम ब्रह्माण्ड के (भूलोक) के चतुर्दिक अनन्त ब्रह्माण्ड हैं, एवं अनन्त ब्रह्माण्डों के चतुर्दिक 'सप्तावरण' के घेरों को पार करके पर परमधाम परिव्याप्त है। उसी में परमधाम, नित्यधाम, वैकुण्ठ, साकेत, गोलोकधाम आदि हैं। यह वैकुण्ठ गोलोकधाम से पचास करोड़ योजन दूर दक्षिण भाग में स्थित है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रलयकाल में केवल ज्योतिः पुञ्ज प्रकाशित होता था। वह ज्योतिर्मण्डल नित्य और असंख्य विश्व के कारण स्वेच्छामय रूपधारी सर्वव्यापी परमात्मा का परम उज्ज्वल तेज है। उस तेज के भीतर तीनों लोक विद्यमान हैं। उन तीनों लोकों के ऊपर गोलोक है, जो वैकुण्ठ के समान ही नित्य है। गोलोक के नीचे स्थित उपर्युक्त वैकुण्ठ मण्डलाकार है, उसका विस्तार एक करोड़ योजन है। इसमें जरा-मृत्यु कभी नहीं होती है। इस वैकुण्ठधाम में सभी लोग विष्णुरूप होकर रहते हैं। और यह लोक उन्हीं को प्राप्त होता है, जो अन्य सब कामनाओं का त्यागकर भगवच्चरण—शरण की प्राप्ति के लिये ही अपने धर्म द्वारा श्रीहरि की आराधना करते हैं। वहाँ वेदान्त-प्रतिपाद्य धर्ममूर्ति आदि-नारायण अपने भक्तों को सुख देने के लिये शुद्ध सत्त्वमय स्वरूपधारण कर सर्वदा विराजमान रहते हैं। उस वैकुण्ठ में श्रीलक्ष्मीजी सुन्दर रूप धारण कर अपनी विविध विभूतियों के द्वारा भगवान् के चरण-कमलों की सेवा करती हैं। इस द्वीप में भगवान् नारायण का भजन करने वाले पुरुष ही रहते हैं, जो चन्द्रमा के समान कान्तिमान् हैं। वे स्थूल इन्द्रियों से रहित, मोह, माया तृष्णादि से निश्चेष्ट रहते हैं। उनके शरीर से मनोहर सुगन्ध निकलती रहती है। वे भगवान् के अनन्य भक्त होते हैं। वहाँ के निवासी सदा नारायणदेव की पूजा-अर्चा करते हैं। भगवान् भी सर्वदा उनके साथ प्रसन्नतापूर्वक क्रीड़ा करते रहते हैं। भगवान् को अपने भक्त बहुत प्रिय हैं। उन परमात्मा को वेदपाठी धर्माचारी ब्राह्मण भी बहुत प्रिय हैं। विश्व-पालनकर्त्ता सर्वव्यापी भगवान् भक्तवत्सल हैं, भगवद्भक्तों के प्रेमी और प्रियतम लक्ष्मीपति श्रीहरि उनसे पूजित होकर सर्वदा प्रसन्न रहते हैं। यह श्वेत द्वीप बड़ा ही रमणीक है। यह सर्वदा ही सर्व प्रकार की सुख-सुविधाओं से परिपूर्ण रहता है। यहाँ कभी भी किसी प्रकार की वस्तुओं का अभाव नहीं है। यह भगवद्धाम भगवान् नारायण को अधिक प्रिय है, जो भगवान् की कृपा द्वारा वहाँ पहुँच जाता है, वह उन्हीं के समान चतुर्भुज रूप धारण कर अनेक प्रकार के सुखोपयोग प्राप्त कर आनन्द निमग्न रहता है। उसको किसी भी प्रकार की इच्छा-तृष्णा शेष नहीं रहती है। यह भगवद्धाम अनेक सुख-समृद्धियों से अटूट भरा हुआ है। वहाँ के उत्तम पर्वतों के शिखर मणि-रत्नों के हैं। वहाँ के पर्वतों के सुन्दर शिखरों पर विभिन्न प्रकार के रङ्ग-बिरङ्गे उत्तम गन्धयुक्त पुष्पों के लता-गुल्म फैले हुए हैं। वहाँ के कल्पवृक्षों का तो वर्णन ही क्या किया जावे। वहाँ के पर्वतों पर और सुविस्तृत वन, उपवनों में मन्दार, परिजात, पुन्नाग, चम्पा, शाल, ताड़, कचनार, अमलतास, अर्जुन, असन, अशोक, आम, अमरूद, गुलाब, मोलसरी, कुन्द, कुरवक, कटहल, गूलर, पीपल, पाकर, वट, गुग्गल, भोजवृक्ष, जम्बू, विल्ववृक्ष, बादाम, पिस्ता, अखरोट, सेव, चीकू, नाशपाती, चन्दन, केला, तुलसी आदि-आदि के अनेक प्रकार के फलों एवं सुगन्धित पुष्पों के असंख्य वृक्ष और पौधे सुहावने लगते हैं। उनका मनमोहक सौन्दर्य देख

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है। जायफल, इलायची, मालती, रजनीगन्धा की मनोहर लताएँ तथा कुब्जक, मोगरा, बेला, चमेली, कुन्द, माधवी, जूही, गेंदा के क्षुप तथा उनकी फैली हुई अनेक प्रकार की बेलें वहाँ के अनुपम सौन्दर्य की वृद्धि करती रहती हैं। वहाँ आमड़ा, पियाल, महुआ, लिसोड़ा, गूंदी, शमी, पलाश, खदिर आदि अनेक प्रकार के वृक्षों तथा पोले और ठोस बाँस के विड़ों से फैला हुआ विशाल वन बड़ा ही सुन्दर लगता है। वहाँ महान् मनोहर उत्तम गन्धयुक्त वायु मन्द-मन्द बहती रहती है। मयूर, हंस, सारस, रंग-बिरंगे तोते-मैना, छोटी-छोटी चिड़िया आदि अनेक प्रकार के पक्षीगण नृत्य करते हुए मग्न रहते हैं। कोयल, पपीहा की कूक तथा विभिन्न जातियों के रंग-बिरंगे पक्षियों का कलरव मन को मोह लेता है। उन वनों में जङ्गली हाथी, सिंह, व्याघ्र, सूअर, सेह, कृष्णमृग, हरिन, वानर, नीलगाय, शरभ, शार्दूल, खरगोश, कस्तूरी मृग, बारहसींगा आदि वन्य-पशु सुखपूर्वक, स्वच्छन्द विचरण करते हैं। सरोवरों में अनेक प्रकार के कुमुद तथा विभिन्न जातियों के सुगन्धित प्रफुल्ल कमल नेत्रों को सुख प्रदान करते हैं। उनकी गन्ध से मोहित होकर उन पर अनेक प्रकार के भ्रमर गुञ्जार करते रहते हैं। वनों के पथ और सरोवरों के तटों पर चारों ओर केले के वृक्षों की पंक्तियाँ अत्यन्त ही सुन्दर लगती हैं। वहाँ नन्दा, अलकनन्दा, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, कावेरी, गोमती, सरयू आदि देवसरिताएँ भी बहती हैं। उनका जल अत्यन्त पवित्र, मधुर, स्वादिष्ट, अत्यन्त निर्मल, स्वच्छ, उत्तम गन्ध-युक्त महान् आनन्द प्रदान करने वाला है। वहाँ अनेक स्थानों में देवऋषियों द्वारा वेदध्वनि होती रहती है। श्रुतियों द्वारा मनोहर गायन होता रहता है। वहाँ के सभी प्राणी सर्वत्र सानन्द विचरण करते हैं। वहाँ सर्व प्रकार के सुखदायक आनन्दवर्द्धक ऊँचे शिखर अटारियों से सुसज्जित अनेक रंग-बिरंगे, कलापूर्ण चित्रों से सुशोभित दर्पण लगे हुए हैं। अपनी स्वेच्छानुसार उष्ण व शीतल रहने वाले अगणित विशाल भवन हैं। भगवत् अनुग्रह द्वारा वहाँ पहुँच जाने वाले को वहाँ अनेक प्रकार के उत्तम स्वाद युक्त खाने-पीने, चबाने, चाटने के छप्पन प्रकार के भोजन व्यञ्जन हर समय गर्म-ठण्डे जैसे भी प्रयोग करना चाहे तैयार मिलते हैं। वहाँ रहने वालों को स्वेच्छानुसार स्मरण करते ही उनके समक्ष प्रस्तुत हो जाते हैं। इसी प्रकार से सब ही प्रकार के दन्तधावन, स्नान हेतु निर्मल जल, उत्तम गन्ध युक्त उबटन, उत्तम गन्धयुक्त आमलकी तैल, वस्त्र, उपवस्त्र, आभरण, आभूषण प्रयोग किये जाने वाले सभी दिव्य चमत्कृत, सर्वोत्कृष्ट आकर्षण गन्ध-युक्त ठण्डे व गर्म सामग्री पदार्थ कलापूर्ण ढंग से तैयार किये हुए उपस्थित रहते हैं। स्मरण करते ही समक्ष हो जाते हैं। वहाँ अनेक प्रकार के सिंहासन, शय्या उत्तम सुन्दर भवनों में सजाकर लगाए हुए हैं, इच्छानुकूल प्रयोग किये जाने वाले गद्दे, तकिये, मसनद आदि भी लगे हुए हैं जो अनुपम आनन्द और सुख प्रदान

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करने वाले हैं। वहाँ किसी को भी किसी प्रकार का भय, चिन्ता कभी नहीं होती। सब एक दूसरे के आत्मीय एवं प्राणप्रिय होकर रहते हैं। वहाँ कभी अधिक या कभी कम गर्मी-सरदी नहीं होती है। सांसारिक किसी भी प्रकार का दुःख-पीड़ा, ताप अनुभव एवं दृष्टि में नहीं होता है। न किसी भी प्रकार की स्पर्धा व अभिलाषा होती है। वहाँ दुःख व शोक की छाया भी नहीं है। अनेक प्रकार के बाग, बगीचे, नृत्य, वाद्य, मनोरञ्जन के सभी साधन हैं जो समय-समय पर स्वयं स्वेच्छानुकूल प्रस्तुत होते रहते हैं। सभी प्रकार के सब आनन्द में मग्न हुए, भगवान् लक्ष्मीनारायण की पूजा-अर्चा, स्तवन के परमानन्द ने लगे रहते हैं। इस श्वेतद्वीप भगवद्धाम में भगवान् के परमभक्त सिद्ध देवगण तथा देवताओं के समान शुद्ध पवित्र निःस्वार्थ सेवाभावी प्राणी ही निवास करते हैं। वहाँ के आनन्द की कोई सीमा नहीं हैं।

उस भगवद्धाम के अगणित उच्चशिखर भवनों के मध्य में, एक सर्वोच्च शिखर युक्त वृहद्भवन है। उसमें भगवान् के अगणित पार्षद्, परिकर भगवान् की सेवा में निरत रहते हैं। उस विशाल भवन के मध्यभाग में अष्टोत्तर स्तम्भयुक्त महामण्डप है। जिसकी चहार दीवारियाँ लाल कमल के समान मूँगे द्वारा निर्मित हैं। बीच-बीच में पद्मरागादि सात प्रकार की मणियों द्वारा बेल-बूटों से सुसज्जित हैं। आँगन का फर्श भी इसी प्रकार की पद्मरागादि मणियों द्वारा सुन्दर चित्रित किया हुआ शोभा दे रहा है। करोड़ों चन्द्रमाओं के मण्डल की छवि को धारण करने वाले चँदोओं से उसकी छत अलंकृत हो रही है। उसमें सुन्दर उत्तम चमकीले गोले, उत्तम प्रकार के अनेक चमत्कृत कलापूर्ण काच के झाड लटके हुए हैं। उस भवन के उच्च शिखरों पर अनेक फहराती हुई दिव्य पताकाएँ एवं खिले हुए फूल मन्दिर और मार्ग की शोभा बढ़ा रहे हैं। वहाँ बालसूर्य के सदृश कान्तिमान् अरुण-पीत कुण्डल धारण करने वाली ललनाएँ शत-शत चन्द्रमाओं के समान गौरवर्ण से उद्भासित हो रही हैं। स्वच्छन्द गति से चलने वाली ये सुन्दरियाँ मणिरत्नमय भित्तियों में स्वर्णजटित विशाल दर्पणों में अपनी मनोहर मुखाकृति देखती हुई वहाँ के रत्नजटित आँगनों में भागती फिरती हैं। उनके गले में अनेक प्रकार के उत्तम कलापूर्णहार और बाहों में केयूर शोभा देते हैं। नूपुरों तथा करधनी की क्षुद्र घण्टिकाओं की सुमधुर झनकार वहाँ सर्वदा गूँजती रहती रहती है। यह सब महालक्ष्मी जी की विभूतियाँ श्री महालक्ष्मीजी की सेवा में निरत हैं। इसी प्रकार से अनेक विष्णु के समान चतुर्भुज रूपधारण किये पीताम्बर पहने अनेक प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित चन्द्रमा के समान उज्ज्वल प्रकाशमान भगवान् विष्णु के पार्षद, परिकर भगवान् विष्णु की सेवा में रत हैं। विशाल भवन के मध्य भाग में बड़े मण्डप में हजारों दलवाला एक बहुत बड़ा कमल है। वह ऐसा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुशोभित है, मानों प्रकाश पुञ्ज हो। उसके ऊपर एक सोलह दल का कमल है। उसके ऊपर स्वर्णरत्नजटित चमचमाता हुआ एक तीन सीढ़ियों से सम्पन्न परम दिव्य सर्वोच्च सिंहासन अनुपम शोभा पाता है। उस पर श्रीमहालक्ष्मीजी सहित भगवान् श्रीनारायण विराजमान हैं। श्री महालक्ष्मीजी सहित भगवान् नारायण अनेक परिकर पार्षदों द्वारा सेवित हैं। उनके ऊपर श्वेत हंस के समान रंग वाले पँखे झल रहे हैं और हीरों से जटित स्वर्ण मूँठ वाले श्वेत बालों वाले चँवर डुलाये जा रहे हैं। भगवान् की सेवा में अनेक ऐसे छत्र प्रस्तुत हैं, जो कोटि-कोटि चन्द्रमाओं की प्रभा से तुलित हो सकते हैं। सभी तोरण द्वारों पर देववाद्य दुन्दभी वज रही हैं। श्री भगवान् नारायण मनोहर मुस्कान भरे हुए मुखमण्डल, भृकुटि विलास से अनेक कामदेवों को मोहित कर रहे हैं, उन भगवान् की मेघ के समान श्यामल कान्ति है। कमल दल के समान विशाल उनकी सुन्दर आँखें हैं। घुटनों तक बड़ी भुजाओं वाले वे प्रभु अत्यन्त पीले सुन्दर चमत्कृत अग्नि शुद्ध वस्त्र पहने हुए हैं। उनके गले में विविध प्रकार के स्वर्ण निर्मित रत्नजटित हार व सुन्दर उत्तम प्रकार से निर्मित वनमाला सुशोभित है। पैरों में घुँघरू और हाथों में कङ्कण की छटा छिटक रही है। चारों हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये हुये हुए हैं। उनकी अतिसुन्दर मन्द-मन्द मुस्कान मन को मोहित कर रही है। श्रीवत्स का चिह्न, बहुमूल्य रत्नजटित स्वर्ण निर्मित किरीट, कुण्डल, बाजूबन्द और हार यथा स्थान भगवान् की अनुपम शोभा बढ़ा रहे हैं। श्रीभगवान् नारायण के वामभाग में श्रीमहालक्ष्मी जी आसीन (विराजमान) हैं। उनका श्रीविग्रह अरुणाम्बर से सुशोभित है। उनके परमदिव्य अङ्गों पर उत्तम केशर, कस्तूरी, कर्पूर मिश्रित चन्दन का लेप विविध प्रकार की कलाओं द्वारा तिलक तथा बिन्दियों द्वारा सुशोभित हो रहा है। उनके नेत्र विशाल विकसित लाल कमल के समान हैं। उनके सुन्दर अरुण ओष्ठ और अधर अपनी लालिमा से बन्धुजीव पुष्प (दुपहरिये के पुष्प) की शोभा को पराजित कर रहे हैं। मनोहर दन्त पंक्ति मोतियों की श्रेणी को तिरस्कृत कर रही हैं। मनोहर सुन्दर किशोर अवस्था है। उनका सुन्दर मुख शरत्पूर्णिमा के कोटि चन्द्रों की शोभा को छीने लेता है। सीमान्त भाग बड़ा मनोहर है। नासिका के सामने पक्षिराज गरुड़ की नुकीली चोंच पराजित हो चुकी है। उन मनोहारिणी जगत् माता के दोनों कपोलों की आभा सुनहरे दर्पण की शोभा को तिरस्कृत कर रही है। रत्नों के आभूषणों से विभूषित दोनों कान बहुत सुन्दर लगते हैं। उनके सुन्दर कपोलों पर चन्दन अगरु, कस्तूरी, कुंकुम और सिन्दूर की बून्दों से पत्र रचना की गई है, वह बड़ी ही मनोहर जान पड़ती है। सँवारे हुए केशपाश मालती की माला से अलंकृत हैं। उन्होंने अपने मस्तक पर सुन्दर एवं सुगन्धित वेणी धारण कर रखी है। उनके दोनों चरणस्थल लाल कमलों की प्रभा को छीन लेते हैं। वह उत्तम रत्नों के सार भाग से बनी हुई मनोहर वनमाला, हीरों से जटित

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वर्णहार, रत्न निर्मित केयूर, कङ्कन, सुन्दर रत्नों के सारभाग निर्मित मनोहर चन्द्र हार, बहु मूल्य रत्नों का बना हुआ आश्चर्यजनक झंकार युक्त मंजीर तथा नाना प्रकार के चित्राङ्कित सुन्दर जड़ाऊ आभूषण पहने हुए हैं। उनके एक हाथ में सुन्दर कमल पुष्प सुशोभित है। एक हाथ अपने भक्तों को शाश्वत शान्ति, सुख, उनकी शुभकामनाओं की सिद्धि प्रदान करने हेतु वर प्रदान करने वाली मुद्रायुक्त शोभा प्रदान कर रहा है।

यह है भगवान् विष्णु के वैकुण्ठधाम-श्वेतद्वीप की एक झाँकी, पद्मपुराण में लिखा है—

मोक्षं परं पदं दिव्यममृतं विष्णुमन्दिरम्।
अक्षरं परमं धाम वैकुण्ठं शाश्वतं पदम्॥
नित्यं च परमं व्योम सर्वोत्कृष्टं सनातनम्।
पर्यायवाचकान्यस्य परधाम्नोऽच्युतस्य च॥

(पद्मपुराण उत्तर. २२७।८०-८१)

'भगवान् विष्णु के इस नित्य परमधाम के नाम मोक्ष, परमपद, दिव्य, अमृत, विष्णुमन्दिर, अक्षर, परमधाम, वैकुण्ठ, परमव्योम, सर्वश्रेष्ठ धाम, शाश्वतपद आदि हैं।'

स्वयं भगवान् विष्णु का एक नाम वैकुण्ठ भी है। भगवान् का कथन है—

मया संश्लेषिता भूमिरद्भिर्व्योम च वायुना।
वायुश्च तेजसा सार्धं वैकुण्ठत्वं ततो मम॥

(महाभारत शान्ति ३४२।८०)

मैंने भूमि को जल के साथ, आकाश को वायु के साथ और वायु को तेज के साथ संयुक्त किया है, इसलिए मैं 'वैकुण्ठ' कहलाता हूँ।'

हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! देवर्षियों, महामनीषी विद्वानों द्वारा रचित ग्रन्थों के आधार पर ये कतिपय शब्द लिखकर अब मैं चुप हो रहा हूँ, क्या आप तथा आपके परमधाम की महिमा पूर्ण हो गयी है?

यहाँ इस विषय में वहाकवि कालिदास विरचित रघुवंश में लिखी हुई उक्ति ही प्रयुक्त होती है—

महिमानं यदुत्कीर्त्य तव संह्रियते वचः।
श्रमेण सदशक्त्या वा न गुणानामियत्तया॥

(रघुवंश १०।३२)

'हे भगवान्! आपकी महिमा का कीर्तन करके जो अब हम चुप हो रहे हैं, उसका कारण यह नहीं है कि आपके गुण इतने ही हैं, प्रत्युत यह है कि अब हम थक गये हैं और आपके गुणों को पूर्ण रूपेण वर्णन करने की हम में शक्ति नहीं है।'

भगवान् लक्ष्मी नारायण एवं उनके परम धाम वैकुण्ठ को बारम्बार प्रणाम है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तुलसी-शालीग्राम विवेचन

सोपान १२

भगवान् श्रीहरि बोले—तुलसी ! भद्रे ! तुमने मेरे लिए अनेक व्रत तथा तपस्या की हैं। अब मैं तुम्हारे व्रत एवं तपस्या का फल देना चाहता हूँ।

तुम इस शरीर का त्याग करके दिव्य देह धारण कर मेरे साथ आनन्द करो। लक्ष्मी के समान तुम्हें सदा मेरे साथ रहना चाहिये। तुम्हारा यह शरीर नदी रूप में परिणत हो 'गण्डकी नाम से प्रसिद्ध होगा। यह पवित्र नदी पुण्यमय भारतवर्ष में मनुष्यों को उत्तम पुण्य फल देने वाली बनेगी। तुम्हारे केश कलाप पवित्र वृक्ष होंगे। तुम्हारे केश से उत्पन्न होने के कारण तुलसी के नाम से ही उनकी प्रसिद्धि होगी ! वरानने ! तीनों लोकों में देवताओं की पूजा के काम में आने वाले जितने भी पत्र और पुष्प हैं, उन सब में तुलसी प्रधान मानी जायगी। स्वर्गलोक, मर्त्यलोक, पाताल तथा वैकुण्ठलोक में सर्वत्र तुम मेरे संनिकट रहोगी। सुन्दरि ! तुलसी के वृक्ष सब पुष्पों में श्रेष्ठ माने जायेंगे। गोलोक, विरजा नदी के तट, रासमण्डल, वृन्दावन, भूलोक, भाण्डीरवन, चम्पक वन, मनोहर चन्दन वन एवं माधवी, केतकी, कुन्द और मल्लिका के वन में तथा सभी पुण्य स्थानों में तुम्हारे पुण्यप्रद वृक्ष उत्पन्न होंगे और रहेंगे। तुलसी वृक्ष के नीचे के स्थान परम पवित्र एवं पुण्यदायक होंगे; अतएव वहाँ सम्पूर्ण तीर्थों और समस्त देवताओं का अधिष्ठान होगा। वरानने ! ऊपर तुलसी के पत्ते पड़ें, इसी उद्देश्य से धार्मिक वृत्ति के लोग वहाँ रहेंगे। तुलसी पत्र के जल से जिसका अभिषेक हो गया, उसे सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करने तथा समस्त यज्ञों में दीक्षित होने का फल मिल गया। साध्वी ! हजारों अमृत से भरे हुए घड़ों के द्वारा नहलाने पर भी भगवान् श्रीहरि को उतनी तृप्ति नहीं होती है, जितनी वे मनुष्यों के तुलसी का एक पत्ता चढ़ाने से प्राप्त करते हैं। पतिव्रते ! दस हजार गोदान से मानव जो फल प्राप्त करता है, वही फल तुलसी-पत्र के दान से पा लेता है। जो मनुष्य मृत्यु के समय मुख में तुलसी-पत्र का जल पा जाता है, वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर भगवान् विष्णु के लोक में चला जाता है। जो मनुष्य नित्यप्रति भक्तिपूर्वक तुलसी का जल ग्रहण करता है, वही जीवन्मुक्त है और उसे गङ्गा-स्नान का फल मिलता है।

नित्यं यस्तुलसीं दत्त्वा पूजयेन्मां च मानवः।
लक्षाश्वमेधजं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥

'जो मानव प्रतिदिन तुलसी का पत्ता चढ़ाकर मेरी पूजा करता है, वह लाख अश्वमेध यज्ञों का फल पा लेता है।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो मानव तुलसी को हाथ में लेकर और शरीर पर रखकर तीर्थों में प्राण त्याग करता है, वह विष्णुलोक में चला जाता है। तुलसी-काष्ठ की माला को गले में धारण करने वाला मनुष्य पद-पद पर अश्वमेध यज्ञ के फल का भागी होता है, इसमें संदेह नहीं।

जो मनुष्य तुलसी को अपने हाथ पर रख कर प्रतिज्ञा करता है और उस प्रतिज्ञा का पालन नहीं करता, उसे सूर्य और चन्द्रमा की अवधिपर्यन्त 'कालसूत्र' नामक नरक में यातना भोगनी पड़ती है। जो मनुष्य तुलसी को हाथ में लेकर या उसके निकट झूठी प्रतिज्ञा करता है, वह—'कुम्भीपाक' नामक नरक में जाता है और वहाँ दीर्घकाल तक वास करता है। मृत्यु के समय जिसके मुख में तुलसी के जल का एक कण भी चला जाता है वह अवश्य ही विष्णुलोक को जाता है। पूर्णिमा, अमावस्या, द्वादशी और सूर्य-संक्रान्ति के दिन, मध्याह्नकाल, रात्रि, दोनों संध्याओं और अशोच के समय, तेल लगाकर, विना नहाये-धोये अथवा रात के कपड़े पहने हुए जो मनुष्य तुलसी के पत्रों को तोड़ते हैं, वे मानों भगवान् श्रीहरि का मस्तक छेदन करते हैं। साध्वि ! श्राद्ध, व्रत, दान, प्रतिष्ठा तथा देवार्चन के लिये तुलसी पत्र बासी होने पर भी तीन रात तक पवित्र ही रहते हैं। पृथ्वी पर अथवा जल में गिरा हुआ तथा भगवान् श्रीविष्णु को अर्पित तुलसी पत्र धो देने पर दूसरे कार्य के लिये शुद्ध माना जाता है।

तुम निरामय गोलोक-धाम में तुलसी की अधिष्ठात्री देवी बनकर मेरे स्वरूपभूत श्रीकृष्ण के साथ निरन्तर क्रीडा करोगी। तुम्हारी देह से उत्पन्न नदी की जो अधिष्ठात्री देवी है, वह भारतवर्ष में परम पुण्यदा नदी बनकर मेरे अंशभूत क्षार-समुद्र की पत्नी होगी। तुम महासाध्वी तुलसीरूप से वैकुण्ठ में मेरे संनिकट निवास करोगी। वहाँ तुम लक्ष्मी के समान सम्मानित होओगी। गोलोक के रास में भी तुम्हारी उपस्थिति होगी, इसमें संशय नहीं है।

मैं भारतवर्ष में 'पाषाण' (शालग्राम) बन कर रहूँगा। गण्डकी नदी के तट पर मेरा वास होगा। वहाँ रहने वाले करोड़ों कीड़े अपने तीखे दाँतरूपी आयुधों से काट-काटकर उस पाषाण में मेरे चक्र का चिह्न करेंगे। जिसमें एक द्वार का चिह्न होगा, चार चक्र होंगे और जो वनमा ला से विभूषित होगा, वह नवीन मेघ के समान श्यामवर्ण का पाषाण 'लक्ष्मीनारायण' का बोधक होगा। जिसमें एक द्वार और चार चक्र के चिह्न होंगे तथा वनमाला की रेखा नहीं प्रतीत होगी, ऐसे नवीन मेघ की तुलना करने वाले श्याम रंग के पाषाण को 'लक्ष्मी जनार्दन' की संज्ञा दी जानी चाहिये। दो द्वार, चार चक्र और गाय के खुर के चिह्न से सुशोभित एवं वनमाला के चिह्न रहित श्याम पाषाण को भगवान् 'राघवेन्द्र' का विग्रह मानना चाहिये। जिसमें दो चक्र के छोटे-छोटे चिह्न हों, उस नवीन मेघ के समान कृष्ण वर्ण

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाषाण को भगवान् 'दधिवामन' मानना चाहिये, वह गृहस्थों के लिये सुखदायक है। अत्यन्त छोटे आकार में दो चक्र वनमाला से सुशोभित पाषाण स्वयं भगवान् 'श्रीधर' का रूप है—ऐसा समझना चाहिये। ऐसी मूर्ति भी गृहस्थों को सदा श्रीसम्पन्न बनाती है। जो पूरा स्थूल हो, जिसकी आकृति गोल हो, जिसके ऊपर वनमाला चिह्न अंकित न हो तथा जिसमें दो अत्यन्त स्पष्ट चक्र के चिह्न दिखायी पड़ते हों, उस शालग्राम शिला की 'दामोदर' संज्ञा है। जो मध्यम श्रेणी का वर्तुलाकार हो, जिसमें दो चक्र तथा तरकस और वाण के चिह्न शोभा पाते हों एवं जिसके ऊपर वाण से कट जाने का चिह्न हो, उस पाषाण को रण में शोभा पाने वाले भगवान् 'रणराम' की संज्ञा देनी चाहिये। जो मध्यम श्रेणी का पाषाण सात चक्रों से तथा छत्र एवं तरकस से अलंकृत हो, उसे भगवान् 'राजराजेश्वर' की प्रतिमा समझें। उसकी उपासना से मनुष्यों को राजा की सम्पत्ति सुलभ हो सकती है।

चौदह चक्रों से सुशोभित तथा नवीन मेघ के समान रंग वाले स्थूल पाषाण को भगवान् 'अनन्त' का विग्रह मानना चाहिये। उसके पूजन से धर्म, अर्थ काम और मोक्ष—यह चारों फल प्राप्त होते हैं। जिसकी आकृति चक्र के समान हो तथा जो दो चक्र, श्री और गो-खुर के चिह्न से शोभा पाता हो, ऐसे नवीन मेघ के समान वाले मध्यम श्रेणी के पाषाण को भगवान् 'मधुसूदन' समझना चाहिये। केवल एक चक्र वाला 'सुदर्शन' का, गुप्त चक्र-चिह्न वाला 'गदाधर' का तथा दो चक्र एवं अश्व के मुख की आकृति से युक्त पाषाण भगवान् 'हयग्रीव' का विग्रह कहा जाता है। साध्वि ! जिसका मुख अत्यन्त विस्तृत हो, जिस पर दो चक्र चिह्नित हों तथा जो बड़ा विकट प्रतीत होता हो ऐसे पाषाण को भगवान् 'नरसिंह' की प्रतिमा समझनी चाहिये। यह मनुष्यों को तत्काल वैराग्य प्रदान करने वाला है। जिसमें दो चक्र हों, विशाल मुख हो तथा जो वनमाला के चिह्न से सम्पन्न हो, गृहस्थ के लिये सदा सुखदायी हो, उस पाषाण को भगवान् 'लक्ष्मीनारायण' का विग्रह समझना चाहिये। जो द्वार-देश में दो चक्रों से युक्त हो तथा जिस पर श्री का चिह्न स्पष्ट दिखायी पड़े, ऐसे पाषाण को भगवान् 'वासुदेव' का विग्रह मानना चाहिये। इस विग्रह की अर्चना से सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध हो सकेंगी। सूक्ष्म चक्र के चिह्न से युक्त, नवीन मेघ के समान श्याम तथा मुख पर बहुत से छोटे-छोटे छिद्रों से सुशोभित पाषाण 'प्रद्युम्न' का स्वरूप होगा। उसके पूजा प्रभाव से गृहस्थ सुखी हो जावेंगे। जिसमें दो चक्र सटे हुए हों और जिसका पृष्ठभाग विशाल हो, गृहस्थों को निरन्तर सुख प्रदान करने वाले उस पाषाण को भगवान् 'संकर्षण' की प्रतिमा समझनी चाहिये। जो अत्यन्त सुन्दर गोलाकार हो तथा पीले रंग से सुशोभित हो, विद्वान् पुरुष कहते हैं कि गृहास्थाश्रमियों को सुख देने वाला वह पाषाण 'अनिरुद्ध' का स्वरूप है।

जहाँ शालग्राम की शिला रहती है, वहाँ भगवान् श्रीहरि विराजते हैं और वहीं सम्पूर्ण तीर्थों को साथ लेकर भगवती लक्ष्मी भी निवास करती हैं। ब्रह्महत्या

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आदि जितने पाप हैं, वे सब शालग्राम शिला की पूजा करने से नष्ट हो जाते हैं। छत्राकार शालग्राम में राज्य देने की तथा वर्तुलाकार में प्रचुर सम्पत्ति देने की योग्यता है। शकट के आकार वाले शालग्राम में दुःख तथा शूल के समान आकार वाले से मृत्यु होना निश्चित है। विकृत मुख वाले दरिद्रता, पिंगलवर्ण वाले हानि, भग्न चक्र वाले व्याधि तथा फटे हुए शालग्राम निश्चित रूप से मरणप्रद हैं। व्रत, दान, प्रतिष्ठा तथा श्राद्ध आदि सत्कार्य शालग्राम की संनिधि में करने से सर्वोत्तम पूर्ण फल प्रदान करने वाले होते हैं। जो अपने ऊपर शालग्राम-शिला का जल छिड़कता है, वह सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान कर चुका तथा समस्त यज्ञों का फल पा गया। अखिल यज्ञों, तीर्थों, व्रतों और तपस्याओं के फल का वह अधिकारी समझा जाता है। साध्वि ! चारों वेदों के पढ़ने तथा तपस्या करने से जो पुण्य होता है, वही पुण्य शालग्राम शिला की उपासना से प्राप्त हो जाता है। जो निरन्तर शालग्राम शिला के जल से अभिषेक करता है, वह सम्पूर्ण दान के पुण्य तथा पृथ्वी की प्रदक्षिणा के उत्तम फल का अधिकारी हो जाता है। शालग्राम शिला के जल का निरन्तर पान करने वाला पुरुष देवाभिलाषित प्रसाद पाता है, इसमें संशय नहीं है। उसे जन्म-मृत्यु और जरा से छुटकारा मिल जाता है। सम्पूर्ण तीर्थ उस पुण्यात्मा पुरुष का स्पर्श करना चाहते हैं। जीवन मुक्त एवं महान् पवित्र वह व्यक्ति भगवान् श्रीहरि के पद का अधिकारी हो जाता है। भगवान् के धाम में वह उनके साथ असंख्य प्राकृत प्रलय तक रहने की सुविधा प्राप्त करता है। वहाँ जाते ही भगवान् उसे अपना दास बना लेते हैं। उस पुरुष को देखकर, ब्रह्महत्या के समान जितने बड़े-बड़े पाप हैं, वे सब इस प्रकार भाग जाते हैं, जैसे गरुड़ को देखकर सर्प। उस पुरुष के चरणों की रज से पृथ्वी देवी तुरन्त पवित्र हो जाती है। उसके जन्म लेने से लाखों पितरों का उद्धार हो जाता है।

मृत्युकाल में जो शालग्राम के जल का पान करता है, वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक को चला जाता है। उसे निर्वाण मुक्ति सुलभ हो जाती है। वह कर्म भोग से छूटकर भगवान् श्रीहरि के चरणों में लीन हो जाता है—इसमें कोई संशय नहीं है। शालग्राम को हाथ में लेकर मिथ्या बोलने वाला व्यक्ति 'कुम्भीपाक' नरक में जाता है और ब्रह्मा की आयु पर्यन्त उसे वहाँ रहना पड़ता है। जो शालग्राम को धारण करके, की हुई प्रतिज्ञा का पालन नहीं करता, उसे लाख मन्वन्तर तक 'असिपत्र' नामक नरक में रहना पड़ता है। कान्ते ! जो व्यक्ति शालग्राम पर से तुलसीपत्र को प्रमाद से दूर करेगा, उसे दूसरे जन्म में स्त्री साथ न दे सकेगी। शंख से तुलसीपत्र का प्रमाद से विच्छेद करने वाला व्यक्ति भार्या-हीन तथा सात जन्मों तक रोगी होगा। शालग्राम, तुलसी और शंख—इन तीनों को तो महान् ज्ञानी पुरुष एकत्र कर सुरक्षित रूप में रखता है। उससे भगवान् श्रीहरि बहुत प्रेम करते हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नारद ! इस प्रकार देवी तुलसी से कहकर भगवान् श्रीहरि मौन हो गये। उधर देवी तुलसी अपना शरीर त्याग कर दिव्यरूप से सम्पन्न हो भगवान् श्रीहरि के वक्षःस्थल पर लक्ष्मी की भांति शोभा पाने लगी। कमलापति भगवान् उसे साथ लेकर वैकुण्ठ पधार गये। नारद ! लक्ष्मी, सरस्वती, गङ्गा और तुलसी—ये चार देवियाँ भगवान् श्रीहरि की पत्नियाँ हुईं। उसी समय तुलसी की देह से गण्डकी नदी उत्पन्न हुई और भगवान् श्रीहरि भी उसी के तट पर मनुष्यों के लिये पुण्यप्रद शालग्राम शिला बन गये। मुने ! वहाँ रहने वाले कीड़े शिला को काट-काट कर अनेक प्रकार की बना देते हैं। वे पाषाण जल में गिरकर निश्चय ही उत्तम फल प्रदान करते हैं। जो पाषाण पृथ्वी पर पड़ जाते हैं, उन पर सूर्य का ताप पड़ने से पीलापन आ जाता है। ऐसी शिला को पिङ्गला समझना चाहिये। यह शिला पूजन के लिये उत्तम नहीं मानी गयी है।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड, अध्याय २१ के आधार से)

यह शालग्राम-क्षेत्र नेपाल देश में काठमंडू से १४० मील दूर मुक्तिनाथ स्थान में है। यहाँ ही गण्डकी नदी है, जिसको नारायणी व शालग्रामी भी कहते हैं। भगवान् हरि यहाँ पर्वत रूप में स्थित हैं और भगवान् शिव पर्वतस्थ लिङ्ग रूप में स्थित हैं। यहाँ गण्डकी, देविकी तथा चक्रा नदियों का संगम है, इसलिये इसको त्रिवेणी भी कहते हैं। यहाँ की सब ही शिलाएँ भगवत्स्वरूप हैं, फिर चक्राङ्कितों का तो कहना ही क्या है। यहाँ मुक्तिनाथ स्थान में कई तीर्थ व अनेक देवी-देवताओं के मंदिर हैं। यहाँ की यात्रा के लिये नेपाल राज्य से पारपत्र लेना आवश्यक है।

●

श्रीचतुर्भुजरूपधारी भगवान् विष्णु

उनके आयुध, वाहन, द्वारपाल, पार्षद

सोपान १३

श्रीभगवान् विष्णु के अनन्त स्वरूप, अनन्त नाम हैं। वे सबमें व्यापक हैं, इसलिये वे समस्त रूपों से स्वरूपतः अभिन्न हैं। उनके अङ्ग, आयुध और वाहन—सब-के-सब सम्पूर्ण रूप से उन्हीं के स्वरूप हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स वेद धातुः पदवीं परस्य
दुरन्तवीर्यस्य रथाङ्गपाणेः ।
योऽमायया संततयानुवृत्त्या
भजेत तत्पादसरोजगन्धम् ।।

'श्रीचक्रपाणि भगवान् विष्णु की शक्ति और पराक्रम अनन्त हैं—उनकी कोई थाह नहीं पा सकता। वे समस्त जगत् के निर्माता होने पर भी उससे सर्वथा परे हैं। उनके स्वरूप को अथवा उनकी लीला के रहस्य को वही जान सकता है, जो नित्य निरन्तर निष्कपट भाव से उनके चरण कमलों की दिव्यगन्ध का सेवन करता है—सेवाभाव से उनके चरणों का चिन्तन करता रहता है।'

भगवान् विष्णु के साकार रूप का बड़ा ही रमणीय मनोहारी चित्रण पुराणादि धर्मग्रन्थों में मिलता है—

वर्षमाणस्य मेघस्य यद्वर्णं तस्य तद्भवेत् ।
सूर्यतेजः प्रतीकाशं..... ।।
दक्षिणे शोभते शङ्खो हेमरत्नविभूषितः ।
सूर्यबिम्बसमाकारं चक्रं पद्मप्रतिष्ठितम् ।।
कौमोदकी गदा तस्य महासुरविनाशिनी ।
वामे च शोभते वत्स करे तस्य महात्मनः ।।
महापद्मं तु गन्धाढ्यं तस्य दक्षिणहस्तगम् ।

(पद्मपुराण० भूमि० ८६।८०-८३)

भगवान् विष्णु का वर्ण वर्षा के लिये तैयार हो रहे सजल मेघ के समान है। वे चतुर्भुज हैं। वे सूर्य के समान तेजस्वी और देवताओं के स्वामी हैं। उनके दाहिने एक हाथ में स्वर्ण और रत्नों से भूषित शङ्ख शोभित है, दूसरे दाहिने हाथ में सुगन्ध पूर्ण कमल शोभा दे रहा है। बायें एक हाथ में चक्र प्रतिष्ठित है, उसकी आकृति चमकते सूर्य मण्डल के समान है। दूसरे बायें हाथ में बड़े-बड़े असुरों का संहार करने वाली कौमोदकी गदा शोभित है।'

भगवान् विष्णु के श्रीविग्रह की मधुरछवि का वर्णन अनेक ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर किया गया है—

नारायण नमस्तेऽस्तु पुण्डरीकायतेक्षण ।
सुभ्रु ललाटसुनससुस्मिताधरविद्रुम ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पीनवृत्तायतभुज श्रीवत्सकृतभूषण ।
तनुमध्य महावक्षः पद्मनाभ नमोऽस्तु ते ।।
विलासविक्रमाक्रान्तत्रैलोक्यचरणाम्बुज ।
नमस्ते पीतवसनस्फुरन्मकरकुण्डल ।।
स्फुरत्किरीटकेयूरहारकौस्तुभभूषण । (ब्रह्मतन्त्र)

'नारायण ! आपको प्रणाम है। आपके नेत्र कमल के समान विशाल हैं, आपकी भौंहें तथा ललाट देश सुन्दर हैं, सुघड़ नासिका है तथा मूंगे के समान लाल-लाल होठों पर मधुर मुस्कान खेल रही है। आपकी सुपुष्ट, गोल-गोल और लम्बी भुजाएँ हैं, आपने वक्षःस्थल पर श्रीवत्सचिह्न को अलंकार रूप में धारण कर रखा है, आपका कटिदेश क्षीण है, छाती चौड़ी है, आपकी नाभिरूप सरोवर में कमल लहरा है, आपको नमस्कार है। आपने त्रिविक्रम रूप में अपने चरणारविन्दों की विलासपूर्ण स्वाभाविक गति से तीनों लोकों को नाप लिया था। आप पीताम्बर धारण किये हैं, आपके कानों में मकराकृत कुण्डल झलमला रहे हैं, आपके मस्तक पर किरीट, भुजाओं में बाजूबन्द, गले में हार और वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि जगमगा रहे हैं। आपको नमस्कार है।'

श्रीभगवान् का दिव्यरूप अतिशय मधुर है। उसका सभी कुछ-अङ्ग-प्रत्यङ्ग आनन्दमय होने के कारण माधुरीमय है।

सर्वायुधैः सुसम्पूर्णो दिव्यैराभरणैर्हरिः।
वैनतेय समारूढ़ो लोककर्ता जगत्पतिः ।।

(पद्मपुराण, भूमि ८६-९१)

समस्त आयुधों से सम्पन्न और दिव्य आभूषणों से विभूषित श्रीहरि गरुड़ की पीठ पर विराजमान है।'

चारभुजा

धर्मार्थकाममकेयूरैर्दिव्यैर्दिव्यमयैरितैः ।

(गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद् २७)

'भगवान् श्री नारायण की स्वीकृति है कि मेरी चार भुजाएँ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चार केयूरों से विभूषित हैं।'

भगवान् नारायण ने सृष्टि रचना के लिये सर्वप्रथम ब्रह्माजी को उत्पन्न किया, उनके चार मुख हैं। वेद भी चार हैं। विश्व में जो प्राणी हैं, उनकी उत्पत्ति भी चार ही प्रकार की है। अण्डज, जरायुज, स्वेदज पथा उद्भिज। इन सब

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्राणियों की जीवन व्यवस्था भी चार अवस्थाओं में होती है (जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति एवं तुरीय)। वर्ण भी चार ही होते हैं (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र)। आश्रम भी चार ही हैं (ब्रह्मचर्य,गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास)। भगवान् के भक्त भी चार प्रकार के होते हैं। उत्तम कार्य करने वाले (अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी)। मुख्य दिशा चार हैं (पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण)। भगवान् के मुख्य धाम चार हैं (जगन्नाथपुरी, द्वारका, बदरिकाश्रम और रामेश्वरम्)। भगवान् अपने भक्तों को चार पदार्थ प्रदान करते हैं (धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष)। इसी प्रकार से सत्त्व, रज, तम और अहंकार के प्रतीक रूप में भी श्रीहरि की चार भुजाएँ वर्णित हैं।

पाञ्चजन्य शङ्ख

भगवान् विष्णु के हाथ में जो शङ्ख रहता है। उसका नाम 'पाञ्चजन्य' है।

अपां तत्त्वंदरवरम्।'

(श्रीमद्भागवत १२।११।१४)

पाञ्चजन्य शङ्ख जल तत्त्व रूप कहा गया है।

पञ्चभूतात्मकं शङ्खं करे रजसि संस्थितम्।

(गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद् २५)

'यह शङ्ख पञ्चभूतात्मक है तथा भगवान् के रजोगुणमय हाथ में स्थित है।'

शङ्खोऽपि पुरुषो दिव्यः शुक्लाङ्गः शुभलोचनः।

(विष्णोधर्मोत्तरपुराण)

यह आयुध पुल्लिङ्ग है। इसको पुरुष आयुध कहा जाता है, यह श्वेत वर्ण और सुन्दर नेत्र से विभूषित होता है। इस शङ्ख का मन्त्र 'चं शं मं क्षं पाञ्चजन्याय नमः।' अग्नि पुराण के पचीसवें अध्याय में वर्णित है। इसका विशिष्ट ज्ञान तथा पूजा विधि चतुर्थ स्कन्ध सोपान (५) में देख लेवें।

सुदर्शन चक्र

'बालस्वरूपमित्यन्तं मनश्चक्रं निगद्यते।'

(गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद् २५)

'बालक की भाँति अत्यन्त चञ्चल समष्टि मन ही मेरे हाथ में चक्र कहलाता है।'

तेजस्तत्त्वं सुदर्शनम्।

(श्रीमद्भागवत १२।११।१४)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'सुदर्शन चक्र तेजस्तत्त्वरूप है।'

सुदर्शन चक्र की प्रार्थना में लिखा है—

चक्रं युगान्तानलतिग्मनेमिभ्रमत् समन्ताद् भगवत्प्रयुक्तम्।
दन्दग्धि दन्दग्ध्यरिसैन्यमाशु कक्षं यथा वातसखो हुताशः।।

(श्रीमद्भागवत ६।८।२३)

'सुदर्शन ! आपका आकार चक्र की भाँति है। आपके किनारे प्रलयकालीन अग्नि के समान अत्यन्त तीव्र हैं। आप भगवान् की प्रेरणा से सब ओर घूमते हैं। जिस प्रकार आग वायु की सहायता से सूखे घास-फूस को जला डालती है, उसी प्रकार आप हमारी शत्रु सेना को जला दीजिये, जला दीजिये।'

वामन पुराण में लिखा है—

भगवान् शिव ने सुदर्शन चक्र भगवान् विष्णु को प्रदान किया था। श्रीदामा-नामक एक विख्यात असुर था। उसने भगवान् विष्णु से श्रीवत्स को हरने की इच्छा की। उस असुर के वध के लिये भगवान् विष्णु हिमालय के एक सुन्दर रमणीक स्थान पर भगवान् शंकर की आराधना करने लगे। भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु को सुदर्शन चक्र और परमपद प्रदान किया। कालचक्र के समान सुदर्शन चक्र प्रदान करते हुए कहा—

वरायुधं हि देवेश सर्वायुधनिबर्हणम्।
सुदर्शनं द्वादशारं नवनाभि द्विजवज्जवे।।
आरासंस्थास्त्वमी तत्र देवा मासाश्च राशयः।
शिष्टानां रक्षणार्थाय संस्थिता ऋतवश्च षट्।।

× × ×

अमोघ एषोऽमरराजपूजितो धृतो मया मन्त्रगतस्तपोबलात्।

(वामनपुराण ८२।२५-२६, ३०)

'यह श्रेष्ठ आयुध सब प्रकार के आयुधों का विनाशक है। इसका नाम 'सुदर्शन' है। इसके बारह अरे और नौ नाभियाँ हैं। यह वेग में गरुड़ के समान है। इन अरों में शिष्ट पुरुषों की रक्षा के लिये देवता, मेष आदि बारह राशियां तथा छहों ऋतुएँ रहती हैं। चन्द्र, सूर्य, वरुण, इन्द्र, अग्नि, विश्वेदेव, प्रजापति, वायु, अश्विनीकुमार, धन्वन्तरी, तपस्य और उग्रतप—ये बारह देवता रहते हैं। इसमें चैत्र से फाल्गुन तक बारहों मास भी रहते हैं। आप इस आयुध से देव शत्रुओं का संहार कीजिये।.....यह अमोघ है, देवराज (इन्द्र) इसकी पूजा करते हैं। मैंने यह मंत्रमय आयुध तपोबल से धारण कर रखा है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुदर्शन चक्र का मन्त्र, 'जं खं वं सुदर्शनाय नमः' अग्नि पुराण के पचीसवें अध्याय में वर्णित है।

कौमोदकी गदा

भगवान् का कथन है—

आद्या विद्या गदा वेद्या सर्वदा मे करे स्थिता ।।

(गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद् २६)

'आदि विद्या को ही गदा समझना चाहिये, जो मेरे हाथ में सर्वदा स्थित रहती है।'

ओजस्सहोबलयुतं मुख्यतत्त्वं गदां दधत् ।

(श्रीमद्भागवत १२।११।१४)

'भगवान् विष्णु मन, इन्द्रिय और शरीर--सम्बन्धी शक्तियों से युक्त प्राण-तत्त्वरूप कौमोदकी गदा धारण करते हैं।'

गदा की प्रार्थना में लिखा है—

गदेऽशनिस्पर्शन विस्फुलिङ्गे निष्पिण्डिनिष्पिढ्यजित प्रियासी ।
कूष्माण्डवैनायकयक्षरक्षोभूतग्रहांश्चूर्णय चूर्णयारीन् ।।

(श्रीमद्भागवत ६।८।२४)

'कौमोदकी गदा ! आपसे छूटने वाली चिनगारियों का स्पर्श वज्र के समान असह्य है। आप भगवान् अजित की प्रिया हैं। मैं उनका सेवक हूँ। आप कूष्माण्ड, विनायक, यक्ष, राक्षस तथा भूतादि ग्रहों को अभी कुचल डालिये। मेरे शत्रुओं को चूर-चूर कर दीजिये।'

वायु पुराण में नदी की उत्पत्ति के विषय में लिखा है—

प्राचीन समय की बात है। वज्र से भी अधिक कठोर 'गद' नामक असुर था। ब्रह्मा की प्रार्थना पर उसने अपनी हड्डियाँ उनको दे दीं। ब्रह्मा के कहने पर विश्वकर्मा ने उन हड्डियों की एक अद्भुत गदा बनायी और उसे स्वर्ग में स्थापित कर दिया। स्वायम्भुव मन्वन्तर में घोर तपस्या कर देवताओं और ब्रह्मा से 'हेति' नामक असुर ने अस्त्र-शस्त्र, मनुष्य, सुदर्शन चक्र आदि से अवध्य होने का वरदान प्राप्त किया तथा देवताओं को पराजित कर इन्द्र पद छीन लिया। उसके वध के लिये देवताओं ने वह गदा भगवान् विष्णु को समर्पित कर दी। भगवान् विष्णु ने सबसे पहले उस गदा को धारण कर 'हेति' नामक असुर का विनाश किया—

'दधार तां गदामादौ देवैरुक्तो गदाधरः ।

(वायुपुराण १०९।१२)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु ने सबसे पहले उस गदा को धारण किया इसलिये उनका नाम – 'आदि गदाधर' भी हो गया।

गदा के श्रीविग्रह विषय में लिखा है—

'गदा पीतप्रभा कन्या सुपीनजघनस्थला।'

(विष्णोधर्मोत्तरपुराण)

इस गदा के श्री अङ्गों से पीले रंग की आभा निकलती है, ये कन्या (कुमारिका) रूप में सदा रहती है। इनका नितम्ब भाग स्थूल और कटिदेश क्षीण-पतला है। यह अनेक आभूषणों से विभूषित रहती है। इनके हाथ में चामर रहता है और भगवान् विष्णु के दाहिने हाथ का उनके सिर पर संस्पर्श रहता है।

गदा का मन्त्र 'खं ठं फं षं गदायै नमः' अग्निपुराण के पच्चीसवें अध्याय में वर्णित है।

पद्म (कमल)

भगवान् विष्णु के हाथ में परम मनोहर दिव्य उत्तम गंधयुक्त पद्म (कमल) शोभा देता है।

पद्मं विश्वं करे स्थितम्।

(गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद् २६)

'भगवान् विष्णु के हाथ में शोभित पद्म (कमल) सम्पूर्ण विश्व--ऐश्वर्य का प्रतीक है।'

भगवान् भगशब्दार्थं लीलाकमलमुद्वहन्।

(श्रीमद्भागवत १२।११।१८)

'समग्र ऐश्वर्य, धर्म, यश, लक्ष्मी, ज्ञान और वैराग्य—इन छः पदार्थों का नाम ही 'नीलकमल' है, जिसको भगवान् अपने हाथ में धारण करते हैं।'

पद्म या पद्मनाभ का मन्त्र—'ॐ पं पद्मनाभाय नमः।' अग्नि पुराण के २५वें अध्याय में वर्णित है।

भगवान् विष्णु के प्रमुख वाहन गरुड़

भगवान् विष्णु के प्रमुख वाहन के रूप में गरुड़जी की गणना की जाती है। भगवान् के वाहन गरुड़जी नित्यमुक्त और अखण्डज्ञान-सम्पन्न माने जाते हैं और उनको 'सर्ववेदमय विग्रह' कहा जाता है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आकर्णयन् पत्ररथेन्द्रपक्षै—

रुच्चारितं स्तोममुदीर्णसाम् ।

(श्रीमद्भागवत ३।२१।३४)

'वृहत् और रथन्तर नामक सामवेद के दो विभाग ही गरुड़ के पंख हैं और उड़ते समय इन पंखों द्वारा सामगान की ध्वनि निकलती हैं।'

अपनी विभूतियों का वर्णन करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है—

'वैनतेयश्च पक्षिणाम् ।'

(भगवद्गीता १०।३०)

'पक्षियों में वैनतेय मैं हूँ।'

यद्यपि गरुड़ भगवान् विष्णु के नित्य परिकर हैं, तथापि कश्यप और विनता से जन्म होने के नाते उनको 'वैनतेय' कहा जाता है।

'त्रिवृद् वेदः सुपर्णाख्यो यज्ञं वहति पूरुषम् ।।'

(श्रीमद्भागवत १२।११।१९)

'तीनों वेदों का नाम ही गरुड़ है। वेद ही परमात्मा का वहन करते हैं, इसी लिये उनको वाहन कहा जाता है। वे गरुड़ के पर्याय माने जाते हैं।'

गरुड़जी को 'सुपर्णपक्षी' (सुन्दर पंख वाला पक्षी) भी कहा जाता है—

'सुपर्णपक्षोपरि रोचमानः'

(श्रीमद्भागवत ३।२१।२२)

'गरुड़ के कंधे पर विराजमान।'

तथा—'सुपर्णांसकृताङ्घ्रिपल्लवः'

(श्रीमद्भागवत ८।१०।५४)

'गरुड़ के कंधे पर चरण रखे हुए।' कहा गया है।

गरुड़जी को 'सुपर्ण' कहा जाता है। इसकी एक कथा भी है—

एक समय गरुड़जी अमृत कलश लेकर बड़े वेग से आकाश में उड़ते जा रहे थे कि इन्द्र ने उन पर रोष करके वज्रघात किया। गरुड़जी ने नम्रतापूर्वक मधुर वाणी में निवेदन किया कि 'जिनकी हड्डियों से यह वज्र बना है, उन महर्षि (दधीचि) का सम्मान करूँगा, आपका और आपके वज्र का भी आदर करूँगा। इसलिये अपना एक पंख, जिसका आप कहीं भी अन्त नहीं पा सकेंगे, त्याग देता हूँ।' पंख त्याग दिया। उसको जिन्होंने भी देखा उन्होंने ही कहा कि "जिसका यह सुन्दर पंख—पर्ण है, वह पक्षी 'सुपर्ण' नाम से विख्यात हो।"

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हृष्टानि सर्वभूतानि नाम चक्रुर्गरुत्मतः ।
सुरूपं पत्रमालक्ष्य सुपर्णोऽयं भवत्विति ।।

(महाभारत, आदि. ३३।२३-२४)

गरुड़ का मन्त्र 'कं टं पं शं वैनतेयाय नमः' अग्नि पुराण के २५वें अध्याय में वर्णित है ।

द्वारपाल तथा पार्षद

विष्वक्सेनस्वतन्त्रमूर्तिर्विदितः पार्षदाधिपः ।
नन्दादयोऽष्टौ द्वाः स्थाश्च तेऽणिमाद्या हरेर्गुणाः ।।

(श्रीमद्भागवत अध्या. ११।२०)

'भगवान् के पार्षदों के अधिपति विश्वविश्रुत विष्वक्सेन पाञ्चरात्रादि आगमरूप कहलाते हैं । भगवान् के स्वाभाविक गुण अणिमा, महिमा आदि अष्ट-सिद्धियों को ही नन्द-सुनन्दादि आठ द्वारपाल कहते हैं ।'

विष्वक्सेन का मन्त्र—'रौं विष्वक्सेनाय नमः' अग्निपुराण के (२५) वें अध्याय में वर्णित है । पार्षदों में विष्वक्सेन के पश्चात् सुषेण का नाम आता है ।

वैसे तो भगवान् विष्णु के असंख्य पार्षद हैं; परन्तु उनमें से सोलह पार्षद प्रमुख हैं । इनके नाम क्रमशः विष्वक्सेन, सुषेण, जय, विजय, बल, प्रबल, नन्द, सुनन्द, भद्र, सुभद्र, चण्ड, प्रचण्ड, कुमुद, कुमुदाक्ष, शील और सुशील हैं । बल, प्रबल, नन्द, सुनन्द, भद्र, सुभद्र, कुमुद और कुमुदाक्ष की गणना वैष्णव द्वारपाल के रूप में की जाती है ।

भगवान् विष्णु के द्वारपालों में अष्टकुल नामों की भी गणना की जाती है । ये महासर्प एलापत्र, अनन्त, महापद्म, शङ्कु, अंशुकम्बल, तक्षक कर्कोटक और वासुकि हैं । ये द्वारपाल भगवान् विष्णु के आज्ञापालन में तत्पर रहते हैं । ये अपने हृदय में सदा भगवान् का ध्यान करते रहते हैं । भगवान् के धाम में इनकी कृपा के बिना कोई भी प्रवेश नहीं पाता । भगवान् की कीर्ति का वर्णन करना इनका स्वभाव है । शेष अथवा अनन्त भगवान् आदि पुरुष नारायण के पर्यङ्क रूप में क्षीर-सागर में विराजमान रहते हैं । ये अपने सहस्र मुखों से भगवान् का अनवरत गुणा-नुवाद करते रहते हैं । ये जीव को भगवान् की शरण में ले जाते हैं । ये भगवान् के नित्य परिकर के रूप में स्वीकृत हैं । समस्त देवगणों से वन्दित शेष-नामधारी भगवान् अनन्त अशेष भूमण्डल को मुकुट के समान धारण करते हैं । ब्रह्माजी की आज्ञा से शेष पृथ्वी को अपने अनन्त फणों पर रखकर विराजमान हैं । महाभारत में लिखा है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अधोभूमौ वसत्येवं नागोऽनन्तः प्रतापवान् ।
धारयन् वसुधामेकः शासनाद् ब्रह्मणो विभुः ॥
(महाभारत, आदि. ३६।२४)

श्रीभगवान् विष्णु के अनन्त स्वरूप, अनन्त नाम. उनकी अनेक मनोहारिणी छवियाँ उनके अनेक वस्त्रालंकार, अनेक आयुध, अनेक वाहन, अनेक पर्यङ्क-सिंहासन तथा अनेक ही पार्षद हैं। एक स्वल्प बुद्धि मानव इन सबके विषय में पूर्ण रूप से क्या कुछ कहने में समर्थ हो सकता है ? यहाँ जिन-जिन के नाम से कुछ लिखा गया, स्मरण हो गया. इस पर ही सन्तोष करते हुए भगवान् विष्णु तथा उनके सबही परिकरों के चरणों में बारम्बार प्रणाम करते हैं।

गोलोकधाम से श्रीयमुनाजी का अवतरण उनकी पूजाविधि, मन्त्र, जाप, कवच

सोपान १४

मधुवनचारिणि भास्करवाहिनि जाह्नविसङ्गिनि सिन्धुसुते
मधुरिपुभूषिणि माधवतोषिणि गोकुलभीतिविनाशकृते ।
जगदघमोचिनि मानसदायिनि केशवकेलिनिदानगते
जय यमुने जय भीतिनिवारिणि संकटनाशिनि पावय माम् ॥

'हे मधुवन में विहार करने वाली ! हे भास्कर वाहिनी ! हे गङ्गाजी की सहचरी ! हे सिन्धुसुते ! हे श्रीमधुसूदन विभूषिणि ! हे माधवतृप्तिकारिणि ! हे गोकुल का भय दूर करने वाली ! हे जगत्पापविनाशिनि ! हे वाञ्छितफलदायिनि ! हे कृष्णकेलि की आश्रयभूता सकलभयनिवारिणि संकटनाशिनी यमुने ! तुम्हारी जय हो ! जय हो ! तुम मुझे पवित्र करो।'

श्री यमुना अवतरण

सन्नन्दजी कहते हैं — नन्दराज ! गोलोक धाम में श्री हरि ने जब यमुनाजी को भूतल पर जाने की आज्ञा दी और सरिताओं श्रेष्ठ यमुना जब

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीकृष्ण की परिक्रमा कर जाने को उद्यत हुईं, उसी समय विरज तथा ब्रह्मद्रव से उत्पन्न साक्षात् गङ्गा ये दोनों नदियाँ आकर यमुनाजी में लीन हो गयीं। इसलिये परिपूर्णतमा कृष्णा (यमुना) को परिपूर्णतम श्रीकृष्ण की पटरानी के रूप में जानते हैं। तदनन्तर सरिताओं में श्रेष्ठ कालिन्दी अपने महान् वेग से विरजा के वेग का भेदन करके निकुञ्ज-द्वार से निकली और असंख्य ब्रह्माण्ड-समूहों का स्पर्श करती हुई ब्रह्मद्रव में समा गयीं। फिर उसकी दीर्घ जलराशि का अपने महावेग से भेदन करती हुई वे महानदी श्री वामन के बायें अँगूठे के नख से विदीर्ण हुए ब्रह्माण्ड के शिरोभाग में विद्यमान ब्रह्मद्रवयुक्त विवर में श्रीगङ्गाजी के साथ ही प्रविष्ट हुईं और वहाँ से वे सरिद्वरा यमुना ध्रुवमण्डल में स्थित भगवान् अजित विष्णु के धाम वैकुण्ठलोक को लाँघकर जब ब्रह्ममण्डल से नीचे गिरीं, तब देवताओं के सैकड़ों लोकों में एक-से दूसरे के क्रम से विचरती हुई आगे बढीं। तदनन्तर वे सुमेरु गिरि के शिखर पर बड़े वेग से गिरीं और अनेक शैल-शृङ्गों को लाँघकर बड़ी-बड़ी चट्टानों के तटों को भेदन करती हुई जब मेरु-पर्वत से दक्षिण दिशा की ओर जाने को उद्यत हुई, तब यमुनाजी गङ्गा से अलग हो गयीं। महानदी गङ्गा तो हिमवान् पर्वत पर चली गयीं, किन्तु कृष्णा (श्याम सलिला यमुना) कलिन्द शिखर पर जा पहुँची। वहाँ जाकर उस पर्वत से प्रकट होने के कारण उसका नाम 'कालिन्दी' हो गया। कलिन्दगिरी के शिखरों से टूटकर जो बड़ी-बड़ी चट्टानें पड़ी थीं, उनके समुद्र तटों को तोड़ती-फोड़ती और भूमण्डल पर लोटती हुई वेगवती कृष्णा कालिन्दी अनेक देशों (प्रान्तों) को पवित्र करती हुई खाण्डव वन में (इन्द्रप्रस्थ -दिल्ली) के पास जा पहुँचीं। यमुनाजी साक्षात् परिपूर्णतम भगवान् कृष्ण को अपना पति बनाना चाहती थी, इसीलिये वे परम दिव्य देह धारण कर खाण्डव वन में तपस्या करने लगीं। यमुना के पिता भगवान् सूर्य ने जल के भीतर ही एक दिव्य गेह का निर्माण कर दिया था, जिसमें आज भी वे रहा करती हैं। खाण्डव-वन से वेगपूर्वक चलकर कालिन्दी ब्रजमण्डल में वृन्दावन और मथुरा के निकट आ पहुँची। महावन के पास सिकतामय रमणस्थल में प्रवाहित हुई। श्रीगोकुल में आने पर परम सुन्दरी यमुना ने (विशाखा सखी के नाम से) अपने नेतृत्व में गोप किशोरियों का एक यूथ बनाया और श्रीकृष्णचन्द्र के रास में सम्मिलित होने के लिये उन्होंने वहीं अपना निवासस्थान निश्चित कर लिया। तदनन्तर वे जब ब्रज से आगे जाने लगीं, तब ब्रजभूमि के वियोग से विह्वल हो, प्रेमानन्द के आँसू बहाती हुई पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित हुई।

तदनन्तर ब्रजमण्डल की भूमि को वारि-वेग से तीन बार प्रणाम करके यमुना अनेक देशों (प्रान्तों) को पवित्र करती हुई उत्तम तीर्थ प्रयाग में जा पहुँची। वहाँ गङ्गाजी के साथ उनका संगम हुआ और वे उन्हें साथ लेकर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्षीरसागर की ओर गयीं। उस समय देवताओं ने उनके ऊपर फूलों की वर्षा की और दिग्विजय सूचक जयघोष किया। नदी शिरोमणि कलिन्दनन्दिनी कृष्ण वर्णा श्री यमुना ने समुद्र तक पहुँच कर गद्‌गद् वाणी में श्रीगङ्गा से कहा— समस्त ब्रह्माण्ड को पवित्र करने वाली गङ्गे ! तुम धन्य हो। साक्षात् श्रीकृष्ण के चरणारविन्दों से तुम्हारा प्रादुर्भाव हुआ है, अतः तुम समस्त लोकों के लिये एक मात्र वन्दनीया हो। शुभे ! अब मैं यहाँ से ऊपर उठकर श्रीहरि के लोक में जा रही हूँ। तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी मेरे साथ चलो। तुम्हारे समान दिव्य-तीर्थ न तो हुआ है और न आगे होगा ही। गङ्गा आप सर्वतीर्थमयी हैं, अतः सुमङ्गले गङ्गे ! मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ। यदि मैंने कोई अनुचित बात कही हो तो उसके लिये मुझे क्षमा कर देना।

गङ्गा बोलीं— कृष्णे! सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को पावन बनाने वाली तुम हो, अतः तुम्हीं धन्य हो। भगवान् श्रीकृष्ण के वामाङ्ग से तुम्हारा प्रादुर्भाव हुआ है। तुम परमानन्द स्वरूपिणी हो। साक्षात् परिपूर्णतमा हो। समस्त लोकों के द्वारा एक मात्र वन्दनीया हो। अतः कृष्णे! तुम सब प्रकार से उत्कृष्ट हो। तुम कृष्णा को मैं प्रणाम करती हूँ। तुम समस्त तीर्थों और देवताओं के लिये भी दुर्लभ हो। गो लोक में भी तुम्हारा दर्शन दुर्लभ है। मैं तो भगवान् श्रीकृष्ण की ही आज्ञा से मङ्गलमय पाताल लोक में जाऊँगी। यद्यपि तुम्हारे वियोग के भय से मैं बहुत व्याकुल हूँ, तो भी इस समय तुम्हारे साथ चलने में असमर्थ हूँ। ब्रज के रासमण्डल में मैं भी तुम्हारे यूथ में सम्मिलित होकर रहूँगी। हरिप्रिये! मैंने भी यदि कोई अप्रिय बात तुम्हें कह दी हो तो उसके लिये मुझे क्षमा करना।

सनन्दजी कहते हैं—इस प्रकार एक दूसरे को प्रणाम करके दोनों देव-सरिताएँ तुरन्त अपने-अपने गन्तव्य पथ पर चली गयीं। सुरधुनी गङ्गाजी अनेक लोकों को पवित्र करती हुई पाताल में चली गयीं और वहाँ भोगवती – वन में जाकर 'भोगवती गङ्गा' के नाम से प्रसिद्ध हुईं। उन्हीं का जल भगवान् शङ्कर और शेषनाग अपने मस्तक पर धारण करते हैं।

इधर कृष्णा अपने वेग से सप्तसागर-मण्डल का भेदन करके सातों द्वीपों के भूभाग पर लोटती हुई और भी प्रखर वेग से आगे बढ़ीं। सुवर्णमयी भूमि पर पहुँच कर लोकालोक पर्वत पर गयीं। उसके शिखरों तथा गण्ड शैलों (टूटी हुई चट्टानों) के तट का भेदन करके कालिन्दी फुहारे की-सी जलधारा के साथ उछलकर लोकालोक पर्वत के शिखर पर जा पहुँची। फिर वहाँ से ऊर्ध्वगमन करती हुई स्वर्ग-वासियों के स्वर्गलोक तक जा पहुँची। फिर ब्रह्मलोक तक के समस्त लोकों को लाँघकर श्रीहरि के पदचिह्न से लाञ्छित श्री ब्रह्मद्रव से युक्त ब्रह्माण्ड-विवर से होती हुई आगे बढ़ गयीं। उस समय समस्त देवता प्रणाम करते हुए उनके ऊपर पुष्पों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

की वर्षा कर रहे थे। इस तरह सरिताओं में श्रेष्ठ यमुना पुनः श्रीकृष्ण के गोलोक-धाम में आरूढ़ हो गयीं। कलिन्दगिरिनन्दिनी यमुना के इस मङ्गलमय नूतन चरित्र का भूतल पर यदि श्रवण या पठन किया जाय तो वह उत्तम मङ्गल का विस्तार करता है। यदि कोई भी मनुष्य इस चरित्र को मन में धारण करे और प्रतिदिन पढ़े तो वह भगवान् की निकुञ्ज लीला के द्वारा वरण किये गये उनके परमपद-गोलोकधाम में पहुँच जाता है।

(श्री गर्ग संहिता वृन्दावन खण्ड अध्याय ३ के आधार से)

वर्तमान समय के आधुनिक विद्यालय महाविद्यालयों में पढ़े हुए छात्र, विद्वान् इस प्रकार की कथाओं को काल्पनिक बतलाते हैं क्योंकि उन्होंने जो पढ़ा है, उसमें पर्वत, वृक्ष, नदी, समुद्र में जीव, आत्मा होना नहीं पढ़ा है। हमारे प्राचीन विज्ञान शास्त्रों में इनमें भी जीव-आत्मा होना माना गया है। यह सब अपनी भाषा में बात-चीत, परामर्श भी करते हैं। इनको दुःख-सुख का अनुभव भी होता है। ये मूर्तिमान शरीर भी धारण करते हैं। रामायण में समुद्र के मनुष्य शरीर धारण कर भगवान् रामचन्द्रजी के सम्मुख उपस्थित होने की कथा प्रमाण है। वृक्ष शास्त्र के महाविज्ञानाचार्य योगीराज अरविन्द ने वृक्षों द्वारा आगन्तुकों को प्रणाम नमस्ते करते हुए दिखलाकर भारतीय ही नहीं विदेशियों को भी आश्चर्य चकित कर दिया था। महापुण्यप्रदा, पापनाशिनी, श्रीगङ्गा-यमुनाजी के अनेक श्रद्धालु-भक्तों को मूर्तिमान् रूप में प्रकट होकर दर्शन प्रदान करने की घटनाएँ तो होती ही रहती हैं। परन्तु इसके लिये श्रद्धा-विश्वास द्वारा उपासना, अर्चना परमावश्यक है।

श्री यमुनाजी की पूजा विधि व जप मन्त्र

'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कालिन्द्यै देव्यै नमः' इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए श्री यमुनाजी की षोडशोपचार पूजा, इसी पुस्तक में लिखी हुई सर्वदेव पूजा विधि के अनुसार करें। इसके पश्चात् यमुना कवच का पाठ करें। कवच का पाठ करने के पश्चात् इसी मन्त्र का जप करें। उपर्युक्त मन्त्र का ग्यारह लाख जप करने से सब ही प्रकार की कार्य सिद्धियाँ होती हैं।

॥ श्री यमुना कवच ॥

यमुनायाश्च कवचं सर्वक्षारकरं नृणाम्।
चतुष्पदार्थदं साक्षाच्छृणु राजन् महामते॥
कृष्णां चतुर्भुजां श्यामां पुण्डरीकदलेक्षणम्।
रथस्थां सुन्दरीं ध्यात्वा धारयेत् कवचं ततः॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्नातः पूर्वमुखो मौनी कृतसंध्यः कुशाशने ।
कुशैर्बद्धशिखो विप्रः पठेद् वै स्वस्तिकासनः ।।

यमुना मे शिरः पातु कृष्णा नेत्रद्वयं सदा ।
श्यामा भ्रूभङ्गदेशं च नासिकां नाकवासिनी ।।

कपोलौ पातु मे साक्षात् परमान्दरूपिणी ।
कृष्णावामांससम्भूता पातु कर्णद्वयं मम ।।

अधरौ पातु कालिन्दी चिबुकं सूर्यकन्यका ।
यमस्वसा कन्धरां च हृदयं मे महानदी ।।

कृष्णप्रिया पातु पृष्ठं तटिनी मे भुजद्वयम् ।
श्रोणीतटं च सुश्रोणी कटिं मे चारुदर्शना ।।

उरुद्वयं तु रम्भोरूर्जानुनी त्वङ्घ्रिभेदिनी ।
गुल्फौ रासेश्वरी पातु पादौ पापापहारिणी ।।

अन्तर्बहिरधश्चोर्ध्वं दिशासु विदिशासु च ।
समन्तात् पातु जगतः परिपूर्णतमप्रिया ।।

इदं श्रीयमुनायाश्च कवचं परमाद्भुतम् ।
दशवारं पठेद् भक्त्या निर्धनो धनवान् भवेत् ।।

त्रिभिर्मासैः पठेद् धीमान् ब्रह्मचारी मिताशनः ।
सर्वराज्याधिपत्यत्वं प्राप्यते नात्र संशयः ।।

दशोत्तरशतं नित्यं त्रिमासावधि भक्तितः ।
यः पठेत् प्रयतो भूत्वा तस्य किं किं न जायते ।।

यः पठेत् प्रातरुत्थाय सर्वतीर्थफलं लभेत् ।
अन्ते व्रजेत् परं धाम गोलोकं योगिदुर्लभम् ।।

(गर्ग संहिता, माधुर्य खण्ड अध्याय १६।११।१४)

(महाराज मांधाता को सौभरि ऋषि ने कहा—)

महामते नरेश ! यमुनाजी का कवच मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला तथा साक्षात् चारों पदार्थों को देने वाला है। तुम इसे सुनो—यमुनाजी के चार भुजाएँ हैं। वे श्यामा (श्यामवर्णा एवं षोडश वर्ष की अवस्था युक्त) हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उनके नेत्र प्रफुल्ल कमलदल के समान सुन्दर एवं विशाल हैं। वे परम सुन्दरी हैं और दिव्य रथ पर बैठी हुई हैं। इस प्रकार उनका ध्यान करके कवच धारण करे।

स्नान करके पूर्वाभिमुख हो मौन भाव से कुशासन पर बैठे, और कुशों द्वारा शिखा बाँधकर संध्या वन्दन करके अनन्तर ब्राह्मण (अथवा द्विज मात्र) स्वस्तिकासन से स्थित हो कवच का पाठ करे। 'यमुनाजी' मेरे मस्तक की रक्षा करें और 'कृष्णा' सदा दोनों नेत्रों की। 'श्यामा' भ्रूभंग-देश की और 'नाक-वासिनी' नासिका की रक्षा करें। 'साक्षात् परमानन्दरूपिणी' मेरे दोनों कपोलों की रक्षा करें। 'श्रीकृष्णावामांससम्भूता' (श्रीकृष्ण के बायें कंधे से प्रकट हुई वे देवी) मेरे दोनों कानों का संरक्षण करें। 'कालिन्दी' अधरों की और सूर्यकन्या' चिबुक (ठोढ़ी) की रक्षा करें। 'यमस्वसा' (यमराज की बहिन) मेरी ग्रीवा की और 'महानदी' मेरे हृदय की रक्षा करें। 'कृष्णप्रिया' पृष्ठभाग का और 'तटिनी' मेरी दोनों भुजाओं का रक्षण करें। 'सुश्रोणी' श्रोणीतट (नितम्ब) की और 'चारुदर्शना' मेरे कटिप्रदेश की रक्षा करें। 'रम्भोरू' दोनों उरुओं (जांघों) की और 'अङ्घ्रिभेदिनी' मेरे दोनों घुटनों की रक्षा करें। 'रासेश्वरी' गुल्फों (घुट्ठियों) का और 'पापहारिणी' पादयुगल का त्राण करें। 'परिपूर्णतमप्रिया' भीतर-बाहर, नीचे-ऊपर तथा दिशाओं और विदिशाओं में सब ओर से मेरी रक्षा करें।

यह श्री यमुनाजी का परम अद्भुत कवच है। जो भक्ति-भाव से दस बार इसका पाठ करता है, वह निर्धन भी धनवान् हो जाता है। जो बुद्धिमान् मनुष्य ब्रह्मचर्य के पालनपूर्वक परिमित आहार का सेवन करते हुए तीन मास तक इसका पाठ करेगा, वह सम्पूर्ण राज्यों का आधिपत्य प्राप्त कर लेगा, इसमें संशय नहीं है। जो तीन महीने की अवधि तक प्रतिदिन भक्तिभाव से शुद्ध चित्त हो इसका एक सौ दस बार पाठ करेगा, उसको क्या-क्या नहीं मिल जायगा ? जो प्रातःकाल उठकर इसका पाठ करेगा, उसे सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान का फल मिल जायगा तथा अन्त में वह योगिदुर्लभ परमधाम गोलोक में चला जायगा।

(गर्ग संहि० माधु० अध्या० १६ के आधार से)

श्री यमुना माता को नमस्कार है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् गणेश परब्रह्म गोलोकनाथ श्रीकृष्ण के अवतार

सोपान १५

एकदन्तं महाकायं तप्तकाञ्चनसंनिभम् ।
लम्बोदरं विशालाक्षं वन्देऽहं गणनायकम् ।।

(पद्मपुराण, सृष्टि ६६।२)

'विशालकाय, तपाये हुए स्वर्ण के समान प्रकाश वाले लम्बोदर, बड़े-बड़े नेत्रों वाले श्रीएकदन्त गणनायक की मैं वन्दना करता हूँ ।'

वैराग्यज्ञाननिरता शैलपुत्री पार्वती के साथ सर्वसाक्षी भगवान् शिव का मङ्गलमय परिणय होने के पश्चात् चराचरात्मा शिव उनको अपने साथ लेकर निर्जन वन में चले गये । वहाँ दीर्घकाल तक देवाधिदेव महादेव का विहार चलता रहा । एक दिन शिव प्रिया पार्वती ने भगवान् शंकर से निवेदन किया—

'प्रभो ! मैं एक श्रेष्ठ पुत्र चाहती हूँ ।'

सर्वभूतपति त्रिपुरारि ने त्रैलोक्यसुन्दरी पार्वती से प्रसन्न होकर कहा—'प्रिय ! मैं तुम्हें सम्पूर्ण व्रतों में एक श्रेष्ठ व्रत बतलाता हूँ, जो सम्पूर्ण अभीष्ट सिद्धि का बीजरूप, परम-मङ्गलदायक तथा हर्ष प्रदान करने वाला है । उस परम शुभद व्रत का नाम 'पुण्यक' है । तुम श्रीहरि का स्मरण कर यह प्रारम्भ करो । इस अनुष्ठान की पूर्ति एक वर्ष में होती है ।'

'यह परम पुण्यमय व्रत राजेन्द्र-पत्नियों और देवियों के लिये सुखसाध्य एवं महाआनन्द प्रदान करने वाला है । साध्वी स्त्रियों के लिये तो यह व्रत प्राणाधिक प्रिय है ।'

शिवप्राणवल्लभा पार्वती ने कहा—'प्रभो ! इस पुण्यक-व्रत की क्या विधि है । यह कब आरम्भ किया जाता है और कब इस अनुष्ठान की पूर्ति की जाती है ।'

जगद्गुरु कर्पूरगौर भगवान् ने कहा—'प्रिय ! पार्वती ! सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने वाला समस्त सत्कीर्ति प्रदान करने वाले तथा परमशुभद इस पुण्यक व्रत की विधि संक्षेप में बतलाता हूँ । आप ध्यान से सुनिये—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुण्यक-व्रत की संक्षिप्त विधि

'इस व्रत का आरम्भ माघ-मास के शुक्लपक्ष-की त्रयोदशी के दिन किया जाता है। उत्तम व्रत करने वाले को व्रतारम्भ के पहले दिन उपवास करना चाहिये और दूसरे दिन ब्राह्ममुहूर्त्त में शय्या त्यागकर शौचादि से निवृत्त हो वह निर्मल जल में स्नान करे। फिर आचमनादि के अनन्तर सर्वव्यापी श्रीहरि को अर्घ्य प्रदान कर शीघ्र ही घर लौट आये। घर पर नित्यकर्म पूर्ण कर लेने के पश्चात् सुयोग्य पुरोहित का वरण कर स्वस्तिवाचन पूर्वक कलश – स्थापन करे। फिर संकल्प के द्वारा यह महान् व्रतानुष्ठान आरम्भ करे।'

फिर सौन्दर्य, नेत्रदीप्ति, विविध अङ्गों के सौन्दर्य, पति सौभाग्य आदि के लिये विभिन्न वस्तुओं के संख्या सहित समर्पण करने का उपदेश करते हुए दयामय भगवान् शिव ने कहा—'सुव्रते ! पुत्र प्राप्ति के लिये कूष्माण्ड, नारियल, जम्बीर तथा श्रीफल—इन फलों को श्रीहरि की सेवा में समर्पित करना चाहिये। व्रत-काल में नानाप्रकार के संगीत और वाद्य से परम प्रभु को प्रसन्न करने का प्रयत्न करना उचित है। हरिभक्ति की विशेष उपलब्धि के लिये सुगन्धित पुष्पों की (विना टूटी हुई) एक लक्ष माला भक्तिपूर्वक प्रभु को चढ़नी चाहिये। उनकी तुष्टि के लिये विविध प्रकार के मधुर एवं स्वादिष्ट व्यञ्जनों का भोग लगाना आवश्यक है। तुलसीदल मिश्रित अनेक प्रकार के सद्गन्धपूरित पुष्प समर्पित करने से श्रीहरि की अत्यधिक प्रसन्नता प्राप्त होती है। जन्मजन्मान्तर में धन-धान्य की वृद्धि के लिये व्रतकाल में व्रती को प्रतिदिन एक सहस्र ब्राह्मणों को तृप्तिकर भोजन कराना चाहिये।

भगवान् शिव ने आगे बतलाया—'सत्यस्वरूपा उमे ! प्रतिदिन पूजा के समय सुगन्धित सुमनों से भरी एक सौ अञ्जलियाँ समर्पित कर निखिलपावन प्रभु के चरणों में एक सौ बार प्रणाम करना उचित है। व्रतकाल में छः महीने तक हविष्यान्न (अगहनीधान, मूंग, तिल, जौ, मटर, तिन्नी, सांठी, दूध, दही, घी, शक्कर, घृतपक्व, लवङ्ग, जीरा, पीपल, सेन्धानमक, समुद्रीनमक, वथूवा, मूली, आम, इमली, कटहल, नारंगी, केला हर्रे और आँवला आदि हविष्यान्न के अन्तर्गत आते हैं), पाँच मास तक फलाहार और एक पक्ष तक हवि का आहार करे तथा एक पक्ष तक केवल जल पर रहना चाहिये। रात्रि में कुशासन पर नित्य जागरण करना श्रेष्ठ है। व्रती को अष्टविध मैथुन (स्मरण, कीर्तन, केलि, प्रेक्षण, गुह्यभाषण, संकल्प, अध्यवसाय तथा क्रियानिष्पत्ति ये अष्ठविध मैथुन हैं) का सर्वथा त्याग नितान्त आवश्यक है।'

इस विधि से व्रत सम्पन्न होने पर व्रतोद्यापन करना चाहिये। उस समय मनोहर वस्त्रों से आच्छादित उत्तम उपहारों से सज्जित तीन सौ साठ डलियाँ,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भोजन के पदार्थ और यज्ञोपवीत का दान करना चाहिये। एक हजार तीन सौ साठ घृताहुतियाँ देनी चाहिये। व्रत समाप्त होने पर दक्षिणा में एक हजार तीन सौ साठ स्वर्ण मुद्राएँ देने का विधान है। इसके अतिरिक्त व्रत समाप्ति के दिन दूसरी दक्षिणा देनी चाहिये।

'इस व्रत के फल स्वरूप श्रीहरि के चरणों में सुदृढ़ भक्ति हो जाती है और भुवन-विख्यात पुत्र, सौन्दर्य, पति-सौभाग्य, ऐश्वर्य एवं अपरिमित धन की प्राप्ति होती है। यह महान् व्रत प्रत्येक जन्म में वाञ्छित सिद्धियों का बीज है।'

इस प्रकार पुण्यकव्रत की विधि और उसका माहात्म्य सुनाने के अनन्तर परम करुणामय चन्द्रशेखर ने अपनी परमसती सहधर्मिणी पार्वती से कहा 'प्रिय! इस व्रत के लिये मैं पुष्प और फल लाने के लिये सौ शुद्ध ब्राह्मणों को, सामग्री एकत्र करने के लिये एक सौ भृत्यों को एवं अत्यधिक दास-दासियों को नियुक्त कर देता हूँ। साथ ही समस्त व्रतविधियों को जानने वाले, वेद-वेदाङ्ग के पारंगत महाविद्वान् सर्वश्रेष्ठ हरिभक्त, सर्वज्ञ एवं परमज्ञानी सनत्कुमार को पुरोहित के पद पर नियत करता हूँ। तुम इस व्रत का श्रद्धा-भक्ति पूर्वक पालन करो। तुम्हें निश्चय ही परम दुर्लभ पुत्र-रत्न की प्राप्ति होगी।'

पार्वती द्वारा पुण्यक-व्रत अनुष्ठान

हिमगिरिनन्दिनी उमा ने अपने पतिदेव के आज्ञानुसार प्रसन्नतापूर्वक महान् पुण्यक-व्रत के अनुष्ठान का सुदृढ़ निश्चय कर पुष्प और फल आदि व्रतोपयोगी उपकरणों को एकत्र करने के लिये ब्राह्मणों तथा भृत्यों को प्रेरित किया। सभी वस्तुओं के एकत्र हो जाने पर वेद विद्या प्रकाशिनी भगवती पार्वती ने शुभ-मुहूर्त्त में व्रतारम्भ किया।

उस समय परम तेजस्वी ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार वहाँ पहुँच गये। सपत्नीक ब्रह्मा भी वहाँ आये। भगवान् महेश्वर भी उपस्थित हुए। विविधरत्नाभरणों से सुशोभित, वनमालाधारी, चतुर्भुज, नवनीरदवपु, क्षीराब्धिशायी विष्णु भी अपनी प्रियतमा लक्ष्मी एवं अपने पार्षदों सहित अत्यधिक सामग्रियाँ लेकर रत्नजटित विमान पर आरूढ़ हो वहाँ पधारे। इसके पश्चात् सनक, सनन्दन, कपिल, धर्मपुत्र नर-नारायण एवं सभी प्रख्यात ऋषिगण अपने शिष्यों सहित परास्वा के अनुष्ठान के अवसर पर उपस्थित हुए। शम्भुवामा उमा के उस व्रत के अवसर पर दिक्पाल, देवता, यक्ष, किंनर और गणों सहित समस्त गिरि-समुदाय भी एकत्र हुआ। पर्वतराज हिमालय भी अपनी पुत्री के व्रत में रत्नाभरणों से अलंकृत हो. पत्नी, पुत्रगण और अनुयायियों सहित नानाप्रकार के द्रव्यों से संयुक्त बहुत बड़ी सामग्री और व्रतोपयोगी मणि-माणिक्य-रत्न लेकर हर्षातिरेक से सम्मिलित हुए। उनके साथ पृथ्वी में

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उत्पन्न दुर्लभ वस्तुएँ थीं। एक लक्ष गज-रत्न, तीन लक्ष अश्वरत्न, दस लक्ष गो-रत्न, एक करोड़ स्वर्णमुद्राएँ, चार लक्ष मुक्ता, एक सहस्र कौस्तुभमणि और अत्यन्त स्वादिष्ट एवं सुमिष्ट पदार्थों के एक लक्ष भार थे।

श्रद्धामूर्ति हिमगिरितनया के उक्त पावनतम महान् व्रत में ब्राह्मण, मनु, नाग एवं विद्याधरों के समुदाय तथा संन्यासी, भिक्षुक एवं वन्दीगण भी पहुँचे।

उस समय कैलास पर्वत की अपूर्व शोभा थी। राजमार्ग पर चन्दन का छिड़काव हुआ था। पद्मरागमणि-निर्मित शिव-मन्दिर में आम्रपल्लवों की वंदनवारें बंधी थीं। कदली स्तम्भों का सौन्दर्य अद्भुत था। वह दूर्वा, धान्य, खील, फल और पुष्पों से अनोखे ढंग से सजा था। वहाँ का अलौकिक दृश्य देखकर उपस्थित देव, ऋषि, यक्ष, किंनर, गन्धर्व एवं मनुष्य आदि सभी लोग आश्चर्यचकित हो मन-ही-मन प्रसन्न हो रहे थे। सर्वत्र हर्ष व्याप्त था। सर्वत्र सात्विक आनन्द जैसे नृत्य कर रहा था। परमकरुणामयी सृष्टिस्थिति-संहारकारिणी जगदम्बा जो पावन-तम व्रत में दीक्षित होने जा रही थी।

भगवान् शशाङ्कशेखर ने समस्त अभ्यागतों का सादर अभिनन्दन करते हुए उनके अनुरूप स्वच्छ, सुन्दर एवं सुखदायक निवास तथा भोजन आदि की व्यवस्था की। जहाँ त्रैलोक्यपति शिव एवं सर्वदारिद्र्यदमनी जगज्जननी का निवास हो वहाँ कमी किसकी? करुणामूर्ति जगदीश्वरी के उक्त व्रतानुष्ठान के अवसर पर शचीपति इन्द्र दानाध्यक्ष, धनपति कुबेर कोषाध्यक्ष और स्वयं भगवान् सूर्य आदेश प्रदान करने वाले थे। वरुण परोसने का कार्य कर रहे थे।

संसार सागर से पार उतारने वाली सती शिरोमणि शिव-प्रिया के व्रता-नुष्ठान के अवसर पर दूध, दही, घी, तेल, मधु, गुड़, चीनी आदि की लक्षाधिक सरिताएँ प्रवाहित हो रही थीं। इसी प्रकार गेहूँ, चावल, जौ, चिउड़े आदि के पर्वत-तुल्य असंख्य ढेर लग गये थे। उक्त दिव्य कैलास पर्वत पर स्वर्ण, रजत, मूँगा और मणियों की राशि पर्वत के समान दिखाई दे रही थी।

निखिलसृष्टिनियामिका गिरिजा के श्रेष्ठतम व्रतोत्सव पर सिन्धुतनया लक्ष्मी ने विविध प्रकार से सुन्दर, सुमिष्ट एवं सुस्वादु उत्तम गन्धयुक्त व्यञ्जन तैयार किये थे। उस समय एक लाख ब्राह्मण परोसने का काम रहे थे। देवताओं और ऋषियों के साथ स्वयं भगवान् नारायण ने वहाँ भोजन किया।

भोजनोपरान्त जब भगवान् नारायण रत्न सिंहासन पर विराजमान हुए, तब चतुर ब्राह्मणों ने सुगन्धित ताम्बूल अर्पित किया। परम प्रभु नारायण देवता और ऋषियों से घिरे हुए थे। तेजस्वी पार्षद उन पर श्वेत चँवर डुला रहे थे। ऋषि तथा सिद्ध प्रभु का स्तवन कर रहे थे। गन्धर्वगण श्रुति मधुर गीत गा रहे थे।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पितामह की प्रेरणा से अहिभूषण भगवान् शंकर ने बद्धाञ्जलि हो अत्यन्त विनयपूर्वक प्रभु की स्तुति करते हुए निवेदन किया—'भक्तवाञ्छाकल्पतरु प्रभो ! मेरी एक प्रार्थना सुनिये। शैलजा उत्तम व्रत के द्वारा श्रेष्ठतम पुत्र एवं पति-सौभाग्य की कामना करती हैं। आप सर्वज्ञ एवं सर्वान्तर्यामी हैं। आप परिणाम में मङ्गलदायिनी आज्ञा प्रदान करें।'

पशुपति ने पुनः क्षीरसागरशायी प्रभु की स्तुति की और विधाता के मुख की ओर देखकर मौन हो गये।

स्वर्गापवर्गदाता सर्वभूतपति शिवजी के वचन सुनकर श्रीहरि ठठाकर हँस पड़े। फिर उन्होंने महादेवजी से कहा—'उमानाथ ! आपकी सहधर्मिणी सन्तान-प्राप्ति के लिये जिस पुण्यक-व्रत का अनुष्ठान करना चाहती हैं, यह व्रतों का सार-तत्त्व, दुराराध्य, सम्पूर्ण अभीष्ट फलों का देने वाला, सुखदायक एवं मोक्षप्रद है।, फिर कहा—'साध्वी शिवा पुण्यक-व्रतका अनुष्ठान करें। इस व्रताचरण से सहस्रों राजसूय यज्ञों का पुण्य प्राप्त होता है।

श्रीनारायण ने आगे पुनः कहा—'त्रिनेत्र !' इस व्रत में सहस्रों राजसूय यज्ञों के समान धन का व्यय होता है। अतः यह व्रत सभी साध्वी महिलाओं द्वारा साध्य नहीं है। इस पुण्यमय व्रत के प्रभाव से स्वयं परब्रह्म गोलोकनाथ श्रीकृष्ण पार्वती के अङ्क (गोद) में क्रीड़ा करेंगे। उनका नाम गणेश होगा, उनके स्मरण से ही विघ्नों का नाश हो जाया करेगा।'

श्रीनारायण के वचन सुनकर त्रैलोक्य पावन त्रिलोचन हर्ष से गद्‌गद् हो गये। उन्होंने वह माङ्गलिक वार्तालाप अपनी प्राणप्रिया पार्वती को सुनाया तो उनकी प्रसन्नता की सीमा न रही। मुदितमन पार्वती व्रतारम्भ के लिये प्रस्तुत हुईं, उसी समय भगवान् शंकर की प्रेरणा से विविध प्रकार के देववाद्य बज उठे।

सत्यस्वरूपा उमा ने स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करने के अनन्तर चावलों पर सविधि रत्नकलश स्थापित किया। फिर रत्नसिंहासनासीन पुरोहित की विधि-पूर्वक पूजा की। इसके साथ ही त्रैलोक्यतारिणी गिरिजा ने अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिपूर्व ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर की अर्चा की।

इस प्रकार भगवती शैलजा ने स्वस्तिवाचनपूर्वक व्रतारम्भ किया। तदनन्तर उन्होंने मङ्गल-कलश पर श्रीकृष्ण का आवाहन कर उनका भक्तिपूर्वक षोडशोपचार से पूजन किया। व्रत के विधानानुसार देवी उमा ने त्रैलोक्य दुर्लभ पदार्थों को अत्यन्त प्रीतिपूर्वक समर्पित किया। फिर उन्होंने तिल और घी की लाख आहुतियों से हवन कराया और देवताओं, अतिथियों एवं ब्राह्मणों को बहुमूल्य व्यञ्जनों के भोजन से तृप्त किया। इस प्रकार परम सरला साध्वी शिव-प्रिया पुण्यक व्रत के

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पालनीय प्रत्येक नियमों का वर्षपर्यन्त श्रद्धा एवं विश्वास के साथ सोल्लास पालन करती रहीं।

अस्वाभाविक दक्षिणा

पुरोहित ने देवी पार्वती से कहा—व्रत-समाप्ति पर सुव्रते! मुझे दक्षिणा चाहिये।'

परम तपस्विनी अम्बिका ने पुरोहित से कहा—'आप कौन-सा दुर्लभ पदार्थ चाहते हैं? मैं आपको मुँह माँगी दक्षिणा दूँगी।'

पुरोहित ने अस्वाभाविक दक्षिणा की याचना की। 'देवी! इस व्रत में दक्षिणा-स्वरूप मुझे अपने पति को दे दो।'

सर्वथा अकल्पित, अनभ्र वज्रपात जैसी निष्ठुर वाणी सुनकर देवी उमा व्याकुल होकर विलाप करती हुई वहीं मूर्च्छित हो गयीं।

निखिल सृष्टि नियामिका मोहनाशिनी भगवती पराम्बा को मूर्च्छित देखकर लोकपितामह, विष्णु एवं मुनियों को हँसी आगयी। तब उन्होंने उमापति महादेव को पार्वती को समझाने के लिये भेजा।

'धर्मिष्ठे! उठो, निश्चय ही तुम्हारा मङ्गल होगा।' पार्वती को होश में लाने के लिये उन्हें समझाते हुए आशुतोष ने अनेक धर्ममय वचन कहे। उनकी चेतना लौट आने पर देवदेव महादेव ने कहा—'देवकार्य, पितृकार्य अथवा नित्य-नैमित्तिक जो भी कर्म दक्षिणा से रहित होता है, वह सब निष्फल हो जाता है और उस कर्म से दाता निश्चय ही कालसूत्र नामक नरक में गिरता है। उसके बाद वह दीन होकर शत्रुओं से पीड़ित होता है। ब्राह्मण को संकल्प की हुई दक्षिणा उसी समय न देने से वह बढ़कर कई गुनी हो जाती है।'

क्षीरोदधिशायी विष्णु और कमलासन ने भी पार्वती से धर्म-रक्षा के लिये अनुरोध किया। स्वयं धर्म ने कहा—'साध्वि! मेरे स्वरक्षित रहने पर प्रत्येक रीति से मङ्गल होगा।' देवताओं ने भी यही बात कही। मुनियों ने भी हवन पूर्ण करके दक्षिणा देने की प्रेरणा देते हुए कहा—'धर्मज्ञे! हम लोगों के यहाँ रहते हुए आपका अकल्याण सम्भव नहीं।'

ब्रह्मा के पुत्र तेजस्वी सनत्कुमार ने देवी पार्वती से सुस्पष्ट कहा—'शिवे! या तो तुम मुझे दक्षिणा में अपने सर्वेश्वर पति को प्रदान करो या अपने दीर्घकालीन कठोर तप का फल भी त्याग दो। साध्वि! इस प्रकार महान् कर्म की दक्षिणा न मिलने पर मैं इस दुर्लभ कठोर व्रत का फल ही नहीं, यजमान के (तुम्हारे) समस्त कर्मों का फल भी प्राप्त कर लूँगा।'

CC-0. Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सत्यस्वरूपा परम सती पार्वती ने अत्यन्त व्याकुल होकर देवताओं से कहा—देवाधिपो ! पति से वञ्चित हो जाने वाले कर्म से क्या लाभ ? दक्षिणा देने, धर्म और पुत्र की प्राप्ति से मेरा क्या हित होगा ? पृथ्वी देवी की उपेक्षा कर वृक्ष की पूजा से क्या प्राप्त हो सकेगा ? यदि बहुमूल्य प्राण ही विसर्जित हो जायँ तो शरीर की रक्षा किस लिये होगी ?'

अत्यधिक दुःख से शिवप्रिया ने कहा—'देवेश्वरो ! साध्वी स्त्रियों के लिये पति सौ पुत्रों के समान होता है। ऐसी स्थिति में यदि व्रत में अपने पति की ही दक्षिणा दे दी जाय तो पुत्र से क्या लाभ होगा ? पुत्र पति का वंश होता है, किन्तु उसका एक मात्र मूल तो पति ही होता है। मूलधन के नष्ट होने पर तो समस्त व्यापार ही विनष्ट हो जायगा।'

उसी समय अन्तरिक्ष में देवताओं और ऋषियों ने एक बहुमूल्य रत्ननिर्मित रथ देखा। वह घननील पार्षदों से घिरा हुआ था। सभी पार्षद वनमालाधारी और रत्नाभरणों से विभूषित थे। उस रथ से चतुर्भुज वैकुण्ठवासी श्रीनारायण उतरकर देवताओं के सम्मुख उपस्थित हुए। उन परम तेजस्वी, भक्त, प्राणधन, शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी श्रीनारायण की ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवताओं ने एक श्रेष्ठ रत्नजटित सिंहासन पर बैठाकर उनके पाप-तापहारी अभयद चरण कमलों में श्रद्धा-भक्ति पूर्वक प्रणाम किया और हाथ जोड़कर गद्गद् कण्ठ से उनकी स्तुति की।

वहाँ का समस्त वृत्तान्त जानकरभक्त भयहारी श्रीनारायण ने अपने स्वरूप-तत्त्व की विस्तृत व्याख्या करते हुए देवगणों और मुनियों से कहा—'शिवप्रिया पार्वती का यह व्रत लोकशिक्षा के लिये हैं, अपने लिये कदापि नहीं, क्योंकि ये तो स्वयं समस्त व्रतों एवं तपस्याओं का फल प्रदान करने वाली हैं, इनकी माया से चराचर जगत् मोहित है।'

फिर परमप्रभु श्रीनारायण ने त्रैलोक्यवन्दिता उमा से कहा—शिवे ! तुम अपने पति महादेव को दक्षिणा में देकर अपना व्रत पूर्ण करलो। फिर समुचित मूल्य देकर अपने जीवन धन को वापस ले लेना। गौओं की भाँति शिव भी विष्णु के शरीर हैं, अतः तुम ब्राह्मणों को गोमूल्य प्रदान कर अपने पति को लौटा लेना।'

इतना कहकर महामहिम त्रैलोक्यपावन श्रीनारायण वहीं अन्तर्धात हो गये। सृष्टिनायक श्रीनारायण के मुखारविन्द से ये मङ्गलमय वचन सुनकर समस्त सुर-मुनि-समुदाय हर्षोत्फुल्ल हो गया। कलिकल्मषहन्त्री शिवा भी प्रसन्नमन से अपने प्राण-सर्वस्व को दक्षिणा में देने के लिये प्रस्तुत हो गयीं।

भगवती पार्वती ने हवन की पूर्णाहुति की और अपने जीवननाथ शिव को दक्षिणा के रूप में दे दिया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'स्वस्ति !' कहते हुए सनत्कुमार ने दक्षिणा ग्रहण करली। उस समय भयवश परम कोमलाङ्गी पार्वती के कण्ठोष्ठ-तालु सूख गये।

अम्बिका ने दुःखी हृदय से ब्राह्मण से अत्यन्त मधुर एवं विनीत वाणी में निवेदन किया—'विप्रवर ! गौ का मूल्य मेरे पति के बराबर है। मैं आपको अत्यन्त सुन्दर एक लाख गायें प्रदान करूँगी, इसके बदले आप मेरे जीवन सर्वस्व को लौटा दें। अभी तो मैं आत्मा से रहित किसी भी कर्म में सर्वथा असमर्थ हूँ. प्राणनाथ के मिल जाने पर मैं पुनः ब्राह्मणों को विपुल दक्षिणाएँ प्रदान करूँगी।

सनत्कुमार (पुरोहित) ने सती शिरोमणि पार्वती से कहा—'देवी ! मैं ब्राह्मण हूँ। मुझे एक लाख गौओं का क्या करना है ? और इस दुर्लभ रत्न के सम्मुख गौओं से क्या लाभ होगा ? मैं इन दिगम्बर (नंग-धड़ंग, को अपने साथ लेकर इन्हें आगे रखकर डमरू बजवाते हुए त्रिलोकी में भ्रमण करूँगा। उस समय बालक-बालिकाएँ इनको देखकर प्रसन्नतापूवक आनन्दित होंगे ताली बजा-बजा कर अट्टहास करेंगे। उस समय मुझे मनोवाञ्छित सब ही पदार्थ प्राप्त हो जायँगे।

इतना कहकर सनत्कुमार (पुरोहित) ने उमानाथ को बाजीगर के जमूरे की भाँति बुलाकर अपने पास बैठा लिया। और कहा—मेरे कहने के अनुसार अब आपको रहना और करना पड़ेगा।

पार्वती की व्याकुलता और विश्वमोहन के दर्शन

'आह !' सुकोमलहृदया गिरिजा जलहीन मीन की भाँति छटपटाने लगीं। मन-ही-मन वे सोचने लगीं—'कैसा दुर्भाग्य है कि मुझे न तो अभीष्ट देव का दर्शन प्राप्त हुआ न व्रत का फल ही प्राप्त हो सका।' अधीर होकर परम सती हिमगिरि-तनया शरीर – त्याग के लिये प्रस्तुत हो गयीं।

उसी समय पार्वती सहित देवताओं और ऋषियों ने शून्य (आकाश) में कोटि-कोटि सूर्यों के प्रकाश से भी परमोत्कृष्ट तेज समूह देखा। उस प्रभा-पुञ्ज से समस्त दिशाएँ एवं विस्तृत कैलास देदीप्यमान हो गया। उसकी मण्डलाकृति असीम एवं अनन्त थी। प्रभु के उस महान् तेजः पुञ्ज को देखकर देवगण उनकी स्तुति करने लगे—

'अनिर्वचनीय महाविराट् प्रभो ! आपका यथार्थ स्तवन सम्भव नहीं।' उन महामहिमामय परम प्रभु की विभिन्न प्रकार से स्तुति करते हुए विष्णु, ब्रह्मा, महादेव, धर्म, देव-समुदाय, मुनिगण, सरस्वती, सावित्री, लक्ष्मी और हिमगिरि ने कहा—'आप अकथनीय, स्वेच्छामय और ज्ञान से परे हैं, फिर वेदों के कारण स्वरूप आपकी स्तुति कैसे की जाय ? आप मन और वाणी के अगोचर हैं। हम लोग तो आपके कलांश हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवता और ऋषिगण चुप हो गये। उस समय कैलासगिरिनिवासिनी पार्वती का तेजोमय शरीर प्रज्वलित अग्नि की ज्वाला की तरह प्रकाशित हो रहा था। तेज की मूर्ति-सी प्रतीत होने वाली उमा के सुन्दरतम पावन अङ्ग पर परमोज्ज्वल वस्त्र सुशोभित था और सिर पर जटा का भार उनके कठोर तप की सूचना दे रहा था।

'सर्वसमर्थ, सर्वान्तर्यामी एवं अणु-परमाणु में व्याप्त महिमामय श्रीकृष्ण! आप तो मुझे जानते हैं, किन्तु मैं आपको जानने में समर्थ नहीं हूँ।' जगन्माता पार्वती ने भगवान् शिव की प्रेरणा से व्रत के आराध्यदेव परमात्मा के स्वरूप का गुणगान करते हुए कहा—

'परमात्मन्! में पुत्र-दुःख से दुःखी होकर आपकी स्तुति कर रही हूँ और इस समय आपके सदृश पुत्र प्राप्त करना चाहती हूँ, परन्तु अङ्गों सहित वेद के विधानानुसार इस व्रत में अपने पति की दक्षिणा दी जाती है, वह अत्यन्त दारुण कार्य है। दयामय! यह सब समझकर आप मुझ पर दया कीजिये।'

भगवती पार्वती श्रीकृष्ण के ध्यान में तल्लीन थीं, उस समय उस असीम एवं महान् तेजराशि के मध्य उन्होंने अद्भुत रूप-लावण्य-सम्पन्न विश्वमोहन श्रीकृष्ण-स्वरूप का दर्शन किया। वह हीरकजटित बहुमूल्य रत्न निर्मित आसन पर आसीन एवं मणियों की माला से सुशोभित था। नवनीरदवपु पर अद्भुत पीताम्बर की अवर्णनीय शोभा थी। रत्नाभरणों से अलंकृत उस अनुपम विग्रह के कर-कमलों में पीयूषवर्षिणी मुरली विद्यमान थी। उनके ललाट पर चन्दन की खोर और मस्तक पर मन को मोहित करने वाला सुन्दर मयूरपिच्छ था। उस अनुपम सौन्दर्य की तुलना कहीं सम्भव नहीं थी।

ऐसे भुवनमोहन अनूप रूप को देखकर भगवती पार्वती उसी के सदृश पुत्र की कामना करने लगी और उसी क्षण उन्हें वह वर प्राप्त हो गया। इतना ही नहीं, उस समय शिवा ने जो-जो कामनाएँ कीं, वे सब पूरी हुईं। देवताओं के भी अभीष्ट की पूर्ति हुई। तदनन्तर वह तेज वहीं तिरोहित हो गया।

तब सुर-समुदाय ने ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार को समझाया और उन्होंने दिगम्बर शिव को उनकी प्राणेश्वरी शिवा को लौटा दिया।

फिर तो भगवती पार्वती की प्रसन्नता की सीमा न रही। जगज्जननी ने ब्राह्मणों को बहुमूल्य रत्न प्रदान किये। वन्दियों एवं भिक्षुओं को स्वर्ण-राशि देकर ब्राह्मणों देवताओं एवं पर्वतीयों को परम सुस्वादु व्यञ्जनों का भोजन कराके अनेक प्रकार की भेंट दक्षिणा और उपहार प्रदान किये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महिमामयी भगवती ने अलौकिक उपहारों से अत्यन्त प्रीतिपूर्वक अपने प्राणनाथ देवदेव महादेव की पूजा की। देववाद्य बजने लगे। अनेक माङ्गलिक गीतों द्वारा वह शुभस्थान ध्वनित हो उठा। सर्वत्र आनन्द और उल्लास का साम्राज्य व्याप्त हो गया।

इस प्रकार सनातनी उमा का पवित्रतम पुण्यक-व्रत सम्पन्न हुआ। पराम्बा ने विपुल रत्नराशि का दान कर सबको उत्तम भोजन कराया। तदनन्तर उन्होंने अपने जीवनधन धर्माध्यक्ष शिव के साथ स्वयं भी भोजन किया। फिर सबको कर्पूरादि से सुवासित ताम्बूल देकर उन्होंने भगवान् शिव के साथ स्वयं भी उसे ग्रहण किया। इसके अनन्तर जगदम्बा प्रसन्नतापूर्वक अपने प्राणधन पतिदेव महेश्वर के साथ एकान्त में चली गयीं।

परब्रह्म का प्राकट्य

उसी समय एक दीन-हीन एवं कुत्सित ब्राह्मण सर्वसम्पत्समन्विता पार्वती के द्वार पर आया। उसके वस्त्र मैले कुचैले और सिर के बाल रूखे थे। उस कृशकाय कुत्सितमूर्ति ब्राह्मण के दाँत स्वच्छ थे और उसके ललाट पर उज्ज्वल तिलक लगा हुआ था। उसने डंडे के सहारे खड़े होकर क्षुधा-निवारणार्थ भोजन की याचना करते हुए कहा—'महादेव ! मैं क्षुधा और तृषाधिक्य से व्याकुल अत्यन्त दीन और दुर्बल ब्राह्मण भोजन की इच्छा से बड़ी दूर से चलकर आपकी शरण में आया हूँ।' 'शिव ! आप क्या कर रहे हैं ? जगन्माता पार्वती शीघ्र आओ। माता के रहते पुत्र भूखा कैसे रह सकता है ?'

भगवान् शंकर और पार्वती द्वार पर आये। अत्यधिक दुर्बल ब्राह्मण किसी प्रकार उनके चरणों में प्रणाम कर स्तुति करने लगा। उसके मधुरातिमधुर वचन सुनकर आशुतोष प्रसन्न हो गये।

भगवान् शंकर ने अशक्त वृद्ध ब्राह्मण से पूछा—'विप्रवर ! आप कहाँ से पधारे हैं ? कृपया बतलाइये आपका शुभ नाम क्या है ?'

धर्ममयी पार्वती ने भी बड़े प्रेम से कहा—'वेदज्ञ ब्राह्मण ! आपका आगमन कहाँ से हुआ है ? मेरा परम सौभाग्य है, जो आपने अतिथि के रूप में मेरे द्वार पर पधारने का कष्ट किया। अभीष्ट अतिथि की सेवा की अमित महिमा है।'

वृद्ध ब्राह्मण ने काँपते हुए कहा—'वेदविद्याप्रकाशिनी माता ! आप वेदोक्त विधि से मेरी पूजा कीजिये। उपवासव्रती, रोगग्रस्त एवं क्षुधार्त व्यक्ति स्वेच्छानुसार भोजन करना चाहता है। मैं तृषा-क्षुधा से व्याकुल हूँ।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

साक्षात् अन्नपूर्णा ने कहा—'द्विजसत्तम ! आप क्या भोजन करना चाहते है ? आपका त्रैलोक्य दुर्लभ अभीष्ट पदार्थ मैं आपकी सेवा में उपस्थित कर दूँगी। आप मुझे आज्ञा देकर कृतार्थ कीजिये।'

वृद्ध दुर्बल ब्राह्मण ने रुक-रुक कर धीरे-धीरे कहा—'माता ! मैं आप पुत्रहीना का अनाथ पुत्र हूँ। मैंने सुना है, आपने महान् पुण्यक-व्रत सम्पन्न किया है। उसके लिये दुर्लभ सामग्रियाँ एकत्र हुई होगी। उन अद्भुत पक्वानों एवं मिष्टान्नों से आप मेरी पूजा कीजिये। इसके अनन्तर सुवासित निर्मल तथा स्वादिष्ट जल और सुवासित श्रेष्ठ ताम्बूल प्रदान कीजिये। ये दुर्लभ पदार्थ इतना खिलाइये, जिससे मेरी तोंद सुन्दर हो जाय, मैं लम्बोदर हो जाऊँ।'

'आपके आशुतोष पति सृष्टिकर्ता एवं सम्पूर्ण सम्पत्तियों को प्रदान करने वाले हैं और आप सम्पूर्ण सम्पत्तियों को प्रदान करने वाली महालक्ष्मी स्वरूपा हैं। अतः आप मुझे रमणीय रत्नसिंहासन, बहुमूल्य रत्नाभरण, अग्निशुद्ध सुन्दर वस्त्र, अत्यन्त दुर्लभ श्रीहरिमन्त्र, श्रीहरि में सुदृढ़ भक्ति, मृत्युंजय नामक ज्ञान, सुखदायिनी दानशक्ति और सर्वसिद्धि दीजिये।'

वृद्ध ब्राह्मण धीरे-धीरे कहते जा रहे थे—'सतीमाता ! पुत्र के लिये आपको क्या अदेय है ? मैं तप एवं उत्तम धर्म का पालन करते हुए समस्त कर्मों का पालन करूँगा, किन्तु जन्म-जरा-व्याधि और मृत्यु के हेतुभूत कर्मों का स्पर्श भी नहीं करूँगा।'

इस प्रकार संसार की असारता एवं भगवद्भक्ति का माहात्म्य-गान करते हुए ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध, तेजस्वी कृशकाय ब्राह्मण ने अन्त में कहा—'समस्त कर्मों का फल प्रदान करने वाली माता ! आप नित्यस्वरूपा सनातनी देवी होकर भी लोक शिक्षा के लिये पूजा और तपश्चरण करती हैं। प्रत्येक कल्प में गोलोकवासी श्रीकृष्ण गणेश के रूप में आपके अङ्क (गोद) में प्रकट होकर क्रीडा करते हैं।'

इतना कहते-कहते अशक्त वृद्ध ब्राह्मण वहीं अन्तर्धान हो गये। वे परमेश्वर इस प्रकार अन्तर्हित होकर परम साध्वी, परम मङ्गलमयी एवं परम धन्या माता पार्वती की शय्या पर नवजात शिशु के रूप में लेटकर छत की ओर देखने लगे—

शुद्धचम्पकवर्णाभः कोटिचन्द्रसमप्रभः।
सुखदृश्य सर्वजनैश्चक्षूरश्मि विवर्द्धकः॥
अतीव सुन्दरतनुः कामदेवविमोहनः।
मुखं निरूपमं विभ्रज्छारदेन्दुविनिन्दकम्॥
सुन्दरे लोचने बिभ्रच्चारुपद्मविनिन्दके।
ओष्टाधारपुटं विभ्रत् पक्वबिम्ब विनिन्दकम्॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कपालं च कपोलं च परमं सुमनोहरम् ।
नासाग्रं रुचिरं बिभ्रत् खगेन्द्रचञ्चुनिन्दकम् ।।
त्रैलोक्येषु निरुपमं सर्वाङ्गं बिभ्रदुत्तमम् ।
शयान शयने रम्ये प्रेरयन् हस्तपादकम् ।।

(ब्रह्मवैवर्त्त. गणपति ख. ८।८५-८९)

'उस बालक के शरीर की आभा शुद्ध चम्पक समान थी। उसका प्रकाश करोड़ों चन्द्रमाओं की भाँति उद्दीप्त था। सब लोग उसकी ओर देख सकते थे। वह नेत्रों की ज्योति को बढ़ाने वाला था। उसका अत्यन्त सुन्दर शरीर कामदेव को विमोहित करने वाला था। उसका अनुपम मुख शारदीय पूर्णिमा के चन्द्र का उपहास कर रहा था। उसके सुन्दर नेत्र मनोहर कमल को तिरस्कृत करने वाले थे। ओष्ठ और अधर-पुट ऐसे लाल थे कि उसे देखकर पका हुआ बिम्बफल भी लज्जित हो जाता था। कपाल और कपोल परम मनोहर थे। रुचिर नासिका गरुड़ की चोंच को भी तिरस्कृत करने वाली थी। उसके सभी अङ्ग उत्तम थे। त्रिलोकी में कहीं उसकी उपमा नहीं थी। इस प्रकार वह रमणीय शय्या पर सोया हुआ शिशु हाथ-पैर उछाल रहा था।'

किन्तु अत्यन्त कृषकाय वृद्ध ब्राह्मण वेषधारी अतिथि के अकस्मात् अन्तर्हित हो जाने पर परमादर्श गृहिणी पार्वती व्याकुल हो गयीं। उन्होंने अपने प्राणपति शिवजी को उन्हें ढूँढने के लिये कहा और स्वयं दुःखी होकर कहने लगीं—'तृषा-क्षुधा से आकुल हे ब्रह्मन् ! आप कहाँ चले गये ? भूख से पीड़ित अतिथि के द्वार से चले जाने पर गृहस्थ का जीवन व्यर्थ चला जाता है।'

अतिथिदेव के अचानक अन्तर्हित हो जाने पर छटपटाती हुई अम्बिका ने आकाशवाणी सुनी—'जगज्जननी ! शान्त हो जाओ। और अपने मन्दिर में जाकर अपने पुत्र को देखो। पुण्यक-व्रत के फलस्वरूप परिपूर्णतम परात्पर श्रीकृष्ण ही तुम्हारे पुत्र के रूप में प्रकट हुए हैं।'

यत्तेजो योगिनः शश्वद् ध्यायन्ते सततं मुदा ।।
ध्यायन्ते वैष्णवा देवा ब्रह्मविष्णुशिवादयः ।
यस्य पूज्यस्य सर्वाग्रे कल्पे कल्पे च पूजनम् ।।
यस्य स्मरणमात्रेण सर्वविघ्नो विनश्यति ।
पुण्यराशिस्वरूपं च स्वसुतं पश्य मन्दिरे ।।
कल्पे कल्पे ध्यायसे यं ज्योतिरूपं सनातनम् ।
पश्य त्वं मुक्तिदं पुत्रं भक्तानुग्रहविग्रहम् ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तव वाञ्छापूर्णबीजं तपः कल्पतरोः फलम् ।
सुन्दरं स्वसुतं पश्य कोटिकन्दर्पनिन्दकम् ।।

(ब्रह्मवैवर्त्त. गणपति ख. ९।९-१३)

'योगी लोग जिस अविनाशी तेज का प्रसन्न मन से निरन्तर ध्यान करते हैं, वैष्णवगण तथा ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवता जिसके ध्यान में लीन रहते हैं, प्रत्येक कल्प में जिस पूजनीय की सर्वप्रथम पूजा होती है, जिसके स्मरण मात्र से समस्त विघ्न नष्ट हो जाते हैं, तथा जो पुण्यराशि स्वरूप है, मन्दिर में विराजमान अपने उस पुत्र की ओर तो दृष्टि डालो। प्रत्येक कल्प में तुम जिस सनातन ज्योतिरूप का ध्यान करती हो, वही तुम्हारा पुत्र है। यह मुक्तिदाता तथा भक्तों के अनुग्रह का मूर्तरूप है। जरा उसकी ओर तो निहारो तुम्हारी कामनापूर्ति का बीज, तपरूपी कल्पवृक्ष का फल और सुन्दरता में करोड़ों कामदेवों को तिरस्कृत करने वाला है, अपने उस लावण्यमूर्ति पुत्र को देखो।'

आगे अम्बिका का भ्रम-निवारण करते हुए आकाशवाणी ने कहा—'वे क्षुधार्त्त अतिथि ब्राह्मण नहीं थे, उस वेष में आपके सम्मुख साक्षात् जनार्दन ही उपस्थित हुए थे।'

'आप प्रसन्नचित्त हो अपने देवाग्रगण्य सुन्तरतम पुत्र को देखो'—आकाश-वाणी के द्वारा इस प्रकार की प्रेरणा प्राप्त होते ही माता पार्वती शीघ्रता से अपने महल में पहुँचीं। वहाँ उन्होंने अत्यन्त अद्भुत्, परम सुन्दर, पद्मपत्राक्ष शिशु को अपनी शय्या पर लेटे देखा। वह त्रैलोक्य सुन्दर तेजस्वी छत की ओर निहार रहा था। उसके दिव्य अङ्गों से दिव्य तेज फैल रहा था। वह इधर-उधर अपने हाथ-पैर फेंक रहा था। परमपावनी माता का स्तनपान करने के लिए वह क्रन्दन कर रहा था।

हर्षोल्लासपूर्ण हृदय से पुत्रवत्सला भगवती उमा ने दौड़कर त्रैलोकैश्वर्यदायक भक्तवाञ्छा-कल्पतरू भगवान् शिव से कहा—'प्राणनाथ! आप घर चलकर मन्दिर (महल) के भीतर तो देखिये। सद्यःफलदायिनी आपकी ध्यान मूर्ति ही पुत्ररूप में प्रकट हुई है।'

भुजङ्गभूषण भी हर्षमग्न हो गये। वे तुरन्त उठकर अपनी प्राणप्रिया के महल में गये। वहाँ उन्होंने शय्या पर तप्तस्वर्ण-तुल्य कान्तिमान् अपने पुत्र को देखा। घोरदैत्यघ्न शिव प्रसन्न और चकित होकर सोच रहे थे—'अरे! मैं जिस परम तेजस्विनी और मङ्गलमयी मूर्ति का ध्यान करता हूँ, वह तो प्रत्यक्ष मेरे पुत्र के रूप में मेरे सम्मुख मुस्कराती हुई क्रीड़ा कर रही है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वानन्दप्रदायिनी पार्वती के आनन्द की सीमा न थी। उन्होंने अङ्क में ले लिया और हर्ष के आवेग में उसका चुम्बन करने लगीं। आनन्दमग्ना नित्यरूपा पार्वती ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुआ कहा—

सम्प्राप्यामूलरत्नं त्वां पूर्णमेव सनातनम्।
यथा मनो दरिद्रस्य सहसा प्राप्य सद्धनम्॥
कान्ते सुचिरमायाते प्रोषिते योषितो यथा।
मानसं परिपूर्णं च बभूव च तथा मम॥

(ब्रह्मवैवर्त्त. गणपति ख. ९।२७-२८)

'बेटा! जैसे दरिद्र का मन सहसा उत्तम धन पाकर संतुष्ट हो जाता है, उसी तरह सनातन अमूल्य रत्न की प्राप्ति से मनोरथ पूर्ण हो गया। जैसे चिरकाल से प्रवासी हुए प्रियतम के घर लौटने पर स्त्री का मन पूर्णतया हर्षमग्न हो जाता है, वही दशा मेरे मन की भी हो रही है।'

इस प्रकार कहती हुई माता पार्वती ने शिशु को अत्यन्त प्रेम से गोद में ले लिया और उसे परमदुर्लभ, परमपावन अमृतमय दुग्ध-पान कराने के लिए अपना स्तनाग्र उसके मुँह में दे दिया।

इसके अनन्तर चराचर प्राणियों के आश्रय भगवान् शंकर ने भी अत्यन्त प्रसन्नता से अपने पुत्र को गोद में उठा लिया।

प्राकट्योत्सव

पुत्रोत्पत्ति की प्रसन्नता में स्वर्गापवर्गदाता पार्वतीनाथ की प्रेरणा से विविध प्रकार से मनोहर वाद्य बजने लगे। पुत्र की मङ्गल-कामना से परम पिता शिव ने ब्राह्मणों, वन्दियों एवं भिक्षुकों को नाना प्रकार के अपरिमित रत्नादि और बहुमूल्य सम्पत्ति का दान दिया।

हिमगिरि ने अपने दौहित्र के जन्मोत्सव पर अत्यन्त हर्षोत्साह से ब्राह्मणों को एक लाख रत्न, एक हजार श्रेष्ठ हाथी, तीन लाख घोड़े, दस लाख गायें, पाँच लाख स्वर्ण-मुद्राएँ, मुक्ता-हीरे-रत्नादि मणियाँ, वस्त्र, आभूषण और क्षीराब्धि से उत्पन्न सभी प्रकार के अनमोल रत्नों का दान दिया।

क्षीरोदधिशायी विष्णु ने कौस्तुभमणि का दान दिया। हर्षातिरेक में उन्होंने श्रेष्ठतम मुनियों को बुलवाकर उनकी पूजा की। उनसे समस्त मांगलिक कार्य करवाये, पार्वती के पुत्र रूप में प्रकट उस नव-शिशु को आशीर्वाद दिलवाया, वेदों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और पुराणों का पाठ करवाया एवं देव-दुर्लभ मनोहर नृत्य तथा मन्त्रमुग्ध मधुर संगीत का आयोजन किया।

अनुग्रह स्वरूप शिव-पुत्र के प्राकट्योत्सव पर ब्रह्मा ने सृष्टि में परम दुर्लभ वस्तुएँ ब्राह्मणों को दीं। परम महिमामयी शिवप्रिया के मङ्गलकर पुत्र-जन्म के अवसर पर देवसमुदाय आनन्दोदधि में निमग्न हो गया था। धर्म, सूर्य, शचीपति इन्द्र, सुरगण, मुनिगण, गन्धर्व, देवियों ने अत्यन्त प्रसन्नता से विविध प्रकार की बहुमूल्य वस्तुओं का दान किया। हर्षातिरेक से क्षीरसागर के दिये गये एक सहस्र माणिक्य, एक सौ कौस्तुभमणियाँ, हीरक, श्रेष्ठ मणियाँ, गौ-रत्न, गज-रत्न, श्वेतवर्ण के अन्यान्य अमूल्य रत्न, स्वर्णमुद्राओं एवं वस्त्राभरणों के अम्बारों के मूल्यों का अनुमान करना सम्भव नहीं।

इसी प्रकार भगवती सरस्वती, सावित्री और धनपति कुबेर ने ब्राह्मणों को परम दुर्लभ एवं अद्भुत् अगणित वस्तुओं का दान किया।

प्राणिमात्र के सच्चे शुभैषी एवं देवताओं के परम शुभचिन्तक जगदाता भगवान् शिव के घर में शिशु के प्रकट होने पर सभी देवता आनन्दोन्मत हो गये थे। उस शुभ आनन्द काल में बालक के मङ्गल के लिये जो जहाँ था, वहीं ब्राह्मणों को अपना सर्वस्व समर्पित करने लगा। सब ने दान दिये और सभी देवताओं ने उस बालक को दुर्लभतम आशीष प्रदान की।

विष्णु ने कहा—बालक! तुम दीर्घायु, ज्ञान में शिव के सदृश, पराक्रम में मेरे तुल्य और सम्पूर्ण सिद्धियों के ईश्वर होओ।

ब्रह्मा ने कहा—वत्स! तुम्हारे यश से जगत् पूर्ण हो जाय, तुम शीघ्र ही सर्वपूज्य हो जाओ और सबसे पहले तुम्हारी परम दुर्लभ पूजा हो।

महादेव ने कहा—प्राणप्रिय पुत्र! तुम मेरी भाँति दाता, हरिभक्त, बुद्धिमान्, विद्यावान्, पुण्यवान्, शान्त और जितेन्द्रिय होओ।

धर्म ने कहा—पार्वतीनन्दन! तुम मेरे समान परम धार्मिक, सर्वज्ञ, दयालु, हरिभक्त और श्रीहरि के समान दुर्लभ होओ।

लक्ष्मी ने कहा—बेटा! तुम्हारे घर में तथा शरीर में सनातनी स्थिति बनी रहे और मेरी तरह तुम्हें शान्त एवं मनोहर रूप वाली पतिव्रता पत्नी प्राप्त हो।

सरस्वती ने कहा—पुत्र! मेरे ही तुल्य तुम्हें परमोत्कृष्ठ कवित्व शक्ति, धारणा शक्ति, स्मरण शक्ति और विवेचन शक्ति की प्राप्ति हो।

सावित्री ने कहा- वत्स! मैं वेदमाता हूँ, अतः तुम मेरे मन्त्र जप में तत्पर होकर शीघ्र ही वेदवादियों में श्रेष्ठ तथा वेदज्ञानी बनो।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हिमालय ने कहा—बेटा ! तुम्हारी बुद्धि सदा श्रीकृष्ण में लगी रहे, श्रीकृष्ण में ही तुम्हारी सनातनी भक्ति हो, तुम श्रीकृष्ण के समान गुणवान् होओ और श्रीकृष्ण परायण बने रहो।

मेनका ने कहा—वत्स ! तुम गम्भीरता में समुद्र के समान, सुन्दरता में कामदेव के सदृश, लक्ष्मीवानों में श्रीपति के तुल्य और धर्म में धर्म की भाँति होओ।

वसुन्धरा ने कहा—वत्स ! तुम मेरी तरह क्षमाशील, शरणदाता, सम्पूर्ण रत्नों से सम्पन्न, विघ्नरहित, विघ्नविनाशक और शुभ-मङ्गल के आश्रयस्थान होओ।

पार्वती ने कहा—बेटा ! तुम अपने पिता के समान महान् योगी, सिद्ध, सिद्धियों के प्रदाता, शुभकारक, मृत्युञ्जय, ऐश्वर्यशाली और अत्यन्त निपुण होओ।

इसी प्रकार से सभी देवी-देवताओं ने अनेक प्रकार के मङ्गल आशीर्वचन दिये। तदनन्तर वहाँ पधारे हुए सभी ऋषियों, मुनियों और सिद्धों ने नवजात शिशु को अनेक प्रकार के मङ्गलमय आशीर्वाद प्रदान किये। ब्राह्मणों ने प्रसन्न होकर अपने हृदय का सम्पूर्ण आशीर्वाद एवं वन्दियों ने समस्त मङ्गलकामनाएँ प्रकट कीं।

(ब्रह्मवैवर्त्त पुराण गणपति खण्ड अध्याय (१०) सुमङ्गलाध्याय नाम से कहा गया है, उसमें पूर्ण विवरण प्राप्त है। उसके पाठ करने से सब प्रकार के विघ्न, अनिष्ट, अरिष्ट, पाप दूर होते हैं। सब प्रकार की शुभकामनाएँ, मनोरथों की सिद्धि प्राप्त होती है।)

अनन्तानन्द सुखद नवोदित शिशु को शुभाशीः प्रदान कर श्रीहरि देवर्षियों के साथ श्रेष्ठ रत्न-सिंहासन पर आसीन हुए। उनके दायें आशुतोष शिव, बायें लोकस्रष्टा ब्रह्मा और सम्मुख श्रेष्ठ धर्मात्मा धर्म आसनासीन हुए। धर्म के समीप सूर्य, देवेन्द्र, चन्द्रमा, देव-समुदाय, मुनिगण एवं गिरि-समुदाय सुन्दर एवं सुखद आसन पर विराजमान हुए।

तदनन्तर सर्वव्यापिनी जननी ने अपने अघनाशन पुत्र को रत्नसिंहासन पर बैठाया। समस्त देवी-देवताओं ने गिरिजापुत्र की वहाँ ही अमित पूजोपचारों द्वारा पूजा की तथा अनेक प्रकार क उपहार भेंट किए और आनन्द निमग्न हो गये। इस प्रकार श्रीगणेशजी का जन्मोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ, समस्त देवी-देवता आनन्दमग्न होते हुए अपने-अपने स्थानों को पधार गये।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण गणपति खण्ड अध्याय १ से १० के आधार से)

गणेशपुराण में भगवान् गजानन्द के अनेक चरित्रों का वर्णन प्राप्त है। इच्छुक पाठक उसमें देख सकते हैं। भगवान् गणेशजी की अवतार कथाएँ भी विभिन्न प्रकार से प्राप्त होती हैं, यह विभिन्नता कल्पान्तर भेद से है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं गणेश्वराय ब्रह्मस्वरूपाय चारवे ।
सर्वसिद्धिप्रदेशाय विघ्नेशाय नमो नमः ॥

(ब्रह्मवैवर्त्त. गणपति ख. १३।३२)

ब्रह्मा, विष्णु, महेश स्वरूप भगवान् सूर्य की उपासना, महात्म्य, फल विवेचन

सोपान १६

व्यासजी कहते हैं—कैलास के रमणीय शिखर पर भगवान् महेश्वर सुखपूर्वक बैठे थे। इसी समय स्कन्द ने उनके पास जा पृथ्वी पर मस्तक टेक कर उन्हें प्रणाम किया और कहा—'नाथ ! मैं आप से रविवार का यथार्थ फल सुनना चाहता हूँ।'

महादेवजी ने कहा—बेटा ! रविवार के दिन मनुष्य व्रत रख कर सूर्य को लाल पुष्पों से जल के साथ अर्घ्य दे और रात को हविष्यान्न भोजन करे। ऐसा करने से वह कभी स्वर्ग से भ्रष्ट नहीं होता। रविवार का व्रत परम पवित्र और हितकर है। यह समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला, पुण्यप्रद, ऐश्वर्यदायक, रोग-नाशक और स्वर्ग तथा मोक्ष प्रदान करने वाला है। यदि रविवार के दिन सूर्य की संक्रान्ति तथा शुक्ल पक्ष की सप्तमी हो तो उस दिन का किया हुआ व्रत, पूजा और जप सब अक्षय होता है। शुक्ल पक्ष के रविवार को ग्रहपति सूर्य की पूजा करनी चाहिये। प्रातःकाल के नित्य-नैमित्यक संध्योपासनादि नित्य कर्म से निवृत्त होकर होकर हाथ में पुष्प लेकर, लाल कमल पर विराजमान, सुन्दर ग्रीवा से सुशोभित, रक्तवस्त्रधारी और लाल रंग के आभूषणों से विभूषित भगवान् सूर्य का ध्यान करें और फूलों को सूँघ कर ईशान कोण की ओर फेंक दें। इसके पश्चात् 'आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो भानुः प्रचोदयात्' मन्त्र का जप करें, इस मन्त्र का नाम सूर्य गायत्री है। तदन्तर गुरु, पण्डित, विद्वान् के उपदेश के अनुसार विधिपूर्वक पूजा करें। भक्ति के साथ पुष्प और केले आदि सुन्दर ताजे पके हुए फल अर्पण करके जल चढ़ाना चाहिए। जल के बाद चन्दन, चन्दन के बाद धूप, धूप के बाद दीप, दीप के पश्चात् नैवेद्य तथा उसके बाद पुनः जल निवेदन करना चाहिए।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तत्पश्चात्, तप, स्तुति, मुद्रा और नमस्कार करना उचित होता हैं। पहली मुद्रा का नाम अञ्जली है और दूसरी का नाम धेनु है। इस प्रकार जो सूर्य का पूजन करता है, वह उन्हीं का सायुज्य प्राप्त करता है।

भगवान् सूर्य एक होते हुए भी कालभेद से नाना रूप धारण करके प्रत्येक मास में तपते रहते हैं। एक ही सूर्य बारह रूपों में प्रकट होता है। मार्गशीर्ष में मित्र, पौष में सनातन विष्णु, माघ में वरुण, फाल्गुन में सूर्य, चैत्र मास में भानु, वैशाख में तापन, ज्येष्ठ में इन्द्र, आषाढ़ में रवि, श्रावण में गभस्ति, भादों में यम, आश्विन में हिरण्यरेता और कार्तिक में दिवाकर नाम रूपों से तपते हैं। इस प्रकार बारह महीनों में भगवान् सूर्य बारह नामों से पुकारे जाते हैं। इनका रूप अत्यन्त विशाल, महान् तेजस्वी और प्रलयकालीन अग्नि के समान देदीप्यमान है। जो इस प्रसङ्ग का नित्य पाठ करता है, उसके शरीर में पाप नहीं रहते। उसे रोग, दरिद्रता और अपमान का कष्ट भी कभी नहीं उठाना पड़ता। वह क्रमशः यश, राज्य, सुख तथा अक्षय स्वर्ग प्राप्त करता है।

अब मैं सबको प्रसन्नता प्रदान करने वाले सूर्य के उत्तम महामंत्र का वर्णन करूँगा। उसका प्रभाव इस प्रकार है—

ॐ नमः सहस्र बाहवे आदित्याय नमो नमः।
नमस्ते पद्महस्ताय वरुणाय नमो नमः॥
नमस्तिमिरनाशाय श्रीसूर्याय नमो नमः।
नमः सहस्रजिह्वाय भानवे च नमो नमः॥
त्वं च ब्रह्मा त्वं च विष्णु रुद्रस्त्वं च नमो नमः।
त्वमग्निस्सर्वभूतेषु वायुस्त्वं च नमो नमः॥
सर्वगः सर्वभूतेषु न हि किंचित्त्वया बिना।
चराचरे जगत्यस्मिन् सर्वदेहे व्यवस्थितः॥

(पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अध्याय ७६।३१-३४)

'सहस्र भुजाओं (किरणों) से सुशोभित भगवान् आदित्य को नमस्कार है। हाथ में कमल धारण करने वाले वरुणदेव को बारंबार नमस्कार है। अन्धकार का विनाश करने वाले श्री सूर्यदेव को अनेक बार नमस्कार है। रश्मिमयी सहस्रों जिह्वाएँ धारण करने वाले भानु को नमस्कार है। भगवान्! तुम्हीं ब्रह्मा, तुम्हीं विष्णु और तुम्हीं रुद्र हो; तुम्हें नमस्कार है। तुम्हीं सम्पूर्ण प्राणियों के भीतर अग्नि और वायुरूप से विराजमान हो; तुम्हें बारंबार प्रणाम है। तुम्हारी सर्वत्र गति और भूतों में स्थिति है, तुम्हारे बिना किसी भी वस्तु की सत्ता नहीं है। तुम इस चराचर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जगत् में समस्त देहधारियों के भीतर स्थित हो। इस मन्त्र का जप करके मनुष्य अपने सम्पूर्ण अभिलाषित पदार्थों तथा स्वर्ग आदि के भोग को प्राप्त करता है। आदित्य, भास्कर, सूर्य, अर्क, भानु, दिवाकर, सुवर्णरेता, मित्र, पूषा, त्वष्टा, स्वयम्भू और तिमिराश—ये सूर्य के बारह नाम बताये गये हैं। जो मनुष्य पवित्र होकर सूर्य के इन बारह नामों का विश्वासपूर्वक पाठ करता है, वह सब पापों और रोगों से मुक्त हो परम गति को प्राप्त होता है।

षडानन ! अब मैं महात्मा भास्कर के जो दूसरे-दूसरे प्रधान नाम हैं, उनका वर्णन करूँगा। तपन, तापन, कर्ता, हर्ता, महेश्वर, लोकसाक्षी, त्रिलोकेश, व्योमाधिप, दिवाकर, अग्निगर्भ, महाविप्र, खग, सप्ताश्ववाहन, पद्महस्त, तमोभेदी, ऋग्वेद, यजुः सामग, कालप्रिय, पुण्डरीक, मूलस्थान और भावित। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इन नामों का स्मरण करता है, उसे किसी रोग का भय कैसे हो सकता है ? कार्तिकेय ! तुम यत्नपूर्वक ध्यान से सुनो। सूर्य का नाम-स्मरण सब पापों को हरने वाला और शुभ फल प्रदान करने वाला है। महामते ! आदित्य की महिमा के विषय में तनिक भी संदेह नहीं करना चाहिए।

'ॐ इन्द्राय नमः स्वाहा', 'ॐ विष्णवे नमः'—इन मंत्रों का जप, होम और सन्ध्योपासन करना चाहिये। ये मन्त्र सब प्रकार से शान्ति प्रदान करने वाले और सम्पूर्ण विघ्नों का नाश करने वाले हैं। ये विश्वास व नमन पूर्वक करने से सभी प्रकार के रोगों को दूर कर देते हैं।

अब मैं महात्मा भास्कर के मूल मंत्र का वर्णन करूँगा, तुम ध्यानपूर्वक सुनो। जो सम्पूर्ण कामनाओं एवं सभी प्रकार के प्रयोजनों को सिद्ध करने वाला तथा मोक्ष व मोक्ष प्रदान करने वाला है। वह मन्त्र इस प्रकार हैं—

'ॐ ह्रां ह्रीं सः सूर्याय नमः।' इस मन्त्र से सदैव सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है—यह निश्चित बात है। इसके जप से रोग नहीं सताते तथा किसी प्रकार के अनिष्ट का भय नहीं होता। यह मन्त्र न किसी को देना चाहिये और न किसी से उसकी चर्चा करनी चाहिए, अपितु यत्नपूर्वक इसका निरन्तर जप करते रहना चाहिए। जो लोग अभक्त, सन्तानहीन, पाखण्डी, विश्वास न करने वाले और लौकिक व्यवहारों में आसक्त हों, उनसे इस मन्त्र की चर्चा नहीं करना चाहिये सन्ध्या और होम कर्म में मूल मंत्र का जप करना चाहिये। उसके जप से रोग और क्रूर ग्रहों का प्रभाव नष्ट हो जाता है। वत्स ! दूसरे-दूसरे अनेक शास्त्रों और बहुतेरे विस्तृत मंत्रों की क्या आवश्यकता है; इस मूलमन्त्र का जप ही सब प्रकार की शान्ति तथा सम्पूर्ण मनोरथों की सिद्धि करने वाला है। देवता और ब्राह्मणों की निन्दा करने वाले नास्तिक पुरुष को इसका उपदेश नहीं देना चाहिये। जो प्रतिदिन एक, दो या तीन समय भगवान् सूर्य के समीप इसका पाठ करता है, उसे अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यहाँ सूर्य के समीप का अर्थ है, जहाँ से भगवान् सूर्य के दर्शन होते हैं। पुत्र की कामना करने वाले को पुत्र, कन्या चाहने वाले को कन्या, विद्या की अभिलाषा रखने वाले को विद्या और धनार्थी को धन मिलता है। जो शुद्ध आचार-विचार से युक्त हो, संयम तथा भक्तिपूर्वक इस प्रसङ्ग का श्रवण करता है, वह सब पापों से मुक्त हो सूर्यलोक को जाता है। सूर्य देवता के व्रत के दिन तथा अन्यान्य व्रत, अनुष्ठान, यज्ञ, पुण्य स्थान और तीर्थों में जो इसका पाठ करता है, उसे कोटिगुना फल मिलता है।

सूर्य की उपासना द्वारा राजा भद्रेश्वर के कुष्ठ रोग-निवारण की कथा

व्यासजी कहते हैं—मध्य प्रदेश में भद्रेश्वर नाम के प्रसिद्ध चक्रवती राजा थे। वे बहुत सी तपस्याओं तथा नाना प्रकार के व्रतों से पवित्र हो गये थे। प्रतिदिन देवता, ब्राह्मण, अतिथि और गुरुजनों का पूजन करते थे। उनका बर्ताव न्याय के अनुकूल होता था। वे स्वभाव के सुशील और शास्त्रों के तात्पर्य तथा विधान के पारगामी विद्वान् थे। सदा सद्भावपूर्वक प्रजाजनों का पालन करते थे। एक समय की बात है, पूर्वजन्म के किसी अशुभ कर्मफल के कारण उनके बायें हाथ में श्वेत कुष्ठ हो गया। वैद्यों ने बहुत उपचार किये; किन्तु उससे कोढ़ का चिह्न और भी स्पष्ट दिखायी देने लगा। तब राजा ने प्रधान-प्रधान ब्राह्मणों और मन्त्रियों को बुलाकर कहा 'विप्रगणो! मन्त्रिगणो! मेरे हाथ में एक ऐसा पाप का चिह्न प्रकट हो गया है, जो लोक में निंदित होने के कारण मेरे लिये दुःसह हो रहा है। अतः मैं किसी महान् पुण्य क्षेत्र में जाकर अपने शरीर का परित्याग करना चाहता हूँ।

ब्राह्मण बोले—महाराज! आप धर्मशील और बुद्धिमान् हैं। आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए। आप अपने राज्य का परित्याग कर देंगे तो यह प्रजा नष्ट हो जायगी। मृत्यु समय से पूर्व शरीर का त्याग कर देंगे तो पाप की वृद्धि होगी। बुद्धिमान् धर्माचरण मनुष्य के लिए ऐसा करना कदापि योग्य नहीं है। राजन्! इस रोग की निवृत्ति का शास्त्रों में उपाय लिखा है, वह हम लोग जानते हैं। हमारे बतलाये अनुसार आप यत्नपूर्वक महान् देवता भगवान् सूर्य की आराधना कीजिए।

राजा ने पूछा—विप्रवरो! किस विधि से मैं भगवान् सूर्य की आराधना करके भगवान् भास्कर को सन्तुष्ट कर सकूँगा?

ब्राह्मण बोले—राजन्! आप अपने राज्य में ही रह कर भगवान् सूर्य की उपासना कीजिए। हम, हमारे सान्निध्य में उपासना विधि के अनुसार आपके द्वारा सूर्य की आराधना अनुष्ठान सम्पन्न करावेंगे। इस अनुष्ठान द्वारा आप अपने भयङ्कर पाप तथा रोग से मुक्त हो स्वर्ग और मोक्ष भी प्राप्त कर सकेंगे।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह सुनकर राजा भद्रेश्वर ने उन ब्राह्मणों के द्वारा बतलाई हुई विधि से उनके सान्निध्य में सूर्य की उत्तम आराधना आरम्भ की। वे प्रतिदिन नित्य कर्मों से शीघ्र निवृत्त होकर सूर्योदय से पहले इस सूर्य उपासना के लिए बैठकर मन्त्रों द्वारा पूजा-आराधना आरम्भ करते। मन्त्र पाठ द्वारा, नाना प्रकार की पूजा सामग्री, विविध भाँति के फल, अनेक तीर्थों के जल द्वारा सूर्योदय के समय अर्घ्य प्रदान करते। तत्पश्चात् पूजाविधि के अनुसार जल, वस्त्र, अक्षत, जपा पुष्प, मदार के पत्ते, लाल चन्दन, कुंकुम, सिन्दूर, कदलीपत्र व उसके मनोहर उत्तम फल तथा नाना प्रकार के फल, धूप-दीप, अनेक प्रकार के नैवेद्य, आरती-स्तोत्र, मन्त्र पाठ द्वारा भगवान् सूर्य की पूजा करते और सूर्य भगवान् के मन्त्र का जप करते थे। राजा गूलर के पात्र में अर्घ्य सजाकर सर्वदा सूर्य देवता को निवेदन करते थे। अर्घ्य देते समय मन्त्री और पुरोहितों के साथ सदा सूर्य के सामने खड़े रहते थे। उनके साथ आचार्य, ब्राह्मण, रानियाँ, सभी राज्य कर्मचारी, अन्तः पुर में रहने वाले सभी रक्षक तथा उन सबकी पत्नियाँ, दासवर्ग तथा अन्य सभी उत्तम प्रतिष्ठित प्रजावर्ग भी रहा करते थे। वे लोग भी प्रतिदिन उनके साथ-ही-साथ अर्घ्य देते थे। सूर्य देवता के अङ्गभूत जितने भी व्रत नियम थे, उनका भी उन्होंने एकाग्रचित्त से सावधान होकर यह सूर्य का अनुष्ठान किया। क्रमशः एक वर्ष व्यतीत होने पर राजा का रोग दूर हो गया। इस प्रकार उस भयङ्कर रोग के दूर हो जाने पर राजा ने अपनी समस्त प्रजा को अपनी आज्ञा के अधीन करके सबके द्वारा प्रभात काल में सूर्य देवता का पूजन और व्रत कराना आरम्भ किया। सब लोग कभी हविष्यान्न खाकर, कभी निराहार रह कर सूर्य देवता का पूजन करते थे। इस प्रकार सभी लोगों के द्वारा पूजित होकर भगवान् सूर्य बहुत संतुष्ट हुए और कृपापूर्वक राजा के पास चमत्कृत तेजस्वी राजा के स्वरूप में आकर बोले—'राजन्! तुम्हारे मन में जिस वस्तु की इच्छा हो, उसे वरदान रूप में माँग लो। सेवकों और पुरवासियों सहित तुम सब लोगों का हित करने के लिए मैं उपस्थित हूँ।'

राजा ने कहा—सबको नेत्र प्रदान करने वाले भगवन्! यदि आप मुझे अभीष्ट वरदान देना चाहते हैं तो ऐसी कृपा कीजिये कि हम सब लोग आपके पास रहकर ही सुखी हों।

भगवान् सूर्य बोले—राजन्! तुम्हारे मन्त्री, पुरोहित, ब्राह्मण, स्त्रियाँ तथा अन्य परिवार के लोग, उत्तम प्रजाजन – सभी शुद्ध होकर कल्प पर्यन्त मेरे रमणीय धाम में निवास करें।

व्यासजी कहते हैं—यों कह कर संसार को नेत्र प्रदान करने वाले भगवान् सूर्य वहीं अन्तर्धान हो गए। तदनन्तर राजा भद्रेश्वर अपने परिवार, पुरवासियों,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुरु, ब्राह्मण, राज्याधिकारियों सहित दिव्य लोक में आनन्द अनुभव करने लगे। वहाँ जो जीव, कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी थे, वे भी अपने परिवार सहित प्रसन्नता पूर्वक दिव्य लोक को सिधार गये। जो मनुष्य पवित्रतापूर्वक इस प्रसङ्ग का पाठ करता है, उसके भी सब पापों का नाश हो जाता है तथा वह रुद्र की भाँति इस पृथ्वी पर पूजित होता है। जो मानव संयमपूर्वक इस कथा का श्रवण करता है, उसे अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। इस अत्यन्त गोपनीय रहस्य का भगवान् सूर्य ने यमराज को उपदेश दिया था। इस भूमण्डल पर तो व्यास के द्वारा ही इसका प्रचार हुआ है।

ब्रह्माजी कहते हैं—नारद! इस तरह नाना प्रकार के धर्मों का निर्णय सुनाकर व्यास शम्याप्रास में चले गये। तुम भी इस तत्त्व को श्रद्धापूर्वक समझ-सुनकर, सुखपूर्वक विचरो और समयानुसार भगवान् विष्णु के सुयश का सानन्द श्रद्धा नमनपूर्वक अधिकाधिक गान करते रहो। साथ-ही-साथ जगत् को धर्म का उपदेश देते हुए जगद्गुरु श्रीभगवान् को प्रसन्न करो।

पुलस्त्यजी कहते हैं—भीष्म! ब्रह्माजी के ऐसा कहने पर देवर्षि नारद मुनिवर श्रीनारायण का दर्शन करने के लिए गन्धमादन पर्वत पर बद्रिकाश्रम तीर्थ में चले गये।

(पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अध्याय ७६ से ८२ के आधार से)

भगवान् सूर्यनारायण को बारम्बार प्रणाम है।

सब देवी-देवता विष्णुमय हैं; किन्तु सर्वोपरि 'भगवान् विष्णु' हैं।

सोपान १७

भविष्यतां वर्ततां च भूतानां चैव भारत।
सर्वेषामग्रणीर्विष्णुः सेव्यः पूज्यश्च नित्यशः॥

'भरतनन्दन! भगवान् विष्णु ही भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालों में होने वाले समस्त भूतों के अग्रगण्य हैं; अतः सबको सदा उन्हीं की पूजा करना चाहिये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नारायणाज्जगत् सर्वं सर्गकाले प्रजायते ।
तस्मिन्नेव पुनस्तच्च प्रलये सम्प्रलीयते ।।

'सृष्टि काल में यह सारा जगत् नारायण से ही प्रकट होता है और प्रलय-काल में उन्हीं में इसका लय हो जाता है ।'

ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोऽथ भिक्षुकः ।
केशवाराधनं हित्वा नैव याति परां गतिम् ।।

'ब्रह्मचारी हो या गृहस्थ, वानप्रस्थ हो या संन्यासी—कोई भी भगवान् विष्णु की आराधना छोड़ देने पर परमगति को नहीं प्राप्त होता ।'

सब्रह्मकाः सरुद्राश्च सेन्द्रा देवाः सहर्षिभिः ।
अर्चयन्ति सुरश्रेष्ठं देवं नारायणं हरिम् ।।

'ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र तथा ऋषियों सहित सम्पूर्ण देवता सुरश्रेष्ठ नारायण देव श्रीहरि की अर्चना करते हैं ।'

मुहूर्तमपि यो ध्यायेन्नारायणमतन्द्रितः ।
सोऽपि सद्गतिमाप्नोति किं पुनस्तत्परायणः ।।

'जो आलस्य को छोड़कर दो घड़ी भी नारायण का ध्यान करता है, वह भी उत्तम गति को प्राप्त होता है । फिर जो निरन्तर उन्हीं के भजन-ध्यान में तत्पर रहता है, उसका तो कहना ही क्या है ।'

इसीलिये भीष्म पितामह ने आग्रह और जोर देकर युधिष्ठिर से कहा—

अजरममरमेकं ध्येयमाद्यन्तशून्यं
सगुणमगुणमाद्यं स्थूलमत्यन्तसूक्ष्मम् ।
निरुपममुपमेयं योगिविज्ञानगम्यं
त्रिभुवन गुरुमीशं सम्प्रपद्यस्व विष्णुम् ।।

'जो अजर, अमर, अद्वितीय, ध्येय, अनादि, अनन्त, सगुण, निर्गुण सबके आदि कारण, स्थूल, अत्यन्त सूक्ष्म, उपमारहित, उपमा के योग्य तथा योगियों के लिए ज्ञानगम्य हैं; उन त्रिभुवन गुरु भगवान् विष्णु की शरण लो ।'

समय के प्रभाव से वर्तमान समय में हिन्दू धर्मावलम्बियों की संख्या अन्य धर्मावलम्बियों की अपेक्षा में कम रह गई है । उसमें सनातन धर्मावलम्बियों की संख्या और भी कम है । जो हैं, उनमें भी वेद, उपनिषद्, धर्म ग्रन्थों के पठन, मनन, ज्ञान को प्राप्त करने वाले सब नहीं है । कुछ हैं वे भी अधिकतर पुराण शास्त्रों के ही ज्ञाता हैं । पुराण, इतिहास, संहिता, रामायणादि धर्म-ग्रन्थों में वेद,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उपनिषद् की ही व्याख्याएँ हैं। उपदेश व कथाएँ भी धर्म प्रचार-प्रसार हेतु पुराण, इतिहास, रामायणादि की ही होती हैं। विभिन्न ग्रन्थों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश, देवी, अग्नि, राम कृष्ण, हनुमान, शेषनाग आदि-आदि अनेक देवताओं की उपासना, पूजा-विधान तथा माहात्म्य अनेक प्रकार से बतलाये गये हैं। जिनको एकाग्रतापूर्वक गहन रूप में बिना पढ़े सुने, स्वल्प ज्ञान प्राप्त करने वाले के मन में यह विचार उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि इसमें कौन देवता बड़ा है, कौन देवता छोटा है। ईश्वर तो एक ही है, यह इतने कैसे हो गये, किसकी उपासना करना योग्य है व किसकी अयोग्य है? किसकी उपासना स्वल्प फल प्रदान करने वाली है, किसकी उत्तम फल प्रदान करने वाली है? स्वल्प ज्ञानी जनसाधारण इस प्रकार के प्रश्न किया करते हैं। इन प्रश्नों का समाधान थोड़े शब्दों में किया जाना आवश्यक समझकर कुछ बतलाने का प्रयास किया जा रहा है—

पुराण, इतिहास, रामायणादि को यदि मन से ध्यानपूर्वक पढ़ा-सुना जावे तो इन प्रश्नों का समाधान इन्हीं ग्रन्थों में मिल जाता है। किन्तु, इस यन्त्रवत् चलने वाले तथा भौतिक सुखों की होड़ में दौड़ने वाले समय में रुचि व समय किसको है? सभी शीघ्र और स्वल्प रूप में प्रामाणिक समाधान चाहते हैं, जिसे लोग ध्यानपूर्वक पढ़ लेवें। पुराण, इतिहासादि ग्रन्थों में अनेक देवी-देवताओं की उपासना, पूजा-विधान, माहात्म्य बतलाते हुए कहा गया है कि ये सब एक ही परमात्मा के स्वरूप हैं।

'भविष्य पुराण' में इस बात को बहुत स्पष्ट रूप से जोरदार शब्दों में सब देवताओं के एकत्व की घोषणा करते हुए कहा गया है—

ब्रह्मा विष्णुर्वृषांकश्च त्रयोदेवाः सतां मता।
नाम भेदः क्रियाभेदैर्भिद्यन्ते नात्मना स्वयम्॥
(भविष्य पुराण)

'ब्रह्मा, विष्णु और शिव ये तीनों देवता विद्वान् सज्जनों द्वारा माने गये हैं। ये नाम और कर्म भेद से पृथक्-पृथक् जान पड़ते हैं, पर गुण-स्वरूप की दृष्टि से इनमें कोई भिन्नता नहीं है।'

आदित्यश्चादिदेवत्वा तत्राभूः त्रिगुणात्मकः।
प्रातः प्रजापतिरसौ मध्याह्ने विष्णुरिष्यते।
रुद्रोऽपराह्ण समो स एवैकस्त्रिधामतः॥
(भविष्य पुराण)

'आदित्य (सूर्य) ही आदि देव हैं, जो त्रिगुणात्मक हो जाते हैं। यह प्रातः काल में ब्रह्मा, मध्याह्न में विष्णु और दोपहर बाद (अपराह्ण) में रुद्र हो जाते हैं। इस प्रकार वे एक ही तीन स्वरूपात्मक होते हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस प्रकार पुराण शास्त्रों के ग्रन्थकारों ने देववाद की वास्तविकता को प्रकट करके उपदेश दिया है कि बौद्धिक स्तर अथवा मनोभावना के कारण मनुष्य दैवी शक्ति की किसी भी रूप में उपासना क्यों न करे, पर उसे यह सदैव ध्यान रखना चाहिये कि मूलतत्त्व में कोई अन्तर नहीं है।

भगवान् विष्णु सकल देवताओं के स्वरूप हैं। श्रीहरि (विष्णु) की अर्चा से सकल देवताओं की अर्चा का फल मिलता है और सकल देवार्चन का फल विष्णुपद-प्राप्ति ही है, ऐसी शास्त्रों की घोषणा है—

'विष्णुर्वै सर्वा देवताः।' 'विष्णुः सर्वेषामधिपतिः परमः।
.....पुराणः। परो लोकानाम्।'
'अग्निर्वै देवानामवमो विष्णुः।' परमस्तदन्तरेण अन्या देवताः॥

(ऐतरेय ब्राह्मण १।१)

विष्णु सर्वदेवस्वरूप हैं, सबके सर्वश्रेष्ठ अधिपति हैं। वे पुराण पुरुष हैं, सम्पूर्ण लोकों से परे हैं। अग्नि, देवताओं में सबसे छोटे और विष्णु सबसे बड़े हैं। अन्यान्य देवता उनके बीच में स्थित हैं।'

सर्वेऽपि वैदिकाचारास्सर्वे यज्ञास्तपांसि च।
विष्णुपूजाविधेर्भेदाः सत्कर्मफलदो हरिः॥

(स्मृति)

'सम्पूर्ण वैदिक आचार, सारे यज्ञ और तप भगवान् विष्णु की पूजा के ही प्रकार हैं तथा भगवान् श्रीहरि सभी सत्कर्मों का फल देते हैं।'

आकाशात् पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति॥

(प्रपन्नगीता)

'आकाश से गिरा हुआ जल चाहे जहाँ हो, अन्ततः बहता-बहता समुद्र में ही जायगा, समुद्र के अतिरिक्त उसकी अन्य गति नहीं है; वैसे ही सब देवों को किया गया नमस्कार विष्णु को ही प्राप्त होता है।'

विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान्।
अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः॥

(विष्णुसहस्रनाम)

'सम्पूर्ण विश्व ही विष्णु का मूर्तरूप है, वे सर्वव्यापी होने के कारण महामूर्ति हैं, ज्ञानघन होने के कारण तेजोमय-विग्रह हैं, निराकार रूप में वे अमूर्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवं अव्यक्त हैं, अनेक रूपों में व्यक्त होने के कारण वे अनेक मूर्ति अथवा शतमूर्ति हैं और शतमूर्ति होने के कारण ही शतानन भी हैं।

सभी सम्प्रदाय अनेक रूपों में उन्हीं के उपासक हैं, उनसे भिन्न कुछ है ही नहीं—

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः॥

(हनुमन्नाटक १।३)

'भगवान् विष्णु ही शैवों के शिव हैं, वेदान्तियों के ब्रह्म हैं, बौद्धों के बुद्ध हैं, जैनियों के अर्हत् हैं, मीमांसकों के कर्म हैं और नैयायिकों के कर्ता हैं।'

इन्हीं सिद्धान्तों के अनुसार सनातन धर्मावलम्बियों ने कभी किसी अन्य धर्मों या उनके देवताओं का अपमान नहीं किया। न कभी किसी अन्य धर्मावलम्बी को फुसलाकर, किसी भी प्रकार का लोभ, भय दिखाकर या जोर जबरदस्ती करके सनातन धर्मावलम्बी ही बनाया है।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश त्रिदेवों में भी सबसे बड़ा कौन है? इसकी कथा श्रीमद्भागवत में इस प्रकार है—

श्री शुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित! एक बार सरस्वती नदी के पावन तट पर यज्ञ प्रारम्भ करने के लिये बड़े-बड़े ऋषि-मुनि एकत्र होकर बैठे। उन लोगों में विवाद इस विषय पर चला कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश में सबसे बड़ा कौन? परीक्षित! उन लोगों ने यह बात जानने के लिये ब्रह्मा, विष्णु और शिव की परीक्षा लेने के उद्देश्य से ब्रह्मा के पुत्र भृगुजी ऋषि को उनके पास भेजा। महर्षि भृगुजी सबसे पहले ब्रह्माजी की सभा में गये। उन्होंने ब्रह्माजी के धैर्य आदि की परीक्षा करने के लिये न उन्होंने नमस्कार किया और न किसी प्रकार से उनकी स्तुति ही की। इस पर ऐसा मालूम हुआ कि ब्रह्माजी अपने तेज से दहक रहे हैं, उन्हें क्रोध आ गया। परन्तु जब समर्थ ब्रह्माजी ने देखा कि यह तो मेरा ही पुत्र है, तब अपने मन में उठे क्रोध को भीतर ही भीतर विवेक बुद्धि से दबा लिया; ठीक वैसे ही जैसे अरणिमन्थन से उत्पन्न अग्नि को जल से बुझा दे।

वहाँ से महर्षि भृगु कैलास में गये। देवाधिदेव भगवान् शंकर ने जब देखा कि मेरे भाई भृगुजी आये हैं, तब उन्होंने बड़े आनन्द से खड़े होकर उनका आलिङ्गन करने के लिये भुजाएँ फैला दीं। परन्तु महर्षि भृगु ने उनसे आलिङ्गन करना स्वीकार नहीं किया और कहा—'तुम लोक और वेद की मर्यादा का उल्लङ्घन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करते हो, इसलिये मैं तुमसे नहीं मिलता।' भृगुजी की यह बात सुनकर भगवान् शंकर क्रोध के मारे तिलमिला उठे। उनकी आँखें चढ़ गयीं। उन्होंने त्रिशूल उठा कर महर्षि भृगु को मारना चाहा। परन्तु उसी समय भगवती सती ने उनके चरणों पर गिर कर बहुत अनुनय-विनय की और किसी प्रकार से उनका क्रोध शान्त किया।

अब महर्षि भृगुजी भगवान् विष्णु के निवास-स्थान वैकुण्ठ में गये। उस समय भगवान् विष्णु लक्ष्मीजी की गोद में अपना सिर रखकर लेटे हुए थे। भृगुजी ने जाकर उनके वक्षःस्थल पर एक लात जमा दी। भक्तवत्सल भगवान् विष्णु लक्ष्मीजी के साथ उठ बैठे और झटपट अपनी शय्या से नीचे उतर कर मुनि को सिर झुकाया, प्रणाम किया। भगवान् ने कहा—'ब्रह्मन्! आपका स्वागत है, आप भले पधारे। इस आसन पर बैठकर कुछ क्षण विश्राम कीजिये। प्रभो! मुझे आपके शुभागमन का पता न था। इसीसे मैं आपकी अगवानी न कर सका। मेरा अपराध क्षमा कीजिये। महामुने! आपके चरण-कमल अत्यन्त कोमल हैं।' यों कहकर भृगुजी के चरणों को भगवान् अपने हाथों से सहलाने लगे और कहा—'महर्षे! आपके चरणों का जल तीर्थों को भी महातीर्थ बनाने वाला है। आप उससे वैकुण्ठ लोक, मुझे और मेरे अन्दर रहने वाले लोकपालों को पवित्र कीजिये। भगवन्! आपके चरण कमलों के स्पर्श से मेरे समस्त पाप धुल गये। आज मैं लक्ष्मी का एक मात्र आश्रय हो गया। अब आपके चरणों से चिह्नित मेरे वक्षःस्थल पर लक्ष्मी सदा-सर्वदा निवास करेंगी।'

श्री शुकदेवजी कहते हैं जब भगवान् विष्णु ने अत्यन्त गम्भीर वाणी से इस प्रकार कहा, तब भृगुजी परम सुखी, आनन्द मग्न होकर तृप्त हो गये। भक्ति के उद्रेक से उनका कण्ठ भर आया, आँखों में आँसू छलक आये और वे चुप हो गये। परीक्षित! भृगुजी वहाँ से लौट कर ब्रह्मवादी मुनियों के सत्सङ्ग में आये और उन्हें ब्रह्मा, शिव और भगवान् विष्णु के यहाँ जो कुछ अनुभव हुआ था, वह सब भली प्रकार से कह सुनाया। भृगुजी का अनुभव सुनकर सभी ऋषि-मुनियों को बड़ा विस्मय हुआ और उन सबका सन्देह दूर हो गया। तब से वे भगवान् विष्णु को ही अग्रगण्य, सर्वोपरि श्रेष्ठ मानने लगे; क्योंकि वे ही शान्ति और अभय के उद्गम स्थान हैं। भगवान् विष्णु से ही साक्षात् धर्म, ज्ञान, वैराग्य, आठ प्रकार के ऐश्वर्य और चित्त को शुद्ध करने वाला यश प्राप्त होता है। शान्त, समुचित, अकिञ्चन और सबको अभय देने वाले साधु-मुनियों की एकमात्र परमगति हैं। इस प्रकार सब ही शास्त्र कहते हैं। उनकी प्रियमूर्ति है सत्व और इष्टदेव ब्राह्मण हैं। निष्काम, शान्त और निपुण बुद्धि (विवेक सम्पन्न) पुरुष उनका भजन करते हैं। भगवान् की गुणमयी माया ने राक्षस, असुर और देवता—उनकी ये तीन मूर्तियाँ बना

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दी हैं। इनमें सत्त्वमयी देवमूर्ति ही उनकी प्राप्ति का साधन है। वे स्वयं ही समस्त पुरुषार्थों के स्वरूप हैं।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित! सरस्वती तट पर ऋषियों ने अपने ही लिये नहीं, सब ही मनुष्यों का संशय मिटाने के लिये ही ऐसी युक्ति की रचना की थी। इसके पश्चात् उन्होंने पुरुषोत्तम भगवान् के चरण-कमलों की सेवा, यज्ञ, अनुष्ठान करके उनका परमपद प्राप्त किया।

सूतजी कहते हैं—शौनकादि ऋषियो! भगवान् पुरुषोत्तम की यह कमनीय कीर्तिकथा जन्म-मृत्यु रूप संसार के भय को मिटाने वाली है। यह व्यासनन्दन भगवान् श्रीशुकदेवजी के मुखारविन्द से निकली हुई सुरभिमय मधुमयी सुधाधारा है। इस संसार के लम्बे पथ का जो बटोही (राहगीर) अपने कानों के दोनों प्यालों से इसका निरन्तर पान करता है, उसकी समस्त थकावट जो इस मायामय जगत् में इधर-उधर भटकने से होती है, सब प्रकार से दूर हो जाती है।

(श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ८९ के आधार से)

सर्वोपरि भगवान् विष्णु के चरणों में बारम्बार प्रणाम है।

●

वर्तमान भारत के प्रख्यात अष्टोत्तर भगवान् विष्णु एवं उनके अवतारों के दिव्य देवदर्शन तीर्थस्थान परिचय तथा माहात्म्य

सोपान १८

बदरीनाथ—१

श्रीबदरीनाथजी का मन्दिर हिमालय पहाड़ की गोद में १०५०० फुट की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ भगवान् नर-नारायण ने तपस्या की थी। मन्दिर के पूर्व और पश्चिम स्थित पर्वत शिखरों को नर-नारायण कहते हैं। श्रीबदरीनाथ मन्दिर में श्रीबदरीनाथजी की मूर्ति ध्यानमग्न चतुर्भुज शालग्राम-शिला में बनी हुई है। दाहिने ओर गणेशजी, कुबेरजी की मूर्ति हैं, उनके सामने श्रीउद्धवजी तथा बदरीनाथजी की उत्सव मूर्ति हैं। उद्धवजी के पास चरण पादुकाएँ हैं। बायीं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ओर नारदजी, नरनारायण की मूर्ति हैं। इनके पास ही श्रीदेवी और भूदेवी हैं। परिक्रमा में श्रीलक्ष्मीजी का मन्दिर है। सामने गरुड़जी की मूर्ति है। श्रीबदरीनाथ मन्दिर अलकनन्दाजी के तट पर है। शीत अधिक होने से अलकनन्दा में स्नान नहीं किया जा सकता। मन्दिर के पास ही गर्म जल का कुण्ड है. उसमें स्नान करके दर्शन करते हैं। यहाँ के गर्म पानी के कुण्ड से थोड़ी दूर पर ब्रह्मकपाल शिला तीर्थ है, वहाँ पर यात्री श्राद्ध, पिण्डदान करते हैं। यहाँ कई तीर्थ हैं। बदरीनाथ में अनेक धर्मशाला हैं। भोजन आदि की भी व्यवस्था है। यहाँ पहुँचने के लिये हरिद्वार, ऋषिकेश से बस-टेक्सी मिलती है। यहाँ शीत अधिक है। गर्म कपड़ों का प्रबन्ध करके जाना चाहिये।

श्रीबदर्याश्रमं पुण्यं यत्र यत्र स्थितः स्मरेत।
स याति वैष्णवं स्थानं पुनरावृत्तिवर्जितः॥
(वराह पुरा. ११४।६७)

अधिक क्या, कहीं से भी बदरी आश्रम का स्मरण करता रहे तो वह पुनरावृत्ति वर्जित श्रीवैष्णव धाम को प्राप्त होता है।

अधिक माहात्म्य देखने वालों को (स्कन्ध पुराण, वैष्णव खण्ड, अध्याय २।२, ११, १२, २०), (महाभारत वन. तीर्थ १०।२८-३०) देखना चाहिये।

जोशीमठ—२

ऋषिकेश से बदरीनाथ जाते समय रास्ते में आता है। शीतकाल में भगवान् बदरीनाथ की उत्सव मूर्ति यहाँ आजाती है, उसकी पूजा यहाँ होती है। जोशीमठ में भगवान् नृसिंह का मंदिर है। शालग्राम शिला में बनी हुई अद्भुत् मूर्ति है। मंदिर के पास ही ज्योतिषपीठ शंकराचार्य मठ है।

ऋषिकेश—३

वराह मंदिर, सत्यनारायण मंदिर, चौबीस अवतार मंदिर, स्वर्गाश्रम में गीता भवन, परमार्थ निकेतन, श्रीविष्णु मंदिर देखने योग्य हैं।

कुरुक्षेत्र—४

यजुर्वेद में यह स्थान विष्णु आदि देवताओं की यज्ञभूमि होना बतलाया है। कौरव-पाण्डवों का महाभारत युद्ध यहाँ ही हुआ था। भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश यहाँ ही दिया था। यहाँ सूर्यकुण्ड, ब्रह्मसर, संनिहितसर, ज्योतिसर सरोवर हैं, विरलाओं द्वारा निर्मित श्री कृष्ण-अर्जुन मंदिर, प्राचीन पाण्डव मंदिर, भद्रकाली मंदिर जो इकावन शक्ति पाठों में से एक स्थान है, स्थाणु शिव मंदिर दर्शनीय हैं। महाभारत युद्ध आरम्भ करने से पूर्व पाण्डवों ने विजय

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्राप्ति हेतु श्री भद्रकाली तथा स्थाणु भगवान् शिव की आराधना की थी। पहवा में भी स्नान, देवदर्शन करते हैं। वैसे यह क्षेत्र चौरासी कोस में है, जिसमें अनेक तीर्थ व देव दर्शन हैं। कुरुक्षेत्र में विश्वविद्यालय भी देखने योग्य है।

नाभि-कमल-तीर्थ—५

इस स्थान पर भगवान् विष्णु की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ, कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। यहाँ ब्रह्माजी सहित भगवान् विष्णु का मंदिर है। यहाँ के सरोवर में स्नान करके विष्णु व ब्रह्माजी का पूजन करते हैं। यह स्थान कुरुक्षेत्र के पास ही है।

वराहतीर्थ—६

पानीपत के पास जींद से थोड़ी दूर पर वराह तीर्थ है। वहाँ भगवान् विष्णु वराह अवतार लेकर प्रकट हुए थे। पृथ्वी का उद्धार किया था। यहाँ तीर्थ में स्नान करके भगवान् विष्णु का पूजन करते हैं।

दिल्ली—७

दिल्ली भारत की राजधानी है। यहाँ देखने लायक अनेक स्थान व मंदिर हैं। मुख्य मंदिर बिरलाओं द्वारा निर्मित श्रीलक्ष्मीनारायण का है। हजारों दर्शनार्थी नित्य आते रहते हैं।

गढ़मुक्तेश्वर—८

मेरठ के गंगा के किनारे बसा हुआ है। यहाँ भगवान् लक्ष्मीनारायण का मंदिर है।

मथुरा-वृन्दावन—९

मथुरा का प्राचीन नाम मधुरा तथा मधुवन है। भगवान् श्रीकृष्ण ने तो यहाँ द्वापर में अवतार लिया था; किन्तु यह स्थान अनादिकाल से ही परम पवित्र माना गया है। भगवदाराधना के लिये नारदजी का उपदेश है—'पुण्यं मधुवनं यत्र सांनिध्यं नित्यदा हरेः।' परम पवित्र मधुवन में श्रीहरि नित्य संनिहित रहते हैं। ध्रुव ने यहाँ तपस्या करके भगवान् विष्णु के दर्शन किये। उस समय यहाँ कोई नगर नहीं था, यहाँ मधुवन के नाम से वन ही था। इस स्थान का बहुत बड़ा माहात्म्य है—

न विद्यते च पाताले नान्तरिक्षे न मानुषे।
सामानं मथुराया हि प्रियं मम वसुन्धरे।
सारस्या च सुशस्ता च जन्मभूमिस्तथा मम॥
(वाराह पुराण १५२।८-९)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'पृथ्वी, पाताल, अन्तरिक्ष (भूमि से ऊपर स्वर्गादिलोक) तथा भूलोक में मुझे मथुरा के समान कोई भी प्रिय (तीर्थ) नहीं है। वह अत्यन्त रम्य, मेरी प्रशस्त जन्मभूमि है।'

पूर्णं वर्षसहस्रं तु वाराणस्यां हि यत् फलम्।
तत् फलं लभते देवि मथुरायां क्षणेन हि॥
(वाराह पु. १५२।१५)

'हजार वर्ष तक काशीवास करने का जो फल है, वह ही फल मथुरा में एक क्षण वास करने से प्राप्त हो जाता है।'

अधिक माहात्म्य देखने वालों को (वाराह पुराण अध्याय १५२-१७०, पद्म पुराण पा. ६१-८६, नारद पुराण उ. आ. ७५-८०, विष्णु पुराण अ. ६ अध्याय ८) देखना चाहिये।

पूरा व्रजमण्डल का विस्तार चौरासी कोस में बतलाया गया है। मथुरा व्रज के केन्द्र में है। मथुरा से गोकुल ६ मील दूर यमुना के दूसरे तट पर है। महावन गोकुल से १ मील दूर है। बलदेव महावन से ६ मील दूर है। यहाँ दाउजी का मंदिर है। नन्दगांव मथुरा से २९ मील दूर है। बरसाना मथुरा से ३५ मील दूर है। यह राधाजी की पितृभूमि है। मथुरा से गोवर्धन १६ मील दूर है। इन सब स्थानों में मंदिर व देवदर्शन हैं। मथुरा के चारों ओर बारह वन हैं—मधुवन, कुमुदवन, काम्यकवन, बहुलवन, भद्रवन, खादिरवन, श्रीवन, महावन, लोहजङ्घवन, बिल्ववन, भाण्डीरवन, तथा वृन्दावन। इन सब ही स्थानों का विपुल माहात्म्य है, इनमें वृन्दावन का तो कहना ही क्या? मथुरा में मुख्य मंदिर द्वारिकाधीश का है। द्वारिकाधीश मंदिर के दाहिनी ओर गतश्रम नारायण मंदिर है। द्वारिकाधीश मंदिर के पीछे वाराह मंदिर है। वाराह मंदिर से कुछ आगे गोविन्दजी का मंदिर है। इसके आगे स्वामी घाट पर विहारीजी का तथा गोवर्धननाथजी का मंदिर है। केशवदेव मंदिर और श्रीकृष्ण जन्मस्थान मंदिर कटरा केशवनाथ में हैं। वैसे मथुरा में अनेक मंदिर व तीर्थस्थान दर्शनीय हैं, सबकी तो गणना ही करना कठिन है। मथुरा में ठहरने के लिये अनेक धर्मशालाएँ हैं। उत्तम ठहरने का स्थान डालमियां गेस्ट हाउस है। मथुरा से वृन्दावन तांगा, रिक्शा द्वारा सड़क से जायें तब मथुरा से वृन्दावन के ठीक बीच में बिड़लाओं द्वारा निर्माण कराया हुआ गीता मंदिर है। भगवान् कृष्ण की अत्यंत मनोहर मूर्ति है। भवन में सम्पूर्ण गीता लिखी हुई है। मंदिर भव्य व सुन्दर है। ठहरने की भी व्यवस्था है।

मथुरा से वृन्दावन जाते समय वृन्दावन से बाहर ही पगला बाबा का सुन्दर उत्तम मंदिर है। वृन्दावन में वैसे तो घर घर में ही मंदिर हैं। मुख्य मंदिर बिहारीजी का है। प्रभुपाद स्वामी की प्रेरणा से आधुनिक ढंग का विदेशियों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वारा बनाया हुआ उत्तम मंदिर है। यमुना तट पर कालीय ह्रद, युगल किशोर मंदिर, मदनमोहन मंदिर, अष्ट सखियों का मंदिर, हरिदासजी के आराध्य बांके विहारीजी का मंदिर, हित हरिवंशजी के आराध्य श्री राधावल्लभ का मंदिर, सेवा-कुञ्ज (रङ्गमहल), शृंगारवट में श्रीराधाजी की बैठक, सवामन के शालग्रामजी का मंदिर, साहजी का विहारीजी का मंदिर, राधारमण मंदिर, गोपीनाथ मंदिर, गिरधारीनाथजी का राधाकृष्ण मंदिर, श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय का श्री राधाकृष्ण मंदिर, गोविन्ददेवजी का मंदिर, लाला बाबू का मंदिर, श्रीरङ्गजी का मंदिर, श्रीजगन्नाथजी का मंदिर, निधुवन मंदिर, जयपुर महाराज द्वारा निर्मित मदिर, जमाई बाबू का मंदिर, तथा अनेक मंदिर देवदर्शन हैं। सबकी गणना स्मरण करना कठिन है। ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाएँ, मंदिर हैं। उत्तम प्रबन्ध ठहरने का जयपुरिया भवन में है।

सोरों (वराह क्षेत्र)–१०

यह स्थान कासगंज से नौ मील दूर है। वैसे भारत में वराह क्षेत्र के नाम से कई स्थान हैं, उनमें से यह भी एक वराह क्षेत्र है। यहाँ का मुख्य मन्दिर वराह भगवान् का है, उसमें वराह की चतुर्भुज मूर्ति है। भगवान् के बाम भाग में लक्ष्मी जी विराजमान हैं। कभी यहाँ गङ्गा जी बहती थी अब गङ्गाजी की धारा दूर चली गई है। उस पुरानी धारा के किनारे अनेक घाट तथा देवमन्दिर बने हुए हैं। यहाँ एक कुण्ड भी है। यहाँ के लोगों का कहना है कि गोस्वामी तुलसीदासजी की जन्मभूमि भी यही है।

कानपुर–११

कानपुर विशाल नगर है। अनेक मन्दिर हैं किन्तु मुख्य मन्दिर जुग्गीलाल कमलापति सिंघानियाँ द्वारा निर्मित भगवान् विष्णु का भव्य मन्दिर दर्शनीय है।

प्रयाग (इलाहाबाद)–१२

सृष्टि के आरम्भ में यहाँ श्रीब्रह्माजी का प्रकृष्ट यज्ञ हुआ था। इसलिए इस स्थान का नाम प्रयाग हुआ 'प्रकृष्टं सर्वयागेभ्यः प्रयाग इति उच्यते' (स्कन्द पुराण)। तीर्थराज प्रयाग के माहात्म्य से सारा वैदिक साहित्य भरा हुआ है। लिखा है–

ग्रहाणां च यथा सूर्यो नक्षत्राणां यथा क्षशी।
तीर्थानामुत्तमं तीर्थं प्रयागाख्यमनुत्तमम्॥
(पद्म पुराण)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जैसे ग्रहों में सूर्य, ताराओं में चन्द्रमा है, वैसे ही तीर्थों में प्रयाग सर्वोत्तम है।'

यत्र वटस्याक्षयस्य दर्शनं कुरुते नरः।
तेन दर्शनमात्रेण ब्रह्महत्या विनश्यति॥
(पद्म पुराण)

'जो पुरुष यहाँ के अक्षय वट का दर्शन करता है, उसके दर्शन मात्र से ब्रह्म-हत्या नष्ट हो जाती है।'

अधिक माहात्म्य देखने वालों को पद्मपुराण आदि ३१, उ. ख. ३, ४, ७, ८, १०, १२-१४, मत्स्यपुराण अध्याय १०५, कूर्मपुराण अध्याय ३६, अग्नि पुराण अध्याय १११, गरुड़ पुराण पूर्व. ६५ तथा प्रयाग माहात्म्य शताध्यायी देखना चाहिये।

प्रयाग तीर्थराज कहलाता है। यह समस्त तीर्थों का अधिपति है। सातों पुरियाँ इसकी रानियाँ हैं। गङ्गा-यमुना की धारा ने पूरे प्रयाग क्षेत्र को तीन भागों में बाँट रखा है। ये तीनों भाग अग्निस्वरूप-यज्ञवेदी माने जाते हैं। इन तीनों भागों में एक-एक रात्रिवास करने से तीनों अग्नियों की उपासना का फल प्राप्त होता है। यहाँ प्रति बारहवें वर्ष में कुम्भ पर्व होता है, तब यहाँ करोड़ों यात्री आते हैं। कुम्भ से छठे वर्ष अर्द्ध कुम्भी होता है।

प्रयाग में गङ्गा-यमुना के संगम में स्नान करके प्राणी पापों से मुक्त होकर स्वर्ग का अधिकारी हो जाता है और इस क्षेत्र में देह त्यागने वाले को मुक्ति प्राप्त हो जाती है। पुराणों में इस प्रकार के अनेक वचन हैं। यहाँ स्नान, ध्यान, जप, तप, पूजा-अर्चा, दान, धर्म, पितृ-श्राद्ध आदि करने से अनन्त कोटि गुना फल प्राप्त होता है। प्रयाग के मुख्य देवस्थान हैं—

त्रिवेणीं माधवं सोमं भरद्वाजं च वासुकिम्।
वन्देऽक्षयवटं शेषं प्रयागं तीर्थनायकम्॥

'त्रिवेणी, बिन्दुमाधव, सोमेश्वर, भरद्वाज, वासुकिनाग, अक्षयवट और शेष (बलदेवजी)—ये प्रयाग के मुख्य स्थान हैं।' इनके अतिरिक्त और भी बहुत से देवस्थान प्रयाग क्षेत्र में हैं। सिविल-लाइन में श्रीहनुमानजी का दिव्य सुन्दर वृहत् मन्दिर, नया बना है। इसमें बहुत ही सुन्दर अनेक देवी-देवताओं की दर्शनीय प्रतिमा (मूर्ति) स्थापित हैं। प्रयाग शताध्यायी के अनुसार यहाँ बारह माधव (विष्णु) स्थापित हैं। जिनकी खोज करने से ज्ञात हुआ है—(१) शङ्ख माधव (झूसी की ओर छतानगा के पास मुंशी के बाग में), (२) चक्रमाधव (अरैल में), (३) गदा माधव-(नैनी के एक मन्दिर में यह मूर्ति है), (४) पद्ममाधव (बीकर देवरिया में

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

केवल स्थान निर्देशक पत्थर है), (५) अनन्त माधव (अक्षय वट के पास), (६) विंदु-माधव (कहीं मूर्ति होना नहीं पाया—स्थान द्रौपदी घाट के पास बतलाते हैं), (७) मनोहर माधव (द्रवेश्वरनाथ—मन्दिर में मूर्ति है), (८) असिमाधव (नागवासुकी के पास होना चाहिये; किन्तु कुछ पता नहीं लग सका), (९) संकष्ट-हर-माधव (झूसी में हंसतीर्थ के पीछे सन्ध्या वट के नीचे), (१०) आदि वेणी माधव (त्रिवेणी पर जलरूप में मानते हैं), (११) आदिमाधव (अरैल में), (१२) श्रीवेणी माधव (दारागंज में)। दारागंज के वैष्णवाश्रम में भगवान् वेंकटेशजी का मन्दिर दर्शनीय है।

प्रयाग के तीर्थों में अक्षयवट मुख्य माना गया है। त्रिवेणी संगम से थोड़ी दूर पर किले के अन्दर अक्षयवट है। प्रयाग तीर्थों का राजा है। उसके पास सभी तीर्थों का वास है। सबकी गणना, परिचय संभव नहीं। प्रयाग इलाहाबाद, झूंसी, नैनी सब मिला कर बहुत बड़ा नगर है, अनेक दर्शनीय स्थल हैं। प्रयाग की परिक्रमा होती है, उसमें अनेक तीर्थ आते हैं।

चित्रकूट—१३

यह महापुण्यप्रद वही स्थान है, जहाँ ब्रह्मा, विष्णु और महेश—तीनों महा-प्रभुओं—को एक साथ बालक स्वरूप धारण कर बालकों की भाँति पलनों में झूलना पड़ा। इसके पश्चात् तीनों को चन्द्रमा, मुनि दत्तात्रेय तथा दुर्वासा के रूप में जन्म ग्रहण करना पड़ा था, और यहाँ प्रवेश करते ही राजा नल, युधिष्ठिर आदि का घोर क्लेश दूर हो गया।

चित्रकूटे शुभे क्षेत्रे श्रीरामपदविभूषिते।
तपश्चचार विधिवद् धर्मराजो युधिष्ठिरः॥
दमयन्तीपतिर्वीरो राज्यं प्राप हताशुभः।

'श्रीराम के पाद पद्मों से अलंकृत शुभ चित्रकूट क्षेत्र में धर्मराज युधिष्ठिर ने विधिपूर्वक तपस्या की तथा दमयन्ती के पति वीरशिरोमणि महाराज नल ने अपने समस्त अशुभ कर्मों को जला कर पुनः अपना खोया हुआ राज्य प्राप्त किया।'

अब भी लोगों की मान्यता है कि कामदगिरि के समक्ष जो मनौती मानी जाती है, उसको कामदगिरि भगवान् अवश्य पूर्ण करते हैं।

विभिन्न रामायणों, पद्मपुराण, स्कन्दपुराण, महाभारत, कालिदास विरचित मेघदूत नामक खण्ड काव्य में चित्रकूट का अमित माहात्म्य तथा परम रम्य वर्णन उपलब्ध है। अधिक देखने के इच्छुक इन ग्रन्थों में देखें।

चित्रकूट सर्वदा ही तपोभूमि रही है। महर्षि अत्रि का आश्रम यहाँ ही था। महासती अनसूया महर्षि अत्रि की धर्मपत्नी थी। अत्रि आश्रम के पास बहुत से ऋषि मुनि रहते थे। उन दिनों में वन में महर्षियों के कुल रहा करते थे। किसी एक

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तेजस्वी, तपोधन, शास्त्रज्ञ ऋषि के सहारे आस-पास दूसरे तपस्वी साधननिष्ठ ऋषि-मुनिगण आश्रम बना लेते थे, क्योंकि वीतराग पुरुषों को भी सत्संग सर्वदा प्रिय है। चित्रकूट में ऋषियों का बहुत बड़ा समाज था और उसके संचालक महर्षि अत्रि थे। वहाँ भी समस्त भूमि उन महान देवर्षियों की पद-रज से पवित्र पुण्यप्रद है। भगवान् श्रीराम ने यहाँ निवास किया, इससे इसका माहात्म्य और भी बड़ा हो गया। यह भगवान् राम की नित्य क्रीड़ा-भूमि है, वे चित्रकूट अयोध्या को कभी छोड़ते नहीं हैं। अधिकारी तपस्वी भक्त अब भी उनके दर्शन प्राप्त करते हैं।

अब भी वहाँ अनेक तपस्वी महात्मा रहते हैं। मुख्य तीर्थ स्थान दर्शन यहाँ कामदगिरि भगवान् (विष्णु) का ही है। सीता रसोई, हनुमान धारा जानकीकुण्ड, स्फटिक-शिला, अनसूया (अत्रि आश्रम), गुप्त गोदावरी, भरतकूप, रामशय्या आदि अन्य दर्शनीय स्थल हैं। पयस्विनी पर चार मुख्य घाट हैं—(१) राघव प्रयाग, (२) कैलास घाट, (३) रामघाट, (४) घृतकुल्या घाट। यहाँ तुलसीदासजी के रहने के दो स्थान हैं - (१) रामघाट के पास है, (२) कामदगिरि की परिक्रमा में आता है। इसके अतिरिक्त चित्रकूट में अनेक मन्दिर व दर्शनीय स्थल हैं। आस-पास में अब भी अनेक आश्रम हैं, जहाँ ऋषि-मुनि निवास करते हैं।

गढ़वा—१४

प्रयाग से दक्षिण-पश्चिम की ओर २५ मील दूर गढ़वा ग्राम है। यहाँ उत्खनन से भगवान् विष्णु के दशावतार की प्राचीन मूर्तियाँ मिली थी, जो बहुत ही कलापूर्ण हैं। इनमें ब्रह्मा, विष्णु और शिव की त्रिमूर्ति भी है, जिसकी लम्बाई नौ फुट और चौड़ाई चार फुट है। ये मूर्तियाँ मन्दिर में स्थापित की हुई हैं।

बरेली—१५

यहाँ विष्णु भगवान् का एक विशाल मन्दिर भक्त सेठ श्रीफज्लुलरहमान ने निर्माण कराया था, जो सन् १९६० में बन कर तैयार हुआ और स्व. श्री राजेन्द्र-प्रसादजी ने २५.५.६० को इसका उद्घाटन किया। उस समय इस आधुनिक मन्दिर के निर्माण में कहते हैं, ढाई लाख रुपया व्यय हुआ था।

वाराणसी—काशीपुरी—१६

ऐतिहासिक दृष्टि से काशी संसार की सबसे प्राचीन नगरी है। इसका वेदों में भी कई स्थलों में उल्लेख है। नारद पुराण में लिखा है—

वाराणसी तु भुवनत्रयसारभूता
रम्या नृणां सुगतिदा किल सेव्यमाना।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अत्रागता विविधदुष्कृतकारिणोऽपि
पापक्षये विरजसः सुमनः प्रकाशाः ।।

(नारद पुराण उ. ४८।१३)

'काशी परम रम्य ही नहीं, त्रिलोकी का सार है। वह सेवन किये जाने पर मनुष्यों को सद्गति प्रदान करती है। अनेक पापाचारी भी यहाँ आकर पाप-मुक्त हो जाते हैं और देवताओं की भाँति प्रकाशित होने लगते हैं।'

काशी के विभिन्न क्षेत्रों में किये गये स्नान, दान, जप, तप, अध्ययनादि की अनन्त महिमा लिखी हैं। काशी माहात्म्य के विषय में अधिक जानने के इच्छुक ऋक् ७।१०४।८, ऋक् ३।३०।५, शतप. ब्रा. १३।५।४।१९, २१ आदि, स्कन्द पुराण काशी अध्याय १ से १००, नारद पुराण उ. भा. अध्याय ४८ से ५३, वृहन्नारदी. उ. अ. २९, अग्नि पुराण अध्याय ११२, शिव पुराण शतरू. अध्याय २, पद्मपुराण पूना आनन्द आश्रम स. आदि ख. ३२ से ३७, उत्तर खण्ड अध्याय २३, भविष्य पुराण उ. १३० आदि देखें।

ऋषि-मुनियों का कहना है कि यह पुरी भगवान् शंकर के त्रिशूल पर बसी हुई है और प्रलय में भी इसका नाश नहीं होता। वरुणा और असी नामक नदियों के बीच में बसी हुई होने से इसको वाराणसी भी कहते हैं। यहाँ देह त्याग के समय भगवान् शंकर मरणोन्मुख प्राणी को तारक मन्त्र सुनाते हैं और इससे जीव को तत्त्वज्ञान हो जाता है। उसके सामने अपना ब्रह्मस्वरूप प्रकाशित हो जाता है और उसको मुक्ति प्राप्त हो जाती है। लिखा है—'काश्यां हि मरणान्मुक्तिः।' काशी में कैसा ही प्राणी मरे, वह मुक्त हो जाता है।

काशी भारत का प्राचीनतम विद्या केन्द्र और सांस्कृतिक नगर है। वेदवाणी-संस्कृत का तो यह सर्वदा ही सम्मान्य केन्द्र रहा है। इस काशी पुरी में सभी सम्प्रदाय के लोग रहते हैं और यह उनकी संस्था और उपासना केन्द्र है। यहाँ का मुख्य देवस्थान काशी-विश्वनाथ द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से है। शक्ति पीठों की ५१ गणना में से एक शक्ति पीठ (मणिकर्णिका पर विशालाक्षी) काशी में है। इसके भैरव कालभैरव हैं। पुराणों में काशी की अपार महिमा का वर्णन है। ग्रहण के समय स्नानार्थियों की अत्यन्त भीड़ होती है। काशी शिवमन्दिरों का एक बहुत बड़ा घर है। यहाँ के शिव तथा देवी मन्दिरों की गणना करना तो बहुत ही कठिन है। अन्य देवस्थानों की सूची बनाना भी सहज नहीं है। वस्तुतः यह शैव क्षेत्र है, फिर भी यहाँ अनेक विष्णु मन्दिर हैं। वरुणा और गङ्गा सङ्गम पर 'विष्णुपादोदकतीर्थ' है। घाट की सीढ़ियों पर 'आदि केशव' नामक विष्णु मन्दिर है। राजघाट पर श्रीलक्ष्मीनारायण मन्दिर, मेहता घाट पर नरनारायण मन्दिर, भोंसला घाट पर लक्ष्मीनारायण मन्दिर, मान मन्दिर तथा वाराही मन्दिर;

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिवाला घाट पर हयग्रीव मन्दिर हैं। पञ्चगङ्गा घाट पर विष्णुकाञ्चीतीर्थ तथा विन्दु तीर्थ हैं। पुराना विन्दुंमाधवमन्दिर तोड़ कर औरंगजेब ने मसजिद बनवा दी थी। उस मसजिद के पीछे द्वारिकाधीश तथा राधाकृष्ण के मन्दिर हैं। श्रीअन्नपूर्णा मन्दिर में श्रीभगवान् लक्ष्मीनारायण की भव्य मूर्ति विराजमान है।

काशी-वाराणसी एक वहुत ही दर्शनीय नगर व तीर्थस्थल है। यात्रियों की सुविधा के लिए होटल व धर्मशालाएँ हैं।

अयोध्या—१७

अयोध्या सरयू नदी के दक्षिण तट पर बसी हुई है। स्कन्द पुराण में लिखा है—

अकारो ब्रह्म च प्रोक्तं यकारो विष्णुरुच्यते।
धकारो रुद्ररूपश्च अयोध्या नाम राजते॥
सर्वोपपातकैर्युक्तं ब्रह्महत्यादिपातकैः।
न योध्या शक्यते यस्मात्तामयोध्यां ततौ विदुः॥

(स्कन्द वै. अयोध्या १।६०-६१)

'(अ) कार ब्रह्मा है, (य) कार विष्णु है तथा (ध) कार रुद्र का स्वरूप है अतएव 'अयोध्या' ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर—इन तीनों का समन्वित रूप है। समस्त उपपातकों के साथ ब्रह्म इत्यादि महापातक भी इससे युद्ध नहीं कर सकते, इसलिए इसको अयोध्या कहते हैं।

'मनुना मानवेन्द्रेण सा पुरी निर्मिता स्वयम्।

(रुद्रयामल तन्त्र)

'महाराज मनु ने सर्वप्रथम इस पुरी को वसाया था।'

ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम यहाँ की यात्रा की थी और अपने नाम से एक कुण्ड बनाया था, जिसको ब्रह्मकुण्ड कहते हैं। भगवती सीता ने भी एक कुण्ड बनाया था, उसका नाम सीताकुण्ड है। भगवान् राम ने इस कुण्ड को वरदान देकर समस्त कामपूरक बना दिया। इसमें स्नान करने से मनुष्य पापमुक्त हो जाता है।

भूत शुद्धि तत्त्व में लिखा है—

'श्रीराम धनुषाग्रस्था अयोध्या सा महापुरी।'

'यह महापुरी अयोध्या श्रीरामभद्र के धनुषाग्र पर स्थित है।'

स्कन्द पुराण के अनुसार यह भगवान् के सुदर्शन चक्र पर बसी है। यहाँ गोप्रतारक तीर्थ सरयू में स्थित है। उसमें स्नान करने से प्राणी सब पापों से मुक्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

होता है। यह तीर्थ योगियों को भी दुर्लभ है। कार्तिक में प्रयागराज तीर्थ भी इसमें स्नान करने आते हैं, ऐसी मान्यता है।

तुलसीदासजी ने लिखा है—

अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ।
यह प्रसङ्ग जानै कोउ कोऊ॥

सप्त पुरियों में अयोध्या का प्रथम स्थान है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के भी पूर्ववर्ती राजाओं की राजधानी रही है। इक्ष्वाकु से श्रीरघुनाथजी तक सभी चक्रवर्ती राजाओं ने अयोध्या के सिंहासन को विभूषित किया है। भगवान् श्रीराम की अवतार-भूमि हो कर तो अयोध्या साकेत हो गई। अयोध्या नगरी में कई हजार मन्दिर हैं। मुख्य मन्दिर यहाँ का कनक भवन है, जो ओरछा-नरेश का बनाया हुआ है। इसमें मुख्य मूर्तियाँ सीतारामजी की हैं। सिंहासन पर बड़ी मूर्तियाँ हैं, उनके आगे सीतारामजी की छोटी मूर्तियाँ भी हैं। यहाँ प्राचीन मन्दिर लक्ष्मण घाट पर लक्ष्मण मन्दिर, स्वर्गद्वार पर नागेश्वरनाथ, नागेश्वरनाथ के पास रामपंचायतन मन्दिर, अहल्या बाई घाट पर त्रेतानाथ मन्दिर, श्रीहनुमान गढ़ी, सुग्रीव टीला, अङ्गद टीला, दर्शनेश्वर अयोध्या नरेश के बगीचे में है। यहाँ श्रीराम जन्मभूमि, सीता रसोई, चौबीस अवतार, कोप भवन, रत्न-सिंहासन, आनन्दभवन, रङ्गमहल, साखी गोपाल, तुलसीचोरा, मणिपर्वत हैं।

नये भवन व मन्दिर, साधुओं के अनेक मठ व छावनियाँ हैं। यहाँ अब तक एक बहुत बड़े वाल्मीकि रामायण भवन निर्माण का हो रहा है। यहाँ महर्षि वाल्मीकि शोध संस्थान भी है, जिसमें शोधकार्य चल रहा है। यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालाएँ हैं, साधुओं के स्थान में भी यात्री ठहरते हैं। अयोध्या अब फैजाबाद नगर की बस्ती में मिल जाने से बहुत बड़ा नगर हो गया है। यात्री सरयू में स्नान, श्राद्ध, पिण्डदान करके दर्शन करते हैं।

वाराह क्षेत्र—१८

अयोध्या से २४ मील दूर सरयू-घाघरा नदियों का संगम स्थान है। यह पवित्र वाराह क्षेत्र है। यहाँ वाराह भगवान् का प्राचीन मन्दिर है।

गोरखपुर—१९

बाबा गोरखनाथजी की मुख्य तपःस्थली तथा गद्दी यहाँ ही है। गोरखनाथ जी के वैसे तो भारत में कई स्थान हैं। इनमें से प्रधान मठ— १. गोरखपुर, २. जूनागढ़ गिरिनार पर्वत पर, ३. पेशावर (पश्चिम पाकिस्तान), ४-भडंगनाथ (दक्षिण भारत) हैं। गोरखपुर एक अच्छा शहर है। यहाँ का मुख्य मंदिर श्रीगोरखनाथजी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का है। गोरखपुर स्टेशन से एक मील दूर रेलवे लाइन के पार एक विष्णु मन्दिर है। इसमें भगवान् विष्णु की प्राचीन प्रतिष्ठित मूर्ति है। गोरखपुर का गीता प्रेस विश्व विख्यात संस्था है जिसमें धार्मिक, आध्यात्मिक व सनातन धर्म के अनेक ग्रन्थों का मुद्रण, प्रकाशन होता है। कल्याण व कल्पतरु धार्मिक मासिक पत्रों का प्रकाशन कर यह संस्था सनातन धर्म की अत्यन्त ठोस सेवा कार्य कर रही है। इसका कलापूर्ण द्वार तथा लीला चित्र-मन्दिर देखने योग्य हैं। यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशाला इत्यादि हैं।

मिथिला (जनकपुर)—२०

जनकपुर तीर्थ का प्राचीन नाम मिथिला, तीरभुक्ति, विदेह तथा विदेहनगर है। जनकपुर प्राचीन मिथिला की राजधानी थी। इसका किला अब भी है। किले के चारों ओर अनेक शिव पाँच-पाँच कोस दूरी पर क्रम से स्थापित हैं जिनकी स्थापना राजकीय रक्षा के लिए की गयी थी। इनमें से कितने ही शिवमन्दिर-मूर्तियाँ अब भी विद्यमान हैं। किले के चारों ओर महामुनि विश्वामित्र, गौतम, वाल्मीकि तथा याज्ञवल्क्य के आश्रम थे, जो अब भी किसी न किसी न रूप में विद्यमान हैं। विदेहराज जनक ब्रह्मज्ञानियों में सर्वोपरि राजऋषि थे।

मिथिला माहात्म्य

गण्डकीतीरमासाद्य चम्पारण्यान्तकं शिवे।
विदेहभूः समाख्याता तैरमुक्ता विद्या तु सा॥

(शक्ति संगम तंत्र, पटल ७)

यह "तैरभुक्त' शब्द ही आज तिरहुत हो गया है। वेदों तथा उपनिषदों (शतपथ ब्रा. १।४।१।१०, तैत्तिरीय ब्रा. ३।१०।९।९, बृहदारण्यक उप. ३।८।२, ४।२।६, कौषीतकि १ इत्यादि) में इसकी बार-बार चर्चा आयी है। अधिक क्या कहा जाय, यहाँ की वेश्याएँ भी ब्रह्मज्ञानिनी हुई हैं। पिंगला ने कहा था—

विदेहानां पुरे ह्यस्मिन्नहमेकैव मूढधीः।
यान्यमिच्छन्त्यसत्यस्मादात्मदात् काममच्युतात्॥

(श्रीमद्भागवत ११।८।३४)

'इस विदेह नगरी में मैं ही अकेली ऐसी मूर्खा हूँ जो; अविनाशी, परम प्रिय परमात्मा को छोड़ कर दूसरे पुरुष की अभिलाषा करती हूँ।

पराम्बा भगवती जगज्जननी जानकी की जन्मभूमि होने से इसका अतुल माहात्म्य है। जनककूप में स्नान करके ही मनुष्य विष्णुलोक को प्राप्त हो जाता है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनकस्य तु राजर्षेः कूपस्त्रिदशपूजितः ।
तत्राभिषेकं कृत्वा तु विष्णुलोकमवाप्नुयात् ।।

(पद्म पुराण आदि. ३८।३१)

यहाँ के दर्शनीय स्थानों में श्रीराम मन्दिर में, सिद्ध महात्मा चतुर्भुज गिरि के हाथों से यहाँ के अक्षय वट के नीचे से उखाड़ी गयी अति प्राचीन श्रीरामपञ्चायतन मूर्तियाँ, श्री लक्ष्मीनारायण भगवान् की मूर्तियाँ तथा दशावतार की मूर्तियाँ स्थापित हैं। वृहद् विष्णुपुराण के अनुसार यही स्वर्ण मण्डप स्थान है। इसी के घेरे में हनुमान मन्दिर, चतुर्भुजनाथ मन्दिर, मण्डप तथा देवी मन्दिर हैं। देवी मन्दिर में राजा जनक की कुलदेवी त्रिपुर सुन्दरी देवी का मृतिकापीठ दर्शनीय है। यह शक्तिपीठ माना गया है।

जानकी मन्दिर जिसको नौलखा, जानकीमहल, शीशमहल भी कहते हैं, दर्शनीय है। इसी के घेरे में सुनयनाजी जानकी मन्दिर भी है। यहाँ ही अङ्गराग से उद्धृत सीता, राम-लक्ष्मण की मूर्तियाँ तथा जनक, सुनयना एवं शतानन्दजी की मूर्तियाँ दर्शनीय हैं। इसके अतिरिक्त जनक-मन्दिर, लक्ष्मण मन्दिर, रङ्गभूमि, रत्नसागर मन्दिर, दशरथ मन्दिर देखने योग्य हैं।

पटना–२१

पटना विहार का सर्वोत्तम मुख्य नगर है और गङ्गा के तट पर बसा हुआ है। महाराजगंज में पटन देवी का मन्दिर है। चौक में हरिमन्दिर तथा उसके दक्षिण की ओर एक गली में छोटी पटनदेवी मन्दिर है; उसमें महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती की मूर्तियाँ हैं। गुरुगोविन्दसिंह की जन्मभूमि पर मन्दिर बना हुआ है। यहाँ बिड़ला बन्धुओं द्वारा निर्माण कराया हुआ उत्तम, सुन्दर श्रीलक्ष्मीनारायण का दर्शनीय मन्दिर है।

गया–२२

गया भारतवर्ष का प्रमुख पितृतीर्थ है पितर कामना करते हैं कि उनके वंश में कोई ऐसा पुत्र उत्पन्न हो, जो गया में जाकर वहाँ उनका श्राद्ध करे। गया में जाकर श्राद्ध व पिण्डदान करने से पितरों की अक्षय तृप्ति होती है। एक कोस क्षेत्र गया-सिर माना जाता है, जो ढाई कोस तक गया है और पाँच कोस तक गया क्षेत्र है। इसी के मध्य में यहाँ के सब तीर्थ आ जाते हैं। गया पूर्वी रेलवे पर मुख्य स्टेशन है। पटना से भी गया-लाइन है। कलकत्ता से गया होकर दिल्ली सीधी रेल लाइन है। यात्रियों के ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाएँ, होटल हैं। यात्री पण्डों के घरों पर भी ठहरते हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गया माहात्म्य

गयायां नहि तत् स्थानं यत्र तीर्थं न विद्यते।
सांनिध्यं सर्वतीर्थानां गयातीर्थं ततो वरम् ।।
ब्रह्मज्ञानेन किं साध्यं गोगृहे मरणेन किम् ।
वासेन किं कुरुक्षेत्रे यदि पुत्रो गयां व्रजेत् ।।

(वायु पुराण गया माहा. ३)

'गया में ऐसा कोई स्थान नहीं है, जो तीर्थ न हो। वहाँ सभी तीर्थों का सान्निध्य है, अतः गया तीर्थ सर्वश्रेष्ठ है। ब्रह्मज्ञान, कुरुक्षेत्र के वास तथा गो-शाला में मरने से क्या लेना है, यदि पुत्र गया चला जाय (और वहाँ पिण्डदान कर दे)।' गया-श्राद्ध-पिण्डदान माहात्म्य अधिक रूप में देखने वालों को पद्मपुराण स्वर्ग. ३८।१७ तथा आदि. ३८।२-४, वायुपुराण, अग्निपुराण, महाभारत. वन. तीर्थ यात्रा ८४।८२-८४ पढ़ लेना चाहिये। गया श्राद्ध-पिण्डदान विधि माहात्म्य पुस्तक अलग से मिलती है।

गया का मुख्य मन्दिर विष्णुपद है। यह स्थान रेलवे स्टेशन से दो मील दूर है। गया में अन्य तीर्थ, देवस्थान, पितृश्राद्ध-पिण्डदान स्थान भी दूर-दूर हैं, किन्तु सब ही स्थानों पर पहुँचने के लिए ताँगे रिक्शे सवारियाँ मिलती हैं। गया का प्रधान विशाल विष्णुपद मन्दिर फल्गु नदी के किनारे पर है। मन्दिर में अष्ट-कोण वेदी पर भगवान् श्री विष्णु का चरण चिह्न बना हुआ है। मन्दिर के बाहर सभामण्डप है तथा लोगों के श्राद्ध करने के लिए दो बड़े मण्डप हैं। पास ही एक मन्दिर में गरुड़जी की प्रतिमा है। इस मन्दिर के दक्षिण में जगन्नाथजी का मन्दिर है। वहीं दूसरे मन्दिर में भगवान् लक्ष्मीनारायण की मूर्तियाँ हैं। विष्णुपद-मन्दिर से कुछ ही दूर पूर्वोत्तर फल्गु नदी के किनारे गदाधर भगवान् का मन्दिर है। गदाधर-भगवान् की चतुर्भुज मूर्ति है। इसके जगमोहन में श्रीराम, लक्ष्मण, सीताजी तथा ब्रह्मा की मूर्तियाँ हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ कई देवस्थान हैं।

गया में (पुन-पुन श्राद्ध के अतिरिक्त) यात्री के श्राद्ध कर्म सात दिन हैं। (अधिकांश लोग उन्हें १५ या १७ दिन में विभाजित करके पूर्ण करते हैं) इनमें से प्रथम दिन फल्गु में स्नान और फल्गु के तट पर ही श्राद्ध किया जाता है।

मुक्तिनाथ—२३

नेपाल की राजधानी काठमांडू से यह स्थान १४० मील दूर है। इसका नाम शालग्राम क्षेत्र भी है। भगवान् हरि यहाँ पर्वत रूप में विराजमान हैं। वाराह पुराण के अनुसार किसी कल्प में गज-ग्राह का युद्ध यहाँ ही हुआ था, भगवान् विष्णु ने सुदर्शन चक्र द्वारा ग्राह का मुख विदीर्ण करके गजराज का उद्धार किया

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

था। इस क्षेत्र में गण्डकी नदी है, उसको नारायणी या शालग्रामी भी कहते हैं। गण्डकी नदी का उद्गम दामोदर कुण्ड है। इसके किनारे जहाँ तक शालग्राम पर्वत है वह पूरा शालग्राम क्षेत्र है। रंग, आकार, चक्र, तथा मुखादि भेद से शालग्राम शिला हरि, विष्णु, कृष्ण, राम, नृसिंह आदि की प्रतीक मानी जाती हैं।

कलकत्ता–२४

कलकत्ता भारत की महानगरी है। यात्रियों के ठहरने के लिए अनेक होटल व धर्मशालाएँ हैं। यहाँ बड़ा बाजार में श्रीसत्यनारायण मन्दिर है। दाउजी, साँवलियाजी, श्रीराम मन्दिर, सुरेकाजी का मन्दिर भी वैष्णव मन्दिरों में ही माने जाते हैं। किन्तु इन सबसे अधिक मान्यता बाँगड़ों द्वारा निर्मित श्रीवैकुण्ठनाथ भगवान् के मन्दिर की है। यहाँ श्रीदेवी और भूदेवी सहित चतुर्भुज भगवान् श्री वैकुण्ठनाथजी का दर्शन बड़ा मनोरम चित्ताकर्षक है। पूजा, अर्चा, भोग-राग, आरती की उत्तम व्यवस्था है। यहाँ कथा-कीर्तन, प्रवचन, उत्सव, अनुष्ठान का कार्यक्रम सर्वदा चलता ही रहता है।

बतद्रवा–२५

यह स्थान आसाम प्रदेश में है और नोगाँव जनपद में आता है। यहाँ का विष्णु-मन्दिर पूजा-अर्चना एवं दर्शन करने योग्य है।

याजपुर (उड़ीसा)–२६

यह स्थान कटक से ४४ मील है। क्योंझर रोड़ स्टेशन से २ मील दूर याजपुर है। यह स्थान उत्कल (उड़ीसा) का प्रमुख तीर्थस्थान है। पहले ब्रह्माजी द्वारा यज्ञ किये जाने पर, इसको यागपुर या याजपुर कहते हैं। यहाँ अन्य देवी-देवताओं के मन्दिरों के अतिरिक्त वैतरणी नदी के घाट पर भगवान् विष्णु का मन्दिर है। वैतरणी नदी को पार करके भगवान् वाराह के मन्दिर में जाना पड़ता है।

सिंगापुर (उड़ीसा)–२७

जाजपुर-क्योंझर रोड़ से १२ मील गढ़ मधुपुर स्टेशन है। यहाँ से दो मील दूर सिंगापुर ग्राम है। इस ग्राम में नारायण तीर्थ है। इस नारायण तीर्थ-सरोवर में भगवान नारायण की शेषशायी मूर्ति पूरे वर्ष भर जल में डूबी रहती है। इसलिए इसको गङ्गा-नारायण भी कहते हैं। मेष संक्रान्ति के दिन यह मूर्ति जल के बाहर आती है। उस दिन बड़ा मेला होता है।

भुवनेश्वर–२८

भुवनेश्वर उत्कल (उड़ीसा) प्रान्त की राजधानी तथा अच्छा शहर है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भुवनेश्वर को प्राचीन ग्रन्थों में एकाम्रक्षेत्र के नाम से बतलाया गया है। इस स्थान के अधिष्ठातृ-देवता अनन्त वासुदेव माने गये हैं। भगवान् शंकर इन्हीं की अनुमति से इस क्षेत्र में पधारे थे। फिर भगवान् वासुदेव ने शंकरजी को नित्य निवास करने का अनुरोध करके सर्वदा के लिए रोक लिया। बिन्दु-सरोवर के मणिकर्णिका घाट पर ऊपर के भाग में अनन्त वासुदेव मन्दिर है। मुख्य मण्डप में सुभद्रानारायण तथा श्रीलक्ष्मीजी के श्रीविग्रह विराजमान हैं। बिन्दु-सरोवर के चारों ओर बहुत से मन्दिर हैं। भुवनेश्वर में मुख्य मन्दिर लिङ्गराज का है। लिङ्गराज का नाम ही भुवनेश्वर है। मन्दिर उच्च प्राकार के भीतर हैं। इस मन्दिर की शिल्पकला उत्कृष्ट है। लिङ्गराज के निजमन्दिर में चपटा अनगढ़ चक्राकार हरिहरात्मक बुद-बुद लिङ्ग है। इनकी पूजा भी हरिहर-मन्त्र से ही होती है। प्राकार के भीतर बहुत से देवी-देवताओं के मन्दिर हैं. उनमें लक्ष्मी-नृसिंह मन्दिर भी दर्शनीय हैं। भुवनेश्वरों के मन्दिरों की बहुत बड़ी संख्या है। कितने ही मन्दिर कलादृष्टि से सुन्दर हैं। कई मन्दिर ऐसे जीर्ण-शीर्ण हो रहे हैं कि अभी गिरने वाले हैं।

श्रीजगन्नाथपुरी—२९

बदरीनाथ सत्ययुग के, रामेश्वर त्रेता के, द्वारिका द्वापर के मुख्य धाम हैं; किन्तु कलियुग में परम पावन धाम जगन्नाथपुरी का अनन्त माहात्म्य है। यह श्रीक्षेत्र पुरुषोत्तमपुरी तथा शङ्खक्षेत्र भी कहा जाता है; क्योंकि इस पूरे पुण्यक्षेत्र की आकृति शङ्ख के समान ही है। शाक्त लोग इसको उड्डियान पीठ कहते हैं। ५१ शक्तिपीठों में से यह भी एक पीठस्थल है।

श्रीजगन्नाथजी के महाप्रसाद की महिमा तो भुवन-विख्यात है। यहाँ के प्रसाद में छुआ-छूत दोष तो माना ही नहीं जाता, उच्छिष्टता का भी दोष नहीं माना जाता है। व्रत-पर्वादि के दिन भी ग्रहण करना उचित मानते हैं। भगवान् का प्रसाद अन्न-पदार्थ नहीं होता है, यह चिन्मय तत्त्व है। जगन्नाथपुरी में अनेक मन्दिर व तीर्थस्थान हैं। मुख्य मन्दिर श्रीजगन्नाथजी का है। मन्दिर के दो परकोटे और चारों ओर चार द्वार हैं। जगन्नाथजी के निज मन्दिर में एक वेदी पर श्री जगन्नाथ, सुभद्रा तथा बलरामजी की दिव्य मूर्तियाँ विराजमान हैं। वेदी के एक ओर सुदर्शन चक्र प्रतिष्ठित है। यहाँ ही नीलमाधव, लक्ष्मी तथा सरस्वती की छोटी मूर्तियाँ हैं। वैसे यहाँ अनेक समय पर अनेक उत्सव मनाये जाते हैं; किन्तु आषाढ़ शुक्ला २ को रथयात्रा महोत्सव सबसे बड़ा उत्सव होता है। यहाँ के मन्दिर के घेरे में अनेक मण्डप, मन्दिर हैं। उनमें एक लक्ष्मीजी का मन्दिर है, इसके पास ही स्वामी शंकराचार्य तथा लक्ष्मीनारायण की मूर्तियाँ हैं। यहाँ के मन्दिर में यात्री एक बार श्री जगन्नाथजी के निज मन्दिर में भीतर जाकर चरण स्पर्श भी कर सकते हैं। जगमोहन में से दर्शन तो प्रायः रात्रि में पट बन्द होने के अतिरिक्त सभी समय

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

होते हैं। जगन्नाथपुरी में यात्री समुद्र स्नान भी करते हैं। यात्रियों के ठहरने के लिए उचित व्यवस्था है।

ब्रजराजनगर (उड़ीसा)–३०

ब्रजराजनगर उत्कल (उड़ीसा) प्रान्त में अच्छा नगर है। यहाँ ओरियण्ट पेपर मिल भी है। ब्रजराजनगर में बिरला बन्धुओं द्वारा निर्माण कराया हुआ अच्छी ऊंचाई पर भगवान् लक्ष्मीनारायण का उत्तम मन्दिर है। निज मण्डप में श्वेत संगमरमर की लक्ष्मीजी सहित भगवान् नारायण की चतुर्भुज खड़ी हुई मूर्ति प्रसन्न मुद्रा में स्थापित है। मन्दिर में भगवद्गीता के अठारह अध्याय संगमरमर पत्थर पर लिखे हुए लगे हैं।

शिवपुरी (मध्य प्रदेश)–३१

शिवपुरी में नगर के पूर्व में सिद्धेश्वर के प्राचीन मन्दिर में भगवान् नारायण की एक प्रतिमा स्थापित है, जो किसी समय पारासरी गाँव के पास मिली थी। यह चतुर्भुज मूर्ति बहुत प्राचीन है। क्षीरसागर में शेष शय्या पर भगवान् विष्णु विराजित हैं, पास ही लक्ष्मीजी हैं। भगवान् की चारों भुजाओं में आयुध हैं। भगवान् के चारों ओर दशावतार की मूर्तियाँ भी उसी एक ही पाषाण पर सुशोभित हैं। श्री चरणों के पास कमल पुष्प है और जय-विजय वन्दना कर रहे हैं। कला की दृष्टि से यह मूर्ति अति उत्तम व दर्शनीय है।

ओरछा (म. प्र.)–३२

ओरछा से चार मील दूर एक पहाड़ी पर लक्ष्मी मन्दिर है, उसमें लक्ष्मी-नारायण की युगल मूर्ति है।

शबरी-नारायण (म. प्र.)–३३

बिलासपुर से शबरी नारायण ४० मील दूर है। यहाँ भगवान् लक्ष्मीनारायण का मुख्य मन्दिर है। मूर्ति चतुर्भुज है।

विदिशा (भेलसा) उदयगिरि-गुफा–(मध्य प्रदेश)–३४

भोपाल से ३४ दूर मील भेलसा अच्छा नगर है। यह बेतवा नदी के तट पर बसा है। नदी तट पर अनेक देवी-देवताओं के मन्दिर हैं। इसका प्राचीन नाम विदिशा है। भेलसा से ५ मील दूर पश्चिम की ओर उदयगिरि पर्वत हैं। इस पर्वत पर बीस गुफाएं हैं। जिनमें दो जैन गुफाएं हैं और शेष अठारह सनातनधर्मी मूर्तियों की हैं। इन गुफाओं में मूर्तियाँ अत्यन्त कलापूर्ण तथा सुन्दर बनी हुई हैं। उनमें एक गुफा में भगवान् वाराह की प्राचीन विशाल सुन्दर मूर्ति है। एक गुफा में

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बारह फुट लम्बी शेषशायी भगवान् विष्णु की प्रतिमा प्रभावोत्पादक, उत्तम व कला-पूर्ण है। इन गुफ़ाओं में भगवान् विष्णु की अनेक कलापूर्ण सुन्दर प्रतिमाएँ हैं।

ग्वालियर–३५

यहाँ देवी-देवताओं के अनेक मन्दिर हैं; किन्तु सर्वोपरि उत्तम कला युक्त 'सास-बहू' का मन्दिर है। जिसका कला सौन्दर्य तथा भगवान् विष्णु की प्रतिमा का मनोरम दर्शन प्रमुख है।

ऐरन (मध्य प्रदेश)–३६

सागर से ४७ मील उत्तर-पश्चिम की ओर मण्डी-बामोरा स्टेशन है, वहाँ से ६ मील दूर यह स्थान है। यहाँ कई मन्दिरों के भग्नावशेष हैं। उनमें नृसिंह मंदिर वराह मंदिर, महाविष्णु मन्दिर तथा भगवान् श्रीकृष्ण की बाल-लीला मूर्तियाँ अत्यन्त दर्शनीय हैं।

खजुराहो (मध्य प्रदेश)--३७

यहाँ के मन्दिर कला की दृष्टि से विश्वविख्यात हैं। वैष्णव मंदिरों के समूह के अन्तर्गत लक्ष्मण मन्दिर सर्वोत्तम है, इस मन्दिर में विष्णु भगवान् की चतुर्भुज मूर्ति है। इनके अतिरिक्त वामन एवं वराह मन्दिर में भी मूर्तियाँ कलापूर्ण व दर्शनीय हैं।

भोपाल (मध्य प्रदेश)--३८

भोपाल मध्य प्रदेश की राजधानी तथा बड़ा शहर है। वैसे यहाँ कई मंदिर हैं, किन्तु बिरला बन्धुओं द्वारा निर्माण कराया हुआ विशाल विष्णु मंदिर प्रमुख है।

शोणितपुर (मध्य प्रदेश)--३९

मध्य रेलवे लाइन पर इटारसी से ३० मील दूर सोहागपुर स्टेशन है। इसके पास ही शोणितपुर है। यहाँ पर भगवान् नृसिंह का प्राचीन मंदिर है। शोणितपुर से कुछ ही दूर पर नर्मदा के किनारे ब्रह्माण्ड घाट पर वाराह भगवान् की मूर्ति हैं। इसके कुछ ही दूर पर वाराह गङ्गा भी है।

मझोली (मध्य प्रदेश)--४०

मध्य रेलवे की इटारसी-इलाहाबाद लाइन पर सिरोहा रोड़ स्टेशन है, जो जबलपुर से ३४ मील है। सिरोहा से गुवरा जाने वाली मोटर बस लाइन पर सिहोरा से १२ मील पर मझोली ग्राम आता है। मझोली में भगवान् वाराह

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का अत्यन्त प्राचीन व प्रसिद्ध मन्दिर है। इस मन्दिर में एक ही पत्थर में सिंहासन तथा मूर्ति बनी हुई है। यह वाराह भगवान् की मूर्ति लगभग ढाई गज ऊँची है। वाराह भगवान् के शरीर में सर्वत्र विभिन्न देवताओं की मूर्तियाँ अङ्कित हैं। यह सर्व देवमयी श्वेत वाराह की मूर्ति इधर बहुत प्रतिष्ठित है। मन्दिर में अन्य और भी देवी-देवताओं की मूर्तियाँ हैं।

राजिम (मध्य प्रदेश)--४१

पूर्वी रेलवे की एक लाइन रायपुर से राजिम तक जाती है। रायपुर से राजिम २८ मील दूर है। यहाँ महानदी में दो नदियाँ पैरी और सोट आकर मिलती हैं। इसको यहाँ त्रिवेणी कहते हैं। यहाँ राजीव लोचन भगवान् का प्राचीन मन्दिर है। मन्दिर के अन्दर ही दशावतार तथा वालमुकुन्दजी के मन्दिर हैं। राजिम बस्ती में २२ मन्दिर हैं।

रतनपुर (मध्य प्रदेश)--४२

कटनी-विलासपुर लाइन पर बिलासपुर से घुटकू स्टेशन है। घुटकू से रतनपुर के लिए रास्ता जाता है। यह स्थान दुल्हरा नदी के तट पर है। रतनपुर छत्तीसगढ़ की पुरानी राजधानी है। इसको छोटी काशी भी कहते हैं। रतनपुर में तथा आस-पास में कई मन्दिर हैं। यहाँ के किले में श्रीलक्ष्मीनारायण मन्दिर है। वहीं जगन्नाथजी का मन्दिर है।

सकलनारायण--४३

बस्तर (म. प्र.) जिले की तहसील भोपाल-पटनम् से लगभग ६ मील दूर पेद्दामाटूर ग्राम है। उनके पास ही यह तीर्थ है। गाँव के पास चितवांगू नदी है। नदी के पास एक मन्दिर में भगवान् विष्णु की मूर्ति है। यह मूर्ति प्राचीन और सुन्दर है। यात्री नदी में स्नान करके ही भगवान् विष्णु का दर्शन करते हैं। इसके बाद पर्वत पर चढ़ते हैं। पर्वत पर एक अन्धकारमय गुफा है, अन्दर पानी का झरना बहता है। प्रकाश लेकर ही अन्दर जाते हैं। यह गुफा अन्दर से कई जगह ऐसी संकीर्ण है कि लेट कर जाना पड़ता है। गुफा में सीताजी, लक्ष्मणजी, बलरामजी की मूर्तियाँ हैं। यहाँ एक मूर्ति श्रीकृष्णजी की है, इसको सकल नारायण कहते हैं। एक गाय के सहारे खड़े हुए श्रीकृष्ण की मूर्ति है। एक मूर्ति गोवर्धन की है। पास में गोपी भी है। यहाँ का यह प्रसिद्ध तीर्थ है। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से सात दिन मेला लगता है।

मण्डला (मध्य प्रदेश)--४४

यहाँ किले में राजराजेश्वरी मन्दिर है। मन्दिर के सामने शिव मन्दिर से
CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
टिकी हुई भगवान् विष्णु की प्राचीन चतुर्भुज मूर्ति बड़ी ही भावपूर्ण है।

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हँडिया-नेमावर (मध्य प्रदेश)--४५

नर्मदा के तट पर हँडिया नगर है। हरदा स्टेशन से वह १३ मील दूर है। हँडिया से पश्चिम की ओर नर्मदा के दूसरे तट पर नेमावर में सिद्धनाथ मन्दिर है। यहाँ महर्षि जमदग्नि ऋषि की तपोभूमि मानी जाती है। यहाँ नर्मदा में सूर्यकुण्ड है, जो गर्मी में दिखाई देता है। इस कुण्ड में शेषशायी भगवान् की मूर्ति है। इसको नर्मदा का नाभि स्थान (मध्य भाग) माना जाता है।

विष्णुपुरी-ओंकारेश्वर (मध्य प्रदेश)--४६

अजमेर-खण्डवा लाइन पर खण्डवा से ३७ मील पहले ओंकारेश्वर रोड़ स्टेशन है। यह स्थान इन्दौर से ४७ मील दूर है। यहाँ से ओंकारेश्वर सात मील है। स्टेशन से ओंकारेश्वर के पास नर्मदा के तट तक मोटर-बस तथा तांगा सवारी मिलती है। यात्री ओंकारेश्वर रोड़ से चलकर जब नर्मदा तट पर पहुँचते हैं, वहाँ ही पहले विष्णुपुरी है। यहाँ विष्णुपुरी में अमलेश्वरजी तथा भगवान् विष्णु के मन्दिर दर्शनीय हैं। विष्णुपुरी से नाव द्वारा नर्मदा पार करने पर दूसरे तट पर ओंकारेश्वर है।

चौबीस अवतार (मध्य प्रदेश)--४७

ओंकारेश्वर से (नर्मदाजी के ऊपर की ओर) एक मील दूर, जहाँ कावेरी-धारा नर्मदाजी से पृथक् हुई है, उस स्थान पर वहाँ चौवीस अवतार तथा पशुपति-नाथजी का मन्दिर है।

मेहकर (मेघंकर) मध्य प्रदेश--४८

तीर्थं मेघंकरं नाम स्वयमेव जनार्दनः।
यत्र शार्ङ्गधरो विष्णुर्मेखलायामवस्थितः॥

(मत्स्य पुराण २२।४०)

'मेघंकर तीर्थ साक्षात् भगवान् जनार्दन का ही स्वरूप है। इसकी मेखला में शार्ङ्ग-धनुष धारण किये हुए भगवान् अवस्थित हैं। यहाँ स्नान करने का बड़ा माहात्म्य है। खामगाँव स्टेशन से मेहकर (मेघंकर) स्थान ५० मील दूर है। नदी के तट पर खूब ऊँचाई पर श्रीशार्ङ्गधर भगवान् का अत्यन्त प्राचीन भव्य मन्दिर है। इसका सभा-मण्डप विशाल एवं कलापूर्ण है। इस मन्दिर में जो मूर्ति है, वह भवन की नींव खोदते समय एक काष्ठ की पेटी में पूजा-सामग्री सहित प्राप्त हुई थी। वह स्थान प्राचीन खण्डहर था, कई और भी मूर्तियाँ यहाँ मिली थी, किन्तु उस समय अंग्रेज-अधिकारियों ने उन्हें लन्दन म्यूजियम में भेज दिया।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जनता के आग्रह से भगवान् शार्ङ्गधर की यह मूर्ति रख ली गई, इस मूर्ति की उसी समय प्रतिष्ठा हुई। यह मूर्ति ११ फुट की शालग्राम शिला में बनी हुई है। भगवान् के समीप श्रीदेवी, भूदेवी तथा जय-विजय की छोटी मूर्तियाँ हैं। कला की दृष्टि से यह मूर्ति परम सुन्दर है। पुराणों में जिस प्रकार शार्ङ्गधर भगवान् के दर्शन का उल्लेख है, यह वही मूर्ति है। यहाँ मार्गशीर्ष शुक्ला पञ्चमी से पूर्णिमा तक महोत्सव होता है।

अमरकण्टक (मध्य प्रदेश)--४६

कटनी-बिलासपुर रेल्वे शाखा में कटनी से १३५ मील और बिलासपुर से ६३ मील दूर पेंडरा रोड़ स्टेशन है। इस स्टेशन से रीवां से आने वाली मोटर-बस मिल जाती है, जो कबीर चौतरा होती हुई अमरकण्टक जाती है। अमरकण्टक में अहिल्याबाई की बहुत बड़ी धर्मशाला है। यात्री प्रायः इसी में ठहरते हैं।

अमरकण्टक-माहात्म्य

चन्द्रसूर्योपरागेषु गच्छेद् योऽमरकण्टकम्।
अश्वमेधाद् दशगुणं प्रवदन्ति मनीषिणः॥
स्वर्गलोकमवाप्नोति तत्र दृष्ट्वा महेश्वरम्।
तत्र ज्वालेश्वरो नाम पर्वतेऽमरकण्टके॥
तत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः।
अमरा नाम देवास्ते पर्वतेऽमरकण्टके।.....
कोटिश ऋषिमुख्यास्ते तपस्तप्यन्ति सुव्रताः।
(पद्म पुराण आदि. १५।७४-८०)

चन्द्र या सूर्य ग्रहण के समय जो अमरकण्टक पर्वत पर जाता है, वह अश्वमेधयज्ञ का दस गुना फल प्राप्त कर लेता है—यह विद्वानों का कथन है। अमरकण्टक पर्वत पर ज्वालेश्वर नाम के महादेव हैं, उनका दर्शन कर मनुष्य स्वर्गलोक का अधिकारी होता है। अमरकण्टक में स्नान करने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता, इस पर्वत पर करोड़ों देवता तथा मुख्य ऋषिगण विविध व्रतों का पालन करते हुए तप करते हैं। नर्मदा तथा शोणभद्र का यही उद्गम स्थल है। यहाँ नर्मदाजी मेकल पर्वत पर अमरकण्टक ग्राम के एक कुण्ड से निकली हैं। यह कुण्ड ग्यारह कोने का पक्का बना हुआ है। इस कुण्ड के पश्चिम में एक गोमुख है उसमें से इस कुण्ड में जल आता रहता है। इस कुण्ड को कोटि-तीर्थ कहते हैं। इस कोटि-तीर्थ के उत्तर में नर्मदेश्वर, अमरकण्टेश्वर मन्दिर है। कुछ दूर पर नर्मदा, अमरनाथ तथा और कई मन्दिर हैं। यहाँ अमरकण्टक में भगवान् विष्णु

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का एक अति प्राचीन मन्दिर है। काले पत्थर से बनी विष्णु प्रतिमा चतुर्भुजी चारों आयुधों सहित सुशोभित है तथा पास ही लक्ष्मीजी चरण वन्दना कर रही है। इस मूर्ति में मण्डलाकार दशावतार की अलग-अलग मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् विष्णु के एक ही अङ्ग से मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्धि और कल्कि अवतारों का प्रादुर्भाव हुआ है।

उज्जैन (अवन्तिका) (मध्य प्रदेश)--५०

भोपाल-उज्जैन लाइन, आगरा-उज्जैन लाइन, नागदा-उज्जैन लाइन, फतेहाबाद-उज्जैन रेलवे लाइन हैं। इनमें किसी के द्वारा उज्जैन पहुँचा जा सकता है। यहाँ ठहरने के लिए अनेक धर्मशाला, होटल हैं। यात्री पंडों के यहाँ भी ठहरते हैं।

अवन्तिका माहात्म्य

महाकालः सरिच्छिप्रा गतिश्चैव सुनिर्मला।
उज्जयिन्यां विशालाक्षि वासः कस्य न रोचयेत्॥
स्नानं कृत्वा नरो यस्तु महानद्यां हि दुर्लभम्।
महाकालं नमस्कृत्य नरो मृत्युं न शोचयेत्॥
मृतः कीटः पतङ्गो वा रुद्रस्यानुचरो भवेत्॥

(स्कन्द पुराण आव. अवन्तिका म. २६।१७-१९)

'जहाँ भगवान् महाकाल हैं, शिप्रा नदी है और सुनिर्मल गति प्राप्त होती है, उस उज्जयिनी में भला, किसको रहना अच्छा नहीं लगेगा। महानदी शिप्रा में स्नान करके, जो कठिनाई से मिलता है तथा महाकाल को नमस्कार कर लेने पर फिर मृत्यु की कोई चिन्ता नहीं रहती। कीट या पतंग भी मरने पर रुद्र का अनुचर होता है।'

यहाँ मुख्य तीर्थ शिप्रा, रुद्रसरोवर है; यहाँ के मुख्य देवता महाकाल, जो द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में हैं तथा ५१ शक्ति पीठों में से एक शक्ति पीठ हरसिद्धि देवी हैं। दोनों के ही मुख्य मंदिर हैं। यह अवन्तिकापुरी सप्त मोक्षदा पुरियों में से एक पुरी है। यहाँ बारह वर्ष में एक बार कुम्भ तथा छह वर्ष में अर्द्धकुम्भी होती है। यहाँ के दर्शनीय स्थान हैं—महाकाल मन्दिर, हरसिद्धि देवी, बड़े गणेश, गोपाल मंदिर, गढ़-कालिका, भतृहरि गुहा, काल भैरव, सांदीपनि आश्रम, सिद्धवट, मंगलनाथ, वेधशाला, शिप्रा, विक्रम विश्वविद्यालय आदि। स्कन्द पुराण के अनुसार यहाँ शिवपुरी, विष्णुपुरी, और ब्रह्मपुरी तीनों वर्तमान है। यह पुरी मुख्यतः शैव क्षेत्र है; किन्तु यहाँ के विष्णु मंदिर भी दर्शनीय हैं। गढ़कालिका पर चतुर्व्यूह मन्दिर अनोखा है, जहाँ एक ही मूर्ति में वासुदेव संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध विराजमान

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है। अनन्तनारायण मंदिर, बलराम मंदिर, जनार्दन मन्दिर, कपिलतीर्थनारायण मंदिर, ऋषिकेश मंदिर, वराह मंदिर, वामन मंदिर, नई सड़क पर शेषनारायण मन्दिर दर्शनीय हैं। यहाँ प्रमुख वैष्णव सम्प्रदायों की गद्दियाँ भी हैं।

बिरलाग्राम (नागदा) मध्य प्रदेश—५१

नागदा चम्बल (चर्मवन्ती) नदी के तट के पास ही इतिहास प्रसिद्ध बहुत प्राचीन नगर है। नागदा, दिल्ली से बम्बई जाने वाली लाइन पर एक प्रमुख जंक्शन है। नागदा से एक दूसरी लाइन उज्जैन जाती है। नागदा, बस द्वारा यात्रा करने से ५५ किलोमीटर और इन्दौर से १२० किलोमीटर है। नागदा जंक्शन से एक ओर नागदा मण्डी नगर है तथा दूसरी ओर मिल क्षेत्र है। इसका नाम बिरला ग्राम है। नागदा मण्डी में कई देवी-देवताओं के मन्दिर हैं। उनमें बद्रीविशाल मन्दिर दर्शनीय है।

बिरलाग्राम में मिल कॉलोनियों के पास एक छोटा मन्दिर सत्यनारायण भगवान् का है। इसमें भगवान् सत्यनारायण की चतुर्भुज मूर्ति है, उनके पास लक्ष्मीजी की मूर्ति, शिव-पार्वती तथा जगदम्बा की मूर्ति हैं। मुख्य मण्डप के अतिरिक्त बाहर दो मण्डप हैं। एक मण्डप में शिव परिवार की मूर्तियाँ तथा दूसरे मण्डप में श्रीहनुमानजी की मूर्ति है। इसके पास ही दूसरा मंदिर भगवान् शिवजी का है। यहाँ की मूर्तियाँ भी सुन्दर व दर्शनीय हैं। इसी मंदिर में ईंट-सीमेंट द्वारा निर्मित ऋद्धि-सिद्धि की १५ फुट ऊँची तथा भगवान् गणेशजी की २० फुट ऊँची प्रतिमाएँ अत्यन्त सुन्दर, भव्य, आकर्षक व दर्शनीय हैं। इतनी बड़ी ऋद्धि-सिद्धि तथा गणेशजी की प्रतिमाएँ अन्यत्र नहीं देखी-सुनी गई।

नागदा स्टेशन से थोड़ी दूर पर एक नवनिर्मित विशाल, अत्युत्तम, सुन्दर कलापूर्ण, केवल पाषाणमय, शेषशायी भगवान् का मंदिर अपनी वास्तुकला एवं शिल्प सौन्दर्य तथा अपनी शोभा के लिए अनुपमेय है। उक्त मंदिर के प्रसाद की रचना ग्वालियर दुर्ग पर स्थित इतिहास प्रसिद्ध सहस्रबाहू का मंदिर (वर्तमान में सास-बहू के नाम से प्रख्यात) के देवालयीन भवनों के वास्तु एवं शिल्प को इस मन्दिर में रूपायित करने के लिए प्रख्यात उद्योगपति बाबू घनश्यामदासजी बिरला की प्रेरणा रही है।

इस मन्दिर का आसन भूमितल से १२ फुट ऊँचा है मन्दिर की ऊँचाई धरातल से स्वर्ण-कलश तक ८१ फुट है। आसन की लम्बाई २०० फुट तथा चौड़ाई १२५ फुट है।

मुख्य मण्डप में आनन्दकन्द भगवान् विष्णु शेषनाग पर लेटे हुए चतुर्भुज रूप में स्थापित हैं। भगवान् विष्णु के मस्तक पर शेषनाग अपने फनों से छत्र किये

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हुए हैं। भगवान् विष्णु की नाभि कमल पर ब्रह्माजी विराजमान हैं तथा लक्ष्मीजी भगवान् विष्णु की चरण-सेवारत हैं। यह समग्र प्रतिमा (मूर्ति) ६ फुट लम्बी, २ फुट चौड़ी तथा ४ फुट ऊँची एक ही संगमरमर पत्थर पर निर्मित हैं। निज मण्डप के आगे अन्तराल में गङ्गा-यमुना की प्रतिमाएँ हैं। निज मंदिर के ईशान कोण में सीता-राम, अग्निकोण में राधा-कृष्ण, नैऋत्यकोण में गणपति, वायुकोण में हनुमानजी तथा विष्णु भगवान् के निज मण्डप के समक्ष हाथ जोड़े हुए गरुड़जी की प्रतिमा स्थापित है। बाहर के मण्डपों में बायीं ओर शिव परिवार तथा दायीं ओर जगदम्बा भगवती की मूर्ति स्थापित है।

मंदिर के नीचे सभागृह १८८ फुट लम्बा तथा १३२ फुट चौड़ा है। सभा-मण्डप में एक ओर सूर्य, एक ओर ब्रह्मा तथा बीच में भगवान् की चरण-पादुका स्थापित हैं। इन मूर्ति व चरण चिह्नों से सटा हुआ प्रवचन मंच (पीठ) है। उस पर धर्मगुरुओं तथा विद्वानों द्वारा धर्मोपदेश, प्रवचन, कथाएँ होती हैं।

मंदिर के बाहरी-भीतरी भित्तियों पर भी छोटी-बड़ी अनेक देव-देवाङ्गना, अप्सरा, यक्ष, किन्नर, द्वारपाल, तथा तपस्या में लीन ऋषि-महर्षियों की अत्युत्तम, कलापूर्ण, दिव्य भावमयी मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। मंदिर का प्रथम प्रवेश द्वार तथा मंदिर मण्डप के मुख्य आसन पर चढ़ने के मुख्य द्वार के सामने ५१ फुट व्यास वाला फव्वारा जिसकी ऊँचाई १७ फुट है। अपनी उत्कीर्ण कलाओं द्वारा यह मंदिर दर्शकों को आकर्षित करता है।

श्रीकेशवराय (राजस्थान)—५२

यह नगर कोटा डिवीजन में है। यह चर्मवन्ती नदी में विष्णु तीर्थ है। वहाँ नदी से ५९ सीढ़ी ऊपर मंदिर का द्वार है और २० सीढ़ी ऊपर मंदिर है। भगवान् केशवराय की चतुर्भुज मूर्ति मुख्य पीठ पर स्थित है। यहाँ ही एक छोटे मंदिर में चारभुजाजी की मूर्ति है। भगवान् केशव के सम्मुख चौक में गरुड़-स्तम्भ है।

बदराना (राजस्थान)—५३

झालावाड़ से कुछ मील दूर बदराना गाँव है। यहाँ दो नदियों के सङ्गम पर श्रीहरिहरेश्वर का मंदिर है। इस मंदिर की श्रीमूर्ति का आधा भाग शिवस्वरूप तथा आधा भाग विष्णुस्वरूप है। दाहिनी ओर दो भुजाएँ हैं, जिसमें से ऊपर के हाथ में भस्म का गोला और नीचे के हाथ में त्रिशूल है। इस भाग में कटि में एक सर्प लिपटा है मस्तक पर जटा में गङ्गाजी, ललाट में चन्द्रमा है। वाम भाग में ऊपर के हाथ में चक्र तथा नीचे के हाथ में शङ्ख है। मंदिर में ही नन्दी-श्वर तथा गरुड़ की मूर्तियाँ हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ओसियाँ (राजस्थान)--५४

जोधपुर (राजस्थान) से यह स्थान ३९ मील दूर है। यहाँ प्राचीन समय में बहुत मंदिर थे, जिनके अब भग्नावशेष हैं। जिनमें शिव, विष्णु, ब्रह्मा, सूर्य तथा हरिहर की मूर्तियाँ दर्शनीय हैं। इन मंदिरों में श्रीकृष्ण लीला की अत्यन्त सुन्दर मूर्तियाँ हैं।

खेड़ (राजस्थान)--५५

यह स्थान जोधपुर डिवीजन में लूनी से ५० मील दूर है। प्राचीन समय में खेड़ एक विशाल नगर और महान् तीर्थ था। जिसका प्रमाण यहाँ के भग्नावशेष मंदिरों द्वारा प्राप्त है। इस समय यहाँ श्रीरणछोड़राय का विशाल मंदिर है और उसके पास तीन छोटे मंदिर जीर्ण-शीर्ण हालत में हैं। श्रीरणछोड़राय के मंदिर में श्रीकृष्ण की चतुर्भुज संगमरमर की मनोहर मूर्ति है। मंदिर के गर्भ गृह के परिक्रमा मार्ग में आठों दिग्पाल, वाराह, नृसिंह, गणेश, दत्तात्रेय, सूर्य तथा चन्द्रमा की मूर्तियाँ हैं। सभा-मण्डप के बाहर ब्रह्माजी तथा शंकरजी के मंदिर हैं। सामने दीवार से लगी भगवान् शेषशायी की मूर्ति है।

नाथद्वारा (राजस्थान)--५६

नाथद्वारा उदयपुर से ३० मील दूर है। यहाँ मुख्य मंदिर श्रीनाथजी महाराज का है। भारत के प्रमुख वैष्णव पीठों में इसकी गणना की जाती है। मन्दिर की सेवा-पूजा का क्रम प्रातःकाल से दस बजे रात्रि तक चलता रहता है। यह राजस्थान के प्रमुख तीर्थों में से हैं। यहाँ वल्लभ सम्प्रदाय की प्रमुख गद्दी है।

काँकरोली (राजस्थान)--५७

नाथद्वारा से काँकरोली ११ मील दूर है। वल्लभ सम्प्रदाय की सात उपपीठ मानी जाती हैं। उनमें से काँकरोली प्रमुख उपपीठ हैं। यहाँ बतलाया जाता है कि सृष्टि के आदिकाल में ब्रह्माजी के तप करने पर भगवान् हरि ने प्रसन्न होकर उन्हें जिस स्वरूप के दर्शन दिये थे, वह द्वारिकाधीश के रूप में यहाँ विद्यमान है। इस मूर्ति की अम्बरीष ने भी पूजा की थी।

चारभुजाजी (राजस्थान)--५८

चारभुजाजी काँकरोली से छह मील दूर हैं। यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण की चतुर्भुज प्रतिमा है। इस स्थान का नाम ही चारभुजाजी है।

उदयपुर (राजस्थान)--५९

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
उदयपुर मेवाड़ के महाराणाओं की राजधानी थी। यह राजस्थान का प्रसिद्ध

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऐतिहासिक नगर है। उदयपुर के राजप्रासाद के रनिवास में श्रीपीताम्बर रायजी के मन्दिर में मीराँबाई के उपास्य श्रीगिरधरलालजी की मूर्ति है। उदयपुर नगरी में भगवान् जगन्नाथजी का दर्शनीय मन्दिर है। मन्दिर के सामने गरुड़जी की प्रतिमा है। प्राकृत सौन्दर्य तथा झीलों के उदयपुर में अनेक मनभावन दृश्य हैं। यहाँ लकड़ी की कारीगरी तथा वस्त्र छपाई सुन्दर होती है।

पुष्कर (अजमेर) राजस्थान—६०

अजमेर राजस्थान के मुख्य शहरों की गणना में आता है। अजमेर जंक्शन के लिए अहमदाबाद-दिल्ली लाइन तथा अजमेर खण्डवा लाइनें है। अजमेर से पुष्कर ७ मील दूर है। पुष्कर जाने के लिए मोटर-बसें तथा तांगे मिलते हैं। अजमेर में यात्रियों के ठहरने की उचित व्यवस्था है। पुष्कर में भी कई धर्मशालाएँ हैं।

पुष्कर माहात्म्य

दुष्करं पुष्करं गन्तुं दुष्करं पुष्करे तपः।
दुष्करं पुष्करे दानं वस्तुं चैव सुदुष्करम्॥
त्रीणि शृङ्गाणि शुभ्राणि त्रीणि प्रस्रवणानि च।
पुष्कराण्यादिसिद्धानि न विद्मस्तत्र कारणम्॥

(पद्म पुराण आदि खण्ड ११।३४-३५)

'पुष्कर में जाना कठिन है (बड़े सौभाग्य से होता है।) पुष्कर में तपस्या दुष्कर है। पुष्कर का दान भी दुष्कर है और पुष्कर में वास करना तो और भी दुष्कर है। पापों के नाशक, देदीप्यमान तीन पुष्कर क्षेत्र हैं, इसमें सरस्वती बहती है। ये आदि काल से सिद्ध तीर्थ हैं। इनके तीर्थ होने का कोई (लौकिक) कारण हम नहीं जानते।'

यथा सुराणां सर्वेषामादिस्तु पुरुषोत्तमः।
तथैव पुष्करं राजंस्तीर्थानामादिरुच्यते॥
यस्तु वर्षशतं पूर्णमग्निहोत्रमुपाचरेत्।
कार्तिकी वा वसेदेकां पुष्करे सममेव तत्॥

(पद्म पुराण आदि ११)

'जिस प्रकार देवताओं में मधुसूदन सर्वश्रेष्ठ हैं, वैसे ही तीर्थों में पुष्कर आदि तीर्थ हैं। कोई सौ वर्षों तक लगातार अग्निहोत्र की उपासना करे या कार्तिकी पूर्णिमा की एक रात पुष्कर में वास करे, दोनों का फल समान है।'

पुष्कर तीर्थों के गुरु माने जाते हैं और प्रयाग तीर्थों के राजा है। इसलिए प्रयाग को प्रयाग—तीर्थराज तथा पुष्कर को पुष्करराज कहते हैं। पुष्कर सरोवर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तीन हैं—ज्येष्ठ (प्रधान) पुष्कर, मध्य पुष्कर और कनिष्ठ पुष्कर। ज्येष्ठ पुष्कर के देवता ब्रह्माजी, मध्य पुष्कर के देवता भगवान् विष्णु और कनिष्ठ पुष्कर के देवता रुद्र हैं। पुष्कर की गणना पञ्चतीर्थों में व पञ्च सरोवरों में की जाती है।

पुष्कर तीर्थ का मुख्य मन्दिर ब्रह्माजी का है। यह सरोवर से थोड़ी दूर ही है। मन्दिर में चतुर्मुख ब्रह्माजी की दाहिनी ओर सावित्री देवी तथा बायीं ओर गायत्रीदेवी का मन्दिर हैं। पास में ही एक ओर सनकादि मुनियों की मूर्तियाँ हैं। एक छोटे मन्दिर में नारदजी की मूर्ति है। एक मन्दिर में हाथी पर बैठे हुए कुबेर तथा नारदजी की मूर्तियाँ हैं।

पुष्कर का दूसरा मन्दिर बदरीनारायण का है। तीसरा मन्दिर वाराह भगवान् का है तथा चौथा मन्दिर बाँगड़ सेठ द्वारा निर्मित श्रीरमा वैकुण्ठनाथ मंदिर है। जिसको श्री रङ्गजी का मंदिर भी कहते हैं। इनके अतिरिक्त पुष्कर सरोवर के घाटों पर और पुष्कर नगर में अनेक देवी-देवताओं के मन्दिर हैं। यहाँ नाग पर्वत, यज्ञ पर्वत भी हैं, इनमें कई गुफाएँ तथा साधु-सन्तों के आश्रम हैं। यज्ञ पर्वत के पास अगस्त्य आश्रम और अगस्त्य कुण्ड भी है। ज्येष्ठ पुष्कर से मध्य पुष्कर, कनिष्ठ पुष्कर लगभग दो मील की दूरी पर हैं।

किशनगढ़ (राजस्थान)—६१

अहमदाबाद-दिल्ली लाइन पर अजमेर से १८ मील दूर किशनगढ़ स्टेशन है। पास में ही किशनगढ़ सागर है। यह राठौर राजाओं की राजधानी थी। यहाँ के राजा वल्लभ सम्प्रदाय के शिष्य रहे हैं। यहाँ वल्लभ सम्प्रदाय के कई मंदिर हैं। जिनको मधुराधीशजी का मन्दिर, ब्रजराज का मंदिर, मदनमोहनजी का, गोकुल चन्द्रमाजी का मंदिर कहते हैं।

सिलोरा (गाल) (राजस्थान)—६२

किशनगढ़ से ३ मील दूर सिलोरा स्थान है। यहाँ कल्याणरायजी का मंदिर है। यहाँ के मंदिर में श्रीवल्लभाचार्यजी का अकबर बादशाह द्वारा बनवाया हुआ, एकमात्र प्राचीन हस्तकला चित्र है।

सलेमाबाद (परशुरामपुरी) राजस्थान—६३

यह स्थान किशनगढ़ से १० मील दूर है। बस-मोटर मार्ग है। यहाँ जगद्गुरु निम्बार्क-सम्प्रदायाचार्य की गद्दी है। यहाँ श्रीसर्वेश्वरजी तथा भगवान् राधा-माधवजी का प्रसिद्ध मंदिर है।

आमेर (जयपुर) राजस्थान—६४

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
जयपुर के महाराजाओं की प्राचीन राजधानी आमेर जयपुर से पाँच मील

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दूर है। जयपुर से बस-मोटर, तांगा-रिक्शा सवारी मिलती है। यहाँ कस्बे में श्री जगत्-शिरोमणिजी का मन्दिर तथा विष्णुजी का प्राचीन मन्दिर कलापूर्ण व दर्शनीय हैं।

जयपुर (राजस्थान)—६५

जयपुर राजस्थान की राजधानी और यहाँ के प्रमुख सुन्दर शहरों में अग्रगण्य गुलाबी शहर के नाम से प्रख्यात नगर है। इसको देखने के लिए भारतीय ही नहीं विदेशी पर्यटक भी बहुत संख्या में आते रहते हैं। यहाँ के प्रायः सभी महाराजा समस्त राजस्थान के राजघरानों से अधिक आस्तिक तथा धार्मिक वृत्ति के होते रहे हैं। इसके फलस्वरूप जयपुर में मन्दिरों की संख्या कई हजार गणना में आ सकती हैं। जिनमें प्रत्येक प्राचीन मंदिर कलापूर्ण व दर्शनीय हैं। गोविन्ददेवजी का मंदिर, गोपीनाथजी का मंदिर, श्रीगोकुलनाथजी का मंदिर, माधव विहारीजी का मंदिर, रामचन्द्रजी का मंदिर, गलताजी के कई मंदिर तथा गलताजी मोटर-तांगा के मार्ग द्वारा जाने पर गलताजी के पहाड़ के सहारे रास्ते में भी बहुत उत्तम कला-पूर्ण मंदिर दर्शनीय हैं।

बघेश्वर (खेतडी) राजस्थान—६६

सिघाना-खेतड़ी के खड़खड़ा पहाड़ों के बीच में यह प्राचीन तीर्थ स्थान है (यहाँ आजकल कोपर प्रोजेक्ट का कार्य चल रहा है)। यहाँ बराबर पर्वत से जल गिरता रहता है। यह प्रवाह ही मुख्य तीर्थ है। यहाँ भगवान् नृसिंह का प्राचीन मन्दिर है। मन्दिर की दीवार में शिव-पार्वती, राधा-कृष्ण, पाण्डव तथा अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियाँ हैं।

रामेश्वरानन्द आश्रम टीबा-वसई (राज.)—६७

श्रीजगज्जननी परास्बा के परम भक्त बाबा रामेश्वरदासजी, एक सिद्ध महात्मा, त्याग तपस्या की साक्षात् मूर्ति, यहाँ रहते हैं। उनकी प्रेरणा से यह आश्रम भक्तों द्वारा निर्माण हुआ है। इस आश्रम में राज्यसिंहासनस्थ श्रीराम पंचायतन मण्डप, श्रीराम-लक्ष्मण-सीता मण्डप, राधाकृष्ण मण्डप, सरस्वती मण्डप, श्रीगणेश मण्डप, जगज्जननी परास्बा मण्डप, भगवद्गीता मण्डप, सूर्य मण्डप, श्रीहनुमान मण्डप, गङ्गा-यमुना मण्डप, नवदुर्गा मण्डप, अन्य बहुत से देवी-देवताओं तथा अनेक ऋषि महर्षियों में भी सुन्दर कलापूर्ण प्रतिमा-मूर्तियों को स्थापित कर निर्माण हुए हैं। अनेक मूर्तियाँ षोडशवर्षीय परिमाण-मनुष्यों के समान स्थापित हैं। इन भवनों में और भी अनेक देवी-देवताओं के चित्र कलापूर्ण व उत्तम रंगों द्वारा भी चित्रित किये गये हैं। सभी मण्डपों के प्रार्थना भवन भी भव्य बने हुए हैं। दर्शनार्थियों का मन दर्शन कर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परमानन्द को प्राप्त होता है। प्रायः सभी मूर्तियाँ उत्तम श्वेत सङ्गमरमर पाषाण पर जयपुर के कलाकारों द्वारा निर्मित हैं।

आश्रम के मुख्य द्वार के समक्ष श्रीमहावीर हनुमानजी की ईंट-सीमेंट द्वारा निर्म्मित लगभग तीन मंजिल ऊँची सुन्दर-भव्य-आकर्षक प्रतिमा एक सुन्दर चबूतरे पर स्थापित है। निज आश्रम के बाहर पास में ही एक भव्य शिवालय का निर्माण हुआ है। उसमें बहुत बड़े अर्घे पर महाशिवलिङ्ग की स्थापना की गई है। शिवालय के बाहर एक महानन्दी स्थापित है। इस आश्रम में दर्शनार्थियों को किसी भी देवी-देवताओं के मण्डप पर कोई भी भेंट, रुपया-पैसा किसी भी रूप में चढ़ाने की बाबा रामेश्वरदासजी की आज्ञा नहीं है। ऐसा नियम पालन अन्यत्र दुर्लभ है। जो यात्री-दर्शनार्थी आते हैं; उनको फल-मिष्ठान्न प्रसाद रूप में अवश्य दिया जाता है। यात्री देवी-देवताओं को भोग लगाने के रूप में फल-मिष्ठान्न ही चढ़ाने के लिए ले जा सकते हैं। बहुत दूर-दूर से यात्री दर्शन हेतु सैंकड़ों की संख्या में नित्य ही आते रहते हैं।

यह स्थान टीबा-बसाई ग्राम से लगभग तीन किलोमीटर दूर समतल भूमि में बसई वाली नदी के तट पर खेतों के बीच में बना हुआ है। प्रसाद रूप में फल-मिष्ठान्न ले जाने वाले को अपने स्थान से या ग्राम बसई से ही ले जाना चाहिये। वहाँ कोई प्रसाद विक्रेता की दुकान नहीं है।

यहाँ पहुँचने के लिए दिल्ली-अहमदाबाद लाइन पर नारनौल स्टेशन से कुछ दूर निजामपुर स्टेशन पर उतरना होता है। निजामपुर से खेतड़ी जाने वाली बस द्वारा बसई ग्राम में उतरना होता है। बसई बस-स्टेण्ड पर घोड़ा, तांगा व ऊँट-तांगा सवारी मिलती हैं। बसई ग्राम से इस आश्रम तक पहुँचने के लिए पक्की सड़क है। दिल्ली, रिवाड़ी, नारनौल, महेन्द्रगढ़, झुंझनू, चिड़ावा, पिलानी, नवलगढ़, नीम का थाना, जयपुर आदि स्थानों से बस द्वारा भी बसई ग्राम पहुँचा जा सकता है।

खेतड़ी (झुंझनू) राजस्थान–६८

भारत स्वतन्त्र होने से पूर्व, खेतड़ी के राजाओं की राजधानी थी। आजकल वहाँ ताम्र परियोजनान्तर्गत कोपर प्रोजेक्ट का कार्य बहुत जोरों से चल रहा है। कई हजार टन ताम्बा वहाँ की खानों से नित्य-प्रतिदिन निकाला जा रहा है। अनेक प्रकार के संयन्त्र लगाये गये हैं। कोपर-प्रोजेक्ट खेतड़ी नाम से अलग नई बस्ती, कई कॉलोनियों के रूप में बसाई गई हैं। कोपर-प्रोजेक्ट पर रेल की लाइन भी पहुँच गई है। खेतड़ी-प्राचीन नगर में विविध देवी-देवताओं के सैंकड़ों मन्दिर बने हुए हैं। जिनमें कई एक मन्दिर तो अत्यन्त दर्शनीय हैं। उनमें सर्वाधिक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्राचीन मन्दिर भगवान् नृसिंहजी का है। लोगों का कहना है कि यह मन्दिर खेतड़ी नगर बसने से भी पहले का है। यहाँ इस मन्दिर की इतनी मान्यता है कि किसी के भी कोई विवाह होता है, वर की निकासी होते ही भगवान् नृसिंहजी के मन्दिर में जा कर वह प्रार्थना कर आता है, तब ही बारात गमन करती है।

विश्वविख्यात स्वामी विवेकानन्द के मार्मिक धर्म विचारों को सर्वप्रथम सहयोग प्रदान कर, विश्व-धर्म-सम्मेलन में अमेरिका भिजवाने वाले राजा अजीत सिंहजी बहादुर की यही राजधानी खेतड़ी नगर है। यहाँ के राजभवन अन्तिम खेतड़ी नरेश राजा सरदारसिंहजी बहादुर की श्रद्धा द्वारा स्वामी विवेकानन्द स्मृति मन्दिर के रूप में परिणत किये जा चुके हैं। विवेकानन्द स्मृति मन्दिर, शाह पन्नालालजी का तालाब, मन्दिर गङ्गाजी, मन्दिर रानावतजी, मन्दिर चूण्डावतजी, खेतड़ी के गढ़ के प्राचीन राज्य-भवन आदि देखने योग्य हैं।

लोहार्गल (लोहागरजी) राजस्थान—६९

एक रेलवे लाइन सवाई माधोपुर से लुहारू तक गई है। इस लाइन पर सीकर या नवलगढ़ स्टेशन पर उतरना होता है। वहाँ से बीस मील दूर यह तीर्थ-स्थान है। ऊँट या ऊँट के तांगे की सवारी मिलती है।

लोहार्गल राजस्थान का प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। यहाँ लोग दूर-दूर से अस्थिविसर्जन करने आते हैं। यहाँ के जल में अस्थियाँ कुछ ही घंटों में जलरूप हो जाती हैं। यहाँ सोमवती अमावस्या और भाद्रपद अमावस्या को मेला होता है। यहाँ ठहरने के लिए बहुत से स्थान हैं। गरीबों तथा साधुओं के लिए अन्न-सत्र हैं। यहाँ देवी-देवताओं के सैकड़ों मन्दिर हैं जिनमें खाकीजी का मन्दिर मुख्य माना जाता है। लोहार्गल के प्रधान देवता सूर्य हैं। सूर्य मन्दिर तथा शिव मन्दिर के बीच में एक कुण्ड है, इसको सूर्यकुण्ड कहते हैं। यहाँ का मुख्य तीर्थ पर्वत से निकलने वाली सात जलधाराएँ हैं। यहाँ के लोगों का कहना है कि इस पर्वत के नीचे ब्रह्महृद तीर्थ है। उसमें से ही ये धाराएँ निकलती हैं।

हैदराबाद-दक्षिण—७०

हैदराबाद, भारत स्वतन्त्र होने से पूर्व, मुसलमान नवाबों की प्रमुख राजधानी थी। इसकी गणना भारत के विख्यात नगरों में की जाती है।

हैदराबाद नगर के ठीक मध्य में २३० फुट की ऊँचाई पर काला पहाड़ के ऊपर श्रीब्रजमोहनजी बिरला के आदेशानुसार हिन्दुस्तान चैरिटी ट्रस्ट की ओर से यहाँ श्रीवेंकटेश्वर भगवान् का भव्य, अतिसुन्दर व दर्शनीय मन्दिर निर्माण किया हुआ है। इसमें ६० लाख रुपये का तो केवल संगमरमर पत्थर ही लगा है। इसके

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निर्माण में १ करोड़ से अधिक की राशि व्यय होना बतलाया जाता है। भगवान् श्रीवेंकटेश्वर की प्रतिमा की ऊँचाई करीब ९ फुट है। आस पास में सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती, राधा-कृष्ण और सीता-राम के अतिरिक्त भगवान् के दशावतार की प्रतिमाएँ भी स्थापित हैं। इसमें पुस्तकालय, अजायबघर तथा सभागार भी निर्माणाधीन हैं।

पूना—७१

पूना में मोटा और मूला नदियों का सङ्गम है। सङ्गम के पास अनेक देवी-देवताओं के मन्दिर हैं। बुधवार पेट के पास तुलसी बाग में राम-मन्दिर, वेलबाग में श्रीलक्ष्मीनारायण मन्दिर है। यह मन्दिर पेशवा काल के नाना फड़नवीस द्वारा निर्मित है। इसके श्रीविग्रह अत्युत्तम हैं।

गोकर्ण (महाबलेश्वर) महाराष्ट्र—७२

बैंगलोर-पूना लाइन पर हुबली स्टेशन है। वहाँ से बस द्वारा गोकर्ण पहुँचा जा सकता है। समुद्र तट पर छोटी पहाड़ियों के बीच में गोकर्ण एक नगर है।

गोकर्ण-माहात्म्य

अथ गोकर्णमासाद्य त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्।
समुद्रमध्ये राजेन्द्र सर्वलोकनमस्कृतम्॥
(पद्मपुराण आ. स्व. ३९।२२)

'गोकर्ण की ख्याति तीनों लोकों में है। वह समुद्र में स्थित है तथा सभी लोकों में नमस्कृत है।'

गोकर्ण में भगवान् शंकर का आत्मतत्त्व-लिङ्ग है। मन्दिर बहुत सुन्दर है। इस आत्मतत्त्व-लिङ्ग का नाम महाबलेश्वर भी है। यहाँ गणेश, पार्वती, वीरभद्र, नन्दी की मूर्तियाँ हैं। कुछ ही दूर पर सिद्ध गणपति की मूर्ति है। यहाँ गणेशजी का दर्शन-पूजन करके ही आत्मतत्त्व-लिङ्ग के दर्शन-पूजन की विधि है। महाबलेश्वर रूप में भगवान् शंकर, अतिबलेश्वर रूप में भगवान् विष्णु तथा कोटीश्वर रूप से ब्रह्माजी नित्य निवास करते हैं। इनके तीन प्राचीन मन्दिर है। महाबलेश्वर मन्दिर के अग्निकोण में कोटि तीर्थ है। गोकर्ण ग्राम के मध्य में श्रीवेंकटरमण नामक भगवान् विष्णु का मन्दिर है। यहाँ महाबलेश्वर दो हैं—मूल महाबलेश्वर तथा नवीन महाबलेश्वर। दोनों स्थानों का लगभग तीन मील का अन्तर है। आस-पास अनेक तीर्थ व देव मन्दिर हैं।

पंढरपुर (महाराष्ट्र)—७३

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
पंढरपुर में चन्द्रभागा नदी के तट पर चन्द्रभागा, सोमतीर्थ आदि तीर्थस्थान

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं। यहाँ श्री विट्ठल भगवान्, कोदण्डराम तथा लक्ष्मीनारायण के मन्दिर हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ और भी बहुत से मन्दिर हैं। यहाँ रामबाग में जगद्गुरु श्रीरामानुजाचार्य महाराज की धर्मपीठ भी है।

बार्सी (महाराष्ट्र)–७४

मध्य रेलवे की मीरज-लातूर लाइन में कुर्दुवाड़ी से एक ओर पंढरपुर है, और दूसरी ओर बार्सी है। यहाँ भगवान् नारायण का विशाल मन्दिर है।

कोल्हापुर (महाराष्ट्र)–७५

कोल्हापुर पुराणप्रसिद्ध करवीर-क्षेत्र है। यहाँ महालक्ष्मी का नित्य निवास माना गया है। कोल्हापुर नगर में पुराने राजमहलों के पास खजाना घर है। उसके पीछे महालक्ष्मीजी का विशाल मन्दिर है। इसको यहाँ अम्बाजी का मन्दिर कहते हैं। मन्दिर का प्रधान भाग नीले रङ्ग के पत्थरों से निर्मित है। श्रीमहालक्ष्मीजी का श्रीविग्रह बहुत प्राचीन है।

शोलापुर (महाराष्ट्र)–७६

शोलापुर नगर में रणछोड़रायजी, लक्ष्मीनारायणजी, सत्यनारायणजी आदि के सुन्दर मन्दिर दर्शनीय हैं।

हरिहर (कर्नाटक)–७७

तुङ्गभद्रा नदी के तट पर हरिहर एक अच्छा नगर है। यहाँ हरिहर-मन्दिर के पीछे ही तुङ्गभद्रा नदी है। यहाँ माघ पूर्णिमा को रथोत्सव होता है। हरिहर-मन्दिर प्राचीन है। मन्दिर के आस-पास कई शिलालेख हैं। मन्दिर में हरिहरात्मक भगवत् मूर्ति है। मूर्ति का दाहिना भाग शिवरूप है। इस ओर के मस्तक के भाग में रुद्राक्ष का मुकुट तथा ऊपर के हाथ में त्रिशूल है। बायाँ भाग विष्णु-स्वरूप है। उधर ऊपर के हाथ में चक्र है, नीचे के दोनों ओर के हाथों में अभय मुद्रा है।

बेलूर (कर्नाटक)–७८

कर्नाटक राज्य के तीर्थों में बेलूर का विशिष्ट स्थान है। चेन्नकेशव का मंदिर यहाँ का मुख्य मन्दिर है। विष्णु-वर्द्धन हायसल ने इस मंदिर की प्रतिष्ठा की थी। मन्दिर नक्षत्र की आकृति का है। प्रवेश द्वार पूर्वाभिमुख है। मुख्य द्वार में प्रवेश करने पर एक चतुष्कोण मण्डप है। यह मण्डप खुला है। भगवान् की चतुर्भुज मूर्ति ७ फुट ऊँची है। उनके दाहिने भूदेवी और बायें लक्ष्मीदेवी-श्रीदेवी हैं। शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म उनके हाथों में है। इस मन्दिर के दक्षिण में कप्पे चेन्निगराय का मन्दिर भी है। इसका निर्माण विष्णु-वर्द्धन की महारानी ने कराया था। इसमें

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीगणेश, सरस्वती, लक्ष्मीनारायण, लक्ष्मी-श्रीधर, दुर्गा-महिषासुरमर्दिनी तथा श्रीवेणु-गोपाल की मूर्तियाँ विराजमान हैं।

मेलूकोटे (यादवगिरि) दक्षिण भारत--७९

मेलूकोटे का प्राचीन नाम यादवाद्रि या यादवगिरि है। दक्षिण में चार प्रधान वैष्णव क्षेत्र हैं - श्रीरङ्गम्, तिरुपति, काञ्चीपुरम्, मेलूकोटे। श्रीरामानुजाचार्य ने इस क्षेत्र का पुनरुद्धार किया और वे यहाँ १६ वर्ष रहे। यहाँ सम्पत्कुमार स्वामी का विशाल मन्दिर है। उत्सव मूर्ति को यहाँ सम्पत्कुमार कहते हैं। मुख्य मूर्ति यहाँ तिरुनारायण की है। यहाँ पास में ही पर्वत पर योग-नृसिंह का मन्दिर है। यह स्थान मैसूर से ३० मील दूर है।

अहोबिल (द. भारत)--८०

यहाँ श्रीरामानुज-सम्प्रदाय के आचार्य पीठों में से एक पीठ है। यहाँ के आचार्य शठकोपाचार्य कहे जाते हैं। कहा जाता है कि हिरण्यकशिपु की राजधानी यही थी। नृसिंह भगवान् यहाँ ही प्रकट हुए थे। यहाँ नृसिंह भगवान् के नौ विग्रह हैं—१. ज्वालानृसिंह, २. अहोबिलनृसिंह, ३. मालोल (लक्ष्मी) नृसिंह, ४. क्रोडाकार-नृसिंह, ५. कारञ्जनृसिंह, ६. भार्गवनृसिंह, ७. योगानन्दनृसिंह, ८. छत्रवटनृसिंह और ९. पावन नृसिंह।

मद्रास--८१

मद्रास भारत के प्रमुख नगरों में से एक है। यह दक्षिण भारत का सबसे विख्यात नगर है। यहाँ बालाजी के मन्दिर में श्रीलक्ष्मीनारायण, लक्ष्मीजी, श्री नृसिंह जी और श्रीदेव-भूदेवी सहित भगवान् वेङ्कटेश्वर के श्रीविग्रह दर्शनीय हैं। यहाँ पार्थसारथि मन्दिर में भगवान् नृसिंह की चित्ताकर्षक सुन्दर मूर्ति है। यहाँ अन्य कई मन्दिर हैं। मद्रास समस्त भारत की रेल-लाइनों से जुड़ा हुआ है।

तिरुपति-बालाजी--८२

भगवान् वेङ्कटेश्वर को ही 'बालाजी' कहते हैं।

श्रीवेङ्कटाचल माहात्म्य

श्रीनिवासपरा वेदाः श्रीनिवासपरा मखाः।
श्रीनिवासपराः सर्वे तस्मादन्यन्न विद्यते॥
सर्वयज्ञतपोदानतीर्थस्नाने तु यत् फलम्।
तत् फलं कोटिगुणितं श्रीनिवासस्य सेवया॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेङ्कटाद्रिनिवासं तं चिन्तयन् घटिकाद्वयम्।
कुलैकविंशतिं धृत्वा विष्णुलोके महीयते॥
(स्कन्द पुराण वैष्णव ख. भू. व. ख. वेङ्कटाचल माहा. ३८-४०)

'सभी वेद भगवान् श्रीनिवास का ही प्रतिपादन करते हैं। यज्ञ भी श्रीनिवास की ही आराधना के साधन हैं। अधिक क्या, सभी लोग श्रीनिवास के ही आश्रित हैं, उनसे भिन्न कुछ नहीं है। अतः सभी यज्ञ, तप, दोनों के अनुष्ठान तथा तीर्थों में स्नान का जो फल है, उससे करोड़ गुना अधिक फल श्रीनिवास की सेवा से होता है। भगवान् श्रीहरि-वेङ्कटाचल निवास का दो घड़ी चिन्तन करने वाला मनुष्य भी अपनी इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार करके विष्णुलोक में सम्मानित होता है।

यहाँ पहुँचने के लिए मद्रास-रायचूर लाइन पर रेनीगुंटा स्टेशन है। रेनीगुंटा से गाड़ी बदल कर विलुपुर से गुडूर तक जाने वाली गाड़ी में बैठ कर तिरुपति-ईस्ट स्टेशन पर उतरना होता है। मद्रास, कालहस्ती, काञ्ची, अरुणाचलम्, चेंगलपेट से मोटर-बस द्वारा भी पहुँचा जा सकता हैं। यात्रियों को ठहरने के लिए, देवस्थान की ओर से जैसी व्यवस्था यहाँ है, वैसी अन्यत्र कहीं नहीं है।

श्रीबालाजी (वेङ्कटेश्वर-भगवान्) का स्थान पहाड़ पर है, उसे तिरुमलै कहते हैं। यह पूरा पर्वत ही भगवान् का स्वरूप माना जाता है। इस पर्वत का नाम वेङ्कटाचल है। पहाड़ पर बस्ती और यात्रियों के ठहरने के स्थान बने हुए हैं। मुख्य मन्दिर भी वहाँ ही है। पहाड़ पर घुमावदार सड़क है। बस-मोटर द्वारा लगभग १५ मील मार्ग पार करने पर मन्दिर से नीचे बस्ती में पहुँचा जाता है। नीचे बस्ती में तथा पहाड़ के ऊपर अनेक तीर्थ व देवदर्शन हैं। मुख्य मन्दिर में पहुँचने पर जगमोहन से मन्दिर के भीतर ४ द्वार पार करने पर पाँचवे द्वार के भीतर श्रीबालाजी (वेङ्कटेश्वर-स्वामी) की पूर्वाभिमुख मूर्ति स्थापित है। भगवान् की मूर्ति श्यामवर्ण—शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए खड़ी है। मूर्ति लगभग ७ फुट ऊँची है। भगवान् के दोनों ओर श्रीदेवी तथा भूदेवी की मूर्तियाँ खड़ी हैं। भगवान् को भीमसेनी कपूर का तिलक लगाया जाता है। भगवान् के तिलक से उतारा हुआ यह चन्दन वहाँ प्रसाद के रूप में बिकता है। लोग नेत्रों में आँजने के लिये ले जाते हैं। मुख्य दर्शन के समय मध्याह्न में प्रत्येक दर्शनार्थी को प्रसाद निःशुल्क दिया जाता है। यहाँ के प्रसाद में स्पर्श-दोष नहीं माना जाता है। मध्याह्न-समय पश्चात् प्रसाद वहाँ बिकता भी है।

गुरुवायूर--८३

गुरुवायूर, केरल प्रान्त में त्रिचूर रेलवे स्टेशन से बीस मील दूर है, त्रिचूर से बस द्वारा पहुँचा जा सकता है। यहाँ भगवान् श्री गुरुवायूरप्पा का मन्दिर है। 'नारायणीयम्' नामक महान् भक्ति काव्य के रचयिता श्रीमेलापत्तूर नारायण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भट्टतिरि ने इसी मन्दिर के शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी चतुर्भुज भगवान् महाविष्णु श्रीगुरुवायूरप्पन के प्रति अपनी अन्तर की समस्त भक्ति-भावना समर्पित की थी। भगवान् शिव की आज्ञा से देवगुरु बृहस्पतिजी और वायुदेव ने इस मूर्ति की यहाँ स्थापना कर प्रतिष्ठा की थी। इसकी वृहत् कथा है। स्थानाभाव के कारण यहाँ लिखना शक्य नहीं है।

सर्पयज्ञ के पश्चात् जनमेजय को गलित कुष्ठ हो गया था, तब उन्होंने इन्हीं भगवान् की आराधना की और भगवान् की कृपा से रोग के साथ-साथ ही भव-रोग से मुक्ति प्राप्त की थी। यह मन्दिर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित है। इसका कला सौन्दर्य अत्यन्त उत्कृष्ट और मानवोत्तर कौशलयुक्त है। यात्रियों से किराया लेकर मन्दिर के कार्यकर्त्ता ही उनके वहाँ ठहरने की व्यवस्था कर देते हैं।

काञ्चीपुरम् (दक्षिण भारत)—८४

नगर का नाम काञ्चीपुरम् है, किन्तु यहाँ के स्टेशन का नाम कांजीवरम् है। इस नगर के दो भाग माने जाते हैं—विष्णुकाञ्ची और शिवकाञ्ची। वस्तुतः नगर एक ही है, उसी के ये दो मोहल्ले हैं। विष्णुकाञ्ची नगर का एक छोटा भाग है। यह स्टेशन से तीन मील दूर है। शिवकाञ्ची नगर का बड़ा भाग है। यह स्टेशन के पास ही है।

मद्रास से ३५ मील दूर चेंगलपेट स्टेशन है। वहाँ से एक लाइन अरकोनम् तक जाती है। इसी लाइन पर कांजीवरम् स्टेशन है। वैसे मद्रास, चेंगलपेट, अरकोनम्, तिरुपति, तिरुवण्णमलै आदि दक्षिण के प्रमुख नगरों से बस-यात्रा भी सुविधाजनक है। शिवकाञ्ची व विष्णुकाञ्ची दोनों बस्तियों में ही यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालाएँ हैं।

काञ्ची-माहात्म्य

रहस्यं सम्प्रवक्ष्यामि लोपामुद्रापते शृणु।
नेत्रद्वयं महेशस्य काशीकाञ्चीपुरीद्वयम्॥
विख्यातं वैष्णवं क्षेत्रं शिवसान्निध्यकारकम्।
काञ्ची क्षेत्रे पुरा धाता सर्वलोकपितामहः॥
श्रीदेवीदर्शनार्थाय तपस्तेपे सुदुष्करम्।
प्रादुरास पुरो लक्ष्मीः पद्महस्तपुरस्सरा॥
पद्मासने च तिष्ठन्ती विष्णुना जिष्णुना सह।
सर्वशृङ्गारवेषाढ्या सर्वाभरणभूषिता॥

(ब्रह्माण्ड पुराण, ललिता पा. ३५।१५-२०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'भगवान् हयग्रीव कहते हैं—अगस्त्यजी ! सुनिये, मैं बड़ी गुप्त बात बता रहा हूँ। काशी तथा काञ्चीपुरी ये दोनों ही भगवान् शंकर के नेत्र हैं और वैष्णव क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध हैं तथा भगवान् शंकर की प्राप्ति कराने वाले हैं। काञ्ची क्षेत्र में, प्राचीनकाल में सर्वलोक पितामह श्रीब्रह्माजी ने श्रीदेवी के दर्शन हेतु पुष्कर तपस्या की थी। फलतः भगवती महालक्ष्मी हाथ में कमल धारण किये हुए उनके सामने प्रकट हुईं। वे कमल के आसन पर आसीन थीं। भगवान् विष्णु भी साथ थे। वे सभी आभरणों से आभूषित तथा सम्पूर्ण शृंगार से युक्त थीं।

काञ्ची

मोक्षदाहिनी सप्तपुरियों में अयोध्या, मथुरा, द्वारावती (द्वारिका), माया (हरिद्वार), काशी, काञ्ची और अवन्तिका (उज्जैन) की गणना है। इनमें काञ्ची हरिहरात्मक पुरी है।

विष्णुकाञ्ची में कामकोटि-पीठ और जगद्गुरु शंकराचार्य की गद्दी है। यहाँ रामानुजाचार्य के आठ प्रधान पीठों में एक पीठ है। इसके आचार्य प्रतिवादी-भयंकर कहे जाते हैं। काञ्ची ५१ शक्तिपीठों में एक पीठ है और यहाँ पञ्चतत्त्व-लिङ्गों में से भूतत्त्व लिङ्ग है। यद्यपि भूतत्त्व-लिङ्ग के सम्बन्ध में मतभेद हैं। कुछ लोग काञ्ची के एकाम्रेश्वर-लिङ्ग को भूतत्त्व-लिङ्ग मानते हैं और कुछ लोग तिरूवारूर की त्यागराज लिङ्गमूर्ति को पृथ्वीतत्त्व-लिङ्ग मानते हैं।

शिवकाञ्ची में १०८ शिवमन्दिर हैं। स्टेशन से एक मील दूर सर्वतीर्थ सरोवर है। सरोवर के मध्य एक छोटा मन्दिर और सरोवर के चारों ओर अनेक मन्दिर हैं। उनमें मुख्य मन्दिर काशी विश्वनाथ का है। शिवकाञ्ची का सर्वोपरि मन्दिर सर्वतीर्थ सरोवर से एक फर्लाङ्ग पर एकाम्रेश्वर मन्दिर है। यह मन्दिर बहुत विशाल है। प्रधान गोपुर दस मंजिल ऊँचा है। एकाम्रेश्वर शिवलिङ्ग मूर्ति श्याम है। शिवलिङ्ग मूर्ति के पीछे गौरीशंकर की युगलमूर्ति है। एकाम्रेश्वर पर जल नहीं चढ़ता है। चमेली के सुगन्धित तेल से अभिषेक होता है। शिवकाञ्ची में वामन-मन्दिर, सुब्रह्मण्य-मन्दिर दर्शनीय हैं।

विष्णुकाञ्ची-शिवकाञ्ची से दो मील दूर है। यहाँ १८ विष्णु मन्दिर हैं। मुख्य मन्दिर श्रीदेवराज स्वामी का है, जिनको प्रायः यहाँ वरदराज स्वामी कहा जाता है। भगवान् नारायण ही देवराज या वरदराज नाम से कहे जाते हैं। वरदराज मन्दिर विशाल है। इस मन्दिर के पूर्व का गोपुर ग्यारह मंजिल ऊँचा है। यहाँ वैशाख पूर्णिमा को इस मन्दिर का 'ब्रह्मोत्सव' होता है। यह दक्षिण भारत का सबसे बड़ा उत्सव है।

पश्चिम के गोपुर में प्रवेश करने पर शतस्तम्भ मण्डप है। इसकी निर्माण

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कला उत्तम है। इसके मध्य में एक सिंहासन है। उत्सव के समय भगवान् की सवारी यहाँ पधराई जाती है। इसके पास एक छोटा मण्डप और है। मण्डप के पास कोटितीर्थ सरोवर है। इसको अनन्तसर भी कहते हैं। सरोवर के पश्चिम की ओर वाराह भगवान् का सुदर्शन का मन्दिर है। सुदर्शन के पीछे योगनृसिंह की मूर्ति है। गरुड़स्तम्भ के पूर्व दूसरे घेरे का गोपुर है। इस घेरे के दक्षिण-पश्चिम भाग में श्रीलक्ष्मीजी का मन्दिर है। श्रीलक्ष्मीजी की झाँकी बहुत मनोहर है। यहाँ लक्ष्मीजी को श्री पेरूदेवीजी कहते हैं।

वरदराज के निज मन्दिर में तीन द्वारों के भीतर चार हाथ ऊँची श्री वरदराज (भगवान् नारायण) की श्याम वर्ण चतुर्भुज मूर्ति विराजमान है। भगवान् के गले में शालग्रामों की एक माला है। वहाँ भगवान् की उत्सव मूर्तियाँ भी हैं। उत्सव समय पर भगवान् की सवारी के लिए श्रीहनुमान, हाथी, घोड़ा, गरुड़, मयूर, बाघ, सिंह, शरभ आदि की चांदी और सोने से मण्डित वाहन मूर्तियाँ भी हैं। मन्दिर परिक्रमाओं में अनेक देवी-देवताओं के मण्डप व मूर्तियाँ स्थापित हैं।

भगवान् की एक मूर्ति जिनको देवाधिराज (शेषशायी) कहते हैं, सरोवर के जल में डूबी रहती है। बीस वर्ष में एक बार यह मूर्ति जल से बाहर लाई जाती है। उस समय विष्णु काञ्ची में बहुत बड़ा महोत्सव होता है।

त्रिचिनापल्ली-श्रीरङ्गम्--८५

वस्तुतः यह एक ही महानगर है। किन्तु इस महानगर के त्रिचिनापल्ली और श्रीरङ्गम दो स्टेशन हैं। इस नगर को कावेरी नदी दो भागों में बाँटती है। वैसे मुख्य नगर त्रिचिनापल्ली है और तीर्थ श्रीरङ्गम्। श्रीरङ्गम् का अधिकांश नगर श्रीरङ्ग-मन्दिर के भीतर या उसके आस पास आ जाता है। त्रिचिनापल्ली को प्रायः वहाँ के लोग 'त्रिची' कहते हैं। इसका प्राचीन संस्कृत नाम त्रिशिरःपल्ली है। तमिल भाषा में इसका शुद्ध नाम तिरुचिरापल्ली है। इसको रावण के भाई त्रिशिरा नामक राक्षस ने बसाया था। वह बड़ा शिवभक्त था और उसका भगवान् श्रीराम ने उसके दो और भाई खर व दूषण के साथ वध किया था।

त्रिचिनापल्ली दक्षिण की रेल लाइनों का केन्द्र और बड़ा जंक्शन है। एक लाइन त्रिचिनापल्ली से श्रीरङ्गम् तक भी जाती है। त्रिचिनापल्ली से श्रीरङ्गम् आठ मील दूर है। विल्लुपुरम्-त्रिचिनापल्ली लाइन पर श्रीरङ्गम् स्टेशन त्रिचिनापल्ली से पहले आता है।

त्रिचिनापल्ली में स्टेशन से थोड़ी दूर पर म्युनिसिपल-चोल्ट्री है, जिसमें किराया लेकर यात्रियों को कमरा दिया जाता है। वैसे नगर में होटल भी हैं और श्री गणेश मन्दिर के पास खेमराज श्रीकृष्णदास की धर्मशाला भी है। श्रीरङ्गम् में कई धर्मशालाएँ हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्रिचिनापल्ली में मुख्य मन्दिर श्रीगणेशजी का है और किले में 'तेप्पकुलम्' सरोवर भी देखने योग्य है। त्रिचिनापल्ली स्टेशन से डेढ़ मील दूर नगर के उत्तरी भाग में कावेरी के पास २३५ फुट ऊँची पत्थर की एक चट्टान है। इसके एक भाग में नीचे से ऊपर तक कई मन्दिर बने हुए हैं। यहाँ के लोग इसको कैलास का खण्ड बतलाते हैं और दक्षिण कैलास कहते हैं।

नगर की सड़क पर एक साधारण गोपुर (दरवाजा) है। उसे पार करने पर नगर के मध्य की सड़क मिलती है। उसके एक ओर एक फाटक है। उसके भीतर प्रवेश करने पर बहुत दूर तक सीढ़ियों के ऊपर छत बनी हुई दिखाई देती है। द्वार में प्रवेश करने पर जहाँ सीढ़ियाँ प्रारम्भ होती हैं, वहाँ दाहिने हाथ गणेशजी का मण्डप है। वहाँ कई लोग प्रतिदिन पूजा करते हैं। आगे सीढ़ियाँ चढ़ने पर २९४ सीढ़ियों तक चढ़ते रहने से बीच-बीच में पहाड़ के अन्दर ही अन्दर सुब्रह्मण्यम, गणेश, नटराज, कई एक शिव-पार्वती मंदिर, मण्डप, अत्यन्त कलापूर्ण व सुन्दर मनोहर मूर्तियों के दर्शन होते हैं। तत्पश्चात् पहाड़ के ऊपर खुली जगह में पहुँचते हैं। वहाँ से ऊपर सीढ़ियाँ बनी हुई नहीं है, किन्तु पहाड़ को काट-काट कर ही सीढ़ियाँ बनाई हुई हैं। शिखर पर चढ़ते-चढ़ते श्रीगणेशजी के छोटे मंदिर में पहुँचते हैं। वहाँ श्रीगणेशजी की मूर्ति बहुत प्राचीन और भव्य है। भाद्रपद में गणेश चतुर्थी को यहाँ महोत्सव होता है।

श्रीरङ्गम्

श्रीगणेश मन्दिर से उतर कर कावेरी का पुल पार करके श्रीरङ्ग द्वीप पहुँचना होता है। श्रीरङ्गम् स्टेशन व त्रिचिनापल्ली स्टेशन के बीच बसें भी चलती हैं। गणेश मन्दिर से श्रीरङ्ग मन्दिर लगभग डेढ़ मील दूर है।

कावेरी की दो धाराओं के मध्य श्रीरङ्ग द्वीप १७ मील लम्बा तथा ३ मील चौड़ा है। श्रीरङ्ग मन्दिर से ५ मील ऊपर दोनों धाराएँ पृथक् हुई हैं। मन्दिर से १२ मील आगे जाकर दोनों धाराएँ परस्पर मिल गयी हैं।

श्रीरंगमन्दिर का विस्तार २६६ बीघा जमीन में है। श्रीरंगनगर के बाजार का बहुत बड़ा भाग तथा बस्ती का कुछ भाग इस मन्दिर के घेरे में ही आ जाता है। इतना बड़ा विस्तार वाला मन्दिर भारत में दूसरा नहीं हैं।

श्रीरंगजी का मन्दिर सात प्राकारों के भीतर है। इन प्राकारों में छोटे-बड़े १८ गोपुर (दरवाजे) हैं। मन्दिर के पहले (बाहरी) घेरे में बहुत सी दुकाने हैं। बीच में पक्की सड़क है। (बाहर से) दूसरे घेरे में चारों ओर सड़क है। दूसरे तथा तीसरे घेरों में ब्राह्मणों और पण्डों के घर हैं। चौथे (मध्य के) घेरे में कई बड़े-बड़े मण्डप बने हुए हैं। इनमें एक सहस्र स्तम्भ मण्डप है, जिसमें ९६० स्तम्भ हैं। इस

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

घेरे के पूर्व वाले बड़े गोपुर के पश्चिम में एक सुन्दर मण्डप है। उसके स्तम्भों में अनेकों सुन्दर मूर्तियाँ बनी हुई हैं। पाँचवें घेरे में दक्षिण के गोपुर के सामने उत्तर की ओर गरुड़-स्तम्भ है। इसमें बहुत बड़ी गरुड़जी की मूर्ति है। इसमें उत्तर की ओर एक चबूतरे पर स्वर्णमण्डित गरुड़-स्तम्भ है। इसी घेरे के ईशान कोण में चन्द्रपुष्करिणी नामक सरोवर है। इसमें यात्री स्नान करते हैं। इसके पास महा-लक्ष्मी का विशाल मंदिर है। कल्पवृक्ष नामक वृक्ष, श्रीराम-मूर्ति तथा श्रीवैकुण्ठनाथ भगवान् का प्राचीन स्थान भी वहाँ पास ही है। श्रीलक्ष्मीजी को यहाँ रङ्गनायकी कहा जाता है। श्रीलक्ष्मीजी के मन्दिर के सामने मण्डप का नाम 'कम्ब मण्डप' है। छठे घेरे के पश्चिम भाग में एक द्वार तथा दक्षिण भाग में मण्डप है। इसके भीतर सातवाँ घेरा है, जिसका द्वार दक्षिण की ओर है। इसके उत्तरी भाग में श्रीरंगजी का निज मन्दिर है। इसका शिखर स्वर्णमण्डित है। मन्दिर के पीछे की छत में अनेक देवमूर्तियाँ हैं। निज मन्दिर के पीछे एक कूप और एक मन्दिर है। इस मन्दिर में आचार्य रामानुज, विभीषण तथा श्रीहनुमानजी आदि की मूर्तियाँ हैं। इसके पीछे भूमि में एक पीतल का टुकड़ा जड़ा हुआ है। वहाँ से श्रीरंगजी के मंदिर के शिखर का दर्शन होता है। थोड़ी दूर आगे एक दालान में भी एक पीतल का टुकड़ा जड़ा हुआ है। वहाँ से मन्दिर के शिखर पर स्थित श्रीवासुदेव मूर्ति के दर्शन होते हैं। शिखर के उपर जाकर भी दर्शन करने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं।

श्रीरंगजी के निज मन्दिर में शेषशय्या पर शयन किये हुए श्याम-वर्ण श्रीरंगनाथजी की विशाल चतुर्भुज मूर्ति दक्षिणाभिमुख स्थित है। भगवान् के मस्तक पर शेषजी के पाँच फणों का छत्र है। बहुमूल्य वस्त्राभूषणों से मण्डित यह मूर्ति परम भव्य है। भगवान् के पास श्रीलक्ष्मीजी तथा विभीषण बैठे हैं। श्रीदेवी, भूदेवी आदि की उत्सव मूर्तियाँ भी वहाँ हैं।

पौष-शुक्ला प्रतिपदा से एकादशी तक श्रीरंगम् में बहुत बड़ा महोत्सव होता है। इस एकादशी का नाम वैकुण्ठ एकादशी है। उस दिन श्रीरंगजी के मन्दिर का वैकुण्ठ-द्वार खुलता है। भगवान् की उत्सव मूर्ति उस द्वार से बाहर निकलती है। उस द्वार से पीछे यात्री भी बाहर निकलते हैं। वैकुण्ठ द्वार से निकलना अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है।

कथा

भगवान् नारायण ने अपना साक्षात् विग्रह ब्रह्माजी को प्रदान किया था। वैवस्वत मनु के पुत्र इक्ष्वाकु ने कठोर तपस्या करके ब्रह्माजी को प्रसन्न किया और उनसे विमान के साथ श्रीरंगजी की मूर्ति प्राप्त की। तभी से श्रीरंगजी अयोध्या में विराजमान हुए और इक्ष्वाकुवंशीय नरेशों के कुलाराध्य हुए।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

त्रेतायुग में चोलराज धर्मवर्मा, अयोध्या नरेश महाराज दशरथ के अश्वमेघ

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यज्ञ में आमन्त्रित होकर अयोध्या गये। वहाँ उन्होंने श्रीरङ्गजी का दर्शन किया। उनका चित्त इस प्रकार रङ्गजी में लग गया कि वे अपने यहाँ लौट कर श्रीरङ्गजी को प्राप्त करने के लिए कठोर तप करने लगे, किन्तु उन्हें सर्वज्ञ ऋषि-मुनियों ने यह कह कर तपस्या से निवृत्त किया कि 'श्रीरङ्गजी स्वयं यहाँ आने वाले हैं।'

लङ्का-विजय के पश्चात् मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी का अयोध्या में राज्याभिषेक हुआ। राज्याभिषेक के उपलक्ष में प्रभु सबको मुँहमाँगी वस्तुएँ प्रदान कर रहे थे। जब सुग्रीव आदि को उपहार देकर प्रभु विदा करने लगे, तब विभीषण ने विदा होते समय श्रीरघुनाथजी से इक्ष्वाकुवंश के आराध्य श्रीरङ्ग-विग्रह की याचना की। उदार-चक्र-चूड़ामणि श्रीरघुनाथजी ने विभीषण को श्रीरङ्ग-मूर्ति विमान (निज मंदिर) सहित प्रदान कर दी।

विभीषण उस दिव्य विग्रह को लेकर चले तो देवताओं को ऐसा लगा कि यह दिव्य मूर्ति लङ्का नहीं जानी चाहिये। लङ्का जाने के मार्ग में यहाँ कावेरी के द्वीप में विभीषण ने पूरे विमान को चन्द्रपुष्करिणी के तट पर रखा और स्वयं नित्य कर्म में लग गये। नित्य कर्म से निवृत्त होकर विभीषण ने विमान उठाने का प्रयत्न किया, किन्तु वे सफल नहीं हुए। उस समय श्रीरङ्गजी ने विभीषण से कहा—'विभीषण! तुम खिन्न मत हो। यह कावेरी का मध्यद्वीप परम पवित्र है। राजा धर्मवर्मा ने मुझे पाने के लिए कठोर तपस्या की है और ऋषिगण उसे आश्वासन दे चुके हैं। इसलिए मेरी इच्छा यहीं स्थित होने की है। तुम यहाँ आकर मेरा दर्शन कर जाया करो। मैं लङ्का की ओर मुख करके दक्षिणाभिमुख होकर यहाँ स्थित रहूँगा।'

विभीषण लौट गये। वे प्रतिदिन श्रीरङ्गधाम दर्शन करने आने लगे। एक दिन वे श्रीरंगजी का दर्शन करने की शीघ्रता में वेगपूर्वक रथ से आ रहे थे, धोखे में उनके रथ से एक ब्राह्मण कुचल कर मर गया। इस पर वहाँ के ब्राह्मणों ने विभीषण को पकड़ लिया और मार डालने का प्रयत्न किया, किन्तु विभीषण को तो भगवान् श्रीराम कल्पान्त तक के लिए अमर रहने का वरदान दे चुके थे। विभीषण जब मरे नहीं, तब ब्राह्मणों ने उन्हें एक भूगर्भ स्थित स्थान में बन्द कर दिया।

देवर्षि नारदजी से भगवान् श्रीराम को अयोध्या में यह समाचार मिला। वे भक्तवत्सल पुष्पक विमान से वहाँ पधारे। ब्राह्मणों ने उनका स्वागत किया और विभीषण का अपराध बतला कर दण्ड देने के लिए उन्हें प्रभु के सम्मुख उपस्थित किया। श्रीराम ने कहा—'सेवक का अपराध तो स्वामी का ही अपराध माना जाता है। ये मेरे सेवक हैं। इन्हें आप लोग छोड़ दें और मुझे दण्ड दें।' ब्राह्मण प्रभु के वात्सल्य से द्रवित हो गये। विभीषण का छुटकारा हो गया।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तब से विभीषणजी प्रतिदिन श्रीरङ्गजी का दर्शन करने के लिए अलक्षित रूप में आने लगे।

यहाँ शंकर-गुरुकुलम् नामक एक प्रसिद्ध प्राचीन पद्धति का गुरुकुल है तथा वाणी-विलास नामक उत्तम मुद्रणालय है। जहाँ प्रधानतया संस्कृत के प्राचीन शास्त्रीय ग्रन्थ बहुत शुद्ध एवं सुन्दर ढंग से प्रकाशित होते हैं।

रामेश्वरम्-धाम (दक्षिण भारत)—८६

मद्रास तथा मदुरा से रेल द्वारा रामेश्वरम् पहुँचना होता है। यहाँ ठहरने के लिए कई एक धर्मशालाएँ हैं। कई यात्री पंडों के यहाँ भी ठहरते हैं।

चार दिशाओं के चार धामों में दक्षिण दिशा का धाम रामेश्वरम् है। यह एक समुद्री द्वीप में स्थित है। समुद्र का एक भाग बहुत संकीर्ण हो गया है, उस पर पाम्बन स्टेशन के पास रेलवे-पुल है। यह पुल जहाजों के आने-जाने के समय उठा दिया जाता है। यहाँ के लोगों का कहना है कि यह समुद्र का भाग पहले नहीं था। रामेश्वर धाम भूमि से मिला हुआ ही था। किसी कारण (प्राकृतिक घटना) से वहाँ समुद्र आ गया। यह रामेश्वरम् द्वीप लभभग ११ मील लम्बा और ७ मील चौड़ा है।

रामेश्वरम्-माहात्म्य

अस्ति रामेश्वरं नाम रामसेतौ पवित्रितम्।
क्षेत्राणामपि सर्वेषां तीर्थानामपि चोत्तमम्॥
दृष्टमात्रे रामसेतौ मुक्तिः संसारसागरात्।
हरे हरौ च भक्तिः स्यात्तथा पुण्यसमृद्धिता॥
कर्मणस्त्रिविधस्यापि सिद्धिः स्यान्नात्र संशयः॥

× × ×

गण्यन्ते पांसवो भूमेर्गण्यन्ते दिवि तारकाः।
सेतुदर्शनजं पुण्यं शेषेणापि न गण्यते॥
समस्तदेवतारूपः सेतुबन्धः प्रदर्शितः।
तद्दर्शनवतः पुंसः कः पुण्यं गणितं क्षमः॥
सेतुं रामेश्वरं लिङ्गं गन्धमादनपर्वतम्।
चिन्तयन् मनुजः सत्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
सेतुसंकतमध्ये यः शेते तत्पांसुगुण्ठितः।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यावन्तः पांसवो लग्नास्तस्याङ्गे विप्रसत्तमाः।
तावतां ब्रह्महत्यानां नाशः स्यान्नात्र सशयः।
(स्कन्द पुराण ब्राह्म खं. सेतु मा. १।१७-१९,२२-२३,२७,४७-४८)

'भगवान् श्रीराम द्वारा बँधाये हुए सेतु से जो परम पवित्र हो गया है, वह रामेश्वरतीर्थ, सभी तीर्थों तथा क्षेत्रों में उत्तम है। उस सेतु के दर्शनमात्र से संसार-सागर से मुक्ति हो जाती है तथा भगवान् विष्णु एवं शिव में भक्ति तथा पुण्य की वृद्धि होती है। उनके तीनों प्रकार के (कायिक, वाचिक, मानसिक) कर्म भी सिद्ध हो जाते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है। भूमि के रज-कण तथा आकाश के तारे गिने जा सकते हैं, परन्तु सेतुबन्ध रामेश्वरम् जन्य पुण्य को तो शेषनाग भी नहीं गिन सकते। सेतुबन्ध समस्त देवतारूप कहा गया है। उसके दर्शन करने वाले पुरुष के पुण्य कौन गिन सकता है? सेतु, श्रीरामेश्वर लिङ्ग तथा गन्धमादन पर्वत—इनका चिन्तन करने वाला मनुष्य भी वस्तुतः समस्त पापों से मुक्त हो जाता है। ब्राह्मणो! जो सेतु की वालुकाओं में शयन करता है, उसकी धूलि से वेष्ठित होता है, उसके शरीर में बालू के जितने कण लग जाते हैं, उतनी ब्रह्महत्याओं का नाश हो जाता है—इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।'

द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में श्रीरामेश्वरम् की गणना है। भगवान् श्रीराम ने इसकी स्थापना की थी। भगवान् श्रीराम जब यहाँ पधारे, तब उन्होंने पहले उप्पूर में गणेशजी की प्रतिष्ठा की, नवपाषाणम् में उन्होंने नवग्रह-पूजन, स्नान आदि किया। देवीपत्तनम् के वेताल-तीर्थ में तथा पाम्बन के भैरव-तीर्थ में उन्होंने स्नान किया। एक स्थान पर वे एकान्त में बैठे। फिर रामेश्वरम् जाकर उन्होंने रामेश्वर-स्थापन कर पूजन किया।

रामेश्वरम्-मन्दिर, रामेश्वर बाजार के पूर्व में समुद्र के किनारे लगभग बीस बीघा भूमि के विस्तार में बना हुआ है। मन्दिर के चारों ओर ऊँचा परकोटा है। इसमें पूर्व तथा पश्चिम के गोपुर (दरवाजे) ऊँचे हैं। पूर्व द्वार का गोपुर दस मंजिल और पश्चिम का सात मंजिल है। मन्दिर के भीतर ही २२ तीर्थ हैं। उनमें पण्डे एक दिन में ही रस्सी-बाल्टी साथ ले जाकर सब में स्नान करा देते हैं। मन्दिर के पूर्वी द्वार के आगे समुद्र को ही तीर्थ कहते हैं। यह अग्नितीर्थ कहा गया है। वहाँ से बायीं ओर कुछ दूर जाने पर समुद्र तट के पास अगस्त्य-तीर्थ नामक वापी है। इस प्रकार २४ तीर्थों में वहाँ ही स्नान करना होता है। मन्दिर के पश्चिम द्वार से प्रवेश करके जो मार्ग बायें गया है, उसमें से प्रदक्षिणा करते हुए आगे जाना चाहिये। इसी मार्ग में चलते-चलते भीतर के २२ तीर्थ तथा अनेक मूर्तियों के दर्शन होते हैं। रामेश्वरम् के निज मण्डप के सम्मुख विस्तृत सभा-मण्डप है। रामेश्वर मन्दिर के उत्तर की ओर सटा हुआ श्रीविश्वनाथ (हनुमदीश्वर) मन्दिर है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसका पहले दर्शन पूजन करके ही रामेश्वर का दर्शन करना चाहिए। श्रीरामेश्वर मन्दिर के सामने लोहे की छड़ों का घेरा है। तीन द्वारों के भीतर श्रीरामेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग प्रतिष्ठित है। रामेश्वर मन्दिर के दक्षिण में श्री पार्वती-मन्दिर का द्वार है। यह मन्दिर भी विशाल है। तीन ड्योढ़ी के भीतर श्रीपार्वतीजी की भव्य मूर्ति विराजमान है। इसमें अनेक देवी-देवताओं के मण्डप तथा देव-दर्शन होते हैं। यहाँ एक मुख्य शिव-लिङ्ग स्फटिक मणि का है। इसके दर्शन प्रातःकाल ४॥ बजे से ५ बजे तक ही होते हैं। यात्री सवेरे इनका दर्शन करके ही स्नानादि करने जाते हैं। यह स्फटिक लिङ्ग अत्यन्त स्वच्छ तथा पारदर्शी है। मन्दिर खुलते ही प्रथम इनका पूजन होता है। इस मूर्ति पर दुग्ध धारा चढ़ाते समय स्पष्ट दर्शन होते हैं। उत्सव समय में सवारी आदि निकाली जाती है। उस समय अनेक स्वर्ण, रजत मण्डित अनेक वाहनों पर उत्सव मूर्तियाँ सजा कर सवारी द्वारा घुमाते हैं, तब यात्रियों को वह भी दर्शन प्राप्त हो जाते हैं। रामेश्वर मन्दिर से कुछ थोड़ी-थोड़ी दूर पर गन्ध-मादन (रामझरोखा), साक्षी विनायक, जटातीर्थ, सीताकुण्ड, एकान्त राम-मन्दिर, नयनायकी अम्मन्, कोदण्ड राम स्वामी, विल्लुरणि-तीर्थ, भैरव-तीर्थ आदि हैं।

भारत के चार प्रधान धाम हैं। उनमें बदरीनाथ जगदीशपुरी, द्वारकापुरी यह तीन धाम वैष्णव तीर्थ हैं। केवल यह रामेश्वरम् ही शैव-तीर्थ है। रामेश्वरम् शैव-तीर्थ है; किन्तु यहाँ रामेश्वरम् मन्दिर में ही विष्णु मन्दिर है। यहाँ पश्चिम द्वार से जब भीतर जाते हैं, तब तीन ओर मार्ग जाते हैं सामने, दाहिने, बायें। सामने जावें तो माधव तीर्थ नामक सोरवर मिलता है। उसके चारों ओर पक्की सीढ़ियाँ हैं। इसमें स्नान-मार्जनादि किया जाता है। इसके पास ही सेतु-माधव का मन्दिर है। इस मन्दिर में भगवान् विष्णु अपनी शक्ति सहित विराजमान हैं। तीर्थ यात्रियों को इनका भी दर्शन करना चाहिए।

त्रिवेन्द्रम (दक्षिण भारत)—८७

इस नगर का शुद्ध नाम 'तिरुअनन्तपुरम्' है। पुराणों में इस स्थान का नाम 'अनन्तवनम्' लिखा मिलता है। यह प्राचीन त्रावणकोर राज्य की तथा वर्तमान त्रावणकोर कोचीन प्रदेश की राजधानी है। वागर-कोइल से यह नगर ४० मील, कन्याकुमारी से ५१ मील दूर है। यह बहुत बड़ा नगर है। यहाँ 'राजसत्रम्' नामक राजा की चोल्ट्री तथा मन्दिर से थोड़ी दूर पर एक धर्मशाला यात्रियों के ठहरने के लिए बनी हुई हैं।

स्टेशन से आधे मील दूर पर नगर के मध्य में यहाँ के राजा का किला है। किले के सामने ही मोटर-बसों का मुख्य केन्द्र है। किले के द्वार में प्रवेश करने पर दाहिनी ओर सुविस्तृत सरोवर है, जिसमें यात्री स्नान करते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किले के भीतर ही भगवान् पद्मनाभ का मन्दिर है। उनको यहाँ अनन्त-शयन भी कहते हैं। दूसरे गोपुर से भीतर जाने पर बहुत बड़ा प्राङ्गण मिलता है। इसमें चारों किनारों पर मण्डप बने हैं और बीच में पद्मनाभ भगवान् का मन्दिर है। भगवान् का निज मन्दिर भी बहुत बड़ा है। यह काले कसौटी के पत्थर का बना हुआ है।

निज मन्दिर में शेष शय्या पर शयन किये हुए भगवान् पद्मनाभ की विशाल मूर्ति है। यह मूर्ति इतनी विशाल है कि ऐसी बड़ी शेषशायी मूर्ति और कहीं नहीं है। भगवान् की नाभि से निकले कमल पर ब्रह्माजी विराजमान हैं। भगवान् का दाहिना हाथ शिवलिङ्ग के ऊपर स्थित है। इस मूर्ति के मुख का एक द्वार से, वक्षः-स्थल तथा नाभि का दर्शन मध्य द्वार से और चरणों के दर्शन तीसरे द्वार से होते हैं। पद्मनाभ भगवान् का दर्शन करके निज मन्दिर से बाहर आकर पूरे मन्दिर की प्रदक्षिणा की जाती है। मन्दिर के पूर्व भाग में स्वर्णमण्डित गरुड़स्तम्भ है। आगे एक मण्डप है। उसके पास में एक मण्डप में अनेक सुन्दर मूर्तियाँ हैं। मन्दिर के बाहर दक्षिण की ओर शास्ता (हरिहर पुत्र) का छोटा मन्दिर है। मन्दिर के पश्चिम भाग में श्रीकृष्ण मन्दिर है। मन्दिर के दक्षिण-द्वार के पास एक शिशु-मूर्ति है। यहाँ उत्सव-विग्रह के साथ श्रीदेवी, भूदेवी और नीला देवी भगवान् की इन तीन शक्तियों की मूर्तियाँ रहती हैं। इस स्थान का माहात्म्य ब्रह्माण्ड पुराण, महाभारत तथा अन्य पुराणों में भी मिलता है।

पद्मनाभ मन्दिर से आधा मील दूर किले के पीछे के मार्ग पर भगवान् वाराह का मन्दिर और एक सरोवर है। भगवान् वाराह की मूर्ति बड़ी सुन्दर है। इसके अतिरिक्त नगर में श्रीराम, सुब्रह्मण्यम्, शास्ता आदि के कई और भी मन्दिर हैं।

जनार्दन (दक्षिण भारत)—८८

विरुधुनगर-तेनकाशी-त्रिवेन्द्रम लाइन पर वरकला स्टेशन है। स्टेशन से दो मील पर जनार्दन बस्ती है। स्टेशन पर तांगा-सवारी मिलती है। यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशाला है। जनार्दन में धूप की खान है। खान में से धूप निकलती है। इसकी धूप जलाने से बच्चों के दृष्टि दोष दूर हो जाते हैं। मन्दिर से थोड़ी दूर पर समुद्र है। समुद्र के किनारे कई तीर्थ हैं। इन तीर्थों में व समुद्र में स्नान करके जनार्दन भगवान् के दर्शन करते हैं। जनार्दन मन्दिर ऊँचाई पर है। सीढ़ियों से ऊपर जाने पर भगवान् जनार्दन का मन्दिर मिलता है। मन्दिर का घेरा बड़ा है। घेरे के मध्य, मन्दिर में भगवान् जनार्दन की चतुर्भुज श्यामवर्ण, सुन्दर मूर्ति विराजमान है। मन्दिर की परिक्रमा में शास्ता शंकरजी तथा वटवृक्ष के दर्शन होते हैं। मन्दिर के नीचे उतरने पर वहाँ भी कई मन्दिर व देवदर्शन हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कथा

ब्रह्माजी ने यहाँ यज्ञ किया था। यज्ञ में प्रसन्न होकर भगवान् जनार्दन प्रकट हुए। ब्रह्माजी ने प्रार्थना की—'आप मेरे इस यज्ञस्थल पर इसी रूप में स्थित रहें।' ब्रह्माजी की प्रार्थना भगवान् ने स्वीकार की। वे विग्रहरूप में वहाँ स्थित हो गये। ब्रह्माजी ने जहाँ यज्ञ किया था, उसी स्थान पर यह धूप अब भी निकलती है।

धरणीधर (गुजरात)—८९

गुजरात प्रान्त में पश्चिम की ओर बनासकांठा जिले के ढीमां गाँव में यह तीर्थ है प्राचीन समय में यहाँ वाराह भगवान् की विशाल मूर्ति थी और इस स्थान का नाम वाराहपुरी था। यवनकाल में यह मूर्ति भग्न कर दी गई। वाराह मूर्ति टूट जाने पर वहाँ केवल शालग्राम पूजा बहुत समय तक होती रही। फिर उस प्राचीन मूर्ति की जङ्घा से एक शिवलिङ्ग निर्माण हुआ, जो जङ्घेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है। फिर एक स्वप्नादेश के अनुसार बांसवाड़ा की एक पर्वतीय गुफा से श्रीधरणीधर की मूर्ति लाकर वहाँ स्थापित की गई। यह श्रीनारायण की चतुर्भुज मूर्ति है।

सिद्धपुर (मातृगया)—९०

सरस्वती नदी के तट पर बसा हुआ यह स्थान महसाणा (गुजरात) से २१ मील दूर है। भारत में पितृश्राद्ध के लिए जैसे गया प्रसिद्ध है, उसी प्रकार मातृश्राद्ध के लिए यह सिद्धपुर 'मातृगया' क्षेत्र है। इसका प्राचीन नाम 'श्रीस्थल' है। यहाँ कर्दममहर्षि का आश्रम था। यहीं कपिल भगवान् का अवतार हुआ था। यहाँ के बिन्दु-सरोवर के दक्षिणी किनारे पर छोटे मन्दिरों में महर्षि कर्दम, माता देवहूति, महर्षि कपिल तथा भगवान् गदाधर की मूर्तियाँ हैं। इनके पास ही शेषशायी भगवान् लक्ष्मीनारायण, राम-लक्ष्मण-सीता तथा सिद्धेश्वर महादेव के मन्दिर हैं। इस सिद्धपुर का प्राचीन नाम धर्मारण्य क्षेत्र है।

धर्मारण्य-माहात्म्य

धर्मारण्यं हि तत्पुण्यमाद्यं च भरतर्षभ।
यत्र प्रविष्टमात्रो वै सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
अर्चयित्वा पितॄन् देवान् नियतो नियताशनः।
सर्वकामसमृद्धस्य यज्ञस्य फलमश्नुते॥

(पद्मपुराण आ. १२।८-९)

'भरतश्रेष्ठ! वह धर्मारण्य पुण्यमय आदि तीर्थ है जहाँ व्यक्ति प्रवेश करते ही सभी पापों से मुक्त हो जाता है। यहाँ मितभोजी पुरुष नियमपूर्वक

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रहता हुआ देवता-पितरों की पूजा कर सर्वमनोरथप्रद यज्ञ का फल प्राप्त कर लेता है।'

यहाँ पहुँचने के लिए अहमदाबाद-दिल्ली लाइन पर मेहसाणा और आबूरोड़ स्टेशनों के बीच सिद्धपुर स्टेशन है। स्टेशन से सिद्धपुर एक मील दूर है।

बड़नगर (हाटकेश्वर)—९१

मेहसाणा से २१ मील दूर यह नगर नागर ब्राह्मणों का मूल स्थान है और इनके कुलदेवता भगवान् हाटकेश्वर महादेव हैं। उनका यहाँ मन्दिर भी है। यहाँ और भी देव मन्दिर हैं। उनमें से नृसिंह मन्दिर, लक्ष्मीनारायण मन्दिर, नर-नारायण मन्दिर, वाराही माता मन्दिर दर्शनीय हैं। इसका माहात्म्य फल पद्म-पुराण, नागर ख. २७।७६, ७७, ९१, ९२, ९५ में लिखा हुआ मिलता है। मेह-साणा से एक लाइन तारंगा हिल तक जाती है, इसी लाइन पर बड़नगर स्टेशन है।

श्रीद्वारकाधाम (द्वारकापुरी) गुजरात—९२

भगवान् द्वारकाधीश की यह पुरी पुराणोक्त सप्त पुरियों की गणना में एक मानी गई है। भगवान् श्रीकृष्ण ने जरासंध के आक्रमण के कारण मथुरा से यहाँ आकर चिर निवास किया।

यह धाम परम पवित्र पुण्यप्रद पापनाशक मुक्तिप्रद है।

द्वारका माहात्म्य

अपि कीटपतङ्गाद्याः पशवोऽथ सरीसृपाः।
विमुक्ताः पापिनः सर्वे द्वारकायाः प्रभावतः॥

किं पुनर्मानवा नित्यं द्वारकायां वसन्ति ये।
या गतिः सर्वजन्तूनां द्वारकापुरवासिनाम्।
सा गतिर्दुर्लभा नूनं मुनीनामूर्ध्वरेतसाम्॥

× × ×

द्वारकावासिनं दृष्ट्वा स्पृष्ट्वा चैव विशेषतः।
महापापविनिर्मुक्ताः स्वर्गलोके वसन्ति ते॥
पांसवो द्वारकाया वै वायुना समुदीरिताः।
पापिनां मुक्तिदाः प्रोक्ताः किं पुनर्द्वारका भुवि॥

(स्कन्द पुराण, प्रभास ख. द्वारका. ३७।७-९, २५-२६)

द्वारका के प्रभाव से कीट, पतङ्ग, पशु-पक्षी तथा सर्प आदि योनियों में पड़े

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हुए समस्त पापी भी मुक्त हो जाते हैं। फिर, जो प्रतिदिन द्वारका में रहते और जितेन्द्रिय होकर भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा में उत्साहपूर्वक लगे रहते हैं, उनके विषय में तो कहना ही क्या है। द्वारका में रहने वाले समस्त प्राणियों को जो गति प्राप्त होती है, वह ऊर्ध्वरेता मुनियों को भी दुर्लभ है।'

'द्वारकावासी का दर्शन और स्पर्श करके भी मनुष्य बड़े-बड़े पापों से मुक्त हो स्वर्गलोक में निवास करते हैं। वायु द्वारा उड़ायी हुई द्वारका की रज पापियों को मुक्ति देने वाली कही गयी है; फिर साक्षात् द्वारका का तो कहना ही क्या।'

द्वारका सब क्षेत्रों और तीर्थों से उत्तम कही गयी है। द्वारका में जो होम, जप, दान और तप किये जाते हैं, वे सब भगवान् श्रीकृष्ण के समीप कोटि गुना एवं अक्षय होते हैं।

बहुत दूर से ही भगवान् द्वारकाधीश का त्रिलोक सुन्दर विशाल मन्दिर दृष्टिगोचर होता है। इस मन्दिर के सम्बन्ध में यह किंवदन्ती प्रचलित है कि भगवान् श्रीकृष्ण के प्रपौत्र वज्रनाभ ने इसे निर्माण कराया था। कतिपय आधुनिक पुरा-तत्त्ववेत्ता इसको गुप्तकालीन भी मानते हैं। गोमती तीर्थ की ओर से ५६ सीढ़ियाँ चढ़ने पर यह मन्दिर अतिसुन्दर जान पड़ता है। मन्दिर की शोभा देखते ही हृदय प्रफुल्लित हो जाता है। मुख्य मन्दिर के गर्भगृह की ऊँचाई १७० फुट है और सात मंजिले शिखर की शोभा अवर्णनीय है। इस मन्दिर पर पूरे थान की ध्वजा फहराती है। ध्वजा चढ़ाते समय महोत्सव मनाया जाता है। इसी से मन्दिर को 'विश्वमंदिर' भी कहा जाता है।

मुख्य मन्दिर के गर्भ गृह में चाँदी के सिंहासन पर श्रीभगवान् रणछोड़राय जी की तीन फुट ऊँची श्याम चतुर्भुज मूर्ति विराजमान है। यात्री लोग भगवान् का चरण स्पर्श करके पुष्प-तुलसी आदि चढ़ाते हैं। सभा मण्डप के एक ओर बल-देवजी की मूर्ति है। मन्दिर के प्राङ्गण में त्रिविक्रम भगवान् का अलग मन्दिर है। दूसरी ओर प्रद्युम्नजी का मन्दिर है। श्रीलक्ष्मीनारायण, श्रीमाधव, श्रीदत्तात्रेय के मन्दिर भी इस मन्दिर के दक्षिण भाग में है। इस मन्दिर के घेरे में ही पूर्व की ओर मन्दिर का भण्डार है। उससे दक्षिण की ओर शारदा मठ जगद्गुरु शंकराचार्य महाराज का बना हुआ है। इस मन्दिर के बाहर द्वारका नगरी में अन्य बहुत से तीर्थ और मन्दिर हैं। यहाँ ठहरने के लिए अनेक धर्मशालाएँ और स्थान हैं। यहाँ पहुँचने के लिए पश्चिम रेलवे की सुरेन्द्रनगर-ओखा लाइन पर द्वारका स्टेशन है। अहमदाबाद-दिल्ली लाइन के मेहसाणा स्टेशन से एक लाइन सुरेन्द्रनगर तक जाती है। स्टेशन से द्वारकापुरी १ मील दूर है। ताँगा सवारी मिलती है।

बेटद्वारका—६३

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

गोमती-द्वारका से २० मील पूर्वोत्तर कच्छ की खाड़ी में एक छोटा द्वीप है।

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेट द्वीप होने से इसको वेट द्वारका कहते हैं। गोमती द्वारका से १८ मील दूर ओखा स्टेशन है। गोमती द्वारका से यहाँ तक मोटर-बस आती हैं। ओखा से नौका द्वारा समुद्र की खाड़ी पार करके वेट द्वारका पहुँचना पड़ता है। वेट द्वारका द्वीप लगभग ७ मील क्षेत्र में है।

इस द्वीप के विशाल चौक में दुमंजिले, तीन मंजिले, पाँच मंजिले कई महल हैं। इन महलों में भगवान् श्रीकृष्ण के तथा सत्यभामा के, जाम्बवती के, रुक्मिणी के, तथा साथी गोपाल मन्दिर, राधिकाजी के कई मन्दिर हैं। जाम्बवती के महल में पूर्व की ओर श्रीलक्ष्मीनारायण मन्दिर है और गोपीनाथ मन्दिर है। वेट द्वारका में और भी मन्दिर व तीर्थ हैं।

नारायण-सर—९४

कच्छ प्रदेश में यह बड़ा प्राचीन तीर्थ समुद्र तट पर है। भुज से नारायण-सर ८० मील है। नारायण-सर अच्छी छोटी सी बस्ती है। यहाँ आदि नारायण, लक्ष्मीनारायण आदि के प्राचीन दर्शनीय मन्दिर हैं।

माँगरोल—९५

नरसी-भक्त के चाचा श्रीपर्वतराय मेहता माँगरोल से प्रतिदिन तुलसी मञ्जरी लेकर द्वारका में रणछोड़राय को अर्पित करने जाते थे। अड़सठ वर्ष की वृद्ध अवस्था होने से प्रतिदिन जाना संभव न रहा, तब भगवान् स्वयं द्वारकानाथ श्रीविग्रह रूप में माँगरोल में ही प्रकट हो गए और गोमती तीर्थ भी प्रकट हो गया। माँगरोल में यह उसी समय का श्रीभगवान् का मन्दिर तथा पास में गोमती-तीर्थ सरोवर है। यह समुद्र-तट पर है।

गुप्त प्रयाग—९६

यह स्थान देलवाड़ा के पास है। इस गुप्त प्रयाग का स्कन्द पुराण में बड़ा माहात्म्य लिखा है। यहाँ भगवान् माधव का मंदिर है। प्राचीन कुण्ड, नृसिंहजी का प्राचीन मन्दिर और बलदेवजी का मन्दिर है।

ऊना—९७

ऊना नगर देलवाड़ा से ४ मील दूर है। यहाँ श्रीदामोदररायजी का मन्दिर है। भक्त प्रवर नरसी मेहता को दामोदररायजी के श्रीविग्रह ने ही अपने गले से उतार कर माला पहनायी थी।

तुलसी श्याम—९८

यह स्थान ऊना से २१ मील दूर है। इसका प्राचीन नाम 'तलश्याम' है। तुलसीश्याम नाम से प्रख्यात भगवान् विष्णु का यहाँ प्राचीन मन्दिर दर्शनीय है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कोडीनार–९९

ऊना से प्रभास क्षेत्र की ओर आने पर कोड़ीनार नामक शहर है। यहाँ एक छोटे मकान में दशावतार की एक सुन्दर मूर्ति है। शहर के पश्चिम भाग में खण्डहर के रूप में भगवान् वाराह का मन्दिर है।

सूत्रापाड़ा–१००

सोमनाथ-पाटण से ७ मील दूर एक छोटा गाँव है। इस गाँव से दो मील दूर एक वराह मन्दिर है। इस मन्दिर में वाराह, वामन तथा नृसिंह भगवान् की मूर्तियाँ हैं। इसको द्वारका का मन्दिर भी कहते हैं।

जूनागढ़–१०१

जूनागढ़ के पूर्व भाग में रेवतक गिरि जिसको गिरनार पर्वत कहते हैं। इस पहाड़ की तलहटी में सुवर्ण रेखा नदी के दक्षिण तट पर श्रीदामोदरजी का मंदिर हैं। इस मंदिर में चतुर्भुज स्वरूप दो मूर्तियाँ स्थापित हैं। ये मूर्तियाँ गुप्तकालीन बतलाई जाती हैं। कहते हैं कि नरसी मेहता यहाँ नित्य स्नान करने आते थे।

खोरासा–१०२

जूनागढ़ से दक्षिण-पश्चिम की ओर १२ मील दूर खोरासा गाँव है। यहाँ श्रीवेङ्कटेश भगवान् का सुन्दर मन्दिर है। इसकी सेवा पूजा रामानुजीय श्रीसम्प्रदाय के मतानुसार होती है। यह मन्दिर दक्षिण के मन्दिरों की भाँति आकार प्रकारों में निर्माण किया हुआ है। श्रीवेङ्कटेश्वर भगवान् की श्याम और सुन्दर मनुष्याकार भव्य मूर्ति विराजमान है।

अहमदाबाद–१०३

अहमदावाद गुजरात की प्रसिद्ध नगरी है। यहाँ अनेक मन्दिर हैं। सबसे प्रसिद्ध श्रीजगन्नाथजी का मन्दिर है। दूसरा मन्दिर नृसिंह भगवान् का है। इन दोनों मन्दिरों के दर्शन अवश्य करना चाहिये।

शामलाजी–१०४

शामलाजी साबरकांठा जिले में है। इसका प्राचीन नाम 'गदाधर पुरी' है। मन्दिर में भगवान् श्रीकृष्ण की मूर्ति है। इसी को पहले गदाधर कहते थे। यहाँ श्रीकृष्ण को ही शामलाजी कहते हैं। यह मूर्ति देखने में भगवान् विष्णु की चतुर्भुज स्थापित है; किन्तु यहाँ के लोग श्रीकृष्ण शामलाजी कहते हैं।

डाकोर–१०५

पश्चिम रेलवे की आनन्द-गोधरा लाइन पर डाकोर स्टेशन है। स्टेशन से डाकोर नगर एक मील दूर है। तांगा-रिक्शा सवारी मिलती है। यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालाएँ हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

डाकोर में अनेक मन्दिर हैं; किन्तु मुख्य मन्दिर श्रीरणछोड़रायजी का ही है। मन्दिर सुन्दर व विशाल है। मुख्य द्वार से मन्दिर में जाने पर चारों ओर खुला चौक है। बीच में ऊँची बैठक पर मन्दिर है। मन्दिर में मुख्यपीठ पर भगवान् रणछोड़राय की चतुर्भुज मूर्ति पश्चिमाभिमुख खड़ी है। श्रीरणछोड़रायजी के भक्त यात्रीगण, चरण स्पर्श करने वाले लोग उत्तर द्वार से भीतर आकर दक्षिण द्वार से बाहर निकलते हैं। सामान्यतः यात्री पश्चिम द्वार के सम्मुख सभामण्डप में खड़े होकर दर्शन करते हैं। मन्दिर के दक्षिण की ओर शयन-गृह है। यहाँ गोपाललालजी और लक्ष्मीजी की मूर्तियाँ हैं। मन्दिर के सामने ही गोमती तालाब है।

चाणोद--१०६

उभोई के पास चाणोद एक अच्छा नगर है, जो नर्मदा के किनारे पर बसा हुआ है। इसके पास कई पवित्र पुण्यप्रद तीर्थ बतलाये हैं। यहाँ शेषनारायण का प्रसिद्ध उत्तम मन्दिर है।

शुक्लतीर्थ--१०७

भरुच से १० मील दूर पर नर्मदा के उत्तर तट पर शुक्लतीर्थ है। यहाँ शुक्लनारायण का मुख्य मन्दिर दर्शनीय है। भगवान् नारायण की श्वेत चतुर्भुज सुन्दर मूर्ति विराजमान है। भगवान् नारायण की मूर्ति के दोनों ओर ब्रह्मा तथा शंकर की मूर्तियाँ विराजमान हैं।

बम्बई--१०८

भारत की महानगरी बम्बई बहुत बड़ा शहर है। यहाँ बहुत मन्दिर हैं। उनका वर्णन क्या, सबकी नामावली ही बहुत बड़ी है। मुख्य रूप में यहाँ माधव-बाग में लक्ष्मीनारायण मन्दिर बहुत सुन्दर बना हुआ है। परेल से दक्षिण-पश्चिम में समुद्र-तट पर महालक्ष्मी का प्राचीन मन्दिर है। फानसवाड़ी में श्रीवेङ्कटेशजी का दर्शनीय मन्दिर है। इनके अतिरिक्त द्वारिकाधीश मन्दिर, नर-नारायण मंदिर भी दर्शनीय हैं।

कल्याण में विरला-बन्धुओं द्वारा भगवान् विष्णु (विठोबा) का विशाल व सुन्दर मन्दिर निर्माण कराया हुआ है। यहाँ इस मन्दिर की बड़ी मान्यता है। मन्दिर में प्रायः सर्वदा ही दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तृतीय स्कन्ध

भगवान् विष्णु-तत्त्व-विवेचन

सोपान १

भगवान् विष्णु विराट्स्वरूप हैं। उनका रूप अनन्त स्वरूप हैं, उनके गुण अनन्त, नाम अनन्त, दया अनन्त, क्रोध अनन्त और उनकी शान्ति भी अनन्त है—उनका सब कुछ अनन्त ही अनन्त है, वे ही अनन्त कृपा करके अनेक स्वरूप धारण करके अवतार लेते हैं। यह विराट् स्वरूप किस प्रकार अनेक रूप धारण कर जगत् का कल्याण करता है। इस गहन विषय में धारणा करना दुष्कर है; किन्तु शास्त्रों में जिस प्रकार लिखा गया है—उन्हीं का आधार ग्रहण कर भगवान् विष्णु के स्मरण-चिन्तन के रूप में यथासाध्य प्रस्तुत किया जा रहा है।

परमपिता परमेश्वर महाविष्णु-अप्रमेय विष्णु के स्वरूप और रूप के सम्बन्ध में वाराहपुराण के ३१वें अध्याय में लिखा है—

अपने द्वारा उत्पन्न सृष्टि के विषय में आदि विष्णु-महाविष्णु को चिन्ता हुई। उन्होंने विचार किया—मैं अमूर्त हूँ, बिना स्वरूप का हूँ, बिना स्वरूप के कर्म नहीं कर सकता, इसलिये मैं अपने स्वरूप का निर्माण करूं।' वे जब इस प्रकार विचार कर रहे थे, सृष्टि उत्पन्न होने के पहले ही उनका स्वरूप प्रत्यक्ष हो गया, उनके समक्ष स्वरूप आया, उन आदि नारायण ने अपनी देह में से इस स्वरूप में तीनों लोकों को प्रवेश करते देखा। अपने स्वरूप को वरदान देते हुए उन्होंने कहा—'तुम सर्वज्ञ हो, सबके कर्ता हो, समस्त लोक को नमस्कार करते हैं। तुम तीनों लोकों का पालन करते हो। तुम सनातन सर्वव्यापी विष्णु रूप हो जाओ। तुम सर्वज्ञता प्राप्त करो।' यह कहकर वे निद्राधीन हो गये। उनके निद्राधीन होने पर महाविष्णु के विष्णुरूप की नाभि से एक कमल उत्पन्न हुआ, अरण्य और समुद्र सहित सात द्वीपवाली पृथ्वी हुई, उनके रूप का विस्तार अतल से पाताल तक हो गया। उनकी नाभि से उत्पन्न कमलकर्णिका में से मेरु और ब्रह्मा उत्पन्न हुए। आदि नारायण-महाविष्णु ने मूर्तस्वरूप नारायण-विष्णु से कहा, "अज्ञान (अविद्या) के ऊपर विजय पाने के लिये मेरे स्वरूप को तुम पाञ्चजन्य शङ्ख के रूप में धारण करो। हे अच्युत! कालचक्रमय इस भयंकर सुदर्शनचक्र को धारण करो। हे केशव! अधर्म के विनाश के लिए कौमोदकी गदा धारण करो। प्राणियों की माता स्वरूपिणी वैजयन्ती माला गले में धारण करो। चन्द्र और सूर्य के प्रतीक रूप में कौस्तुभमणि और श्रीवत्स धारण करो। पवन की गति वाला गरुड़

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तुम्हारा वाहन है; त्रिलोकी में गमन करने वाली लक्ष्मी सदा तुम्हारे आश्रम में रहेगी, द्वादशी तिथि तुम्हारी प्रिय तिथि होगी।" यह है महाविष्णु के विष्णु रूप का चित्रण।

परमात्मा आदि महाविष्णु भगवान् के लिये शास्त्रों में लिखा है—

सम्पूर्ण विश्व उन्हीं का स्वरूप है। वे सर्वत्र व्यापक होने से ही विष्णु कहलाते हैं। समस्त लोकों के एकमात्र कारण वे ही हैं। इसी प्रकार से विष्णुपुराण में कहा है—

यतो यश्च स्वयं विश्वं स विष्णुः परमेश्वरः।
(श्री विष्णुपुराण १।१७।२२)

'श्रीविष्णु से ही विश्व प्रकट है और वे स्वयं विश्वरूप हैं, इसलिए वे परमेश्वर 'विष्णु' हैं।'

विष्णोः सकाशादुद्भूतं जगत्तत्रैव च स्थितम्।
स्थितिसंयमकर्तासौ जगतोऽस्यजगच्च सः॥
(श्री विष्णु पुराण १।१।३१)

'समस्त जगत् परमेश्वर विष्णु से उत्पन्न, उन्हीं में स्थित है, ये ही इसकी स्थिति और लय के कर्ता हैं तथा वे ही यह जगत् भी हैं।'

कामं तस्य गतिः सूक्ष्मा देवैरपि दुरासदा।
एष लोकमयो देवो लोकाश्चचैतन्मयास्त्रयः॥
एष देवमयश्चैव देवाश्चैतन्मया दिवि।
तस्य पारं न पश्यन्ति बहवः पारचिन्तकाः॥
एष पारं परं चैव लोकानां वेद माधवः।
(हरिवंश १।४९।८-१०)

'यह विराट् पुरुष ही लोक-लोकान्तर और समस्त विश्व में व्याप्त परमेश्वर महाविष्णु हैं। परमात्मा विष्णु की गति बड़ी ही सूक्ष्म है। वह उन्हीं की इच्छा के अनुरूप होती है। देवताओं के लिये भी उनका तत्त्व समझ पाना कठिन है। ये सर्वलोकमय हैं, तीनों लोक इन्हीं के स्वरूप हैं। ये ही सर्वदेवमय हैं, स्वर्ग के समस्त देवता इन्हीं में आविष्ट हैं। प्रत्येक वस्तु के तत्त्व, पार-अन्त, इयत्ता अथवा चरम सीमा का चिन्तन करने वाले लोग इनका पार नहीं पाते; किन्तु यह सम्पूर्ण जगत् का अन्त भली प्रकार से जानते हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विषिश्च व्याप्तिवचनो णुश्च सर्वत्रवाचकः।
सर्वव्यापि च सर्वात्मा तेन विष्णुः प्रकीर्तितः॥

(ब्रह्मवैवर्त. ब्रह्मखण्ड १७।१६)

'महाविष्णु सर्वात्मा हैं, वे भक्तानुग्रह विग्रह हैं। 'विष' धातु व्याप्तिवाचक है और 'णु' अर्थ सर्वत्र है। सर्वव्यापक होने से ही ये 'महाविष्णु' नाम से कहे जाते हैं।'

श्रीनारद पुराण पूर्वभाग अध्याय (३३) में भगवान् महा विष्णु के ध्यान का वर्णन इस प्रकार से से लिखा है—

भगवान् विष्णु का परम मनोहर नित्य तरुण किशोर विग्रह है। उनके नेत्र विकसित कमलदल के शोभित हैं, मनोहर कुण्डल उनके कानों की शोभा बढ़ाते हैं। उनकी भुजाएँ विशाल हैं। अङ्ग-अङ्ग से उदारता दिखाई देती है। सब प्रकार के आभूषण उनके सुन्दर विग्रह की शोभा बढ़ाते हैं। उन्होंने पीताम्बर धारण कर रखा है। वे दिव्य शक्ति से सम्पन्न हैं। उन्होंने स्वर्णमय यज्ञोपवीत धारण कर रखा है। कौस्तुभमणि से उनकी शोभा और भी बढ़ गई है। उनके गले में तुलसी की माला है, वक्षःस्थल में श्रीवत्स का चिह्न सुशोभित हो रहा है। देवता-असुर सभी उनके चरणों में मस्तक झुका रहे हैं। बारह अंगुल विस्तृत तथा आठ दलों से विभूषित अपने हृदय-कमल के आसन पर सर्वव्यापी परात्पर विष्णु के अव्यक्त स्वरूप का ध्यान करना चाहिये।

महाविष्णु का एक ध्यान 'ॐ' (प्रणव) में स्थित तथा अनुपम बतलाया है। परब्रह्म परमात्मा वाच्य कहे गये हैं और 'प्रणव' उनका वाचक कहा गया है।

अनेक ग्रन्थों में भगवान् विष्णु के अनेक प्रकार के ध्यान और प्रार्थनाएँ लिखी हैं, जिनमें विष्णु तत्त्व का सरल सुबोध उत्तम ज्ञान प्राप्त होता है।

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै—
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः॥

(श्रीमद्भागवत १२।१३।१)

'ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र, रुद्र और मरुद्गण जिनका दिव्य स्तोत्रों द्वारा स्तवन करते हैं, सामगान करने वाले अङ्ग, पद, क्रम और उपनिषदों के सहित वेदों द्वारा जिनका गान करते हैं, ध्यानमग्न एवं तल्लीन चित्त से योगी जिनका साक्षात्कार करते हैं और जिनका पार सुर और असुर कोई भी नहीं पाते उन भगवान् विष्णु को नमस्कार है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।।

जो शान्त स्वरूप हैं, शेषशायी हैं, कमलनाभ और सुरेश्वर हैं, जो विश्व के आधार, आकाश के समान निर्लेप, मेघवर्ण और सुन्दर शरीर वाले हैं तथा जो लक्ष्मीजी के आनन्दवर्धक कमलनयन और योगियों के द्वारा ध्यानगम्य हैं, तथा सर्वलोकों के एक मात्र स्वामी भव-भयहारी भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ।'

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षः स्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ।।

'जो शङ्ख-चक्र धारण किये हैं, किरीट और कुण्डलों से विभूषित, पीताम्बर ओढ़े हुए हैं, सुन्दर कमल के समान जिनके नेत्र हैं और जिनके हारयुक्त वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि की अनूठी शोभा हो रही है, उन चतुर्भुज भगवान् विष्णु को मैं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ।'

मेघश्यामं पीतकौशेयवासं श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम् ।
पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्वलोकैकनाथम् ।।
(श्रीपाण्डवगीता ५)

'नवीन मेघ के समान श्यामसुन्दर, रेशमी पीताम्बर धारण किये हुए, श्रीवत्सचिह्नाङ्कित, कौस्तुभमणि से देदीप्यमान अङ्गों वाले, पुण्यात्मा, कमलनयन और सम्पूर्ण लोकों के एक मात्र स्वामी श्रीभगवान् विष्णु को प्रणाम करता हूँ।'

क्षीरसागरतरंगसीकरासारतारकितचारुमूर्तये ।
भोगिभोगशयनीयशायिने माधवाय मधुविद्विषे नमः ।।
(श्रीमुकन्दमाला २२)

'क्षीरसागर की उज्ज्वल तरङ्गों के छींटों की वर्षा से जिनकी श्यामल मूर्ति तारों से आवृत्त हुई-सी अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होती है तथा जो शेषनाग के शरीर-रूपी शय्या पर शयन करते हैं, उन मधुसूदन भगवान् माधव को नमस्कार है।'

प्रातः स्मरामि भवभीति महार्त्ति शान्त्यै
नारायणं गरुड़वाहनमब्जनाभम् ।
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतु
चक्रायुधं सरणवारिजपत्रनेत्रम् ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'गरुड़-वाहन, कमलनाभ, ग्राहके द्वारा ग्रस्त गजेन्द्र की मुक्ति के कारण, सुदर्शनचक्रधारी, नवविकसित कमल की पंखुड़ी के सदृश नेत्र वाले भगवान् नारायण भव-भयरूपी महान् दुःख की शान्ति के लिए मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ।'

प्रातर्भजामि भजतामभयंकरं तं
प्राक्सर्वजन्मकृतपापभयापहृत्यै।
यो ग्राहवक्त्रपतितांघ्र गजेन्द्र घोर—
शोकप्रणाशनकरो धृतशङ्खचक्रः॥

'जिन्होंने शङ्ख-चक्र धारण करके ग्राह के मुख में पड़े हुए चरण वाले गजेन्द्र के घोर संकट का नाश किया, भक्तों को अभय करने वाले उन भगवान् का मैं अपने पूर्वजन्मों में किये हुए सम्पूर्ण पापों का नाश करने के लिए प्रातः काल भजन करता हूँ।'

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती
नारायणः सरसिजासनसंनिविष्टः।
केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी
हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः॥

'सूर्य मण्डल के बीच में कमलासन पर सुखपूर्वक बैठे हुए भगवान् नारायण का जो केयूर, मकराकृति-कुण्डल, मुकुट एवं हार धारण किये रहते हैं तथा जिनका स्वर्ण के समान देदीप्यमान शरीर है एवं जो शङ्ख-चक्र धारण किये हुए हैं, सर्वदा ध्यान करना चाहिये।'

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥

'जीवन में त्रिविध तापशान्त्यर्थ श्वेत वस्त्रधारी, शान्ताकार, चार भुजा वाले, प्रसन्न मुख भगवान् विष्णु का ध्यान करना चाहिये।'

उद्यत्कोट्यर्कसदृशं शङ्खं चक्रं गदाम्बुजम्।
दधतं च करैर्भूमिश्रीभ्यां पार्श्वद्वयाञ्चितम्॥
श्रीवत्सवक्षसं भ्राजत्कौस्तुभामुक्तकन्धरम्।
हारकेयूरवलयाङ्गदं पीताम्बरं स्मरेत्॥
(नारदपुराण. तृ. ७०।३२-३३)

'जिनकी दिव्य कान्ति उदयकाल के कोटि-कोटि सूर्यों के समान है, जो अपनी चार भुजाओं में शङ्ख, चक्र, गदा और कमल धारण करते हैं, भू देवी तथा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीदेवी जिनके उभय पार्श्व की शोभा बढ़ा रही हैं, जिनका वक्षःस्थल श्रीवत्सचिह्न से सुशोभित है, जो अपने गले में चमकीली कौस्तुभमणि धारण करते हैं और हार, केयूर, वलय तथा अङ्गद आदि आदि दिव्य आभूषण जिनके श्रीअङ्गों में सजकर शोभित हो रहे हैं, उन पीताम्बर धारी भगवान् विष्णु का चिन्तन करना चाहिये।'

चतुर्भुजमुदाराङ्गं श्यामं पद्मनिभेक्षणम्।
श्रीभूमिलीलासहितं चिन्तयेच्च सदा हृदि॥

(भारद्वाज संहिता ३।४८)

'यदि तीन शक्तियों के साथ नारायण का ध्यान करना हो तो श्री, भू और लीला के साथ करना चाहिये।'

लक्ष्मीः कीर्त्तिर्जया माया देव्यस्तस्याश्रिताः सदा।

(जयाख्य संहिता ६।७७)

'यदि चार शक्तियों के साथ नारायण का ध्यान करना हो तो लक्ष्मी, कीर्ति, जया और माया के साथ करना चाहिये।'

भागवत में ध्यान के लिये निम्न प्रकार से कहा है—

'पुष्ट्या श्रिया कीर्त्त्याजयाखिलद्भि—
र्निषेव्यमाणं परमेष्ठिनां पतिम्।'

(भागवत १०।८९।५७)

इस कथन के अनुसार पुष्टि, श्री, कीर्त्ति और अजा के साथ करना चाहिये।'

यदि सात शक्तियों के साथ भगवान् विष्णु का ध्यान करना हो तो श्रीमद्-भगवद्गीता में लिखा है—

कीर्तिः श्रीर्वाक् च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृति क्षमा।

(श्रीमद्भगवद्गीता १०।३४)

'कीर्ति, श्री, वाणी, स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा के साथ करना चाहिये।'

यदि आठ शक्तियों के साथ भगवान् नारायण का ध्यान करना हो तो श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा, जाम्बवती, सत्या, भद्रा, नग्नजिती, कालिन्दी और मित्र-विन्दा के साथ श्रीकृष्णविग्रह का ध्यान करना चाहिये।

यदि बारह शक्तियों का साथ भगवान् नारायण का ध्यान करना हो तो लिखा है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रिया पुष्ट्या गिरा कान्त्या कीर्त्या तुष्ट्येलयोर्जया ।
विद्ययाविद्यया शक्त्या मायया च निषेवितम् ।।

(श्रीमद्भागवत १०।३९।५५)

'श्री, पुष्टि, वाणी, कान्ति, कीर्ति, तुष्टि, इला, ऊर्जा, विद्या, अविद्या, शक्ति और माया के साथ करना चाहिये ।

यदि इससे भी और अधिक शक्तियों के साथ नारायण का ध्यान करना हो तो १६१०८ (सौलह हजार एक सौ आठ) दिव्य शक्ति मूर्तियों की भगवान् नारायण (विष्णु) या श्रीकृष्ण भगवान् के साथ भावना करना चाहिये, यह उपासना काण्ड की ऋचाओं की अधिष्ठात्री चिन्मय-विग्रहा देवियाँ बतलाई गयी हैं । उपासना समय में ऐसी भावना या ध्यान करना चाहिये कि ये शक्तियाँ श्रीविग्रह में से ही प्रकट हो रही हैं, क्योंकि भगवच्छक्तियाँ भगवद्विग्रह में ही लीन रहती हैं । इनके लिये लिखा है—

ततो भगवतो विष्णोर्भासा भास्वरविग्रहात् ।
लक्ष्म्यादीर्निस्सृता ध्यायेत् स्फुलिङ्गनिचया यथा ।।

(जयाख्य संहिता १३।१०५-१०६)

ये सब लक्ष्मीजी की विलास मूर्तियाँ कही गयी हैं । इन सब में लक्ष्मीजी प्रधान मानी गयी हैं ।

शङ्खचक्रधरं देवं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ।।
सर्वैरप्यायुधैर्युक्तं गरुडोपरि संस्थितम् ।
सनकादिमुनीन्द्रैस्तु सर्वदेवैरुपासितम् ।।
श्रीभूमिसहितं देवमुदयादित्यसंनिभम् ।
प्रातरुद्यत्सहस्रांशुमण्डलोपमकुण्डलम् ।।
सर्वलोकस्य रक्षार्थमनन्तं नित्यमेव हि ।
अभयं वरदं देवं प्रयच्छन्तं मुदान्वितम् ।।

(नारदपुराण ८१।१२०-१२३)

'भगवान् अच्युत शङ्ख और चक्र धारण करते हैं । वे द्युतिमान् होने से 'देव' कहे गये हैं । उनके चार भुजाएँ हैं । वे किरीट से सुशोभित हैं । उनके हाथों में सब प्रकार के आयुध हैं । वे गरुड़ की पीठ पर बैठे हैं । सनक आदि मुनीश्वर तथा सम्पूर्ण देवता उनकी उपासना करते हैं । उनके उभय पार्श्व में श्रीदेवी तथा भूदेवी हैं । वे उदय कालीन सूर्य के समान तेजस्वी हैं । उनके कानों के कमनीय कुण्डल प्रातःकाल उगते हुए सूर्यदेव के मण्डल के समान अरुण प्रकाश से सुशोभित हैं । वे वरदान प्रदान करने वाले देवता हैं । सर्वदा परमानन्द से परिपूर्ण रहते हैं और

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सम्पूर्ण विश्व की रक्षा के लिये सर्वदा सबको अभय प्रदान करते हैं। उनका कहीं किसी काल में भी अन्त नहीं होता।'

कालाम्भोधरकान्तं च वीरासनसमास्थितम्।
ज्ञानमुद्रां दक्षहस्ते दधतं जानुनीतरम्॥
सरोरुहकरां सीतां विद्युदाभां च पार्श्वगाम्।
पश्यन्तीं रामवक्त्राब्जं विविधाकल्पभूषिताम्॥

(नारद पुराण पूर्व. ७३।१०-१२)

'भगवान् श्रीराम की अङ्गकान्ति मेघ की काली घटा के समान श्याम है। वे वीरासन लगाकर बैठे हैं। दाहिने हाथ में ज्ञान मुद्रा धारण करके उन्होंने अपने बायें हाथ को बायें घुटने पर रख छोड़ा है। उनके वाम पार्श्व में विद्युत के समान कान्तिमती और नाना प्रकार के वस्त्राभूषणों से विभूषित श्री सीतादेवी विराजमान हैं। उनके हाथ में कमल है और वे प्राणवल्लभ श्रीरामचन्द्रजी का मुखारविन्द निहार रही हैं।'

नीलाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं
मुद्रा ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्ती मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

'बायें कर-कमल को घुटने पर रखकर दाहिने से ज्ञानमयी मुद्रा धारण किये, अविरत वीरासन से विराजमान, श्यामल बादल के समान मञ्जुल कान्ति, मुकुट-अङ्गद आदि विविध वेश-भूषा विभूषित, देदीप्यमान, दिव्याङ्गधारी भगवान् राघवेन्द्र श्रीराम एवं उनके पार्श्व में समासीन हो, निर्निमेषनेत्र से उन्हीं को निहारती हुई बिजली के समान द्युतिवाली, कर-कमल धारिणी, धरानन्दिनी भगवती श्रीसीताजी का भजन करते हैं।'

सरयूतीरमन्दारवेदिकापङ्कजासने॥
श्यामं वीरासनासनं ज्ञानमुद्रोपशोभितम्।
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं सीतालक्ष्मणसंयुतम्॥
अवेक्षमाणमात्मानं मन्मथामिततेजसम्।
शुद्धस्फटिकसंकाशं केवलं मोक्षकाङ्क्षया॥
चिन्तयेत् परमात्मानमतुलक्षं जपेन्मनुम्।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
(नारदपुराण ३।१.५-८०१)

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'सरयू के तट पर मन्दार (कल्पवृक्ष) के नीचे एक वेदिका बनी हुई है और उसके ऊपर एक कमल का आसन बिछा हुआ है, जिस पर श्यामवर्ण वाले भगवान् श्रीराम वीरासन से बैठे हैं। उनका दाहिना हाथ ज्ञान-मुद्रा से सुशोभित है। उन्होंने बायें उरु पर बायाँ हाथ रख छोड़ा है। उनके वामभाग में सीताजी और दाहिने भाग में लक्ष्मणजी हैं। भगवान् श्रीराम का अमित तेज कामदेव से भी अत्यधिक सुन्दर है। वे शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल तथा अद्वितीय आत्मा का ध्यान द्वारा साक्षात्कार कर रहे हैं। ऐसे परमात्मा श्रीराम का केवल मोक्ष की इच्छा से चिन्तन करें और छः लाख मन्त्र जप करें।

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनु गोगोपसङ्घावृतं
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥

'प्रफुल्ल नील कमल के समान जिनकी श्याम मनोहर कान्ति है, मुखमण्डल की चारुता चन्द्रविम्ब को भी विलज्जित करती हैं, मोरपंख का मुकुट जिन्हें अधिक प्रिय है, जिनका वक्ष स्वर्णमयी श्रीवत्सरेखा से समलंकृत है, जो अत्यन्त तेजस्विनी कौस्तुभ मणि धारण करते हैं और रेशमी पीताम्बर पहने हुए हैं, गोप सुन्दरियों के नयनारविन्द जिनके श्रीअङ्गों की सतत अर्चना करते हैं, गौओं तथा गोपकिशोरों के संघ जिन्हें घेर कर खड़े हैं तथा जो दिव्य अङ्गभूषा से विभूषित हो मधुरातिमधुर वेणुवादन में संलग्न हैं, उन परम सुन्दर गोविन्द का मैं भजन करता हूँ।'

पञ्चवर्षमतिलोलमङ्गने
धावमानमतिचञ्चलेक्षणम्।
किंकिणीवलयहारनूपुरै
रञ्जितं नमत गोपबालकम्॥

'भगवान् बालगोपाल की पाँच वर्ष की अवस्था है, वे अत्यन्त चपल गति से आँगन में दौड़ रहे हैं, उनके नेत्र भी बड़े चञ्चल हैं, किङ्किणी, वलय, हार और नूपुर आदि आभूषण विभिन्न अङ्गों की शोभा बढ़ा रहे हैं, ऐसे सुन्दर गोपबालक भगवान् को नमस्कार करें।

अनादिमाद्यं पुरुषोत्तमोत्तमं श्रीकृष्णचन्द्रं निजभक्तवत्सलम्।
स्वयं त्वसंख्याण्डपतिं परात्परं राधापतिं त्वां शरणं व्रजाम्यहम्॥
गोलोकनाथस्त्वमतीवलीलो लीलावतीयं निजलोकलीला।
वैकुण्ठनाथोऽसि यदा त्वमेव लक्ष्मीस्तदेयं वृषभानुजा हि॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वं रामचन्द्रो जनकात्मजेयं भूमौ हरिस्त्वं कमलालयेयम् ।
यज्ञावतारोऽसि यदा तदेयं श्रीर्दक्षिणा स्त्रीपतिपत्निमुख्यौ ।।
त्व नारसिंहोऽसि रमाहृदीयं नारायणस्त्वं च नरेण युक्तः ।
तदा त्वियं शान्तिरतीव साक्षाच्छायेव याता च तवानुरूपा ।।
त्व ब्रह्म चेयं प्रकृतिस्तटस्था कालो यदेमां च विदुः प्रधानम् ।
महान् यदा त्वं जगदङ्कुरोऽसि राधा तदेयं सगुणा च माया ।।
यदन्तरात्मा विदितश्चतुर्भिस्तदा त्वियं लक्ष्मणरूपवृत्तिः ।
यदा विराड्देहधारस्त्वमेव तदाखिलं वा भुवि धारणेयम् ।।
श्यामं च गौरं विदितं द्विधा महस्तवैव साक्षात् पुरुषोत्तमोत्तम् ।
गोलोकधामाधिपतिं परेशं परात्परं त्वा शरणं व्रजाम्यहम् ।।

(गर्ग संहिता गोलो. अध्याय १६)

'प्रभो ! आप सबके आदि कारण हैं; किन्तु आपका कोई आदि अन्त नहीं है। आप समस्त पुरुषोत्तमों में उत्तम हैं। अपने भक्तों पर सदा वात्सल्य भाव रखने वाले और श्रीकृष्ण नाम से विख्यात हैं। अगणित ब्रह्माण्डों के पालक-पति हैं। आप परात्पर प्रभु राधा-प्राणवल्लभ श्रीकृष्णचन्द्र की मैं शरण लेता हूँ। आप गोलोक-धाम के अधिनाथ हैं, आपकी लीलाओं का कहीं अन्त नहीं है। आपके साथ यह लीलावती श्रीराधा अपने लोक (नित्य धाम) में ललित लीलाएँ किया करती हैं। जब आप ही 'वैकुण्ठनाथ' के रूप में विराजमान होते हैं, तब ये वृषभानुनन्दिनी ही 'लक्ष्मी' रूप से आपके साथ सुशोभित होती हैं। जब आप रामचन्द्र के रूप में भूतल पर अवतीर्ण होते हैं, तब ये जनकनन्दिनी 'सीता' के रूप में आपका सेवन करती हैं। आप 'विष्णु' हैं और यह कमल वनवासिनी 'कमला' हैं, जब आप 'यज्ञ पुरुष' का अवतार धारण करते हैं, तब ये श्री जी आपके साथ 'दक्षिणा' रूप में निवास करती हैं। आप पति शिरोमणि हैं तो ये पत्नियों में प्रधान हैं। आप 'नृसिंह' हैं तो ये आपके हृदय में 'रमा' रूप से निवास करती हैं। आप ही 'नर-नारायण' रूप से रहकर तपस्या करते हैं, उस समय आपके साथ ये 'परम शान्ति' के रूप में विराज-मान होती हैं। आप जहाँ जिस रूप में रहते हैं, वहाँ तदनुरूप देहधारण करके ये छाया की भाँति आपके साथ रहती हैं। आप 'ब्रह्म' हैं और ये 'तटस्था प्रकृति'। आप जब 'काल' रूप में स्थिति होते हैं, तब इन्हें 'प्रधान' (प्रकृति) के रूप में जाना जाता है। जब आप जगत् के अंकुर 'महान्' (महत्तत्त्व) रूप में स्थित होते हैं, तब ये श्रीराधा 'सगुण माया' रूप में स्थित होती हैं। जब आप मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार—इन चारों अन्तःकरणों के साथ 'अन्तरात्मा' रूप से स्थित होते हैं, तब ये श्रीराधा 'लक्षणावृत्ति' के रूप में विराजमान होती हैं। जब आप 'विराट्' रूप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धारण करते हैं, तब ये अखिल भूमण्डल में 'धारणा' कहलाती हैं। पुरुषोत्तमोत्तम! आपका ही श्याम और गौर-द्विविध तेज सर्वत्र विदित है। आप गोलोक धाम के अधिपति परात्पर परमेश्वर हैं। मैं आपकी शरण लेता हूँ।'

वेदों में 'विष्णु-तत्त्व' निरूपण

परात्पर पूर्णब्रह्म साकार रूप धारण करके लोक-कल्याण करते हैं, इस कारण अखण्ड से सखण्ड, निरवयव से सावयव, निर्विकार होने के कारण उन पर अपूर्णत्व और एकदेशीयता का आरोप करना भी भारी भूल है। वे तो 'पुरुरूप ईयते'—इस वेदोक्ति को चरितार्थ करते हैं। वे 'ॐ विश्वं विष्णुः' हैं।

यो देवेभ्य आतपति यो देवाना पुरोहितः।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये॥

(यजुर्वेद ३१।१८)

'जो देवों के लिए सर्वतः प्रकाश देता है, जो पूर्वकाल से ही देवताओं का कल्याणकारक है और जिसने देवताओं की उत्पत्ति से पहले ही अपने को व्यक्त किया, ब्रह्म से प्रादुर्भूत हुए उस प्रकाशमान को नमस्कार है।'

पूर्णब्रह्म परमात्मा ही साकार असंख्य रूपों में अवतार ग्रहण करके असंख्य चरित्र करते हैं तथा पूर्णब्रह्म भी बने रहते हैं। राम-कृष्ण आदि अनेक अवतार पूर्णपरात्पर ब्रह्म की ही अभिव्यक्तियाँ हैं, वे पूर्ण हैं। लोककल्याणार्थ उनकी अभिव्यक्तियाँ हुई थीं। इसके इतिहास और पुराण प्रमाण हैं। वेदमन्त्रों में भी भगवान् के चरित्रों की सूचना मिलती है—

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे।
इन्द्रस्य युज्यः सखा॥

(यजुर्वेद ६।४)

'भगवान् विष्णु के उन कर्मों (चरित्रों) को सावधानी से देखो और समझो, जिनके द्वारा वे लोक रक्षा के नियमों को आबद्ध रखते हैं। वे इन्द्र के सहयोगी मित्र हैं।'

निम्नलिखित मंत्र में वामनावतार का चरित्र स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है—

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पद्म्।
समूढमस्या पाँसुरे स्वाहा॥

(यजुर्वेद ५।१५)

'विष्णु ने त्रैलोक्य को व्याप्त किया। अतः तीन विभागों से उन्होंने चरण रखा। यह त्रैलोक्य उस समय दूषित वातावरण में पड़ चुका था।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु के द्वारा प्रदान किये गये इन्द्र-पद का अवैध रूप से अपहरण हो जाने पर दैवी संकट दूर करने के लिए विष्णु भगवान् का यह कर्तव्य था कि वे धर्मध्वंसी असुर जाति से इन्द्र-पद छुड़ाकर लोकधर्म की व्यवस्था का रक्षाधिकार पाने वाले इन्द्र का पक्ष करते एवं देवकार्यों में सहायक होते। यह इन्द्रसखा का भाव अखिल भुवन व्यापक सर्वेश्वर भगवान् विष्णु में देवरूप से है। परात्पर ब्रह्म रूप में योगीजन समाधियोग द्वारा इन्हें प्राप्त कर सदैव इनके तेज का दर्शन करते हैं—

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्॥

(यजुर्वेद ६।५)

'विष्णु के उस परमपद का (तेजोमय परब्रह्म रूप का, जो—गायत्री-मन्त्र से बोधित किया गया है) विद्वान् सदा दर्शन करते हैं। वे समाधिस्थ होकर योग दृष्टि से सदा उसे प्राप्त करते रहते हैं। विष्णु का वह तेजोमय स्वरूप इस प्रकार विस्तारयुक्त दृष्टिगोचर होता है, जैसे सर्वसाधारण को आकाश में विस्तारवान् किरणमण्डल (मध्याह्न का सूर्य)।'

'पुरुषसूक्त' के पुरुष तत्त्व को भगवान् विष्णु के रूप में देखा जाता है—

'पुरुषस्य हरेः सूक्तं सर्वपापप्रणाशनम्।'

'पुरुषसूक्त' नामक भगवान् श्रीहरि की स्तुति समस्त पापों का नाश करने वाली है।'

'पुरुष' शब्द का प्रयोग शिव और ब्रह्मा के लिए भी हुआ है। जिनकी बुद्धि निर्मल-अभिनिवेशशून्य है. वे विज्ञजन 'उपासकानां सिद्धयर्थं ब्रह्मणो रूप कल्पना' तथा 'एक मूर्तिस्त्रयो देवा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः' की दृष्टि से दुराग्रह में नहीं पड़ते।

पुरुषसूक्त में पुरुष के तीन रूपों की चर्चा स्पष्ट रूप से मिलती है—

१—त्रिपात् पुरुष, २—एकपात् पुरुष, ३—अधिपुरुष। त्रिपात् पुरुष लोकोत्तीर्ण परम पुरुष है। इसे दो प्रकार से समझा जाता है—एक तो यह कि निर्गुणनिर्विशेष परब्रह्म है अथवा वह नित्यलीलाविभूति का आश्रय है, जहाँ अतर्क्य, अव्यपदेश्य गोलोकादि सम्बन्धी चिरन्तन लीला चलती रहती है। ऋग्वेद में लिखा है—

तदस्य प्रियमभि पाथो अश्यां
नरो यत्र देवयवो वदन्ति।
उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था
विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः॥

(ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त १५४, मन्त्र ५)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

. Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस महाविष्णु के प्रसिद्ध एवं सर्वप्रिय अविनाशी लोक को हम प्राप्त करें, जहाँ विष्णु सायुज्य प्राप्त करने वाले लोग तृप्ति का अनुभव करते हैं। महात्माओं के द्वारा प्राप्य अथवा अपने एक पाद से अनन्त जगदण्डों को आक्रान्त करने वाले व्यापक महाविष्णु के परमपद में परानन्द का स्रोत विद्यमान है। क्षुधा, तृष्णा, जरा, मरण एवं पुनरावृत्ति से रहित इस मधुर रस से हमें बांध देता है।

एकपात् पुरुष 'एकपादनारायण' या 'महाविष्णु' के रूप में विख्यात है। यह महाविराट् पुरुष है। इसके रोम-रोम में अनन्त, अगणित ब्रह्माण्ड परमाणु के सदृश गतिशील रहते हैं।

भगवान् का विराट् रूप वर्णन में मन्त्र आता है—

'पुरुष एवेद ँ सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम् ।'

(यजुर्वेद ३१।२)

'भगवान् का विराट् रूप यह समस्त ब्रह्माण्ड है।'

वेद में भगवान् विष्णु का वैभव वर्णन विषय में मन्त्र है—

'न ते विष्णो जायमानो न जातो
देव महिम्नः परमन्तमाप ।'

(ऋग्वेद ७।९९।२)

'भगवान् विष्णु का वैभव अपार है। उसका पार आज तक कोई नहीं पा सकता है।' भगवान् विष्णु के लोक मन्त्र है—

या ते धामान्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः ।
अत्राह तदुरुगायस्य विष्णोः परमं पदमव भाति भूरि ।।

(शुक्ल यजुर्वेद ६।३)

हे भगवान् ! हम तेरे उन लोकों को जाना चाहते हैं, जिन स्थानों में तेरी अखण्ड किरणें सर्वदा प्रकाशित रहती हैं। जो धाम सर्वदा प्रकाशित रहता है, उसे सर्वत्र सभी नामों से गाये जाने वाले विष्णु भगवान् का परमपद कहते हैं।

हम देखते हैं, वही परमपद आदित्य मण्डल के रूप में प्रकाशित हो रहा है। इसी विषय में वेदमन्त्र कहता है—

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवा ँ सः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमपदम् ।

(यजुर्वेद ३४।४४)

'इसी आदित्यमण्डलान्तर्गत विष्णुलोक की विष्णु भगवान् के निष्काम, सब ओर से संयमी, त्यागी उपासक उसे प्राप्त करने की इच्छा से सावधानीपूर्वक उपासना

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करते हैं। यही आदित्य मण्डल अथवा इसी आदित्य मण्डल के भीतर भगवान् विष्णु का परमपद है।'

भगवान् विष्णु से कामना हेतु प्रार्थना मंत्र है—

यामश्विनावमिमातां विष्णुर्यस्यां विचक्रमे।
इन्द्रो यां चक्र आत्मनेऽनमित्रां शचीपतिः।
सा नो भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः॥

(अथर्ववेद १२।१।१०)

जिस भूमि को अश्विनी कुमारों ने सम्मानित किया, विष्णु भगवान् ने अपने चरणों से नापा, पवित्र किया, शचीपति इन्द्र ने जिसमें अपना कोई शत्रु नहीं रहने दिया, वह भूमि मुझे इस प्रकार से सुख दे, जैसे माँ बच्चे को स्वयं दूध देती है।'

धन प्रदान करने हेतु प्रार्थना मन्त्र है—

'त्वष्टा विष्णुः प्रजया संरराणो यजमानाय द्रविणं दधातु।'

(अथर्ववेद ७।१८।४)

'धन के उद्योगों को बढ़ाने वाले विष्णु भगवान् यजमान की प्रजा को प्रसन्न रखते हुए यजमान को प्रभूत धन प्रदान करें।'

सुख प्रदान करने हेतु प्रार्थना मन्त्र है—

शं नो मित्रः शं वरुणः शं विष्णुः शं प्रजापतिः।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो भवत्वर्यमा॥

(अथर्ववेद १९।९।६)

'मित्र, वरुण, विष्णु भगवान्, प्रजापति, इन्द्र, बृहस्पति और अर्यमा हम सबको—सभी प्रकार से, सभी ओर से सुखी करें।'

'विष्णु' का अर्थ—अन्तःप्रविष्ट और व्यापक होता है। यह नियम भी है कि जो सर्वव्यापक होता है, वही सर्वत्र प्रविष्ट भी होता है। आकाश व्यापक है, इसी कारण वह घट और मठ दोनों के भीतर भी विद्यमान है और बाहर भी है। किन्तु विष्णु भगवान् तो आकाश से भी बड़े एवं व्यापक कहे गये हैं—

'दिवो वा विष्ण उत वा पृथिव्या महो वा विष्ण उरोरन्तरिक्षात्।'

(शुक्ल यजुर्वेद ५।१९)

'विष्णु भगवान् भूमि और इस विस्तृत अन्तरिक्ष से ही नहीं, द्युलोक (स्वर्ग) से भी बड़े हैं।'

इससे अन्तरिक्ष आदि लोक भी उनके भीतर आ जाते हैं—वे अन्तरिक्ष आदि में भी व्याप्त रहते हैं। अथर्ववेद के ७।२६-२७वें सूक्त में कहा गया है—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'मैं विष्णु भगवान् की क्या प्रशंसा कर सकता हूँ, क्योंकि समस्त संसार उन्हीं का बनाया हुआ है।' 'तत् सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्।' 'विष्णु भगवान् जगत् का निर्माण करके फिर जगत् के भीतर भी प्रवेश कर गये।

भगवान् नारायण, ओंकार, कृष्ण, वासुदेव आदि विष्णु के ही नाम हैं। वेदमन्त्रों में इन नामों का भी उल्लेख हुआ है—

१ सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशम्भुवम्।
विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम्॥

(तैत्तिरीय आरण्यक १०।११)

'भगवान् नारायण के अनन्त मस्तक हैं, अनन्त चक्षु हैं, वे ही समस्त विश्व, विश्व के मङ्गलकारक हैं, वे ही अक्षर परमपद हैं।'

२ ओंकारं चतुभुजं लोकनाथं नारायणम्। सर्वस्थितं
सर्वगतं सर्वव्याप्तं तन्मे नमः शिवसंकल्पमस्तु॥

(ऋक्परिशिष्ट १०।१६६।२२)

ऋग्वेद की शाखा का यह बड़ा सा सूक्त है। इसमें शिव, कैलास, शिवालय तथा चतुर्भुज नारायण का स्पष्ट उल्लेख है। नारायण की लोकनाथ, सर्वस्थित, सर्वगत, सर्वव्याप्त नामों से स्तुति की गई हैं।

३ नारायणाय विद्महे। वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।
सायण-भाष्य-स च कृष्णावतारे वसुदेवस्य पुत्रत्वाद्वासुदेवः।

(तैत्तिरीय आरण्यक)

'विष्णु अथवा नारायण कृष्णावतार में वसुदेव के पुत्र होकर जन्म लेते हैं, इसलिए वे 'वासुदेव' नाम से विख्यात् हैं।'

शाकल-संहिता में दीर्घतमा ऋषि द्वारा दृष्ट तीन सूक्तों में (१७) विष्णु-दैवत मन्त्र हैं, जो 'विष्णोर्नु कं' (१।१५४।१) इत्यादि प्रसिद्ध मन्त्र से आरम्भ होकर 'आ या विवाय' (१।१५६।५) इत्यादि मन्त्र पर समाप्त होते हैं। वे तीन सूक्त भागवत-धर्म और वैष्णवी-भक्ति रस से ओत-प्रोत हैं।

सर्वप्रथम संस्कृति का उद्भव वेदों से ही हुआ है। वेद चार शृङ्खलाएँ हैं— ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इनकी भाषा देवभाषा है, इनका महत्त्व प्राचीनकाल से ही है। साधारणतया इन वेद-वाक्यों को मन्त्र और उनके द्रष्टाओं को 'ऋषि' कहा जाता है। गीत, गद्य एवं पद्य की शैली में वर्णित वेद-मन्त्रों के अनेक द्रष्टा हैं, परन्तु विष्णूपासना की दृष्टि से मुख्यतया वसिष्ठ, मेधातिथि और दीर्घतमा तीन के ही नाम उल्लेखनीय हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु ही पालक हैं। उनकी वन्दना देवताओं ने भूरि-भूरि की है। हम तो प्राणीमात्र हैं। वे ही व्यक्ति गुणों के मूल हैं। वे संसार के सर्वप्रकाशक हैं, आदि पुरुष हैं। वरुण तनय भगवान् वसिष्ठ ने भी यही कहा है—'हे विष्णो! हे देवाधिदेव! हे लोकेश्वर! आपकी महिमा का पार न तो अब तक उत्पन्न हुए किसी भी व्यक्ति ने पाया है और न अब जन्म ले रहा है वह पा सकेगा—यह मन्त्र ऊपर (ऋग्वेद ७।९९।२) आ चुका है।

'आदि पुरुष सर्वव्यापक परमोत्तम भगवान् विष्णु ही पृथ्वी के रक्षक और धुरंधर हैं' गां पृथ्वीं पाति रक्षतीति गोपाः।'—ऐसी कण्वनन्दन ब्रह्मर्षि मेधातिथि की उक्ति है।

विष्णुर्गोपा अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन्॥'

(ऋग्वेद १।२२।१८)

मन्त्रद्रष्टा दीर्घतमा ने कहा है—

यः पार्थिवानि विममे रजांसि।
यो अस्कभायदुत्तरं सधस्थम्॥

(ऋग्वेद १।१५४।१)

'श्रीविष्णु ने इन पार्थिव लोकों का निर्माण किया है और गगन मण्डल को भी स्वकक्ष में स्थापित किया है।

प्रभु विष्णु के अपने चरणों में ब्रह्माण्ड को छिपा लेने एवं परिक्रमा करने की बात भी कही गई है। वे सर्वरक्षक हैं। उन महामहिम भगवान् विष्णु की महिमा अपार है। वे भक्तों के प्यारे हैं, सारी यातनाएँ भक्तों के हितार्थ वरण करते हैं, दयानिधि हैं। उनका हृदय करुणा से भरा हुआ है।

सनातन धर्म की मान्यता के अनुसार वेद स्वतः प्रमाण और अवितर्क्य हैं। मत्स्य-कूर्म-वाराह आदि विष्णु के सभी अवतारों का उल्लेख वेदों में सर्वत्र ओत-प्रोत हैं। कतिपय विदेशी विद्वान् एवं विदेशी भाषाओं के रंग में रंगे हुए विद्वान् कई बार कह देते हैं कि वेदों में विष्णु व विष्णु के अवतार राम, कृष्णादि का कहीं उल्लेख नहीं है। यह उनकी अल्पबुद्धि ज्ञान का परिचय होने के अतिरिक्त क्या कहा जा सकता है? यहाँ विस्तार भय से अधिक न लिखकर कतिपय थोड़े प्रमाण ही, अवतार विषयक वेद मन्त्रों के केवल संकेत ही दे रहे हैं—

मत्स्य—

"मनवे ह.....तस्या वने निजानस्य मत्स्यः पाणी आपेदे।"

(शतपथ ब्राह्मण १।८।१।१)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कूर्म—

(क) 'स यत्कूर्मो नाम.' इत्यादि (शतपथ ब्रा. ७।५।१।५)

(ख) 'अन्तरतः कूर्मभूतं सर्पन्तम्' तै. आरण्यक १।२५।९२)

वाराह—

(क) 'आपो वै इदमग्रे.....वाराहो भूत्वाऽहरत्'—इत्यादि

(तै. सं. ७।१।५।१)

(ख) 'वाराहेण पृथिवी संविदाना सूकराय विजिहीते मृगाय ।'

(अथर्व. सं. १२।१।४८)

(ग) 'अथ वराहविहतम्'—इत्यादि (शतपथ ब्रा. १४।१।२।११)

(घ) उद्धृतासि वाराहेण कृष्णेन शतबाहुना ।
भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी ।।

(तै आ. १०।१)

नृसिंह—

(क) 'प्रतद् विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः'-इत्यादि

(ऋक् सं. १।१५४।२)

(ख) वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि ।
तन्नो नरसिंहः प्रचोदयात् ।।

(तै. आरण्यक १० परिशिष्ट १।६)

वामन—

(क) 'इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ।' इत्यादि

(ऋक् संहिता १।२२।१७)

(ख) 'त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुगोपा अदाभ्य ।' इत्यादि

(ऋक् संहिता १।२२।१८-२१)

(ग) 'यो रजांसि विममे पार्थिवानि त्रिश्चिद्विष्णुः ।' इत्यादि

(ऋक् संहिता. ६।४९।१३)

(घ) वामनो ह विष्णुरास । (शतपथ ब्राह. १।२।५।५)

(ङ) त्रेधा विष्णुरुरुगायो विचक्रमे । (तै. ब्रा. ३।१।२।६)

परशुराम—

ऋक् संहिता १०।११०।११ मन्त्र के ऋषि परशुरामजी के पिता जमदग्नि हैं । उनके द्वारा दृष्ट बहुत मन्त्रों का उल्लेख है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राम—

भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं च जारो अभ्येति पश्चात् ।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन्नुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ।।

([क] संहिता साम. उत्तर १४४८)

'राम सीता के साथ वन में गये थे। लम्पट रावण राम के परोक्ष में सीता को हरण करने आया था। रावण के विध्वंस हो जाने पर सीता की अग्नि परीक्षा के समय द्युतिमान् अग्निदेव सीता को गोद में लेकर राम के सामने आये थे।'

एक 'मन्त्ररामायण' नामक ग्रन्थ है उसमें १५० मन्त्रों में रामायणी कथा का उल्लेख विद्यमान् है।

कृष्ण—

कालिको नाम सर्पो नवनागसहस्रबलः ।
यमुनाह्रदे ह स जातो यो नारायण वाहनः ।। इत्यादि

(ऋक् संहिता ७।५५।४ खिल)

इसके अतिरिक्त वेदमन्त्रों में कृष्ण विषयक अनेक मन्त्र हैं। 'वेदों में ब्रजलीला' का भी उल्लेख है। इस विषय में 'कल्याण मासिक पत्र सन् १९४८ पृष्ठ ९४१ श्री नीरजाकान्त चौधरी का लेख प्रकाशित हुआ था, वह देखने योग्य है।

उपनिषदों में विष्णु तत्त्व का उल्लेख निर्गुण, सगुण, निराकार, साकार रूपों में प्राप्त होता है—

निर्गुण—

'स होवाचैतद्वै तदक्षरं गार्गी ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घमलोहितमस्नेहमच्छायमतमोऽवाप्वनाकाशमसङ्गमरसमगन्धमचक्षुष्कमश्रोतमवागमनोऽतेजस्कमप्राणममुखममात्रमनन्तरमह्यम् ।

(बृहदारण्यक. ३।८।८)

'याज्ञवल्क्यजी ने कहा—हे गार्गि ! इस अक्षर को ब्रह्मवादीजन स्थूल से भिन्न, अणु से भिन्न, ह्रस्व से भिन्न, दीर्घ से भिन्न, लाल-पीला (किसी रंग विशेष) से भिन्न, चिकनेपन से भिन्न, छाया से भिन्न, अन्धकार से भिन्न, वायु से भिन्न, आकाश से भिन्न, प्रसङ्ग, रस से भिन्न, गन्ध से भिन्न, नेत्र से भिन्न, श्रोत से भिन्न, वाणी से भिन्न, मन से भिन्न, तेज से भिन्न, प्राण से भिन्न, मुख से भिन्न, मात्रा से भिन्न, अनन्तर से भिन्न और बाहर से भिन्न कहते हैं।'

अदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणमचिन्त्यमपदेश्यमेकात्मप्रत्ययसारं प्रपञ्चोपशमं शान्तं शिवमद्वैतम् । (माण्डूक्य. ७)

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'यह अदृष्ट, अव्यवहार्य, अग्राह्य, अलक्षण, अचिन्त्य, अनिर्वचनीय, एकात्म-प्रत्ययसार, प्रपञ्च से रहित, शान्त, शिव और अद्वैत है।'

'अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगन्धवच्चयत्।'

(कठ. १।३।१५)

'जो शब्दरहित है, स्पर्शरहित है, रूपरहित है, अव्यय है, रसरहित है, नित्य है और गन्धरहित है।'

'स एष नेति नेत्यात्माग्रह्यः' (बृहदारण्यक. ४।२।४)

"वह यह आत्मा यह भी नहीं, यह भी नहीं, इस प्रकार अग्राह्य है।"

निर्गुण-सगुण—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च॥

(श्वेताश्वतर. ६।११)

'एक देव सब भूतों में छिपा है, सबमें व्यापक है, सभी भूतों का अन्तरात्मा है, कर्मों का अध्यक्ष फलदाता है, सभी भूतों का वासस्थान है, चेतन है, केवल है और निर्गुण है।'

सगुण—

'एष सर्वेश्वर एष सर्वज्ञ एषोऽन्तर्याम्येष योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययौ हि भूतानाम्।' (माण्डूक्य. ६)

'वह सबका ईश्वर है, वह सर्वज्ञ है, वह अन्तर्यामी है, वह सबका कारण है, उसी से सब भूतों की उत्पत्ति होती है।'

'सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः सर्वरसः सर्वमिदमभ्यात्तः।'

(छान्दोग्य ३।१४।४)

'वह सम्पूर्ण कर्म करने वाला है, सम्पूर्ण कामना वाला है, सम्पूर्ण गन्ध वाला है, सम्पूर्ण रसवाला है, इससे सबमें व्याप्त है।'

'एष हि द्रष्टा स्प्रष्टा श्रोता घ्राता रसयिता मन्ता बोद्धा कर्ता विज्ञानात्मा पुरुषः। (प्रश्नोपनिषद् ४।९)

'वही देखने वाला, स्पर्श करने वाला, सुनने वाला, सूँघने वाला, चखने वाला, मनन करने वाला, जाननेवाला, करने वाला, विज्ञानात्मा पुरुष है।'

निराकार—

'यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुः श्रोत्रं तदपाणिपादम्।'

(मुण्डक. १।१।६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'वह जो अदृश्य है, अग्राह्य है, अगोत्र है, अवर्ण है, चक्षु और श्रोत्र से रहित है और हाथ तथा पैर से भी रहित है।

साकार—

एको वशी सर्वगः कृष्ण ईड्य
एकोऽपि सन् बहुधा यो विभाति।
तं पीठं येऽनुभजन्ति धीरा—
स्तेषां सिद्धिः शाश्वती नेतरेषाम् ।।

(गोपाल पूर्वतापिनी उपनिषद् १।१०।१२,२।८)

'एकमात्र सबको वश में रखने वाले सर्वव्यापी भगवान् श्रीकृष्ण सर्वथा स्तवन करने योग्य हैं। वे एक होते हुए भी अनेक रूपों में प्रकाशित हो रहे हैं। जो धीर भक्तजन पूर्वोक्त पीठ पर विराजमान उन भगवान् का प्रतिदिन पूजन करते हैं, उन्हीं को शाश्वत सुख प्राप्त होता है, दूसरों को नहीं।'

नारायणः परो ज्योतिरात्मा नारायणः परः।
नारायणः परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परम् ।।

(नारायणोपनिषद् ९।८)

'नारायण परम ज्योति हैं, नारायण परमात्मा हैं, नारायण परम ब्रह्म हैं, नारायण परम तत्त्व हैं।'

यच्च किंचिज्जगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा।
अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः ।।

(नारायणोपनिषद् १३।१-२)

'जो कुछ भी संसार में दिखाई या सुनाई देता है, उस सबको श्रीनारायण बाहर-भीतर से व्याप्त करके स्थित हैं।'

'तद् विष्णोः परमं पदम्।'

(कठोपनिषद् १।३।९)

'त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) में भगवान् विष्णु ही परम प्रधान सुविदित हैं।'

संहिता साहित्य में विष्णु-तत्त्व—

भगवान् विष्णु एवं उनके अनेक अवतार राम, कृष्णादि की मधुर आनन्द प्रदान करने वाली उपासना विषय को लेकर अनेक संहिताओं का निर्माण हुआ है। साहित्य, साधना एवं सिद्धान्त-स्थापना की दृष्टि से संहिताओं का विशेष

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महत्त्व है। संहिताओं की बहुत बड़ी संख्या है। यथा साध्य हमें जो प्राप्य हो सकी हैं, इस विषय में जो उल्लेख प्राप्त हुए हैं उनका सारांश रूप में थोड़ा दिग्दर्शन ही करा देना आवश्यक है—

(१) श्री बृहद् ब्रह्मसंहिता—

यह वैष्णवों की मधुर साधना का प्रधान ग्रन्थ है। इसके प्रथम पाँच अध्यायों में वैष्णव-साधना का विधान है। इसके आगे सीता-राम और राधा-कृष्ण दोनों की युगल उपासना का विधान लिखा है। श्रीरामावतार का हेतु वर्णन पुनः षड़क्षर श्रीराम मन्त्र की महिमा वर्णन तथा भगवान् श्रीराम का बड़ा सुन्दर भव्य ध्यान लिखा है। दस अध्यायों में ग्रन्थ पूर्ण हुआ है।

(२) श्रीअगस्त्यसंहिता—

यह श्री वैष्णवों की परम प्रामाणिक संहिता में परमादरणीय संहिता है जो अगस्त्य और सुतीक्ष्ण के सम्वाद में लिखी गई है। प्रारम्भ में वर्णाश्रम धर्म विधान, फिर भिन्न-भिन्न फलों की प्राप्ति हेतु विभिन्न राममन्त्रों के न्यास विनियोग, कीलक, वीज आदि का साङ्गोपाङ्ग वर्णन है। इसके आगे इक्कीसवें अध्याय तक 'ब्रह्मविद्या' का विवेचन है। इसके पश्चात् हृदयकमल में सीताराम की अश्लिष्ट युगल मूर्ति का मङ्गलमय ध्यान षड़क्षर मन्त्र की महिमा यन्त्र कवचादि का सविस्तार वर्णन तथा युगल मूर्ति के षोड्शोपचार पूजन विधान लिखे हैं।

(३) श्रीवाल्मीकिसंहिता—

यह रामानन्दीय वैष्णवों की परम आदरणीय संहिता है। इसमें पाँच अध्याय हैं। आरम्भ में देवगुरु वृहपस्तिजी द्वारा अनेक मुनियों को श्रवण-कीर्तनादि नवधा भक्ति बतलाई गई है। आगे राममन्त्र की महिमा, गुरु-परम्परा, विरक्त वैष्णवों के लक्षण एवं कुलकृत्य वर्णन किया गया है, तथा दीक्षा-संस्कार, कण्ठी-धारण, तिलक आदि वैष्णवाचारों का सविस्तार वर्णन हुआ है।

(४) श्रीशुकसंहिता—

गोलोक विहारी भगवान् श्रीकृष्ण एवं राधारानी के रास-विलास का अत्यंत मार्मिक आनन्दप्रद तात्त्विक तथा लीला-रहस्यों का वर्णन है। जिसमें राधा और कृष्ण दोनों से परमदेवाधिदेव भगवान् राम के शरीर में प्रवेश कर जाने का अद्भुत वर्णन किया गया है। श्रीराम को केवल पुरुषोत्तम ही नहीं बतलाया गया, उनको सनातन परब्रह्म होना कहा गया है।

(५) श्रीलोमशसंहिता—

इसमें श्रेष्ठ मुनि पिप्पलाद तथा लोमश के सम्वाद रूप में कोटिकंदर्प

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लावण्य रसमूर्ति भगवान् श्रीराम तथा सीताजी के साथ और सीताजी की अनेक सखियों के साथ नानाविध रस-विलासों का आनन्ददायक वर्णन किया गया है।

(६) श्रीवसिष्ठसंहिता—

इसमें उपासनात्रय सिद्धान्त वर्णन, सर्वोपरि वैकुण्ठलोक, वैकुण्ठ से भी परे गोलोक, गोलोक के मध्य में साकेतलोक वर्णन किया गया है। साकेतलोक के पूर्व में मिथिला, दक्षिण में चित्रकूट, पश्चिम में वृन्दावन, उत्तर में महावैकुण्ठ बतलाया गया है। महावैकुण्ठ में सब पार्षदों सहित भगवान् श्रीमन्नारायण के रहने का वर्णन है। यही श्रीमन्नारायण सृष्टिकर्ता चौबीस अवतारों के कारण हैं और ये ही श्रीरामचरित के मुख्याचार्य बतलाये गये हैं। साकेत-लोक सप्तावरणों के भीतर है। इन आवरणों का सविशेष वर्णन इस संहिता में हुआ है, वैसा अन्य ग्रन्थों में अभी तक नहीं देखने में आया। इस ग्रन्थ में परात्पर ब्रह्म राम ही सबके आदि कारण बतलाये गये हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि भी इनके अंश के अवशेष बतलाये हैं।

(७) हिरण्यगर्भसंहिता—

अगस्त्यजी तथा सुतीक्ष्ण मुनि के सम्वाद रूप में वर्णन किया गया है कि 'अद्वैत आनन्द रूप शुद्ध-चैतन्य-सत्वैक लक्षण श्रीरामचन्द्रजी सब के भीतर-बाहर इस ब्रह्माण्ड में प्रकाशित हो रहे हैं।'

(८) ब्रह्मसंहिता—

इसमें बतलाया गया है कि भगवान् राम ही पूर्णावतार एवं पूर्ण ब्रह्म हैं, कृष्ण, नृसिंहादि अवतार अंश हैं, श्रीराघव स्वयं भगवान् हैं।

(९) श्रीमहाशम्भुसंहिता—

इसमें 'राम' की महिमा का वर्णन है। श्रीजानकीजी का कथन है कि "कोई प्रणव को श्रेष्ठ कहते हैं, कोई अन्य किसी मन्त्र को, किन्तु प्रणव या अन्य बीज मन्त्र भी र कार-म कार से ही सिद्ध होते हैं। राममन्त्र का प्रभाव पूरा का पूरा समझ लेना महाकठिन है। वेद अनादिकाल से 'राम' के नाम की थाह नहीं पा रहे हैं, औरों के लिए तो कहना ही क्या ?"

(१०) महासदाशिवसंहिता—

इसमें बतलाया गया है कि 'नाना प्रकार के मन्त्रों, नामों एवं चिह्नों में भरमना और भटकना व्यर्थ है। सबसे श्रेष्ठ एवं सरल श्रीरामनाम है, जिसके परमाचार्य श्री हनुमानजी हैं, शेष सभी नाम श्रीरामनाम के अंशमात्र हैं, परमधाम श्रीराम नाम ही हैं। रामभक्ति ही राजमार्ग है। श्रीमैथिलीजी के सहित श्रीराम जी का मन्त्र, श्रीहनुमानजी को महान गुरु के रूप में मानना तथा श्रीसीतारामजी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के प्रति सखीभाव—यही सर्वोपरि मुक्ति प्राप्त करा देने वाला साधन है।

(११) श्रीशिवसंहिता—

प्रथम शिव-पार्वती सम्वाद तथा पुनः अगस्त्य हनुमान सम्वाद रूप में इस संहिता में उल्लेख किया गया है। साधू समागम की महिमा, भगवान् श्रीराम के अनेक गुणों तथा उनकी अनेक विभूतियों का वर्णन, ध्यान, वन-दर्शन और पुनः वन-केलि का वर्णन लिखा गया है। श्रीमद्भागवत के रासपञ्चाध्यायी में लिखे अनुसार ही रास-विलास का भव्य मनोहारी वर्णन है। नदी-नद सब स्तब्ध हो, जहाँ के तहाँ रुक गये। पशु-पक्षी, कीट-पतङ्ग सब ब्रह्मानन्द में मग्न एवं आत्म विभोर हो गये। आकाश में देवताओं के विमान इस दृश्य को देखने के लिए छा गये तथा इस दृश्य को देखकर भगवान् शिव का हृदय भी विमोहित हो गया और वे अपना ताण्डव नृत्य भी भूल गये। इस प्रकार का मनोरम तात्त्विक वर्णन किया गया है। बीस अध्यायों में ग्रन्थ पूर्ण हुआ है।

(१२) श्री हनुमत्संहिता—

श्रीहनुमान—अगस्त्य सम्वाद के रूप में इस ग्रन्थ की रचना हुई है। भगवान् श्रीराम की रासलीला तथा जल-विहार का बड़ा मनोरम सविस्तार मनोहर शैली में वर्णन किया गया है। सीताजी की सब ही सखियाँ उनकी कायव्यूह बतलाई गई हैं; क्यों कि सीताजी के शरीर से ही १८१०८ सखियों की सृष्टि होती है, जिनके साथ भगवान् श्रीराम उतने ही शरीर धारण कर रास लीला करते हैं।

(१३) श्रीगर्ग-संहिता—

यह यदुकुल के महान् आचार्य महामुनि श्रीगर्ग की रचना है। यह समस्त संहिता अत्यन्त मधुर श्रीकृष्णलीला से परिपूर्ण विष्णु तत्त्व से ओत-प्रोत ग्रन्थ है। एक प्रकार से यह श्रीमद्भागवतोक्त श्रीकृष्ण लीला महाभाष्य है। श्रीमद्भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण की पूर्णता के सम्बन्ध में महर्षि व्यास ने 'कृष्णास्तुभगवान् स्वयम्' प्रमाणित किया है; किन्तु महामुनि गर्गाचार्य ने—

यस्मिन् सर्वाणि तेजांसि विलीयन्ते स्वतेजसि।
तं वदन्ति परे साक्षात् परिपूर्णतमं स्वयम्॥

बतलाते हुए श्रीकृष्ण में समस्त भागवत तेजों के प्रवेश का वर्णन करके परिपूर्णता का वर्णन किया है। इसमें श्रीमद्भागवत के गूढ़ तत्त्वों का स्पष्ट रूप में उल्लेख किया गया है।

श्रीगर्ग-संहिता (गोलोक खण्ड) प्रथम अध्याय श्लोक १५-२८ में लिखा है—

श्रीजनकजी ने पूछा—मुनिवर! सन्तों की रक्षा के लिए भगवान् के कितने प्रकार के अवतार होते हैं? यह मुझे बतलाने की कृपा करें॥१५॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीनारदजी ने कहा—राजन् व्यास आदि मुनियों ने अंशाँश, अंश, आवेश, कला, पूर्ण और परिपूर्णतम—ये छह प्रकार के अवतार बतलाये हैं। इनमें से छठा परिपूर्णतम अवतार साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं। मरीचि आदि 'अंशावतार', ब्रह्मादि 'अंशावतार', कपिल एवं कूर्म प्रभृति 'कलावतार' और परशुराम आदि 'आवेशावतार' कहे गये हैं। नृसिंह, राम, श्वेत द्विपाधिपति हरि, वैकुण्ठ, यज्ञ और नर-नारायण—ये 'पूर्णावतार' हैं एवं साक्षात् भगवान् भगवान् श्रीकृष्ण ही 'परिपूर्णतम' अवतार हैं। असंख्य ब्रह्माण्डों के अधिपति वे प्रभु गोलोक धाम में विराजते हैं। जो भगवान् के दिये सृष्टि आदि कार्यमात्र के अधिकार का पालन करते हैं, वे ब्रह्मा आदि 'सत्' (सत्स्वरूपभगवान्) के अंश हैं। जो उन अंशों के कार्य भार में हाथ बटाते हैं, वे 'अंशांशावतार' के नाम से विख्यात हैं। परम बुद्धिमान् नरेश! भगवान् विष्णु स्वयं जिनके अन्तःकरण में आविष्ट हो, अभीष्ट कार्य का सम्पादन करके फिर अलग हो जाते हैं, राजन्! ऐसे नानाविध अवतारों को 'आवेशावतार' समझो। जो प्रत्येक युग में प्रकट हो, युगधर्म को जानकर, उसकी स्थापना करके, पुनः अन्तर्धान हो जाते हैं। भगवान् के उन अवतारों को 'कलावतार' कहा गया है। जहाँ चार व्यूह प्रकट हों—जैसे श्रीराम, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न एवं वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध तथा जहाँ नौ रसों की अभिव्यक्ति देखी जाती हो एवं जहाँ बल पराक्रम की भी पराकाष्ठा दृष्टिगोचर होती हो, भगवान् के उस अवतार को 'पूर्णावतार' कहा गया है। जिसके अपने तेज में अन्य सम्पूर्ण तेज विलीन हो जाते हैं; भगवान् के उस अवतार को श्रेष्ठ विद्वान् पुरुष साक्षात् 'परिपूर्णतम' बतलाते हैं। जिस अवतार में पूर्ण का पूर्ण लक्षण दृष्टिगोचर होता है और मनुष्य जिसे पृथक्-पृथक् भाव के अनुसार अपने प्रिय रूप में देखते हैं, वही यह साक्षात् 'परिपूर्णतम' अवतार हैं ॥१६-२६॥ [इन सभी लक्षणों से सम्पन्न] स्वयं परिपूर्णतम भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं, दूसरा नहीं, क्यों कि श्रीकृष्ण एक कार्य के उद्देश्य से अवतार लेकर अन्यान्य करोड़ों कार्यों का सम्पादन किया है।

पूर्णः पुराणः पुरुषोत्तमोत्तमः परात्परो यः पुरुषः परमेश्वरः।
स्वयं सदाऽऽनन्दमयं कृपाकरं गुणाकरं तं शरणं व्रजाम्यहम्।

(गर्ग संहिता, गोलोक १।२७)

जो पूर्ण पुराण पुरुषोत्तमोत्तम एवं परात्पर पुरुष परमेश्वर हैं, उन साक्षात् सदानन्दमय, कृपानिधि, गुणों के आकार भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र की मैं शरण लेता हूँ।'

यह सुनकर राजा हर्ष में भर गये। उनके शरीर में रोमाञ्च हो गया वे प्रेम में विह्वल हो गये ॥२८॥

पुराण, महाभारत, भगवद्गीता, रामायणादि अनेक धर्म ग्रन्थों में विष्णु-तत्त्व—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेद व्यासजी श्रीमद्भागवत के मङ्गलाचरण में लिखते हैं—

'धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं धीमहि ।।'

(भागवत १।१।१)

'जो परमसत्य विष्णु अपने परम प्रकाशक तेज से माया और उसके कार्य से सर्वथा मुक्त हैं, उनका मैं ध्यान करता हूँ।'

'विष्णु' का अर्थ है—जो सर्व व्यापक हो। यह जुहोत्यादिगणस्थ 'विप्लृ व्याप्तौ' धातु से निष्पन्न होता है। इसका विग्रह है—सर्वम् वेवेष्टि व्याप्नोतीति विष्णुः। 'विषेः किच्च' इस पाणिनीय उणादि सूत्र से 'विष्' धातु से 'नुक्' होने पर विष्णु सिद्ध होता है।

विष्णु पुराण में लिखा है—

यस्माद्विष्टमिदं सर्वं तस्य शक्त्या महात्मनः।
तस्मात् स प्रोच्यते विष्णुर्विशेर्धातोः प्रवेशनात् ।।

(विष्णु पुराण ३।१।४५)

'यह सम्पूर्ण विश्व उस महान् देवकी शक्ति से व्याप्त है, इसी से ही वह 'विष्णु' कहलाता है, क्यों कि 'विश' धातु का अर्थ सब में प्रविष्ट, ओत-प्रोत अथवा व्याप्त होना है।'

महाभारत में भगवान अर्जुन को कहते हैं—

गतिश्च सर्वभूतानां प्रजनश्चापि भारत।
व्याप्ता मे रोदसी पार्थ क्रान्तिश्चाभ्यधिका मम ।।
अविभूतानि चान्तेषु तादच्छंश्चास्मि भारत।
क्रमणाच्चाप्यहं पार्थ विष्णुरित्यभि संज्ञितः ।।

(महाभारत शान्ति पर्व ३४१।४२-४३)

'हे भारत ! मैं सम्पूर्ण प्राणियों की गति (लय) और उत्पत्ति का स्थान हूँ। पार्थ ! मैंने आकाश और पृथ्वी को व्याप्त कर रखा है। मेरी क्रान्ति सबसे बढ़कर है। हे भरतनन्दन ! समस्त प्राणी अन्तकाल में जिस ब्रह्म को पाने की इच्छा करते हैं, वह भी मैं ही हूँ। हे कुन्तीकुमार ! मैं सबका अतिक्रमण करके स्थित हूँ। इन सभी कारणों से मेरा नाम 'विष्णु' हुआ है।'

सब ही भाँति की पूजा, कर्मकाण्ड, दान, धर्म, पुण्य स्नानादि में संकल्प करने से पूर्व शुद्ध पवित्र होना परमावश्यक होता है। शरीर की बाहरी शुद्धि तो जल, साबुन आदि से हो सकती है, किन्तु अन्तःकरण की शुद्धि नहीं होती—

'न वारिणा शुध्यति चान्तरात्मा।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीविष्णु भगवान् के चिन्तन में उसे शुद्ध करने की सामर्थ्य है—

'मानसं स्नानं विष्णुचिन्तनम् ।'

पद्मपुराण में लिखे अनुसार 'जो कमलनयन श्रीभगवान् का स्मरण करता है, वह बाहर और भीतर—उभयत्र पवित्र हो जाता है—

'यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।।

आप पवित्रों में पवित्र और मङ्गलों में भी मङ्गल हैं—

'पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् ।'

तिर्थादिकों में भी पवित्र करने की शक्ति—आपके ही कारण है। आप अपने भक्तों पर कृपा करके अपने स्वरूप के यथार्थ ज्ञान से भववन्ध के हेतुभूत सविलास अज्ञान की निवृत्ति कर देते हैं। अतएव आपसे बढ़कर पवित्र तथा मङ्गलमय और कौन हो सकता है ? जिसके हृदय में मङ्गलायतन भगवान् श्रीहरि विराजमान हैं, उसके बांटे (हिस्से) में कभी कोई अमङ्गल नहीं आ सकता।

सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाम मङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः ।।
(स्कन्द पुराण)

जिनके हृदय में समस्त मङ्गलों के स्थान भगवान् श्रीहरि विराजते हैं, उन्हें कभी किसी कार्य में कोई अमङ्गल प्राप्त नहीं होता।'

आप शरणागतवत्सल और करुणा के सागर होने के कारण भक्तों के और आर्तजनों के एकमेव शरण्य और आशा स्थान हैं। आपकी स्तुति सम्पूजन एवं नाम स्मरणादि से समस्त पातक भस्म हो जाते हैं—

स्तुत्वा विष्णुं वासुदेवं विपापो जायते नरः ।
विष्णुः स्मपूजनान्नित्यं सर्वपापं प्रणश्यति ।।
(स्कन्द पुराण)

'सर्वव्यापक श्रीविष्णु भगवान् का स्तवन करने से मनुष्य निष्पाप हो जाता है और नित्य प्रति उनका पूजन करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं।'

विष्णु पुराण में लिखा है—

नारायणः परोऽचिन्त्यः परेषामपि स प्रभुः ।
ब्रह्मस्वरूपी भगवाननादिः सर्वसंभवः ।।
(विष्णु पुराण १।४।४)

'भगवान् नारायण पर हैं, अचिन्त्य हैं, ब्रह्मा-शिव आदि ईश्वरों के भी ईश्वर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं, ब्रह्मस्वरूप हैं, अनादि हैं और सबके उत्पत्ति स्थान हैं।'

तत्त्वतः एक होते हुए भी सृष्टि के सन्दर्भ में आप संसार की उत्पत्ति, स्थिति और लय करने वाले ब्रह्मा, विष्णु और शिव नामक तीन संज्ञाओं को प्राप्त होते हैं।

सृष्टिस्थित्यन्तकरणीं ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाम्।
स संज्ञां याति भगवानेक एव जनार्दनः॥

(विष्णु पुराण १।२।६६)

प्रह्लादजी आपके इस त्रिमूर्ति स्वरूप को नमस्कार करते हैं—

ब्रह्मत्वे सृजते विश्वं स्थितौ पालयते पुनः।
रुद्ररूपाय कल्पान्ते नमस्तुभ्यं त्रिमूर्तये॥

(विष्णु पुराण १।१९।६६)

विष्णु पुराण में पाराशरजी श्रीमैत्रेयजी को उपदेश करते हुए कहते हैं—

अहं हरिः सर्वमिदं जनार्दनो
नान्यत्ततः कारणकार्यजातम्।
इदृङ्मनो यस्य न तस्य भूयो
भवोद्भवा द्वन्द्वगदा भवन्ति॥

(विष्णु पुराण)

'मैं तथा सम्पूर्ण जगत् जनार्दन श्रीहरि ही हैं, उनसे भिन्न और कुछ भी कार्य-कारणादि नहीं हैं—जिसके चित्त में ऐसी भावना है, उसे फिर देह जन्य राग-द्वेषादि द्वन्द्वरूप रोग की प्राप्ति नहीं होती।'

श्रीयमराज ने स्पष्ट शब्दों में अपने दूतों को निम्न आदेश दे रखा है—

सकलमिदमहं च वासुदेवः
परमपुमान् परमेश्वरः स एकः।
इति मतिरचला भवत्यनन्ते
हृदयगते व्रज तान् विहाय दूरात्॥

(विष्णु पुराण ३।७।३२)

'यह सम्पूर्ण जगत् और मैं एकमात्र परम पुरुष परमेश्वर वासुदेव ही हैं—जिनकी ऐसी मति हृदयस्थ परमेश्वर श्रीअनन्त में अविचल हो गई हो, उन्हें तुम दूर से ही छोड़ कर निकल जाना।'

भगवान् विष्णु के सहस्रनाम तीन रूप माने गये हैं—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(१) पर विष्णु, (२) महाविष्णु और (३) विष्णु। इन तीनों का वर्णन करते हुए नारद पुराण में कहा गया है—

विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यतो विदुः।
एकं तु महतः स्रष्टृ द्वितीयं त्वडसंस्थितम्॥
तृतीयं सर्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते।

(नारद पुराण)

विष्णु भगवान् के तीन रूप हैं। विद्वान् लोग उन्हें पुरुष नाम से जानते हैं। भगवान् का पहला रूप महतत्त्व का स्रष्टा है, दूसरा ब्रह्माण्ड में (अन्तर्यामी रूप से) विराजमान है, और तीसरा समस्त चेतन प्राणियों में (अन्तर्यामी रूप से) विराजमान है। भगवान् विष्णु और इन तीनों रूपों को जो अच्छी तरह से जान लेता है, वह प्रकृति-बन्धन (आवागमन) से छूट जाता है।

(१) प्रथमं महतः स्रष्टृ—विष्णु भगवान् का पहला स्वरूप महतत्त्व के स्रष्टा के रूप में है।

(२) द्वितीय त्वण्डसंस्थितम्—विष्णु भगवान् का दूसरा स्वरूप समष्टि-ब्रह्माण्ड में स्थित है। 'अर्थात् 'तत सृष्ट्वा तदेवानु प्राविशत्।'—इस श्रुत्युक्ति के अनुसार विश्व स्रष्टा भगवान् श्रीविष्णु ने विश्व के पालन के लिए अन्तर्यामी रूप से उसमें प्रवेश किया।

(३) तृतीयं सर्वभूतस्थम्—विष्णु भगवान् का तीसरा स्वरूप व्यष्टि-ब्रह्माण्ड में तथा समस्त प्राणियों में अन्तर्यामी रूप से विराजमान है।

विष्णु भगवान् के उक्त तीनों स्वरूपों को यथार्थ रूप से जानकर हृदय में धारण करने से पुरुष प्रकृति-बन्धन आवागमन) से छूट जाता है।

विष्णु-तत्त्व एक है। अपने विलास में वह अनेक भी हो जाता है। वही त्रिगुणात्मक प्रपञ्च में प्रविष्ट है और वही त्रिगुणातीत भी है। त्रिगुणात्मिका प्रकृति में अनेक ब्रह्माण्ड हैं। विष्णु उन सभी में अन्तर्यामी रूप से ओत-प्रोत हैं' वे 'महतो महीयान्' जो हैं, एवं प्रकृति के अणु-अणु में और प्रत्येक चेतन जीवात्मा में भी विष्णु अन्तर्यामी रूप से व्यापक हैं, क्यों कि वे 'अणोरणीयान्' भी हैं।

जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका प्रलय भी होना सुनिश्चित है। शास्त्रों में आत्यन्तिक प्रलय में ब्रह्माण्ड सहित महाविष्णु का अपने से पर अक्षर-पुरुष परमात्मा में लय हो जाना स्पष्ट रूप से बतलाया है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नारायणश्च शम्भुश्च संहृत्य स्वगणान् बहून् ।
शुद्धसत्त्वस्वरूपे च कृष्णे लीनश्च निर्गुणे ।।
महाविष्णौ विलीनाश्च ते सर्वे क्षुद्रविष्णवः ।
महाविष्णुः प्रकृत्यां च सा चैव परमात्मनि ।।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति ५४।९३-९५)

'नारायण एवं शम्भु (अहंकार-तत्त्व) अपने से उत्पन्न पञ्चतन्मात्राएँ, पञ्चमहाभूत, दस इन्द्रियाँ एवं मन आदि प्रकृति के तत्त्वों को अपने में समेट कर शुद्धसत्वस्वरूपी निर्गुण परमात्मा में लीन हो जाते हैं। इसमें प्रलय का क्रम इस प्रकार से रहता है कि अनन्त ब्रह्माण्डों में व्यापक पराप्रकृति रूप क्षुद्र-विराट-व्यापक चैतन्य महाविष्णु में विलीन हो जाते हैं, महाविष्णु प्रकृति में विलीन हो जाते हैं एवं प्रकृति अपने से पर अक्षर आत्मा में आश्रय पाती है।'

महाविष्णु को 'महाविराट्' नाम देकर प्राकृत होना शास्त्रों में कहा है—

स्थूलात स्थूलतमः सोऽपि नाम्ना देवो महाविराट् ।
परमाणुर्यथा सूक्ष्मात् परः स्थूलात् तथाप्यसौ ।।
तेजसा षोडषाशोऽयं कृष्णस्य परमात्मनः ।
आधारः सर्वविश्वा महाविष्णुश्च प्राकृतः ।।

(देवीभागवत ९।३।४-५)

'समष्टि-ब्रह्माण्डात्मक प्रकृति श्रीमहाविष्णु की शरीर स्थानीय है और वे उनकी अन्तरात्मा है। प्रकृति के अन्तर्यामी होने के कारण वे 'प्राकृत' कहलाते हैं। श्रीमहाविष्णु तेज में अर्थात् ऐश्वर्य, प्रभुत्व, यश, श्री, ज्ञान एवं वैराग्य में परमात्मा श्रीकृष्ण के सोलहवें भाग (कला) हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के आधारभूत ये महाविष्णु प्रकृति के अन्तरात्मा होने के कारण प्राकृत कहे गये हैं।"

प्राकृत विषय में कहा है—

ब्रह्मादितृणपर्यन्तं सर्वं प्राकृतिकं भवेत् ।
यद्यत् प्राकृतिकं सृष्टं सर्वं नश्वरमेव च ।।

(देवीभागवत ९।८।८२)

'इस ब्रह्माण्ड में ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जो भी पदार्थ हैं, वे सब प्राकृत हैं एवं जो-जो पदार्थ प्राकृत (त्रिगुणात्मक) सृष्टि के होते हैं, वे सब नश्वर (प्रलयधर्मी) होते हैं।'

ब्रह्मपुराणादि अठारह महापुराण हैं। इन सभी पुराणों में परतत्त्व के वैभव का उल्लेख प्राप्त होता है। व्यासजी ने बार-बार घोषणा की है कि—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं भुजमुत्थाप्य चोच्यते ।
न वेदान्तात् परं शास्त्रं न देवः केशवात् परः ।।

'अर्थात् वेदान्त से बढ़कर कोई शास्त्र नहीं है और भगवान् केशव (नारायण) से परे और कोई देव नहीं है ।'

विष्णु पुराण में लिखा है—

त्वामाराध्य परं ब्रह्म याता मुक्तिं मुमुक्षवः ।
वासुदेवमनाराध्य को मोक्षं समवाप्स्यति ।।

(विष्णु पुराण १।४।१८)

हे भगवान् ! मुक्ति की कामना करने वाले अनेक जीवों ने परब्रह्म आपकी आराधना करके मुक्ति को प्राप्त कर लिया । वासुदेव की आराधना किये बिना मोक्ष को कौन प्राप्त कर सकता है ?

शिव तथा विष्णु में कोई भेद नहीं है—

'त्रिधाभिन्नो ह्यहं विष्णो ब्रह्मविष्णुशिवाख्यया ।।'

(शिवपुराणरुद्र संहिता ९।५७)

'भगवान् शिव का कथन है कि मैं ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीन नामों से तीन भागों में बँटा हुआ हूँ ।' यहाँ केवल उपाधिभेद ही बतलाया है ।'

पद्मपुराण में भी इसी प्रकार लिखा है

शिवाय विष्णुरूपाय विष्णवे शिवरूपिणे ।
शिवस्य हृदये विष्णुर्विष्णोश्च हृदयेशिवः ।।
एक मूर्तिस्त्रयोदेवा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
त्रयाणामन्तरं नास्ति गुणभेदाः प्रकीर्तिताः ।।

(पद्मपुराण भूमिखण्ड ७१।१९-२०)

'श्रीविष्णुरूपधारी शिव और शिवरूपधारी विष्णु को नमस्कार है । श्री शिव के हृदय में विष्णु और विष्णु के हृदय में भगवान् शिव विराजमान हैं । ब्रह्मा, विष्णु और शिव—ये तीनों देवता एक ही रूप हैं । इन तीनों के रूप में कोई अन्तर नहीं है, केवल गुणों का भेद ही बतलाया गया है ।'

श्रीमद्भागवत आदि पुराणों में सभी यज्ञों को विष्णु परक स्वीकार किया है—

नारायणपरा यज्ञाः । (ब्रह्मपुराण ६०।६२)
नारायणपरा यज्ञाः । (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ८०।९२)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नारायणपरो यज्ञः । (मत्स्य पुराण २४६।३६)
वासुदेवपरा मखाः । (श्रीमद्भागवत २।५।१५)
'यज्ञो हि भगवान् विष्णुः' (विष्णु धर्मोत्तर पुराण १६२।२)
'यज्ञरूपो हि भगवान्' (देवीभागवत ९।४३।१२)
'भगवान् सर्वयज्ञभुक्' (श्रीमद्भागवत ७।१४।१७)

श्रीमद्भागवत में 'भगवान् सर्वयज्ञभुक्' के लिखे अनुसार भगवान् विष्णु यज्ञ, यज्ञ स्वरूप और यज्ञभोक्ता हैं। भगवान् विष्णु से ही समस्त यज्ञ प्रकट हुए हैं, अतः सभी यज्ञ भगवान् के ही स्वरूप हैं। इसलिए समस्त यज्ञों के द्वारा भगवान् विष्णु का ही यजन-पूजन होता है। लिखा भी है—

देशः कालः पृथग्द्रव्यं मन्त्रर्त्विजोऽग्नयः।
देवता यजमानश्च क्रतुर्धर्मश्च यन्मयः॥
स एष भगवान् साक्षाद् विष्णुर्योगेश्वरेश्वरः।

(श्रीमद्भागवत १०।२३।४७-४८)

'देश, काल, पृथक्-पृथक् हवनीय द्रव्य, मन्त्र, तन्त्र, ऋत्विज, अग्नि, देवता, यजमान, यज्ञ और धर्म - ये सभी साक्षात् भगवान् विष्णु के ही स्वरूप हैं।'

असौ यज्ञेश्वरो यज्ञो यज्ञभुग् यज्ञकृद् विभुः।
यज्ञभृद् यज्ञपुरुषः स एव परमेश्वरः॥

(पद्मपुराण उत्तर खण्ड २२६।७६)

'ये भगवान् विष्णु यज्ञेश्वर, यज्ञ, यज्ञभोक्ता, यज्ञकर्ता, यज्ञस्वामी, यज्ञ-पोषक, यज्ञपुरुष और परमेश्वर कहे जाते हैं।'

विष्णु महत्त्व विषय में लिखा है—

सर्वदेवमयो विष्णुः। (पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड ६४।३४)
नास्ति विष्णुसमो देवः। (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ३८।८९)
सर्वतीर्थमयो विष्णुः। (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड ७३।३१३)
सर्व पापहरो विष्णुः। (पद्मपुराण, उत्तरखण्ड १२६।८२)
ईश्वरो भगवान् विष्णुः। (पद्मपुराण, उत्तर खण्ड २२६।६९)
विष्णुरेव परं ब्रह्म। (पद्मपुराण, पाताल खण्ड ९७।९०)
यज्ञरूपी विष्णुरहम्। (देवीभागवत ९।४५।७८)
यज्ञरूपी विष्णु रहम्। (ब्रह्मवैवर्त पुराण, प्रकृति खण्ड ४२।२९)

भगवान् विष्णु की स्तुति करते हुए ब्राह्मणों ने कहा है—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वं ऋतुस्त्वं हविस्त्वं हुताशः स्वयं
त्वं हि मन्त्रः समिद्दर्भपात्राणि च ।
त्व सदस्यर्त्विजो दम्पती देवता
अग्निहोत्रं स्वधा सोम आज्यं पशुः ।।

(श्रीमद्भागवत ४।७।४१)

'भगवान् ! आप ही यज्ञ, हवि, अग्नि, मन्त्र, समिधा, कुशा और यज्ञपात्र हैं तथा आप ही सदस्य, ऋत्विज्, यजमान एवं उसकी धर्मपत्नी, देवता, अग्निहोत्र, स्वधा, सोमरस, घृत और पशु हैं ।'

इसको ही भगवान् कृष्ण ने गीता में इस प्रकार से कहा है—

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ।।

(गीता ९।१६)

'मैं क्रतु (श्रौतयज्ञ) हूँ, मैं यज्ञ (स्मार्तयज्ञ) हूँ, मैं स्वधा हूँ, मैं औषध हूँ, मैं मन्त्र हूँ, मैं घृत हूँ, मैं अग्नि हूँ और मैं ही हवन रूप कर्म हूँ ।'

'अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च ।'

(गीता ९।२४)

'समस्त यज्ञों का भोक्ता और प्रभु (स्वामी) मैं ही हूँ ।'

भगवान् राम विष्णु के ही अवतार थे । यह बात वाल्मीकि रामायण में कई स्थलों में लिखी गई हैं । रावण के उपद्रवों से दुःखी हुए देवता ब्रह्माजी के पास पहुँचे अपनी करुणा व्यथा सुनाई । ब्रह्माजी देवताओं को धैर्य बँधा रहे थे, उसी समय भगवान् विष्णु वहाँ प्रकट हो गये । देवताओं की प्रार्थना सुनकर भगवान् ने राजा दशरथ के घर मनुष्य रूप में अवतार लेना स्वीकार किया; फिर वहीं अन्तर्धान हो गये ।

एतस्मिन्नन्तरे विष्णुरुपयातो महाद्युतिः ।
शङ्खचक्रगदापाणिः पीतवासा जगत्पतिः ।।
वैनतेयं समारुह्य भास्करस्तोयदं यथा ।
तप्तहाटककेयूरो वन्द्यमानः सुरोत्तमैः ।।

(वाल्मीकि रामायण १।१५।१६-१७)

जब रामचन्द्रजी ने शिव का धनुष तोड़ दिया, रामचन्द्रजी का विवाह सीता जी के साथ हो गया और परशुरामजी ने विष्णु-अवतार होने की परीक्षा के लिए

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु के धनुष पर बाण चढ़ाने के लिए कहा, तब श्रीरामचन्द्रजी ने तुरन्त ही उनके हाथ से दिव्य धनुष लेकर उस पर बाण चढ़ा दिया, यह देखकर परशुराम जी चकित हो गये। उनका तेज श्रीराम में जा मिला। उस समय परशुरामजी श्रीराम की स्तुति करते हुए कहते हैं—

अक्षय्यं मधुहन्तारं जानामि त्वां सुरेश्वरम्।
धनुषोऽस्य परामर्शात् स्वस्ति तेऽस्तु परंतप॥

(वाल्मीकि रामायण १।७६।१८)

'शत्रुतापन श्रीराम! आपका कल्याण हो। इस धनुष के चढ़ाने से मैं जान गया कि आप मधु-दैत्य को मारने वाले देवताओं के स्वामी, साक्षात् अविनाशी भगवान् विष्णु हैं।'

जब श्रीराम के द्वारा राक्षसों सहित रावण मारा गया, ब्रह्माजी सहित देवता लोग श्रीराम के पास आये और बातचीत करते हुए ही भगवान् राम की समग्र लीला का रहस्य सबके सामने ब्रह्माजी ने खोल दिया। वहाँ श्रीराम का महत्त्व वर्णन करते हुए ब्रह्माजी कहते हैं—

भवन्नारायणो देवः श्रीमांश्चक्रायुधः प्रभुः।
एकशृङ्गो वराहस्त्वं भूतभव्यसपत्नजित्॥
अक्षरं ब्रह्म सत्यं च मध्ये चान्ते च राघव।
लोकानां त्व परो धर्मो विष्वक्सेनश्चतुर्भुजः॥
शार्ङ्गधन्वा हृषीकेशः पुरुषः पुरुषोत्तमः।
अजितः खड्गधृग् विष्णुः कृष्णश्चैव बृहद्बलः॥

(वाल्मीकि रामायण ६।११७।१३-१५)

'आप साक्षात् चक्रपाणि लक्ष्मीपति प्रभु श्रीनारायणदेव हैं। आप ही भूत-भविष्य के शत्रुओं को जीतने वाले और एक शृङ्गधारी वाराह भगवान् हैं। राघव! आप आदि, मध्य और अन्त में सत्यस्वरूप अविनाशी ब्रह्म हैं। आप सम्पूर्ण लोकों के परमधर्म चतुर्भुज विष्णु हैं। आप ही अजित, पुरुष, पुरुषोत्तम, हृषीकेश तथा शार्ङ्ग-धनुष एवं खड्ग धारण करने वाले विष्णु हैं और आप ही महाबलवान् कृष्ण हैं।'

श्रीराम के प्रति स्वयं वाल्मीकिजी ने कहा है—

परं ब्रह्म परं तत्त्वं परं ज्ञानं परं तपः।
परं बीजं परं क्षेत्रं परं कारणकारणम्॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'श्रीराम ! आप परब्रह्म, परमतत्त्व, परमज्ञान, परमतप, समस्त जगत् की उत्पत्ति के बीजस्वरूप, परमक्षेत्र, परम कारण के भी कारण हैं।'

अध्यात्म रामायण में लिखा है—

मधुमासे सिते पक्षे नवम्यां कर्कटे शुभे।
पुनर्वस्वृक्षसहिते उच्चस्थे ग्रहपञ्चके॥
मेष पूषणि सम्प्राप्ते पुष्पवृष्टिसमाकुले।
आविरासी जगन्नाथः परमात्मा सनातनः॥

(अध्यात्म रामायण १।३।१४-१५)

इन श्लोकों में सुस्पष्ट लिखा है कि श्रीदशरथनन्दन श्रीराम जगन्नाथ एवं सनातन परमात्मा हैं। अयोध्या में चैत्र शुक्ला नवमी तिथि को, कर्क लग्न में, सूर्य के मेषस्थ तथा वृहस्पति, मङ्गल, शुक्र एवं शनि के उच्चस्थ रहते हुए इनका प्राकट्य हुआ।'

महर्षि वसिष्ठजी ने श्रृङ्गी ऋषि को बुलाया और महाराज दशरथजी से पुत्रेष्टि-यज्ञ का अनुष्ठान कराया। उस यज्ञ में अग्निदेव ने प्रसन्न होकर हाथ में पायस का भरा हुआ पात्र लिये हुए अग्नि कुण्ड से प्रकट होकर कहा—

गृहाण पायसं द्विव्यं पुत्रीयं देवनिर्मितम्।
लप्स्यसे परमात्मानं पुत्रत्वेन न संशयः॥

(अध्यात्म रामायण १।३।८)

'राजन् ! यह देवताओं की बनाई हुई पुत्रदायिनी दिव्य पायस लो। इसके द्वारा तुम निस्संदेह साक्षात् परमात्मा को पुत्ररूप में प्राप्त करोगे।'

परशुरामरूपधारी विष्णु के विषय में लिखा है—

यः कार्तवीर्यं निजधाम रोषात्
त्रिःसप्तकृत्वः क्षितिपात्मजानपि।
तं जामदाग्न्यं क्षितिभारनाशकं
नतोऽस्मि विष्णुं पुरुषोत्तमं सदा॥

(नृसिंह पुराण ५३।२२)

जिन्होंने कोपवश राजा कार्तवीर्य को मार डाला तथा इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार किया, पृथ्वी का भार दूर करने वाले परशुरामरूपधारी उन पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु को मैं सदा नमस्कार करता हूँ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

भगवान् कृष्ण के विष्णु अवतार विषय में लिखा है—

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स ब्रह्मा स शिवो विप्र स हरिः सैव देवराट् ।
स सर्वरूपः सर्वाख्यः सोऽक्षरः परमः स्वराट् ।।

(नारद पुराण पूर्व ८१।१०७)

'विप्रवर ! वे श्रीकृष्ण ही ब्रह्मा हैं, वे ही शिव हैं, वे ही विष्णु और देवराज इन्द्र हैं। वे ही स्वरूपों में हैं तथा सब नाम उन्हीं के हैं। वे ही स्वयं प्रकाशमान अविनाशी परमात्मा हैं।'

महामुनि वेदव्यास रचित सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ श्रीमद्भागवत अपनी अमित महिमा असाधारण गरिमा के लिये विद्वत्समाज में सदा से ही परमादरणीय है। इसमें भगवान् श्रीकृष्ण को साक्षात् परब्रह्म परमात्मा के पूर्णावतार रूप में प्रतिपादित किया गया है। श्रीमद्भागवत के सुप्रसिद्ध टीकाकार श्रीधर स्वामी ने लिखा है—

कृषिर्भूवाचकः शब्दः णश्च निवृत्तिवाचकः ।
तयोरैक्यात् परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते ।।

अर्थात् 'कृष्' धातु से 'नक्' प्रत्यय तथा णत्व करने पर 'कृष्ण' शब्द की निष्पत्ति होती है। यहाँ 'कृष' का अर्थ है—संसार और 'ण' का अर्थ है—निवृत्ति; छुड़ाना। इन दोनों में ऐक्य स्थापित हो जाने से कृष्ण का अर्थ परब्रह्म होता है क्योंकि परब्रह्म या परमात्मा ही जीवों को संसार से छुड़ाता है। यही परब्रह्म परमेश्वर विष्णु कभी विष्णु नाम से कभी वाराह, नारद, नर-नारायण, राम, परशुराम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि विविध नाम तथा स्वरूपों में प्रकट होकर अनेक लीला करते हैं। इस तत्त्व को समझ लेना दुर्विज्ञेय है। ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्रादि देव, सनत्कुमार-नारदादि सिद्ध पुरुष भी विष्णु तत्त्व को जानने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। वास्तविक विष्णु-तत्त्व को न समझ कर देवता भी अवतार का ही पूजन करते हैं—

भवतो यत्परं तत्त्वं तन्न जानाति कश्चन ।
अवतारेषु यद्रूपं तदर्चन्ति दिवौकसः ।।

(विष्णु पुराण १।४।१७)

श्रीमद्भागवत में लिखा है—

पिता गुरुस्त्वं जगतामधीशो
दुरत्ययः काल उपात्तदण्डः ।
हिताय स्वेच्छातनुभिः समीहसे
मानं विधुन्वञ्जगदीश मानिनाम् ।।

(श्रीमद्भागवत १०।२७।६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'आप जगत् के पिता, गुरु, ईश्वर, नाश से रहित, दण्ड को ग्रहण करने वाले कालरूप हैं। जीवों के हित के लिए और अपने को ईश्वर मानने वालों का मान-मर्दन करते हुए, अपनी इच्छा से रूप धारण करके लीला करते हैं।'

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च
ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्।
सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं
यत्किंच भूत प्रणमेदनन्यः॥

(श्रीमद्भागवत ११।२।४१)

आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, ग्रह-नक्षत्र, सम्पूर्ण प्राणी, दिशाएँ, वृक्ष आदि तथा नदियाँ और समुद्र, जो कुछ भी हैं, सब श्रीहरि का ही शरीर है, अतः सबको अनन्य भाव से प्रणाम करे।

जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके।
ज्वालमालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत्॥

(विष्णुपञ्जरस्तोत २३)

'जल में विष्णु है, स्थल में विष्णु हैं, पर्वत के शिखर पर भी विष्णु है तथा अग्नि की ज्वाला-मालाओं से व्याप्त स्थान में भी श्रीविष्णु है। इस प्रकार सारा जगत् ही विष्णुमय है।'

प्रभु विष्णु परमविशुद्ध, परात्पर, सच्चिदानन्दघन, परब्रह्म परमात्मा हैं। इन्हीं को वेद-पुराण-षड्दर्शनादि-शास्त्र तथा ज्ञानी, भक्त, योगी आदि एक स्वर से अखण्ड, अनादि, अनन्त, सदैकरस, सर्वव्यापी, निर्गुण, निराकार, स्वयंप्रकाश, सर्वस्वरूप परब्रह्म परमात्मा कहते हैं। वे समस्त सदसद्-वस्तुओं से विलक्षण, परमज्योति-स्वरूप, सर्वप्रकाश, सबमें रमण करने वाले हैं। उनसे कहीं एक परमाणु भी खाली नहीं है। वे सबमें रम रहे हैं। जो कुछ दृश्य-अदृश्य, सद्सत् विश्व तथा असंख्य ब्रह्माण्ड हैं, वे सब श्रीभगवान् विष्णु के स्वरूप हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया॥

(भगवद्गीता ४।६)

'मैं अजन्मा और अविनाशी स्वरूप होते हुए भी तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया से प्रकट होता हूँ।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेद, श्रुति-सार-सर्वस्व वे आदि नारायण अपनी योगमाया से जगत् की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय के लिए ब्रह्मा, विष्णु, महेश—इन तीन रूपों में व्यक्त होते हैं। परवैकुण्ठ में वे ही चिन्मय अष्टदल-पद्म पर नित्य आसीन हैं। श्वेतद्वीप में वे ही शशिवर्ण चतुर्भुज' रूप में विराजमान हैं। क्षीरोदधि में वे ही 'अनन्तशायी' हैं और रमावैकुण्ठ में भगवती लक्ष्मी के साथ उन्हीं का नित्यविलास चलता है।

निखिलसद्गुणैकधाम, सर्वरूप, सर्वमय, लीला विहारी, लक्ष्मीकान्त तो दया के निधि ही हैं। उनके सारे क्रिया-कलाप दीनों और भक्तों के हित के लिए हुआ करते हैं। जैसे अरणि की लकड़ियों के मन्थन से अग्नि प्रज्वलित हो जाती है, उसी प्रकार सच्चे हृदय की प्रेम-पुकार को सुनकर भगवान् चले आते हैं।

भगवान् अनन्त हैं। वे सर्वशक्तिमान् करुणामय परमात्मा अपना स्वयं का कोई प्रयोजन न रहने पर भी साधु परित्राण, धर्म-संरक्षण एवं जीवों पर अनुग्रह करने के लिए अनेक नामों, अनेक स्वरूपों में शरीर धारण कर लिया करते हैं। उनके अवतरण और उनके अनन्त अवतार चरित्र हैं। श्रीमद्भागवतादि पुराण ग्रन्थों में सर्वसमर्थ, कल्याण-विग्रह, प्रभु के मुख्य (१) सनत्कुमार, (२) वाराह (३) नारद, (४) नर-नारायण, (५) कपिल, (६) दत्तात्रेय, (७) यज्ञपुरुष; (८) ऋषभदेव, (९) पृथु, (१०) मत्स्य, (११) कूर्म, (१२) धन्वन्तरि (१३) मोहिनी, (१४) नृसिंह, (१५), वामन, (१६) परशुराम, (१७) व्यास, (१८) हंस, (१९) श्रीराम, (२०) श्रीकृष्ण, (२१) हयग्रीव, (२२) हरि, (२३) बुद्ध, (२४) कल्कि चौबीस अवतारों का विशेष वर्णन लिखा है।

विष्णु-तत्त्व सोपान (अध्याय) का सूक्ष्म अर्थ—

इस सोपान (अध्याय) का रहस्य फल पाठकों की तत्त्व-दर्शिता में है। एकमात्र तत्त्व-दर्शी पुरुष में ही इस प्रकार ज्ञान, पठन, मनन, अनुशीलन की वृत्ति सम्भव है। तत्त्वसाक्षात्कार के इस ज्ञान प्रभाव द्वारा पुरुष बड़े भारी से भारी दुःख में भी चलायमान नहीं होता और लौकिक दृष्टि से बड़े-से-बड़े लाभ को भी वह तुच्छ ही समझता है, क्योंकि परमात्मा प्राप्तिरूप सच्चे और शाश्वत लाभ के आगे मिथ्या और मायिक जागतिक सभी पदार्थों के नाम नगण्य ही हैं—

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते॥
(भगवद्गीता ६।२२)

इसी प्रकार से और लिखा है—

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति। (वही ७।७२)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'यही ब्राह्मी स्थिति है, जिसको प्राप्त होकर ज्ञानी पुरुष कभी मोह को प्राप्त नहीं होता।'

भगवान् मनु महाराज ने भी अपनी स्मृति में तत्त्वदर्शन का प्रभाव इस प्रकार से बतलाया है—

सम्यग्दर्शनसम्पन्नः कर्मभिर्न निबद्ध्यते।
दर्शनेन विहीनस्तु संसारं प्रतिपद्यते॥

(मनुस्मृति ६।७४)

'तत्त्वसाक्षात्कार से पुरुष कर्म बन्धन में नहीं फँसात, जब कि तत्त्वदर्शन से रहित मनुष्य आवागमन में फँसा रहता है।'

इस प्रकार से और भी लिखा है—

आन्वीक्षिक्यात्मविद्या स्यादीक्षणात् सुखदुःखयोः।
ईक्षमाणस्तया तत्त्वं हर्षशोकौ व्युदस्यति॥

(कामन्दकीय नीतिसार २।३।११)

दर्शनशास्त्र के अनुशीलन से सुख-दुःख का रहस्य समझ में आ जाता है। इस तत्त्व विवेक के प्रभाव से मनुष्य हर्ष और शोक, दोनों से ऊपर उठ जाता है।'

इस प्रकार का तत्त्वविवेक श्रीभगवान् राम ने ('शास्त्रयोनित्वात्') स्वयं समस्त शास्त्रों का उद्गम स्थान होते हुए भी मर्यादा पालन हेतु श्रीगुरु वसिष्ठजी से प्राप्त किया था। इस दिव्य उपदेश के सारभूत दो श्लोक यह हैं—

अन्तः संत्यक्तसर्वांशो वीतरागो विवासनः।
बहिः सर्वसमाचारो लोके विहर राघव॥
मा गच्छ दुःखितां राम सुखितामपि मा व्रज।
समतामेहि सर्वत्र परमात्मा हि सर्वगः॥

'हे राघव! तुम तो भीतर से सब आशाओं का त्याग करके वीतराग और वासना-शून्य होकर बाहर से समस्त सत्कर्मों का एवं सदाचारों का ठीक-ठीक पालन करते हुए संसार में विचरो। परमात्मा सर्वत्र भरा हुआ है - इस बोध का अवलम्ब करके समदृष्टि से सम्पन्न होकर सुख-दुःख दोनों से अलग रहो।'

इस दुर्लभ तत्त्व-बोध का ज्ञान ज्ञान-स्वरूप श्रीभगवान् के सभी अवतार स्वरूप तथा चरित्रों में दिखाई देता है।

यद्यपि यह तत्त्व विवेचन यथा साध्य सरल करके ही लिखा गया है; किन्तु सम्भव है कि शास्त्रज्ञ विद्वानों के अतिरिक्त जन साधारण हिन्दी भाषी पाठक इसका पूर्ण ज्ञान लाभ प्राप्त नहीं कर सकें, अतः साधारण हिन्दी भाषी पाठकों के लाभार्थ पाँच पुष्पों के रूप में लघु कथाएँ भी लिखी जा रही हैं।

भगवान् विष्णु के चरणों में बारम्बार प्रणाम निवेदन है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुष्प (१)

भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा रुद्रदेव को अपने गोपनीय रहस्य का उपदेश

एक समय नारदजी ने भगवान् शंकरजी से प्रश्न किया कि निराकार, निर्गुण, सर्वव्यापी, निष्क्रिय और परात्पर ब्रह्मस्वरूप का क्या रहस्य है ?

भगवान् शिव ने कहा—नारद ! पूर्वकाल की बात है, मैं कैलास पर्वत के शिखर पर श्रेष्ठ मन्त्र का जप और नारायण का ध्यान करता हुआ एक गहन वन में निवास करता था। भगवान् सन्तुष्ट हो मेरे सामने प्रकट हुए और कहा—'वर माँगो।' उनके इतना कहने पर मैंने आँखें खोल दीं और देखा, भगवान् अपनी प्राणप्यारी लक्ष्मी के साथ गरुड़ की पीठ पर विराजमान हैं। उस समय मैंने उन वरदायक कमलापति को प्रणाम करके कहा—'कृपासिन्धो ! आपका जो रूप परमानन्ददायक, सम्पूर्ण आनन्द का आश्रय, नित्य साकार और सबसे श्रेष्ठ है; जिसे ज्ञानी पुरुष निर्गुण, निष्क्रिय एवं शान्त ब्रह्म के नाम से जानते हैं, उसे मैं देखना चाहता हूँ। परमेश्वर ! यह मनोरथ पूर्ण कीजिये।'

भगवान् ने कहा—आप यमुना के पश्चिम तट पर वृन्दावन में जाओ, वहाँ आपको मनोवाञ्छित रूप का दर्शन होगा। यों कहकर भगवान् अदृश्य हो गये और मैं यमुना के मंगलमय तट पर वृन्दावन में आया। वहाँ मुझे सर्वदेवेश्वर श्रीकृष्ण के दर्शन हुए। गोपवेष, कमनीय कान्ति तथा किशोर अवस्था से सुशोभित मनोहर श्यामसुन्दर प्रियाजी के कन्धे पर अपना बायां हाथ रख कर गोपाङ्गनाओं के बीच में विराजे हुए स्वयं हँसते और प्रियाजी को हँसाते थे। उनकी अङ्गप्रभा सजल जलधर के समान श्याम थी। वे कल्याणमय गुणों के आगार जान पड़ते थे। उस समय अमृत के समान मधुर वचन बोलने वाले श्रीकृष्ण ने हँस कर मुझसे कहा—

रुद्र ! आपका मनोरथ जानकर मैं आपके दृष्टिपथ में आया हूँ। इस समय आपने जो मेरा यह अलौकिक रूप देखा है, यह घनीभूत निर्मल एवं सच्चिदानन्द स्वरूप है। अनघ मेरे इस रूप को उपनिषदों के समुदाय द्वारा निराकार, निर्गुण, सर्वव्यापी निष्क्रिय एवं परात्पर बतलाया गया है। मुझ में प्राकृत गुणों का अभाव है, मुझमें अनन्त गुण हैं तथा मेरे गुण मेरे स्वरूप से पृथक् सिद्ध नहीं होते; इस लिए ज्ञानीजन मुझे 'निर्गुण' कहते हैं। महेश्वर ! मेरे रूप का चर्मचक्षुओं से दर्शन नहीं हो सकता; इसलिए ये सम्पूर्ण वेद मुझे रूपहीन या 'निराकार' कहते हैं। मैं चिन्मय अंश से सर्वत्र व्यापक हूँ; इसलिए विद्वान् पुरुष मुझे 'ब्रह्म' के नाम से जानते हैं। मैं इस प्रपञ्च का कर्ता नहीं हूँ; इसीलिए महात्मा लोग मुझे

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'निष्क्रिय' कहते हैं, क्योंकि मेरे अंशभूत ब्रह्मा आदि मायाजनित गुणों द्वारा सृष्टि आदि कार्य करते हैं, स्वयं मैं सृष्टि आदि कोई कार्य नहीं करता हूँ। महादेव ! मैं इन गोपियों के प्रेम में विह्वल रहता हूँ, इसलिए न तो दूसरी क्रिया जानता हूँ और न अपनी ही सुध-बुध रखता हूँ। नित्यप्रति इन्हीं प्रियतमा के प्रेम के वशीभूत हो मैं इन्हीं के साथ विहार करता हूँ। मेरी इन प्रिया को आप राधिका समझो, ये परम देवता हैं। इनके चारों ओर इन लाखों सखियों को देखो। रुद्र ! ये सब-की-सब उसी तरह नित्य हैं जैसे मेरा विग्रह नित्य है। गोप, गौएँ, गोपाङ्गनाएँ और वृन्दावन धाम—ये सब नित्य एवं चिदानन्द रस रूप हैं। मेरे इस वृन्दावन को आनन्दकन्द समझो, जिसमें प्रवेश करने मात्र से जीव फिर इस संसार-बन्धन में नहीं पड़ता। जो मूढ़ मेरे वन में आकर फिर अन्यत्र जाता है, वह आत्म हत्यारा ही है। यह मैंने सत्य-सत्य बतलाया है। मैं वृन्दावन को छोड़कर कहीं नहीं जाता हूँ। अपनी इन प्राणवल्लभा के साथ सदा यहीं निवास करता हूँ। रुद्र ! आपके हृदय में जो जिज्ञासा थी, उसके समाधान के लिए मैंने इस प्रकार से सब कुछ बतलाया है। कहो, अब मुझसे और क्या सुनना चाहते हो ?

तदन्तर मैंने भगवान् से कहा—प्रभो ! इस रूप में आपकी प्राप्ति कैसे हो हो सकती है ? वह उपाय मुझे बतलाइये।

तब भगवान् श्रीकृष्ण ने मुझ से कहा—

ततो मामाह भगवान् साधु रुद्र तवोदितम्।
अतिगुह्यतमं ह्येतद् गोपनीयं प्रयत्नतः॥
सकृदावां प्रपन्नो य उपास्ते व्यक्तसाधनः।
गोपीभावेन देवेश स मामेति न चेतरः॥
सकृदावां प्रपन्नो वा मत्प्रियामेकिकां सुत।
सेवतेऽनन्यभावेन स मामेति न संशयः॥
यो मामेव प्रपन्नश्च मत्प्रियां न महेश्वर।
न कदापि स चाप्नोति मामेवं ते मयोदितम्॥
सकृदेव प्रपन्नो यस्तवास्मीति वदेदपि।
साधनेन विनाप्येव मामाप्नोति न संशय॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन मत्प्रियां शरणं व्रजेत्।
आश्रितः मत्प्रियां रुद्र मां वशीकर्तुमर्हसि॥
इदं रहस्यं परमं मया ते परिकीर्तितम्।
त्वयाप्येतन्महादेव गोपनीयं प्रयत्नतः॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वमप्येयां समाश्रित्य राधिकां मम वल्लभाम् ।
जपन् मे युगलं मन्त्रं सदा तिष्ट मदालये ।।

(पद्मपुराण पाताल. ८२।८१।८८)

रुद्र ! आपने अच्छी बात पूछी है; परन्तु यह विषय अत्यन्त गुह्यतम है। अतः प्रयत्नपूर्वक इसे गोपनीय रखना चाहिये। देवेश ! जो उपासक दूसरे साधनों को छोड़कर एक बार भी हम दोनों की शरण में आ जाता है और गोपीभाव से हमारी उपासना करने लगता है, वह मुझे प्राप्त कर लेता है, इसमें संशय नहीं है। महेश्वर ! जो केवल मेरी ही शरण लेता है, मेरी प्रिया की शरण में नहीं जाता, वह कभी मुझे नहीं पाता। यह मैंने तुमसे सच्ची बात कही है। जो एक बार भी मेरी प्रिया की शरण लेकर 'मैं तुम्हारा हूँ'—ऐसा कह देता है, वह बिना किसी साधन के भी मुझे प्राप्त कर लेता है, इसमें संशय नहीं है। अतः रुद्र ! सर्वथा प्रयत्न करके मेरी प्रिया की शरण में जो आ जाता है, वह मेरी प्राणवल्लभा का सहारा ले मुझे वश में कर लेता है। यह मैंने आपको अत्यन्त रहस्य की बात बतलाई है। महादेव ! आपको भी यत्नपूर्वक इसकी गोपनीयता की रक्षा करनी चाहिये। अब आप भी मेरी प्राणवल्लभा राधिका की शरण लें, मेरे इस युगल-मन्त्र का जप करते हुए सर्वदा मेरे निवास-स्थान वृन्दावन में रहें।

ऐसा कहकर दयानिधान भगवान् श्रीकृष्ण मेरे दाहिने कान में उत्तम मन्त्र (राधा-कृष्ण) का उपदेश दे पञ्चविधि-संस्कार करके वहीं मेरे देखते-देखते अपने परिकरों सहित अदृश्य हो गये। तभी से मैं निरन्तर वृन्दावन में निवास करता हूँ।

(पद्मपुराण पाताल. अध्याय ८२ के आधार से)

पुष्प (२)

भगवान् श्रीकृष्ण की द्वारका यात्रा, मार्ग में कुपित हुए उत्तङ्क मुनि को शान्त करना, अपने प्रभाव एवं महत्त्व का वर्णन, दुर्योधन के अपराध को कौरवों के विनाश का कारण बतलाना

भगवान् श्रीकृष्ण और अर्जुन इन्द्रप्रस्थ से हस्तिनापुर को पधारे। मार्ग में अर्जुन ने भगवान् की बड़ी स्तुति की; फिर प्रेमालाप करते हुए वे दोनों नगर में पहुँच कर राजभवन के भीतर धृतराष्ट्र, विदुर तथा युधिष्ठिर से मिले। तदन्तर भीमसेन आदि से भी यथायोग्य मिलकर अन्तःपुर में प्रवेश किया और गान्धारी एवं कुन्ती के चरण स्पर्श किये। रात में कृष्ण, अर्जुन के महल में ठहरे और

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सवेरे सन्ध्या-वन्दन के पश्चात् राजा युधिष्ठर से मिले। उस समय अर्जुन ने कहा - 'महाराज ! भगवान् श्रीकृष्ण को यहाँ रहते बहुत दिन हो गये। अब ये आपकी आज्ञा लेकर अपने पिताजी का दर्शन करना चाहते हैं। अतः आप इन्हें विदा दें। युधिष्ठर ने अश्वमेध यज्ञ के समय पुनः पधारने का अनुरोध करके श्रीकृष्ण को द्वारका जाने की आज्ञा दे दी। तत्पश्चात् उन्होंने कुन्ती आदि से रनिवास में जाकर विदा ली और विदुरजी से मिलकर उनसे भी विदा ली। कुन्ती व युधिष्ठर की आज्ञा से सुभद्रा को भी साथ लेकर सात्यकि सहित रथ पर चढ़कर हस्तिनापुर से भगवान् द्वारका को गये। मार्ग में उनको शुभ शकुन दिखाई दिये।

मरुभूमि के समतल प्रदेश में पहुँच कर महाबाहु श्रीकृष्ण ने मुनिवर उत्तङ्क का दर्शन किया। उन्होंने मुनि की पूजा की और मुनि ने भी भगवान् का यथोचित सत्कार किया। तदन्तर दोनों ने परस्पर कुशल-समाचार पूछे। मुनि को यह सम्भावना थी कि श्रीकृष्ण, कौरवों और पाण्डवों में मेल कराकर उन्हें सुख-समृद्धि से सम्पन्न छोड़कर आ रहे हैं। परन्तु इस विषय में जिज्ञासा करने पर उन्हें महाभारत युद्ध का भयानक समाचार सुनने को मिला, तब वे क्रोध से जल उठे और रोष से आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगे।

उन्होंने कहा—'श्रीकृष्ण ! कौरव तुम्हारे प्रिय सम्बन्धी थे और तुम उनकी रक्षा करने में समर्थ थे, तो भी तुमने उनकी रक्षा नहीं की। उन्हें जबरदस्ती पकड़ कर रोक नहीं लिया और शक्तिशाली होते हुए भी मिथ्याचार का आश्रय लिया। कौरव आपस में लड़कर नष्ट होते रहे और तुमने देखकर भी उनकी उपेक्षा कर दी; इसलिए मैं तुम्हें शाप दूँगा।'

भगवान् कृष्ण बोले—मुझे शाप देने पर आपका तप नष्ट हो जायेगा, जो मैं नहीं चाहता। फिर भगवान् वासुदेव बोले —

वासुदेव उवाच

श्रृणु मे विस्तरेणेदं यद् वक्ष्ये भृगुनन्दन।
गृहाणानुनयं चापि तपस्वी ह्यसि भार्गव ॥
श्रुत्वा च मे तदध्यात्मं मुञ्चेथाः शापमद्य वै:।
न च मां तपसाल्पेन शक्तोऽभिभावितुं पुमान् ॥
न च ते तपसो नाशमिच्छामि तपतां वर।
तपस्ते सुमहद्दीप्तं गुरवश्चापि तोषिताः ॥
कौमारं ब्रह्मचर्यं ते जानामि द्विजसत्तम्।
दुःखार्जितस्य तपसस्तस्मान्नेच्छामि ते व्ययम् ॥

(महाभारत आश्वमे. ५३।२३-२६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा भृगुनन्दन ! मैं जो कुछ कहता हूँ, उसे विस्तार-पूर्वक सुनिये। भार्गव ! आप तपस्वी हैं इसलिए मेरी अनुनय-विनय स्वीकार कीजिये। मैं आपको अध्यात्म तत्त्व सुना रहा हूँ। उसे सुनने के पश्चात् यदि आपकी इच्छा हो तो आप मुझे शाप दीजियेगा। तपस्वी पुरुषों में श्रेष्ठ महर्षे ! आप यह याद रखिये कि कोई भी पुरुष थोड़ी-सी तपस्या के बल पर मेरा तिरस्कार नहीं कर सकता। मैं नहीं चाहता कि आपकी तपस्या नष्ट हो जाय। आपका तप और तेज बहुत बढ़ा हुआ है। आपने गुरुजनों को भी सेवा से सन्तुष्ट किया है। द्विजश्रेष्ठ ! आपने बाल्यावस्था से ही ब्रह्मचर्य का पालन किया है, ये सारी बातें मुझे अच्छी तरह ज्ञात हैं। इसलिए अत्यन्त कष्ट सहकर संचित किये हुए आपके तप का मैं नाश कराना नहीं चाहता हूँ।

उत्तङ्क ने कहा—केशव ! जनार्दन ! तुम यथार्थ रूप से उत्तम अध्यात्म तत्त्व का वर्णन करो। उसे सुनकर मैं तुम्हारे कल्याण के लिए आशीर्वाद दूँगा अथवा शाप प्रदान करूँगा।

सब कुछ मेरा ही स्वरूप है

श्रीकृष्ण ने कहा—ब्रह्मर्षे ! आपको यह विदित होना चाहिये कि तमोगुण, रजोगुण और सत्त्वगुण—ये सभी भाव मेरे ही आश्रित हैं। रुद्रों और वसुओं को भी आप मुझसे ही उत्पन्न जानिये। सम्पूर्ण भूत मुझमें हैं और सम्पूर्ण भूतों में मैं स्थित हूँ। इस बात को आप अच्छी तरह समझ लें। इसमें आपको संशय नहीं होना चाहिये। विप्रवर ! सम्पूर्ण दैत्यगण, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, नाग और अप्सराओं को मुझसे ही उत्पन्न जानिये। विद्वान् लोग जिसे सत्-असत्, व्यक्त-अव्यक्त और क्षर-अक्षर कहते हैं, वह सब मेरा ही स्वरूप है। मुने ! चारों आश्रमों में जो चार प्रकार के धर्म प्रसिद्ध हैं तथा जो सम्पूर्ण वेदोक्त कर्म हैं, उन सबको मेरा ही स्वरूप समझिये। असत्-सदसत् तथा उससे भी परे जो अव्यक्त जगत् है, वह भी मुझ सनातन देवाधिदेव से पृथक् नहीं है। भृगुश्रेष्ठ ! ॐकार से आरम्भ होने वाले चारों वेद मुझे ही समझिये। यज्ञ में यूप, सोम, चरू, देवताओं को तृप्त करने वाला होम, होता और हवन सामग्री भी मुझे ही जानिये। भृगुनन्दन ! अध्वर्यु, कल्पक और अच्छी प्रकार संस्कार किया हुआ हविष्य ये सब मेरे ही स्वरूप हैं।

सब मेरा ही स्तवन करते हैं। और मैं धर्म रक्षा के लिए अवतार लेता हूँ। बड़े-बड़े यज्ञों में उद्गाता उच्च स्वर से सामगान करके मेरी ही स्तुति करते हैं। ब्रह्मन् ! प्रायश्चित कर्म में शान्ति पाठ तथा मङ्गलपाठ करने वाले ब्राह्मण सदा मुझ विश्वकर्मा का ही स्तवन करते हैं। द्विजश्रेष्ठ ! तुम्हें मालूम होना चाहिये कि सम्पूर्ण प्राणियों पर दया-रूप जो धर्म है, वह मेरा परमप्रिय ज्येष्ठ पुत्र है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मेरे मन से उसका प्रादुर्भाव हुआ है। भार्गव ! उस धर्म में प्रवृत्त होकर जो पाप-कर्मों से निवृत्त हो गये हैं, ऐसे मनुष्यों के साथ मैं सदा निवास करता हूँ। साधु शिरोमणे ! मैं धर्म की रक्षा और स्थापना के लिए तीनों लोकों में बहुत सी योनियों में अवतार धारण करके उन-उन रूपों और वेषों द्वारा तदनुरूप वर्ताव करता हूँ। मैं ही विष्णु, मैं ही ब्रह्मा और मैं ही इन्द्र हूँ। सम्पूर्ण भूतों की उत्पत्ति और प्रलय का कारण भी मैं ही हूँ। समस्त प्राणी समुदाय की सृष्टि और संहार भी मेरे ही द्वारा होते हैं। अधर्म में लगे हुए सभी मनुष्यों को दण्ड देने वाला और अपनी मर्यादा से कभी च्युत न होने वाला ईश्वर मैं ही हूँ। जब-जब युग का परिवर्तन होता है, तब-तब मैं प्रजा की भलाई के लिए भिन्न-भिन्न योनियों में प्रविष्ट होकर धर्म मर्यादा की स्थापना करता हूँ। भृगुनन्दन ! जब मैं देवयोनि में अवतार लेता हूँ; तब देवताओं की ही तरह सारे आचार-विचार का पालन करता हूँ, इसमें संशय नहीं है। भृगुकुल को आनन्द प्रदान करने वाले महर्षे ! जब मैं गन्धर्व योनि में प्रकट होता हूँ, तब मेरे सारे आचार-विचार गन्धर्वों के ही समान होते हैं; इसमें संदेह नहीं है। जब मैं नाग-योनि में जन्म ग्रहण करता हूँ, तब नागों की तरह ही बर्ताव करता हूँ। यक्षों और राक्षसों की योनियों में प्रकट होने पर उन्हीं के आचार-विचार का यथावत् रूप से पालन करता हूँ।

वर्तमान मानव अवतार में कौरवों ने मेरी बात नहीं मानी, इसी से सब युद्ध में मर कर स्वर्ग को चले गये।

मानुष्ये वर्तमाने तु कृपणं याचिता मया।
न च ते जातसम्मोहा वचोऽगृह्णन्त मे हितम् ।।
भयं च महदुद्दिश्य त्रासिताः कुरवो मया।
क्रुद्धेन भूत्वा तु पुनर्यथावदनुदर्शिताः ।।
तेऽधर्मेणेह संयुक्ताः परीताः कालधर्मणा।
धर्मेण निहता युद्धे गताः स्वर्गं न संशयः ।।
लोकेषु पाण्डवाश्चैव गताः ख्यातिं द्विजोत्तम।
एतत् ते सर्वमाख्यातं यन्मा त्वं परिपृच्छसि ।।

(महाभारत आश्वमे. ५४।२०-२३)

'इस समय मैं मनुष्य योनि में अवतीर्ण हुआ हूँ, इसलिए कौरवों पर अपनी ईश्वरीय शक्ति का प्रयोग न करके पहिले मैंने दीनतापूर्वक ही सन्धि के लिए प्रार्थना की थी; परन्तु उन्होंने मोहग्रस्त होने के कारण मेरी हितकर बात नहीं मानी। इसके बाद क्रोध में भरकर मैंने कौरवों को बड़े-बड़े भय दिखाये और उन्हें बहुत डराया-धमकाया तथा यथार्थ रूप से युद्ध का भावी परिणाम भी उन्हें

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दिखाया; परन्तु वे तो अधर्म से युक्त एवं काल से ग्रस्त थे। अतः मेरी बात मानने को राजी न हुए। फिर क्षत्रिय-धर्म के अनुसार युद्ध में मारे गये। इसमें संदेह नहीं कि वे सब-के-सब स्वर्गलोक में गये हैं। द्विजश्रेष्ठ! पाण्डव अपने धर्माचरण के कारण समस्त लोकों में विख्यात हुए हैं। आपने जो कुछ पूछा था, उसके अनुसार मैंने यह सारा प्रसङ्ग कह सुनाया।

(महाभारत आश्वमेधिक अध्याय ५३-५४ के आधार से)

पुष्प (३)

विष्णु के ध्यान से मोक्ष प्राप्ति

श्री शुकदेवजी बोले—पिताजी! जो संसार-वृक्ष पर आरुढ़ हो, रागद्वेषादि द्वन्द्वमय सैकड़ों सुदृढ़ पाशों तथा पुत्र और ऐश्वर्य आदि के बन्धन से बंधकर योनि-समुद्र में गिरा हुआ है तथा काम, क्रोध, लोभ और विषयों से पीड़ित होकर अपने कर्ममय मुख्य बन्धनों तथा पुत्रैषणा दारैषणा आदि गौण-बन्धनों से आबद्ध है, वह मनुष्य इस दुस्तर भवसागर को कैसे शीघ्र पार कर सकता है? उसकी मुक्ति कैसे हो सकती है? हमारे इस प्रश्न का समाधान कीजिये।

श्रीव्यासजी बोले—महाप्राज्ञ पुत्र! मैंने पूर्वकाल में नारदजी के मुख से जिसका श्रवण किया था और जिसे जान लेने पर मनुष्य मुक्ति प्राप्त कर लेता है, उस दिव्य ज्ञान का मैं तुमसे वर्णन करता हूँ। यमराज के भवन में जहाँ घोर रौरव नरक के भीतर धर्म और ज्ञान से रहित प्राणी अपने पाप कर्मों के कारण महान् कष्ट पाते हैं, वहाँ एक बार नारदजी गये। उन्होंने देखा, पापी जीव अपने महान् पापों के फलस्वरूप घोर संकट में पड़े हैं। यह देख कर नारदजी शीघ्र ही उस स्थान पर गये, जहाँ त्रिलोचन महादेवजी थे। वहाँ पहुँचकर सिर पर गङ्गाजी को धारण करने वाले महान् देवता शूलपाणि भगवान् शंकर को उन्होंने विधिवत् प्रणाम किया और इस प्रकार पूछा।

नारदजी बोले भगवन्! जो संसार में महान् द्वन्द्वों, शुभाशुभ और शब्दादि विषयों से बन्धकर छहों उर्मियों (भूख, प्यास, जरा, मृत्यु, शोक और मोह—यह छह दुःख उर्मि कहे जाते हैं) द्वारा पीड़ित हो रहा है, वह मृत्युमय संसार-सागर से किस प्रकार शीघ्र ही मुक्त हो सकता है? कल्याण स्वरूप भगवान् शिव! यह बात मुझे बताइये, मैं यही सुनना चाहता हूँ।' नारदजी का वह वचन सुनकर त्रिनेत्रधारी भगवान् हर का मुखारविन्द प्रसन्नता से खिल उठा, वे उन महर्षि से बोले।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीमहेश्वर ने कहा—मुनिश्रेष्ठ ! सुनो, मैं सब प्रकार के बन्धनों का भय और दुःख दूर करने वाले गोपनीय रहस्यभूत ज्ञानामृत का वर्णन करता हूँ। तृण से लेकर चतुरानन ब्रह्माजी तक, जो चार प्रकार का प्राणी-समुदाय है, वह अथवा समस्त चराचर जगत् जिनकी माया से सुप्त हो रहा है, उन भगवान् विष्णु की कृपा से यदि कोई जाग उठता है—ज्ञानवान् हो जाता है तो बड़ी देवताओं के लिए भी दुस्तर इस संसार-सागर को पार कर जाता है। जो मनुष्य भोग और ऐश्वर्य के मद से उन्मत्त और तत्त्वज्ञान से विमुख है, वह संसाररूपी महान् पङ्क में उस तरह डूब जाता है जैसे कीचड़ में फँसी हुई बूढ़ी गाय। जो रेशम के कीड़े की भाँति अपने को कर्मों के बन्धन में बाँध लेता है, उसके लिये करोड़ों जन्मों में भी मैं मुक्ति की सम्भावना नहीं देखता। इसलिए नारद ! सदा समाहितचित्त होकर सर्वेश्वर अविनाशी देवदेव भगवान् विष्णु का सदा भली भाँति आराधना और ध्यान करना चाहिये।

जो सदा उन विश्वस्वरूप, आदि-अन्त से रहित, सबके आदिकारण, आत्म-निष्ट, अमल एवं सर्वज्ञ भगवान् विष्णु का ध्यान करता है, वह मुक्त हो जाता है। जो सब विकल्प से रहित, अवकाश शून्य, प्रपञ्च से परे, रोग-शोक से हीन एवं अजन्मा है, उन वासुदेव (सर्वव्यापी भगवान्) विष्णु का सदा ध्यान करने वाला पुरुष संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है। जो सब दोषों से रहित, परम शान्त, अच्युत, प्राणियों की सृष्टि करने वाले तथा देवताओं के भी उत्पत्ति स्थान हैं, उन भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला पुरुष जन्म-बन्धन से छुटकारा पा जाता है। जो सम्पूर्ण पापों से शून्य, प्रमाणरहित, लक्षणहीन, शान्त तथा निष्पाप हैं; उन भगवान् विष्णु का सदा चिन्तन करने वाला मनुष्य कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाता है। जो अमृतमय परमानन्द स्वरूप, सब पापों से रहित, ब्राह्मणप्रिय तथा सबका कल्याण करने वाले हैं, उन भगवान् विष्णु का निरन्तर नाम-कीर्तन करने से मनुष्य संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है। जो योगों के ईश्वर, पुराण, प्राकृत देहहीन, बुद्धिरूप गुहा में शयन करने वाले, विषयों के सम्पर्क से शून्य और अविनाशी हैं, उन भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला पुरुष जन्ममृत्यु के बन्धन से छुटकारा पा जाता है।

जो शुभ और अशुभ के बन्धन से रहित, छह ऊर्मियों से परे, सर्वव्यापी, अचिन्तनीय तथा निर्मल हैं, उन भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला मनुष्य संसार से मुक्त हो जाता है। जो समस्त द्वन्द्वों से मुक्त और सब दुःखों से रहित हैं, उन तर्क के अविषय, अजन्मा भगवान् विष्णु का ध्यान करता हुआ पुरुष मुक्त हो जाता है। जो नाम-गोत्र से शून्य, अद्वितीय और जागृत आदि तीनों अवस्थाओं से परे तुरीय परमपद हैं, समस्त भूतों के हृदय एवं दिल में विद्यमान उन भगवान्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णु का सदा ध्यान करने वाला पुरुष मुक्त हो जाता है। जो रूपरहित, सत्य संकल्प और आकाश के समान परम शुद्ध हैं, उन भगवान् विष्णु का सदा एकाग्रचित्त से चिन्तन करने वाला मनुष्य मुक्ति प्राप्त कर लेता है। जो सर्वरूप, स्वभावनिष्ठ और आत्मचैतन्यरूप है, उन प्रकाशमान एकाक्षर (प्रणवमय) भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला मनुष्य मुक्त हो जाता है। जो अनिर्वचनीय, ज्ञानातीत, प्रणवस्वरूप और जन्मरहित हैं, उन एकमात्र नित्य नूतन भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला मनुष्य मुक्त हो जाता है। जो विश्व के आदि कारण, विश्व के रक्षक, विश्व का भक्षण (संहार) करने वाले तथा सम्पूर्ण काम्य वस्तुओं के दाता हैं तीनों अवस्थाओं से अतीत उन भगवान् विष्णु का ध्यान करने वाला मनुष्य मुक्त हो जाता है। समस्त दुःखों के नाशक, सबको शान्ति प्रदान करने वाले और सम्पूर्ण पापों को हर लेने वाले भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला मनुष्य संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है। ब्रह्मा आदि देवता, गन्धर्व, मुनि, सिद्ध, चारण और योगियों द्वारा सेवित भगवान् विष्णु का सदा ध्यान करने वाला पुरुष पाप-ताप से मुक्त हो जाता है। यह विश्व भगवान् विष्णु में स्थित है और भगवान् विष्णु इसमें प्रतिष्ठित हैं। सम्पूर्ण विश्व के स्वामी, अजन्मा भगवान् विष्णु का कीर्तन करने मात्र से मनुष्य मुक्त हो जाता है। जो संसार-बन्धन से मुक्ति तथा सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति करना चाहता है, वह यदि भक्तिपूर्वक वरदायक भगवान् विष्णु का ध्यान करे तो सफल मनोरथ होकर ससार-बन्धन से मुक्त हो जाता है।

व्यास उवाच

नारदेन पुरा पृष्ट एवं स वृषभध्वजः।
यदुवाच तदा तस्मै तन्मया कथितं तव ॥३४॥
तमेव सततं ध्याहि निर्बीजं ब्रह्म केवलम्।
अवाप्स्यासिध्रुवं तात शाश्वतं पदमव्ययम् ॥३५॥

व्यासजी कहते हैं—बेटा! इस प्रकार पूर्वकाल में देवर्षि नारदजी के पूछने पर उन वृषभ चिह्नित ध्वजा वाले भगवान् शङ्कर ने उस समय उनके प्रति जो कुछ कहा था, वह सब मैंने तुमसे कह सुनाया। तात! निर्बीज ब्रह्मरूप उन अद्वितीय विष्णु का ही निरन्तर ध्यान करो; इससे तुम अवश्य ही सनातन अविनाशी पद को प्राप्त करोगे ॥३४-३५॥

देवर्षि नारद ने शंकरजी के मुख से इस प्रकार भगवान् विष्णु की श्रेष्ठता का प्रतिपादन सुनकर उनकी भली भाँति आराधना करके उत्तम सिद्धि प्राप्त कर ली। जो भगवान् नृसिंह में चित्त लगाकर इस प्रसङ्ग का नित्य पाठ करता है, उसका सौ जन्मों में किया हुआ पाप भी नष्ट हो जाता है। महादेवजी के द्वारा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कथित भगवान् विष्णु के इस पावन स्तोत्र का जो प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान करके पाठ करता है, वह अमृतपद (मोक्ष) को प्राप्त कर लेता है। जो लोग अपने हृदय-कमल के मध्य में विराजमान अनन्त भगवान् अच्युत का सदा ध्यान करते हैं और उपासकों के प्रभु उन परमेश्वर भगवान् विष्णु का कीर्तन करते है, वे परम उत्तम वैष्णवी सिद्धि (विष्णु सायुज्य) प्राप्त कर लेते हैं।

(नृसिंह पुराण श्री विष्णु स्तवराज निरूपण अध्याय १६ के आधार से)

पुष्प (४)

गङ्गा तथा शालीग्राम शिला के सांनिध्य में मृत्यु का माहात्म्य

सूतजी ने कहा—मुनियों के द्वारा अशेष कहे गये भक्तिमय शरीर वाले, विष्णु भक्त, धर्म और सत्युग के साथ स्थित एवं रानी सुशान्ता के सहित शोभायमान राजा शशिध्वज की ओर देखते हुए आये हुए राजा आदि व्यक्तियों ने कहा—

राजागण बोले—अब आप साक्षात् नारायण के अवतार भगवान् कल्कि के श्वसुर पद को प्राप्त हुए हैं; परन्तु हम सब राजागण, ऋषिगण और विप्रगण तथा अन्यान्य सभी उपस्थित जन आपकी भक्ति को ऐसे विस्तृत रूप में देखकर अत्यन्त आश्चर्य को प्राप्त हुए हैं। हम आपसे यह पूछना चाहते हैं कि परमात्मा की यह भक्ति आपको किस प्रकार प्राप्त हो सकी? हे राजन्! इस भक्ति को प्राप्त करने में क्या आपने किसी से शिक्षा प्राप्त की है? अथवा यह भक्ति आप में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हो गयी है? हे राजन्! आपकी इस भगवद्भक्ति का कारण सुनने की हमें जिज्ञासा है क्योंकि भगवद्भक्ति की यह कथा संसार के आवागमन को नाश करने वाली है।

राजा शशिध्वज ने कहा—हे राजाओ! हम दोनों पति-पत्नी के जो जन्म, कर्म आदि हैं तथा जिस प्रकार हमको भगवद्भक्ति का स्मरण हुआ, वह सब आप सुनिये। एक हजार युग पहले की बात हैं—मैं मांसाहारी गृद्ध था और मेरी यह प्रिया सुशान्ता मेरी पत्नी गृद्धिनी थी। हम एक विशाल वृक्ष पर नीड़ (घोंसला) बनाकर उसमें रहते थे। वन-उपवन आदि स्थानों में हमारी इच्छानुसार अबाध गति थी। उस समय मरे हुए प्राणियों के दुर्गन्धित मांस से अपना जीवन-निर्वाह किया करते थे। एक दिन, एक क्रूर व्याध ने हमें देख लिया और लोभवश हमें पकड़ने के लिए उसने अपने पाले हुए गृद्ध को हमारे समक्ष छोड़ दिया। मैं क्षुधा से व्याकुल था तभी मैंने उसे देखा और मांस के लोभ से हम दोनों ही स्त्री-पुरुष उस पर झपट पड़े।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

व्याध ने हम दोनों को अपने जाल में बंधा हुआ देखा तो वह प्रसन्न होता हुआ शीघ्रता से हमारे पास आया और उसने हमारे कण्ठ पकड़ लिए। तब हम भी उस पर अपनी चोंचों से आघात करने लगे। तदनन्तर मांस के लोभी उस व्याध ने हम दोनों को पकड़ कर गण्डकी में स्थित एक शिला पर पछाड़-पछाड़ कर हमारे मस्तकों को चूर्ण कर डाला। गङ्गा का किनारा और चक्रांकित शिला (भगवान् विष्णु का साक्षात् विग्रह) मृत्यु समय में इन दोनों के सान्निध्य के प्रभाव से हम उसी समय चतुर्भुज रूप हो गये और तेजस्वी विमान में चढ़कर सब लोकों के द्वारा नमस्कृत वैकुण्ठ लोक में जा पहुँचे। वहाँ सौ युगों तक निवास करने के पश्चात् हमको ब्रह्मलोक की प्राप्ति हुई। उस ब्रह्मलोक में पाँच सौ युगों तक सुख भोगने के पश्चात् काल के वश में पड़कर देवलोक में गये और चार सौ युगों तक वहाँ सुख भोगते रहे।

हे राजागण ! फिर अब हम इस मृत्युलोक में उत्पन्न हुए हैं; परन्तु हमें शालग्राम शिला का वह स्थान और भगवान् विष्णु की कृपा का अभी तक स्मरण है, क्योंकि गण्डकी नदी के तट पर मृत्यु होने से पूर्व जन्मों की स्मृति कभी नष्ट नहीं होती। यह अद्भुत माहात्म्य उस नदी के जल स्पर्श का ही है। यदि उस चक्रांकित शिला के स्पर्श से मृत्यु के पश्चात् ऐसा शुभ फल होता है तो भगवान् वासुदेव की सेवा के फल का तो कहना ही क्या है। यही सोचते हुए हम कभी हरि-पूजन में अपने चित्त को एकाग्र करते हैं, कभी हर्ष से विह्वल होकर नृत्य करने लगते हैं, कभी उनका गुण-गान करते और भक्तिभाव में मग्न हो जाते हैं। यह समाचार हमें श्रीब्रह्माजी द्वारा पहले ही मिल गया था कि कलियुग का क्षय करने के लिए भगवान् नारायण का अंशावतार होगा। इस प्रकार हम इनके पराक्रम को भली प्रकार जानते हैं।

इस प्रकार उस सभा में अपना पूर्व प्रसंग कह कर राजा शशिध्वज ने भक्ति-भावपूर्वक कल्किजी को दस सहस्र गज, एक लाख अश्व, छह सहस्र रथ, छह सौ युवती दासियाँ तथा असंख्य रत्नादि प्रदान करके अपने स्वजनों और बांधवों सहित अपने को धन्य माना। राजा शशिध्वज के मुख से उनके पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुनकर सभी सभासद् आश्चर्यचकित होकर उन्हें पूर्ण समझने लगे। फिर वहाँ उपस्थित सभी जन कल्किजी का भक्तिपूर्वक ध्यान करने लगे। फिर उन्होंने भक्तों के लक्षण विषयक प्रश्न राजा शशिध्वज से किया।

राजागण बोले—भगवद्भक्ति क्या है ? विधान को जानने वाला भक्त कौन कहा जाता है ? वह क्या खाता, क्या वार्त्तालाप करता और कहाँ रहता है ? हे राजेन्द्र ! आपको सब कुछ विदित है, इसलिए आप कृपया आदरपूर्वक सब बातें हमें बतलावें। उनकी यह बात सुनकर राजा शशिध्वज ने हर्षित मुख से उन्हें

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

साधुवाद किया। फिर जाति स्मरण होने के कारण श्रीकृष्णचरित्र द्वारा संसार को पवित्र करने के उद्देश्य से उन्होंने वह सब कहना आरम्भ किया। जो उन्होंने ब्रह्माजी के मुख से सुना था। शशिध्वज बोले बहुत पूर्व समय की बात है—ब्रह्माजी की सभा के मध्य महर्षिगण विराजमान थे। उसी अवसर पर जो कुछ सनकादि ने नारदजी से पूछा था, वह आपको बतला रहा हूँ। उस समय मैं भी वहाँ उपस्थित था। इसलिए उनकी कृपा से मैंने उस सब प्रसंग को सुना था। हे पापनाशन उपस्थित सज्जनो, इस प्रसंग को जैसा सुना था उसी प्रकार से कहता हूँ आप लोग सावधान होकर सुनिये।

सनकजी ने कहा—हे महामुने! हे नारदजी! किस प्रकार की हरि-भक्ति से पुनः जन्म नहीं लेना होता तथा कौन-सी भक्ति प्रशंसा के योग्य है, आप उसी को पहले कहिये। हम सब लोग उसके सुनने के इच्छुक हैं।

नारदजी बोले—लोकतन्त्र के ज्ञाता साधक को श्रेष्ठ बुद्धि के द्वारा पाँचों ज्ञानेन्द्रिय और छठे मन का निग्रह करते हुए ज्ञानाश्रय पूर्वक गुरु के चरणों में अपना शरीर अर्पण करना चाहिये; क्योंकि गुरु की सेवा करने से गुरु प्रसन्न होते हैं, गुरु के प्रसन्न होने पर भगवान् श्रीहरि भी प्रसन्न होते हैं। प्रथम प्रणवाग्नि प्रिया के मध्य में 'ॐ' का अनन्य हृदय से स्मरण करे। फिर पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय आदि तथा स्नान और वस्त्राभूषणों से युक्त होकर सावधान चित्त से नारायण भगवान् के चरणारविन्दों का पूजन करे। तदनन्तर हृत्पद्म के मध्य में प्रतिष्ठित सुरम्य और सर्वाङ्ग सुन्दर श्रीहरि के स्वरूप का चिन्तन करे।

इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् वाणी, मन, बुद्धि और इन्द्रियों के सहित स्वयं को श्रीहरि में समर्पित कर दे। भगवान् कल्कि परमदेव एवं अनन्त स्वरूप भगवान् विष्णु के ही अंशावतार हैं। यह सब नाम तथा वार्ता आपको विदित है, भगवान् श्रीहरि के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। भगवान् श्रीकृष्ण सेव्य और मैं उनका सेवक हूँ तथा संसार भर के सभी प्राणी उन्हीं के मूर्त रूप हैं। ज्ञानियों का कहना है कि अविद्यारूपी उपाधि के वश में पड़कर ही यह सब उत्पन्न होते हैं। भक्तों के निमित्त-सेव्य-सेवक भावरूप द्वैत का अविर्भाव होता है। इस प्रकार श्रीहरि के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है। उन्हीं भगवान् विष्णु का भक्त सदा स्मरण करता, नाम-गुण कीर्तन करता तथा सभी कर्म उनके ही निमित्त किया करता है। इसी कारण उसके लिए आनन्द और सुखों की उत्पत्ति होती है।

वह विह्वल होकर नाचता, रोता, हँसता और तन्मयतापूर्वक विचरण करता है। वह स्वयं को भूलकर भक्ति-भाव में ही डूब जाता है और भगवान् हरि के अतिरिक्त कहीं कुछ नहीं जानता। यही भगवान् की अव्यभिचारिणी (शुद्ध) भक्ति है, इसी के प्रभाव से देवता, दैत्य और मनुष्य आदि की सम्पूर्ण सृष्टि सहसा प्रकृति

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को प्राप्त होती है। नित्या प्रकृति अथवा ब्रह्म की सम्पदा ही भक्तिरूप में प्रकट होती है। वही भक्ति वेदादि में श्रेष्ठ एवं शिव, विष्णु और ब्रह्मास्वरूपिणी है। सत्त्वगुण के अभ्यास से युक्त द्वैत के जानने वाले मनुष्य इन्द्रिय व्यापार की इच्छा वाले होते हैं और जो तमोगुण से युक्त हैं वे घोर कार्यों का संकल्प किया करते हैं। द्वैत ज्ञान से युक्त ज्ञानीजन सत्वगुण के व्याप्त होने पर निर्गुणता को प्राप्त होते हैं तथा रजोगुण के व्याप्त होने पर विषयों में लग जाते हैं और यदि तमोगुण की अधिकता होती है तो वे पुरुष नरक को प्राप्त होते हैं।

भगवान् को लगाया हुआ भोग उच्छिष्ठ (प्रसाद) तथा इच्छित नैवेद्य ही पवित्र उत्तमोत्तम पथ्य स्वरूप है। भक्तों को इसी सात्विक आहार का भोजन करना चाहिये। (अर्थात् भोज्य सामग्री भगवान् को अर्पण करके ही प्रसाद रूप में सेवन करना चाहिये) जो भोजन इन्द्रियों को सन्तुष्ट करने वाला, वीर्य एवं रक्त-वर्धक तथा परमायु को देने वाला एवं आरोग्यप्रद है, ऐसा शुद्ध भोजन राजसी कहा गया है। कडुवा, खट्टा, जलन करने वाला, दुर्गन्धयुक्त तथा बासी भोजन तामसी मनुष्यों को प्रिय है। सतोगुणी पुरुष वन में निवास करते हैं, रजोगुणी मनुष्य ग्राम में और तमोगुणी द्यूत खेलने, मद्य-मांस खाने पीने एवं दुष्ट कार्य स्थलों में रहते हैं। भगवान् स्वयं अपना हाथ उठाकर किसी को कुछ प्रदान नहीं करते और न सेवक ही उनसे कुछ याचना करता है। फिर भी उनमें परस्पर सर्वदा परम प्रीति रहती है, यह कैसी विचित्र बात है? पवित्र मन वाले महाज्ञानी सनकजी भक्तिपूर्वक नारदजी के द्वारा भगवान् विष्णु का यह गुण-कथन सुनकर विनम्र वचनों से देवर्षिवर नारदजी की स्तुति और नमस्कार करके देवलोक को चले गये।

(कल्कि पुराण तृतीयांश अध्याय ११ के आधार से)

भवन्ति निर्विषाः सर्पा यथा तार्क्ष्यस्य दर्शनात्।
गङ्गाया दर्शनात् तद्वत् सर्वापापैः प्रमुच्यते॥
(महाभारत, अनुशा. अ. २६)

'जैसे गरुड़ को देखते ही सारे सर्पों के विष झड़ जाते हैं उसी प्रकार गङ्गाजी के दर्शन मात्र से मनुष्य सब पापों से छुटकारा पा जाता है।'

अहो भाग्यमहोभाग्यं विष्णुभक्तिरतात्मनाम्।
येषां मुक्तिः करस्थैव योगिनामपि दुर्लभा॥
(नारद पुराण पूर्व. ३६/८)

'जिनका मन भगवान् विष्णु की भक्ति में अनुरक्त है, उनका अहोभाग्य है, अहोभाग्य है; क्योंकि योगियों के लिये भी दुर्लभ मुक्ति उन भक्तों के हाथ में ही रहती है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु द्वारा भगवान् शिव का संकटमोचन

पुष्प (५)

राजा परीक्षित ने पूछा—भगवन् ! भगवान् शङ्कर ने समस्त भोगों का परित्याग कर रखा है; परन्तु देखा जाता है कि जो देवता, असुर अथवा मनुष्य उनकी उपासना करते हैं, वे प्रायः धनी और भोग सम्पन्न हो जाते हैं। लेकिन भगवान् विष्णु लक्ष्मीपति हैं; परन्तु उनकी उपासना करने वाले प्रायः धनी और भोग सम्पन्न नहीं होते। दोनों प्रभु त्याग और भोग की दृष्टि से एक दूसरे के विरुद्ध स्वभाव वाले हैं; परन्तु उनके उपासकों को उनके स्वरूप के विपरीत फल मिलता है। मुझे इस विषय में बड़ा सन्देह है कि त्यागी की उपासना से भोग और लक्ष्मी-पति की उपासना से त्याग कैसे मिलता है ? मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ।

श्रीशुकदेवजी बोले—परीक्षित ! शिवजी सदा अपनी शक्ति से युक्त रहते हैं। वे सत्त्व आदि गुणों से युक्त तथा अहंकार के अधिष्ठाता हैं। अहंकार के तीन भेद हैं—वैकारिक, तैजस और तामस। त्रिविध अहंकार से सोलह विकार हुए—दस इन्द्रियाँ, पाँच महाभूत और एक मन। अतः इन सबके अधिष्टातृ देवताओं में से किसी एक की उपासना करने पर समस्त ऐश्वर्यों की प्राप्ति हो जाती है; परन्तु परीक्षित ! भगवान् श्रीहरि तो प्रकृति से परे स्वयं पुरुषोत्तम एवं प्राकृत गुण रहित हैं। वे सर्वज्ञ तथा सबके अन्तःकरणों के साक्षी हैं। जो उनका भजन करता है, वह स्वयं भी गुणातीत हो जाता है। परीक्षित ! जब तुम्हारे दादा धर्मराज युधिष्ठिर अश्वमेध यज्ञ कर चुके, तब भगवान् से विविध प्रकार के धर्मों का वर्णन सुनते समय उन्होंने भी यही प्रश्न किया था। परीक्षित ! भगवान् श्रीकृष्ण सर्वशक्तिमान परमेश्वर हैं। मनुष्यों के कल्याण के लिये उन्होंने यदुवंश में अवतार धारण किया था। राजा युधिष्ठिर का प्रश्न सुनकर और उनकी सुनने की इच्छा देखकर उन्हें प्रसन्नतापूर्वक इस प्रकार से उत्तर दिया था।

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा—राजन् ! जिस पर मैं कृपा करता हूँ, उसका सब धन धीरे-धीरे छीन लेता हूँ। जब वह निर्धन हो जाता है, तब उसके सगे सम्बन्धी उसके दुःखाकुल चित्त की परवाह न करके उसे छोड़ देते हैं। फिर वह धन के लिये उद्योग करने लगता है, तब मैं उसका वह प्रयत्न भी निष्फल कर देता हूँ। इस प्रकार बार बार असफल होने के कारण जब धन कमाने से उसका मन विरक्त हो जाता है, उसे दुःख समझकर वह उधर से मुँह मोड़ लेता है और मेरे प्रेमी भक्तों का आश्रय लेकर उनसे मेल-जोल करता है, तब मैं उस पर अपनी अहैतुक कृपा की वर्षा करता हूँ। मेरी कृपा से उसे परम सूक्ष्म अनन्त सच्चिदानन्द स्वरूप परब्रह्म की

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

की प्राप्ति हो जाती है। इस प्रकार मेरी प्रसन्नता, मेरी आराधना बहुत कठिन है। इसी से साधारण लोग छोड़कर मेरे ही दूसरे रूप अन्यान्य देवताओं की आराधना बहुत कठिन है। दूसरे देवता आशुतोष हैं। वे झटपट पिघल पड़ते हैं और अपने भक्तों को साम्राज्य-लक्ष्मी दे देते हैं। उसे पाकर वे उच्छृङ्खल, प्रमादी और उन्मत्त हो उठते हैं और अपने वरदाता देवताओं को भी भूल जाते हैं तथा उनका तिरस्कार कर बैठते हैं।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित! ब्रह्मा, विष्णु और महादेव—ये तीनों शाप और वरदान देने में समर्थ हैं; परन्तु इनमें महादेव और ब्रह्मा शीघ्र ही प्रसन्न या रुष्ट होकर वरदान अथवा शाप दे देते हैं। लेकिन विष्णु भगवान् वैसे नहीं है। इस विषय में महात्मा लोग एक प्राचीन इतिहास कहा करते हैं। भगवान् शंकर एक बार वृकासुर को वर देकर सङ्कट में पड़ गये थे। परीक्षित! वृकासुर, शकुनि का पुत्र था। उसकी बुद्धि बहुत बहुत बिगड़ी हुई थी। एक दिन कहीं जाते समय उसने देवर्षि नारद को देख लिया और उनसे पूछा कि 'तीनों देवताओं में झटपट प्रसन्न होने वाला है कौन?'

परीक्षित! देवर्षि नारद ने कहा—'तुम भगवान् शङ्कर की आराधना करो, इससे तुम्हारा मनोरथ बहुत शीघ्र पूरा हो जायगा। वे थोड़े ही गुणों से शीघ्र से शीघ्र प्रसन्न और थोड़े ही अपराध से क्रोध कर बैठते हैं। रावण और बाणासुर ने केवल वन्दीजनों के समान शंकरजी की कुछ स्तुतियां की थी। इसी से वे उन पर प्रसन्न हो गये और उन्हें अतुलनीय ऐश्वर्य दे दिया। बाद में रावण, कैलास उठाने और बाणासुर के नगर की रक्षा का भार लेने से वे उनके लिये संकट में भी पड़ गये थे।'

नारदजी का उपदेश पाकर वृकासुर केदार क्षेत्र में गया और अग्नि को भगवान् शंकर का मुख मानकर अपने शरीर का मांस काट-काटकर उसमें हवन करने लगा। इस प्रकार छहः दिन तक उपासना करने पर भी जब उसे भगवान् शंकर के दर्शन न हुए, तब उसे बड़ा दुःख हुआ। सातवें दिन केदार तीर्थ में स्नान करके उसने अपने भीगे बाल वाले मस्तक को कुल्हाड़े से काटकर हवन करना चाहा। परीक्षित! जैसे जगत् में कोई दुःखवश आत्महत्या करने जाता है तो हम लोग करुणावश उसे बचा लेते हैं, वैसे ही परम दयालु भगवान् शंकर ने वृकासुर के आत्मघात के पहले ही अग्नि कुण्ड से अग्निदेव के समान प्रकट होकर अपने दोनों हाथों से उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और गला काटने से रोक दिया। उनका स्पर्श होते ही वृकासुर के अङ्ग ज्यों के त्यों पूर्ण हो गये। भगवान् शंकर ने वृकासुर से कहा—'प्यारे वृकासुर! बस करो, बस करो, बहुत हो गया। मैं तुम्हें वर देना चाहता हूँ। तुम मुँह मांगा वर मांग लो। अरे भाई! मैं तो अपने शरणागत भक्तों पर केवल जल चढ़ाने से ही सन्तुष्ट हो जाया करता हूँ। भला तुम झूठमूठ अपने

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शरीर को क्यों पीड़ा दे रहो हो ?' परीक्षित ! अत्यन्त पापी वृकासुर ने समस्त प्राणियों को भयभीत करने वाला यह वर मांगा कि 'मैं जिसके सर पर हाथ रख दूँ, वही मर जाय।' परीक्षित ! उसकी यह याचना सुनकर भगवान् रुद्र पहले तो कुछ अनमने से हो गये, फिर हँसकर कह दिया—'अच्छा, ऐसा ही हो।' ऐसा वर देकर उन्होंने मानों साँप को अमृत पिला दिया।

भगवान् शंकर के इस प्रकार कह देने पर वृकासुर के मन में यह लालसा हो आयी कि 'मैं पार्वती जी को ही हर लूँ।' वह असुर शंकरजी के वर को परीक्षा के लिये उन्हीं के सिर पर हाथ रखने का उद्योग करने लगा। अब तो शंकरजी अपने दिये हुए वरदान से ही भयभीत हो गये। वह उनका पीछा करने लगा और वे उससे डर कर काँपते हुए भागने लगे। वे पृथ्वी, स्वर्ग और दिशाओं के अन्त तक दौड़ते गये; परन्तु फिर भी उसे पीछा करते देखकर उत्तर की ओर बढ़े। बड़े-बड़े देवता इस संकट को टालने का कोई उपाय न देखकर चुप रह गये। अन्त में वे प्राकृतिक अंधकार से परे परम प्रकाशमय वैकुण्ठलोक में गये। वैकुण्ठ में स्वयं भगवान् नारायण निवास करते हैं। एक मात्र वे ही उन संन्यासियों की परमगति हैं, जो सारे जगत् को अभयदान करके शान्त भाव में स्थित हो गये हैं। वैकुण्ठ में जाकर जीव को फिर लौटना नहीं पड़ता। भक्त-भयहारी भगवान् ने देखा कि शंकरजी तो बड़े संकट में पड़े हुए हैं। तब वे अपनी योगमाया से ब्रह्मचारी बनकर दूर से ही धीरे-धीरे वृकासुर की ओर आने लगे। भगवान् ने मूँज की मेखला, काला मृगचर्म, दण्ड और रुद्राक्ष की माला धारण कर रखी थी। उनके एक-एक अंग से ऐसी ज्योति निकल रही थी, मानो आग धधक रही हो। वे हाथ में कुश लिये हुए थे। वृकासुर को देखकर उन्होंने बड़ी नम्रता से झुककर प्रणाम किया।

ब्रह्मचारी-वेषधारी भगवान् ने कहा—शकुनिनन्दन वृकासुरजी ! आप स्पष्ट ही बहुत थके से जान पड़ते हैं। आज आप बहुत दूर से आ रहे हैं क्या ? तनिक विश्राम तो कर लीजिये। देखिये, यह शरीर ही सारे सुखों की जड़ है। इसी से सारी कामनाएँ पूरी होती हैं। इसे अधिक कष्ट नहीं देना चाहिये। आप तो सब प्रकार से समर्थ हैं। इस समय आप क्या करना चाहते हैं ? यदि मेरे सुनने योग्य कोई बात हो तो बतलाइये। क्योंकि संसार में देखा जाता है कि लोग सहायकों के द्वारा बहुत से काम बना लिया करते हैं।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित ! भगवान् के एक-एक शब्द से अमृत बरस रहा था। उनके इस प्रकार पूछने पर पहले तो उसने तनिक ठहरकर अपनी थकावट दूर की; उसके बाद क्रमशः अपनी तपस्या, वरदान-प्राप्ति तथा भगवान् शंकर के पीछे दौड़ने की बात शुरू से कह सुनायी।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीभगवान् ने कहा—'अच्छा, ऐसी बात है ! तब तो भाई; हम उनकी बात पर विश्वास नहीं करते । आप नहीं जानते हैं क्या ? वह तो दक्ष प्रजापति के शाप से पिशाचभाव को प्राप्त हो गया है । आजकल वही प्रेतों और पिशाचों का सम्राट है । दानवराज ! आप इतने बड़े होकर ऐसी छोटी-छोटी बातों पर विश्वास कर लेते हैं ? आप यदि अब भी उसे जगद्गुरु मानते हों और उनकी बात पर विश्वास करते हों, तो झटपट अपने सिर पर हाथ रखकर परीक्षा कर लीजिये ।'

'दानवशिरोमणे ! यदि किसी प्रकार शंकर की बात असत्य निकले तो उस असत्यवादी को मार डालिये, जिससे फिर कभी वह झूठ नहीं बोल सके । 'परीक्षित् ! भगवान् ने ऐसी मोहित करनेवाली अद्भुत और मीठी बात कही कि उसकी विवेक बुद्धि जाती रही । उस दुर्बुद्धि ने भूलकर अपने ही सिर पर हाथ रख लिया । बस उसी क्षण उसका सिर फट गया और वहीं धरती पर गिर पड़ा, मानो उस पर बिजली गिर पड़ी हो । उस समय आकाश में देवता 'जय-जय, नमो नमः, साधु-साधु !' के नारे लगाने लगे । पापी वृकासुर की मृत्यु से देवता, ऋषि, पितर और गन्धर्व अत्यन्त प्रसन्न होकर पुष्पों की वर्षा करने लगे और भगवान् शंकर उस विकट संकट से मुक्त हो गये । अब भगवान् पुरुषोत्तम ने भय-मुक्त शंकरजी से कहा कि 'देवाधिदेव ! बड़े हर्ष की बात है कि इस दुष्ट को इसके पापों ने ही नष्ट कर दिया । परमेश्वर ! भला, ऐसा कौन प्राणी है जो महापुरुषों का अपराध करके कुशल रह सके ? फिर स्वयं जगद्गुरु विश्वेश्वर ! आपका अपराध करके तो कोई सकुशल रह ही कैसे सकता है ?'

य एवमव्याकृतशक्त्युदन्वतः
परस्य साक्षात् परमात्मनो हरेः ।
गिरित्रमोक्षं कथयेच्छृणोति वा
विमुच्यते संसृतिभिस्तथारिभिः ॥
(श्लोक ४०)

'भगवान् अनन्त शक्तियों के समुद्र हैं उनकी एक-एक शक्ति मन और वाणी की सीमा के परे है वे प्रकृति से अतीत स्वयं परमात्मा हैं । उनकी शंकरजी को संकट से छुड़ाने की यह लीला जो कोई कहता या सुनता है वह संसार के बन्धनों और शत्रुओं के भय से मुक्त हो जाता है ।'

(श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ८८ के आधार से)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीराम-तत्त्व विवेचन

सोपान २

मनोऽभिरामं नयनाभिरामं
वचोऽभिरामं श्रवणाभिरामम् ।
सदाभिरामं सतताभिरामं
वन्दे सदा दाशरथिं च रामम् ।।
(आनन्द रामायण)

'मनके लिये मनोरम, नयनों के लिये रमणीय, वचन की दृष्टि से सुन्दर, श्रवण के लिये मनोरम, सर्वदा प्रभिराम, निरन्तर सुन्दर दाशरथि राम की मैं वन्दना करता हूँ।'

भद्रो भद्रया सचमान आगात्
स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् ।
सुप्रकेतैद्युभिरग्निर्वितिष्ठन्
रुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ।
(ऋ. स. १०।३।३; सामवेद १५४८)

इस मन्त्र के चार चरणों में रामकथा के मुख्य चार अंशों का उल्लेख किया गया है। पहले चरण में बतलाया गया है कि भगवान् रामभद्र पत्निव्रता सीता के साथ वन में आये। राम पिताजी के आदेश पालन करने के कारण 'भद्र' हैं। अर्थात् (अथवा) सत्पुत्र किं वा महापुरुष हैं। सीता ने राजसुखों का परित्याग करके पतिदेव के साथ कष्ट सहन किया, अतएव वे भी 'भद्र' अर्थात् पतिव्रताओं की मुकटमणि हैं।

दूसरे चरण में कहा गया है कि पीछे से छिपकर दुराचारी रावण बहिन के सम्मुख आया। रावण विद्वान् था। उसने यह निति अवश्य पढ़ी होगी।

मातृवत् स्वसृवच्चैव तथा दुहितृवच्च ये ।
परदारेषु वर्तन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ।।

'जो व्यक्ति अपने से बड़ी परस्त्री के प्रति माता के समान, समानवयस्काओं के प्रति बहिन के समान और अल्पवयस्कों के प्रति पुत्री के समान व्यवहार करते हैं, वे स्वर्ग के अधिकारी होते हैं।' अवश्य रावण को सीता के प्रति बहन का भाव रखना था, किन्तु उसने रखा दुर्भाव।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तीसरे चरण में लिखा है कि लङ्का के गगनचुम्बी, सुन्दर एवं उत्कृष्ट प्रासादों में सर्वत्र अग्निकाण्ड हो गया।

हनुमानजी ने अपनी पूँछ से स्वर्णमयी लङ्का को भस्मसात् कर दिया था, उसी का दिग्दर्शन यहाँ करा दिया गया है।

चौथे चरण में कहा गया है कि (रावण) अपनी हिंसक सेनाओं को साथ लेकर श्रीरामके सम्मुख आ पहुँचा। लङ्का के जल जाने पर रावण को समझ लेना चाहिये था कि जिनके एक दूत ने मेरे काञ्चन नगर का विध्वंस कर दिया, उनसे मेरे विरोध और युद्ध का परिणाम सर्वनाश होगा। उसे श्रीराम के चरणों में शरण ग्रहण करना चाहिये थी, किन्तु उसने युद्ध किया।

उपर्युक्त साम-मन्त्र में भगवान् 'राम' और 'भद्र' शब्दों का प्रयोग हुआ है। संस्कृत के लौकिक साहित्य में जिस प्रकार राम के लिये 'रामचन्द्र' का प्रयोग हुआ है, उसी प्रकार 'रामभद्र' का भी प्रयोग हुआ है। उदाहरण के रूप में श्रीरामरक्षास्तोत्र का एक पद्य प्रस्तुत है—

रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन्।
नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति॥

'राम', 'रामभद्र' अथवा 'रामचन्द्र' (नाम का उच्चारण करते हुए भगवान्) का स्मरण करने वाला मनुष्य पापों से लिप्त नहीं होता, अपितु सांसारिक समस्त भोगों को प्राप्त करके अन्त में मोक्षपद को प्राप्त कर लेता है।

वेदेषु कथिता या च स्वर्धुनी लोकपावनी।
सा श्रीरामकथा दिव्या पुनातु भुवनत्रयम्॥

'वेदों में जो लोकपावनी गङ्गा के रूप में कही गयी है, वह दिव्य श्रीराम-कथा तीनों लोकों को पवित्र करे।'

आजकल लोग कह देते हैं कि वेद अब सृष्टि के आरम्भ काल से ही हैं, तब सृष्टि के बहुत पश्चात् इस श्वेत वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में होने वाले श्री राम कृष्ण आदि के नाम-चरित्र उनमें कैसे आ सकते हैं? वे लोग—

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयत्।
दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः॥
(ऋग्वेद १०।१९०।३)

यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं
यो वै वेदाञ्च प्रहिणोति तस्मै।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तं ह देवामात्मबुद्धिप्रकाशं
मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ।।
(श्वेताश्वतरोपनिषद् ६।१८)

इत्यादि वेदोपनिषदों की अनेक श्रुतियों को नहीं देखते-विचारते कि इस सृष्टि से पूर्व कल्पों में श्रीराम, श्रीकृष्ण आदि के जो चरित्र हुए थे, उनका संकेत इस सृष्टि के आरम्भ में अवतरित वेदों ने किया है। भगवान् श्रीराम के पूर्वजों तथा अन्य पात्रों का भी उल्लेख वेदों में प्राप्य है, स्थानाभाव से उनमें से कतिपय मन्त्र तथा उनके अंश दिग्दर्शनमात्र प्रमाण रूप में प्रस्तुत हैं—

भगवान् श्रीराम—

(१) अधो रामो सावित्रीः' (यजुर्वेद २९।५९)

—में सवितृ कुलोत्पन्न राम का ही वर्णन हुआ है।

(२) श्रीराम के प्रति वसिष्ठजी का कथन—

संवत्सरं न मांसमश्नीयात् न रामामुपेयात् ।.....
नास्य राम ! उच्छिष्टं पिवेत् तेज एव तत्स ृ ष्यति ।
(तै. आ. ५।८।१३)

हे राम ! (युवराज को चाहिये कि युवराजपद मिलने के एक दिन पूर्व से) संवत्सरम्—एक वर्ष तक ! मांसम् न अश्नीयात्-'मांस' शब्द से अभिहित वस्तुओं का सेवन न करे।'

श्रीसीताजी

(१) अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा ।
यथा नः सुभगाससि यथा नः सुफलाससि ।।
(ऋग्वेद ४।५७।६ तथा (कुछ अन्तर से) अथर्व. ३।१७।८; तै. आ ६।६।२)

(२) इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानु यच्छतु ।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम् ।।
(ऋग्वेद ४।५७।७, अथर्व. ३।१७।४)

कबन्ध—नीचीनवारं वरुणः कवन्धं प्र ससर्ज० ।'
(ऋग्वेद५।८५।३, नि. १०।४)

छः आँख और तीन सिर वाला त्रिशिरा—

(१) 'स इद्दासं तुवीरवं पतिर्दन् षलक्षं त्रिशीर्षाणं दमन्यत् ।'
(ऋग्वेद १०।९९।६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(२) 'त्रीन् त्स मूर्ध्नो असुरश्चक्र आरभे० ।'

(ऋग्वेद ९।७३।१)

दशानन रावण —

ब्राह्मणो जज्ञे प्रथमो दशशीर्षो दशास्यः ।
स सोमं प्रथमः पपौ स चकारारसं विषम् ।।

(अथर्ववेद ४।६।१)

भगवान् राम के पूर्वजों के संकेत—

(१) इक्ष्वाकु—'यं त्वा वेद पूर्वं इक्ष्वाको० ।' (अथर्ववेद १९।३९।९)

ईज ऐक्ष्वाको राज० । (शतपथ ब्राह्मण १३।५।४,५)

सगर के साठ हजार पुत्र—

षष्टिं सहस्रा नवतिं च कौरम आ रुशमेषु दद्महे ।

(अथर्ववेद २०।१२७।१)

(३) रघु—'रघुः श्येनः पतयत् । (ऋग्वेद ५।४५।९)

भगवान् राम की पुरी अयोध्या का वर्णन भी वेद में—अथर्ववेद काण्ड १० सूक्त २, मन्त्र २८ के उत्तरार्द्ध से सूक्तान्त के मन्त्र ३३ तक उपलब्ध है।

श्रीरामनाम-माहात्म्य एवं तत्त्व

'श्रीरामरहस्योपनिषद्' में श्रीरामचन्द्रजी के श्रीमुख की वाणी है—

श्रीराम उवाच

अथ पञ्च दण्डकानि पितृघ्नो मातृघ्नो ब्रह्मघ्नो गुरु हनन कोटि यतिघ्नोऽनेकृतपापो यो मम षण्णवतिकोटिनामानि जपति म तेभ्यः प्रमुच्यते स्वयमेव सच्चिदानन्दस्वरूपो भवेन्न किम् ? (१।९)

'जो मनुष्य पितृघाती, मातृहन्ता, ब्रह्मघाती, गुरुहन्ता कोटियति विनाशक तथा और भी अनेक पापों का कर्ता है, वह मेरे ९६ करोड़ नामों का जप करके उन सब पापों से विमुक्त हो जाता है। अधिक क्या कहा जाय, वह सच्चिदानन्द स्वरूप हो जाता है।'

अग्निषोमात्मकं रूपं रामबीजे प्रतिष्ठितम् ।
यथैव वटबीजस्थः प्राकृतश्च महाद्रुमः ।।
तथैव रामबीजस्थ जगदेतच्चराचरम् ।

(वही, ५।८-४)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'रामबीज (रां) में अग्नीषोमात्मक विश्व प्रतिष्ठित है। जिस प्रकार वटबीज के भीतर प्राकृत महान् वटवृक्ष रहता है, उसी प्रकार दृश्यमान चराचर जगत् रामबीज में अवस्थित है।'

आद्यो रा तत्पदार्थः स्यान्मकारस्त्वंपदार्थवान् ।।
तयोः संयोजमसीत्यात्मतत्त्वविदो विदुः ।
(वही ५।१२-१३)

'राम' शब्द के आदि का 'रा' तत्पदार्थ है, मकार 'त्वं' पदार्थ है, दोनों का संयोजन 'असि' है, अर्थात् 'राम' शब्द 'तत्त्वमसि' (तू आत्मा ही वह परमात्मा है)-इस महावाक्य का द्योतक है—आत्म तत्त्व के ज्ञाता इससे अवगत हैं।

'श्रीरामोत्तरतापिनी उपनिषद्' में लिखा है—

मन्वन्तरसहस्रैस्तु जपहोमार्चनादिभिः ।
ततः प्रसन्नो भगवान् श्रीरामः प्राह शंकरम् ।।
वृणीष्व यदभीष्टं तद् दास्यामि परमेश्वर ।
अथ सच्चिदानन्दात्मानं श्रीराममीश्वरः पप्रच्छ—
मणिकर्ण्यां मम क्षेत्रे गङ्गायां वा तटे पुनः ।
म्रियेत देही तज्जन्तोर्मुक्तिर्नातो वरान्तरम् ।।
(श्रीरामोत्तरतापिनी उपनिषद् ३।१-३)

'भगवान् शंकर ने सहस्रों मन्वन्तर तक जप-होम-अर्चना आदि के द्वारा भगवान् श्रीरामचन्द्र की आराधना की। तदनन्तर श्री भगवान् प्रसन्न होकर शंकर से बोले – 'हे परमेश्वर ! आपको जो अभीष्ट हो, वह वर माँगिये, उसे मैं अवश्य दूँगा।' तत्पश्चात् शङ्करजी ने सच्चिदानन्द श्रीरामचन्द्रजी से कहा—

'मेरे अविमुक्त क्षेत्र (वाराणसी) में मणिकर्णिका में, गङ्गा में अथवा उसके तटपर जो कोई जीवदेह त्याग करे, उसकी मुक्ति हो— इसके अतिरिक्त अन्य वर मुझे नहीं चाहिये।' (इसके आगे का श्लोक मन्त्रादि पाठ न देकर केवल भावार्थ लिख रहे हैं—)

श्रीरामचन्द्रजी बोले—'देवेश ! आपके इस क्षेत्र (वाराणसी) के अन्तर्गत किसी भी स्थान में मरे हुए कृमिकीट पर्यन्त जीव शीघ्र मुक्त हो जायँ, मेरा यह वरदान अन्यथा नहीं हो सकता। आपके अविमुक्त क्षेत्र म सबको मुक्ति प्रदान करने के लिये मैं पाषाण-प्रतिमा आदि में संनिहित ही रहूँगा। शिव ! इस क्षेत्र में जो मनुष्य भक्ति पूर्वक राम-मन्त्र के द्वारा मेरी पूजा करेगा, मैं उसको ब्रह्महत्या आदि पापों से मुक्त कर दूँगा, चिन्ता न करो।' (३।४-६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'आपसे या ब्रह्मा से जो षडक्षर मन्त्र (श्रीरामाय नमः) प्राप्त करेंगे। वे जीवितावस्था में ही मन्त्र सिद्ध हो जाएँगे और देहान्त होने पर मुझको प्राप्त करेंगे। अथवा शिव ! आप स्वयं जिस किसी मुमूर्षु के दाहिने कान में मेरे मन्त्र का उपदेश कर देगें, वह मुक्त हो जायगा।' (३।७-८)

'मुक्तिकोपनिषद्' में (१८-१९, २०-२१) में लिखा है—

'हनुमान् ! दुराचार-रत व्यक्ति भी यदि मेरे नाम का भजन करता है तो वह सालोक्य-मुक्ति प्राप्त करता है, उसे अन्य लोक की प्राप्त नहीं होती। जीव के प्राणोत्क्रमण के समय काशी में भगवान् रुद्र उसे तारक ब्रह्म (राम-नाम) का उपदेश करते हैं, जिसके द्वारा जीव अमृतत्व को प्राप्त होकर मुक्त हो जाता है। काशी में जिस-किसी स्थान में मृत्यु के समय महेश्वर जीव के दाहिने कान में मेरे तारक ब्रह्म का उपदेश करते हैं, उसके द्वारा सारे पापों से मुक्त होकर वह मेरे सारूप्य को प्राप्त होता है।'

'हारीतस्मृति' (३।२३४, ३५,३९) में लिखा है—

"इस मन्त्र का जप करके अगस्त्य मुनि रुद्र के पद को प्राप्त हुए थे. कश्यप ब्रह्मा के पद को, कौशिक अमराधिपतित्व को तथा कार्तिकेय, मनु, इन्द्र, सूर्य, पर्वतमुनि, नारद और वालखिल्यादि मुनिगण देवत्व को प्राप्त हुए थे। अतएव बुद्धिमान मनुष्य अन्य साधनों को सम्यग्रूप से त्याग कर सतल रामनामरूपी परमप्रिय मन्त्र को सर्वतोभावेन सदा काय-मन-वचन से जप करे। 'श्रीरामाय नमः' यह तारक ब्रह्म कहलाता हैं. यह महामन्त्र विष्णुसहस्रनाम के तुल्य है। 'रां' इस एकाक्षर राम मन्त्र की योगीजन सम्यक् उपासना करते हैं।

राम—शब्द का निर्वचन करते हुए कहा गया है—

चिन्मयेऽस्मिन्महाविष्णौ जाते दशरथे हरौ।
रघोः कुलेऽखिलं राति राजते यो महीस्थितः॥
स राम इति लोकेषु विद्वद्भिः प्रकटीकृतः॥
(रामपूर्वतापिनी-उपनिषद् १।१-२)

'चिन्मय, महाविष्णु हरि भगवान् रघुकुल में महाराज दशरथ के यहाँ प्रकट हुए। वे समस्त कामनाओं के प्रदान वाले हैं। इस भूमण्डल पर उनकी बड़ी शोभा है। वे ही 'राम' हैं, इस बात का विद्वानों ने प्रतिपादन किया है। इसके लिए बतलाया है—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते॥
(रामपूर्वता. उ. ६), (वही १।६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'रघुकुल में अवतीर्ण परम-पुरुष को 'राम' कहते है। राम-पद से पर-ब्रह्म का ही कथन होता है, क्यों कि योगीजन जिस अनन्त, नित्यानन्दमय चिन्मय तत्त्व में आनन्द का अनुभव करते हैं, वही तो 'राम' हैं। अतः 'रामनाम' में साक्षात् परब्रह्म महाविष्णु ही सूक्ष्मरूप से अवस्थान करते हैं।'

श्रीराम की भगवत्ता का प्रतिपादन करते हुए बतलाया गया है—

ॐ यो ह वै श्रीरामचन्द्रः स भगवानद्वैतपरमानन्द आत्मा।
यः सच्चिदानन्दद्वैतैकचिदात्मा भूर्भुवः सुवस्तस्मै नमो नमः।

(रामपूर्वतापिनी उपनिषद् ५ गद्यांश)

ॐ जो जगत्प्रसिद्ध श्रीरामचन्द्रजी हैं, वे निश्चय ही भगवान् (षड्विध ऐश्वर्य से सम्पन्न) हैं, अद्वितीय परमानन्द स्वरूप हैं। सच्चिदानन्द अद्वितीय एकचित् स्वरूप हैं, भूः, भुवः, स्वः— ये तीन लोक हैं, उन श्रीरामचन्द्रजी को निश्चय ही बारंबार नमस्कार है।'

रामरहस्योपनिषद् में भगवान् रामका ध्यान और उनके मन्त्रों के जपका विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। उसके चतुर्थ अध्याय के अनुसार सनकादि मुनियों ने श्रीहनुमानजी से श्रीराम के मन्त्रों के पुरश्चरण की विधि पूछी थी। श्रीहनुमानजी ने साधक के लिए स्नान, भोजन, ब्रह्मचर्य, भूमिशयन, जप, गुरुभक्ति, हवन, तर्पण, ध्यान और मन्त्र जप की साङ्गोपाङ्ग विधि बतलाकर कहा कि 'मन्त्र सिद्ध हो जाने से मानव जीवन्मुक्त हो जाता है और उसे अणिमादि सिद्धियों की प्राप्ति भी हो जाती है।' उन्होंने यह भी बतलाया कि 'साधक को लौकिक कार्यों की सिद्धि के लिये, महाविपत्ति पड़ने पर भी, राममन्त्र का प्रयोग नहीं करना चाहिये, क्यों कि राममन्त्र से तो दुर्लभ मोक्ष प्राप्त किया जाता है। यदि लौकिक कार्य सिद्धि का प्रसंग आ ही जावे तो साधक को चाहिये कि मेरा (हनुमानजीका) स्मरण करे। जो मनुष्य राममन्त्र का प्रतिदिन जप करते हुए भगवान् रामका भक्तिपूर्वक स्मरण करता है, उसके मनोरथों की पूर्ति का उत्तरदायित्व मेरे ऊपर है। मैं राघवेन्द्र के भक्तों की लौकिक कामनाएँ पूर्ण कर दूँगा। मैं श्रीरामचन्द्र भगवान् का कार्य करने के लिए सदा सावधान रहता हूँ।

अध्यात्मरामायण परम पवित्र ग्रन्थ है। इसमें परम रसायन रामचरित का वर्णन करते हुए, भगवान् विश्वनाथ ने अपनी प्रिया आदिशक्ति पार्वतीजी को सुनाया है। इसमें प्रसङ्गानुसार भक्ति, ज्ञान, उपासना, नीति, सदाचार के दिव्य उपदेशों के अतिरिक्त प्रधान रूपमें 'अध्यात्मतत्त्व' विवेचन किया गया है। इसलिये इस ग्रन्थका नाम 'अध्यात्म रामायण' सर्वथा सार्थक है। इस ग्रन्थ का कोई भी काण्ड इस प्रकार अछूता नहीं, जिसमें श्रीरामको अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक विष्णु का स्वरूप न बतालाया गया हो।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ग्रन्थ के आरम्भ में ही माता पार्वतीजी भगवान् शंकर से श्रीपुरुषोत्तम भगवान् राम के सनातन तत्त्व विषय को पूछती हैं—

पृच्छामि तत्त्वं पुरुषोत्तमस्य
सनातनं त्वं च सनातनोऽसि ।।

(अध्यात्म रामा. १।१।७)

क्यों कि वे भगवान् राम सिद्धगणों के द्वारा परम अद्वितीय, आदिकारण, प्रकृति के गुण-प्रवाह से परे बतलाये जाते हैं, किन्तु कोई-कोई कहते हैं कि श्रीराम परब्रह्म होने पर भी अपनी माया से आवृत होने के कारण अपने आत्मस्वरूप को नहीं जानते थे। अतः वसिष्ठादि के उपदेश से उन्होंने अध्यात्मतत्त्व को जाना था। भगवान् भूतभावन ! मुझे भी इस प्रकार की शङ्का हो रही है—

यदि स्म जानाति कुतो विलापः
सीतोकृतेऽनेन कृतः परेण ।
जानाति नैवं यदि केन सेव्यः
समो हि सर्वैरपि जीवजातैः ।।
अत्रोतरं किं विदितं भवद्भि
स्तद् ब्रूत मे संशयभेदिवाक्यम् ।

(अध्यात्म रामायण १।१।१४-१५)

अर्थात् यदि वे आत्मतत्त्व को जानते थे तो उन परमात्मा ने सीता के लिये इतना विलाप क्यों किया और यदि उन्हें आत्मज्ञान नहीं था तो वे अन्य सामान्य जीवों के समान ही हुए, फिर उनका भजन क्यों किया जाना चाहिये ? इस विषय को आप ऐसे वाक्यों से समझाइये कि मेरा सन्देह निवृत्त हो जाय।

तब देवाधिदेव भगवान् नीलकण्ठ शिव ने माँ अम्बिका को राम का स्वरूप समझाते हुए इस प्रकार बतलाया—श्रीरामचन्द्रजी निस्संदेह प्रकृति से परे, परमात्मा, अनादि, आनन्दघन और अद्वितीय पुरुषोत्तम हैं, जो अपनी माया से ही इस सम्पूर्ण जगत् को रचकर इसके बाहर-भीतर सब ओर आकाश के समान व्याप्त हैं तथा जो आत्मस्वरूप से सब के अन्तःकरण में स्थित हुए अपनी माया से इस विश्व को परिचालित करते हैं—

रामः परमात्मा प्रकृतेरनादि
रानन्द एकः पुरुषोत्तमो हि ।।
स्वमायया कृत्स्नमिदं हि सृष्ट्वा
नभो वदन्तर्बहिरास्थितो यः ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वान्तरस्थोऽपि निगूढ आत्मा
स्वमायया सृष्टमिदं विचष्टे ।।
(वही, १।१।१७-१८)

भगवान् श्रीराम जब समस्त विघ्न-बाधाओं को पारकर राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए, तब भक्तवर हनुमान को रामतत्त्वज्ञान की अभिलाषा जाग्रत हुई। अन्तर्यामी श्रीराम ने हनुमानजी के प्रति अपने तत्त्व का उपदेश देने की जगज्जननी श्रीसीताजी को आज्ञा दी। माता जी ने भी शरणागत श्री हनुमानजी को राम का निश्चित तत्त्व बतलाते हुए कहा था—

रामं विद्धि परं ब्रह्म सच्चिदानन्दमद्वयम् ।
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं सतामात्मगोचरम् ।।
आनन्दं निर्मल शान्तं निर्विकारं निरञ्जनम् ।
सर्वव्यापिनमात्मानं स्वप्रकाशमकल्मषम् ।।
(वही, १।१।३२-३३)

अर्थात् वत्स हनुमान् ! तुम श्रीराम को साक्षात् अद्वितीय सच्चिदानन्दघन परब्रह्म परमेश्वर समझो। ये निर्विकार, निरञ्जन, सर्वव्यापक, स्वयं प्रकाशमान और पापहीन परमात्मा ही हैं।'

तदनन्तर स्वयं भगवान् राम भी 'तत्त्वमसि'—वेदान्त के इस महावाक्य के आधार पर अपना अध्यात्मस्वरूप प्रियभक्त हनुमान को इसी प्रकार से बतलाते हैं।

विश्रवा के पुत्र रावण के अत्याचारों से संतप्त होकर समस्त देवगण ब्रह्माजी सहित जब श्री हरि से अवतार हेतु प्रार्थना करते हैं; तब शेषशायी परात्पर भगवान् नारायण उन्हें राजा दशरथ के यहाँ कौसल्या आदि तीन रानियों के द्वारा पुत्ररूप में चार अंशों में प्रकट होने का आश्वासत देते हैं—

तस्याहं पुत्रतामेत्य कौसल्यायां शुभे दिने ।
चतुर्धाऽऽत्मानमेवाहं सृजामोत्तरयोः पृथक् ।।
(वही, १।२।२७)

अपने चरणों की रजके स्पर्श से जब श्रीराम अहिल्या का उद्धार कर देते हैं, तब उनका परमात्मत्व सिद्ध हो जाता है और अहिल्या भी उन्हें पुराण पुरुष परमात्मा बतलाती हुई गुणगान करती है—

'सोऽयं परमात्मा पुरुषः पुराण
एकः स्वयंज्योतिरनन्त आद्यः ।'
(वही, १।५।४९)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिवधनुपभङ्ग के पश्चात् जानकी का परिणय कर जब राम अयोध्या लौटते हैं, तब भृगुनन्दन परशुराम उनसे अपना विष्णु धनुष चढ़वाकर उन्हें परमेश्वर के रूप में स्वीकार करते हैं—

राम राम महाबाहो जाने त्वां परमेश्वरम् ।।

(अध्या. रा. बा. ७।२०)

मुनिवर वामदेव भी भगवान् राम को 'नारायण' और सीता को 'लक्ष्मी' बतलाते हैं—

एष रामः परो विष्णुरादिनारायणः स्मृतः ।
एषा सा जानकी लक्ष्मीर्योगमायेति विश्रुता ।।

(वही, २।५।११)

स्नेह और सेवा की मूर्ति भरत भी अपने को धिक्कारते हुए राम को 'परमात्मा' बतलाते हैं—

धिङ्मां जातोऽस्मि कैकेयां पापराशिसमानतः ।
मन्निमित्तमिदं क्लेशं रामस्य परमात्मनः ।

(अध्या. रा. अयो. ८।३१)

यहाँ तक कि श्रीराम को बनवास देने वाली माता कैकेयी भी आगे चल कर उन्हें विष्णु भगवान् बतलाती हैं—

त्व साक्षाद्विष्णुरव्यक्तः परमात्मा सनातनः ।

(वही, २।९।५७)

औरों का तो कहना ही क्या है ? राक्षसराज रावण उनका परम शत्रु होते हुए भी उन्हें 'परमात्मा' बतलाता है और उनके हाथ से मरकर परमपद प्राप्त करने के लिये ही उनसे बैर ठानता है—

यदा न रामो मनुजः परेशो
मां हन्तुकामः सबलं बलौघैः ।
सम्प्रार्थितोऽयं ह्रहिणेन पूर्वं
मनुष्यरूपोऽथ रघोः कुलोऽभूत् ।।
वध्यो यदि स्यां परमात्मनाहं
वैकुण्ठराज्यं परिपालयेऽहम् ।
नो चेदिदं राक्षसराज्यमेव
भोक्ष्ये चिरं राममतो व्रजामि ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्थं विचिन्त्याखिलराक्षसेन्द्रो
रामं विदित्वा परमेश्वरं हरिम् ।
विरोधबुद्धचैव हरिं प्रयामि
द्रुतं न भक्त्या भगवान् प्रसीदेत् ।।

(वही, अरण्य. ५।५९-६१)

अथवा यह राम मनुष्य नहीं है, साक्षात् परमात्मा ने ही पूर्वकाल में की हुई ब्रह्मा की प्रार्थना से मेरी सेना के सहित मुझे वानर सेनाओं से मारने के लिये इस समय रघुवंश में मनुष्यरूप में अवतार लिया है । यदि परमात्मा द्वारा मैं मारा गया, तब तो मैं वैकुण्ठ का राज्य भोगूँगा, नहीं तो चिरकालपर्यन्त राक्षसों का राज्य तो भोगूँगा ही । इसलिये मैं (अवश्य) राम के पास चलूँगा । सम्पूर्ण राक्षसों के स्वामी रावण ने इस प्रकार विचार कर भगवान् राम को साक्षात् परमात्मा हरि जानकर (यह निश्चय किया कि) मैं विरोध बुद्धि से ही भगवान् के पास जाऊँगा, (क्योंकि) भक्ति के द्वारा भगवान् शीघ्र प्रसन्न नहीं हो सकते ।'

यहाँ आकर तो यह प्रसंग और भी स्पष्ट हो जाता है कि राम साक्षात् हरि थे, क्योंकि रावण की मृत्यु के बाद उसके शरीर से निकला हुआ तेज श्रीराम में आकर समा जाता है—

रावणस्य च देहोत्थं ज्योतिरादित्यवत्स्फुरत् ।
परिवेश रघुश्रेष्ठं देवानां पश्यतां सताम् ।

(अध्यात्म रामा. युद्ध ११।७८-७९)

जब परम पुरुष भगवान् विष्णु महाराज दशरथ के प्रासाद में उनके पुत्र रूप में अवतीर्ण हुए, तब वेद भी महर्षि वाल्मीकि के माध्यम से रामायण के रूप में अवतीर्ण हुआ—

वेद वेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदः प्राचेतसादासीत् साक्षाद् रामायणात्मना ।।

आदिकवि वाल्मीकि ने ब्रह्माजी के आदेश से नारदजी से परामर्श करके दशरथ नन्दन श्रीराम के लोक पावन चरित्र को चौबीस हजार श्लोकों में निबद्ध किया था । गायत्री मन्त्र के प्रथम-अक्षर से उन्होंने अपने काव्य की रचना का प्रारम्भ किया था । जब एक हजार पद्य पूरे हो गये, तब उस मन्त्र के द्वितीय अक्षर से आगे रचना चलायी । अगले एक हजार पद्य लिखे जाने पर गायत्री के तीसरे अक्षर से अग्रिम रचना का प्रसार हुआ । इस प्रकार गायत्री के २४ अक्षरों को आदि में रखकर वाल्मीकिजी ने रामायण के चौबीस हजार श्लोकों की रचना की । महर्षि वाल्मीकि भगवान् राम के समकालीन थे । उन्हें समस्त रामचरित्र विदित था ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वे क्रान्तदर्शी तो थे ही। जितने राम-चरित्र अब तक लिखे गये हैं, उनमें वाल्मीकि कृत रामायण की सर्वाधिक महिमा है।

इस रामायण में ऐसे अनेक प्रसङ्ग हैं, जिनमें भगवान् श्रीरामचन्द्रजी की भगवत्ता विशदरूप से प्रतिपादित की गयी है। उनमें से कतिपय प्रसङ्ग दर्शाये जा रहे हैं—

देवताओं ने जब ब्रह्माजी से रावणके कुकृत्योंका वर्णन किया और उसके वध का उपाय पूछा, तब ब्रह्माजी ने उनसे कहा था कि रावण की मृत्यु किसी मनुष्य के द्वारा ही होगी। इस उत्तर से देवताओं को बड़ा सन्तोष हुआ। तभी शङ्खचक्र-गदाधारी, महाद्युतिमान्, पीताम्बर-परिवीत, जगत्पति भगवान् विष्णु विनतानन्दन गरुड़ पर बैठकर वहाँ पधारे। सब देवताओं ने उनकी स्तुति की और वे प्रणाम करके बोले—'हे प्रभो! आप परम तेजस्वी, दान-शिरोमणि, धर्मात्मा, अयोध्यानरेश दशरथ के पुत्ररूप में भूमण्डल में अवतीर्ण होकर युद्ध में रावण का सहार कर दीजिये।'

देवताओं की इस प्रार्थना को सुनकर भगवान् ने कहा इसी प्रकार से किया जावेगा। आप लोग अपने भय का परित्याग करो। मैं उस दुराधर्ष रावण का उसके परिवार, मन्त्रीमण्डल एवं बन्धु-बान्धवों सहित संहार करके ग्यारह हजार वर्षों तक पृथ्वी का पालन करता हुआ वहाँ रहूँगा।' तत्पश्चात् पुण्डरीकाक्ष भगवान् ने महाराज दशरथ के पुत्ररूप से जाने का विचार किया।

(वाल्मीकि रामा. बाल. सर्ग १५)

परशुरामजी ने श्रीराम की परीक्षा लेने के लिये उन्हें अपना वैष्णव धनुष देते हुए कहा—'काकुत्स्थ! यदि तुम इस पर शरका संधान नहीं कर सकोगे, तो मेरा तुम्हारे साथ द्वन्द-युद्ध होगा।' श्रीराम ने उस धनुष को लेकर उस पर अनायास बाण का संधान कर दिया। वह बाण अमोघ था, निष्फल नहीं जा सकता था। अतः उस शर संधान के द्वारा परशुरामजी का बल जाता रहा तब तो—

तेजोभिर्गतवीर्यत्वाज्जामदग्न्यो जडीकृतः।
रामं कमलपत्राक्षं मन्दं मन्दमुवाच ह॥

(वाल्मी. रा. १।७६।१२)

परशुरामजी बोले—'राम! मैं आपको पहचान गया। आप साक्षात् मधु-सूदन (विष्णु) हैं, सुरेश्वर हैं। ये सब देवता यहाँ आकर आपका दर्शन कर रहे हैं। युद्ध में आपका साम्मुख्य कोई नहीं कर सकता। आप त्रिलोकीनाथ हैं।

(वाल्मी. रा. १।७६।१७-१९)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हनुमानजी ने रावण को कहा—'परमयशस्वी राम चराचर प्राणियों सहित इन सारे लोकों का संहार करके फिर उसकी सृष्टि कर सकते हैं।' हनुमानजी ने फिर आगे रावण को बतलाया कि 'सारे देवता, दैत्य, यक्ष, राक्षस, नाग, गन्धर्व, विद्याधर तो क्या, स्वयम्भू ब्रह्मा, त्रिनेत्र रुद्र और सुरनायक शक्र भी युद्ध में राघवेन्द्र के सम्मुख नहीं ठहर सकते।' (वा. रा. सुन्दर. सर्ग ५१।३९-४४)

सीता की अग्नि परीक्षा के समय देवताओं ने श्रीराम की स्तुति करते हुए कहा – 'आप समस्त लोकों के निर्माणकर्ता हैं, ज्ञानियों में श्रेष्ठ हैं, विभु हैं।' ब्रह्माजी ने कहा कि 'आप चतुर्भुज श्रीमन्नारायण हैं। आप अक्षर ब्रह्म हैं, त्रिकाल-सत्य हैं। आप उपेन्द्र, मधुसूदन और पद्मनाभ हैं। आप स्वयम्प्रभु परमात्मा एवं ॐकाररूप हैं। यह समस्त जगत् आपका शरीर स्थानीय है। आप विष्णु हैं और सीताजी साक्षात् लक्ष्मीजी हैं।'

(वाल्मी. रा. युद्ध. सर्ग ११७)

भगवान् शिव ने रामनाम को अन्य सहस्र नामों के समान बतलाते हुए भगवती पार्वतीजी से कहा—

सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ।।'

(पद्मपुराण)

'राम' शब्द का विश्लेषण करने से तीन अक्षरों का प्रादुर्भाव होता है—(१) रेफ (र), (२) आ और (३) म। स्कन्द-यामल-तन्त्र में भगवान् रुद्र कहते हैं—

रेफोऽग्निरहमेवोक्तो विष्णुः सोमो म उच्यते ।
आवयोर्मध्यगो ब्रह्मा रविराकार उच्यते ।।

(स्कन्द-यामल-तन्त्र)

अर्थात्—"रेफरूपअग्नि मैं हूँ। विष्णु सोम 'म' कहा जाता है। हम दोनों के मध्य ब्रह्मा 'आ' सूर्यरूप है।" अतः स्पष्ट रूप से कृषाणु, भानु और हिमकर से क्रमशः रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु का ग्रहण किया गया है। इसलिये सिद्ध होता है कि एक 'राम-नाम' ही ऐसा है, जो त्रिदेवों की उत्पत्ति का कारण है।

राम एव परं ब्रह्म राम एव परंतपः ।
राम एवं परं तत्त्व श्रीरामो ब्रह्म तारकम् ।।

(रामरहस्योपनिषद १।६)

'श्रीराम ही परब्रह्म हैं, श्रीराम ही परन्तप हैं, श्रीराम ही परम तत्त्व हैं; और श्रीराम ही तारक ब्रह्म (रामनाम) है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीराम के माहात्म्य एवं तत्त्व विषय में अनेक ग्रन्थों में विपुल साहित्य भण्डार भरा पड़ा है। यहाँ केवल कहने और लिखने के लिये क्या पर्याप्त हो सकता है। किन्तु आज तक उनके विषय में जितना भी सन्त-महात्माओं, विद्वानों ने जो भी विवेचन किया है, परमात्मा भगवान् श्रीरामचन्द्र उन सब से ही कहीं विलक्षण और असीम गुण सम्पन्न हैं। और वर्णन विवेचन तथा चिन्तन करने वाली शक्ति सीमित है। अतः सीमित शक्तियों द्वारा असीम कैसे पूर्ण किया जा सकता है। उनके अलौकिक तत्त्व एवं माहात्म्य का यहाँ केवल कतिपय प्रमाणों द्वारा दिग्दर्शन ही कराया जा सकता है।

असीम, अपार, अनन्तनाम, अनन्तस्वरूपधारी भगवान् सीतारामजी के चरणों में बारंबार प्रणाम है।

भगवान् श्रीराम के आदर्श गुण विवेचन

सोपान ३

आर्यावर्त का प्रतिनिधि - पुरुष यदि भारतीय इतिहास में किसी को कहा जा सकता है तो वह श्रीराम हैं। वे राम केवल आदर्श राजा ही नहीं थे, अपितु वे आदर्श पति, आदर्श बन्धु, आदर्श शिष्य, आदर्श मित्र और आदर्श स्वामी थे। उनके जीवन में आर्य आदर्शों का जो विकास हुआ, वह इस देश में ऐसा स्वीकृत हुआ कि भारतीय जीवन-धारा का एक विशिष्ट अङ्ग बन गया। भगवान् श्रीराम के अवतार को हुए अनेकानेक वर्ष व्यतीत हो गये, किन्तु आज का समग्र भारत राममय ही ज्ञात होता है। हिमालय की कन्दराओं एवं चोटियों से कन्याकुमारी और रामेश्वरम् तक इसी पावन नाम का स्मरण करते हैं। पंजाब, उत्तर प्रदेश, बंगाल, उत्कल, राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि सभी प्रान्तों में पूर्व से पश्चिम तक पवित्र राम नाम की दीक्षा में रमे हुए हैं। भारत में ही नहीं विदेशों में भी भगवान् राम के चरित्र को आदर्श माना जाता रहा है। भगवान् श्रीराम का अवतार मनुष्यों को गुण व आदर्श सिखाने के लिए ही हुआ था। उनके सब गुण, आदर्श बतलाने की शक्ति-बुद्धि लेखक की हो ही क्या सकती है? कतिपय गुण, आदर्शों पर संक्षेप में प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है।

राम के गुण

वाल्मीकिजी ने नारदजी से कहा—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को न्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान् ।
(१।१।२)

इत्यादि प्रश्नों द्वारा उन्होंने १६ गुण वाले व्यक्ति का नाम पूछा । उत्तर में नारदजी ने कहा—

बहवो दुर्लभाश्चैव ये त्वया कीर्तितागुणाः ।
मुने वक्ष्यामहं बुद्ध्वा तैर्युक्तः श्रूयतां नरः ।।
(१।१।७)

'मुने ! आपने बहुत से दुर्लभ गुणों का वर्णन किया है, तथापि उन सबों से युक्त एक ही व्यक्ति बतला रहा हूँ ।' और पुनः १।१।८ से १९ श्लोकों तक राम के ६० गुण बतलाये । तदनन्तर २।१।६-३१ तक राम के ५० गुण, २।२।२६-४८ तक ८० गुण, ५।३५।६-२३ तक १०० गुण तथा इससे आगे उत्तरकाण्ड तक बार-बार भिन्न-भिन्न प्रसङ्गों में राम के इसी प्रकार के गुणों के उल्लेखों का वर्णन किया । साथ-साथ यह भी कह दिया कि यत्र-तत्र घटना-क्रमों में सबके प्रमाण उदाहरण रूप में भी मिल जाते हैं ।

उदाहरण

समस्त अयोध्या की प्रजा कहती है—

आनृशंस्यमनुक्रोश. श्रुतं शीलं दमः शमः ।
राघवं शोभयन्त्येते षड्गुणाः पुरुषर्षभम् ।।
(वा. रा. २।३३।१२)

'क्रूरता का अभाव, दया, विद्या, शील, दम (इन्द्रिय संयम) और शम (मनो निग्रह)—ये छह गुण नरश्रेष्ठ श्रीराम को सदा ही सुशोभित करते हैं ।

स्वयं सर्वसद्गुणमयी पराम्बा भगवती सीता भी कहती हैं कि अनन्तगुण सम्पन्न भगवान् श्रीराम में परमश्रेष्ठ सात गुण तो निश्चय ही हैं—

..... तस्मिंश्च बहवो गुणाः ।।
उत्साहः पौरुषं सत्वमानृशंस्यं कृतज्ञता ।
विक्रमश्च प्रभावश्च सन्ति वानर राघवे ।
(वा. रा, २।१२।३०)

अर्थात् 'श्रीराम में उत्साह, पुरुषार्थ, धैर्य, अकौर्य, कृतज्ञता, पराक्रम और प्रभाव -- ये सात प्रधान गुण हैं ।'

महाराज दशरथ के शब्दों में श्रीराम में ९ गुण निश्चय रूप से हैं—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सत्यं दानं तपस्त्यागो मित्रता शौचमार्जवम् ।
विद्या च गुरुशुश्रूषा ध्रुवाण्येतानि राघवे ।।

'सत्य, दान, तप, त्याग, मित्रता, सरलता, विद्या और गुरु शुश्रूषा—ये सभी सद्गु श्रीराम में स्थिर रूप से रहते हैं।'

वाल्मीकि रामायण में (५।३५) में श्री हनुमानजी ने भगवती श्रीसीताजी को श्रीरामजी के सैकड़ों गुण बतलाये हैं।

आदर्श— मातृभक्ति

जन्म देनेवाली माता कौसल्या के प्रति तो आपकी आदर्श भक्ति का कहना ही क्या ? विशेष बात तो यह कि उनसे भी बढ़कर आदर आप उन माता कैकेयीजी का करते हैं, जिन्होंने आपको कठोर वचन कहे तथा वन में भेजा। माता कौसल्या ने जब आप से कहा कि 'पिताजी से माता की आज्ञा बढ़कर होती है, मैं कहती हूँ तुम वन में न जाओ, तब आपने उन्हें माता कैकेयी की आज्ञा बतलायी। माता कौसल्या ने उसे स्वीकार किया और कहा—

जौ पितु मात कहेउ बन जाना। तौ कानन सत अवध समाना।।

(श्री राम च. मा. २।५५।१)

भरतजी के साथ जब कैकेयी वन में पहुँचती हैं, तब श्रीरामचन्द्रजी सबसे पहले उन्हीं से मिलते हैं और उन्हें समझा कर उनका संकोच दूर करते हैं—

प्रथम राम भेंटी कैकेई। सरल सुभायँ भगति मति भेई।।
पग परि कीन्ह प्रबोध बहोरी। काल करम बिधि सिर धरि खोरी।।

(वही, २।२४३।४)

सबसे पहले रामजी कैकेयी माता से मिले और अपने सरल स्वभाव तथा भक्ति से उनकी (तपती हुई) बुद्धि को तर (शीतल) कर दिया। फिर चरणों में गिरकर काल, कर्म और विधाता के सिर दोष मढ़कर उनको सान्त्वना दी।'

पञ्चवटी में एक दिन बात ही बात में लक्ष्मणजी ने भरतजी की बड़ाई करते हुए माता कैकेयी की निन्दा करदी। वह सुनते ही भगवान् श्रीराम ने कहा—

न ते ऽम्बा मध्यमा तात गर्हितव्या कदाचन।
तामेवेक्ष्वाकुनाथस्य भरतस्य कथां कुरु।।

(वा. रा. अरण्य. १६।३७)

'हे तात ! तुमको मझली माता कैकयी की निन्दा कभी नहीं करनी चाहिये। इक्ष्वाकुकुलनाथ भरत की ही बात कहो।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Gyaan Kosha

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लङ्का-विजय के पश्चात् जब दिव्यधाम से महाराज दशरथजी आये, तब उनसे भी हाथ जोड़कर यह प्रार्थना करते हैं—

'हे धर्मज्ञ ! आप मेरी माता कैकयी और भाई भरत पर प्रसन्न हों। आपने जो कैकयी को यह शाप दिया था कि 'मैं तुम्हारा पुत्र सहित त्याग करता हूँ,' यह भयंकर शाप, हे प्रभो ! पुत्र सहित माता कैकयी को स्पर्श भी न करे'—।'

(वा. रा. यु. ११९।२५-२६)

जब आप अयोध्या लौटते हैं, तब भी पहले माता कैकयी से मिलते हैं और समझा-बुझाकर उन्हें सुखी करते हैं। इससे बढ़कर मातृ-भक्ति का और क्या उदाहरण होगा।

पितृ भक्ति

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की पितृभक्ति भी अनूठी है। पिता की स्पष्ट आज्ञा पालन करने की तो बात ही क्या, पिता का संकेत मात्र पाकर आपने प्रसन्नता पूर्वक चौदह वर्ष के लिये अयोध्या का त्याग कर दिया। श्री दशरथजी ने वन-गमन के लिये इन्हें स्पष्ट शब्दों में आज्ञा नहीं दी थी। कैकयी माता के द्वारा ही आपको पिता दशरथ की मौन सम्मति का पता लगा था, उसी को आपने स्वीकार किया। भारी से भारी विपत्ति को सम्पत्ति मानकर उसे सिर चढ़ा लिया। जब माता कैकयी ने बड़ी कठोरता के साथ सब बातें आपको सुनायीं, तब आपने बड़े हर्ष के साथ विनयपूर्ण शब्दों में उत्साह दिखलाते हुए कहा—

अहं हि वचनाद् राज्ञः पतयेमपि पावके ।
भक्षयेयं विषं तीक्ष्णं पतयेमपि चार्णवे ।।

(वा. रा. अयो. १८।२८,२९)

'हे माता ! मैं महाराज पिताजी की आज्ञा से आग में भी कूद सकता हूँ, तीक्ष्णविष भी खा सकता हूँ और समुद्र में भी कूद सकता हूँ।'

सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी। जो पितु मातु वचन अनुरागी ।।
तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा ।।

(श्रीराम च. मा)

माता कौसल्याजी के पास जब आप विदा माँगने गये, तब उन्हें बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने अपना दुःख सुनाकर इन्हें रोकना चाहा तब आपने कहा—

नास्ति शक्तिः पितुर्वाक्यं समतिक्रमितुं मम ।
प्रसादये त्वां शिरसा गन्तुमिच्छाम्यहं वनम् ।

(वा. रा. अयो. २१।३०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'हे माता ! पिताजी की आज्ञा का उल्लङ्घन करने की शक्ति मुझ में नहीं है। मैं सिर से प्रणाम करता हूँ, तुम प्रसन्न होओ, मैं वन को जाना चाहता हूँ।'

इसी प्रकार से आपने लक्ष्मणजी को धर्म की महिमा और बड़ों आज्ञा के पालन का महत्त्व समझाते हुए कहा—

धर्मो हि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम्।
धर्म संश्रितमप्येतत् पितर्वचनमुत्तमम्॥
सोऽहं न शक्ष्यामि पुनर्नियोगमतिवर्तितुम्।
पितुर्हि वचनाद् वीर कैकय्याहं प्रचोदितः॥

(वा. रा. अयो. २१।४१,४३)

'लोक में धर्म ही श्रेष्ठ है, धर्म से ही सत्य (सत्यस्वरूप परमात्मा) प्रतिष्ठित है। पिताजी का यह वचन भी धर्म से युक्त है, इसलिये श्रेष्ठ है।..... अतः मैं पिताजी की आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं कर सकूँगा। हे भाई ! पिताजी के कथनानुसार माता कैकयी ने मुझे वन जाने की आज्ञा दी है।'

सत्यः सत्याभिसंधश्च नित्यं सत्यपराक्रमः।
परलोकभयाद् भीतो निर्भयोऽस्तु पिता मम॥

(वा. रा. अयो. २२।९)

'हे भाई ! मेरे पिताजी नित्य सत्यवादी, सत्यप्रतिज्ञ और सत्य पराक्रमी हैं। वे सत्यच्युत होने के भय से, परलोक के डर से डर रहे हैं। मेरे द्वारा उनका यह भय दूर हो, वे निर्भय हो जायँ। अर्थात् मैं वन को चला जाऊँ, जिससे उनके वचन मिथ्या न हो।'

श्रीराम ने अपने शोक मग्न पिताजी से कहा—

महाराज ! इस बहुत ही छोटी-सी बात के लिये आपने इतना दुःख पाया। मुझे पहले किसी ने यह बात नहीं जनायी। महाराज को इस दशा में देखकर मैंने माता कैकयी से पूछा और उनसे सब प्रसङ्ग सुनकर हर्ष के मारे मेरे सब अङ्ग शीतल हो गये। अर्थात् मुझे बड़ी शान्ति मिली। पिताजी ! इस मङ्गल के समय स्नेह वश सोच करना त्याग दीजिये और हृदय में हर्षित होकर मुझे आज्ञा दीजिये—ऐसा कहते-कहते प्रभु श्रीरामचन्द्रजी के सभी अङ्ग पुलकित हो गये। धन्य है आपकी पितृभक्ति को जिसके कारण स्नेहवश होकर सत्यसंध दशरथजी ने आपका स्मरण करते हुए ही शरीर का त्याग कर दिया।

गुरुभक्ति

भगवान् श्रीराम की गुरुभक्ति भी आदर्श है। गुरु के प्रति कितनी आदर बुद्धि है, कितना विश्वास, उनकी सेवा कैसी प्रसन्नता और उनके साथ बात-चीत में

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कैसी विनय होनी चाहिये, इन बातों का आदर्श श्रीराम की गुरुभक्ति में मिलता है। मुनि विश्वामित्र उनके शिक्षागुरु हैं। विद्यानिधि भगवान् ने उनसे विद्या ग्रहण की है। मुनि के साथ दोनों भाई श्रीराम, लक्ष्मण जनकपुर जाते हैं और गुरु की आज्ञा से नगर की शोभा देखने के बहाने नगर निवासी नर-नारियों को नेत्रों का परमलाभ प्रदान करते हुए जनकपुर नगर में घूमते हैं। वहाँ कुछ देर हो जाती है, तब मन में संकोच करते हैं कि गुरुजी कहीं नाराज तो न होंगे। इस प्रसङ्ग में तुलसीदास जी लिखते हैं—

कौतुक देखि चले गुरु पाहीं। जानि विलंबु त्रास मन माहीं॥
जासु त्रास डर कहुं डर होई। भजन प्रभाव देखावत सोई॥
....
सभय सप्रेम विनीत अति सकुच सहित दोउ भाइ।
गुरु पद पंकज नाइ सिर बैठे आयसु पाइ॥
(वही, १।१२४।३-४, २२५)

भगवान् श्रीराम ब्राह्ममुहूर्त में उठकर माता-पिता और गुरु की वन्दना करते थे। और उनकी आज्ञा के द्वारा ही अन्य कार्य करते थे। बड़े-बूढ़ों की वन्दना तथा सेवा का कितना महान् फल होता है, यह भगवान् मनु ने लिखा है—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्॥
(मनुस्मृति २।१२१)

'वृद्धों की नित्य सेवा करने, नम्रता पूर्वक रहते हुए उनका अभिवादन करने से आयु, विद्या, यश और बल इन चारों की वृद्धि होती है।'

वृद्ध-पूज्यों के सोने के पश्चात् सोना, उनके उठने से पूर्व उठना, उन्हें प्रणाम करना, उनकी आज्ञा से कार्य करना इन सभी बातों का पालन श्रीराम के करने का प्रमाण तुलसीदासजी ने रामायण में बतलाया हैं—

निसि प्रवेश मुनि आयसु दीन्हा। सबहीं संध्या बंदनु कीन्हा।
मुनिवर सयन कीन्हि तब जाई। लगे चरन चापत दोउ भाई॥
बार-बार मुनि आज्ञा दीन्ही। रघुवर जाइ सयन तब कीन्ही॥
उठे लखनु निसि बिगत सुनि अरुनसिखा धुनि कान।
गुरु ते पहले जगतपति जागे राम, सुजान॥
सकल सौच करि जाइ नहाए। नित्य निबाहि मुनिहि सिर नाए॥
समय जानि गुरु आयसु पाई। लेन प्रसून चले दोउ भाई॥
(राम चरित मानस बालकाण्ड)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भ्रातृ प्रेम

श्री राम का भ्रातृ-प्रेम अतुलनीय था। लड़कपन से ही श्रीराम अपने भाइयों के साथ बड़ा प्रेम करते थे। सदा उनकी रक्षा करते थे। और उन्हें प्रसन्न रखने की चेष्टा करते थे। चारों भाई एक साथ ही घोड़ों पर चढ़कर विचरण किया करते थे। रामचन्द्रजी को जो भी उत्तम भोजन, वस्तु, पदार्थ मिलता था, उसे वे पहले अपने भाइयों को देकर पीछे स्वयं खाते या उपयोग में लाते थे। यद्यपि श्रीराम का सभी भाइयों के साथ समान-भाव से ही पूर्ण प्रेम था, उनके मन में कोई भेद नहीं था, तथापि लक्ष्मण का श्रीराम के प्रति विशेष स्नेह था। वे थोड़ी देर के लिये भी श्रीराम से अलग रहना नहीं चाहते थे। श्रीराम का वियोग उनके लिये असह्य था, इसी कारण विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के लिये भी वे श्रीराम के साथ ही वन में गये। वहाँ राक्षसों का विनाश करके दोनों भाई जनकपुर में पहुँचे। धनुष भङ्ग हुआ। तदनन्तर विवाह की तैयारी हुई और चारों भाइयों का विवाह साथ-साथ ही हुआ। विवाह के पश्चात् अयोध्या में आकर चारों भाई प्रेम पूर्वक रहे।

कुछ दिनों के बाद अपने मामा के साथ भरत-शत्रुघ्न ननिहाल चले गये। श्रीराम और लक्ष्मण पिता के आज्ञानुसार प्रजा का कार्य करते रहे। श्रीराम के प्रेमपूर्ण बर्ताव से, उनके गुण और स्वभाव से सभी नगर निवासी और बाहर रहने-वाले ब्राह्मणादि सब ही वर्णों के मनुष्य मुग्ध हो गये। फिर राजा दशरथ ने मुनि वसिष्ठ की आज्ञा और प्रजा की सम्मति से श्रीराम के राज्याभिषेक का निश्चय किया। राजा दशरथजी के मुख से अपने राज्याभिषेक की बात सुनकर श्रीराम माता कौसल्या के महल में आये। माता सुमित्रा और भाई लक्ष्मण भी उस समय वहीं थे। उस समय श्रीराम अपने छोटे भाई लक्ष्मण से कहते हैं—

लक्ष्मणेमां मया सार्धं प्रशाधि त्वं वसुन्धराम्।
द्वितीयं मेऽन्तरात्मानं त्वामियं श्रीरुपस्थिता॥
सौमित्रे भुङ्क्ष्व भोगांस्त्वमिष्टान् राज्यफलानि च।
जीवितं चापि राज्यं च त्वदर्थमभिकामये॥
(वा. रामा. २।४।४३-४४)

'लक्ष्मण! तुम मेरे साथ इस पृथ्वी का शासन करो। तुम मेरे दूसरे अन्त-रात्मा हो। यह राज्यलक्ष्मी तुम्हें ही प्राप्त हुई है। सुमित्रानन्दन! तुम मनोवाञ्छित भोग और राज्यफल का उपभोग करो। मैं जीवन और राज्य भी तेरे लिये ही चाहता हूँ।'

इसके पश्चात् इस लीला-नाटक का [illegible] गया। माता कैकेयी के

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इच्छानुसार राज्याभिषेक वन-गमन के रूप में परिणत हो गया। सुमन्त्र के द्वारा बुलाये जाने पर जब श्रीराम महल में गये और माता कैकेयी से बातचीत करने पर उन्हें वरदान की बात ज्ञात हुई, तब उन्होंने बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की। तदनन्तर वे माता कौसल्या से विदा माँगने गये, वहाँ भी बहुत बातें हुई, परन्तु श्रीराम ने एक भी शब्द भरत या कैकेयी के विरुद्ध नहीं कहा, बल्कि भरत की प्रशंसा करते हुए माता को धैर्य दिया और कहाकि 'भरत मेरे ही समान आपकी सेवा करेंगे।' उसी समय सीता को घर पर रहने के लिये समझाते हुए श्रीराम कहते हैं--

भ्रातृपुत्रसमौ चापि द्रष्टव्यौ च विशेषतः।
त्वया भरतशत्रुघ्नौ प्राणैः प्रियतरौ मम ॥
(वा. रामा. २।२६।३३)

'सीते ! मेरे भाई भरत शत्रुघ्न मुझे प्राणों से भी बढ़कर प्रिय हैं। अतः तुम्हें उनको अपने भाई और पुत्र के समान या उससे भी बढ़कर प्रिय समझना चाहिये।'

वन-गमन का समाचार सुनकर लक्ष्मण के मन में भारी दुःख और क्रोध हुआ। उसे भी श्रीराम ने नीति और धर्म से परिपूर्ण बहुत ही मधुर और कोमल वचनों से शान्त किया। फिर जब लक्ष्मण ने साथ चलने के लिये प्रार्थना की, उस समय उनको वहीं रहने के लिये समझाते हुए श्रीराम ने कहा है—

स्निग्धो धर्मरतो धीरः सततं सत्पथे स्थितः।
प्रियः प्राणसमो वश्यो विधेयश्च सखा च मे ॥
(वा. रामा. २।३१।१०)

'लक्ष्मण ! तुम मेरे स्नेही, धर्म-परायण, धीर और सदा सन्मार्ग में स्थित रहने वाले हो। मुझे प्राणों के समान प्रिय, मेरे वश में रहनेवाले, आज्ञा पालक और सखा हो।'

बहुत समझाने पर भी जब लक्ष्मण ने अपना प्रेमाग्रह नहीं छोड़ा, तब भगवान् ने उनको सन्तुष्ट करने के लिये अपने साथ लेजाना स्वीकार किया। वन में रहते समय भी श्रीरामचन्द्रजी सब प्रकार से लक्ष्मण और सीता को सुख पहुँचाने तथा प्रसन्न रखने की चेष्टा किया करते थे।

भरत के सेनासहित चित्रकूट आने का समाचार पाकर जब श्रीराम प्रेम के कारण लक्ष्मण क्षुब्ध होकर भरत के प्रति न कहने योग्य शब्द कह बैठे, तब श्रीराम ने भरत की प्रशंसा करते हुए कहा—

'लक्ष्मण ! मैं सच्चाई से अपने आयुध की शपथ लेकर कहता हूँ मैं धर्म, अर्थ, काम और सारी पृथ्वी-सब कुछ तुम्हीं लोगों के लिये चाहता हूँ। लक्ष्मण ! मैं राज्य को भी भाइयों के संग्रह और सुख के लिये ही चाहता हूँ तथा मेरे विनयी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भाई ! भरत और शत्रुघ्न को छोड़कर यदि मुझे कोई भी सुख होता हो तो उसमें आग लग जाय। मैं समझता हूँ कि मेरे वन में आने की बात कान में पड़ते ही भरत का हृदय स्नेह से भर आया है, शोक से उसकी इन्द्रियाँ व्याकुल हो गयी हैं, अतः वह मुझे देखने के लिये आ रहा है। उसके आने का कोई दूसरा कारण नहीं है।'

इसके सिवा यह भी कहा कि 'भरत मन में भी मेरे विपरीत आचरण नहीं कर सकता। यदि तुम्हें राज्य की इच्छा है तो मैं भरत से कहकर दिला दूँ।'

लक्ष्मण का भरत के प्रति जो सन्देह था, वह उपर्युक्त बातें सुनते ही नष्ट हो गया। इसके बाद जब भरत आश्रम में पहुँच कर श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में लोट गये, तब श्री राम ने उन्हें देखा। अपने हाथों से उठाकर भरत का हृदय से आलिङ्गन किया। उनको गोद में बैठाकर और उनका सिर सूंघकर आदर पूर्वक सब समाचार पूछे और कहा—'भाई तुम चीर और जटा धारण करके यहाँ क्यों आये ? इस पर भरत ने श्रीराम को अयोध्या लौटाने की बहुत चेष्टा की, भरत तथा राम के प्रेम और बर्ताव को देखकर सारा समाज चकित हो गया। अन्त में जब भरत ने यह बात समझ ली कि श्रीराम अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ेंगे, तब उन्होंने श्रीराम से उनकी पादुकाएँ मांगी। उनकी प्रार्थना स्वीकार करके श्रीराम ने अपनी पादुका देकर उनको विदा किया। वे उन पादुकाओं को आदर पूर्वक सिर पर धारण करके अयोध्या लौट आये। उन पादुकाओं का राज्याभिषेक करके उनके आज्ञानुसार राज्य का शासन करने लगे और स्वयं श्रीराम की ही भाँति मुनि वेष धारण करके नन्दीग्राम में रहे।

इसके बाद सीताहरण हुआ। लङ्कापर चढाई की गई। रावण के साथ भयानक युद्ध आरम्भ हो गया। वहाँ एक दिन रावण के शक्ति-बाण से लक्ष्मण के मूर्च्छित हो जाने पर श्रीराम ने जैसी विलाप लीला की, उससे छोटे भाई लक्ष्मण पर उनका कितना प्रेम था, इसका पता चलता है। वहाँ श्रीराम ने कहा है—

यथैव मां वनं यान्तमनुयाति महाद्युतिः।
अहमप्यनुयास्यामि तथैवैनं यमक्षयम्॥
इष्टबन्धुजनो नित्यं मां स नित्यमनुव्रतः।
इमामवस्थां गमितो राक्षसैः कूटयोधिभिः॥
(वा. रा, ६।१०१।१३-१४)

'महातेजस्वी लक्ष्मण ने वन आते समय जिस प्रकार मेरा अनुसरण किया था, उसी प्रकार अब मैं भी इसके साथ यमलोक को जाऊँगा। यह सदा-सर्वदा ही मेरा प्रिय बन्धु और अनुयायी रहा है। हाय ! कपटयुद्ध करने वाले राक्षसों ने आज इसे इस अवस्था में पहुँचा दिया।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो भाई अपने लिये सब कुछ छोड़कर मरने को को और सब प्रकार का कष्ट सहने को तैयार हो, उसके लिये चिन्ता और विलाप करना तो उचित ही है, किन्तु श्रीरामने तो इस प्रसङ्ग में विलाप की पराकाष्ठा दिखाकर भ्रातृ-प्रेम की बड़ी ही सुन्दर शिक्षा दी है।

श्रीहनुमानजी द्वारा संजीवनी-बूटी मंगवाकर सुषेण ने लक्ष्मण को स्वस्थ कर दिया। युद्ध में रावण मारा गया। लङ्का पर विजय हो गयी। भगवान् राम अयोध्या लौटने के लिये तैयार हुए। उस समय विभीषण ने श्रीराम को बड़े आदर और प्रेम से विनय पूर्वक कुछ दिन रुकने के लिये निवेदन किया तब श्रीरामने उत्तर दिया—

'राक्षसेश्वर ! मैं तुम्हारी बात न मानूं ऐसा कदापि सम्भव नहीं, परन्तु मेरा मन उस भाई भरत से मिलने के लिये छटपटा रहा है, जिसने चित्रकूट तक आकर मुझे लौटा ले जाने के लिये सिर झुकाकर प्रार्थना की थी और मैंने जिसके वचनों को स्वीकार नहीं किया था। [उस प्राण प्यारे भाई भरत से मिलने में मैं अब कैसे विलम्ब कर सकता हूँ ?]' इत्यादि।

(वा. रामा. ६।१२१।१८-१९)

इसके बाद विमान में बैठकर श्रीराम सीता, लक्ष्मण और सब मित्रों के साथ अयोध्या पहुंचे। वहाँ भी भरत से मिलते समय उन्होंने अद्भुत भ्रातृ-प्रेम दिखलाया है।

राज्य करते समय भी श्रीराम हर एक कार्य में अपने भाइयों का परामर्श लिया करते थे। जिस किसी प्रकार से उनको सुख पहुंचाने और प्रसन्न रखने की चेष्टा करते थे।

एक समय लवणासुर के अत्याचारों से घबराये हुए ऋषियों ने उसे मारने के लिये श्रीराम से प्रार्थना की। श्रीराम ने राज्यसभा में प्रश्न किया कि 'लवणासुर को कौन मारेगा ?' तुरंत ही भरत ने उसे मारने के लिए उत्साह प्रकट किया। तब ही शत्रुघ्न ने कहा कि 'भरतजी ने तो और बहुत से कार्य किये हैं, आपके लिये भारी से भारी कष्ट सहन किये हैं। फिर भरतजी बड़े भी हैं, मुझ सेवक के रहते हुए यह परिश्रम इनको नहीं देना चाहिये। इस कार्य के लिये तो मुझे ही आज्ञा मिलनी चाहिये।' तब श्रीरामजी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करके कहा कि 'वहाँ का राज्य भी तुम्हीं को भोगना पड़ेगा। मेरी आज्ञा का प्रतिवाद न करना।' शत्रुघ्न को राज्याभिषेक की बात बहुत बुरी लगी। उन्होंने बहुत पश्चाताप किया; परन्तु रामाज्ञा मानकर उसे स्वीकार करना पड़ा। इस प्रकार वचनों में बाँधकर उनकी इच्छा न रहने पर भी छोटे भाई को राज्य-सुख प्रदान करना राम-सरीखे बड़े भाई का ही काम था।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसके बाद प्रतिज्ञा में बँध जाने के कारण जब आपको भाई लक्ष्मण का त्याग करना पड़ा, उस समय श्रीराम के लिये लक्ष्मण का वियोग असह्य हो गया। लिखा है—

लक्ष्मण का त्याग करके श्रीराम दुःख और शोक में निमग्न हो गये तथा पुरोहित, मन्त्री और शास्त्रज्ञों को बुलाकर कहने लगे—'मैं आज ही धर्म पर प्रेम रखने वाले वीर भरत का अयोध्या के राज्य पर अभिषेक करूँगा और उसके बाद वन में जाऊँगा। शीघ्र ही समस्त सामग्रियाँ इकट्ठी की जाएँ, देर न हो, क्यों कि मैं आज ही जिस जगह लक्ष्मण गया है, वहाँ जाना चाहता हूँ।'

(वा. रामा. ७।१०७।१-३)

इस पर भरत ने राज्य की निन्दा करते हुए कहा—'मैं आपके बिना पृथ्वी का राज्य तो क्या, कुछ भी नहीं चाहता, अतः मुझे भी साथ ही चलने की आज्ञा दीजिये।' इसके बाद भरत के कथनानुसार शत्रुघ्न को भी मथुरा से बुलाया गया और मनुष्यलीला का नाटक समाप्त करके अपने भाइयों सहित श्रीराम परमधाम को पधार गये। इत्यादि श्रीराम के आदर्श भ्रातृप्रेमपूर्ण कार्यों के अनेक वर्णन प्राप्त होते हैं, यह तो केवल दिग्दर्शन मात्र है। हम सबको ये शिक्षाएँ ग्रहण करने योग्य हैं।

पत्नीप्रेम और एक पत्नीव्रत

भगवान् श्रीराम का सीताजी के प्रति जो आदर्श प्रेम था। वह उनके महान् एक पत्निव्रत का साक्षात् उदाहरण है। सीताजी की प्रसन्नता के लिये ही आप उनको वन में ले जाते हैं और नाना प्रकार के इतिहास, धर्मशास्त्र आदि सुनाकर उनको सुख पहुँचाते हैं। जब रावण द्वारा सीताजी का हरण हो जाता है, तब साधारण मानव की भाँति 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्' (गीता ४।११) (जो मुझे जैसे भजता है, उसको मैं वैसे ही भजता हूँ) इस नीति के अनुसार भाँति-भाँति से विलाप करते हुए अपनी विरह वेदना प्रकट करते हैं—यहाँ तक कि उनकी उस विरह दशा को देखकर जगज्जननी सती तक को मोह हो जाता है। श्रीरामजी उन्मत्त की भाँति कहते हैं—

हा गुन खानि जानकी सीता। रूप सील व्रत नेम पुनीता।

(श्री राम चरि. मा. ३।२९।४)

—आदि पुकारते हुए लताओं, वृक्षों, पक्षियों, पशुओं और भ्रमरों की पंक्तियों से सीताजी का पता पूछते हैं। आकाश पथ से गिराये हुए सीताजी के वस्त्राभूषण जब सुग्रीवजी आपको देते हैं, तब आप उन्हें हृदय से लगाकर चिन्ता करने लगते हैं—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पट उर लाइ सोच अति कीन्हा । (वही, ४।४।३)

जब हनुमानजी लङ्का में जाते हैं, तब उनके द्वारा आप जो संदेश भेजते हैं, वह तो सुन्दर इतना ऊँचा है कि उसमें प्रेम का समस्त स्वरूप ही आ जाता है। वे कहते हैं—

तत्व प्रेमकर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा।
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं।
(वही, ५।१४।३-४)

महारानी जानकी जी के पातिव्रत-धर्म के गौरव को और भी उज्ज्वल करने के लिये प्रजारञ्जन के कारण से जब राम उन्हें वन में भेज देते हैं, तब पीछे से अश्वमेध यज्ञ में सीताजी की स्वर्ण प्रतिमा बनवाकर आप अपने एक पत्नी-व्रत का बड़ा ही पवित्र आदर्श उपस्थित करते हैं।

सखाओं से प्रेम

यों तो भगवान् श्रीराम सभी के परम सुहृद तथा स्वाभाविक ही मित्र हैं, परन्तु लीला में वे मित्रों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं-यहाँ यही देखना है। मनुष्यों को तो सभी अपना मित्र बनाते हैं, भगवान् श्रीराम ने राक्षस और वानर भालुओं तक को अपना सखा बनाकर उन्हें धन्य किया। हनुमानजी की प्रेरणा से दुःख में डूबे हुए सुग्रीव को अग्नि की साक्षी देकर आप अपना मित्र बनाते हैं और उनका दुःख सुनते ही आपकी भुजाएँ फड़क उठती हैं और आप कहते हैं—

सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहिं बान।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गए न उबरहिं प्रान।। (वही, ४।६)

तदनन्तर मित्रका धर्म बतलाते हुए आप कहते हैं—

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी।
निज दुःख गिरि सम रज करि जाना। मित्र के दुःख रज मेरु समाना।
जिन्हके असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई।
कुपंथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा।
देतलेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।
बिपतिकाल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह सन्त मित्र गुन एहा।।
(वही, ४।६।१-३)

मित्र के ये लक्षण सदा ध्यान में रखने योग्य हैं। इसके बाद भगवान् सुग्रीव को आश्वासन देते हुए कहते हैं—

सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब बिधि घटब काज मैं तोरे।।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मित्र सुग्रीव के सुख के लिये बड़ा भारी उलाहना सहकर भी भगवान् उसके शत्रु भाई वाली का वध कर डालते हैं और सुग्रीव की मैत्री को निबाहते हैं।

निषाद को सखा बनाकर इतना ऊंचा बना दिया कि स्वयं महामुनि वसिष्ठजी महाराज भी उसे हृदय से लगाकर मिलने लगे—

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू। कीन्ह दूरि तें दंड प्रनामू।
रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा।
(वही, २।२४२।३)

जब भगवान् स्वयं किसी प्रकार का विचार न करके सखा भाव से निषाद को हृदय से लगाकर मिलते हैं, तब वसिष्ठजी इस प्रकार मिले, इसमें आश्चर्य क्या है—

हिंसारत निषाद तामस बपु पसु समान बनचारी।
भेट्यो हृदयँ लगाइ प्रेमबस नहिं कुल जाति विचारी॥
(विनयपत्रिका १६६।३)

लङ्का विजय करके अयोध्या लौटने पर अपने इन वानर भालू और विभीषणादि सखाओं को बुलाकर उनसे गुरुजी के चरणों में प्रणाम कराते हैं और परिचय देते हुए आप कहते हैं—

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहँ तारे।
मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पियारे।
(श्री रामचरित मा. ७।७।४)

राज्याभिषेक के पश्चात् अपने इन सब मित्रों को बुलाकर आपने कहा—

अनुज राज संपति बैदेही। देह गेह परिवार सनेही।
सब मम प्रिय नहिं तुम्हहि समाना। मृषा न कहउँ मोर यह बाना॥
(वही, ७।१५।३-४)

फिर वस्त्राभूषण मँगवाकर तीनों भाइयों सहित स्वयं भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ने अपने हाथों से वस्त्राभूषण पहनाये और विदा किया।

भगवान् के उन बालसखाओं की महिमा तो कह ही कौन सकता है, जिन्होंने श्री अवधपुरी में चारों भाइयों के साथ खेलने का सौभाग्य प्राप्त किया था।

प्रजावत्सलता

भगवान् श्रीराम अपने सुन्दर मृदु बर्ताव और वत्सलता पूर्ण क्रियाओं से प्रजा के कितने अधिक प्रेम भाजन बन गये थे, इसका पता तब लगता है, जब उनके

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वनगमन की तैयारी होती है। राज्याभिषेक के उत्सव से तमाम प्रजा में आनन्द छा रहा है। प्रजा में हर्ष का सागर उमड़ उठता है। अचानक दृश्य बदल जाता है। श्रीराम लक्ष्मण और सीताजी को साथ लेकर मुनिवेष में वन को पधार रहे हैं। प्रजा इस दृश्य को देख न सकी। प्रजा उनके विरह दुःख को सहने में अपने को असमर्थ पाकर उनके साथ होली। श्रीरघुनाथजी ने उन्हें बहुत प्रकार से समझाया, परन्तु प्रेमवश कोई भी अयोध्या में रहना नहीं चाहता।

सबहिं बिचारु कीन्ह मन माहीं। राम लखन सिय बिनु सुखु नाहीं।
जहाँ राम तहँ सबुइ समाजू। बिनु रघुबीर अवध नहीं काजू।
(वही, २।८३।३)

यह निश्चय करके बालक और वृद्धों को घरों में छोड़कर सब लोग उनके साथ हो लिये—

बालक बृद्ध बिहाइ गृहँ लगे लोग सब साथ।
(वही, २।२४)

आखिर श्रीरामजी को उन्हें सोये हुए छोड़कर ही आगे बढ़ना पड़ा। जब भरतजी चित्रकूट जाने लगे, तब प्रजा में श्रीरामदर्शन की इतनी उत्सुकता बढ़ी कि घरों की रखवाली के लिये किसी ने घर रहना स्वीकार नहीं किया। जिसको घर रहने के लिये कहा जाता, वही समझता मानों मेरी गर्दन कट रही है—

जेहि राखहिं रहु घर रखवारी। सो जानइ जनु गरदनि मारी।
(वही, २।१८४।३)

प्रायः लोग भरतजी के साथ चित्रकूट गये।

जब श्री रघुनाथजी लङ्का-विजय करके लौटे तब तो प्रजा के हर्ष का पार न रहा। समाचार पाते ही वे सब के सब नर-नारी जो जैसे बैठे थे, वैसे ही उठकर दौड़ पड़े। श्रीभगवान् को लक्ष्मणजी और जानकीजी सहित देखकर सब अयोध्यावासी हर्षित हो गये। उनकी वियोग जनित विपत्ति नष्ट हो गयी। सब लोगों को प्रेमविह्वल तथा मिलने के लिये अत्यन्त आतुर देखकर भगवान् श्रीराम ने एक चमत्कार किया। उसी समय कृपालु श्रीरामजी असंख्य रूपों में प्रकट हो गये और सबसे एक ही साथ यथा योग्य मिले। श्री रघुनाथजी ने कृपा दृष्टि से देखकर सब नर-नारियों को शोक रहित कर दिया। इस प्रकार भगवान् क्षणमात्र में सबसे मिल लिये। शिवजी कहते हैं—हे उमा! यह रहस्य किसी ने नहीं जाना।
(वही, ७।५।२-४)

सच पूछिये तो प्रजा के सुख और सन्तोष के लिये ही श्रीरामजी ने राज्यपद स्वीकार किया। वास्तव में यही आदर्श है। जो प्रजा के सुख के लिये ही राजा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बनता है, वही राजा यथार्थ राजा है। अवधवासियों के भाग्य का तो कहना ही क्या है, जिनके प्रेम-परवश स्वयं भगवान् श्रीराम राजा बने हैं। शिवजी कहते हैं--

उमा अवधवासी नर नारि कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानन्द घन रघुनायक जहँ भूप॥

(वही, ७।४७)

आपकी प्रजावत्सलता का एक ऐसा उदाहरण है, जिसकी तुलना जगत् में कहीं नहीं है। जिन सीताजी के लिये आप वन-वन में विलाप करते भटके, जिनके लिये रावण से घोर युद्ध किया, उन्हीं सीताजी को निर्दोष समझते हुए भी केवल प्रजारञ्जन के लिए ही हृदय को अत्यन्त कठोर बनाकर आपने वन में भेज दिया।

भक्तवत्सलता

भक्तवत्सलता तो भगवान् का विख्यात बाना ही है। ऐसा कोई काम नहीं, जो भगवान् अपने भक्त या सेवक के लिये नहीं कर सकते। वस्तुतः भगवान् के अवतार का प्रधान हेतु भक्तों पर अनुग्रह करना ही होता है—'परित्राणाय साधूनाम्' (गीता ४।८) जब भक्त भगवान् से मिलने के लिये व्याकुल होकर उन्हें पुकारता है, तब भगवान् को स्वयं पधारना पड़ता है। इस प्रकार के अनेकों प्रमाण हैं, जब भी किसी भक्त ने आर्त होकर पुकार की भगवान् अविलम्ब वहाँ भक्त के कार्य हेतु पहुँच गये। दण्डकारण्य में सुतीक्ष्ण नामक अगस्त्यजी के शिष्य एक मुनि रहते थे। वे श्रीराम जी के बड़े ही अनन्य भक्त थे। उन्हें समाचार मिला कि भगवान् श्रीराम दण्डकवन में आये हैं। वे दर्शन के लिये व्याकुल हो गये और पागल की भाँति उठ दौड़े। वे प्रेम में ऐसे मग्न हो गये कि शरीर की सुधि तक भूल गये। श्री शिवजी कहते हैं—

निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी। कहि न जाइ सो दसा भवानी।
दिसि अरु बिदिसि पंथ नहीं सूझा। को मैं चलेउँ कहाँ नहिं बूझा।
कबहुँक फिरि पाछें पुनि जाई। कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई।

(वही, ३।९।५-७)

भक्तवत्सल भगवान् अपने प्रिय भक्त की यह दशा वृक्ष की ओट से देख-देख कर मुग्ध हो रहे थे। मुनि का अत्यन्त प्रेम देखकर भगवान् उनके हृदय में प्रकट हो गये और रास्ते में ही बैठ गये। भगवान् समीप आकर मुनि को ध्यान से जगाते हैं। परन्तु ध्यानानन्द में मतवाले मुनि जागते ही नहीं। तब श्रीराम जी ने उनके हृदय से अपना श्रीराम रूप हटा लिया। तब मुनि ने व्याकुल होकर आँखें खोलीं। देखते हैं—नेत्रों के सामने सुखधाम राम उपस्थित है। मुनि कृतार्थ हो गये और प्रेममग्न होकर चरणों पर गिर पड़े—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आगें देखि राम तन श्यामा। सीता अनुज सहित सुख धामा।
परेउ लकुट इव चरननि्ह लागी। प्रेम मगन मुनिवर बड़भागी।
(वही ३।९।१०-११)

इसी प्रकार भगवान् ने शबरी के यहाँ स्वय पधार कर उनकी अभिलाषा पूर्ण की और—

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।
भगति हीन नर सोहइ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा।
(वही, ३।३४।३)

—कहकर उन्हें बड़ाई दी। उनके प्रेम भरे बेरों को खा-खाकर आप अघाये ही नहीं। काकभुशुण्डिजी को तो प्रत्येक अवतार में ही वे अपनी परम मधुर बाललीला का आनन्द प्रदान करते हैं।

श्रीहनुमानजी का तो श्रीरामजी अपने को ऋणी ही मानते हैं। भगवान् श्रीराम ने श्रीहनुमानजी से कहा है—

चरिष्यति कथा यावदेषा लोके च मार्मिका।।
तावत्ते भविता कीर्तिः शरीरेऽप्य सवस्तथा।
लोका हि यावत्स्थास्यन्ति तावत्स्थास्यन्ति मे कथाः।।
एकैकस्योपकारस्य प्राणान् दास्यामि ते कपे।
शेषस्य ह्योपकाराणां भवाम ऋणिनो वयम्।।
मदङ्गे जीर्णतां यातु यत्त्वयोपकृतं कपे।
नरः प्रत्युपकाराणामापत्स्वायाति पात्रताम्।।
(वा. रामा. ७।४०।२१-२४)

'हनुमान! इस लोक में जब तक मेरी यह कथा चलती रहेगी, तब तक तेरी कीर्ति और तेरे शरीर में प्राण रहेंगे और जब तक जगत् रहेगा, तब तक मेरी कथा रहेगी। तेरे एक-एक उपकार के बदले में मैं अपने प्राण दे दूँ तो भी तेरे शेष उपकारों के लिये तो मैं तेरा ऋणी ही बना रहूँगा। हनुमान! तूने मेरा जो कुछ उपकार किया है, वह मेरे शरीर में ही जीर्ण हो जाय, ऐसा अवसर ही न आये, जब मुझे अपने उपकारों का बदला पाने योग्य पात्र बनना पड़े; क्यों कि आपत्ति पड़ने पर ही मनुष्य प्रत्युपकार का पात्र होता है।'

शरणागतवत्सलता

यों तो श्रीराम की शरणागतवत्सलता का वर्णन वाल्मीकीय रामायण में

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्थान-स्थान पर आया है; किन्तु जिस समय रावण से अपमानित होकर विभीषण भगवान् राम की शरण में आया है, वह प्रसङ्ग तो भक्तों के हृदय में उत्साह और आनन्द की लहरें उत्पन्न कर देता है।

धर्मयुक्त और न्याय संगत बात कहने पर भी जब रावण ने विभीषण की बात नहीं मानी, बल्कि भरी सभा में उसका अपमान कर दिया, तब विभीषण वहाँ से निराश और दुःखी होकर श्रीराम की शरण में आया। उसे आकाश-मार्ग से आते देखकर सुग्रीव ने सब वानरों को सावधान होने के लिए कहा। इतने में ही खड़े-खड़े पुकार लगायी कि 'मैं दुरात्मा पापी रावण का छोटा भाई हूँ। मेरा नाम विभीषण है। मैं रावण से अपमानित होकर भगवान् श्रीराम की शरण में आया हूँ। आप लोग समस्त प्राणियों को शरण देने वाले श्रीराम को मेरे आने की सूचना दें।'

यह सुनकर सुग्रीव तुरन्त ही भगवान् राम के पास गये और राक्षस-स्वभाव का वर्णन कर श्रीराम को सावधान करते हुए रावण के भाई विभीषण के आने की सूचना दी। साथ ही यह भी कहा कि 'अच्छी तरह परीक्षा करके, आगे पीछे की बात सोचकर जैसा उचित समझें, वैसा करें।' इसी प्रकार वहाँ बैठे हुए दूसरे बन्दरों ने भी अपनी-अपनी सम्मति दी। सभी ने विभीषण पर सन्देह प्रकट किया, पर श्रीहनुमानजी ने बड़ी नम्रता के साथ बहुत सी युक्तियों से विभीषण को निर्दोष और सचमुच शरणागत समझने की सलाह दी। इस प्रकार सबकी बातें सुनने के अनन्तर भगवान् श्रीराम ने कहा—

मित्रभावेन सम्प्राप्तं न त्यजेयं कथंचन।
दोषो यद्यपि तस्य स्यात् सतामेतदगर्हितम्॥
(वा. रामा. ६।१८।३)

मित्र भाव से आये हुए विभीषण का मैं कभी त्याग नहीं कर सकता। यदि उसमें कोई दोष हो तो भी उसे आश्रय देना सज्जनों के लिए निन्दित नहीं है।'

इस पर भी सुग्रीव को सन्तोष नहीं हुआ। उसने शङ्का और भय उत्पन्न करने वाली बहुत सी बातें कहीं। तब श्रीराम ने सुग्रीव को फिर समझाया—

पिशाचान् दानवान् यक्षान् पृथिव्यां चैव राक्षसान्।
अङ्गुल्यग्रेण तान् हन्यामिच्छन् हरिगणेश्वर॥
(वा. रामा. ६।१८।२३)

'वानरगणाधीश! यदि मैं चाहूँ तो पृथ्वी भर के उन पिशाच, दानव, यक्ष और राक्षसों को अँगुली के अग्रभाग से ही मार सकता हूँ [अतः डरने की बात नहीं है]।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बद्धाञ्जलिपुटं दीनं याचन्तं शरणागतम्।
न हन्यादानृशंस्यार्थमपि शत्रु परंतप ।।
(वा. रामा. ६।१८।२७)

'.....परंतप ! यदि कोई शत्रु भी हाथ जोड़कर दीनभाव से शरण में .....आकर अभय याचना करे तो दया-धर्म का पालन करने के लिये उसे नहीं मारना चाहिये।' मेरा तो यह विरुद है कि जो एक बार भी 'मैं आपका हूँ'-यों कहता हुआ शरण में आकर मुझ से रक्षा चाहता है, उसे मैं समस्त प्राणियों से निर्भय कर देता हूँ। वानर श्रेष्ठ सुग्रीव ! [उपर्युक्त नीति के अनुसार] मैंने इसे अभय दे दिया, अतः तुम इसे ले आओ—चाहे यह विभीषण हो या स्वयं रावण ही क्यों न हो।'

बस, फिर क्या था। भगवान् की बात सुनकर सब मुग्ध हो गये और भगवान् की आज्ञानुसार तुरंत ही विभीषण को ले आये। विभीषण अपने मंत्रियों सहित आकर श्रीराम के चरणों में गिर पड़ा और कहने लगा—

'भगवन् ! मैं सब कुछ छोड़कर आपकी शरण में आया हूँ। अब मेरा राज्य, सुख और जीवन सब कुछ आपके ही आधीन है।' इसके बाद श्रीराम ने प्रेम भरी दृष्टि और वाणी से उसे धैर्य दिया और लक्ष्मण से समुद्र का जल मँगाकर उसका वहीं लङ्का के राज्य पर अभिषेक कर दिया।

कृतज्ञता

वास्तव में देखा जाय तो भगवान् श्रीरामचन्द्रजी साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर थे। उनकी अपार शक्ति थी, वे स्वयं सब कुछ कर सकते थे और करते थे, उनका कोई क्या उपकार कर सकता था। तथापि अपने आश्रित जनों के प्रेम की वृद्धि के लिये उनकी साधारण सेवा को भी बड़ा से बड़ा रूप देकर आपने अपनी कृतज्ञता प्रकट की है। सीता को खोजते-खोजते जब श्रीराम, रावण द्वारा युद्ध में मारकर गिराये हुए जटायु की दशा देखते हैं, उस समय का वर्णन है—

निकृत्तपक्षं रुधिरावसिक्तं तं गृध्रराजं परिगृह्य राघवः।
क्व मैथिली प्राणसमा गतेति विमुच्य वाचं निपपात भूमौ ।।
(वा. रामा. ३।६७।२९)

जिसके पंख कटे हुए थे, समस्त शरीर लहू-लुहान हो रहा था, ऐसे गीधराज जटायु को हृदय से लगाकर श्रीरघुनाथजी 'प्राण प्रिया जानकी कहाँ गयी ?' इतना कह कर पृथ्वी पर गिर पड़े।

फिर रावण का परिचय देते और उसके द्वारा सीता के हरण की बात कहते ही जब पक्षिराज के प्राण-पखेरू उड़ जाते हैं, तब भगवान् श्रीराम स्वयं अपने हाथों से उसकी दाह-क्रिया करते हैं। कैसी अद्भुत कृतज्ञता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसी प्रकार के और भी बहुत से प्रसङ्ग हैं। वानरों, राजाओं, ऋषियों और देवताओं से बात करते समय आपने जगह-जगह कहा है कि 'आप लोगों की सहायता और अनुग्रह से ही मैंने रावण पर विजय प्राप्त की है।'

जब श्रीहनुमानजी सीताजी का पता लगाकर भगवान् श्रीराम से मिले हैं, उस समय उनके कार्य की बार-बार प्रशंसा करके अन्त में रघुनाथजी ने यहाँ तक कहा कि 'हनुमान् ! जानकी का पता लगाकर तुमने मुझे, समस्त रघुवंश को और लक्ष्मण को बचा लिया। इस प्रिय कार्य के बदले में कुछ दे सकूँ, ऐसी कोई वस्तु मुझे नहीं दिखायी देती। अतः अपना सर्वस्व यह आलिङ्गन ही मैं तुझे देता हूँ। इतना कहकर हर्ष से पुलकित श्रीराम ने हनुमान को हृदय से लगा लिया।

दयालुता

भगवान् श्रीरामचन्द्रजी को दया का सागर कहें, तब भी उनकी अपरिमित दया का तिरस्कार ही होता है। जीवों पर उनकी जो दया है वह कल्पनातीत है। मनुष्य अपनी ऊँची से ऊँची कल्पना से उनकी दया का जहाँ तक अनुमान लगाता है, भगवान् की दया उससे अनन्तगुना अधिक ही नहीं, असीम और अत्यन्त विलक्षण है। भगवान् वस्तुतः दयामय ही है। गीता में भगवान् ने कहा है – सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति। (५।२९) अर्थात् 'मुझ को सब भूतों का सुहृद जानकर मनुष्य शान्ति को प्राप्त होता है।'

अवश्य ही भगवान् की दया दोनों रूपों में सामने आती है। कहीं वह प्रेम के रूप में दर्शन देती है, कहीं दण्ड के रूप में। राक्षसों को भगवान् ने मारा, परन्तु मारा नहीं, वास्तव में तार दिया। भगवान् का क्रोध भी मुक्ति देने वाला है। भगवान् के हाथों से जितने राक्षस मरे, सबको दुर्लभ गति प्राप्त हुई। उदाहरण स्वरूप कतिपय नमूने प्रस्तुत हैं—

ताड़का को—एक ही बान प्रान हर लीन्हा।
दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा ।। (श्रीराम च. मा. १।२०८।३७)

विराध को—तुरतहिं रुचिर रूप तेहिं पावा।
देखि दुखी निज धाम पठावा ।। (वही, ३।६।४)

खर-दूषणादि को—राम-राम कहि तन तजहिं पावहिं पद निर्वान।
(वही, ३।२०क)

मारीच को—अन्तर प्रेम तासु पहिचाना।
मुनि दुर्लभ गति दीन्हि सुजाना ।। (वही, ३।२६।९)

कुम्भकर्ण को—तासु तेज प्रभु बदन समाना। (वही, ६।७०।४)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रावण को —तासु तेज समान प्रभु आनन। (वही, ६।१०२।५)

सभी राक्षसों को—रामाकार भए तिन्ह के मन।
मुक्त भए छूटे भव बंधन ।। (वही, ६।११३।४)

इस प्रकार अपने को दीन समझने वाले अतिदीन राक्षसों पर दया करके भगवान् ने उनको मारकर भी तार दिया।

प्रेम से तो आपने अनेकों को अपनाया है। सारे वानर-भालुओं को वह गौरव प्रदान किया, जो बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों को दुर्लभ है—

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किए आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सील निधान ।।
(वही, १।२९)

गौतम मुनि की पत्नी अहिल्या पति के शापवश पाषाण की शिला हो गई थी। उस विचारी में यह भी शक्ति नहीं थी कि आर्त होकर भगवान् को पुकार सके। उसकी दीन दशा देखकर दयामय भगवान् ने स्वयं वहाँ पधार कर अपने चरण स्पर्श से उसका उद्धार किया।

केवट से पैर धुलवाकर उसे अपना सुर-मुनि-दुर्लभ चरणोदक देकर परिवार सहित भवसागर से पार कर दिया।

पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइपार ।।
(वही, २।२०१)

दण्डकवन को स्वयं पधार कर शाप-मुक्त किया और वहाँ एक स्थान पर ऋषियों की हड्डियों का ढेर देखकर प्रभु दयापरवश हो गये—

अस्थि समूह देखि रघुराया। पूछी मुनिन्ह लागि अति दाया।
(वही, ३।८।३)

मुनियों ने दुखी मन से कहा—भगवन्!

निसिचर निकर सकल मुनि खाए। सुनि रघुवीर नयन जल छाए।
(वही, ३।८।४)

'राक्षसों ने सारे मुनियों के समूहों को खा डाला,' यह हड्डियों का ढेर उन्हीं मुनियों के शरीरों का है—यह सुनकर और उनके दुःख को देखकर श्रीरघुनाथजी के नेत्रों में जल छा गया और उन्होंने प्रतिज्ञा की—

निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
(वही, ३।९)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दीन सुग्रीव को वाली के महान् अत्याचार से बचाया। अङ्गद को दीन जानकर अपनाया और उसे युवराज पद दिलाया।

गीधराज जटायु पर जो दया हुई, वह तो सर्वथा अनूठी है। रावण के द्वारा घायल होकर जटायु दीन दशा में पड़ा है और श्रीरघुनाथजी उसके समीप पहुँचते हैं और उसकी दीन-दशा देखकर दुखी हो जाते हैं उसे और उठाकर अपनी गोद में ले लेते हैं। नेत्रों में जल भर कर उसे आश्वासन देते हुए अपने कोमल कर कमलों को उसके मस्तक पर फिराते हुए उसे सुखी करते हैं।

श्रीरघुनाथजी ने कहा – 'तात ! आप कुछ दिन और जीवन धारण कीजिये और मुझे पिता का सुख दीजिये।' गीधराज बड़ा बुद्धिमान था, उसने कहा—

जा कर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा।
सो मम लोचन गोचर आगे। राखौं देह नाथ केहि खाँगे।

इतना कहकर भगवान् की गोद में ही उनकी ओर निर्निमेष दृष्टि से देखते हुए और मुख से श्रीराम का पवित्र नाम उच्चारण करते हुए जटायु ने मुनि दुर्लभ शान्ति प्राप्त की। तदनन्तर दयामय प्रभु ने अपने हाथों से उसकी वैसे ही अन्त्येष्टि क्रिया की, जैसे अपने पिता का करते हैं—

पितु ज्यों गीध क्रिया करि रघुपति अपने धाम पठायो।
ऐसे प्रभुहि बिसारि तुलसि सठ तू चाहत सुख पायो।

पराक्रम

भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के बल, पराक्रम, वीरता और शस्त्र कौशल के विषय में तो कहना ही क्या है। सम्पूर्ण रामायण में इसका वर्णन भरा पड़ा है। कहीं से भी युद्ध का प्रसङ्ग निकाल कर देख सकते हैं। विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करते समय उन्होंने बात की बात में ताड़का और सुबाहु को मारकर मारीच को मानवास्त्र के द्वारा सौ योजन दूर समुद्र के बीच में गिरा दिया।

जनकपुर में जिस धनुष को बड़े-बड़े वीर और महाबली राजा अत्यन्त परिश्रम करके भी नहीं हिला सके, उसी को श्रीराम ने अनायास ही उठाकर तोड़ दिया। विष्णु के धनुष पर बाण चढ़ाकर परशुरामजी का तेज हर लिया। पञ्चवटी में चौदह हजार राक्षसों को जरा सी देर में बिना किसी की सहायता के मार गिराया वाली जैसे महायोद्धा को एक ही बाण से मार डाला। धनुष पर बाण चढ़ाने मात्र से ही समुद्र में खलबली मच गयी और वह सशरीर भयभीत होकर शरण में आ गया। लङ्का में जाकर भयंकर युद्ध में राक्षसों सहित कुम्भकर्ण और रावण का वध करके समस्त संसार में विजय का डंका बजा दिया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

क्षमा

ऐसे महान् पराक्रमी होने पर भी श्रीरघुनाथजी इतने क्षमाशील थे कि वे अपने प्रति किये हुए किसी के अपराध को अपराध ही नहीं मानते थे। उन्होंने जहाँ कहीं भी क्रोध और युद्ध की लीला की है, वह अपने आश्रितों और साधु पुरुषों के प्रति किये हुए अपराधों के लिये दण्ड देने और इसी बहाने दुष्टों को निर्दोष बनाने के लिये ही की है। मन्थरा जैसी दासी के अपराध का उन्होंने कहीं जिक्र भी नहीं किया।

सत्यवादिता, धर्मपरायणता और आस्तिकता

सत्यवादिता के विषय में तो उन्होंने स्वयं घोषणा की है—

'रामो द्विर्नाभिभाषते' (वा. रा. अयोध्या. १८।३०)

'राम दो बार नहीं बोलते। अर्थात् एक बार जो कह दिया, वही प्रमाण हो गया।' धर्मपरायणता का क्रियात्मक उदाहरण तो उनका समस्त जीवन ही है। साक्षात् भगवान् होने पर भी आप धर्म की मर्यादा रक्षा के लिये नियमितरूप से सन्ध्या, अग्निहोत्रादि कर्म करते हैं. वर्णाश्रमधर्म के अनुसार ब्राह्मणों, ऋषियों तथा गुरुजनों का पूजन करते हैं, जप-यागादि करते हैं, मन्दिरों की स्थापना और मूर्ति पूजन करते हैं तथा श्राद्ध-तर्पणादि क्रियाएँ सावधानी से करते हैं।

चित्रकूट में भरतजी के साथ गये हुए ऋषियों में जाबालि नामक एक ऋषि थे। वे महाराज दशरथजी की सभा के एक प्रधान सदस्य थे। श्रीरामजी को अयोध्या लौटाने की बात समझाते हुए उन्होंने चतुरता भरी हुई कुछ ऐसी बातें कहीं, जो नास्तिकवाद का समर्थन करने वाली थीं। उनकी बातों को सुनकर मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम लीला से उनपर रुष्ट हो गये और उन्होंने मुनि को फटकार कर बहुत कुछ कहा—

निन्दाम्यहं कर्मकृत पितुस्तद्
यस्त्वामगृह्णाद् विषमस्थबुद्धिम्।
बुद्ध्यानयैवविधया चरन्तं
सुनास्तिकं धर्मपथादपेतम्॥
(वा. रामा. अयो. १०९।३३)

'इस प्रकार की बुद्धि से प्रेरित होकर आचरण करने वाले तथा परम-नास्तिक एवं धर्म मार्ग से हटे हुए आपको जो मेरे पिताजी ने अपना याजक (मंत्री) बनाया, मैं उनके इस कार्य की निन्दा करता हूँ, क्योंकि आपकी बुद्धि गलत रास्ते पर है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन वचनों से पता लगता है कि महाराज श्रीरामचन्द्रजी नास्तिकवाद को कितना बुरा समझते थे। नास्तिकवाद की निन्दा में आपने अपने उन पिताजी के कार्य की भी निन्दा की, जिनके वचनों की रक्षा के लिये आप वनवासी हुए थे।

अन्त में जाबालि मुनि के यह कहने पर कि 'मैं नास्तिक नहीं हूँ। मैंने तो केवल आपको लौटाने के लिये तर्क के तौर पर ये बातें कही थीं, वस्तुतः यह मेरा मत नहीं है।' और गुरु वसिष्ठजी के द्वारा जाबालि जी के इस कथन का समर्थन होने पर ही भगवान् श्रीरघुनाथजी शान्त हुए।

उपसंहार

भगवान् श्रीरामजी के सभी भाव विलक्षण हैं। आपका जन्म, बालभाव, कुमारभाव, मिथिला का मधुरभाव, वन का तापसभाव, लङ्का का वीरभाव, राजभाव, प्रेमभाव—सभी आदर्श और महान् अनुकरणीय हैं। आपके आदर्श जीवन से जो लाभ नहीं प्राप्त करता, यह उसी के भाग्य का दोष है।

भगवान् श्रीरामचन्द्रजी के गुणों की गाथा गाकर, लिखकर कौन पार पा सकता है। वे परम दयालु परम प्रेमी, परम सुहृद, परम संयमी, परम कल्याणाश्रय, महान् वीर्यवान्, महान् बुद्धिमान्, शास्त्रविद्याविशारद, सौन्दर्य-माधुर्य के निधि, कान्तिमान्, धृतिमान, जितेन्द्रिय, अत्यन्त गम्भीर, परम विनयी, महान् धीर, अनुपम प्रिय दर्शन, मधुर भाषी, महान् क्षमाशील, परम उदार, परम ब्रह्मण्य, संगीत कला निपुण, आदर्श सत्यवादी और सत्यव्रती, कुसुम से भी कोमल, किन्तु कर्तव्य पालन में वज्र से भी कठोर, परम यशस्वी, महान् वाग्मी, सर्वशास्त्रतत्त्वज्ञ, महान् प्रतिभा शाली, आदर्श पुत्र, आदर्श शिष्य, आदर्श पति, आदर्श भाई, आदर्श स्वामी, आदर्श राजा, आदर्श मित्र, आदर्श शूरवीर, आदर्श आश्रयदाता, आदर्श गुणवान् आदर्श सदाचारी, आदर्श धर्मव्रती, आदर्श त्यागी, नीतिपरायण, साधु-जनप्रिय, परम प्रतापवान्, धर्मरक्षक, सर्वप्रिय. सर्वान्तर्यामी और सर्वशक्तिमान् हैं।

श्रीवाल्मीकि रामायण में अयोध्याकाण्ड के प्रथम सर्ग में आठवें श्लोक से चौतीसवें श्लोक तक भगवान् श्रीराम के दिव्य गुणों का सविस्तार वर्णन किया गया है, किन्तु स्थान संकोचवश यहाँ केवल दिग्दर्शनमात्र करके ही, सर्वगुण सम्पन्न भगवान् श्रीरामजी के चरण कमलों में प्रणाम निवेदन करते है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीकृष्ण-तत्त्व विवेचन

सोपान ४

नवीनजलदावलीललितकान्तिकान्ताकृति-
स्फुरन्मकरकुण्डलप्रतिमचारुगण्डस्थलम् ।
प्रफुल्लनलिनायतेक्षणमनुक्षणैकक्षणं,
चकास्तु मम मानसं सदयकृष्णतत्त्वश्रिया ।।

भगवान् श्रीकृष्ण का स्वरूप—तत्त्व साक्षात् ब्रह्माजी भी जानने में समर्थ नहीं है। अन्य किसी की शक्ति भी क्या है जो इस तत्त्व का निर्णय कर सके। किन्तु इस विषय लिखने और कहने का अधिकार सबको है। कोई इस विषय में लिखता-कहता है तो इसका फल भी उत्तम वतलाया है। भगवान् श्रीकृष्ण के विषय में तो श्रवण-कीर्तन भी पुण्यमय ही है, उनके गुणों का वखान कहने सुनने से इस मायामय संसार - संग के कारण मलिन हुए मनुष्यों का मन पवित्र निर्मल के हो जाता हैं। महर्षियों के ऐसे उपदेशों को स्मरण करके भगवान् श्रीकृष्ण के तत्त्व के विषय में शास्त्रों का अवलम्वन कर उनके अनन्त लीला विलास में से यत्किञ्चित् लिखने का प्रयास किया जा रहा है।

(१) अंशावतार श्रीकृष्ण

विष्णुपुराण पञ्चमांश प्रथम में लिखा है-कि असुरों के भार से पीडिता पृथ्वी देवी की कातर प्रार्थना सुनकर जव ब्रह्माजी ने देवताओं के साथ क्षीरसागर के तटपर जाकर श्रीहरिका स्तवन किया, तव भगवान् विष्णु ने अपने शुक्ल और कृष्ण वर्ण के दो केश उखाड़कर दे दिये और कहा—

.....एतौ मत्केशौ वसुधातले ।
अवतीर्य भुवोभारक्लेशहानिं करिष्यतः ।
(विष्णु पुराण अंश ५ अ. १)

'मेरे ये दोनों केश पृथ्वी पर अवतार लेकर पृथ्वी के भार रूप कष्ट को दूर करेंगे।' ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा-श्रीहरि अपने अंश से पृथ्वी पर अवतीर्ण होकर धर्म की रक्षा किया करते हैं।

महाभारत आदि पर्व के ६४वें अध्याय में कथा आती है कि 'इन्द्र ने जब पुरुषोत्तम नारायण से अंशरूप में अवतीर्ण होने को कहा, तब उन्होंने इस बात को स्वीकार कर लिया—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तं भुवः शोधनायेन्द्र उवाच पुरुषोत्तमम् ।
अंशेनावतरेत्येवं तथेत्याह च तं हरिः ।
(महाभारत आदि पर्व अध्याय ६४)

इसके अतिरिक्त महाभारत में अनेक स्थलों में अर्जुन को 'नर' और भगवान् श्रीकृष्ण को 'नारायण' ऋषि कहा गया है, भीष्म पर्व २३ वें अध्याय में लिखा है—'नरनारायणावृषी' नर और नारायण ऋषि दोनों धर्म के पुत्र थे, इन दोनों के दूसरे नाम-'कृष्ण' और 'हरि' थे।

नारायणो हि विश्वात्मा चतुर्मूर्तिः सनातनः ।
एकामूर्तिरियं पूर्वं जाता भूयश्चतुर्विधा ।
धर्मस्य कुल सन्तानो धर्मदेभिर्विवर्द्धिताः ।।
नरनारायणेभ्यश्च कृष्णेन हरिणा तथा ।
अत्र कृष्णौ हरिश्चैव कश्मिंश्चित् कारणान्तरे ।
स्थितौ धर्मोत्तरौ ह्येतौ तथा तपसि अधिष्ठितौ ।।

नर-नारायण की तपस्या आराधना देखकर नारदजी के मन में शंका हुई कि ये किसकी आराधना करते हैं तथा इनको तपस्या की क्या आवश्यकता है ? नारदजी ने अपनी शंका निवारणार्थ उनसे पूछा, तब उन्होंने कहा—हम लोगों के एक मूल पुरुष और हैं, हम उन्हीं का ध्यान करते हैं, जो समस्त भूतों के अन्तरात्मा, अव्यक्त, अचल और सनातन तथा इन्द्रियादि शून्य और अत्यन्त दुर्विज्ञेय हैं। (२८।३१) तां योनिमावयोर्विद्धि ।

३२ नरसिंह पुराण में लिखा है—

प्रेषयामास द्वे शक्ती सितकृष्णो स्वके नृप ।
तयोः सिता च रोहिण्यां वसुदेवाद्बभूव ह ।
रौहिणेयोऽथ पुण्यात्मा रामनामाश्रितो महान् ।
देवकीनन्दनः कृष्णः.....।
(नरसिंहपुराण अध्याय ५३)

पृथ्वी का भार उतारने के लिये श्रीविष्णु भगवान् ने अपनी दो शक्तियों को पृथ्वी पर भेजा-एक सफेद, दूसरी काली। श्वेत शक्ति रोहिणी के गर्भ से उत्पन्न होकर 'राम' नाम से प्रसिद्ध हुई और काली शक्ति देवकी के गर्भ से उत्पन्न होकर 'कृष्ण' नाम से प्रसिद्ध हुई।

श्रीमद्भागवत में लिखा है—

अथाहमंशभागेन देवक्याः पुत्रतां शुभे ।
(श्रीमद्भागवत १०।२।९)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अर्थात् अब मैं अंशभाग से देवकी का पुत्र बनूँगा।' इसी प्रकार से श्रीमद्भागवत में और भी कहा है—

भूमेः सुरेतरवरूथ विमर्दितायाः
क्लेशव्ययाय कलया सितकृष्णकेशः।
(श्रीमद्भागवत २।७।२६)

अर्थात् नारायण के एक कृष्ण और एक शुक्ल केश असुरमर्दित पृथ्वी का भार उतारने के लिये श्रीकृष्ण और बलराम रूप से आविर्भूत हुए हैं।'

(२) श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् है—

'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्'

'अर्थात् श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् ही हैं। इस सिद्धान्त के समर्थन में हमको नारायणोपनिषत्, नृसिंहतापिनी, सीतोपनिषत्, रामरहस्योपनिषत्, रामतापिनी, वासुदेवोपनिषत्, गोपाल तापिनी, कृष्णोपनिषत् आदि अनेक उपनिषदों से भी सिद्ध है। यही नहीं, वेद की पूर्व संहिता के अन्तर्गत पुरुषसूक्त के-'अजायमानो बहुधा विजायते' इस मन्त्र से भी निर्विवाद सिद्ध है। अत एव यहाँ अधिक प्रमाणों द्वारा इस अध्याय को बड़ा न बन कर कतिपय प्रमाणों द्वारा इस सिद्धान्त को पुष्ट कर बतलाने का प्रयास करते हैं—

एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम।
इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगे युगे।।
(श्रीमद्भागवत ३।२८)

जो और अवतार हैं, वे तो भगवान् के अंशावतार अथवा कलावतार हैं, परन्तु भगवान् कृष्ण तो स्वयं (अवतारी) ही हैं। श्रीमद्भागवत में कथा आती है—वैकुण्ठनाथ भगवान् परमेश्वर ने महामाया योगनिद्रा से कहा कि 'मेरे आदेश से तुम जाकर पाताल के छः पुरुषों को क्रमशः देवकी के गर्भ में स्थापित करो, कंस के द्वारा उनके मारे जाने पर मेरा अंशांश देवकी का सप्तम गर्भ होगा, उसे तुम रोहिणी के गर्भ में स्थापित कर देना, तदनन्तर (अष्टम गर्भ से) मैं स्वयं जन्म ग्रहण करूंगा।'

ततोऽहं सम्भविष्यामि देवकीजठरे शुभे।'

मेरा अंशांश और मैं इस प्रकार स्पष्ट दो पुरुषों का पृथक् निर्देश किये जाने से पता चलता है कि देवकी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं अंश नहीं। महाभारत के सभापर्व के अध्याय ३६ के श्लोक १४ से १९ में नारदजी का चिन्ता प्रकरण आता है, उससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि श्रीकृष्ण न तो मनुष्य

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं और न मनुष्यवत् अंश हैं। वेद में परमेश्वर को 'महाभूत' कहा गया है—'अस्य महाभूतस्य निःश्वसितं यद्ऋग्वेदः' इत्यादि, उसी के अनुसार यहाँ श्रीकृष्ण को 'महाभूत' कहा गया है। देवता इन्हीं के बाहुबल के आश्रित रहते हैं, वे स्वयम्भू हैं, दैत्यहन्ता हैं और साक्षात् भूत भावन भगवान् हैं।

साक्षात् स विविधारिघ्नः क्षत्रे नारायणो विभुः।
प्रतिज्ञां पालयंश्चेमां जातः परपुरञ्जयः॥
इति नारायणः शम्भुर्भगवान् भूतभावनः।
आदिश्य विबुधान् सर्वानजायत यदुक्षये॥
अहो बत महद्भूतं स्वयम्भूर्यदिदं स्वयम्।
अदास्यति पुनः क्षत्रमेवं बलसमन्वितम्॥
(महाभारत सभा. ३६।१४,१६,१९)

श्रीमद्भगवद्गीता में तो ऐसे बहुत अधिक प्रमाण हैं, जिनके आधार पर श्रीकृष्ण को पूर्ण मानना पड़ता है।

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः॥
(श्रीमद्भगवत् गीता १५।१८)

अर्थात् समस्त भूत 'क्षर' है और कूटस्थ 'अक्षर' है। इन दोनों से पृथक एक उत्तम पुरुष है, जिन्हें परमात्मा कहते हैं, जो ईश्वर हैं और जो त्रिलोकी में व्याप्त रहकर उसका भरण पोषण करते हैं।' ब्रह्माण्ड पुराण में लिखा है—

यो वैकुण्ठे चतुर्बाहुर्भगवान्पुरुषोत्तमः।
य एव श्वेतद्वीपेशे नरो नारायणश्च यः॥
स एव वृन्दावनभूविहारी नन्दनन्दनः।
एतेस्यैवापरेऽनन्ता अवतारा मनोहराः॥
(ब्रह्माण्ड पुराण भा. अमृत ऋ. २१३)

जो वैकुण्ठ में चतुर्भुज भगवान् पुरुषोत्तम हैं और जो श्वेत द्वीप के अधीन नरनारायण हैं, वही श्रीवृन्दावनविहारी श्रीनन्दनन्दन हैं, क्योंकि इन्हीं श्रीनन्दनन्दन के अन्य भी अनन्त मनोहारी अवतार हैं।'

(३) श्रीकृष्ण के साक्षात् परब्रह्म होने में वेदश्रुति तथा श्रीगीता और श्रीमद्भागवत का समन्वय

श्रीकृष्ण साक्षात् परब्रह्म है क्यों कि वह व्यापक है, पुरुषोत्तम ही है सर्वकर्त्ता हैं, अप्रमेय आनन्दरूप है, निर्गुण है, आनन्दकार है, अप्राकृत

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है, सर्व शक्ति विशिष्ट है, अंशकला पूर्ण है, सर्वोद्धार प्रयत्नात्मा है, निर्दोष है, पूर्ण कल्याणगुण है और माया को साथ लेकर प्रकट हुआ है, यह स्वरूप निर्वचन है।

यद्यपि यह स्वरूप निर्वचन बहुत सूक्ष्म है तथापि यदि इतने ही स्वरूप निर्वचन में यदि वेद के प्रमाणों का समन्वय पुराणादि ग्रन्थों से हो जाय तो स्वरूपनिर्वचन पूर्ण हो जाता है। फिर किसी आस्तिक को श्रीकृष्ण के परब्रह्म पुरुषोत्तम होने में सन्देह नहीं रह जाता।

'स एवाधस्तात् स उपरिष्टात् स पश्चात् स पुरस्तात् स दक्षिणतः स उत्तरतः स एवेद सर्वम्।' इत्यादि श्रुतियाँ परब्रह्म को सर्वव्यापक कहती हैं। अब यदि श्रीकृष्ण भी सर्वव्यापक ठहर जायँ तो श्रीकृष्ण परब्रह्म हैं, यह सिद्ध हो जाय।

श्रीकृष्ण का स्वरूप निरूपण करने वाले ग्रन्थ श्रीगीता और भागवत हैं। ये दोनों ही ग्रन्थ आस्तिकों को परम माननीय हैं। इन दोनों ग्रन्थों में श्रीकृष्ण को सर्वव्यापक कहा है—गीता के सप्तमाध्याय में कहा है कि, 'मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।' नवमाध्याय में 'मयाततमिदं सर्वं' तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय' कहा है। दशमाध्याय में अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः' 'विष्टभ्याहमिदं कृतत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्।' ग्यारहवें अध्याय में 'तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा। अवश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा।, 'द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्त त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः।' 'सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः। इत्यादि।

श्रीमद्भागवत में भी स्पष्ट कहा है कि 'भवान्हि सर्वभूतानामात्मा साक्षी स्वदृग् विभो।' 'यर्हीदं शक्तिभिः सृष्ट्वा प्रविष्टो ह्यात्मसत्तया।' 'अन्तर्हृदिभास्य खिलात्मनाम्।' (स्कन्ध १०।८६) इत्यादि। व्यापक होने से भी श्रीकृष्ण परब्रह्म हैं।

'स उत्तमः पुरुषः' (छान्दो. प्रपाठ ८ खण्ड १२) यह श्रुति परमात्मा को पुरुषोत्तम कह रही है। अब यदि शास्त्र के द्वारा श्रीकृष्ण ही पुरुषोत्तम ठहर जायँ तो श्रीकृष्ण परब्रह्म हैं यह स्वतः सिद्ध हो जाय। गीता के सातवें अध्याय में आप स्वयं ही आज्ञा करते हैं—'मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनजय.' और १५वें अध्याय में तो स्पष्ट कह दिया है—यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः। अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः.'

'सत्यं विज्ञानमानन्द ब्रह्म', 'एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च.' 'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूत' आनन्दो ब्रह्मणो

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रूपं' इत्यादि। तैत्तिरीयोपनिषद् एवं मुण्डकोपनिषद् में परमात्मा को आनन्दरूप, सर्वजगत्कर्त्ता कहा है। इसी प्रकार से गीता में 'अहं सर्वस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा' (अध्याय ७), 'अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते' और श्रीमद्भागवत में भी 'त्वत्तोऽस्य जन्मस्थितिसंयमान् विभो वदन्त्यनीहात्' (स्कन्ध १०), 'नित्योऽक्षरोऽजस्रसुखो निरञ्जनः पूर्णोऽद्वयो मुक्त उपाधितोऽमृतः' (स्कन्ध १० अध्याय १४)

'यः सर्वज्ञः सर्वशक्तिः सर्वकर्मा सर्वगन्धः सर्वरसः।' इत्यादि श्रुतियाँ परब्रह्म का जिस प्रकार वर्णन कर रही हैं उसी प्रकार श्रीगीता और श्रीभागवत में श्रीकृष्ण का वर्णन मिलता है। गीता में 'मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा', 'प्रकृतिं विद्धि मे पराम्', 'देवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया', 'ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च। शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च।' 'मत्तः सर्वं प्रवर्तते।' श्रीमद्भागवत में भी 'पुरुषेश प्रधानस्य ब्रह्मणोऽनन्तशक्तये' (स्कन्ध १० अध्याय ४), 'श्रिया पुष्टया गिरा कान्त्या' (स्कन्ध १० अध्याय ३९) इत्यादि वचनों से उसी प्रकार का वर्णन मिलता है।

यही नहीं, वेदमन्त्रों, उपनिषदों, श्रुतियों में बतलाये हुए, परब्रह्म स्वरूप के विवेचनों का गीता और श्रीमद्भागवत में किये हुए विवेचनों से अनेक प्रकार से समन्वय उपलब्ध है। किन्तु स्थानाभाव के कारण यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण के स्वरूप विषय में उपर्युक्त समन्वय वर्णन ही पर्याप्त सुस्पष्ट समझ कर लिखा जा रहा है कि गीता और श्रीमद्भागवत में उनको स्पष्ट रूप से परब्रह्म कहा गया है। 'परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परम भवान्' (गीता)। 'त्वं हि ब्रह्म परं ज्योतिर्गूढ ब्रह्मणि वाङ्मये' (श्रीमद्भागवत स्कन्ध १० अध्याय ६३) इत्यादि।

इस प्रकार समन्वय द्वारा भी भगवान् श्रीकृष्ण परब्रह्म सिद्ध होते हैं। किन्तु यह सब शास्त्रसम्मत वाङ्मय वाणी तथा लेखनी का निर्णय विलास विवेचनात्मक निर्णय है। वस्तुतः उसकी माया और उसके स्वरूप गुण तो अनन्त हैं। कहने तथा लिखने में ही पूर्ण अनुभव होना संभव नहीं है।

महाविष्णोरंशो विधिशिवजयीदर्पशमको
यदाज्ञालोऽजाद्या जगदुदयरक्षालयकृतः।
यदिमा माया मोहयति विधिमुख्यानपि सुरान्
स कृष्णो वर्ण्यः स्यात् कथमहह मादृङ्नरपशोः।

'जिनकी आज्ञा से श्रीब्रह्मा, श्रीविष्णु और श्रीशङ्कर जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और संहार करते हैं, जिनकी माया ब्रह्मादि देवताओं को भी मोहित करती है तथा जो श्रीब्रह्मा और शङ्कर को भी जीतने वाले हैं, जो (कामदेव) के अभिमान

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का भी निर्मूलन करने वाले हैं, एवं श्रीमहाविष्णु के भी अंशी (जनक) हैं, अहह ! वे श्रीकृष्णचन्द्र मेरे जैसे नर-पशु द्वारा कैसे वर्णनीय (वर्णन किये जाने योग्य) हो सकते हैं ?

अथापि ते देव पदाम्बुजद्वय-
प्रसादलेशानुग्रहीत एव हि ।
जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो
न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन् ।।
(भागवत १०।१४।२९)

हे देव ! जो लोग आपके उभय चरण-कमलों के प्रसाद का लेश पाकर अनुगृहित हुए हैं, वे भक्तजन ही आपकी महिमा के तत्त्व को जान सकते हैं, उनके सिवा अन्य कोई भी चिरकाल तक विचार करने पर भी आपके तत्त्व को नहीं जान सकते हैं।

वंशीविभूषितकरान्नवनीरदाभात्-
पीताम्बरादरुणबिम्बफलाधरोष्ठात् ।
पूर्णेन्दुसुन्दरमुखादरविन्दनेत्रात्-
कृष्णात्परं किमपि तत्त्वमहं न जाने ।।

नव-जलधर के समान श्याम-कान्तिवाले, पूर्णचन्द्र के समान सुन्दर मुखारविन्दयुक्त, पके हुए कुन्दरु के समान लाल अधरवाले, कमलनयन, वंशी से विभूषित करकमल वाले तथा पीताम्बर से सुसज्जित श्रीकृष्ण से परे भी यदि कोई तत्त्व है तो मुझे उसका ज्ञान नहीं है ।

(४) भगवान् श्रीकृष्ण और उनका तत्त्व ज्ञान प्राप्ति साधन

भगवान् श्रीकृष्ण का तत्त्वज्ञान तथा भगवान् को प्राप्त करने की रुचि रखने वालों को भगवान् श्रीकृष्ण ने ही गीता में बतलाया है—

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ।।
(गीता ११।५४)

हे परंतप अर्जुन ! अनन्य भक्ति के द्वारा इस प्रकार चतुर्भुज रूपवाला मैं प्रत्यक्ष देखने के लिए तत्त्व से जानने के लिये तथा प्रवेश करने के लिए (एकीभाव से) प्राप्त होने के लिये भी शक्य हूँ।'

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः ।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ।।
(गीता १८।५५)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उस पराभक्ति के द्वारा वह मुझ परमात्मा को, मैं जो हूँ, ठीक वैसा-का-वैसा तत्त्व से जान लेता है तथा उस भक्ति से मुझको तत्त्व से जानकर तत्काल ही मुझ में प्रविष्ट हो जाता है।

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम्।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश, सूर्य और आद्याशक्ति भिन्न-भिन्न नहीं ब्रह्मतत्त्व में एक ही हैं

सोपान ५

परम पिता परमात्मा के वेदों में दो स्वरूप माने गये हैं। प्रकृति रहित ब्रह्म को 'निर्गुण-ब्रह्म' कहा गया है और जिस स्वरूप में प्रकृति या त्रिगुणमयी माया है, उस प्रकृति सहित ब्रह्म के स्वरूप को 'सगुण' कहते हैं। सगुण ब्रह्म के भी दो भेद माने गये हैं—एक निराकार, दूसरा साकार। निराकार-सगुण ब्रह्म को ही 'महेश्वर', परमेश्वर आदि नामों से पुकारा जाता है। वे ही सर्वव्यापी निराकार सृष्टिकर्ता परमेश्वर स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश—इन तीन रूपों में प्रकट होकर सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार किया करते हैं।

परम पिता परमेश्वर भगवान् भक्तों के प्रेमवश होकर साकार रूप में प्रकट होकर उन्हें दर्शन देते हैं। उनके साकार रूपों का वर्णन मनुष्य की बुद्धि से बाहर है; क्योंकि उनके अनन्त रूप हैं। भक्त जिस रूप में उन्हें देखना चाहता है, उसी रूप में प्रत्यक्ष प्रकट होकर उन्हें दर्शन देते हैं। भगवान् का अनेक प्रकार से साकार रूप धारण करना भगवान् के अधीन नहीं प्रेमी भक्तों के अधीन है। अर्जुन ने पहले विश्वरूप दर्शन की इच्छा प्रकट की, फिर चतुर्भुज की और तदनन्तर द्विभुज की; भक्तभावन भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उसके इच्छानुसार थोड़ी ही देर में तीनों रूपों से दर्शन दे दिये और उसको निराकार भाव भी भली भांति से समझा दिया। इसी प्रकार जो भक्त परमात्मा के जिस स्वरूप की उपासना करता है, उसको उसी रूप में भगवान् दर्शन देते हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसलिए उपासकों को उपासना के स्वरूप में किसी भी प्रकार के परिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं। भगवान् विष्णु तथा उनके चौबीस अवतार, शिव, भगवती देवी, गणेश, भगवान् सूर्य आदि किसी भी रूप की उपासना की जाय, सब उसकी ही उपासना होती है। भक्त को चाहिये, वह अपने इष्टदेव की उपासना करता हुआ सर्वदा यही समझता रहे कि मैं जिस परमात्मा की उपासना करता हूँ, वे ही परमेश्वर निराकार रूप से चराचर में व्यापक हैं, सर्वज्ञ हैं, सब कुछ उन्हीं की दृष्टि में हो रहा है। वे सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वगुणसम्पन्न, सर्वसमर्थ, सर्वसाक्षी, सत्-चित्-आनन्द-घन मेरे इष्टदेव परमात्मा ही अपनी लीला से भक्तों के उद्धार के लिये उनके इच्छानुसार भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण कर अनेक प्रकार की लीलाएँ करते हैं।

श्रीविष्णुपुराण में श्रीविष्णु को ही सर्वोपरि बतलाया गया है और कहा गया है कि संसार की उत्पत्ति, स्थिति और लय श्रीविष्णु से ही होते हैं; वे ही साक्षात् पूर्णब्रह्म परमात्मा हैं; वे ही सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी और सर्वश्रेष्ठ हैं; उनसे बढ़कर और कोई नहीं है। इसी प्रकार शिवपुराण में श्रीशिव को, देवीभागवत में श्रीदेवी को, गणेश-पुराण में श्रीगणेश को तथा सौरपुराण में श्रीसूर्य को ही सर्वोपरि, सर्वशक्तिमान्, सर्वाधार, पूर्णब्रह्म परमात्मा कहा गया है। इसी प्रकार अन्य पुराणों में भी वर्णन आता है।

इससे एक दूसरे में परस्पर विरोध, एक दूसरे की अपेक्षा परस्पर श्रेष्ठता तथा उसकी महिमा अतिशयोक्ति प्रतीत होती है। इसका भाव यह है कि जैसे सती-शिरोमणि पार्वती के लिए केवल एक शिव ही सर्वोपरि हैं, उनसे बढ़कर और कोई नहीं; भगवती लक्ष्मी के लिए केवल एक श्रीविष्णु ही सबसे बढ़कर हैं, इसी प्रकार सच्चिदानन्दघन पूर्णब्रह्म परमात्मा को लक्ष्य में रखकर सभी उपासकों को परमात्मा की शीघ्र प्राप्ति हो जाय, इस दृष्टि से महर्षि वेदव्यासजी ने एक-एक देवता को प्रधानता देकर तत्तत्पुराणों की रचना की है। प्रत्येक अधिष्ठाता देवता के नाम-रूप परमात्मा के ही नाम रूप हैं—यह भली भाँति समझ लेने पर उपर्युक्त शङ्का नहीं रहती है। किसी भी देवता का उपासक क्यों न हो, उस उपासक को पूर्णब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति रूप सर्वोपरि फल मिलना चाहिये-यह पुराण-रचयिता का उद्देश्य अतिउत्तम और तात्त्विक है। प्रत्येक पुराण में उसमें प्रतिपाद्य स्वरूप को सर्वोपरि बतलाने का प्रयोजन दूसरे की निन्दा से नहीं है, किन्तु उसकी प्रशंसा में है और उसको प्रशंसा उस उपासक की उस पुराण और देवता में श्रद्धापूर्वक एकनिष्ठ भक्ति कराने के उद्देश्य से ही है और यह उचित भी है। इस प्रकार होने से ही साधक का अनुष्ठान साङ्गोपाङ्ग पूर्ण होकर उसे पूर्णब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति शीघ्र करा सकता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पुराणों में देवताओं के नाम और रूप तो भिन्न-भिन्न हैं, परन्तु लक्ष्य एक पूर्णब्रह्म परमात्मा का ही रखा गया हैं क्योंकि उन देवताओं के गुण-प्रभाव, लक्षण, महिमा और स्तुति प्रार्थना का वर्णन करते हुए प्रत्येक देवता को ब्रह्म का रूप दिया गया है। अतः वास्तव में एक ही परब्रह्म परमात्मा की उपासना अनेक प्रकार से बतलाई गई हैं; नहीं तो उपासक नाना प्रकार के मतान्तरों को मानकर यदि उन सबके अनुसार साधना या अनुष्ठान करने लगे तो वह किसी एक में भी सुदृढ़ निष्ठावान नहीं बन पाता और उसका साधन छिन्न-भिन्न हो जाता है। इसलिए वेदव्यासजी ने सम्पूर्ण संसार पर कृपा करके पुराणों के द्वारा उन सब उपासकों को एकनिष्ठ करते हुए एक परब्रह्म परमात्मा की ओर आकर्षित किया है। पुराणों में अधिष्ठातृ-देवता की प्रशंसा एवं स्तुति की गयी है; वह अतिशयोक्ति नहीं है, क्योंकि परमात्मा की महिमा अतिशय, अपार और अपरिमित होने से उस अधिष्ठातृ परमात्मा की महिमा अतिशय अपार और अपरिमित होने से उस अधिष्ठातृदेवता को परमात्मा का रूप देने से जितनी भी उसकी महिमा बतलायी जाय, वह थोड़ी ही है। वाणी के द्वारा जो कुछ कहा जाता है, वह थोड़ी ही है। वाणी के द्वारा जो कुछ कहा जाता है वह परिमित ही है। वास्तव में वाणी द्वारा परमात्मा की महिमा का कोई किसी प्रकार भी वर्णन नहीं कर सकता।

आशय यह है कि जो भक्त जिस देवता की उपासना करता है, उस उपासक को अपने उपास्य देव को सर्वोपरि पूर्ण ब्रह्म परमात्मा मानकर ही उपासना करनी चाहिये। इस प्रकार की दृष्टि रख कर उपासना करने से ही सर्वोपरि सच्चिदानन्द-घन पूर्णब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है; क्योंकि सभी नाम और रूप परमात्मा के ही होने से वह उपासना परमात्मा की ही उपासना है। अतः परमात्मा को लक्ष्य करके किसी भी नाम और रूप की उपासना की जाय, उसका फल एक पूर्ण ब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति ही होता है। इसलिए मनुष्य को अपने इष्टदेव को पूर्ण ब्रह्म परमात्मा समझकर उसके नाम का जप, उसी स्वरूप का ध्यान तथा उसी की साधना नित्य-निरन्तर करना चाहिये।

इन देवताओं की अभिन्नता तथा एक ही ब्रह्म तत्त्व होने के वेद, उपनिषद, पुराणादि शास्त्रों में अनेक प्रमाण तथा विवेचन मिलते हैं—

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्॥

सभी कार्यों में सिद्धि-प्राप्ति के लिए श्रीगणपति के साथ श्रीसूर्य, श्रीदुर्गा, श्रीशिव और श्रीविष्णु की पूजा करना चाहिये।'

शैवाः सौराश्च गणेशा वैष्णवाः शक्तिपूजकाः।
तमेव प्राप्नुवन्त्येव सर्वे सामरं यथा॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एकः स पञ्चधा जातः क्रियया नामभिः किल ।
देवदत्तो यथा कश्चित्पुत्राद्याह्वाननामभिः ।
(शतकोटि रामायणान्तर्गत आनन्द रामायण विलास काण्ड ८।९-१०)

इस संसार में शैव (शिवोपासक), सौर (सूर्योपासक), गाणेश (गणेशोपासक), वैष्णव तथा शक्तिपूजक अर्थात् पञ्चदेवोपासक उस ब्रह्म को उसी प्रकार से प्राप्त कर लेते हैं, जैसे वर्षा का जल सागर में समा जाता है। वह ब्रह्म एक है और वही नाम और कर्म के प्रभाव से पाँच रूपों में पञ्चदेवता के रूप में विभक्त होता है। उदाहरण के लिये, देवदत्त एक मनुष्य है; वह किसी का पुत्र, किसी का भाई, किसी का बाप और किसी का चाचा कहलाता है, लेकिन तत्त्वतः वह एक है।

शिवे विष्णौ च शक्तौ च सूर्ये मयि नराधिप ।
याऽभेदबुद्धिर्योगः स सम्यग्योगो मतो मम ।।
(गणेशगीता १।२१)

शिव, विष्णु, शक्ति, सूर्य और मुझ गणेश में अभेद बुद्धि रखने वाला ही योगी होता है।

त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि ।
(गणपत्यथर्वशीर्ष ४)

श्रीगणेश सच्चिदानन्द रूप पर ब्रह्म हैं।

'न रूपं न नाम न गुणम् ।'
'स ब्रह्मगणेशः'
'ॐ तद् गणेशः । ॐ सद् गणेश । ॐ परं गणेशः । ॐ ब्रह्म गणेशः ।'
(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् २।१)

'वही तत् गणेश है, वही सत् गणेश है, वही पर गणेश है, वही ब्रह्म गणेश है।'

'तच्चित्स्वरूपं निर्विकारं अद्वैतं च ।'
(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् ४)

'वही चिद्रूप, निर्विकार और अद्वितीय है। वही सद्रूप गणेश आनन्दरूप है।'

आनन्दो भवति स नित्यो भवति स शुद्धो भवति स मुक्तो भवति स स्वप्रकाशो भवति स ईश्वरो भवति स मुख्यो भवति स वैश्वानरो भवति स तैजसो भवति स प्राज्ञो भवति स साक्षी भवति स एव भवति स सर्वो भवति स सर्वो भवतीति ।'
(गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् ५)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वही सद्रूप गणेश आनन्दरूप है, नित्य है, शुद्ध है, मुक्त है, स्वयंप्रकाश, ईश्वर और प्रमुख है। वही वैश्वानर और तैजस तथा प्राज्ञ है। वही सर्वसाक्षी है, वह वही है, वह सब है, वह सब कुछ है।'

जगद्रूपो गकारश्च णकारो ब्रह्मवाचकः।
तयोर्योगे गणेशाय नाम तुभ्यं नमो नमः॥

(मुद्गलपुराण, भक्तमनोरथ सिद्धिप्रद गणेश स्तोत्र ४)

'गणेश' शब्द में आया हुआ 'गकार' जगद्रूप है और 'णकार' ब्रह्मवाचक है। ऐसे सर्वव्यापक परब्रह्म श्रीगणेश को प्रणाम है।'

ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचकः।
तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम्॥

(ब्रह्मवैवर्त; विष्णुपदिष्ट गणेशनामाष्टक स्तोत्र ३)

'ग' अक्षर ज्ञान का और 'ण' अक्षर निर्वाण का वाचक है। ज्ञान और निर्वाण के ईश परब्रह्म गणेश को मैं प्रणाम करता हूँ।

भगवान् आदित्य (सूर्य) की त्रिदेवत्व में अभिन्नता के विषय में लिखा है—

ब्रह्मा विष्णुर्वृषांकश्च त्रयो देवाः सतां मता।
नामभेदः क्रियाभेदैर्भिद्यन्ते नात्मना स्वयम्॥

(भविष्य पुराण)

'ब्रह्मा, विष्णु और शिव ये तीन देवता सज्जनों (विद्वानों) द्वारा माने जाते हैं। ये नाम और कर्म के भेद से पृथक जान पड़ते हैं, पर स्वरूप की दृष्टि से इनमें कोई भिन्नता नहीं है।'

आदित्याश्चादिदेवत्वा तत्राभूः त्रिगुणात्मकः।
प्रातः प्रजापतिरसौ मध्याह्ने विष्णुरिश्यते
रुद्रोऽपराह्ण समो स एवैकस्त्रिधामतः॥

(भविष्य पुराण)

'आदित्य (सूर्य) ही आदि देव हैं, जो त्रिगुणात्मक हो जाते हैं। ये प्रातःकाल में ब्रह्मा, मध्याह्न में विष्णु और दोपहर के पश्चात् (अपराह्ण) में रुद्र हो जाते हैं। इस प्रकार से वे एक ही तीन स्वरूपात्मक होते हैं।

श्रीकृष्ण साम्ब संवाद में लिखा है—

प्रत्यक्षं देवता सूर्यो जगच्चक्षुर्दिवाकरः।
तस्मादन्याधिका काचिद्देवता नास्ति शाश्वती॥ २१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्मादिदं जगज्जातं लयं यास्यति यत्र च ।
कृतादिलक्षणः कालः स्मृता साक्षाद्दिवाकरः ।। २२
ग्रहनक्षत्रयोगाश्च राशयः करणानि च ।
आदित्यवसवो रुद्रा अश्विनो वायवोऽनलः ।। २३
शक्रः प्रजापतिः सर्वे भुर्भुवः स्वस्तथैव च ।
लोकाः सर्वे नगाः बगाः सरितः सागरास्तथा ।
भूतग्रामस्य सर्वस्य स्वयं हेतुर्दिवाकरः ।। २४
अस्येच्छया जगत्सर्वमुत्पन्नं सचराचरम् ।
स्थितं प्रवर्तते चैव स्वार्थे चानुप्रवर्तते ।। २५
प्रसादादस्य लोकोऽयं चेष्टमानः प्रदर्श्यते ।
अस्मिन्नभ्युदिते सर्वमुदेदस्तमिते सति ।
अस्तं यातीत्यदृश्येन विमेतत्कथ्यते मया ।। २६
तस्मादतः परं नास्ति न भूतं न भविष्यति ।
यो वै वेदेषु सर्वेषु परमात्मेति गीयते ।। २७

(भविष्य पुराण सप्तमो कल्पवर्णने श्लोक २१-२७)

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—प्रत्यक्ष देवता तो भगवान् सूर्य हैं जो इस समस्त जगत् के नेत्र हैं और दिन के सृजन करने वाले हैं। इससे भी अधिक निरन्तर रहने वाला कोई देवता नहीं है ।।२१।। जिससे यह जगत् उत्पन्न हुआ है उसमें ही यह जगत् अन्त में लय को प्राप्त होता है। कृतादि लक्षण वाला यह काल भी साक्षात् दिवाकर ही कहा गया है। जितने भी ग्रह, नक्षत्र, योग हैं तथा राशियाँ, करण, आदित्यवसव, रुद्र, अश्विनीकुमार, वायु, अनल, शक्र, प्रजापति, समस्त भूर्भुवःस्व लोक, सर्वनग, बाग, नदियाँ, समुद्र और भूतों का समुदाय इन सभी का हेतु स्वयं एक दिवाकर ही है ।।२३-२४।। इसी की इच्छा से यह समस्त जगत् जो चर और अचर से युक्त हैं, उत्पन्न हुआ है। इसी की इच्छा से यह जगत् स्थिर रहता है और अपने अर्थ में प्रवृत्त भी इसकी इच्छा से हुआ करता है ।।२५।। इसके प्रसाद से ही यह लोक चेष्टाशील होता हुआ दिखलाई देता है। इसके उदय होने पर सभी का उदय होता हैं और इसके अस्त होने पर सब अस्तङ्गत हो जाया करते हैं क्योंकि जब यह अदृश्य होते हैं तो फिर कुछ भी नहीं दिखाई देता। इसके विषय में मैं क्या कहूँ, यह प्रत्यक्ष से सिद्ध ही है। इस कारण से इससे अधिक कोई नहीं है, न हुआ और न भविष्य में कोई होगा जो कि समस्त वेदों में 'परमात्मा' नाम से कहा गया है ।।२६-२७।।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अरूण-खगाधिप संवाद में लिखा है—

पूजयित्वा रविं भक्त्या ब्रह्मा ब्रह्मत्वमागतः ।
विष्णु त्वं चापि देवेशो विष्णुरापं तदर्चनात् ।। १
शंकरोऽपि जगन्नाथः पूजयित्वा दिवाकरम् ।
महादेवत्वमगमत्तत्प्रसादात्खगाधिप ।।२
सहस्राक्षोऽपि देवेश इन्द्रो भानुं तपोमहम् ।
इन्द्र त्वमगमद्देवं पूजयित्वा दिवाकरम् ।।३
मातरो देवगंधर्वाः पिशाचोरगराक्षसाः ।
पूजयंति सदा भानुमीशानं सुरनायकम् ।।४
सर्वमेतज्जगन्नित्यं भानौ देवे प्रतिष्ठितम् ।
तस्मात्संपूजयेद्भानुं य इच्छेत्स्वर्गमक्षयम् ।।५

(भविष्य पुराण, ब्राह्मपर्व, ब्रह्मकृत सूर्यस्तुति श्लोक १-५)

अरुण ने कहा— ब्रह्माजी ने जो ब्रह्मत्व की प्राप्ति की थी, वह भक्ति के साथ रविदेव की पूजा करके ही की थी। देवों के ईश भगवान् विष्णुजी विष्णु के पद को सूर्य के अर्चन से ही प्राप्त हुए ।।१।। भगवान् शङ्कर भी दिवाकर की पूजा करके ही समस्त जगत् के नाथ हुए हैं। हे खगाधिप ! सूर्य के प्रसाद से ही शंकर महादेवत्व को प्राप्त हुए हैं ।।२।। एक सहस्र नेत्रों वाला देवों का स्वामी इन्द्र भी तपोमह दिवाकर भानुदेव की पूजा करके इन्द्रत्व को प्राप्त करता है ।।३।। मातृ वर्ग देवगण, गन्धर्व, पिशाच, उरग और राक्षस सभी सुरों के नायक ईशाक भानु की सदा पूजा किया करते हैं ।।४।। यह समस्त जगत् देवभानु में ही नित्य प्रष्ठित. रहता हैं। इसलिए यदि स्वर्ग के अक्षय निवास की इच्छा रखते हो तो भानु की पूजा भली भाँति से करना चाहिये ।।५।।

वेदों ने भगवती की स्तुति करते हुए कहा है—

नमो देवि महामाये विश्वोत्पत्तिकरे शिवे ।
निर्गुणे सर्वभूतेशि मातः शंकरकामदे ।।
त्वं भूमिः सर्वभूतानां प्राणः प्राणवतां तथा ।
धीः श्रीः कान्तिः क्षमा शान्तिः श्रद्धा मेधा धृतिः स्मृति ।
त्वमुद्गीथेऽर्धमात्रासि गायत्री व्याहृतिस्तथा ।
जया च विजया धात्री लज्जा कीर्तिः स्पृहा दया ।।

(देवी भागवत १।५।५३-५४)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'देवि ! आप महामाया हैं। जगत् की सृष्टि करना आपका स्वभाव है। आप कल्याणमय विग्रह धारण करने वाली एवं निर्गुण हैं, अखिल जगत् आपका शासन मानता है तथा शंकर के आप मनोरथ पूर्ण किया करती हैं। सम्पूर्ण प्राणियों को आश्रय देने के लिए आप पृथ्वी स्वरूपा हैं, प्राणधारियों के प्राण भी आप ही हैं। धी, श्री, कान्ति, क्षमा, शान्ति, श्रद्धा, मेधा, धृति और स्मृति—ये सभी आपके नाम हैं। ॐकार में जो अर्धमात्रा है, वह आपका ही निर्विशेष रूप है। गायत्री में आप प्रणव हैं। जया, विजया, धात्री, लज्जा, कीर्ति, स्पृहा और दया—इन नामों से आप प्रसिद्ध हैं। माता ! हम आपको नमस्कार करते हैं।'

आराध्या परमा शक्तिः सर्वैरपि सुरासुरैः।
नातः परतरं किंचिदधिकं भुवनत्रये ॥
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं वेदशास्त्रार्थनिर्णयः।
पूजनीया पराशक्तिर्निगुणा सगुणाथवा ॥

(देवी भागवत १।९।८७-८७)

सभी देवता और दानवों के लिए चिन्मयी परमाशक्ति ही आराधना करने योग्य है। त्रिलोकी में इन भगवती से बढ़कर अन्य कोई भी नहीं है। यह बात सत्य है, सत्य है। वेद और शास्त्रों का भी यही सच्चा तात्पर्य एवं निर्णय है कि निर्गुण अथवा सगुण रूपा चिन्मयी पराशक्ति ही पूजनीय है।'

सर्वं खल्विदमेवाहं नान्यदस्ति सनातनम्।

(देवी भागवत १।१५।५२)

'यह सारा जगत् मैं ही हूँ, मेरे सिवाय दूसरी कोई अविनाशी वस्तु नहीं है।

यह आधा श्लोक ही श्रीमद्देवीभागवत का मूल-वचन है। इसमें यही प्रतिपादन किया गया है कि भगवती देवी ही यह सनातन परब्रह्म-तत्त्व है, जिसका वर्णन उपनिषद् में—

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' (छान्दोग्य ३।१४।१)

'यह सब निश्चय ही ब्रह्म है।' यही कह कर किया गया है। इसी प्रकार से गीता में लिखा है—

'वासुदेवः सर्वमिति' (गीता ७।१९)

'यह सब वासुदेव ही है।'

'सदसच्चाहमर्जुन' (गीता ९।१९)

'अर्जुन ! सत्, असत् सब कुछ मैं ही हूँ।'

'मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनञ्जय' (गीता ७।७)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'अर्जुन ! मेरे अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है ।'

भगवती देवी ने ब्रह्माजी को यह तत्त्व इस प्रकार से बतलाया है —

सदेकत्वं न भेदोऽस्ति सर्वदैव ममास्य च ।
योऽसौ साहमहं यासौ भेदोस्ति मतिविभ्रमात् ।।
आवयोरन्तरं सूक्ष्मं यो वेद मतिमान् हि सः ।
विमुक्तः स तु संसारान्मुच्यते नात्र संशयः ।।

(देवी भागवत ३।६।२-३)

मैं और ब्रह्म एक ही हैं। मुझ में और इन ब्रह्म में कभी किंचिन्मात्र भी भेद नहीं है। जो वे हैं, वही मैं हूँ और जो मैं हूँ वही वे हैं। बुद्धि के भ्रम से भेद प्रतीत हो रहा है। जो बुद्धिमान् पुरुष हम लोगों के सूक्ष्म भेद को जानता है, वही मुक्त है। उसके इस संसार-सागर से मुक्त होने में कुछ भी सन्देह नहीं है।

सर्वमेवाहमित्येवं निश्चयं विद्धि पद्मज ।
नूनं सर्वेषु देवेषु नानानामधरा ह्यहम् ।।

(देवी भागवत ३।६।११)

ब्रह्माजी ! सब मैं ही हूँ; इसे निश्चयपूर्वक जान लेना चाहिये। सम्पूर्ण देवताओं में मैं विभिन्न नामों से विख्यात हूँ—यह निश्चित बात है।

ऋग्वेद में भगवती कहती हैं—

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वे देवैः ।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ।।

(ऋग्वेद म. १०. अ. १०, सूक्त १२५।१)

मैं रुद्र, वसु, आदित्य और विश्वेदेवों के रूप में विचरती हूँ। वैसे ही मैं मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि और अश्विनी कुमारों के रूप में धारण करती हूँ।

पुराण शास्त्रों में भगवान् के विराट् रूप का वर्णन मिलता हैं, उसी प्रकार से परब्रह्मस्वरूपा भगवती देवी का भी विराट् रूप देवी भागवत स्कन्ध ७ अध्याय ३३ में वर्णन किया गया है।

भगवती महाशक्ति की स्तुति करते हुए देवगण कहते हैं —

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

(मार्कण्डेय पुराण ९१।१०)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
ब्रह्मा, विष्णु और महेश के रूप से सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और विनाश

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाली हे सनातनी शक्ति ! हे गुणाश्रये ! हे गुणमयी नारायणी देवी ! आपको नमस्कार है।'

भगवान् शिव का कथन है—

ममैव हृदये विष्णुः विष्णोश्च हृदये ह्यहम्।
उभयोरन्तरं यो वै न जानाति मतो मम॥
(शिव पुराण ९।५५-५६)

मेरे हृदय में विष्णु हैं, उनके हृदय में मैं हूँ। जो हम दोनों में अन्तर नहीं समझता है, वही मुझे विशेष प्रिय है।

इसी प्रकार वेद, उपनिषद्, श्रुति, स्मृतियों में भी भगवान् शिव के लिए लिखा है—

असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधिभूम्याम्।
(शुक्ल यजुर्वेद सं. अध्याय १६ का मंत्र ५४)

नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवं रुद्रा उपश्रिताः।
(शुक्ल यजुर्वेद सं. अध्याय १६ का मंत्र ५५)

शर्वाः.....। (शुक्ल यजुर्वेद सं. अध्याय मंत्र ५७)

ये भूतानामधिपतयः.....कपर्दिन।
(शुक्ल यजुर्वेद सं. अध्याय १६ मंत्र ५९)

रुद्रों (महादेवों) की गिनती नहीं की जा सकती। ये सभी नीलकण्ठ, भूतों के अधिपति, कपर्दी, संहार-शक्तिमान्, शर्व भूतल-आकाश सर्वत्र ही रहते हैं।

उपनिषदों में भगवान् शिव के लिए लिखा है—

सर्वव्यापी स भगवान् शिवः। (श्वेताश्वतर)
सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म।
आनन्दं ब्रह्म। (तैत्ति)
ईशावास्यमिदं सर्वम्। (ईशावास्यो)
यतो वाचो निवर्तन्ते आ प्राप्य मनसा सह।
शान्तं शिवमद्वैतम्। (तैत्ति)

विश्व की उत्पत्ति में ये शिव ही मूल कारण हैं। शिव को ही 'विश्वरूप' या 'सत्यब्रह्म' कहा जाता है। यह शिव, ईश्वर जगत् को रच कर उसमें प्रविष्ट होता है। होने वाला रूप ईश्वर का विश्वचर रूप कहा जाता है। इसको वैदिक परिभाषा में 'देवसत्य' कहा जाता है। यही सब जगत् का नियन्ता है। व्यवहार में, न्यायदर्शन में या उपासना शास्त्रों में यही नियन्ता 'ईश्वर' कहा गया है। ईश्वर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के इस रूप की व्याप्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में है, समष्टि ब्रह्माण्ड में और प्रत्येक व्यष्टि पदार्थ में यह व्यापक रूप से विराजमान है। ब्रह्माण्ड से बाहर भी व्याप्त रह कर ब्रह्माण्ड को अपने ही उदर में रखे हुए हैं।

भगवान् विष्णु ने कहा है—

स एवाहं महादेवः स एवाहं जनार्दनः।
उभयोरन्तरं नास्ति घटस्थलजलयोरिव ।।

'वस्तुतः मैं ही जनार्दन विष्णु हूँ और मैं ही महादेव हूँ। अलग-अलग दो घड़ों में रखे हुए जल की भाँति मुझ और उनमें कोई अन्तर नहीं है।'

भगवान् श्रीराम का कथन है—

ममास्ति हृदये शर्वो भवतो हृदये त्वहम्।
आवयोरन्तरं नास्ति मूढाः पश्यन्ति दुर्धियः ।।
(पद्म. पाता. ४६।२०)

'आप शिव मेरे हृदय में रहते हैं और मैं आपके हृदय में हूँ। हम दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं है। मूढ़ और दुर्बुद्धि लोग ही हम में भेद मानते हैं।

भगवान् विष्णु ने दक्ष प्रजापति को कहा है—

त्रयाणामेकभावानां यो न पश्यति वै भिदाम्।
सर्वभूतात्मनां ब्रह्मन् स शान्तिमधिगच्छति ।।
(श्रीमद्भागवत ४।७।५४)

विप्र! हम तीनों एक रूप हैं और समस्त भूतों की आत्मा हैं। हमारे अन्दर जो भेद-भावना नहीं करता, निस्संदेह वह शान्ति (मोक्ष) को प्राप्त होता है।

भगवान् श्रीशिव विष्णु भगवान् से कहते हैं—

मद्दर्शने फलं यद्वै तदेव तव दर्शने।
ममैव हृदये विष्णुर्विष्णोश्च हृदये ह्यहम् ।।
उभयोरन्तरं यो वै न जानाति मतो मम।
(शिव पुराण रुद्र. सृष्टि. ९।५४-५६)

मेरे दर्शन का जो फल है, वही आपके दर्शन का है। आप विष्णु मेरे हृदय में निवास करते हैं और मैं आप विष्णु के हृदय में रहता हूँ। जो हम दोनों में भेद नहीं समझता, वही मुझे मान्य है।

भगवान् विष्णु के प्रति भगवान् महेश्वर का कथन है—

त्रिधा भिन्नो ह्यहं विष्णो ब्रह्मविष्णुहराख्यया।
सर्गरक्षालयगुणैर्निष्कलोऽपि सदा हरे ।।
(शिव रुद्र. सृ. ९।२८)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णो ! हरे !! मैं स्वभाव से अखण्ड होता हुआ भी संसार की रचना, स्थिति एवं प्रलय के लिए रजः सत्त्व आदि गुणों से क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र—इन तीन नामों में विभक्त हो रहा हूँ।

यथा च ज्योतिषः सङ्गाज्जलादेः स्पर्शता न वै।
तथा ममागुणस्थापि संयोगाद्वन्धनं न हि॥

(शिव रुद्र. सृ. ९।३२)

जिस प्रकार जलादि के संसर्ग से अर्थात् उनमें प्रतिविम्ब पड़ने से सूर्य आदि ज्योतियों का उन जलादि के साथ सम्पर्क नहीं होता, उसी प्रकार मुझ निर्गुण का भी गुणों के संयोग से वन्धन नहीं होता।

इसी प्रकार से भगवान् श्रीकृष्ण के भी परब्रह्म परमात्मा होने के विविध ग्रन्थों में उल्लेख मिलते हैं—ब्रह्मवैवर्त पुराण में भगवान् शिव ने भगवान् श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुए कहा है—

विश्वं विश्वेश्वरेशं च विश्वेशं विश्वकारणम्।
विश्वाधारं च विश्वस्थं विश्वकारणकारणम्॥
विश्वरक्षाकरणं च विश्वघ्नं विश्वजं परम्।
फलबीजं फलाधारं फल च तत्फलप्रदम्॥

(ब्रह्मवैवर्त सृष्टि ३।२४।२५)

आप विश्वरूप हैं, विश्व के स्वामी हैं, विश्व के स्वामियों के भी स्वामी विश्व के कारण हैं—नहीं-नहीं, विश्व के कारण के भी कारण हैं, विश्व के आधार हैं, विश्व में (अन्तर्यामी रूप से) स्थित हैं, विश्वरक्षक हैं, विश्व का संहार करने वाले हैं और नाना रूपों से विश्व में आखिर भूत होते है। आप फलों के वीज हैं, फलों के आधार है, फल स्वरूप हैं और फलदाता हैं।

भगवान् श्रीराम के प्रति भगवान् शिव का कथन है—

एकस्त्वं पुरुषः साक्षात् प्रकृतेः पर ईर्य से।
यः स्वांशकलया विश्वं सृजस्यवसि हंसिच॥
अरूपस्त्वमशेषस्य जगतः कारणं परम्।
एक एव त्रिधा रूपं गृह्णासि कुहकान्वितः॥
सृष्टौ विधातृरूपस्त्वं पालने स्वप्रभामयः।
प्रलय जगतः साक्षादहं शर्वाख्यतां गतः॥

(पद्म पुराण पाताल. ४६।६-८)

आप प्रकृति से अतीत साक्षात् अद्वितीय पुरुष कहे जाते हैं, जो अपनी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अंशकला के द्वारा ब्रह्मा-विष्णु-रुद्ररूप से क्रमशः विश्व की उत्पत्ति, पालन एवं संहार करते हैं। आप अरूप होते हुए भी अखिल विश्व के परम कारण हैं। आप एक होते हुए भी माया संवलित होकर त्रिविध रूप धारण करते हैं। संसार की सृष्टि के समय आप ब्रह्मा रूप से प्रकट होते हैं, पालन के समय स्वप्रभामय विष्णु रूप से व्यक्त होते हैं और प्रलय के समय मुझ शर्व (रुद्र) का रूप धारण कर लेते हैं।'

भगवान् श्रीकृष्ण ने भगवान् शिव से कहा है—

त्वत्परो नास्ति मे प्रेयांस्त्वं मदीयात्मनः परः।
ये त्वां निन्दन्ति पापिष्ठा ज्ञानहीना विचेतसः॥
पच्यन्ते कालसूत्रेण यावच्चन्द्रदिवाकरौ।
कृत्वा लिङ्गं सकृत्पूज्य वसेत्कल्पायुतं दिवि॥
प्रजावान् भूमिमान् विद्वान् पुत्रबान्धववांस्तथा।
ज्ञानवान्मुक्तिमान् साधुः शिवलिङ्गार्चनाद् भवेत्॥

(ब्रह्मवैवर्त., ब्रह्म. ६।३१-३२,४५)

'मुझे आपसे बढ़कर कोई प्यारा नहीं है, आप मुझे अपनी आत्मा से भी अधिक प्रिय हैं। जो पापी, अज्ञानी एवं बुद्धिहीन पुरुष आपकी निन्दा करते हैं; वे जब तक सूर्य और चन्द्र का अस्तित्व रहेगा, तब तक 'कालसूत्र' नामक नरक में पचते रहेंगे। जो शिवलिङ्ग का निर्माण कर एक बार भी उसका पूजन कर लेता है, वह दस हजार कल्प तक स्वर्ग में निवास करता है। शिवलिङ्ग के अर्चन से मनुष्य को सन्तान भूमि, विद्या, पुत्र, बान्धव, श्रेष्ठता, ज्ञान एवं मुक्ति—सब कुछ प्राप्त हो जाता है।'

देवीपुराण में ब्रह्माजी के विषय में कहा है—

जय देवाधिदेवाय त्रिगुणाय सुमेधसे।
अव्यक्तजन्मरूपाय कारणाय महात्मने॥
एतत्त्रिभावभावाय उत्पत्तिस्थितिकारकः।
रजोगुणगुणाविष्ट सृजसीदं चराचरम्॥
सत्त्वपाल महाभाग तमः संहरसेऽखिलम्।

(देवीपुराण ८३।१३-१६)

'आपकी जय हो! उत्तम बुद्धि वाले, अव्यक्त-व्यक्तरूप, त्रिगुणमय, सबके कारण, विश्व की उत्पत्ति, पालन एवं संहार करने वाले ब्रह्मा, विष्णु और महेश रूप तीनों भावों से भावित होने वाले महात्मा देवाधिदेव ब्रह्मदेव के लिए नमस्कार है। हे महाभाग! आप रजोगुण से आविष्ट होकर हिरण्यगर्भरूप से चराचर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

संसार को उत्पन्न करते हैं तथा सत्त्वगुणयुक्त होकर विष्णुरूप से पालन करते हैं एवं तपोमूर्ति धारण करके रुद्ररूप से सम्पूर्ण संसार का संहार करते हैं।'

उपरोक्त वचनों से ब्रह्माजी के भी परात्पर ब्रह्मसहित छह रूपों का होना सिद्ध होता है। अव्यक्त से तो परात्पर परब्रह्मस्वरूप एवं कारण से सर्वव्यापी, निराकार सगुण रूप तथा उत्पत्ति, पालन और संहारकारक होने से ब्रह्मा, विष्णु, महेश रूप होना सिद्ध होता है।

उपर्युक्त शास्त्र प्रमाणों द्वारा स्पष्ट विदित होता है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश, सूर्य, आद्याशक्ति भगवती तथा श्रीराम, कृष्ण यह सभी तत्वतः एक ही ब्रह्मतत्त्व हैं। इनमें किसी भी प्रकार से कोई छोटा, बड़ा नहीं है। यदि कोई मनुष्य अन्य दूसरे की इष्टदेव के निन्दा या अपमान करता है, वह वस्तुतः अपने ही इष्टदेव का अपमान या निन्दा करता है। परमात्मा को प्राप्त करने से प्रथम काल में परमात्मा का यथार्थ रूप व ज्ञान न जानने के कारण भक्त अपनी समझ के अनुसार अपने उपास्यदेव की जिस स्वरूप में कल्पना करता है, वास्तव में उपास्यदेव का स्वरूप अत्यन्त विलक्षण है; तथापि उसकी अपनी बुद्धि, भावना तथा रुचि के अनुसार की हुई सच्ची और श्रद्धायुक्त उपासना को परमेश्वर दया करके स्वीकार करते हैं; क्योंकि ईश्वर-प्राप्ति से पूर्व ईश्वर का यथार्थ स्वरूप किसी के भी चिन्तन में नहीं आ सकता है। अतएव ईश्वर के किसी भी नाम-रूप की निष्काम भाव से उपासना करने वाला शीघ्र ही उस नित्य सच्चिदानन्द को प्राप्त हो जाता है।

भगवान् शिव तथा भगवान् विष्णु की महिमा

सोपान ६

ययाति बोले—मातले! आपने धर्म और अधर्म सबका उत्तम वर्णन किया अब देवताओं के लोकों की स्थिति का वर्णन करो। उनकी संख्या बतलाओ। जिस पुण्य प्रसङ्ग से जिसने जो लोक प्राप्त किया हो, उसका भी वर्णन करो।

मातलि ने कहा—राजन्! देवताओं के लोक भावमय हैं। भावों के अनेक रूप दिखायी देते हैं; अतः भावात्मक जगत् की संख्या करोड़ों तक पहुँच जाती है। परन्तु पुण्यात्माओं के लिए उनमें से अट्ठाईस लोक ही प्राप्य हैं, जो एक दूसरे के

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऊपर स्थित हैं और अत्यन्त विशाल हैं। जो भगवान् शंकर को नमस्कार करते हैं, उन्हें शिव लोक का विमान प्राप्त होता है। जो प्रसङ्गवश भी शिव का स्मरण या नाम-कीर्तन अथवा साष्टांग प्रणाम कर लेता है, उसे अनुपम सुख की प्राप्ति होती है, उनके विषय में तो कहना ही क्या है। जो ध्यान के द्वारा भगवान् विष्णु का चिन्तन करते हैं और सदा उन्हीं में मन लगाये रहते हैं, वे उन्हीं के परम पद को प्राप्त होते हैं। शास्त्रों में कहा है—

शैवं च वैष्णवं लोकमेकरूपं नरोत्तम।
द्वयोश्चाप्यन्तरं नास्ति एक रूपं महात्मनोः॥
शिवाय विष्णुरूपाय विष्णवे शिवरूपिणे।
शिवस्य हृदये विष्णुर्विष्णोश्च हृदये शिवः॥
एकमूर्तिस्त्रयो देवा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः।
त्रयाणामन्तरं नास्ति गुणभेदाः प्रकीर्तिताः॥
(पद्मपुराण अध्याय ७१।१८-२०)

'नरश्रेष्ठ! श्री शिव और भगवान् श्रीविष्णु के लोक एक-से ही हैं, उन दोनों में कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि उन दोनों महात्माओं—श्री शिव तथा विष्णु का स्वरूप भी एक ही है। श्री विष्णुरूपधारी शिव और श्री शिवरूपधारी विष्णु को नमस्कार है। श्री शिव के हृदय में विष्णु और श्रीविष्णु के हृदय में भगवान् शिव विराजमान हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव ये तीनों देवता एक रूप ही हैं। इन तीनों के स्वरूप में कोई अन्तर नहीं है, केवल गुणों का भेद बतलाया गया है।'

राजेन्द्र! आप श्री शिव के भक्त तथा भगवान् विष्णु के अनुरागी हैं, अतः आप पर ब्रह्मा, विष्णु और शिव—तीनों देवता प्रसन्न हैं। मानद! मैं इन्द्र की आज्ञा से इस समय आपके पास आया हूँ। अतः पहले इन्द्र लोक में चलिये; उसके बाद क्रमशः ब्रह्मलोक, शिवलोक तथा विष्णुलोक को जाइयेगा। वे लोक दाह और प्रलय से रहित हैं।

पिप्पल ने पूछा—ब्रह्मन्! मातलि की बात सुनकर नहुष पुत्र राजा ययाति ने क्या किया? इसका विस्तार से वर्णन कीजिये।

सुकर्मा बोले—विप्रवर! सुनिये, उस समय सम्पूर्ण धर्मात्माओं में श्रेष्ठ नृपवर ययाति ने मातलि से इस प्रकार कहा—देवदूत! तुमने स्वर्ग का सारा गुण-माहात्म्य मुझे पहले ही बतला दिया है। अतः अब मैं शरीर छोड़कर स्वर्गलोक में नहीं जाऊँगा। देवाधिदेव इन्द्र से तुम यही जाकर कह देना। भगवान् हृषीकेश के नामों का उच्चारण ही सर्वोत्तम धर्म है। मैं प्रतिदिन इसी रसायन का सेवन करता हूँ। इससे मेरे रोग, दोष और सब पापादि नष्ट हो गये हैं। कहा भी है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विद्यमाने हि संसारे कृष्णनाम्निमहौषधे ।
मानवा मरणं यान्ति पापव्याधि प्रपीडिताः ।।
न पिबन्ति महामूढ़ाः कृष्णनामरसायनम् ।।

(पद्मपुराण अध्या. ७२।१८)

'संसार में श्रीकृष्ण का नाम सबसे बड़ी औषध है। इसके रहते हुए भी मनुष्य पाप और व्याधियों से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं—यह कितने आश्चर्य की बात है। लोग कितने बड़े मूर्ख हैं कि श्रीकृष्ण नाम का रसायन नहीं पीते।'

भगवान् की पूजा-ध्यान, नियम, सत्य-भाषण तथा दान से शरीर की शुद्धि होती है। इससे रोग और दोष नष्ट हो जाते हैं। तदनन्तर भगवान् के प्रसाद से मनुष्य शुद्ध हो जाता है। इसलिये में अब स्वर्गलोक को नहीं चलूँगा। अपने तप से, भाव से और धर्माचरण के द्वारा भगवत्-कृपा से इस पृथ्वी को ही स्वर्ग बनाऊँगा। यह जानकर तुम यहाँ से जाओ और सारी बातें इन्द्र से कह सुनाओ।

राजा ययाति की यह बात सुनकर मातलि चले गये। उन्होंने इन्द्र से सब बातें निवेदन कीं उन्हें सुनकर इन्द्र पुनः राजा को स्वर्ग में लाने के विषय में विचार करने लगे।

पिप्पल ने पूछा— ब्रह्मन् ! इन्द्र के दूत महाभाग मातलि के चले जाने पर धर्मात्मा ययाति ने कौन-सा कार्य किया ?

सुकर्मा बोले—विप्रवर ! देवराज के दूत मातलि जब चले गये तब राजा ययाति ने मन-ही-मन कुछ विचार किया और तुरन्त ही प्रधान-प्रधान दूतों को बुलाकर उन्हें धर्म और अर्थ से युक्त उत्तम आदेश दिया—'दूतों ! तुम लोग मेरी आज्ञा मान कर अपने और दूसरे देशों में जाओ; तुम्हारे मुख से वहाँ के सब लोग धर्मयुक्त बात सुनें और सुनकर उसका पालन करें। जगत् के मनुष्य परम पवित्र और अमृत के समान सुखदायी भगवत्-सम्बन्धी भावों द्वारा उत्तम मार्ग का आश्रय लें। सदा तत्पर होकर शुभ कर्मों का अनुष्ठान, भगवान् का ध्यान और तपस्या करें। सब लोग विषयों का परित्याग करके यज्ञ और दान के द्वारा एकमात्र मधुसूदन का पूजन करें। सर्वत्र सूखे और गीले में, आकाश और पृथ्वी पर तथा चराचर प्राणियों में केवल श्रीहरि का दर्शन करें। जो मानव लोभ या मोहवश लोक में मेरी इस आज्ञा का पालन नहीं करेगा, उसे निश्चय ही कठोर दण्ड दिया जायगा। मेरी दृष्टि में वह चोर की भांति निकृष्ट समझा जायगा।

राजा के ये वचन सुनकर दूतों का हृदय प्रसन्न हो गया। वे समूची पृथ्वी पर घूम-घूम कर समस्त प्रजा को महाराज का आदेश सुनाने लगे—ब्राह्मणादि चारों वर्णों के मनुष्यो ! राजा ययाति ने संसार में परम पवित्र अमृत ला दिया

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है, आप सब लोग उसका पान करें। उस अमृत का नाम है पुण्यमय वैष्णव धर्म। वह सब दोषों से रहित और उत्तम परिणाम का जनक है। भगवान् केशव सबका क्लेश हरने वाले, सर्वश्रेष्ठ, आनन्दस्वरूप और परमार्थ-तत्व हैं। उनका नाममय अमृत सब दोषों को दूर करने वाला है। महाराज ययाति ने उस अमृत को यहीं सुलभ कर दिया है। संसार के लोग इच्छानुसार उसका पान करें। भगवान् विष्णु की नाभि से कमल प्रकट हुआ है! उनके नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं। वे जगत् के आधारभूत और महेश्वर हैं। पापों का नाश करके आनन्द प्रदान करते हैं। दानवों और दैत्यों का संहार करने वाले हैं। यज्ञ उनके अङ्ग स्वरूप हैं, उनके हाथ में सुदर्शन चक्र शोभा पाता है। वे पुण्य की निधि और सुख रूप हैं उनके स्वरूप का कहीं अन्त नहीं है। सम्पूर्ण विश्व उनके हृदय में निवास करता है। वे निर्मल, सबको आराम देने वाले 'राम' नाम से विख्यात, सब में रमण करने वाले, असुरों-दैत्यों के शत्रु, आदित्यस्वरूप, अन्धकार के नाशक, मनरूपी कमलों के लिये चाँदनीरूप, लक्ष्मी के निवास स्थान, सगुण और देवेश्वर हैं। उनका नामामृत सब दोषों को दूर करने वाला है। यह नामामृत-स्तोत्र दोषहारी और उत्तम पुण्य का जनक है। लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु में भक्ति रखने वाला जो महात्मा पुरुष प्रतिदिन प्रातःकाल नियमपूर्वक पाठ करता है, वह मुक्त हो जाता है।

सुकर्मा ने इसके पश्चात् फिर कहा—राजा ययाति के दूत सम्पूर्ण देशों, द्वीपों, नगरों और गाँवों में कहते फिरते थे—'लोगो! महाराज की आज्ञा सुनो, तुम लोग पूरा जोर लगाकर सर्वतोभावेन भगवान् विष्णु की पूजा करो। दान, यज्ञ, शुभकर्म, धर्म और पूजन आदि के द्वारा भगवान् मधुसूदन की आराधना करते हुए मन की सम्पूर्ण वृत्तियों से उन्हीं का ध्यान-चिन्तन करो।' इस प्रकार राजा के उत्तम आदेश को, जो शुभ पुण्य उत्पन्न करने वाला था, भूतल निवासी सभी लोगों ने श्रवण किया। उसी समय से सम्पूर्ण मनुष्य एकमात्र भगवान् मुरारी का ध्यान, गुणगान, जप और तप करने लगे। वेदोक्त सूक्तों और मन्त्रों द्वारा, जो कानों को पवित्र करने वाले तथा अमृत के समान मधुर थे, श्रीकेशव का यजन करने लगे। उनका चित्त सदा भगवान् में ही लगा रहता था। वे समस्त विषयों और दोषों का परित्याग करके व्रत, उपवास, नियम और दान के द्वारा भक्तिपूर्वक जगन्निवास श्रीविष्णु का पूजन करते थे। राजा का भगवदाराधन सम्बन्धी आदेश भूमण्डल पर प्रवर्तित हो गया। सब लोग वैष्णव प्रभाव के कारण भगवान् का यजन करने लगे। यज्ञ विधि को जानने वाले विद्वान् नाम और कर्मों के द्वारा श्रीविष्णु का यजन करते और उन्हीं के ध्यान में संलग्न रहते थे। उनका सारा उद्योग भगवान् के लिये ही होता था। वे विष्णु पूजा में निरन्तर लगे रहते थे। जहाँ तक यह सारा भूमण्डल है और जहाँ तक प्रचण्ड किरणों वाले भगवान्

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सूर्य तपते हैं, वहाँ तक के समस्त मनुष्य भगवद्भक्त हो गये। श्रीविष्णु के प्रभाव से उनका पूजन, स्तवन और नाम-कीर्तन करने से सबके शोक दूर हो गये। सभी पुण्यात्मा और तपस्वी बन गये। किसी को रोग नहीं सताता था। सब-के-सब दोष और रोष से शून्य तथा समस्त ऐश्वर्यों से सम्पन्न हो गये थे।

महाभाग! उन तीनों के घरों के दरवाजों पर सदा ही पुण्यमय कल्पवृक्ष और समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली गौएँ रहती थीं। उनके घरों में चिन्तामणि नाम की मणि थी, जो परम पवित्र और सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने वाली मानी गई है। भगवान् विष्णु की कृपा से पृथ्वी के समस्त मानव सब प्रकार के दोषों से रहित हो गये थे। पुत्र तथा पौत्र उनकी शोभा बढ़ाते थे। वे मङ्गल से युक्त, परम पुण्यात्मा, दानी, ज्ञानी और ध्यान परायण थे। धर्म के ज्ञाता महाराज ययाति के शासनकाल में दुर्भिक्ष और व्याधियों का भय नहीं था। मनुष्यों की अकाल-मृत्यु नहीं होती थीं। सब लोग विष्णु सम्बन्धी व्रतों का पालन करने वाले और वैष्णव थे। भगवान् का ही ध्यान और उन्हीं के नामों का जप उनकी दिनचर्या का अङ्ग बनगया था। वे सब लोग भाव-भक्ति के साथ भगवान् की आराधना में तत्पर रहते थे। द्विजश्रेष्ठ! उस समय सब लोगों के घरों में तुलसी के वृक्ष और भगवान् के मन्दिर शोभा पाते थे। सबके घर साफ-सुथरे और चमकीले थे तथा उत्तम गुणों के कारण दिव्य दिखाई देते थे। सर्वत्र वैष्णव भाव छा रहा था। नाना प्रकार के माङ्गलिक उत्सवों का दर्शन होता था। विप्रवर! भूलोक में सदा शङ्खों की ध्वनियाँ समस्त दोषों और पापों का विनाश करने वाली होती थीं। स्त्रियों ने अपने-अपने घर के दरवाजे पर शङ्ख, स्वस्तिक और पद्म की आकृतियाँ बना रखी थीं। सब लोग केशव का गुणगान करते थे। कोई 'हरि' और 'मुरारी' का उच्चारण करता तो कोई 'श्रीश', 'अच्युत', तथा 'माधव' का नाम लेते थे। कितने ही 'श्रीनरसिंह', 'कमलनयन', 'गोविन्द', 'कमलापति', 'कृष्ण' और 'राम'-नाम की रट लगाते हुए भगवान् की शरण जाते, मन्त्रों द्वारा उनका जप करते तथा पूजन भी करते थे। सब-के-सब वैष्णव धर्म में रत वे, अतः विष्णु के ध्यान में मग्न रहकर उन्हीं को दण्डवत प्रणाम किया करते थे।

कृष्ण, विष्णु, हरि, राम, मुकुन्द, मधुसूदन, नारायण, हृषीकेश, नृसिंह, अच्युत, केशव, पद्मनाभ, वासुदेव, वामन, वाराह, कमठ, मत्स्य, कपिल, सुराधिप, विश्वेश, विश्वरूप, अनन्त, अनघ, शुचि, पुरुष, पुष्कराक्ष, श्रीधर, श्रीपति, श्रीद, श्रीनिवास, सुमोक्ष, मोक्षद और प्रभु—इन नामों का उच्चारण करते हुए पृथ्वी के समस्त मानव-बाल, वृद्ध और कुमार भी भगवान् का भजन करते थे। घर के काम-धन्धों में लगी हुई स्त्रियाँ सदा भगवान् श्रीहरि को प्रणाम करतीं और

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बैठते-सोते-जागते-चलते, ध्यान लगाते तथा ज्ञान प्राप्त करते समय भी वे लक्ष्मी-पति का ही स्मरण करती रहती थीं। खेल-कूद में लगे हुए बालक गोविन्द को मस्तक झुकाते और दिन-रात मधुर हरि नाम का ही कीर्तन करते रहते थे। द्विजश्रेष्ठ! सर्वत्र भगवान् विष्णु के नामों की ध्वनि सुनाई पड़ती थी। भूतल के समस्त मानव वैष्णवोचित भाव से रहा करते थे। महलों और देव मन्दिरों की ऊपरी चोटियों पर जो कलश लगे हुए थे, उन कलशों पर सूर्यमण्डल के समान चक्र शोभा पाते थे। पृथ्वी पर सर्वज्ञ श्रीकृष्ण का भाव दृष्टिगोचर होता था। यह भूतल विष्णुलोक की समानता को पहुँच गया था। वैकुण्ठ में वैष्णव लोग जैसे विष्णु का उच्चारण करते हैं, उसी प्रकार इस पृथ्वी पर मनुष्य कृष्ण-नाम का कीर्तन करते थे। भूतल और वैकुण्ठ दोनों लोकों का एक ही भाव दिखाई देता था। वृद्धावस्था और रोग होने का किसी को भय नहीं रहा था; क्योंकि सब ही मनुष्य अजर-अमर हो गये थे। भूलोक में दान और भोग का अधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता था। प्रायः सब मनुष्य द्विजमात्र वेदों के विद्वान और ज्ञान परायण थे। सब यज्ञ और दान में लगे रहते थे, सब में दया का भाव था। सभी मनुष्य परोपकारी, शुभ विचार सम्पन्न और धर्मनिष्ठ थे। महाराज ययाति के उपदेश से भूमण्डल के समस्त मानव वैष्णवधर्मरत होकर अत्यन्त आनन्दमग्न गये थे।

एक दिन राजा ययाति अपना काल (समय) नजदीक जानकर सोचने लगे—'मत्स्य पानी के भीतर रहता है, किन्तु वह भी जाल में बँध जाता है। स्वर्ग में या पृथ्वी पर जो स्थावर प्राणी हैं, उन सब पर काल का प्रभाव है। एकमात्र काल ही इस जगत् के रूप में उपलब्ध होता है। कहा भी हैं—

न मन्त्रा न तपो दानं न मित्राणि न बान्धवाः।
शक्नुवन्ति परित्रातुं नरं काल प्रपीड़ितम्॥
त्रयः कालकृताः पाशाः शक्यन्ते न निवर्तितुम्।
विवाहो जन्ममरणं यथा यत्र च येन च॥

(पद्मपुराण भूमि खण्ड ८१।३३-३४)

'काल से पीड़ित मनुष्य को मन्त्र. तप, दान, मित्र और बन्धु-बान्धव—कोई भी नहीं बचा सकते। विवाह, जन्म और मृत्यु—ये काल के रचे हुए तीन बन्धन हैं। ये जहाँ जैसे और जिस हेतु से होने को होते हैं, होकर ही रहते हैं, उन्हें कोई मिटा नहीं सकता।'

उपद्रव, आघातदोष, सर्प और व्याधियाँ—ये सब कर्म से प्रेरित होकर ही मनुष्य को प्राप्त होते है। कहा भी है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पञ्चैतानि विसृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः ।
आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव ।।
(पद्म पुराण भूमि ख. अ ८१।४१)

आयु, कर्म, धन, विद्या और मृत्यु—ये पाँच बातें जीव के गर्भ में रहते समय ही रच दी जाती हैं।

जीव विभिन्न योनियों में कैसे जन्म ग्रहण करता है, इसके विषय में लिखा है—

देवत्वमथ मानुष्यं पशुत्वं पक्षिता तथा ।
तिर्यक्त्वं स्थावरत्वं च प्राप्यते वै स्वकर्मभिः ।।
(पद्मपुराण भूमि ख. अ. ८१।४३)

'जीव को देवत्व, मनुष्यत्व, पशु-पक्षी आदि तिर्यग्योनियाँ और स्थावर योनि—ये सब कुछ अपने-अपने कर्मानुसार ही प्राप्त होते हैं।'

अनुष्य जैसा करता है, वैसा भोगता है, उसे अपने किये हुए को ही सदा भोगना पड़ता है। वह अपना ही बनाया हुआ दुःख और अपना ही बनाया हुआ सुख भोगता है। जो लोग अपने धन और बुद्धि से किसी वस्तु को अन्यथा करने की युक्ति रखते हैं, वे भी अपने उपार्जित सुख-दुःखों का उपभोग करते हैं। जैसे बछड़ा हजारों गौओं के बीच में खड़ी होने पर भी अपनी माता को पहचान कर उसके पास पहुँच जाता है, उसी प्रकार पूर्व जन्म के किये हुए शुभाशुभ कर्म, कर्ता का अनुसरण करते हैं। पहले का किया हुआ कर्म, कर्ता के सोने पर उसके साथ ही सोता है; उसके खड़े होने पर खड़ा होता है और चलने पर पीछे-पीछे चलता है। तात्पर्य यह है कि कर्म छाया की भाँति कर्ता के साथ लगा रहता है। जैसे छाया और धूप सदा एक-दूसरे से सम्बद्ध होते हैं, उसी प्रकार कर्म और कर्ता का भी परस्पर सम्बन्ध है। शस्त्र, अग्नि, विष आदि जो बचाने योग्य वस्तुएँ हैं, उनको भी देव ही बचाता है। जो वास्तव में अरक्षित वस्तु है, उसकी देव ही रक्षा करता है। देव ने जिसका नाश कर दिया हो, उसकी रक्षा नहीं की जा सकी। इस प्रकार के सोच-विचार में पड़े हुए राजा ययाति ने सबके क्लेश दूर करने वाले भगवान् मधुसूदन का ध्यान और नमस्कार पूर्वक स्तवन किया तथा कातर भाव से कहा—लक्ष्मीपते ! मैं आपकी शरण में आया हूँ, आप मेरा उद्धार कीजिये। इस प्रकार के विचार और लक्ष्मीपति भगवान् की प्रार्थना करते हुए राजा ययाति को उनकी रानी अश्रुबिन्दुमति देख रही थी।

रानी अश्रुबिन्दुमती बोली—राजन ! अन्यान्य प्राकृत मनुष्यों की भाँति आप दुःखपूर्ण चिन्ता कैसे कर रहे हैं ?

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राजा ययाति बोले—देवी ! मुझे जिस बात की चिन्ता हुई है, उसे बतलाता हूँ; सुनो—मेरे स्वर्ग चले जाने पर सारी प्रजा दीन हो जायगी।

ऐसा कह कर राजा ने अपने उत्तम पुत्र पुरु को, जो सब धर्मों के ज्ञाता और परम बुद्धिमान थे, बुलाया और कहा—इस राज्य का यह खजाना, सेना, अमात्य, मंत्री आदि, सवारियों सहित यह राज्य तथा समुद्र सहित समूची पृथ्वी को भोगो। मैंने यह सब तुम्हें ही दे दिया है। दुष्टों को दण्ड देना और साधु-सज्जन पुरुषों की रक्षा करना तुम्हारा कर्त्तव्य है।

तात ! तुम्हें धर्मशास्त्र को प्रमाण मानकर उसी के अनुसार सब कार्य करना चाहिये। महाभाग ! शास्त्रीय विधि के अनुसार भक्तिपूर्वक ब्राह्मणों का पूजन करना, क्योंकि वे तीनों लोकों में पूजनीय हैं। पाँचवे-सातवें दिन खजाने की देख-भाल करते रहना, सेवकों को धन और भोजन आदि से प्रसन्न करके सदा इनका आदर करना। गुप्तचरों को नियुक्त करके राज्य के प्रत्येक अङ्ग पर दृष्टि रखना, सदा दान देते रहना, शत्रु पर अनुराग या विश्वास नहीं रखना. विद्वान पुरुषों के द्वारा सदा अपनी रक्षा का प्रबन्ध रखना। बेटा ! अपने मन को काबू में रखना, कभी शिकार खेलने के लिये न जाना। स्त्री, खजाना, सेना और शत्रु पर कभी विश्वास न करना। सुयोग्य पात्रों और सब प्रकार के बलों का संग्रह करना। यज्ञों के द्वारा भगवान् ऋषिकेश का पूजन करना और सदा पुण्यात्मा बने रहना। प्रजा को जिस वस्तु की इच्छा हो, वह सब उन्हें प्रतिदिन देते रहना। बेटा, तुम प्रजा को सुख पहुँचाओ, प्रजा का पालन-पोषण करो। पराये धन और परायी स्त्रियों के प्रति कभी दूषित विचार मन में न लाना। वेद और शास्त्रों का निरन्तर चिन्तन करना और सदा अस्त्र शस्त्रों के अभ्यास में लगे रहना। हाथी और रथ, घोड़ा, यान (सवारी) हाँकने का अभ्यास बढ़ाते रहना।

पुत्र को ऐसा आदेश देकर राजा ने आशीर्वाद के द्वारा उसे प्रसन्न किया और अपने हाथ से राजसिंहासन पर बैठाया। समस्त प्रजा को बुलाकर और बड़े हर्ष में भर कर यह वचन कहे—'सज्जनो ! मैं अपनी पत्नी सहित पहले इन्द्रलोक में जाता हूँ, फिर क्रमशः ब्रह्मलोक और शिवलोक में जाऊंगा। इसके बाद समस्त लोकों के पाप दूर करने वाले तथा जीवों को सद्गति प्रदान करने वाले विष्णुधाम को जाऊँगा—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—मेरी समस्त प्रजा को कुटुम्ब सहित यहीं सुखपूर्वक रहना चाहिए, यही मेरी आज्ञा है। आज से महाबाहु पुरु आप लोगों के रक्षक है। इनका स्वभाव धीर है, मैंने इन्हें शासन का अधिकार देकर राजा के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया है।

महाराज के यों कहने पर प्रजाजन ने कहा—नृपश्रेष्ठ ! सम्पूर्ण वेदों में धर्म का ही श्रवण होता है। पुराणों में भी धर्म की ही व्याख्या की गयी है;

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किन्तु पूर्वकाल में किसी ने धर्म का साक्षात् दर्शन नहीं किया। केवल हम लोगों ने ही चन्द्रवंश में राजा नहुष के घर उत्पन्न हुए आपके रूप में उस दशाङ्ग धर्म का साक्षात्कार किया है। महाराज ! आप सत्यप्रिय-ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न, पुण्य की महान् राशि, गुणों के आधार तथा सत्य के ज्ञाता हैं। सत्य का पालन करने वाले महान् ओजस्वी पुरुष परम धर्म का अनुष्ठान करते हैं। आप से बढ़ कर दूसरा कोई पुरुष हमारे देखने में नहीं आया है। आप जैसे धर्मपालक एवं सत्य-वादी राजा को हम मन, वाणी और शरीर—किसी भी क्रिया द्वारा छोड़ने में असमर्थ हैं। महाराज जब आप ही नहीं रहेंगे तब स्त्री, धन, भोग और जीवन लेकर हम क्या करेंगे। राजेन्द्र ! अब हमें यहाँ रहने की कोई आवश्यकता नहीं है, आपके साथ ही हम भी चलेंगे।

प्रजाजन की बात सुनकर राजा ययाति को बड़ा हर्ष हुआ। वे बोले — आप सब लोग बड़े पुण्यात्मा हैं, मेरे साथ चलें। यों कह कर वे रानी अश्रुविन्दुमति के साथ रथ पर सवार हुए। वह रथ चन्द्रमण्डल के समान जान पड़ता था। सेवकगण हाथ में चँवर और व्यञ्जन लेकर महाराज को हवा कर रहे थे। राजा के मन में किसी प्रकार की पीड़ा नहीं थी। उनके राज्य में ब्राह्मण, क्षत्रिय, तथा शूद्र—सभी वैष्णव थे। इनके सिवा जो अन्त्यज थे, उनके मन में भी भगवान् विष्णु के प्रति भक्ति थी। सभी दिव्यमाला धारण किये तुलसीदलों से शोभा पा रहे थे। सभी भगवान् विष्णु के ध्यान में तत्पर और जप एवं दान में संलग्न रहने वाले थे। सबके सब विष्णु भक्त और पुण्यात्मा थे। जो समय-काल से प्रभावित अपनी पूर्ण वैष्णव भक्ति से पूर्ण हो चुके थे। उन सभी ने महाराज के साथ दिव्यलोकों की यात्रा की। उस समय सबके मन में महान् आनन्द छा रहा था। राजा ययति सबसे पहले इन्द्रलोक में गये। उनके तेज, पुण्य, धर्म और तपोबल से और लोग भी उनके साथ-साथ हो गये। वहाँ पहुँचने पर देवता, गन्धर्व, किन्नर तथा चारणों सहित देवराज इन्द्र उनकी अगवानी करने सामने आये और सम्मान करते हुए बोले—महाभाग ! आपका स्वागत है। आइये, मेरे घर में पधारिये और दिव्य, पावन एवं मनोरम भोगों का उपभोग कीजिये।

राजा ययाति बोले—देवराज ! आपके चरणारविन्दों में प्रणाम करके हम लोग सनातन ब्रह्मलोक में जा रहे हैं।

यह कह कर देवताओं के मुख से अपनी स्तुति सुनते हुए वे ब्रह्मलोक में गये। वहां मुनिवरों के साथ महातेजस्वी ब्रह्माजी ने अर्घ्यादि सुविस्तृत उपचारों के द्वारा उनका अतिथि सत्कार किया और कहा—राजन् ! तुम अपने शुभ कर्मों के फलस्वरूप विष्णुलोक को जाओ। ब्रह्माजी के कहने पर वे पहले शिवलोक में गये; वहाँ भगवान् शङ्कर ने पार्वतीजी के साथ उनका सत्कार किया और इस

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रकार कहा—महाराज ! तुम भगवान् विष्णु के परम भक्त हो, अतः मेरे भी अत्यन्त प्रिय हो। क्योंकि मुझ में और विष्णु में कोई अन्तर नहीं है। जो विष्णु हैं, वही मैं हूँ तथा मुझी को विष्णु समझो। पुण्यात्मा विष्णु भक्तों के लिए भी यह स्थान वैसा ही है। अतः महाराज तुम यहाँ भी इच्छानुसार रह सकते हो।

भगवान् शिव के यों कहने पर श्रीविष्णु के प्रिय भक्त ययाति ने मस्तक झुकाकर उनके चरणों में भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और कहा—भगवान् श्रीमहादेव जी महाराज आपने इस समय जो कुछ भी कहा, सत्य है; आप दोनों में वस्तुतः कोई अन्तर नहीं है। एक ही परमात्मा के स्वरूप की ब्रह्मा, विष्णु और शिव तीन रूपों में अभिव्यक्ति हुई है। तथापि मेरी विष्णुलोक में जाने की इच्छा है, अतः आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ। भगवान् शिव बोले—महाराज ! एवमस्तु, तुम विष्णुलोक को जाओ। उनकी आज्ञा पाकर राजा ने कल्याणमयी भगवती उमा को प्रणाम किया और परम पावन विष्णु भक्तों के साथ वे विष्णु-धाम को चले गये। ऋषि और देवता सब खड़े होकर उनकी स्तुति करने लगे। गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, पुण्यात्मा चारण, साध्य, विद्याधर, उनचास मरुद्गण. आठों वसु, ग्यारहों रुद्र, बारहों आदित्य, लोकपाल तथा समस्त त्रिलोकी चारों ओर उनका गुणगान कर रही थी। महाराज ययाति ने रोग-शोक से रहित अनुपम विष्णुलोक का दर्शन किया। सब प्रकार की शोभा से सम्पन्न सोने के विमान उस लोक की सुषमा बढ़ा रहे थे चारों ओर दिव्य छटा छा रही थी। वह मोक्ष का उत्तम धाम वैष्णवों से शोभा पा रहा था। देवताओं की वहाँ भीड़-सी लगी हुई थी।

नहुषनन्दन ययाति ने सब प्रकार के दाह से रहित उस दिव्य धाम में प्रवेश करके क्लेशहारी भगवान् नारायण का दर्शन किया। भगवान् के ऊपर चँदोवे तने हुए थे, जिनसे उनकी बड़ी शोभा हो रही थी। वे सब प्रकार के आभूषण और पीत वस्त्रों से विभूषित थे। उनके वक्षःस्थल में श्रीवत्स का चिह्न शोभा पा रहा था। सबके महान् आश्रय भगवान् जगन्नाथ लक्ष्मीजी के साथ गरुड़ पर विराजमान थे। वे ही परात्पर परमेश्वर हैं। सम्पूर्ण देवलोकों की गति हैं। परमानन्दमय कैवल्य से सुशोभित हैं। बड़े-बड़े लोक, पुण्यात्मा वैष्णव, देवता तथा गन्धर्व उनकी सेवा में लगे रहते हैं। राजा ययाति ने अपनी पत्नी सहित निकट जाकर गन्धर्वों द्वारा सेवित, देववृन्द से घिरे, दुःख-क्लेशहारी प्रभु नारायण को नमस्कार किया तथा उनके साथ जो अन्य वैष्णव पधारे थे, उन्होंने भी भक्तिपूर्वक भगवान् के दोनों चरण-कमलों में मस्तक झुकाया। परम तेजस्वी राजा को प्रणाम करते देख भगवान् हृषिकेश ने कहा—'महाराज ! मैं तुम से बहुत संतुष्ट हूँ। तुम मेरे भी हो, अतः तुम्हारे मन में यदि कोई दुर्लभ मनोरथ हो तो उसके लिए वर माँगो। मैं उसे निस्सन्देह पूर्ण करूँगा।

CC-0 Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

राजा ययाति बोले—मधुसूदन ! जगत्पते ! देवेश्वर ! यदि आप मुझ पर संतुष्ट हैं तो सदा के लिए मुझे अपना दास बना लीजिये।

भगवान् विष्णु बोले—महाभाग, ऐसा ही होगा। तुम मेरे भक्त हो, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं हैं। राजन् ! तुम अपनी पत्नी के साथ मेरे लोक में सर्वदा निवास करो।

श्री भगवान् की ऐसी आज्ञा पाकर उनकी कृपा से महाराज ययाति परम प्रकाशमान विष्णुलोक में निवास करने लगे।

(पद्मपुराण भूमि खण्ड अध्याय ७१-८४ के आधार से)

स्वर्गापवर्गद्वाराय, नित्यं शुचिषदे नमः।
नमो हिरण्यवीर्याय, चतुर्होत्राय तन्तवे ।।

(श्रीमद्भागवत स्कन्ध ४ अध्याय ४ श्लोक ३७)

आप स्वर्ग एवं मोक्ष के द्वार हैं, नित्य ही शुद्ध आत्मा आपको प्राप्त कर सकते हैं। आप हिरण्यवीर्य हैं तथा चतुर्विध यज्ञ के स्रष्टा हैं, अतः आपको प्रणाम है।

तुलसी का ध्यान-पूजन तथा स्तवन स्तोत्रादि विवेचन

सोपान ७

नारदजी ने पूछा—प्रभो ! तुलसी, भगवान् नारायण की प्रिया हैं, इसलिये परम पवित्र हैं। अतएव वे सम्पूर्ण जगत् के लिये पूजनीया हैं; परन्तु इनकी पूजन का क्या विधान है और इनकी स्तुति के लिये कौन सा स्तोत्र है ? यह मैंने अभी तक सुना नहीं है। मुने ! किस मंत्र से उनकी पूजा होनी चाहिये ? सबसे पहले किसने तुलसी की पूजा की है ? किस कारण से वह आपके लिये भी पूजनीया हो गयी ? अहो ! ये सब बातें आप मुझे बतलाइये।

सूतजी कहते हैं—शौनक ! नारदजी की बात सुनकर भगवान् नारायण का मुख-मण्डल प्रसन्नता से खिल उठा। उन्होंने पापों का ध्वंस करने वाली परम पुण्यमयी प्राचीन कथा कहनी आरम्भ कर दी।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् नारायण ऋषि बोले—मुने ! भगवान् श्रीहरि तुलसी को पाकर उसके और लक्ष्मी के साथ आनन्द करने लगे। उन्होंने तुलसी को भी गौरव तथा सौभाग्य में लक्ष्मी के समान बना दिया। लक्ष्मी और गङ्गा ने तो तुलसी के नवसंगम, सौभाग्य और गौरव को सह लिया, किन्तु सरस्वती क्रोध के कारण यह सब सहन नहीं कर सकी। सरस्वती के द्वारा अपना अपमान होने से तुलसी अन्तर्धान हो गयी। ज्ञानसम्पन्ना देवी तुलसी सिद्ध योगिनी एवं सर्वसिद्धेश्वरी थी। अतः उन्होंने श्रीहरि की आँखों से अपने को सर्वत्र ओझल कर लिया। भगवान् ने उसे न देखकर सरस्वती को समझाया और उससे आज्ञा लेकर तुलसी वन में गये। लक्ष्मीबीज (श्रीं), मायाबीज (ह्रीं), कामबीज (क्लीं) और वाणीबीज (ऐं)—इन बीजों का पूर्व में उच्चारण करके 'वृन्दावनी' इस शब्द के अन्त में (ङे) विभक्ति लगायी और अन्त में वह्निजाया (स्वाहा) का प्रयोग करके 'श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं वृन्दावन्यै स्वाहा' इस दशाक्षर मंत्र का उच्चारण किया। नारद ! यह मंत्रराज कल्पतरु है। जो इस मन्त्र का उच्चारण करके विधिपूर्वक तुलसी की पूजा करता है, उसे निश्चय ही सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। घृत का दीपक, धूप, सिन्दूर, चन्दन, नैवेद्य, और पुष्प आदि उपचारों से तथा स्तोत्र द्वारा भगवान् से सुपूजित होने पर तुलसी को बड़ी प्रसन्नता हुई। अतः वह वृक्ष से तुरंत बाहर निकल आयी और परम प्रसन्न होकर भगवान् श्री हरि के चरण कमलों की शरण में चली गयी। तब भगवान् ने उसे वर दिया—'देवी ! तुम सर्वपूज्या हो जाओ। मैं स्वयं तुम्हें अपने मस्तक तथा वक्षःस्थल पर धारण करूंगा। इतना ही नहीं, सम्पूर्ण देवता तुम्हें अपने मस्तक पर धारण करेंगे।' यह कह उसे साथ ले भगवान् श्रीहरि अपने स्थान पर लौट गये।

भगवान् नारायण ऋषि कहते हैं— मुने ! तुलसी के अन्तर्धान हो जाने पर भगवान् श्रीहरि विरह से आतुर होकर वृन्दावन चले गये थे और वहाँ जाकर उन्होंने तुलसी की पूजा करके इस प्रकार से स्तुति की थी—

श्री भगवानुवाच—

वृन्दारूपाश्च वृक्षाश्च यदैकत्र भवन्ति च।
विदुर्बुधास्तेन वृन्दां मत्प्रियां तां भजाम्यहम् ॥
पुरा बभूव या देवी त्वादौ वृन्दावने वने।
तेन वृन्दावनी ख्याता सौभाग्यां तां भजाम्यहम् ॥
असंख्येषु च विश्वेषु पूजिता या निरन्तरम्।
तेन विश्वपूजिताख्यां जगत्पूज्यां भजाम्यहम् ॥
असंख्यानि च विश्वानि पवित्राणि यया सदा।
तां विश्वपावनीं देवीं विहरेण स्मराम्यहम् ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवा न तुष्टाः पुष्पाणां समूहेन यया विना ।
तां पुष्पसारां शुद्धा च द्रष्टुमिच्छामि शोकतः ।।
विश्वे यत्प्राप्तिमात्रेण भक्तानन्दो भवेद् ध्रुवम् ।
नन्दिनी तेन विख्याता सा प्रीता भवताद्धि मे ।।
यस्या देव्यास्तुला नास्ति विश्वेषु निखिलेषु च ।
तुलसी तेन विख्याता तां यामि शरणं प्रियाम् ।।
कृष्णजीवनरूपा या शश्वत्प्रियतमा सती ।
तेन कृष्णजीवनीति मम रक्षतु जीवनम् ।।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड २२।१८-२६)

श्रीभगवान् बोले—'जब वृन्दा (तुलसी) रूप वृक्ष तथा दूसरे वृक्ष एकत्र होते हैं, तब वृक्ष समुदाय अथवा वन को बुधजन 'वृन्दा' कहते हैं। ऐसी वृन्दा नाम से प्रसिद्ध अपनी प्रिया तुलसी की मैं उपासना करता हूँ। जो देवी प्राचीनकाल में वृन्दावन में प्रकट हुई थी, अतएव जिसे 'वृन्दावनी' कहते हैं, उस सौभाग्यवती देवी की मैं उपासना करता हूँ। जो असंख्य वृक्षों में निरन्तर पूजा प्राप्त करती है, अतः जिसका नाम 'विश्वपूजिता' पड़ा है, उस जगत्पूज्या देवी की मैं उपासना करता हूँ। देवि, जिसने सदा अनन्त विश्वों को पवित्र किया है, उस 'विश्वपावनी' देवी का मैं विरह से आतुर होकर स्मरण करता हूँ। जिसके बिना अन्य पुष्प समूहों के अर्पण करने पर भी देवता प्रसन्न नहीं होते, ऐसी 'पुष्पसारा'—पुष्पों में सारभूता शुद्धस्वरूपिणी तुलसीदेवी का मैं शोक से व्याकुल होकर दर्शन करना चाहता हूँ। संसार में जिसकी प्राप्ति मात्र से भक्त परम आनन्दित हो जाता है, इसलिये 'नन्दिनी' नाम से जिसकी प्रसिद्धि हैं, वह भगवती तुलसी अब मुझ पर प्रसन्न हो जाय। जिस देवी की अखिल विश्व में कहीं तुलना नहीं है, अतएव जो 'तुलसी' कहलाती है, उस अपनी प्रिया की मैं शरण ग्रहण करता हूँ। वह साध्वी तुलसी वृन्दारूप से भगवान् श्रीकृष्ण की जीवन स्वरूपा है और उनकी सदा प्रियतमा होने से 'कृष्णजीवनी' नाम से विख्यात है। वह देवी तुलसी मेरे जीवन की रक्षा करे।'

इस प्रकार स्तुति करके लक्ष्मीकान्त भगवान् श्रीहरि वहीं बैठ गये। इतने में उनके सामने साक्षात् तुलसी प्रकट हो गयी। उस साध्वी ने उनके चरणों में मस्तक झुका दिया। अपमान के कारण उस मानिनी की आंखों से आँसू बह रहे थे, क्योंकि पहले उसे बड़ा सम्मान मिल चुका था। ऐसी प्रिया तुलसी को देखकर प्रियतम भगवान् श्रीहरि ने तुरन्त अपने हृदय में स्थान दिया। साथ ही सरस्वती से आज्ञा लेकर उसे अपने महल में ले गये। उन्होंने शीघ्र ही सरस्वती के साथ तुलसी का प्रेम स्थापित करवाया। साथ ही भगवान् ने तुलसी को वर दिया—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'देवि ! तुम सर्वपूज्या और शिरोधार्या होओ। सब लोग तुम्हारा आदर एवं सम्मान करें।' भगवान् विष्णु के इस प्रकार कहने पर वह देवी परम संतुष्ट हो गयी सरस्वती ने उसे हृदय से लगाया और अपने पास बैठा लिया। नारद ! लक्ष्मी और गङ्गा इन दोनों देवियों ने मन्द मुस्कान के साथ विनयपूर्वक साध्वी तुलसी का हाथ पकड़कर उसे भवन में प्रवेश कराया।

वृन्दा वृन्दावनी विश्वपूजिता विश्वपावनी।
पुष्पसारा नन्दिनी च तुलसी कृष्णजीवनी ।।
एतन्नामाष्टकं चैव स्तोत्रं नामार्थसंयुतम्।
यः पठेत् तां च सम्पूज्य सोऽश्वमेधफलं लभेत् ।।
(ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड २२।३३-३४)

'वृन्दा, वृन्दावनी, विश्वपूजिता, विश्वपावनी, पुष्पसारा, नन्दिनी, तुलसी और कृष्णजीवनी-ये देवी तुलसी के आठ नाम हैं। यह सार्थक नामावली स्तोत्र के रूप में परिणत है। जो पुरुष तुलसी की पूजा करके इस 'नामाष्टक' का पाठ करता है, उसे अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त हो जाता है।'

कार्तिक की पूर्णिमा तिथि को देवी का प्राकट्य हुआ और सर्वप्रथम भगवान् श्रीहरि ने उसकी पूजा सम्पन्न की। जो इस कार्तिकी पूर्णिमा के अवसर पर विश्वपावनी तुलसी की भक्ति भाव से पूजा करता है, वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर भगवान् विष्णु के लोक में चला जाता है। जो कार्तिक महीने में भगवान विष्णु को तुलसी पत्र अर्पण करता है, वह दस हजार गोदान का फल निश्चित रूप से पा जाता है। इस तुलसी नामाष्टक के स्मरण मात्र से संतानहीन पुरुष पुत्रवान बन जाता है। जिसके पत्नी न हो, उसे पत्नी मिल जाती है। तथा बन्धुहीन व्यक्ति बहुत से बान्धवों को प्राप्तकर लेता है। इसके स्मरण से रोगी रोगमुक्त हो जाता है।

नारद ! यह तुलसी-स्तोत्र बतला दिया। अब पूजा विधि सुनो। पहले तुलसी का ध्यान करके बिना आवाहन किये भक्तिपूर्वक तुलसी के वृक्ष में षोडशोपचार से इस देवी की पूजा करना चाहिये।

तुलसीं पुष्पसारां च सतीं पूज्यां मनोहराम्।
कृत्स्नपापेन्धदाहाय ज्वलदग्निशिखोपमाम् ।।
पुष्पेषु तुलनाप्यस्या नासीद् देवीषु वा मुने।
पवित्ररूपा सर्वासु तुलसी सा च कीर्तिता ।।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिरोधार्या च सर्वेषामीप्सितां विश्वपावनीम् ।
जीवन्मुक्तां मुक्तिदां च भजे तां हरिभक्तिदाम् ।।
(ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय २२।४२-४४)

'परम साध्वी तुलसी पुष्पों में सार है। ये पूजनीया तथा मनोहारिणी हैं। सम्पूर्ण पापरूपी इंधन को भस्म करने के लिये ये प्रज्वलित अग्नि की लपट के समान हैं। पुष्पों में अथवा देवियों में किसी से भी इनकी तुलना नहीं हो सकती। इसीलिये उन सब में पवित्ररूपा इन देवी तुलसी को कहा गया। ये सबके द्वारा अपने मस्तक पर धारण करने योग्य हैं। सभी को इन्हें पाने की इच्छा रहती है। विश्व को पवित्र करने वाली ये देवी जीवन्मुक्त हैं। मुक्ति और भगवान् श्रीहरि की भक्ति प्रदान करना इनका स्वभाव है। ऐसी भगवती तुलसी की मैं उपासना करता हूँ।'

विद्वान् पुरुष इस प्रकार ध्यान, पूजन और स्तवन करके देवी तुलसी को प्रणाम करें।

भगवान् विष्णु तथा उनके अवतारों की सेवा-पूजन क्रिया योग का विवेचन

सोपान ८

उद्धवजी ने पूछा—भक्तवत्सल श्रीकृष्ण! जिस क्रिया योग का आश्रय लेकर जो भक्तजन जिस उद्देश्य से आपकी अर्चा-पूजा करते हैं, आप अपने उस आराधनरूप क्रिया योग का वर्णन कीजिये। देवर्षि नारद, भगवान् व्यासदेव और आचार्य बृहस्पति आदि बड़े-बड़े ऋषि-मुनि यह बात बार-बार कहते हैं कि क्रिया योग के द्वारा आपकी आराधना ही मनुष्यों के परम कल्याण की साधना है। यह क्रिया योग पहले-पहल आपके मुखारविन्द से निकला था। आपसे ही ग्रहण करके इसे ब्रह्मा ने अपने पुत्र भृगु आदि को और भगवान् शंकर ने अपनी अर्द्धाङ्गिनी भगवती पार्वतीजी को उपदेश किया था। मर्यादारक्षक प्रभो! यह क्रिया योग ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों और ब्रह्मचारी-गृहस्थ आदि आश्रमों के लिये भी परम कल्याणकारी है। मैं तो ऐसा समझता हूँ कि स्त्री-शूद्रादि के लिये भी यही सबसे श्रेष्ठ साधन-पद्धति है। श्रीवत्सलाञ्छन श्यामसुन्दर! आप शंकर आदि जगदीश्वरों के

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भी ईश्वर हैं और मैं आपके चरणों का प्रेमी भक्त हूँ। आप कृपा करके मुझे यह कर्मबन्धन से मुक्त करने वाली विधि बतलाइये।

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा—उद्धवजी ! कर्मकाण्ड का इतना विस्तार है कि उसकी कोई सीमा नहीं है; इसलिये मैं थोड़े में ही पूर्वापरक्रम से विधिपूर्वक वर्णन करता हूँ। मेरी पूजा की तीन विधियाँ हैं—वैदिक, तान्त्रिक और मिश्रित। इन तीनों में मेरे भक्त को जो भी अपने अनुकूल जान पड़े, उसी विधि से मेरी आराधना करनी चाहिये। पहले अपने अधिकारानुसार शास्त्रोक्त विधि से समय पर यज्ञोपवीत संस्कार के द्वारा संस्कृत होकर द्विजत्व प्राप्त करे. इसकी विधि तुम मुझसे सुनो। भक्तिपूर्वक निष्कपट भाव से अपने पिता एवं गुरु रूप मुझ परमात्मा की पूजा सामग्रियों के द्वारा मूर्ति में, वेदी में, अग्नि में, सूर्य में, जल में, हृदय में अथवा ब्राह्मण में—चाहे किसी में भी आराधना करे। उपासक को चाहिये कि प्रातःकाल दतुवन करके पहले शरीर शुद्धि के लिये स्नान करे और फिर वैदिक और तान्त्रिक दोनों प्रकार के मन्त्रों से मिट्टी और भस्म आदि का लेप करके पुनः स्नान करे। इसके पश्चात् वेदोक्त सन्ध्या-वन्दनादि नित्यकर्म करने चाहियें, इसके बाद मेरी आराधना का ही सुदृढ़ सङ्कल्प करके वैदिक और तान्त्रिक विधियों से कर्म बन्धनों से छुड़ानेवाली मेरी पूजा करे। मेरी मूर्ति आठ प्रकार की होती है—पत्थर की, लकड़ी की, धातु की, मिट्टी और चन्दन आदि की, चित्रमयी, बालुकामयी, मनोमयी और मणिमयी। चल और अचल भेद से दो प्रकार की प्रतिमा ही मुझ भगवान् का मन्दिर है। उद्धवजी ! अचल प्रतिमा के पूजन में प्रतिदिन आवाहन और विसर्जन नहीं करना चाहिये। चल प्रतिमा के सम्बन्ध में विकल्प है, चाहे करे और चाहे न करे। परन्तु बालुकामयी प्रतिमा में तो आवाहन और विसर्जन प्रतिदिन करना ही चाहिये। मिट्टी और चन्दन तथा चित्रमयी प्रतिमाओं को स्नान न करावें, केवल मार्जन कर दें; परन्तु और सबको स्नान कराना चाहिये।

प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पदार्थों से प्रतिमा आदि में मेरी पूजा की जाती है; परन्तु जो निष्काम भक्त हैं, वे अनायास प्राप्त पदार्थों से और भावना मात्र से ही हृदय में मेरी पूजा कर ले। उद्धवजी ! स्नान, वस्त्र, आभूषण आदि तो पाषाण अथवा धातु की प्रतिमा के पूजन में ही उपयोगी हैं। बालुकामयी मूर्ति अथवा मिट्टी की वेदी में पूजा करनी हो तो उसमें मन्त्रों के द्वारा और उसके प्रधान देवताओं की यथा-स्थान पूजा करनी चाहिये तथा अग्नि में पूजा करनी हो तो घृतमिश्रित हवन-सामग्रियों से आहुति देना चाहिये। सूर्य को प्रतीक मानकर की जाने वाली उपासना में मुख्यतः अर्घ्यदान एवं उपस्थान ही प्रिय है और जल में तर्पण आदि से मेरी उपासना करनी चाहिये। जब मुझे कोई भक्त हार्दिक श्रद्धा से जल भी चढ़ाता है, तब मैं उसे बड़े प्रेम से स्वीकार करता हूँ। यदि कोई अभक्त मुझे बहुत-सी सामग्री निवेदन करे, तो भी मैं उससे सन्तुष्ट नहीं होता। जब मैं भक्तिपूर्वक व

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रद्धा से समर्पित जल द्वारा ही प्रसन्न हो जाता हूँ, तब गंध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य आदि वस्तुओं के समर्पण से तो कहना ही क्या है।

उपासक को चाहिये कि पहले पूजा की सामग्री इकट्ठी कर लेवे। फिर सब सम्हाल देख लेवे कि कोई सामग्री गली, सड़ी या दूषित तो नहीं है, किसी में कोई जीव-जन्तु तो नहीं पड़े हुए हैं। यदि किसी प्रकार से कोई सामग्री दोषयुक्त हो तो उसे ठीक करके रखे अथवा दूसरी अच्छी सामग्री लाकर रखे। दूषित हों तो उसका अर्चा-पूजा में प्रयोग नहीं करना चाहिये। पूजा-अर्चना सामग्री उत्तम स्वच्छ सम्हाल कर रखने के पश्चात् फिर इस प्रकार कुश (डाभ) बिछाये कि उसके अगले भाग पूर्व की ओर रहें। तदनन्तर पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके पवित्रता से उन कुशों (डाब) के आसन पर बैठ जाय। यदि प्रतिमा (मूर्ति) अचल हो तो उसके सामने ही बैठना चाहिये। इसके बाद पूजा कार्य आरम्भ करें। ।पहले विधिपूर्वक अङ्गन्यास और करन्यास कर लेवें। इसके पश्चात् मूर्ति में मन्त्रन्यास करे और हाथ से प्रतिमा पर से पूर्वसमर्पित सामग्री को हटाकर उन्हें वस्त्र से पोंछ देवे। इसके बाद जल से भरे हुए कलश और अपने प्रोक्षणपात्र आदि की पूजा करे। प्रोक्षण पात्र के जल से पूजा सामग्री और अपने शरीर का भी प्रोक्षण करे। तदनन्तर पाद्य, अर्घ्य और आचमन के लिये तीन पात्रों में कलश में से जल भर कर रख लेवे और उनमें पूजा विधि के अनुसार डाले। पाद्यपात्र में श्यामक (सावें) के दाने, दूब, कमल, विष्णुकान्ता और चन्दन, तुलसीदल आदि; अर्घ्यपात्र में गन्ध, पुष्प, अक्षत, जौ, कुश, तिल, सरसों और दूब तथा आचमन पात्र में जायफल, लोंग आदि डाले। इसके बाद पूजा करने वाले को चाहिये कि तीनों पात्रों को क्रमशः हृदयमन्त्र, शिरोमन्त्र और शिखामन्त्र से अभिमन्त्रित करके अन्त में गायत्री मन्त्र से तीनों को अभिमन्त्रित करे। इसके बाद प्राणायाम के द्वारा प्राणवायु और भावनाओं द्वारा शरीरस्थ अग्नि के शुद्ध हो जाने पर हृदय कमल में परम सूक्ष्म और श्रेष्ठ दीपक शिखा के समान मेरी जीवन कला का ध्यान करे। बड़े-बड़े सिद्ध, ऋषि-मुनि ॐकार के अकार, उकार, मकार, बिन्दु और नाद—इन पाँच कलाओं के अन्त में उसी जीवनकला का ध्यान करते हैं।

वह जीवन कला आत्मस्वरूपिणी है। जब उसके तेज से सारा अन्तःकरण और शरीर भर जाय, तब मानसिक उपचारों से मन-ही-मन उसकी पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर तन्मय होकर मेरा आवाहन करे और प्रतिमा आदि में स्थापन करे। फिर मन्त्रों के द्वारा अङ्गन्यास करके उसमें मेरी पूजा करे। उद्धवजी! मेरे आसन में धर्म आदि गुणों और विमला शक्तियों की भावना करे। अर्थात् आसन के चारों कोनों में धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्यरूप चार पाये है; अधर्म, अज्ञान अवैराग्य और अनैश्वर्य—ये चार, चारों दिशाओं में डंडे हैं; सत्त्व-रज-तम-रूप तीन पटरियों की बनी हुई पीठ है, उस पर विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

योगा, प्रह्वी, सत्या, ईशाना और अनुग्रहा—ये नौ शक्तियाँ विराजमान हैं। उस आसन पर एक अष्टदल कमल है, उसकी कर्णिका अत्यन्त प्रकाशमान है और पीली-पीली केसरों की छटा निराली ही है। आसन के सम्बन्ध में ऐसी भावना करके पाद्य, आचमनीय और अर्घ्य आदि प्रस्तुत करे। तदन्तर भोग और मोक्ष की सिद्धि के लिये वैदिक और तान्त्रिक विधि से मेरी पूजा करे। सुदर्शन चक्र, पाञ्चजन्य शङ्ख, कौमोदकी गदा, खड्ग, बाण, धनुष, हल, मूसल, इन आठ आयुधों की पूजा आठ दिशाओं में करे और कौस्तुभमणि, वैजयन्ती माला तथा श्रीवत्स चिह्न की वक्षःस्थल पर यथास्थान पूजा करे। नन्द, सुनन्द, प्रचण्ड, चण्ड, महाबल, बल, कुमुद, कुमुदेक्षण—इन आठ पार्षदों की आठ दिशाओं में, गरुड़ की सामने; दुर्गा, विनायक, व्यास और विष्वक्सेन की चारों कोनों में स्थापना करके पूजन करे। बायीं ओर गुरु की और यथाक्रम पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रादि आठ लोकपालों की स्थापना करके प्रोक्षण, अर्घ्यदान आदि क्रम से उनकी पूजा करनी चाहिये।

प्रिय उद्धव! यदि सामर्थ्य हो तो प्रतिदिन चन्दन, खस, कपूर, केसर और अरगजा आदि सुगन्धित वस्तुओं द्वारा सुवासित जल से मुझे स्नान कराये और उन समय 'सुवर्ण धर्म' इत्यादि स्वर्णघर्मानु वाक, 'जितं ते पुण्डरीकाक्ष' इत्यादि महापुरुष विद्या, 'सहस्रशीर्षा पुरुषः' इत्यादि पुरुषसूक्त और 'इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्त' इत्यादि मन्त्रोक्त राजनादि सामगायन का पाठ भी करता रहे। मेरा भक्त वस्त्र, यज्ञोपवीत, आभूषण, पत्र, माला, गन्ध और चन्दनादि से प्रेमपूर्वक यथावत् मेरा श्रङ्गार करे। उपासक श्रद्धा के साथ मुझे पाद्य, आचमन, चन्दन, पुष्प, अक्षत, धूप, दीप आदि सामग्रियाँ समर्पित करे। यदि हो सके तो गुड़, खीर, घृत, पूड़ी, पूए, लड्डू, हलुआ, दही और दाल आदि विविध व्यञ्जनों का नैवेद्य लगावे। भगवान् के विग्रह (मूर्ति) को दतुवन कराये, उबटन लगाये, पञ्चामृत आदि से स्नान कराये, सुगन्धित पदार्थों का लेप करे, दर्पण दिखाये, भोग लगाये और शक्ति हो तो प्रतिदिन अथवा पर्वों के अवसर पर नाचने-गाने, बाजा-बजाने आदि का भी प्रबन्ध करे।

उद्धवजी! तदन्तर पूजा के बाद शास्त्रोक्त विधि से बने हुए कुण्ड में अग्नि की स्थापना करे। वह कुण्ड मेखला, गर्त और वेदी से शोभायमान हो। उसमें हाथ की हवा से अग्नि प्रज्वलित करके उसका परिसमूहन करे अर्थात् उसे एकत्र कर दे। वेदी के चारों कुशकण्डिका करके अर्थात् चारों ओर बीस-बीस कुश बिछाकर मन्त्र पढ़ता हुआ उन पर जल छिड़के। इसके पश्चात् विधिपूर्वक समिधाओं का आधानरूप अन्वाधान कर्म करके अग्नि के उत्तर भाग में होमोपयोगी सामग्री रखे और प्रोक्षणी पात्र के जल से प्रोक्षण करे। तदनन्तर अग्नि में मेरा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस प्रकार ध्यान करे—'मेरी मूर्ति तपाये हुए सोने के समान दम-दम दमक रही है। रोम-रोम से शान्ति की वर्षा हो रही है। लम्बी और विशाल चार भुजाएँ शोभायमान हैं। उनमें शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म विराजमान हैं। कमल केसर के समान पीला-पीला वस्त्र फहरा रहा है। सिर पर मुकट, कलाइयों में कंगन, कमर में करधनी बाँहों में बाजूबंद झिलमिला रहे हैं। वक्षःस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न है। गले में कौस्तुभमणि जगमगा रही है। घुटनों तक वनमाला लटक रही है।' अग्नि में मेरी इस मूर्ति का ध्यान करके पूजा करनी चाहिये। इसके बाद सूखी समिधाओं को घृत में डुबोकर आहुति दे और आज्य भाग और आघार नामक दो-दो आहुतियों से भी हवन करे। तदनन्तर घी में भिगोकर अन्य हवन-सामग्रियों से आहुति दे। इसके बाद अपने इष्ट मन्त्र से अथवा 'ॐनमो नारायणाय' इस अष्टाक्षर मन्त्र से तथा पुरुषसूक्त के सोलह मन्त्रों से हवन करे। बुद्धिमान् पुरुष को चाहिये कि धर्मादि देवताओं के लिये भी विधिपूर्वक मन्त्रों से हवन करे और स्विष्टकृत् आहुति दे।

इस प्रकार अग्नि में अन्तर्यामीरूप से स्थित भगवान् की पूजा करके उन्हें नमस्कार करे और नन्द-सुनन्द आदि पार्षदों को आठों दिशाओं में हवन कर्माङ्ग बलि दे। तदनन्तर प्रतिमा के सम्मुख बैठकर परब्रह्मस्वरूप भगवान् नारायण का स्मरण करे और भगवत्स्वरूप मूलमन्त्र 'ॐनमो नारायणाय' का जप करे। इसके बाद भगवान् को आचमन करावे और उनका प्रसाद विष्वक्सेन को निवेदन करे। इसके पश्चात् अपने इष्टदेव की सेवा में सुगन्धित ताम्बूल आदि मुखवास उपस्थित करे तथा पुष्पाञ्जलि समर्पित करे। मेरी लीलाओं का गायन करे, उनका वर्णन करे। यह सब करते समय प्रेमोन्मत्त होकर नाचने लगे। मेरी लीला-कथाएँ स्वयं सुने और दूसरों को सुनावे। कुछ समय तक संसार और उसके रगड़ों-झगड़ों को भूलकर मुझ में ही तन्मय हो जाय।

स्तवैरुच्चावचैः स्तोत्रैः पौराणैः प्राकृतैरपि।
स्तुत्वा प्रसीद भगवन्निति वन्देत दण्डवत्॥

(श्रीमद्भागवत एकादशस्कन्ध अध्याय २७ श्लोक ४५)

प्राचीन ऋषियों के द्वारा अथवा प्राकृत भक्तों के द्वारा बनाये हुए छोटे-बड़े स्तव और स्तोत्रों से मेरी स्तुति करके प्रार्थना करे—भगवन्! आप मुझ पर प्रसन्न हों। मुझे अपने कृपाप्रसाद से सरोबार कर दें।' तदनन्तर दण्डवत्--प्रणाम करे।

अपना सिर मेरे चरणों में रख दे और अपने दोनों हाथों से—दायें से दाहिना और बायें से बायाँ चरण पकड़कर कहे—'भगवन्! इस संसार-सागर में मैं डूब रहा हूँ। मृत्युरूप मगर मेरा पीछा कर रहा है। मैं डरकर आपकी शरण आया

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हूँ। प्रभो ! आप मेरी रक्षा कीजिये।' इस प्रकार स्तुति करके मुझे समर्पण की हुई माला आदर के साथ अपने सिर पर रखे और उसे मेरा दिया हुआ प्रसाद समझे। यदि विसर्जन करना हो तो ऐसी भावना करनी चाहिये कि प्रतिमा में से एक दिव्य ज्योति निकली है और वह मेरी हृदयस्थ ज्योति में लीन हो गयी है। बस, यही विसर्जन है। उद्धवजी ! प्रतिमा आदि में जब जहाँ श्रद्धा हो तब, तहाँ ही मेरी पूजा करनी चाहिये क्योंकि मैं सर्वात्मा हूँ और समस्त प्राणियों में तथा अपने हृदय में स्थित हूँ।

उद्धवजी ! जो मनुष्य इस प्रकार वैदिक, तान्त्रिक क्रियायोग के द्वारा मेरी पूजा करता है, वह इस लोक और परलोक में मुझसे अभीष्ट सिद्धि प्राप्त करता है। यदि शक्ति हो तो उपासक सुन्दर और सुदृढ़ मंदिर बनवाये और उसमें मेरी प्रतिमा स्थापित करे। सुन्दर-सुन्दर फूलों के बगीचे लगवा दे; नित्य की पूजा, पर्व की यात्रा और बड़े-बड़े उत्सवों की व्यवस्था कर दे। जो मनुष्य पर्वों के उत्सव और प्रतिदिन की पूजा लगातार चलाने के लिये खेत, बाजार, नगर अथवा गाँव मेरे नाम पर समर्पित कर देते हैं, उन्हें मेरे समान ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। मेरी मूर्ति की प्रतिष्ठा करने से पृथ्वी का एकच्छत्र राज्य, मंदिर-निर्माण से त्रिलोकी राज्य, पूजा आदि की व्यवस्था करने से ब्रह्मलोक और तीनों प्रकार की व्यवस्था करने वालों को मेरी समानता प्राप्ति होती है। जो निष्काम भाव से मेरी पूजा करता है और उस निरपेक्ष भक्तियोग के द्वारा वह स्वयं मुझे प्राप्त कर लेता है।

यः स्वदत्तां परैर्दत्तां हरेत सुरविप्रयोः।
वृत्तिं स जायते विड्भुग् वर्षाणामयुतायुतम् ॥
(श्रीमद्भागवत एकादश स्कन्ध अध्याय २८ श्लोक ५४)

'जो अपनी दी हुई या दूसरों की दी हुई देवता और ब्राह्मण की जीविका हरण कर लेता है, वह करोड़ों वर्षों तक विष्ठा का कीड़ा होता है।'

जो लोग ऐसे कामों में सहायता, प्रेरणा अथवा अनुमोदन करते हैं, वे भी मरने के बाद प्राप्त करने वाले के समान ही फल के भागीदार होते हैं। यदि उनका हाथ अधिक रहा तो फल भी उन्हें अधिक ही मिलता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotriGyaan Kosha

प्रतिवर्ष के बारह महीनों में विभिन्न प्रकार के पुष्पों द्वारा भगवान् विष्णु की पूजा विधि तथा चम्पा, कमल द्वारा पूजन की महिमा

सोपान ६

भगवान् विष्णु की पूजा में मास भेद से विभिन्न प्रकार के पुष्पों द्वारा पूजन करने का निर्देश है। इसमें बतलाया गया है—

चैत्रमास में कमल पुष्प, जाति पुष्प, चम्पा, दौना, कटसैरया, वरुणपुष्प, विल्व पुष्पों से भगवान् केशव की पूजा करनी चाहिये। वैष्णव मास में केतकी (केवड़ा) के पत्तों से महाप्रभु भगवान् की पूजा करनी चाहिये। ज्येष्ठ मास में पूर्वोक्त सभी पुष्पों द्वारा जो भी प्राप्त हो सकें उनके द्वारा पूजा करना चाहिये। आषाढ़ मास में करवीर (कनीर), कदम्ब तथा कमल पुष्पों द्वारा पूजा करें। घनागम के समय घनश्याम की जो कमल पुष्पों द्वारा जो कमल पुष्प के तुल्य ही कदम्ब पुष्प है, इसके द्वारा पूजा करता है, भगवान् सृष्टि पर्यन्त उसकी कामनाओं की पूर्ति करते हैं। श्रावण मास में अलसी पुष्प, दूर्वादल द्वारा प्रभुनारायण की उपासना करनी चाहिये। भाद्रपद मास में चम्पा पुष्प, श्वेत पुष्प, रक्त सिन्दूरक तथा कल्हार (कमल) पुष्पों द्वारा पूजा करें। भाद्रपद मास में भगवान् विष्णु की पूजा में केतकी (केवड़े) के पुष्प से पूजा नहीं करना चाहिये, क्यों कि भाद्रपद में केतकी (केवड़े) को सुरा (मदिरा) तुल्य माना गया है। लिखा है—

यतो भाद्रपदे मासि केतकी स्यात् सुरासमा।

(पद्मपुराण क्रिया योग ७।१३।४२)

आश्विन में जुही, चमेली एवं कार्तिक में कमल पुष्पों द्वारा पूजा करें। कार्तिक मास में छितवन, मोलसरी, चम्पा आदि पुष्पों द्वारा पूजा करने का विशेष माहात्म्य है। मार्गशीर्ष मास में वकुल पुष्प, पौष मास में तुलसीदल तथा कस्तूरी मिश्रित जल से एवं माघ मास में नाना प्रकार के पुष्पों द्वारा प्रभु की पूजा करना चाहिये। फाल्गुन मास में नवोद्गत वासन्तिक पुष्पों द्वारा भगवान् नारायण की पूजा करें। माघ-फाल्गुन मास में कर्पूर की आरती करे तथा विशेष प्रकार के नैवेद्य मिष्टान्न पूजा में समर्पित करें।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चैत्रे तु चम्पके नैव जातिपुष्पेण वा पुनः।
पूजनीयः प्रयत्नेन केशवः क्लेशनाशनः॥
वैशाखे तु सदा देवि ह्यर्चनीयो महाप्रभुः।
केतकीपत्रमादाय वृषस्थे च दिवाकरे॥
येनार्चितो हरिर्भक्त्या प्रीतो मन्वन्तरं शतम्।
धनागमे घनश्यामः कदम्बकुसुमार्चितः॥
ददाति वाञ्छितान् कामान् यावदिन्द्राश्चतुर्दश॥

(इत्यादि पद्मपुराण अध्याय ८९ वाँ तथा २८० पूर्णरूप से इसी विषय में वर्णन हुआ है)

चम्पक (चम्पा) पुष्प के लिये लिखा है—

सौवर्णश्च प्रसूना मत्प्रियं नास्ति पाण्डव।

(वृद्धगौतमस्मृति ८।७८, महाभारत अश्व. वैष्णव ७८)

इत्यादि वचनों द्वारा कई स्थलों पर स्वर्णपुष्प अर्पण की चर्चा आती है। यह स्वर्ण (सुवर्ण) पुष्प चम्पक (चम्पा) ही है। इसकी महिमा के सम्बन्ध में कहा गया है कि स्वर्ण (सुवर्ण) पुष्प से प्रभु की पूजा करने का फल मेरुतुल्य सुवर्ण (स्वर्ण) दान के बराबर या उससे भी अधिक है—

मेरुतुल्य सुवर्णानि दत्वा भवति यत्फलम्।
एकेन स्वर्णपुष्पेण हरिं सम्पूज्य तत्फलम्॥

(पद्म, क्रिया योग १०।३४)

'जिसने इस सुवर्ण (चम्पक) पुष्प के द्वारा भगवान् की पूजा नहीं की वही जन्म जन्मान्तरों में रत्न-सुवर्णादि से रहित दरिद्र होता है—

सुवर्णकुसुमैर्दिव्यैर्येन नाराधितो हरिः।
रत्नैर्हीनः सुवर्णाद्यै स भवेज्जन्मजन्मनि॥

(वही, ३६)

सुवर्ण पुष्प (चम्पा पुष्प) के रहस्य विषय में एक कथा व्यासजी द्वारा जैमिनि मुनि को कही गयी प्राप्त होती है—

व्यासजी कहते हैं—हे जैमिनि मुनि! सुनो प्राचीन समय में आर्यावर्त में एक सुवर्ण नामक राजा राज्य करता था। किंतु कुसंगति एवं अहंकार के कारण पाप-परायण हो गया। एक रात्रि में वह संगीतासक्ति के कारण अपने राज्य-महल को छोड़कर उज्ज्वला नामक वेश्या के यहाँ अभी पहुँचा ही था कि द्रोही प्रजा ने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वहीं उसको घेर लिया और मार डाला। इधर उसे यमदूत लेने आ गये। परन्तु राजा के स्वागत में पहुँचते ही उसे वेश्या ने राजा को एक सुवर्ण पुष्प दिया था, जिसको राजा ने लेते ही उसकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर राजा के मुख से अकस्मात् 'नमो नारायणाय' उच्चारित हो गया। अतः विष्णु भगवान् द्वारा भेजे गये विष्णुदूत भी उस समय वहाँ पहुँच गये। वे यमदूतों को मार-पीटकर सुवर्ण को उनसे छुड़ा कर विष्णुलोक में ले गये। भगवान् विष्णु ने उसको पुनः जीवित कर दिया। राजा सुवर्ण ने प्रभु के सामने दीनता पूर्वक स्तुति की, तो प्रभु ने उसके पूर्व मनोरथों को परिपूर्ण करने के लिये विश्वकर्मा द्वारा विनिर्मित अत्युत्तम दिव्य सुवर्ण के आभूषणों द्वारा अङ्ग-प्रत्यङ्ग ही मण्डित कर दिये। पुनः वह प्रभु की आज्ञा से पृथ्वी पर लौट आया तथा प्रतिदिन मन्दिर में जाकर सुवर्ण पुष्पों (चम्पा के फूलों) द्वारा भगवान् विष्णु की पूजा करने लगा। मन्दिर में भगवान् उसे वैकुण्ठ के समान ही मिलते एवं वार्तालाप प्रेमपूर्वक करते। अब चम्पक पुष्प पूजा द्वारा उसकी आयु बढ़ने लगी और वह नौ हजार सौ मन्वन्तरों तक पृथ्वी पर शासन करता रहा। चम्पक पुष्प द्वारा वह भगवान् विष्णु की प्रेम तथा नमन द्वारा सर्वदा पूजा करता रहा—

स राजा विष्णु मन्दिरे.....
मन्वन्तर सहस्राणि तथा नवशतानि च।
प्रजानां पालनं चक्रे स राजा धर्मतत्परः॥
पूजयामास सततं भक्त्या परमया हरिः।
चारु चम्पक पुष्पैश्च नैवेद्यैर्विविधैश्च सः॥

(वही-क्रियायोग १०।७१-७२)

अन्त में गङ्गा तट पर स्वेच्छया बिना क्लेश के शरीर त्याग कर वह प्रभु में ही जा मिला—चम्पक पुष्प की ऐसी महिमा है।

'समासाद्य ययौ मोक्षं प्रसादाच्चक्रपाणिनः।'

(वही ७३)

इसी प्रकार पुष्पार्चन के प्रभाव से राजा नृग, ययाति, नहुष, करन्धम, दिलीप, युवनाश्व, भगीरथ, रघु आदि अनेक राजाओं ने भी निष्कण्टक चक्रवर्ती—सार्वभौम साम्राज्य किया था—

पत्रं पुष्पं फलं तोयं दुर्वाङ्कुरमथापि वा।
अरण्यादाहृतैः पुष्पैः सम्पूज्य मधुसूदनम्॥
पूर्वजन्मनि सम्प्राप्तं राज्यं शृणु नराधिप।
नृगो ययातिर्नहुषो विष्वगश्वः करन्धमः॥
दिलीपो युवनाश्वश्च ऋतुपर्णो भगीरथः।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवरातः ककुत्स्थश्च विनीतो विक्रमो रघुः ॥
एते चान्ये च बहवः प्रापू राज्यमकण्टम् ।

इत्यादि । (श्रीविष्णु धर्मोत्तर महापुराण १।१६९।१३-२७)

कमल पुष्प द्वारा भगवान् शङ्कर की पूजा करने की महिमा पर भी एक सुन्दर कथा प्राप्त होती है। संक्षेप में वह भी बतला रहे हैं। प्रजा नाम का धर्मात्मा ब्राह्मण था। वह पूर्वजन्म-विज्ञान के लिये शिव क्षेत्र में जाकर भगवान् शङ्कर की स्तुति करने लगा। भगवान् आशुतोष उसकी स्तुति द्वारा शीघ्र ही प्रकट हुए और उसको बतलाया कि वह पूर्वजन्म में दण्डपाणि नामक शबर (भील) था। वह व्याध एवं दस्यु-वृत्ति से रहकर बड़ा ही पाप करता रहा, परन्तु एक दिन उसने सर्ववेदा नामक ब्राह्मण के माँगने पर पूजा के लिये एक कमल का पुष्प दे दिया था। सर्ववेदा ने उस कमल के द्वारा भगवान् शङ्कर की पूजा सम्पन्न की और वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इसी से उस दण्डपाणि नामक शबर (भील) के समस्त पाप नष्ट हो गये और इसी प्रभाव के कारण दूसरे जन्म में वह भगवद्भक्त ब्राह्मण हुआ। बाद में पुनः कमलों द्वारा पूजन कर जीवन मुक्त हुआ। भगवान् शङ्कर के दर्शन से वह परम श्रेय को प्राप्त हुआ।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यमेव मयोच्यते ।
कमलैर्हरिमभ्यर्च्य प्राप्यते परमं पदम् ।।
(पद्म पु. क्रियायोग १३।१६७)

भगवान् विष्णु के प्रिय एकादशी-व्रत की विधि तथा महिमा का विवेचन

सोपान १०

श्रीसनकजी ने कहा—नारदजी ! अब मैं उस व्रत का जो तीनों लोकों में विख्यात है, वर्णन करूंगा। यह सब पापों का नाश करने वाला तथा सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फलों को देने वाला है। इसका नाम है—एकादशी व्रत। यह व्रत भगवान् विष्णु को विशेष प्रिय है। ब्रह्मन् ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्री-जो भी भक्तिपूर्वक इस व्रत का पालन करते हैं, उनको यह मोक्ष देने वाला

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है। यह मनुष्यों को उनकी समस्त अभीष्ट वस्तुएं प्रदान करता है। विप्रवर! सब प्रकार से इस व्रत का पालन करना चाहिये; क्योंकि यह भगवान् विष्णु को प्रसन्न करने वाला है। दोनों पक्ष की एकादशी को भोजन न करे। वीणापाणि! मनुष्य यदि मुक्ति की अभिलाषा रखता है तो वह दशमी और द्वादशी को एक समय भोजन करे और एकादशी को सर्वथा निराहार रहे। महापातकों अथवा सब प्रकार के पातकों से युक्त मनुष्य भी यदि एकादशी को निराहार रहे तो वह परम गति को प्राप्त होता है। एकादशी परम पुण्यमयी तिथि है। संसार-बन्धन का उच्छेद करने की इच्छा वाले ब्राह्मणों को सर्वथा इसका सेवन करना चाहिये। दशमी को प्रातःकाल उठ कर दन्तधावन और स्नान करे और इन्द्रियों को वश में रखते हुए विधिपूर्वक भगवान् विष्णु का पूजन करे। रात में भगवान् नारायण का चिन्तन करते हुए उन्हीं के समीप शयन करे। एकादशी को प्रातःकाल उठकर शौच, दन्तधावन व स्नानादि के पश्चात् गन्ध, पुष्प आदि सामग्रियों द्वारा भगवान् विष्णु की विधिपूर्वक पूजा करके निवेदन करे—

एकादश्यां निराहारः स्थित्वाद्याहं परेऽहनि।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत।।
(नारद पुराण पूर्व भाग प्रथम पाद २३।१५)

'कमलनयन अच्युत! आज एकादशी को निराहार रह कर मैं दूसरे दिन भोजन करूँगा। आप मेरे को आपकी शरण में होना स्वीकार करें।'

सुदर्शन चक्रधारी देवाधिदेव भगवान् विष्णु के समीप भक्ति भाव से उक्त मंत्र उच्चारण करके संतुष्ट चित्त हो उन्हें एकादशी का उपवास समर्पित करे। व्रती मनुष्य नियमपूर्वक रहकर भगवान् विष्णु के समक्ष गीत, वाद्य, नृत्य तथा पुराण-श्रवण आदि के द्वारा रात में जागरण करे। तदनन्तर द्वादशी के दिन प्रातःकाल उठकर व्रतधारी मनुष्य शौच स्नानादि करके शुद्ध पवित्र हो और इन्द्रियों को वश में रखते हुये विधिपूर्वक भगवान् विष्णु की पूजा करे। विप्रवर! जो एकादशी के दिन भगवान् जनार्दन को पञ्चामृत से स्नान करा कर द्वादशी को दूध से स्नान कराता है, वह हरि का सारूप्य प्राप्त कर लेता है। पूजा के पश्चात् इस प्रकार प्रार्थना करे—

अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव।
प्रसीद सुमुखो भूत्वा ज्ञानदृष्टिप्रदो भव।।
(नारद पुराण पूर्व भाग प्रथम पाद २३।२०)

'केशव! मैं अज्ञानरूपी तिमिर रोग से अन्धा हो रहा हूँ। मेरे इस व्रत से आप प्रसन्न हों और प्रसन्न मुख होकर मुझे ज्ञान दृष्टि प्रदान करें।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विप्रवर ! इस प्रकार द्वादशी के दिन भगवान् लक्ष्मीपति से निवेदन करके एकाग्रचित्त हो यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन करावे और उन्हें दक्षिणा दे, पश्चात् अपने भाई बन्धुओं के साथ भगवान् नारायण का चिन्तन करते हुए, पञ्च महायज्ञ (बलिवैश्वदेव) करके स्वयं भी मौन भाव से भोजन करे। जो इस प्रकार संयमपूर्वक पवित्र एकादशी व्रत का पालन करता है, वह पुनरावृत्ति रहित वैकुण्ठ धाम में जाता है। उपवास-व्रत में तत्पर तथा धर्म कार्य में संलग्न मनुष्यों को चाण्डाल और पतितों की ओर कभी भी नहीं देखना चाहिये। जो नास्तिक हैं, जिन्होंने मर्यादा भंग की है तथा जो निन्दक और चुगली करने वाले हैं, ऐसे लोगों से उपवास-व्रत करने वाला कभी बात-चीत भी नहीं करे। जो यज्ञ के अनधिकारियों से यज्ञ कराने वाला है, उससे भी व्रती मनुष्य को नहीं बोलना चाहिये। जो कुण्ड (पति के जीते-जी पर पुरुष से उत्पन्न किये हुए पुरुष) का अन्न खाता है, देवता और ब्राह्मणों से विरोध रखता है, पराये अन्न व धन के लिये लालायित रहता और परायी स्त्रियों में आसक्त होता है, ऐसे मनुष्य का व्रती मनुष्य वाणी मात्र से भी आदर न करे। जो इस प्रकार के दोषों से रहित, शुद्ध, जितेन्द्रिय तथा सबके हित में तत्पर है, वह उपवास परायण होकर परम सिद्धि को प्राप्त कर लेता है। शास्त्रों में लिखा है—

नास्ति गङ्गासमं तीर्थं नास्ति मातृसमो गुरुः।
नास्ति विष्णुसमं दैवं तपो नानाशनात्परम्॥
नास्ति क्षमासमा माता नास्ति कीर्तिसमं धनम्।
नास्ति ज्ञानसमो लाभो न च धर्मसमः पिता॥
न विवेकसमो बन्धुर्नैकादश्याः परं व्रतम्।

(नारद पुरा. पूर्व भा. प्रथम पाद २३।३०-३२)

'गङ्गा के समान कोई तीर्थ नहीं है। माता के समान कोई गुरु नहीं हैं। भगवान् विष्णु के समान कोई देवता नहीं है और उपवास से बढ़ कर कोई तप नहीं है। क्षमा के समान कोई माता नहीं है। कीर्ति के समान कोई धन नहीं है। ज्ञान के समान कोई लाभ नहीं है। धर्म के समान कोई पिता नहीं है। विवेक के समान कोई बन्धु नहीं है और एकादशी से बढ़कर कोई व्रत नहीं है।'

इस विषय में भद्रशील और गालव मुनि की पुरातन कथा उदाहरण हैं। पूर्वकाल की बात है, नर्मदा नदी के तट पर गालव नाम से प्रसिद्ध एक सत्यपरायण मुनि रहते थे। वे शम (मनोनिग्रह) और दम (इन्द्रिय संयम) से सम्पन्न तथा तपस्या के निधि थे। सिद्ध, चारण गन्धर्व, यक्ष और विद्याधर आदि देवयोनि के लोग भी वहाँ विहार करते थे। वह स्थान कंद, मूल, फलों से परिपूर्ण था। वहाँ ऋषि-मुनियों का बहुत बड़ा समुदाय निवास करता था। विप्रवर गालव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वहाँ चिरकाल से निवास करते थे। उनके एक पुत्र हुआ जो भद्रशील नाम से विख्यात हुआ। वह बालक अपने मन और इन्द्रियों को वश में रखता था। उसे अपने पूर्वजन्म की बातों का स्मरण था। वह महान् भाग्यशाली ऋषिकुमार निरन्तर भगवान् नारायण के भजन-चिन्तन में ही लगा रहता था। महामति भद्रशील बालोचित क्रीड़ा के समय भी मिट्टी से भगवान् विष्णु की प्रतिमा बनाकर उसकी पूजा करता और अपने साथियों को समझाता कि मनुष्यों को सदा भगवान् विष्णु की आराधना करनी चाहिये और विद्वानों को एकादशी व्रत का भी पालन करना चाहिये।' मुनिश्वर ! भद्रशील द्वारा इस प्रकार समझाये जाने पर उसके साथी शिशु भी मिट्टी से भगवान् की प्रतिमा बनाकर एकत्र या अलग-अलग बैठ जाते और प्रसन्नतापूर्वक उसकी पूजा करते थे। इस तरह वे परम सौभाग्यशाली बालक भगवान् विष्णु के भजन में तत्पर हो गये। भद्रशील भगवान् विष्णु को नमस्कार करके यही प्रार्थना करता था कि 'सम्पूर्ण जगत् का कल्याण हो।' खेल के समय वह दो घड़ी या एक घड़ी भी ध्यानस्थ हो एकादशी-व्रत का संकल्प करके भगवान् विष्णु को समर्पित करता था। अपने पुत्र को इस प्रकार उत्तम-चरित्र से युक्त देखकर तपोनिधि गालव मुनि बड़े विस्मित हुए और उसे हृदय से लगा कर पूछने लगे।

गालव बोले—उत्तम व्रत का पालन करने वाले महाभाग भद्रशील ! तुम अपने कल्याणमय शील स्वभाव के कारण सचमुच भद्रशील हो। तुम्हारा जो मङ्गलमय चरित्र है, वह योगियों के लिये भी दुर्लभ है। तुम सदा भगवान् की पूजा में तत्पर, सम्पूर्ण प्राणियों के हित में संलग्न तथा एकादशी व्रत के पालन में लगे रहने वाले हो। शास्त्र निषिद्ध कर्मों से तुम सदा दूर रहते हो। तुम पर सुख-दुःख आदि द्वन्द्वों का प्रभाव नहीं पड़ता। तुम में ममता नहीं दिखायी देती और तुम शान्त भाव से भगवान् के ध्यान में मग्न रहते हो। बेटा ! अभी तुम बहुत छोटे हो तो भी तुम्हारी बुद्धि ऐसी किस प्रकार हुई; क्योंकि महापुरुषों की सेवा के बिना भगवान् की भक्ति प्रायः दुर्लभ होती है। इस जीव की बुद्धि स्वभावतः अज्ञानयुक्त सकाम कर्मों में लगती है। तुम्हारी सब क्रिया अलौकिक कैसे हो रही है ! सत्संग होने पर भी पूर्व पुण्य की अधिकता से ही मनुष्यों में भगवद्भक्ति का उदय होता है। अतः तुम्हारी अद्भुत स्थिति देखकर मैं बड़े विस्मय में पड़ा हूँ और प्रसन्नता पूर्वक इसका कारण पूछता हूँ। अतः तुम्हें बतलाना चाहिये।

पिता के द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर पूर्वजन्म का स्मरण रखने वाला पुण्यात्मा भद्रशील बहुत प्रसन्न हुआ। उसके मुख पर हास्य की छटा छा गयी। उसने अपने अनुभव में आयी हुई सब बातें पिता को ठीक-ठीक कह सुनायीं।

भद्रशील बोला—पिताजी ! पूर्वजन्म में मैंने जो कुछ अनुभव किया है, वह जातिस्मर होने के कारण अब भी जानता हूँ। मुनिश्रेष्ठ ! मैं पूर्वजन्म में

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्रवंशी राजा था। मेरा नाम धर्मकीर्ति था और महर्षि दत्तात्रेय ने मुझे शिक्षा दी थी। मैंने नौ हजार वर्षोंतक सम्पूर्ण पृथ्वी का पालन किया। पहले मैंने पुण्यकर्म भी बहुत से किये थे, परन्तु पीछे पाखण्डियों से बाधित होकर मैंने वैदिक मार्ग को त्याग दिया। पाखण्डियों की कूट युक्ति का अवलम्बन करके मैंने सब यज्ञों का विध्वंस किया। मुझे अधर्म में तत्पर देख मेरे देश की प्रजा भी सदैव पाप-कर्म करने लगी। उसमें से छठा अंश मुझे मिलने लगा। इस प्रकार मैं सदा पापाचारपरायण हो दुर्व्यसनों में आसक्त रहने लगा।

एक दिन शिकार खेलने की रुचि से मैं सेना सहित एक वन में गया और वहाँ भूख-प्यास से पीड़ित हो थका-मांदा नर्मदा के तट पर आया। सूर्य की तीखी धूप होने के कारण मैंने नर्मदाजी के जल में स्नान किया। सेना किधर गयी, यह मैंने नहीं देखा। अकेला ही वहाँ भूख से बहुत कष्ट पा रहा था। सन्ध्या के समय नर्मदा-तट के निवासी जो एकादशी व्रत करने वाले थे, वहाँ एकत्र हुए। उन सबको मैंने देखा और उन्हीं लोगों के साथ निराहार रह कर बिना सेना के ही मैं अकेला रात में वहाँ जागरण करता रहा। हे तात! जागरण समाप्त होने पर मेरी वहाँ ही मृत्यु हो गयी। तब बड़ी-बड़ी दाढ़ों से भय उत्पन्न करने वाले यमराज के दूतों ने मुझे बांध लिया और अनेक प्रकार के क्लेश भरे हुए मार्ग द्वारा यमराज के निकट पहुँचाया। वहाँ जाकर मैंने यमराज को देखा, जो सबके प्रति समान बर्ताव करने वाले हैं। तब यमराज ने चित्रगुप्त को बुलाकर कहा—'विद्वन्! इसका दण्ड-विधान कैसे करना है, बताओ।' साधु शिरोमणे! धर्मराज के ऐसा कहने पर चित्रगुप्त ने कुछ समय विचार किया; फिर इस प्रकार कहा—धर्मराज! यद्यपि यह सदा पाप में लगा रहा है, तथापि एक बात सुनिये। एकादशी को उपवास करने वाले मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। नर्मदा के रमणीय तट पर एकादशी के दिन यह निराहार रहा है। वहाँ जागरण और उपवास करके यह सर्वथा निष्पाप हो गया है। इसने जो भी बहुत से पाप किये थे, वे सब उपवास के प्रभाव से नष्ट हो चुके हैं।' बुद्धिमान् चित्रगुप्त के ऐसा कहने पर धर्मराज मेरे सामने काँपने लगे। उन्होंने उसी समय उठ कर भूमि पर दण्ड की भाँति पड़कर मुझे साष्टाङ्ग प्रणाम किया और भक्ति-भाव से मेरी पूजा की। तदनन्तर धर्मराज ने अपने सब दूतों को बुलाकर इस प्रकार से कहा।

धर्मराज बोले—'दूतो! मेरी बात ध्यान से सुनो। मैं तुम्हारे हित की बड़ी उत्तम बात बतलाता हूँ। धर्ममार्ग में लगे हुये मनुष्यों को मेरे पास नहीं लाना चाहिये। जो भगवान् विष्णु के पूजन में तत्पर, संयमी, कृतज्ञ, एकादशी-व्रतपरायण तथा जितेन्द्रिय हैं और जो 'हे नारायण! हे अच्युत! हे हरे! मुझे शरण दीजिये' इस प्रकार शान्तभाव से निरन्तर कहते रहते हैं, ऐसे लोगों को तुम तुरन्त

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

छोड़ देना। मेरे दूतो ! जो सम्पूर्ण लोकों के हितैषी तथा परम शान्तभाव से रहने वाले हैं, जो नारायण ! अच्युत ! जनार्दन ! कृष्ण ! विष्णो ! कमलाकान्त ! ब्रह्माजी के पिता ! शिव ! शंकर ! इत्यादि नामों का नित्य कीर्तन किया करते हैं, उन्हें दूर से ही त्याग दिया करो। उन पर मेरा शासन नहीं चलता। मेरे सेवको ! जो अपना सम्पूर्ण कर्म भगवान् विष्णु को समर्पित कर देते हैं, उन्हीं के भजन में लगे रहते हैं, अपने वर्णाश्रमोचित आचार के मार्ग में स्थित हैं, गुरुजनों की सेवा किया करते हैं, सत्पात्र को दान देते, दीनों की रक्षा करते और निरन्तर भगवन्नाम के जप-कीर्तन में संलग्न रहते हैं, उनको भी त्याग देना।

मेरे दूतो ! जो लोग भगवान् की कथारूप अमृत के सेवन से वञ्चित हैं, भगवान् विष्णु के चिन्तन में मन लगाये रखने वाले साधु-महात्माओं से जो दूर रहने वाले हैं, उन पापियों को मेरे यहाँ लाया करो। मेरे किङ्करो ! जो माता और पिता को डाँटने वाले, लोगों से द्वेष रखने वाले, हितैषीजनों का भी अहित करने वाले, देवताओं की सम्पत्ति के लोभी, दूसरे लोगों का नाश करने वाले तथा सदैव दूसरों के अपराध में ही तत्पर रहने वाले हैं उनको पकड़कर यहाँ लाओ।

मेरे दूतो ! जो एकादशी व्रत से विमुख, क्रूर स्वभाव वाले, लोगों को कलङ्क लगाने वाले, परनिन्दा में तत्पर, ग्राम का विनाश करने वाले, श्रेष्ठ पुरुषों से वैर-भाव रखने वाले तथा ब्राह्मण के धन का लोभ करने वाले हैं, उनको यहाँ ले आया करो। जो भगवान् विष्णु की भक्ति से मुँह मोड़ चुके हैं, शरणागत पालक भगवान् नारायण को प्रणाम नहीं करते हैं तथा जो मूर्ख मनुष्य कभी भगवान् विष्णु के मंदिर में नहीं जाते हैं, उन अतिशय पाप में रत रहने वाले दुष्ट लोगों को ही तुम बलपूर्वक पकड़ कर यहाँ ले आया करो।

भद्रशील ने फिर कहा—पिताजी ! इस प्रकार से जब मैंने यमराज महाराज को दूतों को उपदेश देते हुए सुना तो पश्चात्ताप से दग्ध होकर अपने किये हुए उस निन्दित कर्म को स्मरण किया। पापकर्म के लिये पश्चात्ताप और श्रेष्ठ धर्म का श्रवण करने से मेरे सब पाप वहाँ ही नष्ट हो गये। उसके बाद मैं उस पुण्य कर्म के प्रभाव से इन्द्रलोक में गया और वहाँ पर मैं सब प्रकार के भोगों से सम्पन्न रहा। सम्पूर्ण देवता मुझे नमस्कार करते थे। बहुत काल तक स्वर्ग में रह कर फिर वहाँ से मैं भूलोक में आया। यहाँ भी आप जैसे विष्णु-भक्तों के कुल में मेरा जन्म हुआ। मुनीश्वर ! जातिस्मर होने के कारण मैं यह सब बातें जानता हूँ। इसलिये मैं बालकों के साथ भगवान् विष्णु के पूजन की चेष्टा करता हूँ। पूर्वजन्म में एकादशी-व्रत का ऐसा माहात्म्य है, यह बात मैं नहीं जान सका था। इस समय पूर्वजन्म की बातों की स्मृति के प्रभाव से मैंने एकादशी-व्रत को जान लिया है। पहले विवश होकर भी जो व्रत किया गया था, उसका यह फल मिला है। प्रभो !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIdd hanta eGangotri Gyaan Kosha

फिर जो भक्तिपूर्वक एकादशी-व्रत करते हैं, उनको क्या शुभ फल नहीं मिल सकता। अत विप्रेन्द्र ! 'मैं शुभ एकादशी-व्रत का पालन तथा प्रतिदिन भगवान् विष्णु की पूजा करूँगा। भगवान् के परम धाम को पाने की आकांक्षा ही इसमें हेतु है। जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक एकादशी-व्रत करते हैं, उन्हें निश्चय ही परमानन्द-दायक वैकुण्ठधाम प्राप्त होता है।' अपने पुत्र के ऐसे वचन सुनकर गालव मुनि बहुत प्रसन्न हुए। इन्हें बड़ा सन्तोष प्राप्त हुआ व उनका हृदय अत्यन्त हर्ष से भर गया। वे बोले—'वत्स मेरा जन्म सफल हो गया, मेरा कुल भी पवित्र हो गया; क्योंकि तुम्हारे जैसा विष्णु भक्त पुरुष मेरे घर में पैदा हुआ है।' इस प्रकार पुत्र के उत्तम कर्म से मन-ही-मन संतुष्ट होकर महर्षि गालव ने उसे भगवान् की पूजा का विधान ठीक-ठीक समझाया।

सनकजी ने कहा—मुनिश्रेष्ठ नारदजी ! तुम्हारे प्रश्न के अनुसार एकादशी-व्रत विधि और महिमा बतलादी हैं।

(नारद पुराण पूर्व भाग प्रथम पाद अध्याय २३ के आधार से)

एकादशी व्रत विषय में आग्नेय महापुराण में लिखा है—

द्वादशी-विद्धा एकादशी में स्वयं हरि स्थित होते हैं. इसलिये द्वादशी-विद्धा एकादशी के व्रत का त्रयोदशी को पारण करने से मनुष्य सौ यज्ञों का पुण्य फल प्राप्त करता है। जिस दिन के पूर्व भाग में एकादशी कलामात्र अवशिष्ट हो और शेष भाग में द्वादशी व्याप्त हो, उस दिन एकादशी का व्रत करके त्रयोदशी में पारण करने से सौ यज्ञों का पुण्य प्राप्त होता है। दशमी-विद्धा एकादशी को कभी उपवास (व्रत) नहीं करना चाहिये, वह नरक की प्राप्ति कराने वाली होती है। एकादशी में निराहार रह कर, दूसरे दिन भगवान् के समक्ष उनके चरणों में प्रणाम निवेदन करके यह कहे—'पुण्डरीकाक्ष ! मैं आपकी शरण लेता हूँ। अच्युत ! अब मैं भोजन करूंगा।' प्रतिवर्ष की चौबीस एकादशी व्रत करने योग्य हैं। किसी वर्ष में अधिक मास हो, उस वर्ष की छःबीस एकादशी व्रत करने योग्य बतलायी हैं। कई एक एकादशी व्रतों को अधिक फल प्रदान करने वाला कहा है—शुक्ल पक्ष की एकादशी को जब पुष्य नक्षत्र का योग हो, उस दिन उपवास करना चाहिये। वह अक्षय फल प्रदान करने वाली तथा पापनाशिनी कही गयी है। श्रवण नक्षत्र से युक्त द्वादशी-विद्धा एकादशी 'विजया' नाम से कही है, यह भक्तों को विजय प्रदान करती है। फाल्गुन मास में पुष्य नक्षत्र से युक्त एकादशी भी विजया कही गयी है। वह गुणों में कई करोड़ गुणा अधिक फल प्रदान करने वाली है। एकादशी व्रत करने वालों को उस दिन भगवान् विष्णु की पूजा अवश्य करना चाहिये। एकादशी व्रत करने वाला इस लोक में धन-धान्य से समृद्ध होता है और पुत्र सन्तान से युक्त हो (मृत्यु के पश्चात्) विष्णु-लोक में पूजित होता है।

(अग्नेय पुराण अध्याय १८७ के आधार से)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जगत् में जितने प्रकार के भगवान् हरि, विष्णु, राम, कृष्ण आदि को सन्तुष्ट करने वाले व्रत हैं, उनमें एकादशी-उपवास (व्रत) के समान दूसरा कोई व्रत नहीं है। सनातन धर्म का पालन करने वाले, पञ्चदेव उपासकों का यह नित्य व्रत बतलाया गया है। इस उपवास प्रधान महाव्रत में सब वर्णों का अधिकार है। गृहस्थ हो चाहे विरक्त हो—सबके लिये इस व्रत का करना आवश्यक है। इस व्रत के अनुष्ठान से भगवान् प्रसन्न ही नहीं होते, उनको प्राप्त भी किया जा सकता है। अतएव मानव-मात्र को यह व्रत अवश्य करना चाहिये। लिखा है—

अष्टाब्दादधिको मर्त्योऽपूर्णाशीति वत्सरो नित्याधिकारी।

'आठ वर्ष से अस्सी वर्ष तक के नर-नारी इस व्रत के नित्य अधिकारी हैं।'

विधवाओं और ब्राह्मणों के लिये तो यह अनिवार्य ही है। पुत्रवान् गृहस्थों के लिये भी यह अवश्य-कर्त्तव्य है। इस व्रत का अनुष्ठान न करने से दोष लगता है। जो कोई भगवत्प्रीति की कामना करते हैं, उनको तो यह व्रत अवश्य करना ही चाहिये।

यदि कोई स्वयं एकादशी व्रत करने में किसी विशेष कारण से अशक्त हो तो अपने पुत्र, पुत्र-वधू अथवा अन्य किसी ब्राह्मण पंडित द्वारा भी यह व्रत अवश्य कराकर व्रत की रक्षा करनी चाहिये। ऐसा व्रत यदि ब्राह्मण पंडित द्वारा कराना हो तो अपनी शक्ति अनुसार उसको दान दक्षिणा द्वारा सन्तुष्ट कराके ही कराना चाहिये।

मार्कण्डेय पुराण में लिखा है—

बालक, वृद्ध, आतुर जो एकादशी व्रत करने में अशक्त हों, वह एक भुक्त या नक्त व्रत कर सकते हैं अथवा दुग्ध-फल-मूल आदि का भोजन भी कर सकते हैं, किन्तु एकादशी व्रत अवश्य करें। नक्त भोजी को आधा फल प्राप्त होता है और एक भुक्त भोजी को उसका भी आधा फल प्राप्त होता है

एकभुक्तं च नक्तं च उपवासं तथैव च।
एतेष्वन्यतमं वापि व्रतं कुर्याद्धरेर्दिन॥

दिन के आठवें भाग में भोजन करना 'नक्त' भोजन कहलाता है और किसी भी समय में एक बार फल मूलादि का भोजन (फलाहार) करना 'एकभुक्त' कहलाता है। नक्त भोजन, एक भुक्त तथा उपवास—इन तीनों में अपनी सामर्थ्य के अनुसार किसी एक का अनुष्ठान एकादशी तिथि में किया जाता है।

उपवास करने की सामर्थ्य होते हुए भी यदि वह इस प्रकार का अनुकल्प करता है तो अपराधी (दोषी) है। भगवान् तो अन्तर्यामी हैं, उनको धोखा देना उचित नहीं है। एकादशी तिथि में उपवास और रात्रि में जागरण करके आरती,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाठ, कीर्तन, नृत्य-गीत आदि किये जाते हैं। जो लोग उपवास करके शक्तिहीन होकर नाम-कीर्तन आदि करने में असमर्थ हो जाते हैं, उनके लिये दुग्ध-फल आदि ग्रहण करना अशास्त्रीय नहीं है। दशमी तिथि में दिन के अष्टम भाग में दिन का अवसान (समाप्त) होने पर दन्तधावन करके नक्तव्रत करे। इसको 'नक्त भोजन' कहा गया है। रात में भोजन कर लेने का नाम 'नक्त भोजन' नहीं है। ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी का नाम 'निर्जला' है। इस एकादशी में उपवास (व्रत) करने वाला स्नान, आचमन के अतिरिक्त जल त्याग पूर्वक उपवासी रहकर भगवान् विष्णु की पूजा, आराधना, स्तुति, भजन करता है। रात्रि में हरिकथा, गीत, वाद्यों द्वारा जागरण करता है, वह बारहों महीने की एकादशियों के उपवास का फल प्राप्त कर लेता है। धर्माचरण करने वाले शुक्ल और कृष्ण, दोनों पक्षों की एकादशी को समान रूप से मानते हैं; दोनों एकादशियों में भेद नहीं करना चाहिये।

एकादशी तिथि के उपवास का अनन्त फल है। व्यतीपात में दान करने पर लक्षगुना फल प्राप्त होता हैं। संक्रान्ति में दान करने से चार लाख गुना फल प्राप्त होता है तथा चन्द्र सूर्य ग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में स्नान करने का जो फल होता है, वह सब फल एकादशी को उपवास करने वाला प्राप्त कर लेता है। अश्वमेध यज्ञ करने से जो फल प्राप्त होता है, उससे सौ गुना अधिक फल एकादशी के उपवास से प्राप्त हो जाता है। साठ हजार वर्षों तक लाखों तपस्वीजनों को नित्य भोजन कराने से जो पुण्य अर्जित होता है, उस फल को मनुष्य एकादशी के उपवास के द्वारा प्राप्त कर लेता है। वेदाङ्ग पारंगत ब्राह्मण को सहस्र गोदान करने से जो पुण्य होता है, उससे दस गुना अधिक फल एकादशी को उपवास करने वाला प्राप्त कर लेता है।

यह उपर्युक्त माहात्म्य फल अनेक पुराण धर्मशास्त्रादि ग्रन्थों से चुन-चुन कर दर्शाये हैं, यदि सब ही ग्रन्थों के प्रमाण संदर्भ लिखे जाये तों अध्याय बहुत बड़ा हो जाता है। अतः आगे कतिपय प्रमाण संदर्भ और दर्शाते हुए इस अध्याय का समापन करते हैं—

एकादशीसमं किंचित् पावनं न च विद्यते।
स्वर्गमोक्षप्रदा ह्येषा राज्यपुत्रप्रदायिनी॥

(तत्त्वसागर)

'एकादशी के समान पवित्र और कुछ नहीं है। यह एकादशी स्वर्ग, मोक्ष, राज्य और पुत्र प्रदान करने वाली है।' जो-जो कामना करके एकादशी-उपवास किया जाता है, वह-वह कामना पूर्ण हो जाती है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एकादशीव्रतं भक्त्या यः करोति नरः सदा ।
स विष्णुलोकं व्रजति याति विष्णुसरूपताम् ।'

(गरुड़ पुराण

'जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सदा एकादशी व्रत करता है वह विष्णुलोक में जाता है और भगवान् विष्णु के सारूप्य को प्राप्त होता है ।'

भगवान् नारायण का नाम उच्चारण करने से ही अजामिल को वैकुण्ठ धाम प्राप्ति

सोपान ११

शुकदेवजी ने कहा—परीक्षित ! कान्यकुब्ज नगर (कन्नौज) में एक दासी पति ब्राह्मण रहता था । उसका नाम अजामिल था । दासी के संसर्ग से दूषित होने के कारण उसका सदाचार नष्ट हो चुका था । वह पतित कभी बटोहियों (राहगीरों) को बांधकर उन्हें लूट लेता, कभी लोगों को जुए के छल से हरा देता, किसी का धन धोखा-धड़ी से ले लेता तो किसी का चुरा लेता । इस प्रकार अत्यन्त निन्दनीय वृत्ति का आश्रय लेकर वह अपने कुटम्ब का पेट भरता था और दूसरे प्राणियों को बहुत ही सताता था । परीक्षित ! इसी प्रकार वह वहाँ रहकर दासी के बच्चों का लालन-पालन करता रहा । इस प्रकार उसकी आयु का बहुत बड़ा भाग-अठासी वर्ष बीत गया । बूढ़े अजामिल के दस पुत्र थे । उनमें सबसे छोटे का नाम नारायण था । माँ-बाप उसे बहुत प्यार करते थे । वृद्ध अजामिल ने अत्यन्त मोह के कारण अपना सम्पूर्ण हृदय अपने छोटे बच्चे नारायण को सौंप दिया था । वह अपने बच्चे नारायण की तोतली बोली सुन-सुन कर तथा बाल सुलभ खेल देख-देख कर फूला नहीं समाता था । अजामिल उस बालक के स्नेह में बंध गया था । जब वह खाता तब उसे भी खिलाता, जब वह पानी पीता तो उसे भी पिलाता । इस प्रकार वह अतिशय मूढ हो गया था, उसे इस बात का पता ही न चला कि मृत्यु मेरे सिर पर आ पहुँची है ।

वह मूर्ख इसी प्रकार अपना जीवन बिता रहा था कि मृत्यु का समय आ पहुँचा । वह पुत्र नारायण के सम्बन्ध में ही सोचते विचारते लगा । इतने में ही अजामिल ने देखा कि उसे ले जाने के लिये अत्यन्त भयावने तीन यमदूत आये हैं । उनके हाथों में फांसी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है, मुँह टेढ़े-टेढ़े हैं और शरीर के रोएँ खड़े हुए हैं। उस समय बालक नारायण वहाँ से कुछ दूरी पर खेल रहा था। यमदूतों को देखकर अजामिल अत्यन्त व्याकुल हो गया और उसने ऊँचे स्वर में पुकारा—'नारायण'। भगवान् के पार्षदों ने देखा कि यह मरते समय हमारे स्वामी भगवान् नारायण का नाम ले रहा है, उनके नाम का कीर्तन कर रहा है; अतः वे बड़े वेग से झटपट वहाँ आ पहुँचे। उस समय यमराज के दूत दासीपति अजामिल के शरीर से उसके सूक्ष्म शरीर को खींच रहे थे। विष्णु दूतों ने उन्हें बलपूर्वक रोक दिया। उनके रोकने पर यमराज के दूतों ने उनसे कहा-'अरे, धर्मराज की आज्ञा का निषेध करने वाले तुम लोग हो कौन ? तुम किसके दूत हो, कहाँ से आये हो और इसे ले जाने से हमें क्यों रोक रहे हो ? क्या तुम लोग कोई देवता हो, उपदेवता अथवा सिद्ध श्रेष्ठ हो ? हम देखते हैं कि तुम सब लोगों के नेत्र कमल दल के समान कोमलता भरे हैं. पीले-पीले रेशमी वस्त्र पहने हो, तुम्हारे सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल और गलों में कमल के हार लहरा रहे हैं। सबकी नयी अवस्था है, सुन्दर-सुन्दर चार-चार भुजाएँ हैं, सभी के कर कमलों में धनुष बाण, तरकश. तलवार, गदा, शङ्ख, चक्र, कमल आदि सुशोभित हैं। तुम लोगों की अङ्ग कान्ति से दिशाओं का अन्धकार दूर होकर प्रकाश फैल रहा है। हम धर्मराज के सेवक हैं। हमें आप लोग क्यों रोक रहे हो ?

शुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित् ! जब यमदूतों ने इस प्रकार कहा, तब भगवान् नारायण के आज्ञाकारी पार्षदों ने हँस कर मेघ के समान गंभीर वाणी से उनके प्रति यों कहा।

भगवान् के धर्म पार्षदों ने कहा यददूतो ! यदि तुम लोग सचमुच धर्मराज के आज्ञाकारी हो तो हमें धर्म का लक्षण और धर्म का तत्त्व सुनाओ। दण्ड किस प्रकार दिया जाता है ? दण्ड का पात्र कौन है ? मनुष्यों में सभी पापाचारी दण्डनीय हैं अथवा उनमें से कुछ ही ?

यमदूतों ने कहा—वेदों ने जिन कर्मों का विधान किया है, वे धर्म है और जिनका निषेध किया है वे अधर्म है। वेद स्वयं भगवान् के स्वरूप हैं। वे उनके स्वाभाविक श्वास-प्रश्वास एवं स्वयं प्रकाश ज्ञान हैं—ऐसा हमने सुना है। जगत् के रजोमय, सत्वमय और तमोमय—सभी पदार्थ, सभी प्राणी अपने परम आश्रय भगवान् में स्थित रहते हैं। वेद ही उनके गुण, नाम, कर्म और रूप आदि के अनुसार उनका यथोचित् विभाजन करते हैं। जीव शरीर अथवा मनोवृत्तियों से जितने कर्म करता है, उसके साक्षी रहते हैं—सूर्य, अग्नि, आकाश, वायु, इन्द्रियाँ, चन्द्रमा, सन्ध्या, रात-दिन, दिशाएँ, जल, पृथ्वी, काल और धर्म। इनके द्वारा अधर्म का पता चल जाता है और तब दण्ड के पात्र का निर्णय होता है। पाप-कर्म करने वाले सभी मनुष्य अपने अपने कर्मों के अनुसार दण्डनीय होते हैं। भद्र पुरुषो !

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जो प्राणी कर्म करते हैं, उनका गुणों से सम्बन्ध रहता ही है। इसीलिये सभी से कुछ पाप और कुछ पुण्य होते ही हैं और देहवान होकर कोई भी पुरुष कर्म किये बिना रह ही नहीं सकता।

इस लोक में जो मनुष्य जिस प्रकार का और जितना अधर्म या धर्म करता है, वह परलोक में उसका उतना और वैसा ही फल भोगता है। देवशिरोमणियो ! सत्त्व, रज और तम तीन गुणों के भेद के कारण इस लोक में तीन प्रकार के प्राणी दिखलाई पड़ते हैं—पुण्यात्मा, पापात्मा और पुण्य-पाप दोनों से युक्त अथवा सुखी, दुःखी और सुख-दुःख दोनों से युक्त; वैसे ही परलोक में भी उनकी त्रिविधता का अनुमान किया जाता है। वर्तमान समय ही भूत और भविष्य का अनुमान करा देता है, वैसे ही वर्तमान जन्म के पाप पुण्य ही भूत और भविष्य जन्मों के पाप-पुण्य का अनुमान करा देते हैं। हमारे स्वामा अजन्मा भगवान् सर्वज्ञ यमराज सबके अन्तःकरण में विराजमान हैं। अतः वे अपने मन से सबके स्वरूप का भी विचार कर लेते हैं। जैसे सोया हुआ अज्ञानी पुरुष स्वप्न के समय प्रतीत हो रहे कल्पित शरीर को ही अपना वास्तविक शरीर समझता है, सोये हुए अथवा जागने वाले शरीर को भूल जाता है; वैसे ही जीव भी अपने पूर्वजन्मों की याद भूल जाता है और वर्तमान शरीर के सिवाय पहले और पीछे के शरीरों के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानता।

सिद्ध पुरुषो ! जीव इस शरीर में पाँच कर्मेन्द्रियों से लेना-देना, चलना-फिरना आदि काम करता है, पाँच ज्ञानेन्द्रियों से रूप, रस आदि पाँच विषयों का अनुभव करता है और सोलहवें मन के साथ सत्रहवां वह स्वयं मिल कर अकेले ही मन, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय–इन तीनों के विषयों को भोगता है। जीव का यह सोलह कला और सत्वादि तीन गुणों वाला लिङ्ग शरीर अनादि है। यही जीव को बार–बार हर्ष, शोक,भय और पीड़ा देने वाले जन्म-मृत्यु के चक्कर में डालता है। जो जीव अज्ञानवश काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर-इन छह शत्रुओं पर विजय प्राप्त नहीं कर लेता, उसे इच्छा न रहते हुए भी विभिन्न वासनाओं के अनुसार अनेकों कर्म करने पड़ते हैं। वैसी स्थिति में वह रेशम के कीड़े के समान अपने को कर्म के जाल में जकड़ लेता है और इस प्रकार अपने हाथों मोह का शिकार बन जाता है। कोई शरीरधारी जीव बिना कर्म किये कभी एक क्षण भी नहीं रह सकता। प्रत्येक प्राणी के स्वाभाविक गुण बलपूर्वक विवश करके उससे कर्म कराते हैं। जीव अपने पूर्वजन्मों के पाप-पुण्यमय संस्कारों के अनुसार स्थूल और सूक्ष्म शरीर प्राप्त करता है। उसको स्वाभाविक एवं प्रबल वासनाएं कभी उसे माता के-जैसा (स्त्रीरूप) बना देती हैं तो कभी पिता के-जैसा (पुरुषरूप)। प्रकृति का संसर्ग होने से ही पुरुष अपने को अपने वास्तविक स्वरूप के विपरीत लिङ्ग शरीर मान बैठा है। यह विपर्यय भगवान् के भजन से शीघ्र ही दूर हो जाता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देवताओ ! आप जानते ही हैं कि यह अजामिल बड़ा शास्त्रज्ञ था। शील, सदाचार और सद्गुणों का तो यह खजाना ही था। ब्रह्मचारी, सत्यनिष्ठ, विनयी, जितेन्द्रिय, मंत्रवेत्ता और पवित्र भी था। इसने गुरु, अग्नि, अतिथि और वृद्ध पुरुषों की सेवा की थी। अहंकार तो इसमें था ही नहीं। यह समस्त प्राणियों का हित चाहता, उपकार करता, आवश्यकता के अनुसार ही बोलता और किसी के गुणों में दोष नहीं ढूँढता था। एक दिन यह ब्राह्मण अपने पिता के आदेशानुसार वन में गया और वहाँ से फल-फूल, समिधा तथा कुश लेकर घर के लिए लौटा। लौटते समय इसने देखा कि एक भ्रष्ट शूद्र, जो कामी और निर्लज्ज है, शराब पीकर किसी वेश्या के साथ विहार कर रहा है। वेश्या भी शराब पीकर मतवाली हो रही है। नशे के कारण उसकी आँखें नाच रही हैं, वह अर्द्ध नग्न अवस्था में हो रही है। वह शूद्र उस वेश्या के साथ कभी गाता, कभी हँसता और कभी तरह-तरह की चेष्टाएँ करके उसे प्रसन्न करता है। निष्पाप पुरुषो ! शूद्र की भुजाओं में अङ्गरागादि कामोद्दीपक वस्तुएँ लगी हुई थी और वह उनसे उस कुलटा का आलिङ्गन कर रहा था। अजामिल उन्हें इस अवस्था में देख कर सहसा मोहित और काम के वश हो गया।

यद्यपि अजामिल ने अपने धैर्य और ज्ञान के अनुसार अपने काम-वेग से विचलित मन को रोकने की बहुत-बहुत चेष्टाएँ कीं, परन्तु पूरी शक्ति लगा देने पर भी वह मन को रोकने में असमर्थ रहा। उस वेश्या को निमित्त बनाकर काम-पिशाच ने इसके मन को ग्रस लिया। इसकी सदाचार और शास्त्र सम्बन्धी चेतना नष्ट हो गयी। अब यह मन ही मन उसी वेश्या का चिन्तन करने लगा और अपने धर्म से विमुख हो गया। अजामिल सुन्दर-सुन्दर वस्त्र आभूषण आदि वस्तुएँ, जिनसे वह प्रसन्न होती, ले आता। यहाँ तक कि इसने अपने पिता की सारी सम्पत्ति देकर भी उसी कुलटा को रिझाया। यह ब्राह्मण उसी प्रकार की चेष्टा करता, जिससे वह वेश्या प्रसन्न हो। उस स्वच्छन्दचारिणी कुलटा की तिरछी चितवन ने इसके मन को ऐसा लुभा लिया कि इसने अपनी कुलीन नवयुवती और विवाहिता पत्नी तक का परित्याग कर दिया। इसके पाप की भी भला कोई सीमा है। यह कुबुद्धि न्याय से, अन्याय से जैसे भी जहाँ कहीं भी धन मिलता, वहीं से उठा लेता। उस वेश्या के बड़े कुटुम्ब का पालन करने में हो व्यस्त रहता। इस पापी ने शास्त्राज्ञा का उल्लङ्घन करके स्वच्छन्द आचरण किया है और यह सत्पुरुषों के द्वारा निन्दित है। इसने बहुत दिनों तक वेश्या के मल-समान अपवित्र अन्न से अपना जीवन व्यतीत किया है, इसका सारा जीवन ही पापमय है। इसने अब तक अपने पापों का कोई भी प्रायश्चित नहीं किया है। इसलिये अब हम इस पापी को दण्डपाणि भगवान् यमराज के पास ले जायेंगे। वहाँ यह अपने पाप का दण्ड भोग कर शुद्ध हो जायगा।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित् ! भगवान् के नीति-निपुण एवं धर्म मर्मज्ञ पार्षदों ने यमदूतों का यह अभिभाषण सुनकर इस प्रकार कहा—

भगवान् के पार्षदों ने कहा—यमदूतो ! इसने कोटि-कोटि जन्मों की पाप राशि का पूरा-पूरा प्रायश्चित कर लिया है; क्योंकि इसने विवश होकर ही सही, भगवान् के परम कल्याणमय (मोक्षप्रद) नाम का उच्चारण तो किया है। जिस समय इसने 'नारायण' इन चार अक्षरों का उच्चारण किया, उसी समय केवल उतने से ही इस पापी के समस्त पापों का प्रायश्चित हो गया। चोर, शराबी, मित्रद्रोही, ब्रह्मघाती, गुरुपत्नीगामी, ऐसे लोगों का संसर्गी; स्त्री, राजा, पिता और गाय को मारने वाला चाहे जैसा और चाहे जितना बड़ा पापी हो, सभी के लिये यही—इतना ही सबसे बड़ा प्रायश्चित है कि भगवान् के नामों का उच्चारण किया जाय; क्योंकि भगवन्नामों के उच्चारण से मनुष्य की बुद्धि भगवान् के गुण, लीला और स्वरूप में रम जाती है और स्वयं भगवान् की उसके प्रति आत्मीय बुद्धि हो जाती है। बड़े-बड़े ब्रह्मवादी ऋषियों ने पापों के बहुत से प्रायश्चित—कृच्छ्र चान्द्रायण आदि व्रत बतलाये हैं; परन्तु उन प्रायश्चितों से पापी की वैसी जड़ से शुद्धि नहीं नहीं होती जैसी भगवान् के नामों का, उनसे गुम्फित पदों का उच्चारण करने से होती है। वे नाम पवित्र कीर्ति–भगवान् के गुणों का ज्ञान कराने वाले हैं। यदि प्रायश्चित करने के बाद भी मन फिर से कुमार्ग में—पाप की ओर दौड़े तो वह चरम सीमा का पूरा-पूरा प्रायश्चित नहीं है। इसलिये जो लोग ऐसा प्रायश्चित करना चाहें कि जिससे पापकर्मों और वासनाओं की जड़ ही उखड़ जाय, उन्हें भगवान् के गुणों का ही गान करना चाहिये।

इसलिये यमदूतो ! तुम लोग अजामिल को मत ले जाओ। इसने सारे पापों का प्रायश्चित कर लिया है, क्योंकि इसने मरते समय भगवान् के नाम का उच्चारण किया है। यमदूतो ! जैसे जान या अनजान में ईंधन से अग्नि का स्पर्श हो जाय तो वह भस्म हो जाती है, वैसे ही जान-बूझकर या अनजान में भगवान् के नामों का संकीर्तन करने से मनुष्य के सारे पाप भस्म हो जाते हैं। जैसे कोई परम शक्तिशाली अमृत को उसका गुण न जानकर अनजान में पी ले तो भी वह अवश्य ही पीने वाले को अमर बना देता है, वैसे ही अनजान में उच्चारण करने पर भी भगवान् का नाम अपना फल देकर ही रहता है (वस्तु शक्ति, श्रद्धा की अपेक्षा नहीं करती)।

श्री शुकदेवजी कहते हैं—राजन् ! इस प्रकार भगवान् के पार्षदों ने भागवत धर्म का निर्णय सुना दिया और अजामिल को यमदूतों के पाश से छुड़ा लिया। अजामिल यमदूतों के फंदे से छूट कर निर्भय और स्वस्थ हो गया। उसने भगवान् के पार्षदों के दर्शन से होने वाले आनन्द में मग्न होकर उन्हें सिर झुकाकर प्रणाम किया और अपना शरीर त्याग कर तत्काल ही भगवान् के पार्षदों का स्वरूप प्राप्त

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर लिया। अजामिल भगवान् के पार्षदों के साथ स्वर्णमय विमान पर आरूढ़ होकर आकाश मार्ग से भगवान् लक्ष्मीपति के निवास-स्थान वैकुण्ठ को चले गये।

परीक्षित ! अजामिल ने दासी का सहवास करके सारा धर्म-कर्म चौपट कर दिया था। वे अपने निन्दित कर्म के कारण पतित हो गये थे। नियमों से च्युत हो जाने के कारण उन्हें नरक में गिराया जा रहा था। परन्तु भगवान् के नाम का उच्चारण करने मात्र से वे उससे तत्काल मुक्त हो गये।

नातः परं कर्मनिबन्धकृन्तनं
मुमुक्षतां तीर्थपदानुकीर्तनात्।
न यत्पुनः कर्मसु सज्जते मनो
रजस्तमोभ्यां कलिलं ततोऽन्यथा॥
(श्रीमद्भागवत स्क. ६ अ. २ श्लोक ४६)

'जो लोग इस संसार बन्धन से मुक्त होना चाहते हैं, उनके लिये अपने चरणों के स्पर्श से तीर्थों को भी बनाने वाले भगवान् के नाम से बढ़कर और कोई साधन नहीं है; क्योंकि नाम का आश्रय लेने से मनुष्य का मन फिर कर्म के पचड़ों में नहीं पड़ता। भगवन्नाम के अतिरिक्त और किसी प्रायश्चित का आश्रय लेने पर मन रजोगुण और तमोगुण से ग्रस्त ही रहता है तथा पापों का पूरा-पूरा नाश भी नहीं होता।

परीक्षित ! यह इतिहास अत्यन्त गोपनीय और समस्त पापों का नाश करने वाला है। जो पुरुष श्रद्धा और भक्ति से इसका श्रवण-कीर्तन करता है, वह नरक में भी कभी नहीं जाता। यमराज के दूत तो आँख उठाकर उसकी ओर देख तक नहीं सकते। उस पुरुष का जीवन चाहे पापमय ही क्यों न रहा हो, वैकुण्ठलोक में उसकी पूजा होती है। परीक्षित ! देखो—अजामिल जैसे पापी ने मृत्यु के समय पुत्र के बहाने भगवान् के नाम का उच्चारण किया ! उसे भी वैकुण्ठ की प्राप्ति हो गयी ! फिर जो लोग श्रद्धा के साथ भगवन्नाम का उच्चारण करते हैं, उनकी तो बात ही क्या है।

(श्रीमद्भागवत षष्ठ स्कन्ध अध्याय १-२ के आधार से)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रुद्राक्ष की उत्पत्ति और महिमा, आँवले के फल की महिमा तथा तुलसी माहात्म्य

सोपान १२

ब्राह्मणों ने पूछा—द्विज श्रेष्ठ ! इस मर्त्यलोक में कौन ऐसा मनुष्य है, जो पुण्यात्माओं में श्रेष्ठ, परम पवित्र, सबके लिए सुलभ, मनुष्यों के द्वारा पूजन करने योग्य तथा मुनियों और तपस्वियों का भी आदर पात्र हो ?

व्यासजी बोले—विप्रगण ! रुद्राक्ष की माला धारण करने वाला पुरुष सब प्राणियों में श्रेष्ठ है। उसके दर्शन मात्र से लोगों की पाप राशि विलीन हो जाती है। रुद्राक्ष के स्पर्श से मनुष्य स्वर्ग का सुख भोगता है और उसे धारण करने से वह मोक्ष को प्राप्त होता है। जो मस्तक पर तथा हृदय और बाँह में भी रुद्राक्ष धारण करता है, वह इस संसार में साक्षात् भगवान् शङ्कर के समान है। रुद्राक्ष-धारी ब्राह्मण जहाँ रहता है, वह देश पुण्यवान् होता है। रुद्राक्ष का फल तीर्थों में महान् तीर्थ के समान है। ब्रह्म-ग्रन्थि से युक्त मङ्गलमयी रुद्राक्ष की माला लेकर जो जप, दान, स्तोत्र, मन्त्र और देवताओं का पूजन तथा दूसरा कोई पुण्य कर्म करता है, वह सब अक्षय हो जाता है तथा उसके पापों का क्षय होता है।

श्रेष्ठ द्विजगण ! अब मैं माला का लक्षण बतलाता हूँ, सुनो ! उसका लक्षण जानकर तुम लोग मोक्ष-मार्ग प्राप्त कर लोगे। जिस रुद्राक्ष में योनि का चिह्न न हो, जिसमें कीड़ों ने छेद कर दिया हो, जिसका लिङ्ग-चिह्न मिट गया हो तथा जिसमें दो बीज एक साथ सटे हुए हों, उस रुद्राक्ष के दाने को माला में नहीं लेना चाहिये। जो माला अपने हाथ से गूँथी हुई न हो, ढीली-ढाली हो, जिसके दाने एक-दूसरे से सटे हुए हों अथवा शूद्र आदि नीच कर्म करने वाले मनुष्यों ने जिसको पिरोया या गूँथा हो—ऐसी माला अशुद्ध है। उसका दूर से ही परित्याग कर देना चाहिये। जो सर्प के समान आकार (एक ओर से बड़ी और क्रमशः छोटी), नक्षत्रों की-सी शोभा धारण करने वाली सुमेरु से युक्त तथा सटी ग्रन्थि के कारण शुद्ध हो, वही माला उत्तम मानी गई है। विद्वान पुरुष को वैसी ही माला पर जप करना चाहिये। उपर्युक्त लक्षणों से युक्त शुद्ध रुद्राक्ष की माला हाथ में लेकर मध्यमा अंगुली से लगे हुए दानों को क्रमशः अंगूठे से सरकाते हुए जप करना चाहिये। मेरु के पास पहुँचने पर माला को हाथ से बार बार घुमा लेना चाहिये—मेरु का उलङ्घन करना उचित नहीं है। वैदिक पौराणिक तथा आगमोक्त जितने भी मन्त्र हैं, सब रुद्राक्ष माला पर जप करने से अभीष्ट फल के उत्पादक मोक्ष-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दायक होते हैं। जो रुद्राक्ष माला से चूते हुए जल को मस्तक पर धारण करता है, वह सब पापों से शुद्ध होकर अक्षय पुण्य का भागी होता है। रुद्राक्ष माला का एक-एक बीज एक-एक देवता का स्वरूप है। जो मनुष्य अपने शरीर में रुद्राक्ष धारण करता है, वह देवताओं में श्रेष्ठ होता है।

ब्राह्मणों ने पूछा—गुरुदेव! रुद्राक्ष की उत्पत्ति कहाँ से हुई है तथा यह इतना पवित्र कैसे हुआ?

व्यासजी बोले—ब्राह्मणो! पहले किसी सतयुग में त्रिपुर नामक दानव रहता था, वह देवताओं का वध करके अपने अन्तरिक्षचारी नगर में छिप जाता था। ब्रह्माजी के वरदान से प्रबल होकर वह सम्पूर्ण लोकों के विनाश की चेष्टा कर रहा था। एक समय देवताओं के निवेदन करने पर भगवान् शङ्कर ने यह भयंकर समाचार सुना। सुनते ही उन्होंने अपने आजगव नामक धनुष पर विकराल बाण चढ़ाया और उस दानव की ओर दिव्य दृष्टि से देखकर मार डाला। दानव आकाश से टूट कर गिरने वाली बहुत बड़ी लूका के समान इस पृथ्वी पर गिरा। इस कार्य में अत्यन्त श्रम होने के कारण रुद्रदेव के शरीर से पसीने की बूँदें टपकने लगीं। उन बूँदों से तुरन्त ही पृथ्वी पर रुद्राक्ष का महान् वृक्ष प्रकट हुआ। इसका फल अत्यन्त गुप्त होने के कारण साधारण जीव उसे नहीं जानते। तदनन्तर एक दिन कैलास के शिखर पर विराजमान हुए देवाधिदेव भगवान् शङ्कर को प्रणाम करके कार्तिकेयजी ने कहा—तात! मैं रुद्राक्ष का यथार्थ फल जानना चाहता हूँ। उस पर जप करने से तथा उसका धारण, दर्शन अथवा स्पर्श करने से क्या फल मिलता है?

भगवान् शिव ने कहा—रुद्राक्ष के धारण करने से मनुष्य सम्पूर्ण पापों से छूट जाता है। यदि कोई हिंसक पशु भी कण्ठ में रुद्राक्ष धारण करके मर जाय तो रुद्र-स्वरूप हो जाता है, फिर मनुष्य आदि के लिये तो कहना ही क्या है। जो मनुष्य मस्तक और हृदय में रुद्राक्ष की माला धारण करके चलता है, उसे पग-पग पर अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। (रुद्राक्ष में एक से लेकर चौदह तक मुख होते हैं।) जो कितने ही मुख वाले रुद्राक्षों को धारण करता है, वह मेरे समान होता है; इसलिये पुत्र! तुम प्रयत्न करके रुद्राक्ष धारण करो। जो रुद्राक्ष को धारण करके इस भूतल पर प्राण त्याग करता है, वह सब देवताओं से पूजित होकर मेरे रमणीय धाम को जाता है। जो मृत्युकाल में मस्तक पर एक रुद्राक्ष की माला धरता है, वह शैव, वैष्णव, शाक्त, गणेशोपासक और सूर्योपासक सब कुछ है। जो इस प्रसङ्ग को पढ़ता-पढ़ाता, सुनता-सुनाता है, वह सब पापों में मुक्त होकर सुख पूर्वक मोक्ष लाभ करता है।

कार्तिकेयजी ने कहा—जगदीश्वर! मैं अन्यान्य फलों की पवित्रता के विषय में भी प्रश्न कर रहा हूँ। सब लोगों के हित के लिये यह बतलाइये कि कौन-कौन से फल उत्तम हैं?

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ईश्वर ने कहा – बेटा ! आँवले का फल समस्त लोकों में प्रसिद्ध और परम पवित्र है। उसे लगाने पर स्त्री और पुरुष सभी जन्म मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाते हैं। यह पवित्र फल भगवान् विष्णु को प्रसन्न करने वाला एवं शुभ माना गया है, इसके भक्षण मात्र से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। आँवला खाने से आयु बढ़ती है, उसका जल पीने से धर्म सञ्चय होता है और उसके द्वारा स्नान करने से दरिद्रता दूर होती है तथा सब प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। कार्तिकेय ! जिस घर में आँवला सदा मौजूद रहता है, वहाँ दैत्य और राक्षस नहीं जाते। एकादशी के दिन यदि एक ही आँवला मिल जाय तो उसके सामने गङ्गा, गया, काशी और पुष्कर आदि तीर्थ कोई विशेष महत्व नहीं रखते। जो दोनों पक्षों की एकादशी को आँवले से स्नान करता है, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं और वह विष्णु लोक में सम्मानित होता है। षडानन ! जो आँवले के रस से सदा अपने केश साफ करता है, वह पुनः माता के स्तन का दूध नहीं पीता। आँवले का दर्शन, स्पर्श तथा उसके नाम का उच्चारण करने से सन्तुष्ट होकर वरदायक भगवान् विष्णु अनुकूल हो जाते हैं। जहाँ आँवले का फल मौजूद होता हैं, वहाँ भगवान् विष्णु सर्वदा विराजमान रहते हैं तथा उस घर में ब्रह्मा एवं सुस्थिर लक्ष्मी का भी वास होता है। इसलिये अपने घर में आँवला अवश्य रखना चाहिये। जो आँवले का बना हुआ मुरब्बा एवं बहुमूल्य नैवेद्य अर्पण करता है, उसके ऊपर भगवान् श्री विष्णु बहुत संतुष्ट होते हैं। उतना संतोष उन्हें सैकड़ों यज्ञ करने पर भी नहीं हो सकता।

स्कन्द ! योगी मुनियों तथा ज्ञानियों को जो गति प्राप्त होती है, वही आँवले का सेवन करने वाले मनुष्य को भी मिलती है। तीर्थों में वास एवं तीर्थ-यात्रा करने से तथा नाना प्रकार के व्रतों से मनुष्य को जो गति प्राप्त होती है, वही आँवले के फल का सेवन करने से भी प्राप्त हो जाती है। तात ! प्रत्येक रविवार तथा विशेषतः सप्तमी तिथि को आँवले का फल दूर से ही त्याग देना चाहिये। संक्रान्ति के दिन, शुक्रवार को तथा षष्ठी, प्रतिपदा, नवमी और अमावस्या को आँवले का दूर से ही परित्याग करना उचित है। जिस मृतक के मुख, नाक, कान अथवा बालों में आँवले का फल हो, वह विष्णु लोक में जाता है। आँवले के सम्पर्क मात्र से मृत व्यक्ति भगवद्धाम को प्राप्त होता है। जो धार्मिक मनुष्य शरीर में आँवले का रस लगाकर स्नान करता है, उसे पद-पद पर अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। उसके दर्शन मात्र से जितने पापी जन्तु हैं, वे भाग जाते हैं तथा कठोर एवं दुष्ट ग्रह पलायन कर जाते हैं।

स्कन्द ! पूर्व काल की बात है—एक चाण्डाल शिकार खेलने के लिए वन में गया। वहाँ अनेकों मृगों और पक्षियों को मार कर जब वह भूख-प्यास से अत्यन्त पीड़ित हो गया, तब सामने ही उसे एक आँवले का वृक्ष दिखाई दिया। उसमें खूब

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मोटे-मोटे फल लगे थे। चाण्डाल सहसा वृक्ष के ऊपर चढ़ गया और उसके उत्तम-उत्तम फल खाने लगा। प्रारब्धवश वह वृक्ष के शिखर से पृथ्वी पर गिर पड़ा और वेदना से व्यथित होकर इस लोक से चल बसा। तदनन्तर सम्पूर्ण प्रेत, राक्षस, भूतगण तथा यमराज के सेवक बड़ी प्रसन्नता के साथ वहां आये; किन्तु उसे नहीं ले जा सके। यद्यपि वे महान् बलवान थे, तथापि उस मृतक चाण्डाल की ओर आँख उठा कर भी नहीं देख सके। जब कोई भी उसे पकड़ कर नहीं ले जा सका, तब वे अपनी असमर्थता देख कर आश्चर्यचकित हो रहे थे। उसी समय कुछ महान् तपस्वी विद्वान् उधर आ निकले। वे सम्पूर्ण प्रेत, राक्षस, भूतगण उन ज्ञानी तपस्वी विद्वानों के पास जाकर कहने लगे, हे महर्षियो! यह चाण्डाल तो बड़ा पापी था; फिर क्या कारण है कि हम लोग तथा यमराज के सेवक जो इसे लेने को आये थे, इसकी ओर कोई भी नहीं देख सके! 'यह हमारा है, यह हमारा है' कहते ही झगड़ते रहे; किन्तु उसे ले जाने की किसी की भी शक्ति नहीं हो सकी। क्यों और किसके प्रभाव से यह सूर्य की भाँति दुष्प्रेक्ष्य हो रहा है—उसकी ओर देखना भी कठिन हो गया है।

ज्ञानी महर्षियों ने कहा—हे प्रेतगणो! इस चाण्डाल ने आँवले के पके हुए फल खाये थे, उसकी डाल टूट जाने से उसके सम्पर्क में ही इसकी मृत्यु हुई है। मृत्युकाल में भी इसके आस-पास में बहुत से फल बिखरे पड़े थे। इन्हीं सब कारणों से तुम लोगों का इसकी ओर देखना कठिन हो रहा है। इस पापी का आँवले से सम्पर्क के समय कोई निषिद्ध बेला भी नहीं थी, इसलिए यह दिव्य-लोक को प्राप्त होगा।

प्रेतगण बोले—हे मुनीश्वरो! आप लोग उत्तम ज्ञानी हैं, इसलिए हम आपसे एक प्रश्न पूछते हैं। जहाँ वेदों और नाना प्रकार के मन्त्रों का गम्भीर घोष होता है, जहाँ नाना प्रकार के पुराणों और स्मृतियों का स्वाध्याय किया जाता है, जहां जप, होम, यज्ञ तथा देव पूजनादि शुभ कार्य होते हैं वहाँ हमारा एक क्षण भी ठहरना असंभव है, इसलिए हमें यह बतलाइये कि कौन सा कर्म करने से मनुष्य प्रेतयोनियों को प्राप्त होते हैं?

ब्रह्मर्षियों ने कहा—अनेक प्रकार के दुष्ट कर्म होते हैं, सभी का वर्णन तो इस समय करना सम्भव नहीं है, किन्तु संक्षेप में कुछ इस प्रकार हैं—

जो झूठी गवाही देते हैं, जो ब्राह्मणों, ऋषि-मुनियों, गुरुजनों में दोष ढूँढ़ने में लगे रहते हैं, शुभ पुण्यप्रद कार्यों में बाधा डालते हैं तथा तथा श्रेष्ठ ब्राह्मणों को दान दिये जाने वाले कार्य में रुकावट डालते हैं, वे चिरकाल तक प्रेत योनियों तथा नरकों में पड़े रहते हैं। जो मूर्ख, बैलों से उनकी सामर्थ्य से अधिक काम लेते हैं तथा उनके भूख-प्यास की तृप्ति नहीं करते, अपनी प्रतिज्ञा करके प्रतिज्ञा का त्याग कर देते है, दूसरों को धोखा देते हैं; असत्य बोलते हैं, व्रत भंग करते हैं, जो कमल

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के पत्ते पर भोजन करते हैं वे सब प्रेत योनियों को प्राप्त होते हैं। जो अपने माता-पिता, गुरुजनों का सम्मान नहीं करते, उनके खाने-पीने-पहनने का प्रबन्ध नहीं करते, अपनी तथा अपने सम्बन्धियों की कन्याओं का विक्रय करते हैं, वे सब इसी भूतल पर प्रेत होते हैं और नरक में वास करते हैं। जो मांस-मदिरा का भक्षण करते हैं, जीव हिंसा करते हैं, प्रेतों की अर्चना करते व बलि देते हैं, प्रेतों की साधना करते हैं, वे भी मृत्यु होने पर प्रेत-योनियों को ही प्राप्त होते हैं। ऐसे मनुष्यों को नरक यातनायें भोगनी पड़ती हैं।

प्रेतों ने पूछा—हे महर्षियो ! किस प्रकार किस कर्म के आचरण से मनुष्य प्रेत नहीं होते ?

महर्षियों ने कहा—जिन बुद्धिमान मनुष्यों ने तीर्थों का सेवन किया है, तीर्थों में स्नान, ध्यान, दान किया है; भगवान् शिव, विष्णु, भगवती, गणेश, सूर्य की पूजा अर्चना करके नमस्कार, भेंट प्रदान की है, प्रेत वे योनियों को प्राप्त नहीं होते। जो एकादशी अथवा द्वादशी को उपवास करके भगवान् विष्णु का पूजन करता है, जो वेदों के अक्षर, सूक्त, स्तोत्र और मन्त्रों के द्वारा देवताओं की पूजा करता है या पूजा कराई है. उन्हें प्रेत नहीं होना पड़ता। जो नाना प्रकार के व्रतों का अनुष्ठान करते हैं, धर्मयुक्त नानाप्रकार की कथाओं का श्रवण, मनन, पठन करते हैं, रुद्राक्ष, तुलसी को माला धारण करते हैं, वे प्रेत नहीं होते। जो आंवले के रस से स्नान करते हैं, आँवले के फल का भक्षण करते हैं, आँवले के द्वारा भगवान विष्णु का पूजन करते हैं, वे कभी प्रेत योनियों में नहीं जाते।

प्रेत बोले—महर्षियो ! सन्तों के दर्शनों से पुण्य व कल्याण प्राप्त होता है—इस बात को पौराणिक विद्वान जानते है। हमें आप जैसे ब्रह्मज्ञानी विद्वानों का दर्शन हुआ है; इसलिए आप लोग हमारा कल्याण करें। धीर महात्माओ ! जिस उपाय से हम सबको प्रेत योनि से छुटकारा मिले, ऐसा सूक्ष्म उपाय बतलाओ। हम आप लोगों की शरण में आये हैं।

महर्षियों ने कहा—हमारे वचन से तुम लोग आँवले का भक्षण करो। वह तुम्हारे लिये कल्याणकारक होगा। उसके प्रभाव से ही तुम उत्तम लोक में जाने योग्य बन जाओगे।

महादेवजी कहते हैं—इस प्रकार से ऋषियों की वाणी सुन कर वे पिशाच आँवले के वृक्ष पर चड़े गये और उन्होंने आँवले के फलों को खुशी-खुशी उत्तमता पूर्वक खाया। तब कुछ समय पश्चात् ही देवलोक से उत्तम दिव्य सुवर्णमय विमान, सुन्दर शोभायुक्त वहाँ आया। पिशाचों ने उस पर आरूढ़ होकर स्वर्गलोक की यात्रा की। बेटा ! अनेक व्रतों और यज्ञों के अनुष्ठान से भी जो अत्यन्त दुर्लभ है, वही लोक उन्हें आँवले का भक्षण मात्र से मिल गया।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कार्तिकेयजी ने पूछा—पिताजी ! जब आँवले के फल का भक्षण करने मात्र से प्रेत पुण्यात्मा होकर स्वर्ग को चले गये तब मनुष्य आदि जितने प्राणी हैं, वे भी आँवला खाने से क्यों नहीं तुरन्त स्वर्ग में चले जाते ?

महादेवजी ने कहा—बेटा ! स्वर्ग की प्राप्ति तो उन्हें भी होती है; किन्तु तुरंत ऐसा न होने में एक यह कारण है कि उनका ज्ञान लुप्त रहता है, वे अपने हित-अहित की बात नहीं जानते। इसलिए आँवले के महत्त्व में उनकी श्रद्धा नहीं होती, श्रद्धा व विश्वास ही फल की प्राप्ति में मुख्य कारण व शीघ्र फल प्रदान करने वाला होता है।

जिस घर की मालकिन सहज ही काबू में न आने वाली, पवित्रता, और संयम से रहित, गुरुजनों द्वारा निकाली हुई तथा दुराचारिणी होती है, वहाँ ही प्रेत रहा करते हैं। जो कुल और जाति से नीच, बल और उत्साह से रहित, बहरे, दुर्बल और दीन हैं, वे कर्मजनित पिशाच हैं। जो माता-पिता, गुरु और देवताओं की निन्दा करते हैं, पाखण्डी और वामवार्गी हैं, जो गले में फाँसी लगाकर, पानी में डूबकर, तलवार या छुरा भोंक कर अथवा जहर खा कर, शरीर में स्वयं अग्नि लगा कर आत्मघात कर लेते हैं, वे पहले प्रेत होते हैं इसके पश्चात् इस लोक में चाण्डाल आदि नीच योनियों में जन्म ग्रहण करते हैं। जो माता-पिता आदि से द्रोह करते हैं, भगवत् पूजन नहीं करते, ध्यान–अध्ययन, भगवत् कथादि उत्तम ज्ञान से शून्य रहते हैं, तीर्थ-स्नान, देवदर्शन, मंत्र साधनाहीन होते हैं, वे ही प्रेत होते हैं और नीच योनियों में जन्म लेते हैं। जो गुरु पत्नी, माता समान चाची, मामी, बुआ मौसी, बहिन समान, पुत्री समान या नीच जाति की स्त्रियों में गमन करते हैं, वे भी प्रेत योनि में जन्म लेते हैं और नरक यातना भोगते हैं। म्लेच्छों के देश में जिनकी मृत्यु होती है, जो म्लेच्छों के समान आचरण करते हैं, स्त्री के धन से जो जीविका चलाते हैं, जिनके द्वारा स्त्रियों की रक्षा नहीं होती वे भी प्रेत होते हैं। जो क्षुधा पीड़ित, थके-माँदे, गुणवान् पुण्यात्मा अतिथि के रूप में आये हुए ब्राह्मण को लौटा देते हैं—उसका यथावत् भोजन-वस्त्रादि द्वारा सत्कार नहीं करते, जो गो-भक्षी म्लेच्छों के हाथ गौएँ बेच देते हैं; जो जीवन भर स्नान, सन्ध्या, वेद पाठ, यज्ञानुष्ठान, उत्तम ज्ञान से दूर रहते हैं; जो जूठे सकोरे, पत्तल आदि व शरीर के मल-मूत्र तीर्थजल या तीर्थभूमि, देवस्थान या यज्ञशाला में गिराते है, वे निसंदेह प्रेत होकर नरकगामी होते हैं। जो स्त्रियाँ अपने पति को छोड़ अन्य के साथ समागम करती हैं या दूसरे पुरुष के साथ रहती हैं; वे चिरकाल तक प्रेत योनि में रहती हैं, नरक भोगती हैं तत्पश्चात् नीच चाण्डाल योनियों में जन्म ग्रहण करती हैं। जो घर में रहने वालों से छुपा कर उन्हें न खिलाकर विषय इन्द्रियों से मोहित होकर पति को धोखा देकर स्वयं मिठाइयाँ उड़ाती हैं, वे पापाचारिणी स्त्रियाँ चिरकाल तक इस पृथ्वी पर प्रेत होती हैं। जो मनुष्य बलपूर्वक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

या धोखा देकर दूसरे की वस्तुएँ अपने अधिकार में कर लेते हैं, इसी भाँति दूसरे की स्त्रियों को अपने काबू में करके उनके साथ समागम करते हैं; घर पर आये हुए अतिथियों का अनादर करते हैं, वे सभी पहले प्रेत होते हैं तत्पश्चात् नरकों में पड़े रहते हैं।

इसलिये जो विष्णु भगवान् को आँवले के व्यंजन या आँवला समर्पण कर विष्णु भगवान् का ध्यान कर स्मरणपूर्वक आँवला या आँवले के बने पदार्थ भक्षण करते है, वे सब पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक में प्रतिष्ठित होते हैं। अतः सब सब प्रकार से प्रयत्न करके तुम आँवले के कल्याणमय फल का सेवन करो। जो इस पवित्र और मङ्गलमय उपाख्यान का प्रतिदिन श्रवण करता है, वह सब पापों से शुद्ध होकर भगवान् विष्णु के लोक में सम्मानित होता है। जो सदा ही लोगों में, विशेषतः वैष्णवों में आँवले के इस माहात्म्य का श्रवण कराता है, वह भगवान् विष्णु के सायुज्य को प्राप्त होता है—ऐसा पौराणिक विद्वानों का कथन है।

कार्तिकेयजी ने कहा—प्रभो! रुद्राक्ष और आँवला इन दोनों फलों की पवित्रता तो मैं जान गया; अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि कौन सा ऐसा वृक्ष है, जिसका पत्ता और पुष्प भी मोक्ष प्रदान करने वाला है।

महादेवजी बोले—बेटा! सब प्रकार के पत्तों और पुष्पों की अपेक्षा तुलसी के पत्ते और पुष्प (मंजरी) सर्वश्रेष्ठ मानी गयी है। वह परम मङ्गलमयी, समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाली, शुद्ध, श्रीविष्णु को अत्यन्त प्रिय तथा 'वैष्णवी' नाम धारण करने वाली है। वह सम्पूर्ण लोकों में श्रेष्ठ, शुभ तथा भोग और मोक्ष प्रदान करने वाली हैं। भगवान् विष्णु ने पूर्वकाल में सम्पूर्ण लोकों का हित करने के लिए तुलसी का वृक्ष रोपा था। तुलसी के पत्ते और पुष्प सब धर्मों में प्रतिष्ठित हैं। जैसे भगवान् विष्णु को लक्ष्मी और मैं दोनों प्रिय हैं, उसी प्रकार यह तुलसीदेवी भी परम प्रिय हैं। हम तीनों के अतिरिक्त ऐसा कोई चौथा पदार्थ, देवता, मनुष्य तथा जीव कोई भी नहीं जान पड़ता, जो भगवान् विष्णु को इतना प्रिय हो। तुलसीदल के बिना दूसरे-दूसरे फूलों, पत्तों तथा चन्दन आदि के लेपों से भगवान् विष्णु को उतना संतोष प्राप्त नहीं होता, जितना तुलसी के पत्तों तथा मंजरी के अर्पण करने से होता है।

जिसने तुलसीदल के द्वारा पूर्ण श्रद्धा के साथ प्रतिदिन भगवान् विष्णु का पूजन किया है, उसने दान, होम, यज्ञ और व्रत आदि सब पूर्ण कर लिये। तुलसीदल से भगवान् की पूजा कर लेने पर कान्ति, सुख, भोग सामग्री, यश, लक्ष्मी, श्रेष्ठकुल, सुशील पत्नी, पुत्र, कन्या, धन, राज्य, आरोग्यता, ज्ञान-विज्ञान, वेद, वेदाङ्ग, शास्त्र, पुराण, तन्त्र और संहिता-सब कुछ उसके करतलगत हो जाते हैं, ऐसा मेरा विचार है। जैसे पुण्यसलिला गङ्गा मुक्ति प्रदान करने वाली है, उसी प्रकार यह तुलसी भी

CC-0, Mahila Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कल्याण प्रदान करने वाली है। स्कन्द ! यदि मञ्जरी युक्त तुलसी के पत्रों द्वारा भगवान् श्रीविष्णु की पूजा की जाय तो उसके पुण्य फल का वर्णन करना असम्भव है। जहाँ तुलसी का वन है, वहीं भगवान् श्रीकृष्ण की समीपता है। वहाँ उसी स्थान पर ब्रह्मा और लक्ष्मीजी भी सम्पूर्ण देवताओं के साथ विराजमान रहते हैं। इसलिये अपने निकटवर्ती स्थान में तुलसीदेवी के वृक्ष का रोपण कर उनकी पूजा करना चाहिए। तुलसी वृक्ष के निकट जो स्तोत्र-मन्त्र आदि का पाठ, जप किया जाता है, वह सब अनन्त गुना फल प्रदान करने वाला होता है।

प्रेत, पिशाच, कूष्ठमाण्ड, ब्रह्मराक्षस, भूत और दैत्य आदि सब तुलसी के वृक्ष के पास नहीं आते, दूर भागते हैं। ब्रह्महत्यादि पाप तथा अनेक प्रकार के पापों, खोटे विचारों से उत्पन्न होने वाले रोग, दुःख, ताप, ये सब तुलसी वृक्ष के समीप रहने व तुलसी वृक्ष की पूजा से दूर हो जाते हैं। जिसने भगवान् की पूजा के लिये पृथ्वी पर तुलसी का बगीचा लगा रखा है, उसने उत्तम दक्षिणाओं से युक्त सौ यज्ञों का विधिवत् अनुष्टान पूर्ण कर लिया है। जो श्री भगवान् की प्रतिमाओं तथा शालग्राम-शिलाओं पर चढ़े हुए तुलसी दल को प्रसाद रूप में ग्रहण करता है, वह श्रीविष्णु के सायुज्य को प्राप्त होता है। जो श्री हरि की पूजा करके उन्हें निवेदन किये हुए तुलसीदल को अपने मस्तक पर धारण करता है, वह पापों से शुद्ध होकर स्वर्गलोक को प्राप्त होता है—

पूजने कीर्तने ध्याने रोपणे धारणे कलौ।
तुलसी दहते पापं स्वर्गं मोक्षं ददाति च॥
उपदेशं ददेदस्याः स्वयमाचरते पुनः।
स याति परमं स्थानं माधवस्य निकेतनम्॥
(पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अध्याय ५८।१३१-१३२)

'कलियुग में तुलसी का पूजन, कीर्तन, ध्यान, रोपण और धारण करने से वह पापों को जलाती और स्वर्ग एवं मोक्ष प्रदान करती है। जो तुलसी के पूजन आदि का दूसरों को उपदेश देता है और स्वयं भी आचरण करता है, वह भगवान् श्री लक्ष्मीपति के परम धाम को प्राप्त होता है।'

जो वस्तु भगवान् विष्णु को प्रिय जान पड़ती है, वह मुझे भी अत्यन्त प्रिय है। श्राद्ध और यज्ञ आदि कार्यों में तुलसी का एक पत्ता भी महान् पुण्य प्रदान करने वाला है। जिसने तुलसी की सेवा की है, उसने गुरु, ब्राह्मण, देवता और तीर्थ सबका भली भाँति सेवन कर लिया। इसलिए षडानन ! तुम तुलसी का सेवन करो।

जो शिखा में तुलसी स्थापित करके प्राणों का त्याग करता है, वह पाप राशि से मुक्त हो जाता है। राजसूय आदि यज्ञ, भाँति-भाँति के व्रत तथा संयम के द्वारा धीर पुरुष जिस गति को प्राप्त करता है, वही उसे तुलसी की सेवा से मिल

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जाती है। तुलसी के एक पत्र से श्री हरि की पूजा करके मनुष्य वैष्णवत्व को प्राप्त होता है। उसके लिए अन्यान्य शास्त्रों के विस्तार की क्या आवश्यकता है। जिसने तुलसी की शाखा तथा कोमल पत्तियों से भगवान् विष्णु की पूजा की है, वह फिर कभी माता का दूध नहीं पीता-उसका पुनर्जन्म नहीं होता। कोमल तुलसीदलों के द्वारा प्रतिदिन श्री हरि की पूजा करके मनुष्य अपनी सैकड़ों और हजारों पीढ़ियों को पवित्र कर सकता है। तात! ये मैंने तुमसे तुलसी के प्रधान-प्रधान गुण बतलाये हैं। सम्पूर्ण गुणों का वर्णन तो बहुत अधिक है। यह उपाख्यान पुण्य राशि का सञ्चय करने वाला है। जो प्रतिदिन इसका श्रवण करता है, वह पूर्वजन्म के किये हुए पाप तथा जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाता है। बेटा! इस अध्याय के पाठ करने वाले पुरुष को कभी रोग नहीं सताते, अज्ञान उसके निकट नहीं आता। उसकी सर्वदा विजय होती है।

(पद्मपुराण सृष्टि खण्ड अध्याय ५८ के आधार से)

तुलसी-मञ्जरीभिर्यः कुर्यात् हरिहरार्चनम्।
न स गर्भगृहं याति मुक्तिभागी न संशय॥

'तुलसी की मंजरी से जो भगवान् विष्णु तथा शिवजी की पूजा करता है, उसको गर्भ में वास नहीं करना पड़ता, वह अवश्य मुक्ति पाता है।'

□

वसिष्ठजी द्वारा पुष्कर तीर्थ माहात्म्य वर्णन

सोपान १३

सूतजी कहते हैं—द्विजवरो! प्राचीनकाल में राजा युधिष्ठिर के साथ जो देवर्षि नारद का संवाद हुआ था, उसका वर्णन करता हूँ; आप लोग श्रवण करें। महारथी पाण्डवों के राज्य का अपहरण हो चुका था। वे द्रौपदी के साथ वन में निवास करते थे। एक दिन उन्हें परम महात्मा देवर्षि नारदजी ने दर्शन दिया। पाण्डवों ने उनका स्वागत-सत्कार किया। नारदजी उनकी की हुई पूजा स्वीकार करके युधिष्ठिर से बोले—धर्मात्माओं में श्रेष्ठ! तुम क्या चाहते हो? यह सुन कर धर्मनन्दन राजा युधिष्ठिर ने भाइयों सहित हाथ जोड़ देवतुल्य नारदजी को प्रणाम किया और कहा—'महाभाग! आप सम्पूर्ण लोकों द्वारा पूजित हैं। आपके

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सन्तुष्ट हो जाने पर मैं अपने को कृतार्थ मानता हूँ—मुझे किसी बात की आवश्यकता नहीं है। मुनिश्रेष्ठ ! जो तीर्थयात्रा में प्रवृत्त होकर समूची पृथ्वी की परिक्रमा करता है, उसको क्या फल मिलता है ? ब्रह्मन् ! इस बात को आप पूर्ण रूप से बताने की कृपा करें।'

नारदजी बोले—राजन् ! पहले की बात है, राजाओं में श्रेष्ठ दिलीप धर्मानुकूल व्रत का नियम लेकर गङ्गाजी के तट पर मुनियों की भाँति निवास करते थे। कुछ काल के बाद एक दिन जब महामना दिलीप जप कर रहे थे, उसी समय उन्हें ऋषियों में श्रेष्ठ वसिष्ठजी के दर्शन हुए। महर्षि को उपस्थित देख राजा उनका विधिवत् पूजन किया और कहा—'उत्तम व्रत का पालन करने वाले मुनिश्रेष्ठ ! मैं आपका दास दिलीप हूँ। आज आपका दर्शन पाकर मैं सब पापों से मुक्त हो गया।'

वसिष्ठजी ने कहा—महाभाग ! तुम धर्म के ज्ञाता हो। तुम्हारे विनय, इन्द्रिय-संयम तथा सत्य आदि गुणों से मैं सर्वदा सन्तुष्ट हूँ। बोलो, तुम्हारा क्या प्रिय करूँ ?

दिलीप बोले—मुने ! आप प्रसन्न हैं, इतने से ही मैं अपने को कृतकृत्य समझता हूँ। तपोधन ! जो (तीर्थयात्रा के उद्देश्य से) सारी पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है, उसको क्या फल मिलता है ? यह मुझे बतलाइये।

वसिष्ठजी ने कहा—तात ! तीर्थों का सेवन करने से जो फल मिलता है, उसे एकाग्रचित्त होकर सुनो। तीर्थ ऋषियों के परम आश्रय हैं, मैं उनका वर्णन करता हूँ। वास्तव में तीर्थ सेवन का फल उसे ही मिलता है जिसके हाथ, पैर और मन अच्छी तरह अपने वश में हों; जो विद्वान्, तपस्वी और कीर्तिमान हो तथा जिसने दान लेना छोड़ दिया हो, जो संतोषी, नियमपरायण, पवित्र, अहंकारशून्य और उपवास (व्रत) करने वाला हो; जो अपने आहार और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर चुका हो; जो सब दोषों से मुक्त हो तथा जिसमें क्रोध का अभाव हो; जो सत्यवादी, दृढ़प्रतिज्ञ तथा सम्पूर्ण भूतों के प्रति अपने-जैसा भाव रखने वाला हो, उसी को तीर्थ का पूर्ण फल प्राप्त होता है। राजन् ! दरिद्र मनुष्य यज्ञ नहीं कर सकते क्योंकि उसमें नाना प्रकार के साधन और सामग्री की आवश्यकता होती है। कहीं कोई राजा या धनवान् पुरुष ही यज्ञ का अनुष्ठान कर पाते हैं। इसलिये मैं तुम्हें वह शास्त्रोक्त कर्म बतला रहा हूँ जिसे दरिद्र मनुष्य भी कर सकते हैं तथा जो पुण्य की दृष्टि से यज्ञ के फलों की समानता करने वाला है; उसे ध्यान देकर सुनो।

पुष्कर तीर्थ में जाकर मनुष्य देवाधिदेव के समान हो जाता है। महाराज ! दिव्यशक्ति से सम्पन्न देवता, दैत्य, ब्रह्मर्षिगण वहाँ तपस्या करके महान् पुण्य के

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भागी हुए हैं। जो मनीषी पुरुष मन से भी पुष्कर तीर्थ के सेवन की इच्छा करता है, उसके सब पाप धुल जाते हैं तथा वह स्वर्गलोक में पूजित होता है। इस तीर्थ में पितामह ब्रह्माजी सर्वदा प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं। महाभाग! पुष्कर में आकर देवता और ऋषि भी महान पुण्य युक्त हो परमसिद्धि को प्राप्त हुए हैं। जो वहाँ स्नान करके पितरों और देवताओं के पूजन में प्रवृत्त होता है, उसके लिए मनीषी विद्वान् अश्वमेध से दस गुने पुण्य की प्राप्ति बतलाते हैं। पुष्कर के वन में जाकर जो एक ब्राह्मण को भी भोजन कराता है, वह उसके पुण्य से ब्रह्मधाम में स्थित अजित लोकों को प्राप्त होता है। जो सायंकाल और प्रातःकाल हाथ जोड़ कर पुष्कर तीर्थ का चिन्तन करता है. वह सब तीर्थों में स्नान करने का फल प्राप्त करता है। पुष्कर में जाने मात्र से स्त्री हो जाहे पुरुष हो उसके किये हुए पाप नष्ट हो जाते हैं। जैसे भगवान् विष्णु सम्पूर्ण देवताओं के आदि हैं, उसी प्रकार पुष्कर भी समस्त तीर्थों का आदि कहलाता है। पुष्कर में नियम और पवित्रता-पूर्वक बारह वर्ष तक निवास करके मनुष्य सम्पूर्ण यज्ञों का फल प्राप्त कर लेता है और अन्त में ब्रह्मलोक को जाता है। जो पूरे सौ वर्षों तक अग्निहोत्र का अनुष्ठान करता है अथवा केवल कार्तिक की पूर्णिमा को पुष्कर में निवास करता है, उसके ये दोनों कर्म समान ही हैं। पहले तो पुष्कर में जाना ही कठिन है, जाने पर भी वहाँ तपस्या करना और भी कठिन है; पुष्कर में दान देना उससे भी कठिन है सदा वहां निवास करना तो बहुत ही कठिन है।

जिन पुरुषों ने पुष्कर तीर्थ में अपनी पत्नी के दिये हुए पुष्कर के जल से सन्ध्या करके गायत्री का जप कर लिया है, उन्होंने तो मानों सम्पूर्ण वेदों का अध्ययन ही कर लिया है। पुष्कर तीर्थ के पवित्र जल को झारी अथवा मिट्टी के करवे (पात्र) में ले आकर सायंकाल में एकाग्र मन से प्राणायामपूर्वक सन्ध्योपासना करना चाहिए, इस प्रकार से जो सन्ध्या करने का फल है, उसका अब आगे श्रवण करो। इस प्रकार के जल के द्वारा सन्ध्या करने वाले पुरुष को एक ही दिन की सन्ध्या करने से बारह वर्षों तक सन्ध्योपासन करने का फल मिल जाता है। पुष्कर में स्नान करने पर अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है, दान करने से उसके दस गुने और उपवास करने पर अनन्तगुने फल की प्राप्ति है। यह बात मैंने बहुत सोच विचार कर कही है। तीर्थ से अपने ठहरने के स्थान (डेरे) पर आकर शास्त्रीय विधि के अनुसार पिण्डदानपूर्वक पितरों का श्राद्ध करना चाहिये। ऐसा करने से उसके पितर ब्रह्मा के एक दिन (एक कल्प) तक तृप्त रहते हैं। अपने डेरे (ठहरने के स्थान) पर आकर पिण्डदान करने वाले को तीर्थ की अपेक्षा आठ गुना अधिक पुण्य होता है क्योंकि वहाँ द्विजातियों द्वारा दिये जाते हुए पिण्डदान पर नीचे पुरुषों की दृष्टि नहीं पड़ती। एकान्त और सुरक्षित गृह में हो पितरों के श्राद्ध का विधान है क्योंकि नीच पुरुषों की दृष्टि से दूषित हो जाने पर पिण्डदान

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पितरों को नहीं पहुँचाता है। आत्म कल्याण की इच्छा रखने वाले पुरुष को गुप्त रूप से ही पिण्डदान श्राद्ध करना चाहिए। मनुजी का कथन है—

तीर्थेषु ब्राह्मणं नैव परीक्षेत कथंचन।
अन्नार्थिनमनुप्राप्त भोज्यं नु मनुरब्रवीत ।।
(पद्मपुराण सृष्टि खण्ड २९।२१२)

तीर्थों में श्राद्ध के लिए ब्राह्मण की परीक्षा नहीं करना चाहिए। जो भी अन्न की इच्छा से अपने पास आ जाय, उसे भोजन करा देना चाहिए।'

श्राद्ध के योग्य समय हो या न हो—तीर्थ में पहुँचते ही मनुष्य को सर्वदा स्नान, तर्पण और श्राद्ध करना चाहिये। पिण्डदान करना तो बहुत ही उत्तम होता है, उसके द्वारा पितर अधिक प्रसन्न होते हैं। जब अपने वंश का कोई व्यक्ति तीर्थ में जाता है तब पितर बड़ी आशा से उसकी ओर देखते हैं, उससे जल पाने की अभिलाषा रखते हैं; अत इस कार्य में विलम्ब नहीं करना चाहिए और यदि दूसरा कोई इस कार्य को करना चाहता हो तो उसमें विघ्न नहीं डालना चाहिये। ऐसे काम में विघ्न करने वाले को पाप लगता है। कहा भी है—

कृते युगे पुष्कराणि त्रेतायां नैमिषं स्मृतम्।
द्वापरे च कुरुक्षेत्रं कलौ गङ्गां समाश्रयेत् ।।
.....
यदन्यत्रकृतं पापं तीर्थे तद्याति लाघवम्।
न तीर्थकृतमन्यत्र क्वचित् पापं व्यपोहति ।।
(पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अध्याय २९।२२८-२२९)

'सत्य युग में पुष्कर का, त्रेता में नैमिषारण्य का, द्वापर में कुरुक्षेत्र तथा कलियुग में गङ्गाजी का आश्रय लेना चाहिये। अन्यत्र स्थानों में किया हुआ पाप तीर्थ में जाने पर कम हो जाता है; किन्तु तीर्थ स्थानों में किया हुआ पाप अन्यत्र कहीं भी दूर नहीं हो सकता है।'

जो सवेरे और शाम को हाथ जोड़कर पुष्कर तीर्थ का स्मरण करता है, उसे समस्त तीर्थों में आचमन करने का फल प्राप्त हो जाता है। जो पुष्कर में — इन्द्रिय-संयमपूर्वक रह कर प्रातःकाल और सन्ध्या के समय आचमन करता है उसे सम्पूर्ण यज्ञों का फल प्राप्त होता है तथा वह ब्रह्मलोक को जाता है। जो बारह वर्ष, बारह दिन, एक मास अथवा पक्ष भर भी पुष्कर में निवास करता है, वह परम गति को प्राप्त करता है। इस पृथ्वी पर करोड़ों तीर्थ हैं। वे सब तीनों सन्ध्याओं के समय पुष्कर में उपस्थित होते हैं। पिछले हजारों जन्मों के तथा जन्म

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

से लेकर मृत्युपर्यन्त वर्तमान जीवन के जितने भी पाप हैं, उन सबको पुष्कर में एक बार स्नान करके मनुष्य भस्म कर डालता है। पूर्वजन्मों के अथवा इस जन्म के किसी विशिष्ट पुण्य प्रभाव से ही मनुष्य पुष्कर तीर्थ में पहुँचता है। अवशेष पुण्य के प्रभाव से ही पुष्कर तीर्थ स्नान, सन्ध्या, गायत्रीजप, दान, धर्म पुण्य, ब्राह्मण भोजन, पितरों का श्राद्ध—पिण्डदान करने के फल को प्राप्त करता है।

(पद्म पुराण स्वर्ग खण्ड अध्याय १६, सृष्टि खण्ड अध्याय २९ के आधार से)

दुष्करं पुष्करं गन्तुं दुष्करं पुष्करे तपः।
दुष्करं पुष्करे दानं वस्तुं चैव सुदुष्करम्॥
त्रीणि शृङ्गाणि शुभ्राणि त्रीणि प्रस्रवणानि च।
पुष्करारण्यादि सिद्धानि न विद्मस्तत्र कारणम्॥
(पद्म पुराण आदि खण्ड ११)

'पुष्कर में जाना कठिन है। पुष्कर में तपस्या करना दुष्कर है। पुष्कर में दान करना दुष्कर है तथा पुष्कर में वास करना तो और भी दुष्कर है। पापों को नाश करने वाले देदीप्यमान तीन पुष्कर क्षेत्र हैं, इनमें सरस्वती वहती है। यह आदि काल से सिद्ध तीर्थ है। इसके तीर्थ होने का कोई (लौकिक) कारण ज्ञात नहीं होता।'

भगवान् को प्राप्त करानेवाली नवधा-भक्ति

सोपान १४

भगवान् श्रीकृष्ण ने भक्त उद्धव को उपदेश देते हुए कहा—

यत् कर्मभिर्यत् तपसा ज्ञानवैराग्यतश्च यत्।
योगेन दानधर्मेण श्रेयोभिरितरैरपि॥
सर्वं मद्भक्तियोगेन मद्भक्तो लभतेऽञ्जसा॥
(श्रीमद्भागवत ११।२०।३२-३३)

'कर्म, तपस्या, ज्ञान, वैराग्य, योग, दान, धर्म तथा तीर्थयात्रा, व्रत आदि अन्य साधनों के द्वारा जो फल प्राप्त होता है, मेरा भक्त भक्ति योग के द्वारा वह सब फल अनायास ही प्राप्त कर लेता है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् को प्राप्त करना हो तो भक्ति ही एक ऐसा साधन है, जो सुगमता से किया जा सकता है और इसमें सभी मनुष्यों का अधिकार है। वर्तमान समय कलिकाल में भक्ति के समान आत्मोद्धार व ईश्वर प्राप्ति के लिये इससे सुगम दूसरा अन्य कोई उपाय हो नहीं सकता।

क्योंकि इस समय में ज्ञान, योग, तप, यज्ञ आदि सिद्ध होने बहुत कठिन हैं। अतः मनुष्य को दृढ़ विश्वास और पूर्ण लगन के साथ केवल ईश्वर भक्ति का ही साधन करना चाहिये। यदि ध्यान से देखा जाय तो संसार में जो मनुष्य धर्म को मानने वाले हैं, उनमें से अधिक मनुष्य ईश्वर-भक्ति को ही उचित साधन मानते हैं।

अब ईश्वर क्या है ? और उसकी भक्ति क्या है ? इस सोपान (अध्याय) में संक्षेप से बतलाने का प्रयास किया जा रहा है।

जो समस्त विश्वपर शासन करने वाले, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, सर्वान्तरयामी हैं, न्याय और सदाचार ही जिनका नियम है, जो सबके साक्षी, बुद्धि और ज्ञान-प्रदान करने वाले हैं तथा जो तीनों गुणों से अतीत होते हुए भी लीलामात्र से गुणों के भोक्ता हैं, जिनकी भक्ति से मनुष्य सम्पूर्ण दुर्गुण, दुराचार और दुःखों से विमुक्त होकर परमपवित्र बन जाता है। जो अव्यक्त होकर भी जीवों पर दया करके जीवों के कल्याण एवं धर्म के प्रचार तथा भक्तों को आश्रय देने के लिये अपनी लीला से समय-समय पर देव, मनुष्य आदि अनेक रूपों में व्यक्त होते हैं अर्थात् साकार रूप से प्रत्यक्ष प्रकट होकर भक्तजनों को उनके इच्छानुसार दर्शन देकर आह्लादित करते हैं। हरि, विष्णु, राम, कृष्ण, महेश, शिव, ब्रह्मा, गणेश आदि अपनी अनेक शक्तियों स्वरूपों, नामों द्वारा जाने जाते हैं, उन सभी प्रेममय, नित्य, अविनाशी, विज्ञानानन्दघन, सर्वव्यापी को ही ईश्वर समझना चाहिये।

अब भक्ति क्या है ? इस विषय में बतलाते हैं। महर्षि शाण्डिल्य का कथन है—

'सा परानुरक्तिरीश्वरे।'

'ईश्वर में परम अनुराग यानी परम प्रेम होना ही भक्ति है।' देवर्षि नारदजी ने भक्तिसूत्र में कहा है—

'सात्वस्मिन् परम प्रेमरूपा।'

'उस परमेश्वर में अतिशय प्रेमरूपता ही भक्ति है।' अमृतस्वरूपा च' और वह अमृत स्वरूप है। इस प्रकार शास्त्रों में अनेक वचन मिलते हैं। इससे यही ज्ञात होता है कि ईश्वर में जो परम प्रेम है, वही अमृत है, वही वस्तुतः भक्ति है। प्रेम सेवा का परिणाम है और भक्ति के साधन की अन्तिम सीमा है। जैसे वृक्ष होना,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उसके फल लग जाने पर ही वृक्ष की सफलता है इसी प्रकार भक्ति की पूर्णता और और गौरव भगवान् में परम प्रेम होने में ही है। प्रेम ही उसकी पराकाष्ठा है और प्रेम के ही लिये सेवा की जाती है। इसलिये वास्तव में भगवान् में अनन्य प्रेम का होना ही भक्ति है।

भगवान् भक्ति में केवल प्रेम को ही अधिक देखते हैं। आयु, रूप का कोई मूल्य नहीं है। विद्या, धन, जाति और बल भी इसमें नहीं देखते, भगवान् भक्ति में सदाचार और सद्गुणों की ओर भी विशेष ध्यान नहीं देते। वे तो केवल प्रेम को ही देखते हैं। यद्यपि सदाचार और सद्गुणों का होना भक्तों के लिये आवश्यक है, जो उस भक्त में भक्ति के प्रभाव से अनायास ही आ जाते हैं, इसलिये ईश्वर की भक्ति में सदाचार और सद्गुणों की प्रधानता नहीं मानी गयी है।

भक्ति कितने प्रकार की होती है ? इसके लिये लिखा है—

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्॥

(श्रीमद्भागवत ७।५।२३)

'भगवान् विष्णु के नाम, रूप, गुण और प्रभावादि का श्रवण, कीर्तन और स्मरण तथा भगवान् की चरण-सेवा, पूजन और वन्दन एवं भगवान् में दासभाव, सखाभाव और अपने को समर्पण कर देना—ये नौ प्रकार की भक्ति बतलायी गई है।'

शास्त्रों में भक्ति के अनेक भाँति-भाँति के लक्षण बतलाये हैं, किन्तु सिद्धान्त से इनमें कोई भेद नहीं है, मतलब सबका एक ही है कि स्वामी जिस भाव व आचरण से सन्तुष्ट, प्रसन्न हों उसी प्रकार के भावों से प्रभावित होकर उनकी आज्ञानुसार आचरण करना सेवा (भक्ति) है।

ऊपर जो नौ प्रकार की भक्ति बतलायी गई है, उनमें से एक का भी भली प्रकार अनुष्ठान पालन करले तो मनुष्य परमपद को प्राप्त कर लेता है, फिर नवों का अच्छी प्रकार से अनुष्ठान करने वाला कोई हो तो उसके कल्याण का तो कहना ही क्या है।

श्रवण-भक्ति

भगवान् के प्रेमी परम भक्तों द्वारा कहे गये भगवान् के नाम, रूप, गुण, प्रभाव, लीला, तत्त्व और रहस्यमयी-अमृतमयी कथाओं का श्रद्धा और प्रेमपूर्वक श्रवण करना एवं उन अमृतमयी कथाओं का श्रवण करके, वीणा आदि सुमधुर वाद्यों से जैसे हरिण मुग्ध हो जाता है, वैसे प्रेम में मुग्ध हो जाना श्रवण-भक्ति का स्वरूप याने लक्षण है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रवण-भक्ति प्राप्ति के लिये श्रद्धा और प्रेमपूर्वक सन्त-महात्मा, विद्वान्, पुरुषों को साष्टांग प्रणाम, उनकी सेवा और उनसे निष्कपट भाव से भक्ति विषयक प्रश्न करना और उनके बतलाये हुए मार्ग के अनुसार आचरण करना—यह श्रवण-भक्ति को प्राप्त करने की विधि है।

श्रवण-भक्ति महापुरुषों के सङ्ग बिना प्राप्त होना कठिन है—राजा रहूगण के प्रति महात्मा जड़भरत कहते हैं कि—'हे रहूगण! महापुरुषों के चरणों की धूलि में स्नान किये बिना केवल तप, यज्ञ, दान, गृहस्थधर्म पालन और वेदाध्ययन से तथा जल, अग्नि और सूर्य की उपासना से वह परमतत्त्व का ज्ञान प्राप्त नहीं होता।' (श्रीमद्भागवत ५।१२।१२)

इसका तात्पर्य यही है कि समस्त कार्यों की सिद्धि महापुरुषों के सङ्ग से ही होती है। महापुरुषों का सङ्ग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ है। इसलिये भगवत्प्राप्ति के इच्छुक मनुष्यों को उन सत्पुरुषों का सङ्ग अवश्यमेव करना चाहिए।

सत्पुरुषों द्वारा प्राप्त हुई इस प्रकार की केवल श्रवण-भक्ति से ही मनुष्य परमपद को प्राप्त कर सकता है। नारदजी ने सनकादि के प्रति कहा है—

श्रवणं सर्वधर्मेभ्यो वरं मन्ये तपोधनाः।
वैकुण्ठस्थो यतः कृष्णः श्रवणाद् यस्य लभ्यते॥

(श्रीमद्भागवत माहात्म्य ६।७७)

'हे तपोधन! मैं भगवान् के गुणानुवादों के श्रवण को सब धर्मों से श्रेष्ठ मानता हूँ, क्योंकि भगवान् के गुणानुवाद सुनने से वैकुण्ठ स्थित भगवान् की प्राप्ति हो जाती है।' इसी प्रकार से सूतजी ने भी कहा है—

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं ना पुनर्भवम्।
भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः॥

(श्रीमद्भागवत १।१८।१३)

भगवत्सङ्गी अर्थात् नित्य भगवान् के साथ रहने वाले अनन्य प्रेमी भक्तों के निमेष मात्र के भी सङ्ग के साथ हम स्वर्ग तथा मोक्ष की भी समानता नहीं कर सकते। फिर मनुष्यों के इच्छित पदार्थों की तो बात ही क्या है?

इसलिये अपना समस्त जीवन महापुरुषों के सङ्ग में रहते हुए ही भगवान् के नाम, रूप, गुण, प्रेम, प्रभाव, रहस्य और तत्त्व की अमृतमयी कथाओं को निरन्तर सुनने में ही लगाना चाहिये और उन्हें सुन-सुनकर प्रेम और आनन्द में मुग्ध होते हुए अपने मनुष्य जीवन को सफल बनाना चाहिये।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कीर्तन-भक्ति

भगवान् के नाम, रूप, गुण, प्रभाव, चरित्र, तत्त्व और रहस्य का श्रद्धा और प्रेमपूर्वक उच्चारण करते-करते शरीर में रोमांच, कण्ठावरोध, अश्रुपात, हृदय की प्रफुल्लता, मुग्धता आदि का होना कीर्तन-भक्ति का स्वरूप (लक्षण) है।

कथा-प्रवचनादि के द्वारा भक्तों के सामने भगवान् के प्रेमभाव का कथन करना, एकान्त में अथवा बहुतों के साथ मिलकर भगवान् को सम्मुख समझते हुए उनके नाम का उपांशु जप एवं ऊँचे स्वर से कीर्तन करना भगवान् के गुण, प्रभाव चरित्र आदि का श्रद्धा और प्रेमपूर्वक धीरे-धीरे या जोर से खड़े या बैठे रहकर, वाद्य-नृत्य के सहित अथवा बिना वाद्य-नृत्य के उच्चारण करना तथा दिव्य स्तोत्र एवं पदों के द्वारा भगवान् की स्तुति-प्रार्थना करना यही उपर्युक्त भक्ति को प्राप्त करने का प्रकार है; किन्तु ये सब क्रियाएँ नाम के दस अपराधों को बचाते हुए दम्भ रहित एवं शुद्ध मन, भावना से स्वाभाविक रूप से होना चाहिये। नाम के दस अपराध इस प्रकार बतलाये गये हैं—सत्पुरुषों की निन्दा, अश्रद्धालुओं में नाम की महिमा कहना, विष्णु और शिव में भेद बुद्धि, वेद, शास्त्र और गुरु की वाणी में अविश्वास, हरि नाम में अर्थवाद का भ्रम अर्थात् केवल स्तुति मात्र है ऐसी मान्यता, नाम बल से विहित का त्याग और निषिद्ध का आचरण अन्य धर्मों की तुलना तथा शास्त्र विहित कर्मों से नाम की तुलना—ये सब भगवान् के नाम-जप में दस अपराध हैं।

इस प्रकार से कीर्तन-भक्ति को प्राप्त करके सबको भगवान् में अनन्य प्रेम होकर उसकी प्राप्ति हो जाय, इसी उद्देश्य से संसार में इसका प्रचार करना यह इसका प्रयोजन है।

कीर्तन-भक्ति भी ईश्वर एवं महापुरुषों की कृपा से ही प्राप्त होती है, क्योंकि भगवान् के भक्तों द्वारा भगवान् के प्रेम, प्रभाव, तत्त्व और रहस्य की बातों को सुनने से एवं शास्त्रों को पढ़ने से ही भगवान् में श्रद्धा होती है और तब मनुष्य उपर्युक्त भक्ति को प्राप्त कर सकता है। अतः भगवान् और उसके भक्तों की दया प्राप्त करने के लिये उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिये।

इस प्रकार कीर्तन-भक्ति से भी मनुष्य परमात्मा की दया उसमें अनन्य प्रेम करके उसे प्राप्त कर सकता है। भागवत और रामायणादि सभी भक्ति के ग्रन्थों में भगवान् के केवल नाम और गुणों के कीर्तन से सब पापों का नाश एवं भगवत्प्राप्ति होना बतलाया है—

ब्रह्महा पितृहा गोघ्नो मातृहाऽऽचार्यहाघवान्।
श्वादः पुल्कसको वापि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात्॥
(श्रीमद्भागवत ६।१३।८)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ब्राह्मणघाती, पितृघाती, गोघाती, मातृघाती, गुरुघाती ऐसे पापी तथा चाण्डाल एवं म्लेच्छ जाति वाले भी जिसके कीर्तन से शुद्ध हो जाते हैं।

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत्॥

(श्रीमद्भागवत १२।३।५१)

'हे राजन्! दोषों के खजाने कलियुग में एक ही यह महान् गुण है कि भगवान् कृष्ण के कीर्तन से ही मनुष्य आसक्ति रहित होकर परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।'

महर्षि पतञ्जलि का कथन है—'उस परमात्मा का वाचक अर्थात् नाम ओंकार है। 'उस परमात्मा के नाम का जप और उसके अर्थ की भावना अर्थात् स्वरूप का चिन्तन करना।' 'उपर्युक्त साधन से सम्पूर्ण विघ्नों का नाश और परमात्मा की प्राप्ति भी होती है।' (पतञ्जलि योगसूत्र १।२७-२९)

नारद पुराण में लिखा है—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

(नारद पुराण १।४१।११५)

'कलियुग में केवल श्रीहरि का नाम ही कल्याण का परम साधन है, इसको छोड़कर दूसरा कोई उपाय नहीं है।' इस प्रकार शास्त्रों में और भी बहुत से प्रमाण मिलते हैं। कीर्तन-भक्ति द्वारा अनेक भक्तगण भवसागर से तर गये हैं। इतिहास-पुराण, रामायण में ऐसे कितने ही उदाहरण भरे पड़े हैं। अतः जैसे मेघ को देखकर पपीहा जल के लिये पी-पी की रट लगाता है, वैसे ही भगवान् में परम प्रेम होने के लिये एवं भगवान् के नाम और गुण के कीर्तन को नित्य-निरन्तर तत्पर होकर प्राण-पर्यन्त चेष्टा करनी चाहिये।

स्मरण भक्ति

भगवान् के नाम, रूप, गुण, प्रभाव, लीला, तत्त्व और रहस्य भरी अमृत-मय कथाओं का जो श्रद्धा और प्रेमपूर्वक श्रवण तथा पठन किया है, उनका मनन करना एवं इस प्रकार मनन करते-करते देह की सुधि भुलाकर भगवान् के स्वरूप में ध्रुव आदि भक्तों की भाँति तल्लीन हो जाना स्मरण-भक्ति का स्वरूप (लक्षण) है।

जहाँ तक हो सके, एकान्त एवं पवित्र स्थान में सुखपूर्वक स्थिर, सरल आसन से बैठकर इन्द्रियों को विषय रहित करके कामना और संकल्प को त्याग कर प्रशान्त और वैराग्य युक्त चित्त से अथवा चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सोते-सभी काम करते हुए भी स्वाभाविक, शुद्ध और सरल भाव से सगुण-निर्गुण, साकार-निराकार के तत्त्व को जानकर गुण और प्रभाव सहित भगवान् के स्वरूप का चिन्तन करना, भगवान् के नाम का मन से स्मरण करके मुग्ध होना, भगवान् के तत्त्व और रहस्य को जानने के लिये उनके गुण, प्रभाव का चिन्तन करना, इस प्रकार स्मरण के बहुत से प्रकार शास्त्रों में बतलाये गये हैं।

प्रेमी भक्तों के द्वारा नाम, रूप, गुण, प्रभाव आदि की अमृतमयी कथाओं का श्रद्धा और प्रेम पूर्वक श्रवण करना, भगवद्विषयक धार्मिक पुस्तकों का पठन-पाठन करना, भगवान् के नाम का जप और कीर्तन करना, भगवान् के पद एवं स्तोत्रों के द्वारा अथवा किसी भी प्रकार ध्यान के लिये करुणाभाव से स्तुति-प्रार्थना करना तथा भगवान् और महापुरुषों की आज्ञा पालन करना आदि उपर्युक्त स्मरण-भक्ति को प्राप्त करने के उपाय हैं। श्रुति, स्मृति, इतिहास-पुराण, सन्त-महात्मा सबने ही भगवत्-स्मरण (ध्यान) की बड़ी महिमा बतलायी है। सन्ध्योपासन के आरम्भ में लिखा है—

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तर शुचिः॥

'अपवित्र हो, पवित्र हो, किसी भी अवस्था में क्यों न हो, जो भगवान् पुण्डरीकाक्ष का स्मरण करता है, वह बाहर और भीतर से शुद्ध हो जाता है।' श्री विष्णुसहस्रनाम के आदि में कहा है—

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात्।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे॥

(विष्णु सहस्रनाम)

'जिसके स्मरण मात्र से मनुष्य जन्मरूपी संसार बन्धन से मुक्त हो जाता है, संसार को उत्पन्न करने वासे उस विष्णु के लिये नमस्कार है।'

विषयान् ध्यायतश्चित्तं विषयेषु विषज्जते।
मामनुस्मरतश्चित्तं मय्येव प्रविलीयते॥

(श्रीमद्भागमत ११।१४।२७)

'विषय-चिन्तन करने वाले का मन विषयों में आसक्त होता है और बार-बार स्मरण करने वाले का मन मुझ में ही लीन हो जाता है।'

इसलिये भगवत् प्राप्ति की इच्छा वाले साधक पुरुष को उचित है कि सब कार्य करते हुए भी जैसे कछुवा अण्डों का, गऊ बछड़े का, कामी स्त्री का, लोभी धन का, नटी अपने चरणों का, मोटर चलाने वाला सड़क का ध्यान रखता है, वैसे ही वह परमात्मा का ध्यान रखे।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाद-सेवन भक्ति

जो वज्र, अंकुश, ध्वजा एवं कमल आदि चिह्नों से युक्त हैं, जिनके शोभा-युक्त रक्तवर्ण, उन्नत नख-मण्डल की प्रभा भक्तों के हृदय के महान् अन्धकार को पूर्णतः नष्ट कर देती है, श्रीमान् के उन चरण कमलों का बड़े प्रेम से चिन्तन करना चाहिये।

श्री भगवान् के दिव्य मङ्गलमय स्वरूप की धातु आदि की मूर्ति चित्रपट अथवा मानस मूर्ति के मनोहर चरणों का श्रद्धा पूर्वक दर्शन, चिन्तन, पूजन और सेवन करना, चरणोदक लेना, भगवान् के चरणों का बार-बार चिन्तन करना, उनके चरण टिके हुए स्थान अयोध्या, चित्रकूट, वृन्दावन, मथुरा आदि स्थानों को जहाँ उनका प्राकट्य हुआ है या जहाँ-जहाँ उनके चरण टिके हैं, उन्हें परम पवित्र तीर्थ समझ कर मस्तक पर धारण करना, उसको भी प्रणाम स्नान-पानादि के द्वारा श्रद्धा भक्ति से सेवन करना 'पाद-सेवन' भक्ति के ही विभिन्न प्रकार बतलाये गये है।

भगवान् के अनन्य भक्तों का सङ्ग करने से भगवान् की चरण-सेवा का तत्त्व, रहस्य और प्रभाव सुनने को मिलता है, उससे श्रद्धा होकर यह भक्ति प्राप्त होती है।

केवल इस पाद-सेवन भक्ति से भी मनुष्य के सम्पूर्ण दुराचार, दुर्गुण और दुःख सर्वदा नष्ट हो जाते हैं और भगवान् में सहज ही अतिशय श्रद्धा और प्रेम होकर उसे आत्यन्तिकी परमा-शान्ति की प्राप्ति होती है। उसके लिये फिर कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता। न कुछ करना शेष रहता है, संसार-सागर से तर जाता है।

अहल्या भगवान् के चरण-रज को पाकर कृतार्थ होकर कहती है—

अहो कृतार्थास्मि जगन्निवास ते
पादाब्ज संलग्न रजःकणादहम्।
स्पृशामि यत्पद्मजशङ्करादिभि-
र्विमृग्यते रन्धितमानसैः सदा॥
(अध्यात्म रामायण १।५।४३)

'हे जगन्निवास! आपके चरण कमलों में लगे हुये रजकणों का स्पर्श पाकर आज मैं कृतार्थ हो गयी। अहो! आपके जिन चणारविन्दों का ब्रह्मा, शंकर आदि भी सदा चित्त लगाकर अनुसंधान किया करते हैं, आज मैं उनका स्पर्श कर रही हूँ।'

भगवान् की चरण-रज के शरण हुए प्रेमी भक्त तो स्वर्गादि की तो बात ही क्या, मोक्ष तक का तिरस्कार कर चरण रज के सेवन में ही लगे रहना चाहते

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं—'आपकी चरण धूलि की शरण ग्रहण करने वाले भक्तजन न स्वर्ग चाहते हैं, न चक्रवर्तिता, न ब्रह्मका पद, न समस्त पृथ्वी का स्वामित्व और न योग सिद्धियाँ ही, अधिक क्या वे मोक्ष-पद की भी इच्छा नहीं करते।'

(श्रीमद्भागवत १०।१६।१७)

भगवान् की केवल पाद-सेवन-भक्ति से ही भगवान् के अनन्य प्रेम को प्राप्त करने वाले अनेक भक्तों का शास्त्रों में वर्णन मिलता है। अतएव भगवान् के पवित्र चरणों में श्रद्धापूर्वक मन लगाकर उनका नित्य सेवन करना चाहिए, इसी से परम पद की प्राप्ति हो जायगी।

अर्चन-भक्ति

श्री विष्णोरर्चनं ये तु प्रकुर्वन्ति नरा भुवि।
ते यान्ति शाश्वतं विष्णोरानन्दं परमं पदम्॥

(विष्णु रहस्य)

'जो मनुष्य इस संसार में भगवान् की पूजा अर्चा करते हैं, वे श्रीभगवान् के अविनाशी आनन्द स्वरूप परम पद को प्राप्त होते हैं।'

भगवान् के भक्तों से सुने हुए, शास्त्रों में पढ़े हुए, धातु आदि से निर्माण की हुई मूर्ति या चित्रपट के रूप में देखे हुए अपने मन को रुचने वाले किसी भी भगवान् के स्वरूप का बाह्य सामग्रियों से, भगवान् की किसी भी अपने अभिलषित स्वरूप की मानसिक मूर्ति बनाकर मानसिक सामग्रियों से ही अथवा सम्पूर्ण भूतों में परमात्मा को स्थित समझकर सभी का आदर-सत्कार करते हुए यथायोग्य अनेक प्रकार के भिन्न-भिन्न उत्तम उपचारों से श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उनका सेवन-पूजन करना और उनके तत्त्व-रहस्य तथा प्रभाव को समझ कर प्रेम में मुग्ध होना ही अर्चना-पूजन भक्ति कही जाती है।

पत्र, पुष्प, चन्दन, जल, अक्षत (चावल), धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा (भेंट) आदि सात्त्विक पवित्र और न्यायोपार्जित द्रव्यों द्वारा प्राप्त हुए पदार्थों से भगवान् की मूर्ति, चित्रपट का श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजन करना, अपने से पूज्य सम्माननीय मनुष्यों को भी इस प्रकार के पदार्थों को अर्पण करना, सम्मान करना और दुःखी, अनाथ, अपंग, रोग-पीड़ित प्राणियों की भूखों की, प्यासों की, वस्त्रहीनादि की, अन्न से, जल से, वस्त्रों से, औषधियों से, आश्रयदान से यथाशक्ति आवश्यकता अनुसार श्रद्धा और सत्कारपूर्वक सबको ही भगवान् का स्वरूप समझते हुए भगवत्प्रीति के लिये सेवा करना, यह सब भगवान् की अर्चना-भक्ति के ही बाह्य प्रकार कहे गये हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शास्त्रों में बतलाये गये अपने चित्त को स्वतः ही आकर्षित करने वाले भगवान् के किसी भी अलौकिक रूपलावण्ययुक्त, अनन्त सौन्दर्यमय, परम तेजोमण्डल स्वरूप का प्रत्येक अवयव वस्त्राभूषण आयुधादि से युक्त और हाथ पैरों के मङ्गल-चिह्नों सहित मन के द्वारा चिन्तन करके अत्यन्त हर्षपूर्वक मन में ही उनका आह्वान, स्थापन और नाना प्रकार की मानसिक सामग्रियों द्वारा ही अत्यन्त श्रद्धा और प्रेम के साथ पूजन करना मानसिक-पूजा का प्रकार है।

भगवान् में अनन्य प्रेम होकर उसकी प्राप्ति हो जाये इसी उद्देश्य से यह सब किया जावे। अर्चना-भक्ति का स्वरूप और उसके तत्त्व रहस्यों की जानकारी के लिए प्रेमी भक्तों का सत्संग भी करना चाहिये।

उपर्युक्त प्रकार से भगवान् की पूजा-अर्चन करने से मनुष्य को भगवान् की प्राप्ति होती है और इच्छित फल प्राप्त होते हैं।

स्वर्गापवर्गयोः पुंसां रसायां भुवि सम्पदाम्।
सर्वासामपि सिद्धिनां मूलं तच्चरणार्चनम्॥
(श्रीमद्भागवत १०।८१।१९

'श्री भगवान् के चरणों का अर्चन-पूजन करना जीवों के स्वर्ग और मोक्ष एवं मर्त्यलोक और पाताल लोक में रहने वाली समस्त सम्पत्तियों का और सम्पूर्ण सिद्धियों का मूल है।'

यही नहीं, परम श्रद्धा और प्रेम के साथ भगवान् की पूजा की जाय तो वे स्वयं अपने दिव्य मङ्गल विग्रह-स्वरूप में प्रकट होकर भक्तों के अर्पण किये हुए पदार्थों को खाते हैं। स्वयं भगवान् का कथन है—

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥
(श्रीमद्भगवद् गीता ९।२६)

'हे अर्जुन! पत्र, पुष्प, फल, जल इत्यादि जो भक्त मेरे लिए प्रेम से अर्पण करता है, उस शुद्ध,-बुद्धि, निष्काम प्रेमी भक्त का प्रेमपूर्वक अर्पण किया हुआ वह पत्र पुष्पादि मैं सगुण रूप से प्रकट होकर प्रीति सहित खाता हूँ।'

नाना प्रकार के उपचारों द्वारा मन इन्द्रियों से पूजा करने वालों का तो कहना ही क्या? भक्तिपूर्वक पूजा करने वाले सुदामा ने माँग कर लाये हुए चावलों की कनियों से, गजेन्द्र ने एक पुष्प अर्पित कर, द्रौपदी ने शाक-पत्र से भगवान् को पूजकर परम सिद्धि प्राप्त की थी। शबरी जैसी जंगलों में रहने वाली स्त्री ने केवल बेर फल अर्पित कर भगवान् को सन्तुष्ट कर परमपद को प्राप्त कर लिया था।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसलिए भगवान् की प्रेम तथा श्रद्धापूर्वक अपनी रुचि और भावना के अनुसार अर्चना-पूजा करनी चाहिये।

वन्दना-भक्ति

पतितः स्खलितश्चार्तः क्षुत्त्वा वा विवशो ब्रवन्।
हरये नम इत्युच्चैर्मुच्यते सर्वपातकात्॥
(श्रीमद्भागवत १२।१२।४६)

'पतित, स्वखलित, आर्त, छींकता हुआ अथवा किसी प्रकार से परवश हुआ पुरुष भी ऊँचे स्वर से 'हरये नमः' इस प्रकार बोल उठता है तो वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है।'

भगवान् के शास्त्रवर्णित स्वरूप, भगवान् के नाम, भगवान् धातु की आदि की मूर्ति, चित्र अथवा मानसिक मूर्ति को शरीर अथवा मन से श्रद्धा सहित साष्टांग प्रणाम करना या समस्त चराचर भूतों को परमात्मा का स्वरूप समझ कर श्रद्धापूर्वक शरीर या मन से प्रणाम करना और ऐसा करते हुए भगवत्प्रेम में मुग्ध होना यह वन्दन-भक्ति कही गई है।

भगवान् के रहस्य को समझ कर उन्हें प्रणाम करने वाला सब दुःखों से छूट जाता है। मनुस्मृति में लिखा है—

न वासुदेवात्परमस्ति मङ्गलं
न वासु देवात्परमस्ति पावनम्।
न वासुदेवात्परमस्ति दैवत
तं वासुदेवं प्रणमन्न सीदति॥
(मनुस्मृति १०१)

'भगवान् वासुदेव से अधिक और कुछ मङ्गलमय नहीं है, वासुदेव से अधिक और कुछ पावन नहीं है एवं वासुदेव से श्रेष्ठ और कोई आराध्य देवता नहीं है, उन वासुदेव को नमस्कार करने वाला कभी दुःखी नहीं होता।'

श्रद्धा और प्रेम पूर्वक भगवान् को साष्टाङ्ग प्रणाम करने से भी मनुष्य सब पापों से मुक्त होकर परम पद को प्राप्त हो सकता है।

एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामो
दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः।
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म
कृष्ण-प्रणामी न पुनर्भवाय॥
(भीष्म स्तवराज ९१)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीकृष्ण को किया हुआ एक भी प्रणाम दस अश्वमेध यज्ञों के अवभृथ-स्नान के समान है, इतना ही नहीं, विशेषता यह है कि दस अश्वमेध करने वाले को तो फिर जन्म लेना पड़ता है, किन्तु भगवान् श्रीकृष्ण को प्रणाम करने वाले को फिर जन्म नहीं लेना पड़ता।'

इसलिये श्रीभगवान् के प्रेम में विभोर होकर उपर्युक्त प्रकार से भगवान् की वन्दन-भक्ति करने की, शरीर में प्राण रहें तब तक चेष्टा करनी चाहिये।

दास्य-भक्ति

भगवान् के गुण, तत्त्व, रहस्य और प्रभाव को जानकर श्रद्धा प्रेम पूर्वक उनकी सेवा करना और उनकी आज्ञा का पालन करना ही दास्य-भक्ति कही गयी है।

मन्दिरों में भगवान् के विग्रहों की सेवा करना, मन्दिर में लिपाई, पुताई, छाड़ू-बुहारी, सफाई करना, मन से प्रभु के स्वरूप का ध्यान करके उनकी सेवा करना, सम्पूर्ण चराचर को प्रभु का स्वरूप समझ कर सबकी यथाशक्ति, यथा-योग्य सेवा करना, गीता आदि धर्मशास्त्रों को भगवान् की आज्ञा मानकर उनके अनुसार आचरण करना, जो कर्म भगवान् की रुचि, प्रसन्नता और इच्छा के अनुकूल हों उन्हीं कर्मों को करना—ये सब दास्य-भक्ति के प्रकार हैं।

भगवान् में अनन्य प्रेम व नित्य-निरन्तर सेवा के लिये, भगवान् के समीप रहने के उद्देश्य से दास्य भक्ति की जाती है।

गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि दास्य भाव के बिना संसार-सागर से उद्धार नहीं हो सकता—

सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम पद पंकज अस सिद्धान्त विचारि॥

लक्ष्मण, हनुमान, अङ्गद आदि इस दास्य-भक्ति के परम आदर्श उदाहरण हैं। श्री हनुमानजी सर्वदा श्रीराम की सेवा करने के लिये आतुर रहते हैं—

'रामकाज करिबे को आतुर।' (हनुमान चालीसा)

श्रीरामचन्द्रजी से श्रीहनुमानजी हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए कहते हैं—

स्नेहो मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा।
भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु॥
(वा. रामायण ७।४०।१६)

'हे राजराजेन्द्र प्रभो! मेरा परम स्नेह नित्य ही आपके श्रीपाद-पद्मों में प्रतिष्ठित रहे। हे श्री रघुवीर! आप में ही अविचल भक्ति बनी रहे। आपके अतिरिक्त और कहीं मेरा आन्तरिक अनुराग न हो, कृपया यही वरदान दें।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इसलिए श्रीभगवान् के प्रेम में आनन्दित होकर भगवान् की दास्य-भक्ति, जीवन शेष न हो जाय तब तक करनी चाहिये।

सख्य-भक्ति

अहो भाग्यमहो भाग्यं नन्दगोपव्रजौकसाम्।
यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्म सनातनम्॥
(श्रीमद्भागवत १०।१४।३२)

'उन नन्द गोप के व्रज में रहने वाले लोगों का भाग्य धन्य है! धन्य है! जिनका मित्र परमानन्द परिपूर्ण सनातन ब्रह्म है।'

भगवान् के प्रभाव, तत्त्व, रहस्य और महिमा को समझकर परम विश्वास पूर्वक मित्र भाव से उनकी रुचि के अनुसार बन जाना, उनमें अनन्य प्रेम करना और उनके गुण, रूप और लीला पर मुग्ध होकर नित्य-निरन्तर प्रसन्न रहना, मित्र के स्नेह रूप में भगवान् के सभी सेवा, पूजा अर्चनादि कार्यों को प्रेम व प्रसन्नता पूर्वक करना यह सख्य-भक्ति कही गयी है।

अपने आवश्यक से आवश्यक कार्यों को छोड़कर प्यारे प्रेमी भगवान् के कार्यों को आदर, प्रेम से करना, प्यारे प्रेमी के कार्यों को, अपने कार्य को तुच्छ समझकर छोड़कर पहले करना, प्यारे प्रेमी के कार्यों में महान् कष्ट परिश्रम होने पर भी उसे अल्प ही समझना, अपना प्यारा जिस कार्य, बात से प्रसन्न हो, उसी बात कार्य को ध्यान में रखकर अपने मन, शरीर द्वारा पूर्ण रूप से करने की चेष्टा करना, वह जो कुछ भी करे उसी में सर्वदा सन्तुष्ट रहना, अपनी कोई भी वस्तु उसे अर्पण करना, अपने शरीर पर और अपनी वस्तुओं पर अपनी आत्मीयता और अधिकार है, वैसा ही अपने प्यारे प्रेमी का समझना चाहिए। अपना धन, जीवन और देह आदि जिस प्रकार से अपने प्रेमी के काम में प्रयोग हो सके तो उनका सफल प्रयोग होना समझना चाहिये। उसके साथ उसके पास रहने की निरन्तर इच्छा रखना, उसके दर्शन, भाषण, चिन्तन और स्पर्श से प्रेम निमग्न हो जाना, उसके नाम, रूप, गुण और चरित्र को सुनकर, बखान कर, पढ़कर और स्मरण कर अत्यन्त प्रसन्न होना, किसी के द्वारा मित्र का सन्देश पाकर परम प्रसन्न होना, और उसके वियोग से व्याकुल होना तथा हर मिनट उससे मिलने की आशा और प्रतिक्षा करते रहना इत्यादि सखा भाव के प्रकार हैं।

प्यारे प्रेमी को सुख पहुँचे, उसमें अपना सख्य प्रेम बढ़ता रहे और उससे कभी वियोग न हो इसी प्रकार के विचारों से सख्य भक्ति की जाती है।

सख्य-भक्ति की प्राप्ति के लिये भगवान् के प्रेमी सखाओं का सङ्ग, सेवन, उनके जीवन-चरित्र का पठन-मनन और उनके तथा भगवान् के गुण, लीला और प्रभाव का उनके प्रेमी भक्तों द्वारा श्रवण करना चाहिये।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस प्रकार की सख्य-भाव-भक्ति से मनुष्य अपने दुःख दोषों को दूर कर भगवान् की प्राप्ति और भगवान् में परम प्रेम संचय कर लेता है। यहाँ तक कि भगवान् उस प्रेमी भक्त के स्वयं अधीन हो जाते हैं और फिर उसके सुख शान्ति और परमानन्द का पार ही नहीं रहता।

इस प्रकार की सख्य-भक्ति के उदाहरण सुग्रीव, विभीषण, उद्धव, अर्जुन, सुदामा, श्रीदामा आदि व्रज के अनेक सखा हैं।

सुग्रीव के साथ मित्रता करके भगवान् राम अपनी प्राण प्रिया सीता को भूल जाते हैं। और पहले सुग्रीव के कार्य की चिन्ता में लग जाते हैं—

तिय विरही सुग्रीव सखा, लखि प्रान प्रिया बिसराई।
(रामचरितमानस)

उद्धव के साथ भगवान् श्रीकृष्ण इतना प्रेम करते थे, जिसके लिये स्वयं भगवान् का कथन है—

न तथा न मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शंकरः।
न च संकर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान्॥
(श्रीमद्भागवत ११।१४।१५)

'भैया उद्धव! तुम जैसे प्रेमी मुझको जितने प्यारे हैं, उतने प्यारे मुझे ब्रह्मा, शङ्कर, संकर्षण, लक्ष्मी और अपनी आत्मा भी नहीं है।'

अश्वत्थामा के द्वारा उत्तरा के गर्भस्थ बालक परीक्षित के मारे जाने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है—

यथाहं नाभिजानामि विजयेन कदाचन।
विरोधं तेन सत्येन मृतो जीव त्वयं शिशु॥
(महाभारत अश्वमेध ६९।२१)

'यदि यह सत्य है कि मैंने अपनी जान में अर्जुन से कभी भी मित्रता में कोई बाधा नहीं आने दी है तो यह मरा हुआ बालक जी उठे।'

इस प्रकार भगवान् के परम प्यारे सखाओं की अनेक कथाएँ वर्णित हैं, भीलों का राजा गुह कुछ ही समय सख्य-भक्ति करके संसार सागर से तर गया।

अतएव भगवान् को ही अपना एक मात्र परम प्रियतम समझ कर अपना सर्वस्व उसको मानकर परम प्रेम भाव से सख्य-भक्ति करनी चाहिये।

आत्मनिवेदन-भक्ति

वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः।
सर्वपाप विशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम्॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जिस मनुष्य ने भगवान् वासुदेव का आश्रय लिया है और जो उन्हीं का परायण है, उसका अन्तःकरण सर्वथा शुद्ध हो जाता है एवं वह सनातन ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।'

परमात्मा के तत्त्व, रहस्य, प्रभाव और महिमा को समझ कर ममता और अहंकार रहित होकर अपने तन-मन-धन-जन सहित अपने आपको और सम्पूर्ण कर्मों को समर्पण कर देना आत्मनिवेदन भक्ति है। भगवान् इस विश्व ब्रह्माण्ड निर्माण प्रतिष्ठान यन्त्र के निर्माता एवं चालक (इञ्जीनियर) हैं और उसके द्वारा चलाये जाने वाली मशीनरी का ही मैं एक सूक्ष्म यन्त्र हूँ, इस प्रकार का निश्चय करके कि मशीन (यन्त्र) चालक (इञ्जीनियर) जिस प्रकार मशीन (यन्त्र) को चलाता है। उसके सूक्ष्म यन्त्र-पुर्जे उसकी इच्छा के अनुकूल चलते हैं, इसी प्रकार सब कुछ मुझे ही करना है। भगवान् के रहस्य और प्रभाव को जानने के लिये उनके नाम, रूप, गुण, लीला के श्रवण, मनन, कथन, अध्ययन और चिन्तनादि में श्रद्धाभक्ति पूर्वक तन-मन आदि सभी प्रकार से उसी में लगा देना, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि सभी पर एक मात्र उन भगवान् का ही अधिकार समझना, भगवान् की ही वस्तु भगवान् के ही अर्पण की गयी हैं, ऐसा भाव होना, जिस किसी भी प्रकार से भगवान् की ही सेवा बनती रहे, इसी में आनन्द मनाना, सब कुछ प्रभु के अर्पण करके स्वाद, शोक, विलास, आराम, भोग आदि की इच्छा का सर्वथा अभाव हो जाना, सर्वत्र सर्वदा और सर्वथा एक भगवान् का ही अनुभव करना, भगवान् के भरोसे पर सर्वदा निर्भय, निश्चिन्त और प्रसन्न रहना और भगवान् की भक्ति छोड़कर मुक्ति की भी इच्छा न होना आदि सभी आत्म-निवेदन-भक्ति के प्रकार हैं।

भगवान् में अनन्य परम प्रेम और भगवान् की प्राप्ति के लिये यह आत्म निवेदन भक्ति की जाती है।

भगवान् के शरणागत प्रेमी भक्तों का सङ्ग-सेवन करने से और उनके द्वारा भगवान् के नाम, रूप, गुण, प्रभाव सत्त्व, महिमा आदि का श्रवण और मनन करने से यह भक्ति प्राप्त होती है।

इस आत्मनिवेदन रूपा शरण भक्ति के विषय में भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥

(गीता ७।१४)

'यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी योगमाया बड़ी ही दुस्तर है, परन्तु जो पुरुष मेरे को ही निरन्तर भजते हैं याने मेरी शरण आते हैं, वे इस माया को उल्लङ्घन कर जाते हैं अर्थात् संसार-सागर से तर जाते हैं।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥
(गीता ९।३२)

'हे अर्जुन ! स्त्री, वैश्या और शूद्रादिक तथा पाप योनि वाले जो कोई होवें वे भी मेरे शरण होकर ही तो परम गति को प्राप्त होते हैं।'

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्ति स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥
(गीता १८।६२)

'हे भारत ! सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही अनन्य शरण को प्राप्त हो, उस परमात्मा की कृपा से ही परम शान्ति को और सनातन परमधाम को प्राप्त होगा।'

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥
(गीता १८।६६)

'सर्व धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्मों के आश्रय को त्यागकर केवल एक मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्मा की ही अनन्य शरण को प्राप्त हो, मैं तेरे को सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर।'

इस प्रकार से जो पुरुष भगवान् के प्रति आत्म निवेदन कर देता है, उसके सम्पूर्ण अवगुण, पाप और दुःखों का समूल नाश हो जाता है और उसमें श्रवण-कीर्तनादि सभी भक्तियों का विकास हो जाता है। उसके आनन्द और शान्ति का पार नहीं रहता। भगवान् उससे फिर कभी अलग नहीं हो सकते। भगवान् का सर्वस्व उसका हो जाता हैं। वह दिव्य परम पवित्र हो जाता है। वह तीर्थों के लिये तीर्थरूप बन जाता है। परीक्षित ने शुकदेवजी से कहा है—

सान्निध्याते महायोगिन् पातकानि महान्त्यपि।
सद्यो नश्यन्ति वै पुंसां विष्णोरिव सुरेतराः ॥
(श्रीमद्भागवत १।१९।३४)

'जैसे भगवान् विष्णु के सान्निध्य मात्र से तुरन्त दैत्यों का नाश हो जाता है, वैसे ही हे महायोगिन् आपके सान्निध्य मात्र से बड़े-से-बड़े पाप समूह नष्ट हो जाते हैं।'

धर्मराज युधिष्ठिर श्रीविदुरजी से कहते हैं—

भवद्विधा भगवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो।
तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता ॥
(श्रीमद्भागवत १।१३।१०)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'भगवन् ! आप जैसे भगवद्भक्त स्वयं तीर्थरूप हैं, वे अपने हृदय में स्थित भगवान् के द्वारा तीर्थों को महातीर्थ बना देते हैं।'

श्री शुकदेवजी महाराज भगवान् की स्तुति करते हुए कहते हैं—

किरात हूणान्ध्र पुलिन्द पुल्कसा
आभीरकङ्का यवना खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदुपाश्रयाश्रयाः
शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः॥

(श्रीमद्भागवत २।४।१८)

'किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कस, आभीर, कङ्क, यवन और खस आदि नीच जातियाँ तथा अन्य पापी जिनके शरणागत भक्तों की शरण ग्रहण करने से ही पवित्र हो जाते हैं, उन सर्वशक्तिमान् भगवान् को बारम्बार प्रणाम है।'

भगवान् के प्रेम का मूर्तिमान् विग्रह बने हुए ऐसे भक्त को सारा संसार परम प्रेममय और परम आनन्दमय प्रतीत होने लगता है। वह जिस मार्ग से जाता है उसी मार्ग में श्रद्धा, प्रेम, भक्ति, आनन्द, समता और शान्ति का प्रवाह बहने लगता है। ऐसे भक्त को अपने ऊपर चलते-फिरते, सोते-बैठते देखकर पृथ्वी अपने को धन्य समझते हुए सनाथ होती है। पितरगण आनन्द से प्रमुदित होते हैं और देवता हर्षित होकर नाचने लगते हैं। जैसे नारदजी ने कहा है—

मोदन्ते पितरो नृत्यन्ति देवताः सनाथा चेयं भूर्भवति।

(नारदभक्तिसूत्र ७१)

श्रीगोपियाँ, भक्त प्रह्लाद, महाराज बलि आदि भक्तगण इस आत्म-निवेदन-भक्ति के परम सुन्दर उदाहरण हैं। इसलिये मनुष्यमात्र को मन, वाणी, शरीर के द्वारा सब प्रकार से श्रीभगवान् के शरण होने के लिए पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।

भगवान् को प्राप्त करने के लिए कर्म, योग, ज्ञान आदि सभी उत्तम रास्ते हैं; परन्तु भक्ति करना इन सब ही प्रकारों में अधिक सुलभ है और भक्ति की शास्त्रों में भी बड़ी प्रशंसा लिखी है। उपर्युक्त नवधा भक्ति में से जिनमें एक भी भक्ति होती है, वे संसार-सागर से अपने आप ही तरकर भगवान् को प्राप्त कर लेता है। किसी में एक से अधिक या नौवों भक्तियों का विकास हो जाय, उसका तो कहना ही क्या है ?

यह नवधा भक्ति प्रकार सभी देवताओं की भक्ति प्राप्त करने में प्रयोग साधन के रूप में ग्रहण की जाती है, अतएव संक्षेप में दस देवताओं के चरणों में प्रणाम करते हुए इस अध्याय का समापन किया जाता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रियं सरस्वतीं गौरीं गणेशं स्कन्दमीश्वरम् ।
ब्रह्माणं वह्निमिन्द्रादीन् वासुदेवं नमाम्यहम् ।।

'लक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती, गणेश, कार्तिकेय, महादेवजी, ब्रह्मा, अग्नि, इन्द्र देवताओं तथा भगवान् वासुदेव को मैं प्रणाम करता हूँ।'

□

ज्योतिष शास्त्र द्वारा धार्मिक वृत्ति तथा उपासक के योगों का विवेचन

सोपान १५

इस जन्म के कर्त्तव्य, कर्म, बुद्धि, सत्संग, विचार संस्कारों के अनुसार तो पूजन, भजन, देवाराधना, तीर्थयात्रा, मोक्षप्राप्ति होती है; किन्तु पूर्व जन्म संचित पुण्य संस्कार के आधार पर भी इस जन्म में ऐसे होने वाले योग होना ज्योतिष-शास्त्र द्वारा जन्म कुण्डलियों में देखा जा सकता है। ज्योतिष के होरा (जातक) शास्त्रों में विविध योगों के वर्णन लिखे हुए हैं। अधिक देखने वालों को वृहज्जातक, जातकतत्त्व, ज्योतिषतत्त्व, मानसागरी, जातक संग्रह तथा वृहत्पाराशर आदि ग्रन्थों को देखना चाहिये। संक्षेप में कतिपय योग लिखे जा रहे हैं।

यत्प्रसूतौ नैधनस्थाः सौम्याः सौरिनिरीक्षताः ।
तस्य तीर्थान्यनेकानि भवन्त्यत्र न संशयः ।१
सौम्येऽष्टमस्थे शुभदृष्टियुक्ते धर्मेश्वरे वा शुभखेचरेन्द्रे ।
तीर्थे मृतिः स्याद्यदि योगयुग्मं तीर्थे हि विष्णुस्मरणेन मुक्तिः ।२
चेत् चित्रकोणभवने निजलये देवतापतिगुरुर्नरो भवेत् ।
श्रीमदच्युतपदच्युतामृतस्नानदानकुशलो नलोपमः ।३

जिसके जन्मकुण्डली में अष्टम स्थान में शुभग्रह (चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र) स्थित हों और उनको शनैश्चर देखता हो उसको अनेक तीर्थों में स्नान, पुण्य,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दान, धर्म, भगवद्दर्शन का समय प्राप्त होता है। यदि अष्टम स्थान में स्थित शुभग्रह हों, शुभग्रह ही देखते हो, भाग्येश भी शुभग्रह हो तो ऐसे जातक की मृत्यु तीर्थस्थान में होती है या इस प्रकार का योग होने से विष्णु-स्मरणपूर्वक मृत्यु होकर मोक्ष प्राप्त होता है। त्रिकोण, पाँचवें, नौवें स्थान में धन एवं मीन राशि पर गुरु स्थित हो तो, पापतारिणी महाभागा पुण्य सलिला श्रीगङ्गाजी में स्नानदानादि का सौभाग्य प्राप्त होता है।१-३।

यदि किसी कुण्डली में दशम स्थान में मीन राशि हो और शुक्र, गुरु, मङ्गल का योग हो तो, उस जातक की मृत्यु तीर्थस्थान में होकर मोक्ष प्राप्त होती है। इसी प्रकार से चतुर्थ भाव में कोई जलधर राशि या मीन राशि हो और उसमें चन्द्रमा के साथ गुरु हो तो, मुक्तिप्रदा श्रीगङ्गाजी में भक्ति एवं वार-बार गङ्गा स्नान दानादि का फल प्राप्त होता है।

मोक्षप्रदा-सप्तपुरियों में में मृत्यु होकर मोक्ष प्राप्ति योग—

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची ह्यवन्तिका।
पुरी द्वारावती ज्ञेया सप्तैता मोक्षदायिका॥

'अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार), काशी, काञ्ची, अवन्तिका (उज्जैन), द्वारकापुरी ये सप्तपुरियाँ मोक्षदायिनी कही गयी हैं।' इन पुरियों में प्राणी की मृत्यु होकर मोक्ष प्राप्त होने के योग इस प्रकार बतलाये गये हैं—

लग्नाद्यौ द्वाविंशो द्रेष्काणौ मरणकारणतया निर्दिष्टस्तदीयो।
यो बली यदि रिपुकेन्द्रस्थो भवति तदा तीर्थे मरणम्॥१॥
न स्युर्नैर्याणका योगाः प्रोक्ता मृत्युदिकाणजाः।
बलिनः क्रेन्द्रषष्ठाष्टघूने स्युर्मोक्षहेतवः॥२॥

'जन्मलग्न से २२वाँ (अष्टम भाव में जिस द्रेष्काण का उदय हो, वही) द्रेष्काण मरण का योग होता है। उसका स्वामी बलवान् हो और वह क्रेन्द्र—(१, ४, ६, ७, ८, १०) स्थान में स्थित हो तो, उस प्राणी का मोक्षदा सप्तपुरियों में मरण होकर मोक्ष प्राप्त होता है। किंतु मृत्यु के समय ये द्रेष्काण जनित मोक्ष के योग न हों, परन्तु छठे-आठवें स्थानों में बली ग्रह बैठे हों तो भी मोक्ष का कारण होता है॥१-२॥

जीवे मोक्षादि काणेशे सिन्धुं वा मथुरापुरीम्।
विपाशां प्राप्य मरणं निश्चितं याति मानवः॥३॥
काशीं द्वारावतीं काञ्चीं गङ्गाद्वार वतीं तथा।
गुरौ केन्द्रगते सोच्चे प्राप्य मृत्युं प्रयच्छति॥४॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'यदि मोक्ष (अष्टम भाव) का द्रेष्काणेश गुरु हो तो, सिन्धुनद, मथुरा, विपाशा (व्यास नदी), काशी, द्वारका, काञ्ची अथवा हरिद्वार में प्राणी की मृत्यु होती है। इसी प्रकार गुरु के उच्च होकर केन्द्रस्थ होने से तीर्थ स्थान में मृत्यु होती है ॥३-४॥

विविध तीर्थकरः सुकलेवरः सुरगुरौ नवमे सुखवान् गुणी।
त्रिदशयज्ञपरः परवार्थवित् प्रचुरकीर्तिकरः कुलवर्द्धनः ॥५॥

यदि ९वें स्थान (भाग्य स्थान) में गुरु (स्वक्षेत्र उच्चादि राशि में स्थित हो तो, मनुष्य विविध तीर्थों का सेवन करने वाला, सुन्दर, सुखी, गुणवान्, यशस्वी, देवयज्ञादि परायण और परमार्थ-तत्त्व का जानने वाला तथा प्रचुर कीर्ति प्राप्त करने वाला व कुल की वृद्धि करने वाला होता है ॥५॥

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्म कुण्डली के पञ्चम तथा नवम भाव भक्ति व धर्म विषय का ज्ञान कराने वाले होते हैं।

किसी कुण्डली के पाँचवे भाव में सूर्य हो या पाँचवे भाव को सूर्य देखता हो तो, वह भगवान् सूर्य और शिव का भक्त होता है। लिखा है—

'सुते सूर्ययुतदृष्टे सूर्यशंकरभक्तः' (जातक तत्त्व ११।२७)

यदि जातक के पञ्चम भाव में बुध स्थित हो या पञ्चम भाव को बुध देखता हो तो, वह सभी देवताओं का भक्त होता है —

सुतज्ञे सम्बंधे सर्वदेव भक्तः' (जातक तत्त्व ११।३६)

यदि जातक के पञ्चम भाव में राहू स्थित हो या पञ्चम भाव को राहू देखता हो तो, यक्षिणी, प्रेतनी, भूतनी आदि की भक्ति करने वाला होता है—

'परपीडकयक्षिण्योः प्रेताशन्याः स सेवकः' (ज्योतिष तत्त्व ३१।५१)

यदि पञ्चम स्थान में पुरुष ग्रह हो या पञ्चम भाव पर पुरुष ग्रह की दृष्टि हो तो पुरुष देवता का भक्त होता है।

सूर्य पञ्चम में यो या सूर्य की पञ्चम भाव पर दृष्टि हो तो, जातक सूर्य की या शक्ति की उपासना करता है। यदि ऐसा ही योग चन्द्रमा का होता है तो जातक पार्वती का उपासक होता हैं मङ्गल का योग होने से कुमार कार्तिकेय की उपासना करने वाला होता है। इस प्रकार से बुध का योग होने से विष्णु उपासक, गुरु योग होने से शंकर का उपासक होता है और शनि, राहू, केतु पञ्चम में हो या इनमें से किसी एक की भी पूर्ण दृष्टि हो तो अन्य देवों में से किसी देव का उपासक होता है।

यदि किसी जातक के नवम भाव में बुध हो तो जातक पक्का (दृढ़) भगवत् प्रमी होता है। यदि बुध के साथ अन्य शुभ ग्रह भी हों तो अवश्य भक्त होता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किसी जातक के नवमभाव में चन्द्रमा, मङ्गल एवं वृहस्पति के सहावस्थान होने से जातक महान् धर्मात्मा यज्ञ अनुष्ठानों का करने वाला होता है—

'देवाराधनतत्परो नवमगैश्चन्द्रारवागीश्वरैः।'

जातक के नवम भाव में शुक्र स्थित हो तो जातक देवाराधन में तत्पर होता है और अनेक धार्मिक कार्यों में समय अथवा कठिन परिश्रम से कमाया हुआ धन प्रसन्नता से लगाता है।

जातक के नवम भाव में गुरु हो, नवांशाधिपति भी नवम भाव में ही हो और शुभ ग्रहों की दृष्टि भी हो तो जातक परम गुरुभक्त होता है।

पञ्चम तथा नवम भाव में शुभग्रह स्थित हों और दोनों भावों के अधिपतियों की दृष्टि भी हो, परस्पर उनके सम्बन्ध भी सुदृढ़ हों तो, ऐसे जातक निश्चितरूप से महान् साधक ईश्वर के अनन्य भक्त होते हैं।

किसी जातक के नवम भाव में पाप ग्रह हों तो, धर्मभक्ति श्रद्धारहित होती है। यदि पापग्रहों के साथ राहू भी हो तो वह जातक ईश्वर, गुरु, माता-पिता में किसी भी प्रकार की श्रद्धा व विश्वास नहीं रखता है।

किसी जातक के नवम भाव में केवल केतु ही स्थित हो, और उस पर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि भी न हो और पञ्चम भाव में कोई शुभ ग्रह भी न हो तो, वह जातक म्लेच्छ धर्म स्वीकार करता है तथा हिंसा में अधिक रुचि रखने वाला होता है।

किसी कुण्डली में पञ्चम स्थान समराशि का हो, उसमें चन्द्रमा या शुक्र स्थित हो तो, वह जातक शक्ति का उपासक होता है।

यदि कुण्डली में गुरु नवमस्थ हो या नवम भाव पर पूर्ण दृष्टि हो तो, जातक शङ्कर का उपासक होता है।

किसी जातक के पञ्चम और नवम दोनों स्थान शुभ लक्षणों से युक्त हों तो, वह जातक सफल सगुणोपासक होकर संसार में ख्याति प्राप्त करता है।

यदि किसी जन्माङ्ग में चन्द्रमा और वृहस्पति के बीच में अन्य सभी ग्रहों की स्थिति हो तो, ऐसा जातक निर्गुण उपासना में सिद्धि प्राप्त करता है।

यदि समस्त ग्रह शनि और मङ्गल के अन्तर्गत हों तो जातक निर्गुणोपासना में सिद्धि प्राप्त करता है।

किसी जातक का जन्म मकर राशि में हो और समस्त ग्रहों की स्थिति सूर्य और मङ्गल के अन्तर्गत हो तो जातक निर्गुणोपासना में सफल होता है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदि कर्क लग्न का जन्म हो, गुरु लग्नस्थ हो और लग्न मेष के नवांश का हो, शुक्र मिथुन में हो और चन्द्रमा कन्या राशि में हो तो जातक उपासना द्वारा परमपद प्राप्त कर लेता है।

यदि मेष के अन्तिम नवांश का जन्म हो, लग्न में गुरु या शुक्र हो, चन्द्रमा द्वितीय स्थान में हो, मङ्गल सिंह नवांश का हो या धन राशि के पञ्चम नवांश का हो तो जातक सिद्ध उपासक होता है।

यदि कर्क लग्न हो, गुरु लग्नस्थ हो, शनि सिंह राशि में हो, चन्द्रमा वृष राशि में हो, शुक्र मिथुन में हो, सूर्य और बुध स्थिर राशि का हो तो जातक उपासना में सिद्धि प्राप्त करता है।

यदि दशम स्थान में मीन राशि में बुध स्थित हो या इस स्थान में मङ्गल हो तो जातक सिद्ध उपासक होकर जीवन्मुक्त होता है।

यदि दशमेश नवम में हो और बली नवमेश गुरु, शुक्र से दृष्ट हो या संयुक्त हो तो, जातक उपासना द्वारा सफलता व सिद्धि प्राप्त करता है।

यदि नवमेश बलवान् हो, शुभग्रह हो, उसपर गुरु या शुक्र की पूर्ण दृष्टि हो या गुरु शुक्र का साथ हो तो ऐसा जातक उपासना में सिद्धि प्राप्त करता है और इस संसार में उसकी महान् ख्याति होती है।

यदि दशमेश पाँच शुभ वर्गों का हो या सात उत्तम वर्गों का हो तो ऐसा जातक उपासना द्वारा महान् सिद्धि प्राप्त करता है।

यदि लग्नाधिपति दशम स्थान में हो और दशमाधिपति नवम स्थान में हो तथा दशमाधिपति पर किसी भी पाप ग्रह की दृष्टि न हो तो ऐसा जातक महान् उपासक बनकर इस लोक और परलोक दोनों को बना लेता है और महान् प्रख्यात सिद्ध बनकर रहता है।

यदि दशमेष बलवान् न हो और सप्तमस्थ हो तो जातक तामसी उपासक बनकर प्रख्यात होता है।

यदि द्वितीयेश और सप्तमेश उपासना में लगाने वाले तीन ग्रहों से घिरे हुए हों तो जातक तामसी उपासक होकर कुख्यात (बदनाम) भी होता है।

यदि उपासना की ओर रुचि कराने वाले ग्रहों के साथ सूर्य, शनि और मङ्गल हों तो ऐसा जातक तामसी उपासक होता है।

यदि लग्नेश बलवान न हो, उस पर शुक्र एवं चन्द्रमा की दृष्टि हो और कोई उच्च अथवा उच्च नवांशस्थ ग्रह चन्द्रमा को देखता हो तो, जातक धनहीन उपासक होता है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदि हीनबल चन्द्रराशि का स्वामी केन्द्रस्थ बलवान् शनि को देखता हो तो, जातक तामसी उपासक धनहीन होता है।

यदि चन्द्रमा नवम स्थान में हो, किसी भी ग्रह से दृष्ट न हो तो, ऐसा जातक राजयोग होते हुए भी संन्यास ग्रहण कर सिद्ध उपासक होता है।

यदि जन्म राशि निर्बल हो, उस पर शनि की दृष्टि हो तो, जातक उपासना में अपना अन्तिम जीवन का समय लगाता है।

यदि शनि नवम स्थान में हो, उस पर किसी बली ग्रह की दृष्टि न हो तो, जातक राजा हो, सेठ-धनपति हो तो भी, अन्त समय में ब्रह्म की उपासना में लीन हो जाता है और योग के प्रभाव से सन्यस्त जीवन में राजसी जीवन व्यतीत करता है।

जन्मकालीन चन्द्रमा जिस राशि में हो, उसके स्वामी अर्थात् जन्मराश्याधिपति की दृष्टि शनि पर पड़ती हो तो जातक को प्रभावित करने वाले ग्रह की अन्तर्दशा में उपासना की ओर अग्रसर होना पड़ता है।

यदि जातक के जन्माङ्ग में गुरु, बुध तथा मङ्गल साथ हों तो जातक उपासक बनता है। ऐसा जातक साकार ब्रह्म का उपासक होता है।

यदि गुरु के साथ बुध दशम स्थान में हो तो ऐसा जातक सात्विक रूप से साकार ब्रह्म की उपासना करता है।

यदि दशमेश कोई शुभग्रह हो और वह चन्द्रमा के साथ हो तथा राहू-केतु का साथ न हो तो, जातक साकार ब्रह्म की उपासना करने वाला होता है।

यदि दशमेश बुध हो, गुरु बलवान् हो या चन्द्रमा तृतीय भाव में हो तो, जातक साकार ब्रह्म का उपासक होता है।

यद्यपि राशि बारह, ग्रह नौ ही होते हैं, किन्तु विभिन्न समय के अनुसार जातकों की अनेक कुण्डली व ग्रह स्थिति निर्मित होती है और ग्रहों की दृष्टि बलाबल भी विभिन्न प्रकार के होते हैं। उनको देखकर ही शास्त्राधार पर निर्णय किया जा सकता है। पाठकों को साधारण जानकारी हेतु यहाँ दर्शाने का यह केवल प्रयास ही किया गया है।

□

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वैष्णव लक्षण, वैष्णव महिमा तथा भगवान् विष्णु और उनके पादोदक की महिमा

सोपान १६

वैष्णव-लक्षण

भगवान् विष्णु का कथन है—

न किंचित् साधवो धीरा भक्ता ह्येकान्तिनो मम।
वाञ्छन्त्यपि मया दत्तं कैवल्यमपुनर्भवम् ॥
(श्रीमद्भागवत ११।४०।३४)

'मेरे अनन्य प्रेमी एवं धैर्यवान् साधु भक्त स्वयं तो कुछ चाहते ही नहीं, यदि मैं उन्हें देना चाहता हूँ और देता हूँ तो भी दूसरी वस्तुओं की तो बात ही क्या, वे कैवल्य मोक्ष भी नहीं लेना चाहते।'

भगवान् के भक्त का कथन है—

नाहं वन्दे तव चरणयोर्द्वन्द्वमद्वन्द्वहेतोः
कुम्भीपाकं गुरुमपि हरे नारकं नापनेतुम्।
रम्या रामा मृदुतनुलता नन्दने नापि रन्तुं
भावे-भावे हृदयभवने भावयेयं भवन्तम् ॥
नास्था धर्मे न वसुनिचय नैवकामोपभोगे
यद्यद्भव्यं भवतु भगवन् पूर्वकर्मानुरूपम्।
एतत्प्रार्थ्यं मम बहु मतं जन्मजन्मान्तरेऽपि
त्वत्पादाम्भोरुहयुगगता निश्चला भक्तिरस्तु ॥
(मुकुन्दमाला, ६-७)

'हे हरे! मैं आपके चरणयुगल में इसलिये नमस्कार नहीं करता कि मेरे द्वन्द्वों (शीतोष्णादि) का नाश हो, कुम्भीपाकादि बड़े-बड़े नरकों से बचा रहूँ और नन्दनवन में कोमलाङ्गी परम सुन्दरी अप्सराओं के साथ रमण करूँ, अपितु इसलिये कि मैं सदा हृदयमन्दिर में आपकी भावना करता रहूँ। हे भगवन्! मैं धर्म-धन संग्रह और कामभोग की आशा नहीं रखता, पूर्वकर्मानुसार जो कुछ होना

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हो सो हो जाय, पर मेरी यह बार-बार प्रार्थना है कि जन्म-जन्मान्तरों में भी आपके चरणारविन्द-युगल में मेरी निश्चल भक्ति बनी रहे।'

भक्त कितने प्रकार के होते हैं—

अर्चायामेव हरये पूजां यः श्रद्धयेहते।
न तद्भक्तेषु चान्येषु स भक्तः प्राकृतः स्मृतः॥
(श्रीमद्भागवत ११।२।४६)

'जो भगवान् के अर्चा-विग्रह-मूर्ति आदि की पूजा तो श्रद्धा से करता है, परन्तु भगवान् के भक्तों या दूसरे लोगों की विशेष सेवा-शुश्रूषा नहीं करता, वह साधारण श्रेणी का भगवद्-भक्त-वैष्णव है।'

ईश्वरे तदधीनेषु बालिशेषु द्विषत्सु च।
प्रेममैत्रीकृपोपेक्षा य करोति स मध्यमः॥
(श्रीमद्भागवत ११।२।४६)

'जो भगवान् में प्रेम, उनके भक्तों से मित्रता, दुःखी और अज्ञानियों पर कृपा तथा भगवान् से द्वेष करने वालों की उपेक्षा करता है, वह मध्यम कोटि का भागवत-वैष्णव है।'

गृहीत्वापीन्द्रियैरर्थान् यो न द्वेष्टि न हृष्यति।
विष्णोर्मायामिदं पश्यन् स वै भागवतोत्तमः॥
(श्रीमद्भागवत ११।२।४८)

'जो कर्ण-नेत्र आदि इन्द्रियों के द्वारा शब्द-रूप आदि विषयों का ग्रहण तो करता है, परन्तु प्रतिकूल विषयों से द्वेष नहीं करता और अनुकूल विषयों के मिलने पर हर्षित नहीं होता—उसकी यह दृष्टि बनी रहती है कि यह सब हमारे भगवान् की लीलारूपी माया है, वह पुरुष उत्तम भागवत, श्रेष्ठ वैष्णव है।'

न कामकर्मबीजानां यस्य चेतसि सम्भवः।
वासुदेवैकनिलयः स वै भागवतोत्तमः॥
न यस्य जन्म कर्मभ्यां न वर्णाश्रमजातिभिः।
सज्जतेऽस्मिन्नहम्भावो देहे वै स हरेः प्रियः॥
न यस्य स्वः पर इति वित्तेष्वात्मनि वा भिदा।
सर्वभूतसमः शान्तः स वै भागवतोत्तमः॥
(श्रीमद्भागवत ११।२।५०-५२)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जिसके मन में विषय भोग इच्छा, विषयार्थ कर्म-प्रवृत्ति और उनके बीज-वासनाओं का उदय नहीं होता और जो एकमात्र भगवान् वासुदेव में ही निवास करता है, वह उत्तम भगवद्भक्त-श्रेष्ठ वैष्णव है। जिसका इस शरीर में न तो सत्कुल में जन्म के कारण एवं तपस्या आदि कर्म को लेकर और न वर्ण, आश्रम एवं जाति में ही अहंभाव होता है, वह निश्चय ही भगवान् श्रीहरि का प्यारा वैष्णव है। जो धन-सम्पत्ति अथवा शरीर आदि में यह अपना है और यह पराया-इस प्रकार का भेद-भाव नहीं रखता, समस्त प्राणि-पदार्थों में समस्वरूप परमात्मा को देखता हैं, समभाव रखता है तथा किसी भी घटना अथवा संकल्प से विक्षिप्त न होकर शान्त रहता है, वह भगवान् का उत्तम भक्त-श्रेष्ठ वैष्णव है।'

देहेन्द्रिय प्राणमनोधियां यो
जन्माप्ययक्षुद्भ्यतर्षकृच्छैः।
संसार धर्मैरविमुह्यमानः
स्मृत्या हरेर्भागवतप्रधानः॥
(श्रीमद्भागवत ११।२।४९)

'संसार के धर्म हैं—जन्म-मृत्यु, भूख-प्यास, श्रम-कष्ट, भय और त्राण। ये क्रमशः शरीर, प्राण, इन्द्रिय, मन और बुद्धि को प्राप्त होते ही रहते हैं। जो पुरुष भगवान् की स्मृति में इतना तन्मय रहता है कि इनके बार-बार होते-जाते रहने पर भी उनसे तनिक भी मोहित नहीं होता, वह उत्तम—श्रेष्ठ वैष्णव है।'

यमराज के दूतों ने यमराज से पूछा कि महाराज! विष्णु भक्तों के क्या लक्षण हैं! यमराज बोले—

न चलति निजवर्णधर्मतो यः
सममतिरात्मसुहृद्विपक्षपक्षे।
न हरति न च हन्ति किंचिदुच्चैः
सितमनसं तमवेहि विष्णुभक्तम्।
(विष्णु पुराण ३।७।२०)

'जो पुरुष अपने वर्ण-धर्म से विचलित नहीं होता, अपने सुहृद और विपक्षियों के प्रति समान भाव रखता है, किसी का द्रव्य हरण नहीं करता तथा किसी जीव की हिंसा नहीं करता, उस निर्मलचित्त व्यक्ति को भगवान् विष्णु का भक्त जानो।'

महाप्रभु श्री चैतन्य देव का कथन है—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदाहरिः ।।

(श्री चैतन्यशिक्षाष्टक ३)

'जो अपने को तृण से भी अधिक नीचा मानते हैं, जो वृक्ष से भी अधिक सहन शील हैं। (पत्थर मारने वाले को सुस्वादु रसपूर्ण फल देते हैं, काटने-चीरने-जलाने वाले का भी भाँति-भाँति से उपकार करते हैं), जो स्वयं अमानी रहकर सबको मान देने वाले हैं, उन्हीं के द्वारा हरि सदा कीर्तनीय हैं। ये ही सच्चे वैष्णव के लक्षण हैं।'

विष्णु भक्त के इन्हीं स्वरूपों के लक्षणों का वर्णन जूनागढ़ (गुजरात) के महान् विष्णुभक्त श्री नरसी मेहता ने अपने गुजराती भाषा के एक सरल भजन में किया है—

वैष्णव जन तो तेने कहिए, जे पीड़ पराई जाणे रे।
पर दुःखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे।।
सकल लोकमाँ सहुने वंदे, निंदा न करे केनी रे।
वाच काछ मन निश्चल राखे, धन-धन जननी तेनी रे।।
समदृष्टि ने तृष्णात्यागी, परस्त्री जेने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे।।
मोह-माया व्यापे नहीं जेने, दृढ़ वैराग्य जेना मन माँ रे।।
रामनामशुं ताली लागी, सकलतीरथ तेना मनीमाँ रे।।
वणलोभी ने कपट रहित छे, काम क्रोध निवार्या रे।
भणे नरसैयो तेनु दरसन, करतां कुल एकोत्तर तार्या रे।

वस्तुतः जिसके जीवन का समस्त समय, सब ही ओर से सभी प्रकार से केवल भगवान् की सेवा में व्यतीत हो। वह कर्म का त्याग तो नहीं करे, परन्तु उसके प्रत्येक कर्म, प्रत्येक विचार भगवत्सेवा के-भगवत्पूजा के लिये ही होते रहें। सर्वदा प्रत्येक कर्म से, प्रत्येक व्यवहार से अपने प्रभु भगवान् की पूजा में ही लगा रहे, उसकी जिह्वा से भगवान् की ही कथा-कहानी व नाम सुमधुर मनोहर उच्चारण होता रहे, वही उत्तम विष्णु-भक्त (वैष्णव) है।

वैष्णव-महिमा

यमराज के दूतों ने यमराज से पूछा—महाराज ! आपका शासन किन पर नहीं चलता ?

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यमराज बोले—

गोविन्द माधव मुकुन्द हरे मुरारे
शम्भो शिवेश शशिशेखर शूलपाणे ।
दामोदराच्युत जनार्दन वासुदेव
त्याज्या भटा य इति संततमामन्ति ।।

(स्कन्द पुराण. काशी खण्ड)

'जो लोग गोविन्द, माधव, मुकुन्द, हरे, शम्भो, मुरारे, शिव, ईश, शशिशेखर, शूलपाणि, दामोदर, अच्युत, जनार्दन, वासुदेव ! इस प्रकार निरन्तर उच्चारण करते है, हे दूतो ! उन्हें तुम (दूर से ही) त्याग देना ।'

यमराज ने अपने अनुचरों को आदेश दिया—

स्वपुरुषमभिवीक्ष्य पाशहस्तं वदति यमः किल तस्य कर्णमूले ।
परिहर मधुसूदन प्रपन्नान् प्रभुरहमन्यनृणाम वैष्णवानाम् ।।
हरिममरवरार्चिताङ्घ्रिपद्मं प्रणमति यः परमार्थतो हि मर्त्यः ।
तमपगत समस्तपापबन्धं व्रज परिहृत्य यथाग्निमाज्यसिक्तम् ।।

(विष्णुपुराण ३।७।१४।१८)

अपने अनुचरों को हाथ में परस लिये देखकर यमराज ने उनके कान में कहा –'भगवान् मधुसूदन के शरणागत व्यक्तियों को छोड़ देना, क्यों कि मैं वैष्णवों से अतिरिक्त और सब मनुष्यों का स्वामी हूँ । जो भगवान् के सुरवर-वन्दित चरणकमलों की परमार्थ बुद्धि से वन्दना करता है, घृताहुति से प्रज्वलित अग्नि के समान समस्त पाप बन्धन से मुक्त हुए उस पुरुष को तुम दूर से ही छोड़कर निकल जाना ।'

सर्वे धन्यतमा ज्ञेया विष्णुभक्तिपरायणाः ।
तेषां दर्शनमात्रेण महापापात् प्रमुच्यते ।।
उपपातकानि सर्वाणि महान्ति पातकानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति वैष्णवानां च दर्शनात् ।।
पावका इव दीप्यन्ते ये नरा वैष्णवा भुवि ।
विमुक्ताः सर्वपापेभ्यो मेघेभ्य इव चन्द्रमाः ।।
संसार कर्दमालेप प्रक्षालन विशारदः
पावनः पावनानां च विष्णुभक्तो न संशयः ।।

(पद्मपुराण पुत्र. १३१।१७-१९, २३)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

जो विष्णुभक्ति परायण हैं, उन सबको धन्यतम जानना चाहिये। उनके दर्शन मात्र से महान् पापों से छुटकारा हो जाता है। कितने ही उपपातक और महापातक हैं, सब वैष्णव के दर्शन से ही नष्ट हो जाते हैं। पृथ्वी में वैष्णवगण अग्नि की भाँति देदीप्यमान हैं, वे मेघयुक्त चन्द्रमा की भाँति समस्त पापों से मुक्त रहते हैं।.....भगवान् का भक्त संसाररूप कीचड़ के लेप को धोने में बड़ा निपुण होता है। और पवित्रों को भी पवित्र कर देता है—इसमें सन्देह नहीं है।'

नारायणं परं देवं सच्चिदानन्दविग्रहम्।
भज सर्वात्मना विप्र यदि मुक्तिमभीप्ससि॥
रिपवस्तं न हिंसन्ति न बाधन्ते ग्रहाश्च तम्।
राक्षसाश्च न चेक्षन्ते नरं विष्णुपरायणम्॥
भक्तिर्दृढा भवेद्यस्य देवदेवे जनार्दने।
श्रेयांसि तस्य सिध्यन्ति भक्तिमन्तोऽधिकास्ततः॥
(नारद पुराण, पूर्वभाग ३४।४-६)

'विप्र (नारदजी)! यदि मुक्ति चाहते हो तो सच्चिदानन्द स्वरूप परमदेव भगवान् नारायण का सम्पूर्ण चित्त से भजन करो। भगवान् विष्णु की शरण लेने वाले मनुष्य को शत्रु मार नहीं सकते, ग्रह पीड़ा नहीं दे सकते तथा राक्षस उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देख सकते। देवपूज्य भगवान् जनार्दन में जिसकी दृढ़ भक्ति है, उसके सम्पूर्ण श्रेय सिद्ध हो जाते हैं। अतः भक्त पुरुष सबसे बढ़कर है।'

श्वपचोऽपि महीपाल विष्णुभक्तो द्विजाधिकः॥
विष्णुभक्तिविहीनस्तु द्विजोऽपि श्वपचाधिकः।
दुर्लभा भूप राजानो विष्णुभक्ता महीतले॥
(नारदपुराण, उत्तर १०।३७-३८)

'चाण्डाल भी यदि भगवान् विष्णु का भक्त है तो वह द्विज से भी बढ़कर है और द्विज भी यदि विष्णु भक्ति से रहित है तो वह चण्डाल से भी अधिक नीच है। भूपाल! इस पृथ्वी पर विष्णुभक्त राजा दुर्लभ है।'

अहो भाग्यमहो भाग्यं विष्णुभक्तिरतात्मनाम्।
येषां मुक्तिः करस्थैव योगिनामपि दुर्लभा॥
(नारदपुराण, पूर्व ३९।८)

'जिनका मन भगवान् विष्णु की भक्ति में अनुरक्त है, उनका अहोभाग्य है, अहोभाग्य है, क्योंकि योगियों के लिये भी दुर्लभ मुक्ति उन भक्तों के हाथ में ही रहती है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्तुत्वा विष्णुं वासुदेवं विपापो जायते नरः ।
विष्णोः सम्पूजनान्नित्यं सर्वपापं प्रणश्यति ।।
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः ।।

(स्कन्द पुराण)

'सर्वव्यापक श्री विष्णु भगवान् का स्तवन करते से मनुष्य निष्पाप हो जाता है और नित्यप्रति उनका पूजन करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। जिनके हृदय में समस्त मङ्गलों के स्थान भगवान् श्रीहरि विराजते हैं, उन्हें कभी किसी कार्य में कोई अमङ्गल प्राप्त नहीं होता।'

जब प्रह्लाद के ऊपर पुरोहितों ने कृत्या का प्रयोग किया, तब वे स्वयं ही उस कृत्या के द्वारा मृत्यु को प्राप्त हो गये। यह देखकर भक्तशिरोमणि श्री प्रह्लादजी ने कहा—

यथा सर्वगतं विष्णु मन्यमानोऽनपायिनम् ।
चिन्तयाम्यरिपक्षेऽपि जीवन्त्वेते पुरोहिताः ।।

(विष्णु पुराण १।१८।४१)

'यदि शत्रु में भी मैं सचमुच विष्णु की भावना करता हूँ तो ये पुरोहित जीवित हो जायँ। इतना कहने पर वे सब जीवित हो, उठ बैठे।' भगवद्गीता में भी भगवान् का कथन है—'जो व्यक्ति मुझे उपायरूप में वरण करता है, वही इस माया (मृत्यु) से तरता है'—

'मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ।।'

(भगवद्गीता ७।१४)

'अधिक क्या बतलाया जावे भगवान् विष्णु के अनन्त गुण, प्रभाव हैं, उसी प्रकार से विष्णु भक्तों के गुण प्रभाव भी असीम ही हैं। भगवान् विष्णु की पावनी भक्ति में निमज्जित आनन्दपूर्ण वैष्णवों का जीवन धन्य है, उनकी भी महिमा अपार है। गङ्गावतरण काल में भगीरथजी से गङ्गाजी ने कहा—'राजन्! भूमिपर पापियोंके पाप से लद जाने पर मैं कहाँ उसका प्रक्षालन करूँगी?' तब भगीरथजी ने कहा—'तेष्वास्ते ह्यघभिद्धरिः' (भागवत ९।९।६)। वैष्णव जब आप में स्नान करेंगे, तब वे आपके सारे पाप हर ले जायेंगे और उनका सारा पाप हरि-स्मरण-बड़वानल में भस्मसात् हो जायगा। वैष्णवों की सत्ता का उद्घोष करते हुये यमराज ने अपने दूतों से कह दिया कि—'प्रभुरहमन्यनृणामवैष्णवानाम्' (विष्णुपुराण ३।७।१४)। 'मैं तो वैष्णव से इतर व्यक्तियों का ही पाप-पुण्य के अनुसार दण्ड प्रदाता हूँ, क्यों कि वैष्णव के पाप-पुण्य कुछ अवशेष रहते ही नहीं हैं।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

महामहिमामय करुणा-क्षमा-सागर भगवान् श्रीविष्णु इसलिये सृष्टि नहीं करते कि जीव गर्भवास-नरकवास, आधि-व्याधि का कष्ट भोगे एवं चौरासी लाख योनियों में भटकता रहे, बल्कि उनका महान् उद्देश्य यह है कि जीवात्मा उनकी नवधाभक्ति या शरणागति का आश्रय ग्रहण कर, कर्म-जन्य शरीर से निकल कर विष्णु की महान् ज्योति को प्राप्त हो जाय तथा भगवान् विष्णु महाप्रभु के दिव्यानन्द को प्राप्त करे।

विष्णु—महिमा

वेदे रामायणे पुण्ये भारते भरतर्षभ।
आदौ चान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते॥
(हरिवंशपुराण ३।१३५।९५)

'समस्त वेदों में, रामायण में तथा महाभारत में सर्वत्र आदि, मध्य और अन्त में हरि ही गाये जाते हैं।'

'तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय॥'
(शुक्ल यजु. ३१।१८)

'श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ.....।' (शुक्ल यजु. ३१।२२)

अर्थात् श्री; लक्ष्मी के पति विष्णु ही महापुरुष हैं।

उन्हीं की उपासना से मृत्यु का अतिक्रमण हो सकता है। महर्षियों, पूर्वाचार्यों तथा दार्शनिक महामनीषियों ने नित्य-निर्दोष अपौरुषेय वेदों द्वारा ही भगवान् विष्णु के तत्त्वज्ञान को ज्ञात करके उन्हीं भगवान् विष्णु को ही साधना द्वारा प्राप्त करने का लक्ष्य निर्णय किया। क्योंकि भगवान् विष्णु ही परतत्त्व हैं। वेदों में जगत्कारण रूप में भगवान् विष्णु-नारायण का ही उल्लेख मिलता है—

'तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरय।' (ऋग्वेद १।२२।२०)

'भगवान् विष्णु के सर्वोत्कृष्ट परम प्राप्य स्वरूप का नित्यमुक्त चेतन दर्शन करते रहते हैं।'

'सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम्।' (कठोपनिषद् १॥३९)

'सन्मार्ग पर चलने वाला साधक प्रकृतिमण्डल से परे विष्णु के उस सर्वश्रेष्ठ पद को प्राप्त कर लेता है।'

'एको ह वै नारायण आसीन्।' (महोपनिषद् १।१)

'सृष्टि के आरम्भ में जगत्-कारण एक नारायण ही थे।'

'अथ पुरुषो ह नारायणोऽकामयत्।' (नारायणोपनिषद् १।१)

'जगत् कारण रूप से प्रसिद्ध नारायण ने सृष्टि विस्तार की कामना की।'

'दिव्यो देव एको नारायणः।' (सुबालोपनिषद् ६।१)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जगत् की रचना करके उसमें क्रीड़ा करने वाले एक नारायण ही हैं।'

स्वाध्याय के विना वेदार्थ-ज्ञान विद्वानों के लिये भी दुरूह है, अतः वेदार्थ के निश्चय के लिये वेदानुकूल स्मृति इतिहास और पुराण वचनों का सहयोग भी ले लेना बहुत आवश्यक है—

इतिहासपुराणाभ्यां वेद समुपबृंहयेत् ।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति ।।

(महाभारत आदि. १।२६७)

वेदार्थो निश्चेतव्यः स्मृतीतिहासपुराणैः ।

(लोकाचार्य)

मनुस्मृति में लिखा है-'अप एव ससर्जादौ: तेन नारायण स्मृतः।' (मनुस्मृति १।८,१०) 'सृष्टि के आरम्भ में विष्णु ने जल की रचना करके उसमें निवास किया, इसलिये उनका नाम नारायण हुआ।' श्रुति भी कहती है—उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्नि बोधत (कठोपनिषद् १।३।१४)-'मोह-निद्रा से उठो, जाग कर श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा श्रीविष्णु तत्त्व को ज्ञात करो।' विष्णु पुराण में लिखा है-'विष्णोःसकाशादुद्भूत जगत्तत्रैव च स्थितम्।' (विष्णु पुराण १।१।३१)-विष्णु से ही ससार उत्पन्न हुआ है और उनमें ही स्थित है।' इसी प्रकार से गीता में लिखा है। भगवान् कृष्ण स्वयं कहते हैं—'अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा।' (गीता ७।६)—'मैं समस्त विश्व का उत्पादक एवं संहारकर्ता हूँ।' भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं—'अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि।' (गीता १८।६६)

मैं तुम्हें समस्त पापों से छुड़ा दूँगा, तुम सोच न करो।' नारद पुराण में लिखा है—'नास्ति विष्णु समं दैवम्।' (नारद पुराण ६।५८) 'विष्णु के समान कोई देवता नहीं है।' श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ८९ की कथा भगवान् विष्णु ही सर्वश्रेष्ठ देवता होने के विषय में पूर्णरूप से इस ग्रन्थ के स्कन्ध द्वितीय सोपान १७ मे लिखी गयी है।

भगवान् विष्णु किससे प्रसन्न होते हैं?

परापवादं पैशुन्यमनृतं च न भाषते ।
अन्योद्वेगकरं वापि तोष्यते तेन केशवः ।।
परदारापरद्रव्यपरहिंसासु यो रतिम् ।
न करोति पुमान् अप तोष्यते तेन केशवः ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न ताडयति नो हन्ति प्राणिनोऽन्यांश्च देहिनः।
यो मनुष्यो मनुष्येन्द्र तोष्यते तेन केशवः ॥
देवद्विजगुरुणां च शुश्रूषासु सदोद्यतः।
तोष्यते तेन गोविन्दः पुरुषेण नरेश्वर ॥
यथाऽऽत्मनि च पुत्रे च सर्वभूतेषु यस्तथा।
हितकामो हरिस्तेन सर्वदा तोष्यते सुखम् ॥
यस्य रागादिदोषेण न दुष्टं नृप मानसम्।
विशुद्धचेतसा विष्णुस्तोष्यते तेन सर्वदा।
वर्णाश्रमेषु ये धर्माः शास्त्रोक्ता नृपसत्तम।
तेषु तिष्ठन्नरो विष्णुमाराधयति नान्यथा ॥

(श्री विष्णुपुराण ३।१८।१३-१९)

'जो पुरुष दूसरों की निन्दा, चुगली अथवा मिथ्या-भाषण नहीं करता तथा ऐसे वचन भी नहीं बोलता जिससे दूसरों को दुःख हो, उससे निश्चय ही भगवान् प्रसन्न रहते हैं। राजन्! जो पुरुष परस्त्री, परधन और दूसरों की हिंसा में प्रीति नहीं करता, उससे सर्वदा ही भगवान् केशव संतुष्ट रहते हैं। नरेन्द्र! जो मनुष्य किसी प्राणी अथवा [वृक्षादि] अन्य देह धारियों को पीड़ित अथवा नष्ट नहीं करता; उससे श्रीकेशव संतुष्ट रहते हैं। जो पुरुष देवता, ब्राह्मण और गुरुजनों की सेवा में सदा तत्पर रहता है, नरेश्वर! उससे गोविन्द सदा प्रसन्न रहते हैं। जो व्यक्ति स्वयं अपने और अपने पुत्रों के समान ही समस्त प्राणियों का हित-चिन्तक होता है, वह सुगमता से ही श्रीहरि को प्रसन्न कर लेता है। नृप! जिसका चित्त रागादि दोषों से दूषित नहीं है, उस विशुद्ध-चित्त पुरुष से भगवान् विष्णु सदा संतुष्ट रहते हैं। नृपश्रेष्ठ! शास्त्रों में जो-जो वर्णाश्रम कहे गये हैं, उन-उनका ही आचरण करके पुरुष विष्णु की आराधना कर सकता है, और किसी प्रकार नहीं।'

भव-सागर में डूबते हुए जीवों के लिये भगवान् विष्णु ही रक्षक हैं

संसार सागरं ततुं य इच्छेत् मुनिपुङ्गव।
स भजेद्धरिभक्तानां भक्तान् वै पापहारिणः ॥
दृष्टः स्मृतः पूजितो वा ध्यातः प्रणमितोऽपि वा।
समुद्धरति गोविन्दो दुस्तरात् भवसागरात् ॥

(नारदपुराण, पूर्व ३९।५-६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'जो संसार-सागर के पार जाना चाहता हो, वह भगवद्भक्तों के भक्तों की सेवा करें, क्यों कि वे सब पापों को हर लेने वाले हैं। दर्शन, स्मरण, पूजन, ध्यान अथवा प्रणाम मात्र कर लेने पर भगवान् गोविन्द दुस्तर भवसागर से उद्धार कर देते हैं।

भवजलधिगतानां द्वन्द्ववाताहतानां
सुतदुहितृकलत्रत्राणभारार्दितानाम्।
विषमविषयतोये मज्जतामप्लवानां
भवतु शरणमेको विष्णुपोतो नराणाम्।
(श्रीमुकन्द माला ११)

'जो संसार-सागर में गिरे हुये हैं, (सुख-दुःखादि) द्वन्द्वरूपी वायु के थपेड़ों से आहत हो रहे हैं, पुत्र-पुत्री-स्त्री आदि के पालन-पोषण के भार से पीड़ित हैं और विषयरूपी विषम जलराशि में विना नौका के डूब रहे हैं, उन पुरुषों के लिये एकमात्र विष्णुरूप जहाज की ही शरण हों।'

ध्यायन्ते वैष्णवाः शश्वद् गोविन्दपदपङ्कजम्।
ध्यायते तांश्च गोविन्दः शश्वत्तेषां च सन्निधौ॥
सुदर्शनं संनियोज्य भक्तानां रक्षणाय च।
तथापि नहि निश्चिन्तोऽवतिष्ठेदभक्त संनिधौ॥
(ब्रह्मवैवर्त पुराण ११।४४-४५)

'वैष्णवजन सदा गोविन्द के चरणारविन्दों का ध्यान करते हैं और बदले में भगवान् गोविन्द उनका ध्यान ही नहीं करते, वरं सदा उनके निकट रहते हैं। भक्तों की रक्षा के लिये सुदर्शनचक्र को नियुक्त करके भी श्रीहरि निश्चिन्त नहीं होते, अपितु स्वयं भी उनके पास उपस्थित रहते हैं।'

सांकेत्यं पारिहास्यं वा स्तोभं हेलनमेव वा।
वैकुण्ठनामग्रहणमशेषाघहरं विदुः॥
(श्रीमद्भागवत ६।२।१४)

'जैसे-तैसे संकेत के रूप में, परिहास में, गाते समय, सहारे के लिये या अवहेलनापूर्वक भी लिया गया विष्णु का नाम अवशेष पापों का ध्वंसक है।'

कामं क्रोधं भयं स्नेहमैक्यं सौहृदमेव च।
नित्यं हरौ विदधतो यान्ति तन्मयतां हि ते॥
(श्रीमद्भागवत १०।२९।१५)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'काम, क्रोध, भय, स्नेह, एकता तथा मित्रता इनमें से किसी भी भाव से हरि (विष्णु) का नित्य भजन करने वाले मनुष्य विष्णु के स्वरूप को प्राप्त कर लेते हैं।'

भगवान् श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता के दसवें अध्याय के २१ वें श्लोक में अपनी दिव्य विभूतियों में अपने आपको 'विष्णु, बतलाकर इस बात की और भी पुष्टि की है—आदित्यानामहं विष्णुः।

भगवान् विष्णु संसार के रक्षक के रूप में प्रसिद्ध हैं और यह भली-भाँति ज्ञात है कि रक्षा करने के लिये शक्ति की बड़ी आवश्यकता होती है। इसलिये भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन ने अपनी शक्ति की महिमा बतलाते हुए कहा है—'हे भारत! जब-जब भी धर्म का ह्रास और अधर्म का उत्थान होता है, तब-तब मैं अपने आपको प्रकट करता हूँ। मैं साधु पुरुषों (सज्जनों, भक्तों) के परिरक्षणार्थ तथा दुष्टों का विनाश करने के लिए एवं धर्म को संस्थापित करने के लिये युग-युग में प्रकट होता हूँ। (गीता ४।७-८)

शारीरिक शक्ति से भी बौद्धिक शक्ति विशेष प्रबल है। भगवान् विष्णु में ये दोनों ही शक्तियाँ अपरिमेय रूप से मिलती हैं। अतः वे देवों में सर्व शक्तिमान् और चतुरतम रूप में प्रसिद्ध हैं। धर्मज्ञ जानते हैं कि जब कभी शिव, ब्रह्मा तथा इतर देवों पर विपत्ति आयी है, वहाँ भगवान् विष्णु ने ही उनकी रक्षा की है। उदाहरणार्थ, उन्होंने समुद्र-मन्थन में मोहिनीरूप धारण कर, हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु के वध में वराह तथा नृसिंहरूप धारणकर, वृत्रासुर-वध में वज्र में प्रविष्ट होकर, वलि-मान मर्दन में वामनरूप धरकर, रावण कुम्भकर्ण-वध में दशरथनन्दन बनकर तथा दन्तवक्त्र, शिशुपाल और कंस का विनाश करने के लिये योगेश्वर कृष्ण बनकर अपनी दोनों ही शक्तियों को भली भाँति प्रकट किया।

वृहदारण्यक उपनिषद् में बतलाया गया है कि 'विष्णु' वह शक्ति है, जो इन्द्रियों और आत्मा को उनके कर्मानुसार नियुक्त करती है। इस प्रकार 'विष्णु' शरीर के अधिष्ठातृदेव भी कहे जा सकते हैं।

भीष्मपितामह ने दुर्योधन से भगवान् श्रीकृष्ण की, (जो विष्णु के ही अवतार थे, ब्रह्माद्वारा बतलायी हुयी) महिमा का इस प्रकार से वर्णन किया—

"पहले समय की बात है, समस्त देवता और महर्षि गन्धमादन पर्वत पर आकर ब्रह्माजी के पास बैठे। वहाँ अचानक एक दिव्य विमान आया और उसमें से एक तेजस्वी पुरुष उतरे। ब्रह्माजी ने उनकी आरती करके स्तुति की। तदनन्तर वे ब्रह्माजी को अवतार हेतु आश्वासन देकर अन्तर्धान हो गये। तब देवताओं ने ब्रह्माजी से प्रश्न किया—'प्रभो! अपने विनयपूर्वक प्रणाम करके श्रेष्ठ वचनों द्वारा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जिनकी स्तुति की है, वे कौन थे ? हम उनके विषय में जानना चाहते हैं।' तब भगवान् ब्रह्माजी ने उन देवाधिदेव भगवान् नारायण की महिमा का इस प्रकार गुणगान किया—'हे श्रेष्ठ देवताओ ! जो परमतत्त्व है, भूत, भविष्य और वर्तमान-तीनों जिनके उत्कृष्ट स्वरूप हैं तथा जो इन सब से विलक्षण हैं, जिन्हें सम्पूर्ण भूतों का आत्मा और सर्वशक्तिमान् प्रभु कहा गया है, जो 'परम ब्रह्म' और 'परमपद' के नाम से विख्यात है, उन्हीं परमात्मा ने मुझे दर्शन देकर, मुझसे प्रसन्न होकर बात-चीत की है। मैंने उन जगदीश्वर से सम्पूर्ण जगत् पर कृपा करने के लिये इस प्रकार से प्रार्थना की है कि 'हे प्रभो ! आप वासुदेव-नाम से विख्यात होकर कुछ काल तक मनुष्यों में रहें और असुरों के वध के लिये इस भूतल पर अवतीर्ण हों।"

सम्पूर्ण जगत् का स्वामी मैं ब्रह्मा उन भगवान् का ज्येष्ठ पुत्र हूँ। तुम सब लोगों को उन सर्वलोकेश्वर भगवान् वासुदेव की आराधना करनी चाहिये। सुर-श्रेष्ठगण ! शङ्ख, चक्र, और गदा धारण करने वाले उन पराक्रमी भगवान् वासुदेव का 'ये मनुष्य हैं' यों समझकर अनादर नहीं करना चाहिये। ये भगवान् ही परम गुप्त धन हैं। ये ही परमपद हैं। ये ही परम ब्रह्म हैं। ये ही परम यश हैं और ये ही अक्षर अव्यक्त एवं सनातन तेज हैं। ये ही पुरुष नाम से कहे जाते हैं, किन्तु इनका वास्तविक स्वरूप जाना नहीं जा सकता। ये ही विश्वस्रष्टा मुझ ब्रह्मा के द्वारा 'परमसुख', 'परमतेज' और 'परमसत्य' कहे गये हैं। इसलिये 'ये मनुष्य हैं'—यों समझ कर इन्द्रादि सम्पूर्ण देवताओं तथा संसार के मनुष्यों को अमित पराक्रमी भगवान् वासुदेव की अवहेलना नहीं करनी चाहिए। जो सम्पूर्ण इन्द्रियों के स्वामी इन भगवान् वासुदेव को केवल मनुष्य कहता है, वह मूर्ख है। भगवान् की अवहेलना करने के कारण उसे 'नराधम' कहा गया है। जो चराचर स्वरूप, श्रीवत्सचिह्न विभूषित, कान्ति से सम्पन्न भगवान् पद्मनाभ को नहीं जानता, उसे विद्वान् पुरुष 'तमोगुणी' कहते हैं। जो किरीट कौस्तुभ-मणि धारण करने वाले तथा मित्रों (भक्तजनों) को अभय देने वाले हैं, उन परमात्मा की अवहेलना करने वाला मनुष्य घोर नरक में डूबता है।" (महाभारत, भीष्म.६६।६-२२)

सदा भगवान् नारायण का ही ध्यान करना चाहिये

नमामि नारायणपादपङ्कजं करोमि नारायण पूजनं सदा।
वदामि नारायणनाम निर्मलं स्मरामि नारायणतत्त्वमव्ययम् ॥
नारायणेति मन्त्रोऽस्ति वागस्ति वशवर्तिनी।
तथापि नरके घोरे पतन्तीत्येतदद्भुतम् ॥
आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः।
इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्।
सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रति गच्छति ।।
(पाण्डवगीता)

'मैं नारायण के चरणारविन्दों को नमस्कार करता हूँ, नारायण की ही नित्य पूजा करता हूँ, नारायण के निर्मल नाम का उच्चारण करता हूँ और नारायण के अव्यय तत्त्व का स्मरण करता हूँ। नारायणरूप मन्त्र के रहते हुए और वाणी के स्वाधीन रहते हुए भी लोग नरक में गिरते हैं—बड़ा आश्चर्य है। सभी शास्त्रों का मन्थन करके, तदनुसार बारंबार विचार करके, यही सार निकाला गया है कि सदैव नारायण का ही ध्यान करना चाहिये। जैसे आकाश से गिरा हुआ जल अन्त में समुद्र में ही जाकर मिलता है, उसी प्रकार सभी देवों के प्रति किया गया नमस्कार भगवान् केशव के ही पास जा पहुँचता है।'

भगवान् विष्णु के ध्यान से मुक्ति प्राप्त होती है

ऐश्चर्यमदोन्मत्तस्तत्त्वज्ञानपराङ्मुखः।
संसारसुमहापङ्के जीर्णा गौरिव मज्जति ।।
यस्त्वात्मानं निबाध्नाति कर्मभिः कोशकारवत्।
तस्य मुक्तिं न पश्यामि जन्मकोटिशतैरपि ।।
तस्मान्नारद सर्वेशं देवानां देवमव्ययम्।
आराधयेत् सदा सम्यग् ध्यायेद्विष्णु समाहितः ।।
यस्तं विश्वमनाद्यन्तमाद्यं स्वात्मनि संस्थितम्।
सर्वज्ञममलं विष्णुं सदा ध्यायन् विमुच्यते ।।
(श्रीनरसिंहपुराण १६।१४-१७)

'जो मनुष्य भोग और ऐश्वर्य के मद से उन्मत्त और तत्त्वज्ञान से विमुख है, वह संसार-रूपी महान् पङ्क (कीचड़) में उसी प्रकार से डूब जाता है, जैसे कीचड़ में फँसी हुई बूढ़ी गाय डूब जाती है। जो रेशम के कीड़े की भाँति अपने को कर्मों के बन्धन से बाँध लेता है, उसके लिये अरबों जन्मों में भी मैं मुक्ति की सम्भावना नहीं देखता। इसलिये नारद! सदा समाहित चित्त होकर सर्वेश्वर अविनाशी देव-देव भगवान् विष्णु का भली भाँति आराधन और ध्यान करना चाहिये। जो सदा उन विश्वरूप, आदि-अन्त से रहित, सबके आदिकारण, स्वरूपनिष्ठ, अमल एवं सर्वज्ञ भगवान् विष्णु का ध्यान करता है, वह मुक्ति को प्राप्त होता है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीविष्णु पादोदक-माहात्म्य

'हरि भक्ति विलास' में 'नरसिंह पुराण' का वचन कहा गया है कि 'गङ्गा, प्रयाग, गया, नैमिषारण्य, पुष्करक्षेत्र, कुरुक्षेत्र तथा यमुना आदि नदियां तथा अन्य तीर्थ मनुष्य के पापों को बहुत देर में दूर करते हैं, किन्तु श्रीभगवान् का पादोदक तो प्राणियों को तत्काल ही पवित्र कर देता है'—

गङ्गाप्रयागगयनैमिषपुष्कराणि
पुण्यानि यानि कुरुजाङ्गलयामुनानि ।
कालेन तीर्थसलिलानि पुनन्ति पापं
पादोदकं भगवतः प्रपुनाति सद्यः ।।

विष्णु पादोदक को किसी पात्र में रखकर निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करके पान करना चाहिये—

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
विष्णोः पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ।।

'मैं समस्त व्याधियों तथा अपमृत्यु एवं अकालमृत्यु के नाश करने वाले श्रीविष्णु-पादोदक का पानकर, उसे सिरपर धारण करता हूँ ।'

भगवान् विष्णु का जन्म भी साधारण जीवों की भाँति नहीं होता । वे कंस के कारागार में सहसा ही देवकी और वासुदेव के सामने चतुर्भुज विष्णु के रूप में प्रकट हुए, उस स्वरूप का ध्यान करते हुए, इस सोपान का समापन किया जाता है ।

तमद्भुतं बालकमम्बुजेक्षणं, चतुर्भुजं शङ्खगदार्युदायुधम् ।
श्रीवत्सलक्ष्मं गलशोभिकौस्तुभं, पीताम्बरं सान्द्रपयोदसौभगम् ।।
महार्हवैदूर्य किरीटकुण्डल-त्विषा परिष्वक्तसहस्रकुन्तलम् ।
उद्दामकाञ्च्यङ्गदकङ्कणादिभिर्विरोचमानं वसुदेव ऐक्षत ।।
(श्रीमद्भागवत)

'वसुदेवजी ने देखा, उनके सामने एक अद्भुत बालक है । उसके नेत्र कमल के समान कोमल और विशाल हैं । चार सुन्दर हाथों में शङ्ख, गदा, चक्र और कमल लिये हुए हैं । वक्षःस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न—अत्यन्त सुन्दर सुवर्णमयी रेखा है । गले में कौस्तुभमणि झिलमिला रही है । वर्षाकालीन मेघ के समान परम सुन्दर श्यामल शरीर पर मनोहर पीताम्बर फहरा रहा है । बहुमूल्य वैदूर्यमणि के किरीट और कुण्डल की कान्ति से सुन्दर-सुन्दर घुँघराले बाल सूर्य की किरणों के समान चमक रहे हैं । कमर में चमचमाती करधनी की लड़ियाँ लटक रही हैं ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बाहों में बाजूबन्द और कलाइयों में कंकण सुशोभित हो रहे हैं। इन सब आभूषणों से सुशोभित बालक के अङ्ग-अङ्ग से अनोखी छटा छिटक रही है।'

चतुर्भुजरूपधारी भगवान् विष्णु के चरणों में बारंबार प्रणाम है।

□

उपासना में अशुद्ध अपवित्र अनाचार निषिद्ध, वेष के दोष तथा शुद्ध, पवित्र, सदाचार शुद्धवेष का महत्त्व

सोपान १७

शुद्ध-पवित्र वेष उपासना का आधार है, परन्तु आधुनिक काल में वैदिक संस्कृति के विस्मरण और पाश्चात्य संस्कृति को ग्रहण कर लेने के कारण स्वयं उपासक या साधक स्वतः जो रुचता है, उसे ही ग्रहण करते हैं, इस विषय में जैसा होना चाहिये, वैसा नहीं करते हैं। यह बात बहुत ही अनुचित है। यह समझने व देखने की बात है कि यदि किसी मकान की नींव ही ठीक न हो तो उस पर बना हुआ मकान चाहे कितना ही भव्य, सुन्दर तथा ऊँचा हो, अधिक समय तक नहीं ठहर सकता। इसी प्रकार अशुद्ध-अपवित्र, निषिद्ध वेष में उपासक द्वारा की हुई कितनी ही साङ्गोपाङ्ग, समृद्ध उपासना क्यों न हो, उसमें निहित मूलभूत दोष समस्त उपासना में अनुस्यूत होने के कारण उस उपासना को कदापि शास्त्रानुकूल नहीं रहने देंगे।

शास्त्रानुकूल उपासना का मूल आधार शुद्ध-पवित्र होने के कारण उपासना के पहले स्नान तथा स्नानोपरान्त शुद्धवस्त्र धारण आधारभूत शुद्धि-पवित्रता शास्त्रीय दृष्टि से देखने पर उपासक के लिये अत्यावश्यक जान पड़ती है। क्यों कि उपासना में आरम्भ से समाप्ति तक शुद्ध-पवित्र तत्त्व का ही मूल्य और महत्त्व अद्वितीय है। इससे ही साधना का प्रारम्भ होने के कारण शुद्ध-पवित्र की दृष्टि से इसका माहात्म्य प्रभावशाली है। अतएव उपासना के साथ इस तत्त्व का सम्बन्ध कितना और कैसा महत्त्वपूर्ण है, इसको विद्वान् उपासक सहज ही समझ सकते हैं।

पहले उपासक को शुद्ध जल से स्नान करके स्वच्छ और पवित्र वस्त्र धारण करना चाहिये। उपासना-शास्त्र में वेष का स्थान एक विशिष्ट स्थान है। शिखा,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यज्ञोपवीत, कौपीन—ये सर्वसाधारण उपासक के वेष होते हैं। धोती, उत्तरीय भी वैदिक काल में वस्त्रों में परिगणित थे। जगन्नियन्ता प्रजापति का अर्थात् सगुण परमात्मा का दर्शन ऋषि लोग दिव्य दृष्टि से करते थे। उन्होंने ब्रह्माजी को यज्ञोपवीत के साथ सगुण आकार धारण किये हुए देखा था। यज्ञोपवीत के मन्त्र से यह सिद्ध होता है—

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं
प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं
यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि देव-देवताओं के स्वाभाविक वेष, उनकी भाषा सब दैवी होने के कारण पवित्र थे, उनसे पवित्रता की वृद्धि होने के कारण अर्थात् उन्नति-साधन होने के कारण ऋषि-मुनियों ने उनका अनुकरण और प्रसार किया। विशिष्ट वेषधारण का दूसरा उद्देश्य यह है कि अपने पसंद की बात दूसरा अङ्गीकार करेगा तो सहज ही अपना प्रिय बन जायगा। यह बात मानव-शास्त्र की दृष्टि से सुस्पष्ट की है। इस प्रकार वैदिक संस्कृति में प्रसारित-वेष-परिधान करने से वेद-वर्णित देवता प्रसन्न होते हैं, क्योंकि वह वेष उनकी इच्छा के अनुकूल है। अस्तु, उपासना का हेतु क्या है? देवता को प्रसन्न करना ही है। इसलिये यह बात छोटी हो या बड़ी, देवता को प्रसन्न करने के लिये बाल्यकाल से ही वह अवश्य ग्रहण करने योग्य होती है। अतएव साधना में तत्त्वतः छोटे-बड़े भाव न होने के कारण वेष का क्या महत्त्व रह जाता है? यह सोचकर वेषादि की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। वेष, मन्त्र, जप, ध्यान, पूजा; स्तुति-स्तोत्र आदि में कोई भी साधन हो, वह बाह्य होने के कारण दृश्य हो या आन्तरिक होने के कारण अदृश्य हो तथापि साधना की दृष्टि से उसका अपना महत्त्व है। इनमें आचार बाह्य होने पर तथा इनका महत्त्व अकारण नहीं जान पड़ता। 'आचारः प्रथमो धर्मः', 'आचार प्रभवो धर्मः' अथवा 'आचारः परमो धर्मः, इत्यादि शास्त्र वचनों के द्वारा आचार धर्म का पालन उपासक के लिये अनिवार्य हो जाता है।

जो वेष वेदों में प्रशंसित है, देवताओं को प्रिय लगने वाला है. उसे ही धारण करना चाहिये। 'वस्त्रोपवस्त्रे शुद्ध अकार्षीत'—'शुद्धता' का अर्थ है बाह्य शुद्धता और आन्तरिक शुद्धता को 'पवित्रता' कहते हैं। बाह्य शुद्धता शारीरिक आरोग्य के लिये है और आन्तरिक शुद्धता से मानसिक आरोग्य के बनाये रखने में सहायता मिलती है। उपासना मुख्यतः आन्तरिक अर्थात् मानसिक और आत्मिक उन्नति-साधन के लिये होती है। अतएव पवित्रता की अपेक्षा करके केवल बाह्य स्वच्छता पर निर्भर करने से उपासक का काम नहीं निकल सकता। इसलिये जल

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वस्त्रादि समस्त उपासना के साधनों को शुचि अर्थात् पवित्र बनाये रखने का ही लक्ष्य होना चाहिये।

यहाँ शुचिता (पवित्रता) के विषय में वैज्ञानिक दृष्टि से भी कुछ रहस्य बतला देना आवश्यक प्रतीत होता है। चर और अचर अर्थात् प्राणी और जड़ पदार्थ, अपने विशिष्ट स्वभाव यानी गुण-धर्म से आवेष्टित होते हैं। इसके अतिरिक्त परिवर्तन-शील संस्कार के कारण यह आवेष्टन भी अनित्य होता है। इन दोनों के मिलने से एक वलय तैयार होता है। उस वलय में उलट-फेर करने में अच्छे,बुरे गुणकण कार्य-रत रहते हैं। इसको GOOD AND EVIL FORCESS कहना चाहिये। एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के साथ सम्पर्क होने पर उनके पारस्परिक वलय का मिश्रण होता है और उनसे संकर अर्थात् मिश्रस्वरूप के वलय का निर्माण होता है। इस वलय में जीवदृष्टि से वैचारिक और वैकारिक परमाणुओं के न्यूनाधिक मिश्रण होने पर त्रिगुणों का संचालन विविध शक्तियों (FORCES) के रूप में चालू हो जाता है। उसके द्वारा दैवीशक्ति की हानि करने वाले अर्थात् मारक और बाधक वलयों के गुण 'अशुद्धिकर' होते हैं। इसके विपरीत अच्छे गुणों से युक्त परमाणु 'शुद्धिकर होते हैं।

'आचार' प्रत्यक्षतः जानने में आता है और 'विचार' परोक्षतः। परन्तु इसके दूसरी ओर अर्थात् भौतिक कक्षा के पहले क्षेत्र में जो कुछ चल रहा है, वह सामान्यतः दृष्टिगोचर नहीं होता और न जानने में आता है। केवल उस क्षेत्र में प्रकृति और शक्ति के परिणाम होते रहते हैं, क्रिया-प्रतिक्रिया सतत चालू रहती है। यह गूढ़ तत्त्व बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस क्रिया-प्रतिक्रिया से वलय-वलय में जो संघर्ष उत्पन्न होता है, उस संघर्ष में दैवी गुणों का ह्रास होते रहना स्वाभाविक होता है। उसको पलटकर अर्थात् अशुद्ध गुण कणों का ह्रास करके दैवी गुणकणों की वृद्धि करना विशिष्ट विधि द्वारा ही हो सकता है। यहाँ विचार शक्ति सफल नहीं होती, यह महत्त्व की बात है। इस विधि का आधार आचार-धर्म पर रहता है अर्थात् विशिष्ट प्रकार से किये जाने वाले स्नान-आचमन आदि शुद्धि-कर्म दैवी गुणों के उदय के लिये, पवित्रता के लिये अर्थात् शुचिकरणार्थ साधक होते हैं। इस शुद्धि या पवित्रता का उद्देश्य यह होता है कि अपने गतिशील वलय, जो इतर राजस-तामस अर्थात् अपवित्र प्राणी-पदार्थों के सम्पर्क से मिश्रित होते रहते हैं, वे शुद्ध होकर दीप्तिमान् हो उठें, यही नहीं बल्कि शुद्ध होने के बाद वे अधिक पुण्य-गुणों से युक्त हों। शुचित्व (पवित्रता) का रहस्य निश्चयपूर्वक इसी में निहित है।

सारांश यह है कि विरोधी गुणों का, शक्तियों का वलय रूप में एकत्र होना दोनों के लिये घातक होता है, क्योंकि इसमें संघर्ष पैदा होता है। यह दोनों ही

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वलयान्तर्गत होने वाले संघर्ष व्यक्ति की दैवी और परमार्थिक उन्नति में स्वभावतः बाधक होते हैं। यह विरोध या संघर्ष यद्यपि हमारे मन में आभासित नहीं होता, तथापि संपर्क द्वारा सूक्ष्मतया घटित होता ही है। यह दैवी सत्य है। आधुनिक विज्ञान ने भी यह सिद्धान्त प्रस्थापित किया है कि जिसे हम प्रकट रूप में नहीं जानते, वह संज्ञा-प्रवाह अन्तर्मन को ज्ञात होता है और उसका दृश्य-परिणाम किसी न किसी रूप में दीख पड़ता है। अन्तर्मन की यह ज्ञान-कक्षा निरोध या संघर्ष से युक्त होने के कारण किसी-न-किसी प्रकार ज्ञात या अज्ञातरूप में उसका विस्फोट विकृतरूप में होता है। आधि अर्थात् मानसिक रोग और व्याधि अर्थात् शारीरिक रोग उसी विकृति के रूप हैं। उदाहरणार्थ आजकल के अपस्मार आदि रोग इसी कोटि में आते हैं। इसके विपरीत अन्तर्मन में स्थित ज्ञान अनुकूल और व्यक्तित्व के लिये अनुरूप होने पर उसका परिणाम आरोग्य, उल्लास आदि रूप में दिखलायी देता है। इसका अभिप्राय यह है कि जो बात हमारी जानकारी में नहीं है, वह है ही नहीं-ऐसा नहीं समझना चाहिये। वह अन्त में कार्यरत होता है तथा फलानुमेयः प्रारम्भः' इस नीति के अनुसार परिणाम देखकर उसके मूल का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस दृष्टि और क्रम से अन्तर्मन (SUBCONCIOUS MIND) के आगे जानने पर वहाँ कार्य करता हुआ संज्ञा-प्रवाह दिव्य दृष्टि से दिखायी पड़ता है। इस प्रवाह के समुदाय से चराचर पदार्थों के विशेषतः व्यक्ति के आधिदैविक वलय भरे रहते हैं। इन वलयों में पूर्वजन्म के शक्तिशाली संस्कार, जन्मजात गुणधर्म आदि की लहरें आन्दोलित होती रहती हैं अर्थात् तत्तत् गुण-कणों के स्पन्दन से वे वलय परिपूर्ण होते हैं। जिस प्रकार प्रकृति में पानी का प्रवाह नीचे की ओर बहता है, उसी प्रकार उन्नति भी प्रयत्नपूर्वक साध्य हो सकती है। पूर्वजन्मों के बलिष्ठ संस्कारों के द्वारा जन्म से ही उन्नति की ओर प्रवृत्ति हो तो इसे अपवाद ही समझना चाहिये। दूसरी बात यह है कि दृश्य-अदृश्य जगत् में तामस शक्ति का प्रभाव और प्राबल्य प्रकृतितः देखने में आता है। उसके द्वारा व्यक्ति-वलय की लहरें उसका आहार बनकर दूषित हो जाने के कारण बहुत ही हानिप्रद हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें दूषित होने देना अर्थात् मुमुक्षु व्यक्ति उसमें अलिप्त रहकर सम्भाव्य अवनति को टाल दे, यही शुचि अर्थात् पवित्र करने का मूल कारण है। उदाहरणतः नीरोग मनुष्य के सहवास से रोगी मनुष्य के अच्छा होने की बात सुनने में नहीं आती, इसके विपरीत रोग के कीटाणुओं के प्रभाव से रोगी मनुष्य साथ के रहने वाला नीरोग मनुष्य भी बीमार हो जाता है। लोहे को अपने स्पर्श से सुवर्ण बना देने की पारस-पत्थर की शक्ति अथवा नाली के जल को अपने में मिला कर शुद्ध कर देने की गङ्गाजी की शक्ति को अपवाद स्वरूप ही समझना चाहिये। इसके अतिरिक्त नाली में मिलकर स्वच्छ स्रोत के जल को गंदा होने का दृश्य सर्वत्र देखने आता है। इसका स्पष्ट कारण है, और वह है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निसर्गतः तामस गुण का प्राबल्य। जगत् की उत्पत्ति भी मूलतः अज्ञान-वश हुई है, यह वेदान्तशास्त्र का सिद्धान्त है। अज्ञान तमोगुण का लक्षण है। अतएव यह स्वभावतः तमोगुण का ही प्रभाव है। सबसे प्रथम उत्पन्न और सबका आधार आकाश भी तो तमोरूप है। तथापि अपने अङ्ग के तेज से आकाश के भीतर के अन्धकार को दूर करने का कार्य सूर्य-तारागण आदि अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार करते ही हैं। इसी प्रकार तमोगुण के प्रभाव से दूर रहकर, अपनी शक्ति सामर्थ्य को बढ़ाकर उन्नत होना मानव का कर्तव्य है। इस प्रकार के अनिष्ट प्रभाव को नष्ट करने का प्रबल उपाय शुचि अर्थात् पवित्रता की क्रिया है। इस प्रकार इस उपाय से शुद्ध होने के बाद अपने वलय में पुण्य प्रभाव की वृद्धि अर्थात् पवित्री-करण होता है। अतएव ये दोनों प्रक्रियाएँ करने से उन्नयन का अथवा उपासना का हेतु सफल होता है। सारांश यह है कि भौतिक आरोग्य की दृष्टि से स्वास्थ्य शास्त्र (HYGIENE) का जो महत्त्व है, वैसा ही दैवी स्वच्छता के अथवा आरोग्यता के शास्त्र के अनुसार शुचिता या पवित्रता का महत्त्व है। इसको (DIVINE-HYGIENE) के नाम से पुकारना ठीक होगा।

तात्पर्य यह है कि स्वच्छता (भौतिक) और शुचित्व (दैविक) दोनों घटकों (FACTORS) के मिलाने से 'शुद्धि' तत्त्व पूर्ण होता है।

इस दृष्टि से वेष में रेशमी, ऊनी, टसर अथवा सूती धुले हुए (शुद्ध जल से धोये हुए) शुद्ध माने गये हैं। इनमें शुद्धि के अतिरिक्त पवित्रता अर्थात् पुण्यकारिता का ही गुणधर्म स्वभावतः निहित है। अशुद्धि की क्षीणता के आगे शुद्धता की दृढ़ता को पवित्रीकरण कहते हैं। धर्मशास्त्रों के द्वारा ये दोनों ही प्रशंसित गुण जल वस्त्रादि में रहते हैं। इनके द्वारा हमारे चक्राकार मिश्रित वलय शुद्ध और दीप्तिमान होते हैं। इन वलयों में सत्त्वगुण के परमाणु और सात्त्विक शक्ति संक्रमित होकर उनको दिव्य और तेजस्वी बनाते हैं। यह दिव्यता और तेजस्विता उपासना के लिये नितान्त आवश्यक होती है।

सूती वस्त्र का नित्य प्रति धोना आवश्यक है तथा उनको अन्य संस्कारों से अलिप्त शुचि (शुद्ध) तथा पवित्र होना चाहिये। रेशमी और ऊनी वस्त्र भी स्वच्छता की दृष्टि से खूब (उत्तम) धुले हुए होने चाहिएँ। इन तीनों प्रकार के वस्त्रों में मानसिक और दैविक शक्ति की उन्नति के लिये आवश्यक तेज निहित रहता है। सूक्ष्म प्रज्ञा होने पर जो जानना चाहो, वह जान सकते हो। सूक्ष्म प्रज्ञा या दिव्य दृष्टि यदि एक बार प्राप्त हो जाय तो भी ऐसे वस्त्रों में रहने वाले विद्युत् तेज (Electricity) के द्वारा इनमें स्थित सुप्त-शक्ति का अनुमान हो सकता है। इस प्रकार की सुप्त-शक्ति कृष्णमृगचर्म, दर्भ, पञ्चपल्लव, पञ्चगव्य, गङ्गोदक आदि पवित्र वस्तुओं में पर्याप्त परिणाम में रहती है। अतएव शुद्धि के लिये या पवित्रता

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

की प्राप्ति के लिये प्रसङ्गानुसार इन सबका उपयोग करना उपासना की दृष्टि से अत्यावश्यक होता है।

सारांश यह है कि ऐसे स्वच्छ और शुद्ध अर्थात् शुचि और पवित्र वेष, जो का वेद सम्मत है तथा वैदिक संस्कृति के द्वारा अनुमोदित है, उनका परिधान करके उपासक को संध्या-पूजन, पाठ, जप आदि अङ्गोपाङ्ग से युक्त उपासना करने से वह उपासना शास्त्रानुकूल शुद्धि पर अवलम्बित होने के कारण शीघ्र ही सफलता प्रदान करती है। अतएव विधियुक्त उपासना को आचरण में लाने वाले साधक की उन्नति स्वभावतः बहुमुखी और सर्वाङ्गीण होती तथा वह इसके द्वारा आत्मोद्धार करके अन्य लोगों के लिये निश्चित मार्गदर्शक बन सकता है।

उपासना के लिये शुद्धि व पवित्रता की बड़ी महत्ता है; परन्तु शुद्धि व पवित्रता किस किस रूप में समझनी चाहिये, वह संक्षेप में इस प्रकार है—

१ जो ईमानदारी, सत्य तथा परहित युक्त कमाई का हो, वह रुपया पैसा (द्रव्य) शुद्ध, पवित्र है।

२ जिसमें सम्मान, सत्य तथा हित भरा हो-ऐसा वर्ताव शुद्ध, पवित्र है।

३ जिसमें निज-वासना का त्याग एवं प्रेमास्पद को सुखी बनाने की एकान्त इच्छा और क्रिया सहज हो-वह 'प्रेम' शुद्ध, पवित्र है।

४ जिस सेवा के बदले में निष्काम सेवा करने की वृत्ति उत्तरोत्तर बढ़ती हो-वह सेवा शुद्ध, पवित्र है।

५ जिस व्यापार में हिंसा, परअहित, चोरी आदि न होकर केवल आजीविका-निर्वाहार्थ सत्यता हो-वह व्यापार शुद्ध, पवित्र है।

६ जिसमें घबराहट पैदा करने वाले शब्द न हों, जो सत्य हो एवं हितकर हो, वह वाणी शुद्ध, पवित्र है।

७ जिसमें अहिंसा, सेवा, गुरु, माता-पितादि पूज्यजनों का पूजन-मान, ब्रह्मचर्य, निरभिमानता युक्त विनय हो तथा जो शुद्ध खान-पान से पोषित तथा भजन परायण हो-वह शरीर शुद्ध, पवित्र है।

८ जिसमें प्रसन्नता, निर्मलता दया, सतत ईश्वर-चिन्तन और शुद्ध भाव-विचार भरे हों और जो कभी व्यर्थ-अनर्थ की बात न सोचता हो, वह मन शुद्ध, पवित्र है।

९ जिसमें मद्य, मांस, अण्डे, तामसी वस्तु, जूठन आदि न हो और जो खिलाने-पिलाने को सुखी बनाकर किया जाता हो तथा जो चोरी की कमाई का न हो-वह खान-पान शुद्ध, पवित्र है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१० जिसमें राजस, तामस शृंगार न हो, हिंसा न हो, चोरी की कमाई का न हो, अपने तथा दूसरे के मन में विकार पैदा न करके शुद्ध भाव पैदा करने वाला हो, स्वच्छ, सादा तथा पवित्र हो, अच्छी तरह शुद्ध साधनों द्वारा भली प्रकार से धोया-साफ किया हुआ हो, (चर्बी आदि अपवित्र पदार्थों द्वारा निर्मित साबुन आदि से नहीं)-वह वस्त्र-परिधान शुद्ध, पवित्र है।

११ जिससे मन में सेवा-भाव, त्याग-भाव, सादगी, इन्द्रिय-संयम, दैवी-सम्पदा के गुण, भगवद्भक्ति, भोग-विरक्ति आदि उत्पन्न होते हों-वह सत्संग तथा वह स्वाध्याय शुद्ध, पवित्र है।

१२ किसी के घर कुटम्ब में जन्म, मरण आशौच हुआ हो तो दस दिन पश्चात् शुद्ध स्नान करके नूतन यज्ञोपवीत धारण कर लिया हो, स्त्री मासिक धर्म से होने पर तीन दिन पश्चात् शुद्ध स्नान कर चुकी हो, किसी मृतक की क्रिया में शामिल होने पर शुद्ध स्नान कर नूतन यज्ञोपवीत धारण कर लिया हो, किसी अस्पर्श्य मनुष्य या वस्तु से स्पर्श होने पर शुद्ध स्नान कर नूतन यज्ञोपवीत धारण कर लिया हो, वह शुद्ध, पवित्र है।

भगवान् विष्णु तथा उनके अवतार, प्रतिमाओं की पूजा, पाठ और जप करने तथा कराने वालों को, ध्यान देने व सावधानी रखने योग्य बातें

सोपान १८

मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहोऽथ वामनः।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्किश्च ते दश ॥

'मत्स्य, कुर्म, वराह, नृसिंह, वामन, राम, परशुराम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि ये दश विष्णु के प्रमुख अवतार है।'

इसके पश्चात् चौबीस अवतारों के नामों की गणना की जाती हैं। किन्तु भगवान् कृष्ण ने गीता के दसवें अध्याय में उदाहरण मात्र में ७० विभूतियाँ बतलाते हुए इसी अध्याय के अन्त में कहा है—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परंतप।
एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ।।
(गीता 10।40)

'परंतप ! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है, यह तो मैंने अपनी विभूतियों का विस्तार तेरे लिये एक देश से संक्षेप में कहा है।'

भगवान् विष्णु के अनन्त नाम तथा स्वरूप हैं। इसलिये विष्णु के किसी भी नाम व स्वरूप की पूजा-भक्ति की जावे, वह सब भगवान् विष्णु की ही पूजा-भक्ति है। उन सब के लिये एक ही नियम व विधियाँ हैं।

देवता भी तीन प्रकार के हैं। सात्विक, राजस और तामस। इसी प्रकार से उपासक भी तीन प्रकार के ही होते हैं। भगवान् विष्णु परम सात्विक देवता हैं, इसलिये उनका उपासक भी परम सात्विक वृत्ति होना चाहिये। उपासक जिस देवता की उपासना करे, वैसी ही अपनी वृत्ति बना लेवे तब ही उपासना द्वारा कार्य-सिद्धि होती हैं।

सर्व प्रथम उपासक का शरीर स्वस्थ व पवित्र हो। मन एकाग्र हो, शुद्ध भावना युक्त हो। पूजार्थी के वस्त्र शुद्ध साफ व पवित्र हों। पूजन पात्र, आसन, माला, गौमुखी आदि भी शुद्ध, साफ, पवित्र हों, फटे-पुराने, टूटे-फूटे, गन्दे नहीं होने चाहियें।

भगवान् विष्णु, राम, कृष्ण, शालग्राम, बालमुकुन्द आदि विष्णु स्वरूप प्रतिमाओं की बृहत्पूजा, विशिष्ट पूजाओं में स्वस्तिवाचन, पुण्याहवाचन, गणपति पूजन, कलश-स्थापन, नवग्रह, पंचलोकपाल, दशदिक्पाल, षोड़शमातृका तथा चतुःषष्टियोगिनी, भगवान् के वाहन गरुड़, हनुमानजी तथा भगवान् श्रीकृष्ण के विग्रह की पूजा करें तो उससे पूर्व श्रीसर्वेश्वरी राधाजी तथा श्रीराधाजी से भी पूर्व उनकी सहचरी ललिता, विशाखा आदि की भी पूजा करना चाहिये। साधारणतः पूजा करें, तब भी भगवान् विष्णु की पूजा में गरुड़जी, श्रीराम की पूजा में श्री हनुमानजी, श्री कृष्ण की पूजा में ललिता, विशाखा की, भगवान् नृसिंह की पूजा में प्रह्लाद की पूजा अवश्य करना चाहिये। उदाहरण में इस प्रकार समझ लें कि जैसे किसी बड़े आदमी से मिलना हो तो, उसके सक्रेट्री, चपरासी, पार्श्ववर्ती उसकी स्त्री, बच्चों को किसी प्रकार से प्रसन्न कर लिया जावे तो, वह सब उस बड़े आदमी से मिलने में व कार्य सफलता में सहायता कर देते हैं। वैसे ही उपासना में, कार्य-सिद्धियों में शीघ्रता व सहायता प्राप्त होती है। यदि इनकी पहले प्रसन्नता प्राप्त न हो तो, कई बार जाने पर भी मिलना नहीं हो पाता और कार्य-सिद्धि में भी विघ्न हो जाता है। अतः जिस देवता की उपासना करना हो उसके वाहन,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वारपाल, पार्श्ववर्ती आदि की प्रथम पूजा करने से उपासना, अनुष्ठान निर्विघ्न पूर्ण होते हैं तथा फल-सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। श्रद्धा, भक्तिभाव व अशुद्ध, एकाग्र-बुद्धि, सब के प्रति नमनभाव के अभाव में सब ही प्रकार के पूजा, दान, जप, पठन, यज्ञ-हवनादि निष्फल हो जाते हैं। इन सब बातों का ध्यान रखना चाहिये।

सभी प्रकार के देव-पूजन, आराधनादि में सर्वप्रथम गणेशजी तत्पश्चात् वाहन, द्वारपालादि का पूजन करना चाहिये। गणेशजी की पूजा के बिना तो सभी कार्य निष्फल होते हैं।

देवताओं की पूजा में अर्पण, प्रयोग करने वाले सभी पदार्थ जहाँ तक हो सके, नवीन, ताजा, समय ऋतु-अनुसार ही होने चाहिये। स्वर्ण, रजत, रत्नादि द्वारा निर्मित आभूषण व अन्य धातु निर्मित सिंहासन, छत्र, चँवर, पूजन पात्रादि जो मार्जन (माँजने) से शुद्ध, पवित्र, चमत्कृत हो सकते हैं, उनको शुद्ध, पवित्र, चमत्कृत करके काम में प्रयोग करना चाहिये। इन पदार्थों के अतिरिक्त कोई पदार्थ, वस्तु सड़ी, गली, पुरानी, विकृत, टूटी-फूटी या छोटी जो काम में ठीक जंचने वाली न हो, जिसका प्रचलन न हो, अच्छे-भले उत्तम मनुष्यों के उपयुक्त न हो, पूजार्थी (जो भगवान् के अर्पण करने वाला हो) जिस वस्तु, पदार्थ को स्वयं के प्रयोग करने योग्य न समझता हो, बेकार समझता हो, ऐसे कोई भी पदार्थ, द्रव्य, वस्तु, वस्त्र, आभूषण, बर्तन, नैवेद्य, पत्र, पुष्प, फल, इत्र अपने शृङ्गार में प्रयोग किये हुए पदार्थ सामग्री कभी भी देव-पूजा के काम में नहीं लेवें तथा देवता के भेंट (अर्पण) न करें।

जो वस्तु पदार्थ अपवित्र स्थान में पैदा उत्पन्न) हुए हो, किसी अपवित्र वस्तु से स्पर्श हो गये हों, किसी अन्य दूसरे के बांटे (हिस्से) की हों, किसी से जबरन या छल-छिद्र, चोरी आदि के द्वारा प्राप्त किये हुए हों; ऐसी कोई भी वस्तु, पदार्थ देवताओं को भेंट (अर्पण) नहीं करना चाहिये।

देवी-देवताओं के अर्पण (भेंट) करने वाले पदार्थ (वस्तु) शुद्ध, पवित्र अपने शुद्ध परिश्रम की कमाई के द्रव्य (पैसे) से खरीदे हुए, बनाये हुए लाये हुए हों, अपने हक, बाँटे (हिस्से) के हों। अपने निकटस्थ परिजन, माता-पिता, गुरु, पति, अफसर, मालिक, मित्र, भाई से तथा इनके ही समान अन्य किसी से प्रेम, प्यार पूर्वक प्राप्त किये गये हों। पुत्रवधू, शिष्य, स्त्री (धर्मपत्नी) द्वारा भेंट में प्राप्त किये हुए हों, ऐसे पदार्थ देवी-देवताओं के भेंट (अर्पण) करने व ऐसे पवित्र कार्यों में प्रयोग करने योग्य हैं।

नित्यप्रति पूजा करें तो श्रद्धा-भक्ति सहित, जहाँ तक हो सके अपनी शक्ति के अनुसार भिन्न-भिन्न समय द्रव्य, भेंट, पदार्थ ऋतु अनुसार पूजा में प्रयोग करने

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चाहियें। अपनी सुलभता व सामर्थ्य अनुसार अधिकाधिक समय पूजा में लगाना चाहिये। अपनी सुलभता व सामर्थ्य के अनुसार अधिकाधिक पूजा के दिन व समय, सर्वदा ही नियत करना चाहिये। इसी प्रकार से द्रव्य (धन) भी जहाँ तक हो सके, सुलभतापूर्वक अधिक से अधिक ही खर्च करना चाहिये। नित्यप्रति या सप्ताह में एक दिन अथवा महीने में एक दिन, यह भी न हो सके तो वर्ष में एक दिन कम से कम चौबीस घण्टे का समय तो शुद्ध एकाग्र मन से रहकर और इसी प्रकार जहाँ तक हो सके अपनी अपनी कमाई से एक सप्ताह की आमदनी या प्रत्येक महीने के एक दिन के हिसाब से प्रति वर्ष तीस दिन की आमदनी जोड़कर वह तो कम से कम वर्ष में एक बार पूजा कार्य में लगाना ही चाहिये (यह तो कम से कम मनुष्य शरीरधारी का कर रूप में देवी-देवताओं को चुकाना कर्त्तव्य ही है)। इस बात का ध्यान रखकर अवश्य खर्च करें। यदि ऐसा नहीं करते हैं तो, किसी रूप में वह दण्ड सहित अवश्य खर्च हो जाता है।

शास्त्रानुसार नित्य प्रति की होने वाली कमाई में दस प्रतिशत भाग देवताओं की पूजा, धर्म-कार्य, परमार्थ कार्यों में लगाते रहना गृहस्थी के लिए बतलाया गया है। किसी भी प्रकार इस आज्ञा पालन में इतना खर्च तो करना ही चाहिये। यदि मनुष्य अपनी पूरी (समस्त) कमाई गृहस्थ व अपने ही कार्यों में लगाता है और देवी-देवताओं की पूजा कार्यों, धर्म कार्यों, परमार्थ कार्यों में नहीं लगाता है तो पापी की संज्ञा में माना जाता है और इसी जन्म में या अगले जन्म में महान् दरिद्री, भिक्षुक होकर दुःखी होता है। इससे भी अधिक और द्रव्य परमार्थ, देवी-देवता के पूजन, धर्म कार्यों में मनुष्य प्रसन्नता से खर्च करता है तो वह दस गुना या इससे भी कई गुना अधिक होकर इस जन्म में या पुनर्जन्म में उसको अवश्य प्राप्त होता है।

उदाहरणार्थ—एक ही प्रकार का कार्य (पेशा) करने वाले, एक ही स्तर के शिक्षित वर्ग को ध्यान से देखें। उनको नित्य होने वाली या मासिक, वार्षिक आमदनी समान नहीं है। यद्यपि नियमानुसार शिक्षा या बुद्धिबल के अनुसार आमदनी उसी प्रकार से एकसी (समानस्तर) होना चाहिये। कई एक तो ऐसे भी उदाहरण देखे जा सकते हैं कि उच्च शिक्षा प्राप्त अधिक परिश्रमी की आमदनी कम और कम शिक्षा प्राप्त और कम परिश्रम करने वाले की आमदनी अधिक है। यह अपने पूर्व जन्म के उपर्युक्त बतलाये हुए का परिणाम नहीं तो क्या है? आजकल के समयानुसार यह कहा जा सकता है कि अमुक की सिफारिस (रिकमण्डेशन) अच्छी थी, अमुक अधिक परिश्रमी है, अमुक चापलूस है, चालाक है, बातूनी है, तो क्या इन बातों का आश्रय प्रत्येक मनुष्य नहीं ले सकता? जब ये बातें सबके मस्तिष्क में भी हैं तो, सब ही मनुष्य इसी रास्ते का अनुसरण क्यों नहीं करते? ये बातें भी पूर्वजन्म के सञ्चित उत्तम कार्यों द्वारा या इस

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जन्म के पूर्व कर्त्तव्यों द्वारा ही बुद्धिरूपी धरोहर के रूप में सञ्चित होकर रखी हैं, वही काम में ले सकता है। जिसके पास कुछ न होगा, वह क्या काम में लेगा ? इसके अतिरिक्त जिसके पास इस प्रकार की पूर्व सञ्चित ऐसी उत्तम कर्त्तव्यरूपी कमाई का भाग नहीं है और वह इस प्रकार के दूसरे मनुष्यों की नकल करता है तो अपनी रखी हुई सञ्चित कर्म (कमाई) के अनुसार ही सफलता प्राप्त होगी, इससे अधिक कुछ नहीं मिलेगा। चाहे कोई इस प्रकार के प्रयासों द्वारा परिश्रम समय तथा द्रव्य खर्च कर लें; किन्तु असफलता ही हाथ लगेगी, कोई लाभ नहीं मिल सकेगा। इस प्रकार के भी अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

जो मनुष्य भली प्रकार से रत्न, स्वर्ण, रजत (चाँदी), द्रव्य (रकम), वस्त्राभूषणों से भरा-पूरा रहते हुए भी कृपणता (कंजूसी) करके देवी-देवताओं की पूजा-आराधना में बहुत ही कम खर्च करता है। अधिक समय खाली मिलने पर भी देवाराधना में समय व मन नहीं लगाता, समय व द्रव्य लगाने में लापरवाही करता है तो, काम्यकर्म (अभीष्ट कार्य) सिद्ध नहीं होते हैं। उपर्युक्त कार्य सप्रेम व उदारतापूर्वक ही करना चाहिये। इसी से सफलता प्राप्त होती है।

देवी-देवता केवल श्रद्धा, भक्ति, नमन तथा सेवाभाव को ही विशेष देखते हैं। वे केवल जल, पुष्प, पत्रादि पूजा सामग्रियों द्वारा पूजा-भेंट अर्पण करने से व श्रद्धा, भक्ति, नमन, सेवा, स्तवन करने से ही पूजार्थी पर प्रसन्न होते देर नहीं करते। भगवान् तो परम पिता हैं, वे तो अपनी दया-स्नेह दृष्टि सर्वदा ही प्राणियों पर बनाये हुए हैं। अनेक अपराध, भूल, त्रुटि गलतियों पर अधिक ध्यान नहीं देते। यदि कोई उनका श्रद्धा, भक्ति, नमन, सेवा स्तवन करता है तो, संसार में ऐसे क्या कोई पदार्थ, पद आदि हैं, जिनको वे प्रदान नहीं कर सकें; किन्तु वे सब प्रकार से भक्त पूजक की भावना अवश्य देखते हैं। उनकी प्रसन्नता के लिए जैसा ऊपर लिखा गया है, कम से कम इतना तो अवश्य अपना कर्त्तव्य ही है। यदि हम उस परम पिता परमेश्वर को अपना परम पिता मानते हैं और उसके प्रति अपना कर्त्तव्य पूर्ण किये बिना ही अपना अभीष्ट पूर्ण कराने की इच्छा करें तो, उस परम पिता के सामते अपनी लापरवाही, अकृतज्ञता ही प्रतीत होगी। निष्काम भाव से परमपिता परमेश्वर की सेवा, पूजा, अर्चना, स्तवन करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। यदि कोई ऐसा करता है तो श्रीभगवान् सब ही कार्यों में सफलता एवं आशा से अधिक फल स्वतः ही प्रदान करते हैं। हम अपने सत्कर्म कर्त्तव्यों के प्रति स्वयं ही भूले हुए हैं। इस संसार रूपी मायामय बुद्धि में ढके हुए कारणों से अनेक पापों का संचय कर रहे हैं और अपने पूर्वजन्म संचित अनेक पापों का बोझा जो साथ लाये हैं, उसको भी भार रूप में ढो रहे हैं। इस समय के पापरूपी रास्तों में व पूर्व जन्म संचित कर्मरूपी गठरी के बोझा सहित चलकर, अपनी शुभ आवश्यकताओं की पूर्ति की मञ्जिल (रास्ता) तय कर पाना एकमृगतृष्णामात्र है।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन पापरूपी कष्टों से मुक्त होकर अपनी अभीष्ट कामनाओं की सिद्धि लाभ चाहने के लिए ही, मनुष्य इस संसार में पूजा, अर्चना करते हुए देखे जाते हैं। निष्काम भाव से भगवान् से प्रेम करने वाले पुजारी कोई विरले ही मनुष्य खोज करने पर भी कठिनता से मिल सकेंगे।

भगवान् की पूजा, अर्चना स्तवन करने पर भी अभीष्ट मनोरथ कभी-कभी पूर्ण नहीं होते हैं। इसका मुख्य कारण एक यह भी देखने में आता है कि पूजा-अर्चना नाम मात्र की, अश्रद्धापूर्वक की जाती है और कामना वृहत् रूप में निवेदन की जाती है। जैसे परीक्षा के दिनों में सवा रुपया का प्रसाद व एक पुष्पमाला अर्पण करके कोई विद्यार्थी बिना परिश्रम किये ही परीक्षा में उत्तीर्ण होना चाहे, या इस प्रकार समझें कि कोई चार-पाँच रुपये का प्रसाद व एक बार ही हाथ जोड़कर धनवान् बनने की कामना करे तो, अभीष्ट कामना सिद्धि सन्देहास्पद ही होती है। वास्तव में कर्म, कर्त्तव्य, पूर्ण परिश्रम करने पर और साथ-साथ पूजा-अर्चना करने पर ही भगवान् सिद्धियाँ प्रदान करते हैं। अपने कर्म-कर्त्तव्यों को यथाविधि पूर्ण परिश्रम के साथ करने को भी शास्त्रों में यज्ञ करना तथा भगवान् की सेवा करना कहा गया है। यथाविधि कर्म-कर्त्तव्य करते हुए भी कई बार छोटी सी भूल के कारण कार्य असफल हो जाते हैं, ऐसा न हो जाये, उसके सहारे हेतु ही पूजा, अर्चना, स्तवन आदि श्रद्धा-नमन सहित होना आवश्यक बतलाया है। जैसे भगवान् श्रीराम ने रावण को परास्त करने के लिए सूर्य की आराधना की, भगवान् शिव की स्थापना कर उनकी अर्चना की, भगवती जगदम्बा की अर्चना और सेना शिक्षा विधि अनुसार वानरों की सेना का संघटन कराया, उनको युद्ध-कर्म कौशल में शिक्षित किया, समुद्र पर पुल निर्माण कराया, युद्ध-विधि के अनुसार युद्ध करके ही रावण को सकुटुम्ब मारकर विजयी हुए और सीता को मुक्त कराया।

पूजा, अर्चना, स्तवन करने पर अभीष्ट मनोरथ पूर्ण न होने में एक मुख्य कारण यह भी है कि वर्तमान समय के मनुष्य पूजा, अर्चना स्तवनादि स्वल्परूप से, अशुद्धरूप से, अविश्वास पूर्वक बिना मन लगाये लापरवाही से करते हैं। जिससे शरीर को न कोई परिश्रम ही होता है. न कोई द्रव्य (धन) ही देवी-देवता को उत्तम रूप से अर्पण किया जाता है। यह एक ऐसी बात हो जाती है कि जैसे कोई मनुष्य अपनी अभीष्ट वस्तु लाने को बाजार में जाये या कोई कार्य करने के लिए किसी के यहां जावे और थोड़ा-सा मूल्य देकर या थोड़ा काम करके झूठा अधिक परिश्रम दिखाकर, दूकानदार या मालिक से अधिक परिश्रम दिखाकर, दूकानदार या मालिक से अधिक मूल्य की अभीष्ट वस्तु प्राप्त कर ले। वर्तमान समय में प्रायः मनुष्यों की मनोवृत्ति इस प्रकार की हो गई है कि मनुष्य के साथ कार्य करें या देवी-देवता की पूजा, अर्चना करें, सर्वाधिक लाभ प्राप्त कर लेने की

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपनी भावना को दृष्टि में रखकर की जाती है। यह एक प्रकार से धोखा ही करना है। इस प्रकार के कार्यों द्वारा पापरूप में बोझा ही चढ़ता है। इसका किसी-न-किसी रूप में फल अवश्य भोगना पड़ता है और यदि देवी-देवता की दृष्टि पहले ही इस प्रकार की दुष्ट बुद्धि-युक्त भावना पर पड़ गई तो, फल-सिद्धि तो क्या प्रदान होगी, अपने को ये इसका कोई दण्ड नहीं देते, यही उनका देवता होना है। देवी-देवता सर्वदा ही सबका मङ्गल एवं कल्याण करते हैं। अतः इस प्रकार की बातों पर सर्वदा ध्यान देकर ही शुद्ध निर्मल भावना द्वारा पूजा, अर्चना, स्तवन करना चाहिये। वह ही शुद्ध, निर्मल, अभीष्ट कामना शुभ फलप्रद तथा आनन्ददायक हो सकती है।

अपनी अभीष्ट कामनाओं की सिद्धि प्राप्त करने हेतु किसी अन्य महानुभाव सज्जन विद्वान् महात्मा द्वारा पूजा, अर्चना, स्तवन कराना भी इस समय में बहुत ही सन्देहास्पद हो गया है। कहा भी है—

व्याजेधर्मैः चरिष्यन्ति धर्मवैतंसिका नराः।
सत्यं सक्षेप्त्यते लोके नरैः पण्डितमानिभि ।।

(महाभारत-वनपर्व अ. १९०)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी जातियों के लोग कपटपूर्वक धर्म का आचरण करेंगे और धर्म का जाल बिछाकर दूसरे लोगों को ठगने लगेंगे। पण्डित कहलाने वाले लोग भी सत्य का परित्याग कर देंगे।'

किसी पुरोहित, पण्डित, विद्वान् द्वारा भी ऐसे कार्य कराना ऐसा ही हो गया है कि जैसे किसी प्रतिनिधि, मुनीम द्वारा, उसी के विश्वास पर उसके द्वारा द्वारा व्यापार करना, दूकान चलाना, फिर बिना सम्हाले, देखे ही, उस व्यापार का लाभ प्राप्त कर लेना।

यदि मुनीम, प्रतिनिधि बुद्धिमान होते हुए स्वामिभक्त व अपनी कठिन परिश्रम की कमाई खानेवाला ईमानदार हुआ तो मालिक को लाभ मिल जायेगा। नहीं तो जो हालात ऐसे कार्यों में रात-दिन आपकी दृष्टि में आ रहे हैं, वही हालात पूजा, अर्चा, स्तवनादि में भी सामने आ जाते हैं। दोष सब देवी-देवताओं पर लगाया जाता है। इस प्रकार की बातों से ही नास्तिकता व देवी-देवताओं, विद्वानों अश्रद्धा भाव बढ़ रहा है।

विश्वासपात्र, योग्य, सज्जन विद्वान् पण्डित अपना शारीरिक पूर्ण परिश्रम कर, विधिवत्, यजमान की पस्थिति में भी अनुपूर्णरूप से पूजा, अर्चना, स्तवनादि कर कामना सिद्धि प्राप्त कराने वाले, इस समय विरले ही मिल पाते हैं। कार्य-सिद्धि चाहने वाले के मन में जैसी उग्र भावना उठती है, वैसी ही भावना, जब

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तक प्रतिनिधित्व करने वाले पुरोहित, गुरु तथा पण्डित में न उठे, तब तक लाभ प्रदान करने वाली फल सिद्धि कैसे प्राप्त हो सकती है ? यदि किसी को कोई ऐसा करने वाला मिलता है तो, लाभ भी अवश्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार की एक बात यजमान के भी ध्यान देने की है। आजकल मँहगाई जिस प्रकार से बढ़ गयी है, उसी प्रकार से विद्वान् पण्डित को भेंट (दक्षिणा) भी मिलना आवश्यक है। कई मौकों (स्थानों) पर देखने में आता है कि जो आज से सौ वर्ष पूर्व बहुत सस्ताई का समय था, तब जन्म कुण्डली की बनाई की भेंट सवा रुपया, देवी-देवता की भेंट सवा रुपया, विद्वान्, पण्डित की भेंट सवा रुपया दी जाती थी, वही आज भी दी जाती है। इसका प्रतिफल यह हो रहा है कि बहुत विद्वान् घरानों ने अपनी सन्तानों को यह विद्याएँ पढ़ाना ही छोड़ दिया और योग्य विद्वानों का अभाव होता जा रहा है। कुछ योग्य विद्वान् तैयार भी होते हैं तो, आर्थिक लाभ कम प्राप्त होने के कारण, लोग यह कार्य (पेशा) करना पसन्द नहीं करते। अन्य दूसरे कार्य (पेशा) द्वारा अपना जीवन-यापन करते हैं।

पुरोहित, विद्वान् को यथेष्ट दक्षिणा द्वारा सन्तुष्टि प्राप्त होने पर ही, अनुष्ठान द्वारा अभीष्ट सिद्धि लाभ की उग्र भावना पूजा, अर्चनादि करने वाले के मन में उठेगी, उसी मनोमय भाव से पूजा, अर्चना होगी। उसी भाव के अनुसार मनोकामना भी सिद्ध होगी। इसके भी शास्त्रों में अनेक प्रमाण मिलते हैं।

किसी भी अभीष्ट कामना हेतु पूजा, अर्चना, स्तवनादि करना हो तो, वर्तमान समयानुसार स्वयं शारीरिक परिश्रम द्वारा या योग्य विद्वान् पण्डित जो पूजा के विधि-विधान को भली प्रकार से जानता हो, उत्तम सदाचारी हो, उसे साथ लेकर ही करना चाहिये और जहाँ तक हो सके ध्यान देकर सुलभ यथेष्ट अपनी शुद्ध (पवित्र) कमाई का द्रव्य इस कार्य में प्रयुक्त करना चाहिये। देवी-देवता के सामने पूर्ण रूप से प्रेम-मनोभाव व आर्तभाव से पूजोपचार समर्पण करें। तब अभीष्ट कार्य सिद्धि होने में सफलता अवश्य मिलेगी।

आजकल लोग कह देते हैं—देवी-देवताओं में क्या रखा है ? पूजा आराधनादि से क्या होता है ? इन उपर्युक्त प्रकार के अनेक दोषों के कारण अभीष्ट कार्यों में असफलताएँ होने लग गयी हैं, इस प्रकार के दोषयुक्त अनुष्ठानों में सिद्धियाँ कैसे प्राप्त हो सकती है ? इस प्रकार के दोषों के फल स्वरूप कोई अनिष्ट नहीं हों, यही देवी-देवताओं का अनुग्रह समझना चाहिये। सभी प्रकार की कामनाओं की सिद्धि हेतु पवित्रता, पूर्ण विश्वास, नमन, शास्त्रानुसार विधि-विधान का पालन होना परमावश्यक है।

भगवत्-पूजन में कतिपय शास्त्रोक्त नियम

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

प्रातःस्नानादि—सूर्योदय से घंटा पूर्व पूजक (उपासक) को ब्राह्ममुहूर्त में

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शय्या त्यागकर उठ जाना चाहिये। उठते समय भगवत् स्मरण करते हुए उठना चाहिये, फिर हाथ-मुँह धोकर शौचादि से निवृत्त होकर हस्तपादादि शुद्धि पूर्वक दन्तधावन करके, आचमन करके, भगवत् स्मरण करते हुए जलमय तीर्थ में या जलाशय में या स्नानघर में जाकर शुद्ध जल से स्नान करें। शुद्ध वस्त्र धारण करें।

शुद्धवस्त्र-धारण-विधि—पूजार्थी दो वस्त्र धारण करें। एक धोती (अधोवस्त्र) एक गमछा (तोलिया), उपवस्त्र। वस्त्रधारण मन्त्र है—

ॐ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुष्टवाय जरष्टिरस्मि।
शतञ्च जीवामि शरदः सुवर्च्चा रायस्पोषमभि संव्ययिष्ये॥

पूजा के अष्टकाल निरूपण

निशान्तः प्रातः पूर्वाह्नो मध्याह्नश्चापराह्णकः।
सायं प्रदोषो नक्तं चेत्यष्टौ कालाः प्रकीर्तिताः॥

निशान्त (सूर्योदय से पूर्व दो घंटा चौबीस मिनट का काल), प्रातः (सूर्योदय उपरान्त दो घंटे चौबीस मिनट तक), पूर्वाह्न (तत्पश्चात् दो घंटे चौबीस मिनट तक), मध्याह्न (तत्पश्चात् चार घंटे अड़तालीस मिनट तक), अपराह्न (तत्पश्चात् सूर्यास्त तक दो घंटे चौबीस मिनट तक), सायाह्न (सूर्यास्त के बाद दो घंटा चौबीस मिनट तक), प्रदोष (तत्पश्चात् दो घंटे चौबीत मिनट तक), निशा (उसके बाद चार घंटे अड़तालीस मिनट तक), इस प्रकार रात-दिन के आठ भागों में अष्ट कालीन पूजा होती है। श्री भगवान् की पूजा प्रतिमा (मूर्ति) में, चित्रपट में या मानसिक रूप में की जाती है। पूजा पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके करना चाहिये।

पुष्प-चयन तथा अर्पण विधि—प्रातः स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करके पुष्प-चयन करना चाहिये। मध्याह्न काल में स्नान करके पुष्प-चयन करना मना है। देवी-देवताओं की पूजा में जिन पुष्पों में गंध न होती हो, वे नहीं चढ़ाने चाहिएं। पहले दिन के लाकर रखे हुए बासी हों, या स्वयं अपने आप टूटकर गिरे हुए हों, ऐसे पुष्प भी नहीं चढ़ाने चाहिएं। पुष्पों को जल डालकर भी न चढ़ावें। लिखा है—

अधोवस्त्रधृतं चैव जलेऽन्तः क्षालितं च यत्।
देवतास्तन्न गृह्णन्ति पुष्पं निर्माल्यतां गतम्॥

(आह्निक)

'धोती में रखा हुआ और जल में डुबोया हुआ पुष्प निर्माल्य हो जाता है। इसलिए देवता उसको ग्रहण नहीं करते हैं।'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् विष्णु की पूजा में तुलसीपत्र-मञ्जरी, बिल्वपत्र; पलासपत्र, आमलकी पत्र, भृङ्गराज पत्र, मालती पुष्प, मल्लिका पुष्प, यूथिका पुष्प अविमुक्तक पुष्प, गुलाब, कनेर (करवीर) पुष्प, कुब्जक, कर्णिकार, चम्पा, तगर, अशोक, तिलक पलास पुष्प, कमल तथा श्रेष्ठ गंध वाले पुष्प प्रशस्त माने गये हैं, ये अवश्य चढ़ाने चाहिये। (गौतमी तन्त्र वृद्ध गौतमस्मृति)

किंकणी, अगस्त्य, धतूर, अमुक्त, वैभतिक, पुन्नाग, जुही, निर्गुण्डी, अड़हुल, कचनार, सेमर, कोविदार, कुरण्टक, कल्पक, अंकोल, गिरिकर्णिका, नील, निम्ब (नीम), मदार (आक), यह पुष्प नहीं चढ़ाने चाहिये। (वृद्धगौतमस्मृति)

पूजा में पत्र, पुष्प, फल जो भी चढ़ावें, उनका मुख नीचे या पूजा करने वाले के सामने रख कर न चढ़ावें। पूजा में चढ़ाते समय पत्र, पुष्प, फल का मुख याने जिस नाका से वह पेड़ पर लगा हुआ होता है, वह देवता की ओर रखकर चढ़ाना चाहिये। विल्व पत्र स्वयं अपने हाथ से टहनी पकड़कर तोड़कर लावें, फिर भगवान् व लक्ष्मी को चढ़ावें, उसका अधिक माहात्म्य है। विल्व पत्र डण्ठल तोड़कर, मकड़ी, जाला, मिट्टी, गर्दा या किसी पक्षी की विष्ठादि, अपवित्र गन्दापन लगा हुआ हो तो, वह जल आदि से शुद्ध पवित्र करके ही चढ़ाना चाहिये।

बिल्लवपत्र, खदिर, खेजड़ा, आमला, तमालपत्र, तुलसीपत्र इनके पत्ते (पत्र) फटे टूटे होने पर भी पूजा में ग्रहण करने योग्य कहे हैं, किन्तु जहाँ तक हो सके ताजा और साबुत ही लेने चाहिएं। तुलसी और विल्वपत्र सर्वदा ही शुद्ध व पूजा में प्रयोग करने योग्य कहे गये हैं। इनका वासी होना भी दोष युक्त नहीं कहा है।

नाक्षतैरर्चयेद्विष्णुं न तुलस्या गणाधिपम्।
न दूर्वया यजेद्दुर्गां बिल्वपत्रैश्च भास्करम्।
दिवाकरं वृन्तहनैर्विल्वपत्रैः समर्चयेत्॥

(आह्निक)

'विष्णु को चावल, गणेशजी को तुलसी, दुर्गा को दूर्वा और सूर्यनारायण को विल्वपत्र नहीं चढ़ावें। किन्तु डण्डी तोड़कर विल्वपत्र सूर्यनारायण को भी चढ़ा सकते हैं।'

शिवे विवर्जयेत् कुन्दमुन्मत्तं च तथा हरौ।
देवीनामर्कमन्दारौ सूर्यस्य तगरं तथा॥

'शिवजी को कुन्द, विष्णु को धतूर, देवी को आक तथा मन्दार और सूर्य को तगर का पुष्प नहीं चढ़ावें।'

तुलसी-मञ्जरीभिर्यः कुर्यात् हरिहरार्चनम्।
न स गर्भगृहं याति मुक्तिभागी न संशयः॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'तुलसी मञ्जरी से जो विष्णु भगवान् की तथा शिवजी की पूजा करता है, उसको फिर गर्भ में वास नहीं करना पड़ता, वह अवश्य मुक्ति प्राप्त करता है।'

तुलसी-चयन-विधि

तुलस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया।
केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने॥
त्वदङ्ग सम्भवैः पत्रैः पूजयामि यथाहरिम्।
तथा कुरु पवित्राङ्गि कलौ मलविनाशिनि॥
चयनोद्भवदुःखं ते यद्देवि हृदि वर्तते।
तत् क्षमस्व जगन्मातस्तुलसि त्वां नमाम्यहम्॥

यह मन्त्र उच्चारण करके श्री तुलसीदेवी को नमस्कार करके दाहिने हाथ से धीरे-धीरे वृन्त के साथ एक-एक पत्र अथवा दिदल के साथ मञ्जरी चयन करके पवित्र पात्र में रखे। कीड़े का खाया हुआ अथवा छिन्न-पत्र ग्रहण न करें। अखण्ड पत्र ही प्रशस्त होता है। इस प्रकार मन्त्र से तुलसी चयन करके विष्णु, राम, कृष्ण आदि की पूजा करने से लक्ष-कोटि गुना फल होता है—

मन्त्रेणानेन यः कुर्याद् गृहीत्वा तुलसीदलम्।
पूजनं वासुदेवस्य लक्षकोटिफलं लभेत्॥

(श्री हरिभक्तिविलास)

संक्रान्ति, द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, रविवार और सन्ध्या के समय तुलसी तोड़ना निषिद्ध है।

विल्वपत्र-चयन-विधि

विल्व की बड़ी महिमा है। सहस्रों कमलों के द्वारा पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, वही फल विल्व पत्र द्वारा पूजन करने से प्राप्त होता है। भगवान् शिव-पार्वती, लक्ष्मी की पूजा में तो विशिष्ट रूप से विल्वपत्र अवश्य ही चढ़ाना चाहिये। विल्वपत्र तोड़ते समय नीचे लिखे मन्त्र का उच्चारण करें—

पुण्यवृक्ष महाभाग मालूर श्रीफल प्रभो।
महेशपूजनार्थाय त्वत्पत्राणि चिनोम्यहम्॥

पत्र तोडने के पश्चात् नीचे लिखा हुआ मन्त्र बोलकर प्रणाम करना चाहिये।

ॐ नमो बिल्वतरवे सदा शंकररूपिणे।
सफलानि ममाङ्गानि कुरुष्व शिवहर्षद॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

पूजार्थ-जल-ग्रहण

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

न नक्तं गृहीतोदकेन दैवकर्म कुर्यात् (विष्णु स्मृति) अर्थात् रात्रिकाल में संगृहीत जल से दैवकर्म न करें। प्रातःकाल स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करके ही पूजा हेतु जल ग्रहण करें। पवित्र गङ्गा, यमुना, राधाकुण्ड आदि तीर्थों के अतिरिक्त जल लेवें तो, यह मन्त्र बोलते हुए जल ग्रहण करें—

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥

पूजा के सब उपकरण, पूजोपचार सामग्री, संग्रह कर सम्हाल कर पूजने के स्थान पर रख लेवें।

आसन पर बैठकर सन्ध्योपासनादि नित्य कर्म कर निवृत्त हों, फिर भगवत् पूजन करें। आसन के विषय में लिखा है—बाँस के आसन से दरिद्रता, पाषाण से व्याधि, पृथ्वी पर बैठने से दुःख, काष्ठ से दौर्भाग्य, तृण से यश हानि, पल्लव से विभ्रम, कुश से रोगनाश, कम्बल से दुःखमोचन, मृगछाला से सिद्धि, रेशम से लक्ष्मी प्राप्ति होती है। नीचे लिखे हुए मन्त्र से जल-सिञ्चन करके आसन शुद्धि करें, तत्पश्चात् उस पर बैठना चाहिये।

आसन-शुद्धि-मन्त्र

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्व च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्॥

शिखा-बन्धन—आसन पर बैठकर गायत्री मन्त्र उच्चारण करते हुए शिखा बाँधें। शिखा न हो तो शिखा स्थान का स्पर्श करें। इसके पश्चात उच्चारण करें—

चिद्रूपिणी महामाये दिव्यतेजः समन्विते।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे॥

तिलक-चन्दनादि-धारण विधि

तिलक करते समय अनामिका अंगुली शान्ति देने वाली, मध्यमा आयुवृद्धि करने वाली, अंगुष्ठ पुष्टि देने वाला, तर्जनी मोक्ष देने वाली कही गयी है, इनके द्वारा तिलक करना चाहिये। किन्तु ध्यान रहे—चन्दन घिसने वाले चकले (पत्थर) पर से लेकर तिलक न करें। किसी पात्र में चन्दनादि घिसे हुए को रखकर उसमें से लेकर तिलक करें। विष्णु, राम, कृष्ण आदि के उपासकों को गोपीचन्दन, राधा-कुण्ड की मृत्तिका, तुलसी की लकड़ी, चन्दन, कुंकुमादि में कर्पूर सुगन्धित द्रव्य (वस्तु) मिलाकर ऊर्ध्वपुण्ड्र (खड़े) तिलक जिस भगवान् के स्वरूप की पूजा करते हों उपासक हों, उन भगवान् का जैसा तिलक होता है, उसी प्रकार का तिलक धारण, करें। तिलक करते समय ॐ केशवाय नमः कहें। तत्पश्चात् मन्त्रोच्चारण करें।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।
आपदं हरते नित्यं लक्ष्मीस्तिष्ठति सर्वदा ।।

सब ही कार्यों में प्रथम गणेशजी का पूजन करने से संसार के सभी विघ्न जड़ मूल से नष्ट हो जाते हैं, सूर्य की पूजा करने से शरीर के रोग दूर हो जाते हैं, तथा भगवान् विष्णु की पूजा करने से बाहर-भीतर की पवित्रता आती है। लिखा है—

गणेशपूजने विघ्नं निर्मलं जगतां भवेत् ।
निव्याधिः सूर्यपूजायां शुचि श्रीविष्णुपूजने ।।
(ब्रह्मवैवर्त पुराण गणपति. ६।१००)

किसी कार्य में प्रथम श्रीगणेशजी की पूजा नहीं करने से कार्य सिद्धि में विघ्न होता है। कार्य सिद्धि हेतु पूजन करते समय पञ्च देवताओं का पूजन करना चाहिये। शास्त्रों में लिखा है—सूर्य, गणेश, देवी, भगवान् शङ्कर, भगवान् विष्णु का पूजन करने से ही कार्यों की सिद्धियाँ प्राप्त होती है—

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम् ।
पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्वकार्मसु पूजयेत् ।।

एक ही देवता की पूजा करना निषेध कहा गया है—

एका मूर्तिर्न पूज्यैव गृहिणा स्वेष्टमिच्छता ।
अनेकमूर्तिसम्पन्नः सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।।

जो व्यक्ति अपनी कामनाओं की सफलता चाहता हो, उसको अनेक देवताओं की पूजा करना चाहिये। इस प्रकार की शास्त्र आज्ञा पालन में श्रीराम का शत्रु पराजय हेतु सूर्य की उपासना करने, राशेश्वरम् शिवलिङ्ग स्थापित कर उनकी अर्चना करने की रामायण में, तथा नवरात्र व्रत व देवी पूजन-स्तवन करने की कथा देवी भागवत में प्रमाण के रूप में देखने को मिलती है।

यदि किसी समय पञ्चदेव सूर्य, गणेश, श्रीदुर्गा, श्रीशंकर और विष्णु की पूजा एक ही समय एक ही स्थान पर करना हो तो इस विषय में लिखा है—

रविर्विनायकश्चण्डी ईशो विष्णुस्तथैव च ।
अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमे तु महद्भयम् ।।

सर्व प्रथम सूर्य की तत्पश्चात् क्रम से श्रीगणपति, श्रीदुर्गा, श्रीशंकर और श्रीविष्णु की पूजा करना चाहिये। यदि व्यतिक्रम से पूजा की जाती है तो, बड़ा भय होता है।

यदि किसी के घर में कभी एक देवता की अनेक मूर्तियों का संग्रह हो तो, पूजा करने वाले को उनकी संख्या उचित प्रकार से रखने के विषय में बतलाया है—

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गृहे लिङ्गद्वयं नार्च्यं गणेशत्रितयं तथा ।
शङ्खद्वयं तथा सूर्यौ नार्च्यौ शक्तित्रयं तथा ।।
द्वे चक्रे द्वारकायाश्च शालग्रामशिलाद्वयम् ।
तेषां तु पूजने नैव ह्युद्वेगं प्राप्नुयाद् गृही ।।

घर में दो शिव-लिङ्ग, दो शङ्खों, दो सूर्य प्रतिमाओं एवं तीन देव-प्रतिमाओं, दो शालग्रामों दो गोमती चक्रों, तीन गणपति प्रतिमाओं एवं तीन देवी प्रतिमाओं की स्थापना, पूजन नहीं करना चाहिये ।

श्रीमद्भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण ने भक्त उद्धव को क्रिया उपदेश देते हुए स्पष्ट आदेश दिया है—

दुर्गां विनायकं व्यासं विष्वक्सेनं गुरून् सुरान् ।
स्वे स्वे स्थाने त्वभिमुखान् पूजयेत् प्रोक्षणादिभिः ।।

(श्रीमद् भागवत ११।२७।२९)

'मेरे पूजन के समय दुर्गादेवी, विनायक, व्यास, विष्वक्सेन, गुरुदेव एवं अन्यान्य देवताओं की पूजा साधक भक्त को करना चाहिये ।'

प्रतिमा (मूर्ति) परिमाण

मन्दिरों में प्रतिमा (मूर्ति) छोटी, बड़ी अनेक परिमाणों की स्थापित होती हैं, किन्तु घरों में यजमान (उपासक) के अंगुष्ट-पर्व से लेकर वितस्ति पर्यन्त अर्थात् बारह अंगुल परिमाण तक के आकार (नाप) की मूर्ति की स्थापना उत्तम होती है । लिखा है—

अंगुष्टपर्वादारभ्य वितस्ति यावदेव तु ।
गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुधैः ।।

(मत्स्यपुराण)

देवताओं का मुख किस दिशा में रखें ?

श्रीगणेशजी आदि देवताओं का मन्दिर घर के ईशान कोण में होना चाहिये और उनकी स्थापना इस प्रकार करनी चाहिये कि उनके मुख पश्चिम की ओर रहें । इसके लिये लिखा है—(१) ऐशान्यां देवमन्दिरम् । (२) देवानां हि मुखं कार्यं पश्चिमायां सदा बुधैः ।। (नारद पुराण)

पूजोपकरण-स्थापन-प्रणाली

१. स्नानीयजल—श्रीभगवान् के दक्षिण ओर रखें ।
२. स्नान-पात्र और आचमन-पात्र-उसके निकट रखें ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३. शङ्ख—अपने सामने भगवान् की ओर मुख करके आधार पर स्थापित करें।
४. घंटा—उसके समीप अपने बायें पार्श्व में रखें।
५. धूप और नैवेद्य अपने बायें पार्श्व में रखें।
६. तुलसी, गन्ध, पुष्प अक्षतादि के पात्र अपने दाहिने पार्श्व में रखें।
७. घृत-दीपक, तुलसी आदि के समीप दाहिनी ओर रखें, किन्तु तैल-दीपक हो तो वाम पार्श्व में स्थापन करें।
८. पूजा के अन्य द्रव्य (सामग्री) अपनी सुविधानुसार पास में रखें।
९. हस्तप्रक्षालन-पात्र-अपने पृष्ठ भाग में रखें।

अनेक प्रकार की पूजा विधियाँ इस पुस्तक के चतुर्थ स्कन्ध में लिखी गई हैं, अपनी सुविधानुसार किसी विधि से पूजा करें।

आरती क्या ? और कैसे करें ?

आरती को 'आरात्रिक' अथवा 'आरार्तिक' और 'नीराजन' कहते हैं। पूजा के अन्त में आरती करते हैं। पूजन में जो त्रुटि रह जाती है, आरती से उसकी पूर्ति मानी जाती है। लिखा है—

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं कृतं पूजनं हरेः।
सर्वं सम्पूर्णतामेति कृते नीराजने शिवे॥

(स्कन्दपुराण)

'पूजन मन्त्रहीन और क्रियाहीन होने पर भी नीराजन (आरती) कर लेने पर उस पूजन में समस्त पूर्णता आ जाती है।' आरती करने का ही नहीं, आरती देखने का भी बड़ा पुण्य प्राप्त होता है—

नीराजनं च यः पश्येद् देवदेवस्य चक्रिणः।
सप्तजन्मनि विप्र स्यादन्ते च परम पदम्॥

(हरिभक्तिविलास)

'जो देव-देव चक्रधारी श्रीभगवान् विष्णु की आरती देखता है, वह सात जन्मों तक ब्राह्मण होकर अन्त में परमपद को प्राप्त होता है।'

धूपं चारात्रिकं पश्येत् कराभ्यां च प्रवन्दते।
कुलकोटिं समुद्धृत्य याति विष्णोः परं पदम्॥

(विष्णुधर्मोत्तर)

'जो भगवान् की धूप और आरती को देखता है और दोनों हाथों से आरती लेता है, वह करोड़ पीढ़ियों का उद्धार करता है और भगवान् विष्णु के परमपद को प्राप्त होता है।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आरती करते समय प्रथम मूल मन्त्र (जिस मन्त्र से जिस देवता की पूजन की हो उस मन्त्र) के द्वारा तीन वार पुष्पाञ्जलि देनी चाहिये और ढोल, नगारे, शङ्ख, घंटा, घड़ियाल आदि महावाद्यों के तथा जय-जयकार के शब्द घोष के साथ शुभपात्र (आरती) में शुद्ध रुई की पाँच बत्ती बनाकर गाय के घृत में भिगोकर प्रज्वलित करके तथा कर्पूर प्रज्वलित करके आरती करना चाहिये—

ततश्च मूलमन्त्रेण दत्त्वा पुष्पाञ्जलित्रयम् ।
महानीराजनं कुर्यान्महावाद्यजयस्वनैः ॥
प्रज्वालयेत् तदर्थं च कर्पूरेण घृतेन वा ।
आरात्रिकं शुभे पात्रे विषमानेकवर्तिकम् ॥

साधारणतः पाँचवत्तियों से आरती की जाती है, इसे 'पञ्चदीप' भी कहते हैं। एक, सात या उससे भी अधिक वत्तियों से आरती की जाती है। कर्पूर से भी आरती करने का विधान है—

कुंकुमागरु - कर्पूर - घृत - चन्दननिर्मिताः ।
वर्तिकाः सप्त वा पञ्च कृत्वा वा दीपवर्तिकाम् ॥
कुर्यात् सप्तप्रदीपेन शङ्ख घण्टादिवाद्यकैः ।

(पद्मपुराण)

'कुंकुम, अगर, कर्पूर, घृत और चन्दन की सात या पाँच बत्तियाँ बनाकर अथवा (रुई की वत्ती गौ के घृत में भिगोकर) सात बत्तियों से शङ्ख, घण्टा आदि बाजे बजाते हुए आरती करना चाहिये।'

आरती के पाँच अङ्ग बतलाये गये हैं—

पञ्च नीराजनं कुर्यात् प्रथमं दीपमालया ।
द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा ॥
चूताश्वत्थादिपत्रैश्च चतुर्थं परिकीर्तितम् ।
पञ्चमं प्रणिपातेन साष्टाङ्गेन यथाविधिः ॥

'प्रथम दीपमाला के द्वारा, दूसरे जलयुक्त शङ्ख से, तीसरे धुले हुए वस्त्र से, चौथे आम और पीपल आदि के पत्तों से और पाँचवें साष्टांग दण्डवत से आरती करें।' आरती उतारते समय सर्व प्रथम भगवान् की प्रतिमा के चरणों में चार वार घुमायें, दो बार नाभि-देश में, एक बार मुख मण्डल पर और सात बार समस्त अङ्गों पर घुमायें। लिखा है—

आदौ चतुः पादतले च विष्णो
द्वौ नाभिदेशे मुखबिम्ब एकम् ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सर्वेषु चाङ्गेषु च सप्तवारान्
आरात्रिक भक्तजनस्तु कुर्यात् ॥

यथार्थ में आरती पूजन के अन्त में इष्ट देवता की प्रसन्नतार्थ की जाती है। इसमें इष्टदेव को दीपक दिखाने के साथ ही उनका स्तवन तथा गुणगान किया जाता है। आरती के दो भाव हैं, जो क्रमशः 'नीराजन' और 'आरती' शब्द से व्यक्त हुए हैं। नीराजन (निःशेषेण राजनम्-प्रकाशनम्) का अर्थ है—विशेषरूप से, निःशेषरूप से प्रकाशित करना। अनेक दीप-बत्तियाँ जलाकर विग्रह (मूर्ति) के चारों ओर घुमाने का अभिप्राय यही है कि पूरा-का-पूरा विग्रह एड़ी से चोटी तक प्रकाशित हो उठे—चमक उठे; अङ्ग-प्रत्यङ्ग स्पष्ट रूप से उद्भासित हो जाय, जिससे दर्शक या उपासक भलीभाँति देवता की रूप-छटा को निहार सकें, हृदयंगम कर सकें। दूसरा 'आरती' शब्द जो संस्कृत के 'आर्ति' का प्राकृत रूप है और जिसका अर्थ है—अरिष्ट। यह विशेषतः माधुर्य-उपासना से सम्बन्धित है। आरती वारने का अर्थ है—आर्ति-निवारण, अनिष्ट से अपने प्रियतम प्रभु को बचाना। इस रूप में यह एक तान्त्रिक क्रिया है, जिससे प्रज्वलित दीपक अपने इष्टदेव के चारों ओर घुमाकर उनकी समस्त विघ्न-बाधाओं को दूर किया जाता है। आरती लेने का भी यही तात्पर्य है। उनकी आर्ति' (कष्ट) को, अपने ऊपर लेना। बलैया लेना, बलिहारी जाना, बलि जाना, वारी जाना, न्यौछावर होना आदि सभी प्रयोग इसी भाव के वाचक हैं, अर्थात् (यही भाव प्रकट करते हैं)। इसी प्रकार से छोटे बच्चों की माताएँ तथा बहिनें लोक में भी आरती (या आरत) उतारती हैं। जैसे सूतिका स्नान के समय, यज्ञोपवीत लेने के समय, विवाह, वाग्दान के समय, इसी प्रकार के अनेक शुभ माङ्गलिक कार्यों के अवसरों पर बहिनें, भुवाएँ (फूफीएँ) अपने घरों में आरती (आरता) करती हैं यह प्रचलन (रिवाज) है।

देव-पूजा वैदिक उपासना में उसके साथ-साथ वैदिक-मन्त्रों का उच्चारण होता हैं तथा पौराणिक एवं तान्त्रिक उपासना में उसके साथ सुन्दर-सुन्दर भाव पूर्ण मधुर पद्य-रचनाएँ गायी जाती हैं।

प्रदक्षिणा (परिक्रमा) किस प्रकार और कितनी संख्या में करें?

एक चण्डया रवौ सप्त तिस्रो दद्यात् विनायके।
चतस्रो केशवो देया शिवस्यार्धं प्रदक्षिणा॥

'दुर्गा (देवी) की एक, सूर्य की सात, गणेशजी की तीन, भगवान् विष्णु (राम, कृष्ण आदि अवतार स्वरूपों की) प्रतिमाओं की चार तथा भगवान् शिव की अर्द्ध (आधी) परिक्रमा करना चाहिये।'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Gyaan Kosha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह परिक्रमा संख्या न्यून से न्यून (औपचारिक) रूप से करने के लिये बतलायी गयी हैं। वैसे परिक्रमा (प्रदक्षिणा) अधिकाधिक करने का अधिक माहात्म्य है। भगवान् शिव की परिक्रमा के अतिरिक्त सभी देवी-देवताओं की परिक्रमा प्रदक्षिणा दक्षिणावर्त करने का विधान है। इसके लिये साधारणतः समझने हेतु स्वस्तिक चिह्न 卐 अच्छा उदाहरण है। प्रदक्षिणा इसी के अनुसार करना चाहिये।

दर्शन-प्रार्थना-प्रणाम

देवी-देवताओं के दर्शन-प्रार्थना हाथ जोड़कर ही करना चाहिये। प्रणाम जहाँ तक हो सके, साष्टाङ्ग दण्डवत होकर ही करना चाहिये।

रामायण, गीता, भागवत, विष्णुपुराणादि स्तोत्र पाठ

प्रथम पाठ करने वाले ग्रन्थ का पूजन करके प्रणाम करें, तत्पश्चात् मङ्गलाचरण करके पाठ करें। जिस ग्रन्थ या स्तोत्र का पाठ करें, उस ग्रन्थ के देवता की प्रतिमा (मूर्ति) का ध्यान करते हुए ही करना चाहिये। मीठा स्वर, अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण, पदों का विभाग, उत्तम स्वर, धीरता, एक लय के साथ बोलना यह पाठ करने वाले के लिये उत्तम प्रकार बतलाया गया है।

पाठ करते समय जो रागपूर्वक गीत की तरह गाता है, उच्चारण में शीघ्रता करता है, सिर हिलाता है, तान लगाता, अपने हाथ से लिखी हुई पुस्तक पर पाठ करना है, अधूरे मन्त्र, श्लोक का कण्ठस्थ पाठ करता है, मन्त्र श्लोक का अर्थ नहीं जानता, वह पाठ करने वाला अधम कहा गया है। जब तक अध्याय एवं स्तोत्र की पूर्ति न हो, तब तक बीच में पाठ बन्द नहीं करना चाहिये। यदि किसी कारण तथा प्रमादवश बीच में पाठ छोड़ दिया जाय तो, पुनः आरम्भ करके पूरा पाठ करना चाहिये। पुस्तक हाथ में लेकर पाठ करने से आधा ही फल प्राप्त होना बतलाया है। किसी भी धार्मिक ग्रन्थ या स्तोत्र का पाठ मानसिक नहीं होना चाहिये, वाणी द्वारा स्पष्ट उच्चारण से ही पाठ होना चाहिये। अधिक जोर से चिल्ला कर बोलना, कभी बहुत ही मन्द जो सुनाई ही न देवे, कभी जल्दी भागने के समान शीघ्रता से पाठ करना, यह सब प्रकार अनुचित कहे गये हैं। कण्ठ से पाठ करने के स्थान पर पुस्तक से पाठ करना उत्तम रहता है। इसमें भूल होने की संभावना कम रहती है। अध्याय आदि पूर्ण होने पर, पुस्तक का समग्र पाठ होने पर पुस्तक की आरती पुष्पाञ्जलि समर्पण करके नमन, प्रणाम पूर्वक पाठ समाप्त करना चाहिये।

माला और जप विधि

अनेक कार्य सिद्धियों के लिये अनेक प्रकार की मालाओं के विधान शास्त्रों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में मिलते हैं, किन्तु यहाँ केवल साधारणतया ईश्वर प्रीति हेतु जप करने का कार्य समझ कर संक्षेप में बतला रहे हैं। वैष्णवों के लिये तुलसी की माला उत्तम कही गयी है। वैसे रुद्राक्ष की माला द्वारा जप करने से सब ही प्रकार के फलों की प्राप्ति होती है।

'रुद्राक्षमालया जप्तो मन्त्रः सर्वफलप्रदः।'

(उड्डीशतंत्र २६।१०६)

प्रत्येक मणि के बीच में ग्रन्थि दी हुई, सुमेरु छोड़कर १०८ मणियों की माला उत्तम कही है। माला को अनामिका अँगुली पर रखकर अँगूठे के स्पर्श करते हुए मध्यमा से फेरना चाहिये। सुमेरु का उलङ्घन नहीं करें। दोबारा माला फेरते समय सुमेरु के पास से माला घुमा कर जप करना चाहिये। माला पूजन तथा प्रार्थना करके फेरने से विशेष तथा शीघ्र फल प्राप्त होता है।

माला-प्रार्थना

ॐ महामाये महामाले सर्वशक्तिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥
अविघ्नं कुरु माले त्वां गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले य सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये॥

जप तीन प्रकार का होता है, 'वाचिक' जप धीरे-धीरे बोलकर किया जाता है, 'उपांशु' उच्चारण दूसरे को नहीं सुने इस प्रकार का होता है, 'मानसिक' जिह्वा और होठ न हिलें इस प्रकार किया जाता है, इनमें उत्तरोत्तर उत्तम होना बतलाया है। जप करते समय दाहिना हाथ गौमुखी में डालकर जप करें, गौमुखी न हो तो वस्त्र से माला को ढाँक लेवें। जप करते समय सिर पर वस्त्र या हाथ न रखें। जप करते समय हिलना, ऊँघना, बोलना और माला का हाथ से गिरना निषिद्ध है। यदि बीच में बोल लेवें या माला हाथ से छूट जाय तो पुनः आरम्भ करके माला पूर्ण करना चाहिये।

घर में जप करने से एक गुना, गायों के समीप करने से सौ गुना, पवित्र वन-बगीचे में और तीर्थ स्थान में हजार गुना, पर्वत पर दस हजार गुना, नदी के तीर पर लाख गुना, देवालय में करोड़ गुना और भगवान् शिव के समीप अनन्त गुना फल प्राप्त होना बतलाया है।

प्रातःकाल में नाभि, मध्याह्न में हृदय और संध्या काल में नासिका के समीप हाथ रखकर जप करना चाहिए।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्मिन्स्थाने जपं कृत्वा शक्रो हरति तज्जपम्
तन्मृदा लक्ष्म कुर्वीत ललाटे तिलकाकृतिः ।।

जिस आसन पर बैठकर जप किया जावे उसके नीचे की मृत्तिका तथा (वहाँ थोड़ा जल डाल कर) उसको भी उठाकर मस्तक पर लगा लेवें। ऐसा नहीं करने से उस जप के फल को इन्द्र ले जाते हैं।

विष्णु उपासकों को सर्वदा मन, कर्म, वचन से शुद्ध पवित्र रहना चाहिये। खान-पान, रहन-सहन में सर्वदा राजस, तामस पदार्थों का प्रयोग नहीं करना चाहिये। सब ही प्राणियों पर दया, क्षमा रखें। किसी भी प्रकार से किसी भी प्राणी को कष्ट-दुःख पहुँचे, ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहिये।

भगवान् सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण के चरणों में बारंबार प्रणाम हैं।

□

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीगणपति-पूजा-विधि

सोपान १

चतुर्थ स्कन्ध

ॐ गं गणपतये नमः

एकदन्तं महाकायं लम्बोदरं गजाननम् ।
विघ्ननाशकरं देवं हेरम्बं प्रणमाम्यहम् ॥

'जो एक दाँतवाले, विशालकाय, लम्बोदर, गजानन एवं विघ्नाशक हैं, उन हेरम्बदेव को मैं प्रणाम करता हूँ ।'

परब्रह्म परमात्मा सच्चिदानन्द घन एक और अद्वितीय हैं । वे निर्गुण-निराकार होते हुए सगुण साकार भी हैं । वे परमात्मा विश्व की सृष्टि के लिये ब्रह्मा, पालन के लिये विष्णु तथा संहार के लिये रुद्र-रूप धारण करते हैं । वे ही सृष्टि के प्राणियों के वात्सल्य एवं संरक्षण के लिये दयामयी जगदम्बा के रूप में कार्य करते हैं । वे ही लोगों की आवश्यकता के अनुसार ताप एवं प्रकाश प्रदान करने के लिये लोक प्रवसिता सूर्य बने हुए हैं । प्रत्येक अभीष्ट कार्य के सम्पादन में विघ्नों का निवारण तथा मङ्गल प्रदान करने के लिये परब्रह्म परमात्मा ही गणपति रूप में प्रतिष्ठित हैं । वे विद्या-वारिधि और बुद्धि विधाता हैं । वे थोड़ी-सी-आराधना करने से शीघ्र प्रसन्न होकर भक्तजनों के अभीष्ट सिद्ध करते हैं । भगवान् गणेश वैदिक देवता हैं, भारत में इनकी पूजन-परम्परा सदा से ही चली आ रही है । वेदों में भी इनका वर्णन है, पुराणों में तो उनकी महिमा का विशद वर्णन उपलब्ध है । पञ्चदेवों में इनका मुख्य स्थान है, प्रत्येक कार्य के आरम्भ में श्रीगणेशजी का स्मरण-वन्दन किया जाता है । किसी भी भौतिक सिद्धि या परलौकिक कार्यसिद्धि हेतु श्रीगणेशजी को प्रसन्न करके अपनी अभीष्ट-पूर्ति कर सकते हैं । वे मङ्गलमूर्ति, सिद्धि-सदन, गजवदन, विनायक बहुत अल्प श्रम से ही उपासक पर दया कर देते हैं । महागणपति सम्पूर्ण जगत् को उपासक के अनुकूल कर देते हैं ।

श्रीगणेशजी की पूजनविधि वैदिक मन्त्रों, पौराणिक मन्त्रों द्वारा की जाती है । जिनके यज्ञोपवीत न हो, वे पौराणिक मन्त्रों द्वारा पूजन कर सकते हैं; किन्तु पूजन कराने वाला विद्वान् सुसंस्कृतज्ञ होता है तो अधिकारानुसार पूजा करा देता है । यदि ऐसा न हो तो साधारण पढ़ा लिखा भी भगवान् गणपति का पूजन थोड़े समय में सम्पन्न कर सके, इस प्रकार की संक्षिप्त पूजा विधि लिखी जा रही है । इसमें भी यदि द्विज (यज्ञोपवीतधारी) न हो तो पूजोपचार समर्पण करते समर्पण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करते समय ॐ शब्द का उच्चारण करते हुए पूजोपचार समर्पण कर सकते हैं। यदि पूजा करने वाला योग्य सुसंस्कृत विद्वान् हो या पूजन करने वाला ऐसे किसी योग्य विद्वान् की सहायता से पर्याप्त समय लगा कर पूजन करे तो पौराणिक मन्त्रों द्वारा सर्वदेव पूजाविधि तथा वैदिक मन्त्रों द्वारा भगवान् विष्णु, राम, कृष्णादि की वृहत्पूजा विधि इसी पुस्तक के चतुर्थ स्कन्ध में लिखी जा रही हैं, उन्हीं मन्त्रों द्वारा कर सकते हैं। भगवान् विष्णु की पूजा विधि में तथा भगवान् गणपति की पूजा -विधि में बहुत थोड़े से मन्त्रों में हेर-फेर करना होता है, उसको योग्य विद्वान् भली प्रकार से जानते हैं, और कर सकते हैं। यहाँ इस प्रकार से लिखने तथा बतलाने का तात्पर्य यही है कि शास्त्रानुसार पूजा भी हो जाय और कोई भी उपासना का इच्छुक पूजा-उपासना-आराधना से वञ्चित न रहे। पूजा के मन्त्रोपचार के भावार्थ ज्ञात करने वाले इच्छुक इसी पुस्तक की हिन्दी पूजाविधि में देख सकते हैं। पूजा का मुख्य समय पूर्वाह्न काल बतलाया गया है। प्रातः मध्याह्न और सायंकाल तीनों समय भगवान् की पूजा करनी चाहिये। जो तीनों समय पूजा न कर सकें, उन्हें मध्याह्न तथा सन्ध्या समय पुष्पाञ्जलि तो अवश्य ही अर्पित करनी चाहिये।

[पूजा करने से पूर्व पूजा में ध्यान देने योग्य बातें इसी पुस्तक के स्कन्ध (३) सोपान (१८) में पढ़ लेना आवश्यक है।]

उपासक स्नान-संध्या आदि नित्यकर्म का सम्पादन करके शुद्ध सुखद आसन पर पूर्वाभिमुख होकर बैठें। पूजन गङ्गाजल या किसी पुण्यप्रदा नदी या तीर्थ का जल पात्र में भरकर एवं षोडशोपचार पूजन की सामग्री एकत्र कर सम्हाल कर अपने पास में रख लेवें। श्रीगणेशजी महाराज को स्थापित करने के लिये पीठ (छोटी चौकी या पट्टा) लकड़ी का रखें। उस पर आधार शक्ति की पूजा करके, पायों में धर्म ज्ञान, वैराग्य और एश्वर्य की तथा पूर्वादि दिशाओं में अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य तथा अनैश्वर्य की भी पूजा करें। तत्पश्चात् पीठ (चौकी) पर लाल वस्त्र बिछाकर उस पर कमल की भावना करके चावलों (अक्षतों) का आठ पंखड़ियों का कमल बनाकर उसकी कर्णिका में श्रीगणपतिदेव की प्रतिमा को विराजमान करें। प्रतिमा के अभाव में एक पात्र में चावल (अक्षत) भरकर उसके ऊपर मोली (नाल) लिपटी हुई सुपारी (पूगीफल) स्थापित करके उसी में गणपति देव की स्थापित किया जावे, उसके पास ही एक छोटी ढेरी (कूढ़ी) चावलों की श्रीगण-पति वाहन मूषक महाराज की भी स्थापित कर उसमें मूषक की भावना करके उसकी भी गणपति महाराज की पूजा करने से पूर्व ही संक्षिप्त पूजा कर लेना चाहिये। पूजक यदि गृहस्थ हो तो पूजन के समय सपत्नीक बैठकर पूजा करें। पूजन आरम्भ करने से पूर्व घी का दीपक प्रज्वलित कर देवपीठ के दाहिने भाग में अक्षत पुञ्ज (चावलों की ढेरी) पर स्थापित करें, और 'ॐ दीप ज्योतिषे नमः'

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यह मन्त्र उच्चारण गन्ध-पुष्पादि से उसका पूजन करें। तदनन्तर उस दीपक में इष्टदेव के ज्योतिर्मय कर रूप की भावना करके इस प्रकार प्रार्थना करें--

भो दीप देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।
यावत् कर्म समाप्तिः स्यात् तावत् त्वं सुस्थिरो भव ।।

'हे दीप! आप देवता के रूप हो, कर्म के साक्षी तथा विघ्न के निवारक हो, जब तक पूजा-कर्म पूर्ण न हो जाय, तब तक आप सुस्थिर भाव से संनिकट विराजमान रहो।'

तदनन्तर पूर्वाभिमुख बैठा हुआ सपत्नीक यजमान 'ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः।' उच्चारण कर तीन बार आचमन करे। फिर 'ॐ हृषीकेशाय नमः उच्चारण कर हाथ धो लेवे। तत्पश्चात् वाम हाथ में जल लेकर उच्चारण करे—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।।
'ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ।।'

'कोई पवित्र हो, अपवित्र हो, अथवा किसी भी अवस्था को प्राप्त क्यों न अँगुलियों हो, जो भगवान् पुण्डरीकाक्ष का स्मरण करता है, वह बाहर-भीतर से पवित्र हो जाता है।' 'सच्चिदानन्दघन पुण्डरीकाक्ष पवित्र करें।'

उपर्युक्त उच्चारण करते हुए बांये हाथ में रखे हुए जल में से दायें हाथ की से लेते हुए अपने ऊपर तथा पूजन-सामग्री पर जल के छींटे देवें। इसके पश्चात् मङ्गलपाठ करें—

मङ्गल पाठ

सुशान्तिर्भवतु। श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। लक्ष्मी नारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। शचीपुरन्दराभ्यां नमः। मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। स्थान देवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः।

विश्वेशं माधवं ढुण्ढि दण्डपाणिं च भैरवम्।
वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम् ।।१
वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ।।२
सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ।।३

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धूमकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।।४

विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ।।५

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ।।६

अभीप्सितार्थसिद्धयर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः ।।७

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ।।८

सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः ।।९

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव ।
विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि ।।१०

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ।।११

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भुतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।१२

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।१३

स्मृते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते ।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ।।१४

सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ।।१५

"विश्वनाथ, माधव, ढुण्ढिराज, गणेश, दण्डपाणि, भैरव, काशी; गुहा, गङ्गा तथा भवानी मणिकर्णिका की मैं वन्दना करता हूँ ।।१।। कोटि सूर्यों के समान महातेजस्वी, विशालकाय और टेढ़ी सूँड वाले गणपति देव ! आप सदा सब कार्यों में मेरे विघ्नों का निवारण करें ।।२।। सुमुख, एकदन्त, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाशक, विनायक, धूमकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन-ये गणेशजी के बारह नाम हैं। जो मनुष्य विद्यारम्भ, विवाह, गृहप्रवेश, यात्रा, संग्राम(युद्ध) तथा संकट के अवसर पर इन बारह नामों का पाठ और श्रवण करता है, उसके कार्य में विघ्न उत्पन्न नहीं होता ।।३-५।। शुक्लवस्त्र धारण करने वाले, चन्द्रमा के समान गौर, चार भुजाधारी और प्रसन्न मुखवाले गणपति

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

देव का ध्यान करे। इससे सम्पूर्ण विघ्नों की शान्ति हो जाती है ॥६॥ देवताओं और असुरों ने भी अभीष्ट मनोरथ की सिद्धि के-लिये जिनका पूजन किया है तथा जो समस्त विघ्नों को हर लेने वाले हैं, उन गणाधिपति को नमस्कार है ॥७॥ नारायणि ! तुम सब प्रकार का मङ्गल प्रदान करने वाली मङ्गलमयी हो, कल्याण-दायिनी शिवा हो, सब पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाली, शरणागतवत्सला, त्रिनेत्र-धारिणी गौरी हो, तुम्हें नमस्कार है ॥८॥ जिनके हृदय में मङ्गलधाम भगवान् श्रीहरि विराजते हैं, अर्थात् जो मन-ही-मन उनका चिन्तन करते हैं, उनके समस्त कार्यों में और सदा ही अमङ्गल नहीं होने पाता है ॥९॥ लक्ष्मीपते ! मैं जो आपके युगल चरणों का स्मरण करता हूँ। वह स्मरण ही शुभ लग्न है, सुदिन है, वही ताराबल, वही चंद्रबल, वही विद्याबल और वही दैवबल है ॥१०। जिनके हृदय में नील कमल के समान श्याम कान्ति वाले भगवान् जनार्दन विराज रहे हैं, उन्हीं का लाभ है, उन्हीं की विजय है, उनकी पराजय किससे हो सकती है ? ॥११॥ जहाँ योगेश्वर श्री कृष्ण हैं, जहाँ धनुर्धर अर्जुन हैं, वहीं श्री, विजय, भूति तथा ध्रुवा नीति है ऐसा मेरा विश्वास है ॥१२॥ भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं—'जो लोग अनन्य-भाव से चिन्तन करते हुये मेरी उपासना करते हैं, मुझ में नित्य संयुक्त रहने वाले उन भक्तों के योग-क्षेम का भार मैं स्वयं वहन करता हूँ ॥१३॥ जिनका स्मरण करते ही मनुष्य समस्त कल्याण का भाजन हो जाता है, उन नित्य अजन्मा आदि पुरुष श्रीहरि की मैं शरण लेता हूँ ॥१४॥ त्रिभुवन के स्वामी तीन देव ब्रह्मा, शिव, तथा विष्णु-आरम्भ किये जाने वाले सभी कार्यों में हमें सिद्धि प्रदान करें ॥१५॥

मङ्गल पाठ के अनन्तर यजमान हाथ में जल, अक्षत (चावल) और द्रव्य लेकर निम्नाङ्कित वाक्य पढ़ते हुए संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्तमन्वन्तरे अष्टाविंशति-तमेयुगे कलियुगे कलि प्रथम चरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भारतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गतैकदेशे अमुक नगरे अमुक ग्रामे अमुक स्थाने वा बौद्धावतारे अमुकनामसम्वत्सरे श्रीसूर्य अमुकायने अमुयर्तौ महामाङ्गल्य प्रद मासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुक पक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुक राशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु गृहेषु च यथायथा राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभ पुण्यतिथौ अमुक गोत्रः अमुक शर्मा (अमुक वर्मा अमुक गुप्तः) अहं ममात्मनः श्रीमन्महागणपति-प्रीत्यर्थं यथालब्धोपचारैस्तदीयं पूजनं करिष्ये ।

इस प्रकार संकल्प पढ़कर हाथ में रखा हुआ जल अक्षत द्रव्य भूमि पर रखे हुए किसी पात्र में छोड़ दे। यदि कोई संस्कृत द्विज विद्वान् इस संकल्प को

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उच्चारण करने योग्य न हो तो जल अक्षत द्रव्य लेकर मानसिक संकल्प करके भूमि पर रखे हुए किसी पात्र में छोड़ देवें। तत्पश्चात् श्रीगणपति-पूजन आरम्भ करें। सबसे पहले निम्न प्रकार से श्रीगणेशजी के स्वरूप का चिन्तन करते हुए उनका आवाहन करे।

आवाहन

हे हेरम्ब त्वमेह्योहि ह्यम्बिका त्र्यम्बकात्मज।
सिद्धिबुद्धिपते त्र्यक्ष लक्षलाभ पितुः पितः॥
नागास्यं नागहरं त्वां गणराजं चतुर्भुजम्।
भूषितं स्वायुधैर्दिव्यैः पाशांकुशपरश्वधैः॥
आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्ष मे॥

'हे माता पार्वती तथा त्रिलोचन महादेव के पुत्र हेरम्ब! आप आइये, आइये। आप सिद्धि और बुद्धि के पति हैं, तीन नेत्रों से सुशोभित हैं, लाखों का लाभ कराने वाले तथा पिता के पिता हैं, यहाँ पधारिये। आप गजानन हैं, नागमयहार धारण करते हैं, आपके चार भुजाएँ हैं, आप गणों के राजा हैं, पाश, अङ्कुश और परशु आदि दिव्य निजी आयुध आपके हाथों की शोभा बढ़ाते हैं। मैं पूजन के लिये और अपने इस यज्ञ की रक्षा के लिये भी आपका आवाहन करता हूँ। यहाँ पधार आप पूजा ग्रहण करें और यज्ञ की रक्षा करें।

स्थापन—ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठापन—अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाःक्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन॥
सिद्धिबुद्धिसहितगणपते सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

आसन-अर्पण—ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, आसनं समर्पयामि। उच्चारण करके दिव्य सिंहासन की भावना से पुष्प अर्पित करें।

पाद्य—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्य—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनी—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्नानीय—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, सर्वाङ्गे स्नानं समर्पयामि ।

पञ्चामृत-स्नान—गाय का दूध, गाय का दही, गाय का घी, मधु (शहद) और शर्करा (चीनी) मिलाकर सब को वस्त्र में से छानकर तैयार कर लें। और उससे स्नान करावें। ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। पञ्चामृत से स्नान कराने के पश्चात् शुद्ध जल से स्नान करावें।

शुद्धोदक-स्नान—ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। शुद्ध जल से स्नान कराकर प्रतिमा (मूर्ति) को शुद्ध वस्त्र द्वारा पोंछ लेवें। तत्पश्चात् सुगन्ध तेल (इत्र) आदि समर्पित करें।

मांगलिक (इत्र)—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, सुवासितं इत्र तैलं समर्पयामि।

पुनः शुद्ध स्नान—इत्र (तेलादि) से सुवासित करने के पश्चात् पुनः शुद्ध स्नान कराने के पश्चात् पुनः शुद्ध स्नान कराके फिर वस्त्र से पोंछ देवें। ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमहागणपतये नमः, इत्र (तेल) आदि सुवासित स्नानान्तर शुद्धस्नानं समर्पयामि।

वस्त्र—ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, वस्त्रं समर्पयामि। तदनन्तर आचमनीयं समर्पयामि।

उपवस्त्र—ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, उपवस्त्रं समर्पयामि। तदनन्तर आचमनीयम् समर्पयामि

(वस्त्र के अभाव में लाल सूत्र तीन तार का, जिसको नाल व लच्छा भी कहते हैं, एवं अलंकरण के अभाव में अक्षत (चावल) चढ़ा देवें।) ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

अलंकरण—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, अलंकरणार्थम् अक्षतान् समर्पयामि।

यज्ञोपवीत—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, यज्ञोपवीतं समर्पयामि तदनन्तर आचमनीयं समर्पयामि।

गन्ध—ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, गन्धं समर्पयामि।

अक्षत—ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, अक्षतान् समर्पयामि। अक्षत (चावल) चुन-चुन कर साबुत चढ़ाने चाहिये। टूटे-फूटे नहीं होवें।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मन्दार-पुष्प—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, मन्दारपुष्पाणि समर्पयामि। (श्वेत आक के पुष्प तथा लाल एवं सिन्दूरी रंग के पुष्पों से भगवान् गणेशजी अधिक तथा शीघ्र प्रसन्न होते हैं। यथा साध्य ये अवश्य समर्पण करने चाहिये।

पुष्प-माला—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, पुष्पमालां समर्पयामि।

शमीपत्र—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपये नमः, शमीपत्राणि समर्पयामि।

(शमी को जाँट और खेजड़ा कहते हैं।)

दूर्वांअंकुर—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि। (नर्म-नर्म, हरे-हरे दूर्वाङ्कुर चढ़ाने चाहियें। यदि किसी स्थान पर श्वेतदूर्वा उपलब्ध हो तो उसके अङ्कुर भी चढ़ावें।)

सिन्दूर—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, सिन्दूरं समर्पयामि।

नाना परिमल, द्रव्य, अबीर-चूर्ण—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः,नाना परिमल द्रव्याणि समर्पयामि।

धूप—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, धूप माघ्रापयामि। धूप की बत्ती जहाँ तक हो बाँस के काष्ठ की न हो, केवल धूप की ही बत्ती बनी हुई हो, लेवें। बाँस की लकड़ी (काष्ठ) का धूम निषेध कहा है। धूप का चूर्ण भी मिलता है।

दीप-दर्शन—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, दीपं दर्शयामि (शुद्ध रुई की बत्ती गाय के घी में डुबोयी हुई, अग्नि से प्रज्वलित कर दीपक समर्पण करें।

नैवेद्य—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, शर्कराखण्ड-खाद्य, दधिक्षीरघृत, नानाविध भक्ष्य भोज्य, मोदकमय नैवेद्यं समर्पयामि।

ऋतुफल—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, ऋतुफलानि समर्पयामि। (श्री गणेशजी को ऋतुफलों में जम्बूफल (जामुन), कैथफल यथासाध्य अवश्य समर्पण करें।)

मध्ये पानीय, उत्तरापोशन—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः मध्ये पानीयं उत्तरापोशनं च समर्पयामि।

चार-चार बार करके दो बार जल छोड़ें।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करोद्वर्तन के लिये चन्दन पूगी फलादि सहित ताम्बूल—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, चन्दनेन करोद्वर्तन समर्पयामि। ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः मुखवासार्थमेला पूगीफलादि सहितं ताम्बूल समर्पयामि।

नारिकेल फल—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, श्रीफलं (नारिकेल फलं) समर्पयामि।

दक्षिणा—ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थं द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

नीराजन (आरार्तिक)—आरती कदलीगर्भ सम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

भाषार्थ—'प्रभो! केले के गर्भ से उत्पन्न यह जलाया गया कर्पूर है, इसी की ज्योति के द्वारा मैं आपकी आरती करता हूँ। आप इसे देखिये और मेरे लिये वरदायक होइये।'

ॐ सद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, कर्पूर नीराजनं समर्पयामि।

इसके पश्चात् आरती, शुद्ध रूई की वत्ती गाय के घी में भिगो कर उसे प्रज्वलित करके उससे इस प्रकार करें। पाँच बत्तियों को आरती तथा किसी पात्र में रखकर प्रज्वलित कर लेवें। फिर आरती उतारते समय सर्व प्रथम भगवान् की प्रतिमा के चरणों में चार बार घुमावें, फिर दो बार नाभि देश में, एक बार मुखमण्डल पर और फिर सात बार समस्त अंगों के सामने घुमायें। इसके पश्चात् जलयुक्त शङ्ख से, फिर तीसरी बार धुले हुए वस्त्र से, चौथे आम और पीपल के पत्तों से और पाँचवी बार सांष्टांग दण्डवत से करें। आरती के समय घण्टा, घड़ियाल, नँगारा आदि वाद्य बजाने चाहिये। आरती का गायन करना चाहिये।

आरती भगवान् गणेश जी की

आरती गजवदन विनायक की।
सुर-मुनि-पूजित गणनायक की॥ टेक
एकदन्त शशिभाल गजानन,
विघ्नविनाशक शुभगुण-कानन,
शिवसुत वन्द्यमान-चतुरानन,
दुःख विनाशक सुखदायक की॥सुर०
ऋद्धि-सिद्धि-स्वामी समर्थ अति,
विमल बुद्धि दाता सुविमल-मति,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अघ-वन-दहन, अमल अविगत-गति,
विद्या - विनय - विभव - दायक की ।।सुर०
पिङ्गलनयन, विशाल शुंडधर,
धूमवर्ण शुचि वज्रांकुश - कर,
लम्बोदर बाधा - विपत्ति - हर,
सुरवन्दित सब विधि लायक की ।।सुर०

पुष्पाञ्जलि—नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर ।।

भावार्थ—'परमेश्वर ! यथा समय उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के सुगन्धित पुष्प मैंने पुष्पाञ्जलि के रूप में अर्पित किये हैं, आप इन्हें स्वीकार करें ।'

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, मन्त्र पुष्पाञ्जलि समर्पयामि ।

प्रदक्षिणा—यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ।।

भावार्थ—'मनुष्य द्वारा जान या अनजान में जो भी पाप किये गये हैं, वे परिक्रमा करते समय पद-पद पर नष्ट होते हैं ।'

ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि ।
(श्रीगणपतिजी की तीन परिक्रमा करें ।)

विशेषार्घ्य-समर्पण—परिक्रमा करने के पश्चात् जल, गन्ध, अक्षत (चावल) फल फूल (पुष्प) दूर्वाङ्कुर और दक्षिणा एक ताम्रपात्र में रखकर दोनों घुटनों को पृथ्वी पर टेककर उस अर्घ्यपात्र (ताम्रपात्र) को दोनों हाथों की अञ्जलि में ले और उसको मस्तक से लगा कर निम्न प्रकार से पढ़ते हुए (उच्चारण करते हुए) श्री भगवान गणपति को अर्घ्यरूप में समर्पण कर देवें ।

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक ।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात् ।।
द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो ।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद ।।
अनेन सफलार्घ्येण सफलोऽस्तु सदा मम ।

'त्रिलोकी की रक्षा करने वाले गणाध्यक्ष ! रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये । आप भक्तों को अभय देने वाले और भवसागर से उनकी रक्षा करने वाले होइये । दयासागर ! आप दो माताओं के पुत्र होने से 'द्वैमातुर'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कहे गये हैं। प्रभो ! आप षाण्मातुर स्कन्द के बड़े भाई हैं, वरदाता हैं, वर दीजिये। अभीष्ट वस्तुओं के दाता गणेश ! मेरी वाञ्छा पूर्ण कीजिये। इस फल युक्त अर्घ्य-दान से आप मेरे लिये सफल-फलदाता होइये।" ॐ सिद्धिबुद्धि सहिताय महागणपतये नमः, विशेषार्घ्यं समर्पयामि। विशेषार्घ्य देने के पश्चात् निम्नलिखित प्रार्थना करें।

प्रार्थना

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञ विभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते ॥
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते ॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः।
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः॥
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे।
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक॥
लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तवन्ति
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव॥
गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम॥
अनया पूजया सिद्धि-बुद्धि सहितो महागणपतिः प्रियतां न मम।

"गणनाथ ! आप विघ्नेश्वर (विघ्नों पर शासन करने वाले) हैं। वरदाता हैं, देवताओं के प्रिय हैं, लम्बोदर हैं, विविध कलाओं से पूर्ण हैं, सम्पूर्ण जगत् के हितैषी हैं, गजानन हैं, वैदिक यज्ञ से विभूषित और गौरी (पार्वती) के पुत्र हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप भक्तों के संकट मिटाने में सदा लगे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रहते हैं, गणों के ईश्वर एवं सर्वेश्वर हैं, कल्याणप्रद एवं देवेश्वर हैं, विद्याधर, विकट और वामन है तथा भक्तों पर प्रसन्न होकर उन्हें वर देते हैं। आपको बारंबार नमस्कार हैं। आप ब्रह्मरूप, विष्णुरूप, रुद्ररूप और गजरूप हैं, इन सभी रूपों में आपको बार-बार नमस्कार है। सम्पूर्ण विश्व का रूप आपका ही स्वरूप है, आप ब्रह्मचारी हैं, आपको नमस्कार है। विनायक आप भक्त प्रिय हैं, देवता है, आपको नमस्कार है। लम्बोदर आपको मोदक (लड्डू) सदा ही प्रिय हैं, आपको नमस्कार है। देव ! आप सदा मेरे सब कार्यों में विघ्नों का निवारण करें। गणेश ! जो लोग आपको विघ्न-शत्रुदलन, सुन्दर, भक्तप्रिय, सुखद, फलप्रद, विद्याप्रद, और अघहर इत्यादि नामों से पुकार कर आपकी स्तुति करते हैं, उनके लिये आप नित्य ही वरदायक हों। श्रीगणेशजी की पूजा में जो कर्म न्यून तथा अधिक किया गया है, उन सबके द्वारा सर्वात्मा भगवान् गणपति सदा मुझ पर प्रसन्न रहें।"

'इस पूजा से सिद्धि-बुद्धि सहित श्रीमहागणपति महाराज सन्तुष्ट हों। इस पर उन्हीं का स्वत्व हैं, मेरा नहीं।'

इसके पश्चात् साष्टांग प्रणाम करें।

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतव।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्तु प्रयत्नेन मया कृत ।।

ॐ सिद्धबुद्धिसहिताय महागणपतये नमः। साष्टांगप्रणामम् समर्पयामि।

तदनुसार पुनः प्रार्थना करे—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।।

'आप ही मेरे माता और पिता हो, आप ही भाई व सखा हो, आप ही मेरी विद्या व धन हो, हे देवाधिदेव ! मेरे तो सब कुछ आप ही हो। मैं आपकी शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं गणेश्वर।
यत्पूजितं मया देव ! परिपूर्णं तदस्तु मे ।।

'हे भगवान् गणेश्वर ! मेरी यह पूजा मन्त्र, पूजनविधि एवं भक्ति से हीन है आप ही इसे पूर्ण करेंगे।'

इसके पश्चात् पूजा समय में वहाँ कोई विद्वान्, ब्राह्मण, गुरु, पुरोहित, माता-पिता तथा पूज्यगण हों, उन सबको प्रणाम करे। तदनन्तर उपस्थित गणों

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

को पञ्चामृत, प्रसाद बाँटकर, आप भी पञ्चामृत प्रसाद ग्रहण करें।

भगवान् श्रीगणपति महाराज के मन्त्र।

श्रीगणेश गायत्री मन्त्र इस प्रकार हैं—इनके जप करने से सभी प्रकार के अभीष्ट कार्य सिद्ध होते हैं।

(१) ॐ तत्कराटाय विद्महे हस्तिमुखाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥
(कृष्णयजुर्वेदीय मैत्रायणी संहिता २।९।१६)

(२) ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
(कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीयारण्यक नारायणोपनिषद १०।१)

(३) ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
(गणपत्यथर्वशीर्षोपनिषद्)

(४) ॐ लम्बोदराय विद्महे महोदराय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
(अग्नि पुराण ७१।६)

(५) ॐ महोल्काय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नोदन्ती प्रचोदयात्।
(अग्नि पुराण १७९।४)

अन्य गणपति मंत्र

(६) ॐ गं गणपतये नमः।

इस मंत्र के जप द्वारा सब प्रकार के कष्टों का निवारण होता है।

(७) ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरदसर्वजनं मे वशमानय स्वाहा

इस मन्त्र का सवालक्ष जप करने से सर्व प्रकार के विघ्न दूर होते हैं। और सर्वमनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

(८) 'ॐ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वजन मे वशमानय स्वाहा।

इस मन्त्र के जप करने से सम्मान मिलता है तथा लक्ष्मी प्राप्ति होती है।

(९) 'ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं।'

इस मन्त्र के जप करने से शरीर में शक्ति प्राप्त होती है।

(१०) 'ॐ वक्रतुण्डाय हूँ।'

इस मन्त्र का छः लाख जप छः मास में करने से सब कार्य सिद्ध होते हैं।

ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ॐ नारायणाय नमः

पुराणोक्त सर्वदेव-पूजा-विधि

सोपान २

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।]

आत्म सस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर।
अरण्यामिव हव्यांशं मूर्त्तावावाहयाम्यहम् ।।१ (अमुक देवाय नमः आवाहनम्)
तवेयं महिमामूर्त्तिस्तस्यां त्वां सर्वगं प्रभो।
भक्ति-स्नेहसमाकृष्टदीपवत्स्थापयाम्यहम् ।।२ (इतिस्थापनम्)
देवदेव महाराज प्रियेश्वर प्रजापते।
आसनं दिव्यमीशान दास्येऽहं परमेश्वर ।।३ (इत्यासनम्)
यद्भक्तिलेशसंपर्कात्परमानन्दविग्रहम्।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ।।४ (इति पाद्यम्)
तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम्।
तापत्रयविनिर्मुक्तं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ।। (इत्यर्घ्यम्)
वेदनामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने।
आचामं कल्पयामीश शुद्धानां शुद्धिहेतवे ।। ६(इत्याचमनीयम्)
गंगा-सरस्वती-रेवा-पयोष्णीनर्मदाजलैः।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शांतिं कुरुष्व मे ।।७ (इति स्नानम्)
पयो दधि घृतं चैव मधु शर्करया युतम्।
पञ्चामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ।।८ (इति पञ्चामृतस्नानम्)
(पुनः शुद्धोदक स्नानं च। ततोऽभिषेकः।)
सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे।
मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ।।९ (इति वस्त्रद्वयमाचमनं च)
नवभिस्तंतुभिर्युक्तं त्रिगुणदेवतामयम्।
उपवीतं चोत्तरीयं गृहाण परमेश्वर ।।१० (इति यज्ञोपवीतम् आचमनं च)
श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठं चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।११ (इति गन्धम्)
अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ता सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।१२ (इत्यक्षतान्)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयानीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ।।१३ (इति पुष्पाणि)

(विष्णवे तुलसीं, शिवाय विल्वपत्राणि, गणपतये दुर्वांकुरान्, देव्यै रक्त करवीर पुष्पादीनि चार्पयेत्)

वनस्पतिरसोद्भूतो गंधाढ्यो गंध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।१४ (इति धूपम्)

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः।
सबाह्याभ्यंतरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।१५ (इति घृतदीपम्)

सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम्।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ।१६ (इति पायसादि नैवेद्यम्)

नमस्ते देवदेवेश सर्वतृप्तीकरं परम्।
अखंडानंदसंपूर्णं गृहाण जलमुत्तमम् ।।१७ (इत्याचमनम्)

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
एलाचूर्णादिसंयुक्तं तांबूलं प्रतिगृह्यताम् ।।१८ (इति तांबूलम्)

इदं फलं मया देव स्थापित पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।१९ (इति ऋतुफलम्)

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शांतिं प्रयच्छ मे ।।२० (इति हिरण्यादि दक्षिणाम्)

ततः कर्पूरेण आर्त्तिक्यम्।

कदलीगर्भसंभूतं कर्पूरं च सुदीपितम्।
आरार्त्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ।।२१ (इत्यार्तिक्यम्)

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणं पदे पदे ।।२२ (इति प्रदक्षिणा)

नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पांजलिं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ।।२३ (इति पुष्पाजलिं च दत्वा साष्टांगं प्रणमेत्)

क्षमा-प्रार्थना

ॐ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।।२४
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ।।२५

।। इति पुराणोक्त सर्वदेव पूजा प्रयोगः ।।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् सूर्यनारायण की पूजन-विधि

सोपान ३

[पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) अवश्य पढ़ लेवें]

ध्यान

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैक—सिन्धुं
भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि ।
पद्मद्वयाभयवरान् दधतः कराब्जै-
र्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम् ।।

आवाहन

ॐ देवेश भक्तिसुलभ परिवार-समन्वित ।
यावत् त्वां पूजयिष्यामि तावद् देव इहावह ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः इहागच्छ इह तिष्ठ ।।

१ पाद्य—ॐ यद्भक्तिलेशसम्प्राप्तिपरमानन्दसम्भवः ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः पाद्यं समर्पयामि ।

२ अर्घ्य—तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्द-लक्षणम् ।
तापत्रयविमोक्षाय तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् ।।
एहि सूर्यसहस्रांशो तेजोराशि जगत्पते ।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः अर्घ्यं समर्पयामि ।

प्रातः समय पूर्व दिशा में सूर्य उदय हो रहा हो, आधा सूर्य उदय हो गया हो, आधा पृथ्वी तल में हो। उस समय में भगवान् सूर्यनारायण को अर्घ्य देने का सर्वोत्तम समय बतलाया गया है। भगवान् सूर्यनारायण के अर्घ्य में उत्तम गन्धयुक्त लालपुष्प, अक्षत (चावल गेहूँ) केला का फल, जल के साथ तीन बार अर्घ्य में समर्पित करना चाहिये।

३ आचमन—ॐ उच्छिष्टाऽप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः ।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः आचमनीयं समर्पयामि ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

४ स्नान—ॐगङ्गासरस्वती रेवा पयोष्णी नर्मदाजलैः ।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्ति कुरुष्व मे ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः स्नानं समर्पयामि ।

५ वस्त्र—मायाचित्रपटच्छन्ननिजगुह्योरुतेजसे ।
निरावरणविज्ञानवासस्ते कल्पयाम्यहम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्यनारायणाय नमः रक्तवस्त्रं समर्पयामि ।

६ उपवस्त्र-यज्ञोपवीत—नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।
उपवीतं चोत्तरीयं गृहाण परमेश्वर ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः उपवस्त्रं-यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

७ आभूषण—स्वभावसुन्दराङ्गाय सत्यासत्याश्रयाय ते ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयामि सुरार्चित ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः आभूषणानि समर्पयामि ।

८ गन्ध—श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री सूर्यनारायणाय नमः चन्दनं समर्पयामि ।

९ अक्षत—अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः अक्षतान् समर्पयामि ।

१० पुष्प एवं पुष्प माला—माल्यादीनि सुगन्धीनि माल्यादीनि वै प्रभो ।
मयाऽऽनीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः पुष्पं तथा पुष्पमालां समर्पयामि ।

११ धूप—वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः धूपमाघ्रापयामि ।

१२ दीप—सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
स बाह्याभ्यन्तर ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्री सूर्यनारायणाय नमः दीपं दर्शयामि । हस्त प्रक्षालनम् ।

१३ नैवेद्य—सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ।।
CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः नैवेद्यं निवेदयामि ।

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१४ पीने का जल—नमस्ते देवदेवेश सर्वतृप्तिकरं परम् ।
परमानन्दपूर्णं त्वं गृहाण जलमुत्तमम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः पानीयं समर्पयामि ।

१५ आचमन—उच्छिष्टोऽप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः ।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः नैवेद्यान्तं पुनराचमनीयं जलं समर्पयामि ।

१६ ताम्बूल—पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
एलाचूर्णादिकैर्युक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।
ॐ भूभुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः ताम्बूलं समर्पयामि ।

१७ फल—इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।
तेन मे सुफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः फलं समर्पयामि ।
केला, अमरूद, फल समर्पण करें ।

१८ दक्षिणा—पूजाफल-समृद्धचर्थं दक्षिणा च त्वाग्रतः ।
स्थापिता तेन मे प्रीतः पूर्णान् कुरु मनोरथान् ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायण नमः द्रव्य दक्षिणां समर्पयामि ।

१९ आरात्रिक—कदलीगर्भसम्भूतं कपूरं च प्रदीपितम् ।
आरात्रिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ।।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः आरात्रिकं समर्पयामि ।

आरती या पात्र में कर्पूर प्रज्वलित करके, कर्पूर न हो तो शुद्ध रुई की वत्ती गौघृत में भिगोकर उसको आरती या किसी पात्र में रखकर आरती करें। तत्पश्चात् छोटे पात्र में जल भर कर उसके द्वारा भी आरती करें। फिर भगवान् सूर्यनारायण के दोनों ओर तीन-तीन बार जल छोडें। इसके पश्चात् उसी पात्र में से जल लेकर भक्तों पर छींटे देवें।

भगवान् सूर्य की आरती गायन

जय कश्यप-नन्दन, ॐ जय कश्यप-नन्दन ।
त्रिभुवन-तिमिर-निकन्दन, भक्त-हृदय-चन्दन । टेक
सप्त-अश्व रथ राजित, एक चक्रधारी ।
दुखहारी, सुखकारी, मानस - मल - हारी । जय०
सुर-मुनि-भूसुर-वन्दित, विमल विभवशाली ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अघ-दल-दलन दिवाकर, दिव्य-किरण-माली । जय०
सकल सुकर्म प्रसविता, सविता शुभकारी ।
विश्व-विलोचन मोचन, भव-बन्धन भारी । जय०
कमल-समूह-विकाशक, नाशक त्रय तापा ।
सेवत सहज हरत अति मनसिज-सन्तापा । जय०
नेत्र-व्याधि-हर सुरवर, भू - पीड़ा - हारी ।
वृष्टि-विमोचन संतत, परहित-व्रत-धारी । जय०
सूर्यदेव करुणाकर ! अब करुणा कीजै ।
हर अज्ञान-मोह सब, तत्त्वज्ञान दीजै ।। जय०

२० पुष्पाञ्जलि—नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।
पुष्पाञ्जलिं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीसूर्यनारायणाय नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।

लाल सुगन्धित पुष्प और अक्षत चढ़ावें ।

२१ प्रदक्षिणा—यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणे पदे पदे ।।

भगवान् सूर्यनारायण की सात बार प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करनी चाहिये ।

नमस्कार-प्रणाम—जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
ध्वान्तारिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ।।

साष्टांग प्रणाम (दण्डवत) करें ।

इसके पश्चात् आदित्यहृदयादि स्तोत्रों के पाठ द्वारा स्तुति करें ।

जप करने के लिये सूर्यमन्त्र

(१) 'ॐ श्री सूर्याय नमः'। सारदा तिलक तथा मन्त्रमहार्णव में मन्त्र दूसरा इस प्रकार लिखा है—(२) 'ॐ ह्रीं कृशः सूर्य आदित्यः श्रीम्'—दोनों में से किसी भी मन्त्र का जप कर सकते हैं ।

भगवान् सूर्यनारायण की पूजन में तुलसी, बिल्वपत्र और शङ्ख का प्रयोग नहीं किया जाता है ।

भगवान् सूर्यनारायण की पूजा जहाँ से भगवान् सूर्यनारायण भली प्रकार से दिखाई देते हों, उस स्थान पर खुले हुए आकाश में भगवान् सूर्यनारायण को प्रत्यक्ष देखते हुए करें । यदि ऐसा नहीं कर सकें तो भगवान् सूर्यनारायण की प्रतिमा (मूर्ति) की तथा उनके चित्र की भी पूजा की जा सकती है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सूर्य भगवान् के दर्शन, ध्यान और अर्घ्य के समय इस प्रकार समझना चाहिये कि हम भगवान् का साक्षात् दर्शन और स्वागत कर रहे हैं। इस प्रकार पूजा में प्रत्येक बात को भली प्रकार से समझ कर पद-पद पर प्रेम मुग्ध होना चाहिये, एवं मन में इस बात का दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि प्रेम और आदर पूर्वक समय पर सूर्य भगवान् की उपासना करते-करते, हम उनकी कृपा से अवश्य ही अपने कार्य की सिद्धि तथा उनके परमधाम को प्राप्त कर सकेंगे। क्योंकि प्रेमी और श्रद्धालु, उपासक द्वारा की हुई उपासना भगवान् अवश्य स्वीकार करते हैं। ईशोपनिषद् में भी लिखा है—उपासक मरणकाल में परमधाम में जाने के लिये सूर्य भगवान् से प्रार्थना करता है—

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वम्पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये॥

(ईशोपनिषद्)

हे सूर्य! सत्यस्वरूप आपका जो मुख सुवर्णसदृश देदीप्यमान पात्र द्वारा ढका हुआ है, उस तेजोमण्डल को आप खोलिये, जिससे आपकी उपासना द्वारा मुझे आप सत्य धर्म वाले ब्रह्म के दर्शन हों।'

ॐ भगवान् सूर्यनारायणाय नमः।

भगवान् श्रीराम के परमभक्त हनुमानजी की पूजा-विधि

सोपान ४

[पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।]

यो वै चैकादशो रुद्रो हनुमान् स महाकपिः।
अवतीर्णः सहायार्थं विष्णोरमिततेजसः॥

(स्कन्दपुराण माहे० ८।१९।१००)

'ग्यारहवें रुद्र ही अमित तेजस्वी विष्णु की सहायता के लिये महाकपि हनुमानजी के रूप में अवतरित हुए।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चैत्रे मासि सिते पक्षे हरिदिन्यां मघाभिधे ।
नक्षत्रे स समुत्पन्नो हनुमान् रिपुसूदनः ॥
महाचैत्री पूर्णिमायां समुत्पन्नोऽञ्जनीसुतः ।
वदन्ति कल्पभेदेन बुधा इत्यादि केचन ॥
(आनन्द रामायण, सारका. के.१३।१६२-१६३)

'चैत्रशुक्ल एकादशी के दिन मघानक्षत्र में शत्रुसूदन श्रीहनुमानजी का जन्म हुआ था। कुछ विद्वान् कल्पभेद से चैत्र की पूर्णिमा के दिन श्रीहनुमानजी का शुभ-जन्म बतलाते हैं।'

श्रीहनुमानजी के जन्म चरित्र स्वरूप और रूप पर वेदों, उपनिषदों, पुराणों तथा भक्ति-साहित्य में साङ्गोपाङ्ग विवेचन उपलब्ध है तथा इन्हीं के विषय में स्वतन्त्र रूप में ही सैकड़ों ग्रन्थों की रचना है। श्रीहनुमानजी साक्षात् परब्रह्म हैं और वे रुद्ररूप में प्रकट महादिव्य शक्ति के भागवत ज्योति के प्रतीक हैं। वे ॐ स्वरूप हैं, परम उपास्य हैं। ॐ कार में मकार उन्हीं का रूप है, और मकार शिव का वाचक है—

मकाराक्षरसम्भूतः शिवस्तु हनुमान् स्मृतः ।
(तारसारोपनिषद् २।२)

'श्रीराम की दास्य-भक्ति के सम्पूर्ण रसास्वादन के लिये ही परब्रह्म रुद्र हनुमानजी के रूप में प्रकट हुए।'

श्रीहनुमानजी का दर्शन, चरित्रगान, पठन-पाठन, उपासना, अर्चना, चिन्तन मनन आदि उन्हीं की कृपा द्वारा ही हो सकता है। भगवान् सीतारामजी के चरण कमलों की भक्ति-उपासना तो श्रीहनुमानजी के अनुग्रह और प्रसन्नता से ही प्राप्त होना सम्भव है। भगवान् सीतारामजी के अवतार चरित्रों में श्रीहनुमानजी की अविच्छिन्न प्रमुख भूमिकाएँ हैं। यह पुस्तक भगवान् विष्णु के अवतार चरित्रों की वाङ्मयी पूजा के रूप में लिखी गई है। अतः सूक्ष्मरूप में उनका स्मरण नमन करते हुए उनकी एक संक्षिप्त पूजा पद्धति लिखी जा रही है। श्रीहनुमानजी की उपासना, पूजा दो ध्यान स्वरूपों में की जाती है—

(१) श्री रामभक्त हनुमान, (२) श्रीमहावीर हनुमान।

श्री रामभक्त हनुमानजी का ध्यान

तप्तचामीकरनिभं भीघ्नं संविहिताञ्जलिम् ।
चलत्कुण्डलदीप्तास्य पद्माक्षं मारुतिं स्मरेत् ॥

जिनकी दिव्य कान्ति तपाये हुए सुवर्ण के समान है, जो भय का नाश करने वाले हैं, जिन्होंने अपने प्रभु (श्रीराम) का चिन्तन करके उनके लिये अञ्जलि

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बाँध रखी है, जिनका सुन्दर मुख हिलते हुए कुण्डलों से उद्भासित हो रहा है तथा जिनके नेत्र कमल के समान शोभायमान हैं।'

श्रीमहावीर हनुमानजी का ध्यान

उद्यत्कोटयर्कसंकांश जगत्प्रक्षोभकारकम्।
श्रीरामाङ्घ्रिध्याननिष्ठं सुग्रीवप्रमुखार्चितम्॥
वित्रासयन्तं नादेन राक्षसान् मारुतिं भजेत्।

(नारदपुराण पू. अध्या. ७४।९-१०)

'उदयकालीन करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी हनुमानजी सम्पूर्ण जगत् को क्षोभ में डालने की शक्ति रखते हैं, सुग्रीव आदि प्रमुख वानर वीर उनका समादर करते हैं। वे राघवेन्द्र श्रीराम के चरणारविन्दों के चिन्तन में निरन्तर संलग्न हैं और अपने सिंहनाद से सम्पूर्ण राक्षसों को भयभीत कर रहे हैं। ऐसे पवनकुमार हनुमानजी का भजन करना चाहिये।'

उपर्युक्त दोनों ध्यानों में से पूजक अपनी इच्छानुसार ध्यान करे, तत्पश्चात् पूजा करे। जिस प्रकार ध्यान करे, उसी प्रकार की मूर्ति या चित्र की पूजा करना चाहिये। पूजक मन्दिर में स्थापित मूर्ति के सामने बैठे या अपनी इच्छानुसार कोई चित्र मूर्ति किसी काष्ठ (लकड़ी) के पट्टे को धोकर स्वच्छ कर उस पर लाल कपड़ा बिछाकर स्थापित करे, इसके बाद ध्यान कर उनकी पूजा करे। यदि चित्र की पूजा करे तो द्रव पदार्थों को उनके सामने एक पात्र रखकर उसमें छोड़ें। यदि मन्दिर में स्थापित हनुमानजी की पूजा करें तो पूजा से पहले ध्वजा भी चढ़ावें।

पूजा विधि

आवाहन	ॐ हनुमते नमः	आवाहनम्।
आसन	ॐ हनुमते नमः	आसनं समर्पयामि।
पाद्य	ॐ हनुमते नमः	पाद्यं समर्पयामि।
अर्घ्य	ॐ हनुमते नमः	अर्घ्यं समर्पयामि।
आचमन	ॐ हनुमते नमः	आचमनीयं समर्पयामि।
स्नान	ॐ हनुमते नमः	स्नानं समर्पयामि।
पञ्चामृत स्नान	ॐ हनुमते नमः	पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।
शुद्धोदक स्नान	ॐ हनुमते नमः	शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि।
उद्वर्तन	ॐ हनुमते नमः	तिलतैलमिश्रितसिन्दूरं समर्पयामि।
		या घृतमिश्रितसिन्दूरं समर्पयामि।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सिन्दूर को तिल के तैल या गोघृत में मिलाकर श्री हनुमानजी के सर्वाङ्ग में लेपन करना श्रीहनुमानजी की पूजा का मुख्य उपचार है। इससे श्रीहनुमानजी शीघ्र प्रसन्न होते हैं। इसका कारण है लङ्का-विजय के पश्चात् जब रामचन्द्रजी ने सुग्रीवादि को पारितोषिक प्रदान किये, उस समय श्रीसीताजी ने श्रीहनुमानजी को एक बहुमूल्य मणियों की माला प्रदान की थी, किन्तु उसमें श्री राम-नाम न होने से वे उदासीन ही रहे। तब सीताजी ने उन्हें अपने सीमन्त का (अपनी माँग का) 'सिन्दूर' प्रदान कर कहा—'यह मेरा मुख्य सौभाग्य चिह्न है, इसको मैं धन-धाम और सर्वप्रकार के रत्नादि से भी अधिक प्रिय व मूल्यवान् मानती हूँ, अतः इसको तुम सहर्ष स्वीकार करो।' तब श्री हनुमानजी ने सिन्दूर को स्वीकार किया। इसी हेतु श्रीहनुमानजी के उपासक श्रीहनुमानजी के सर्वाङ्ग में तिल-तैल मिश्रित या घृत मिश्रित सिन्दूर का लेप करते है। और मन्त्र शास्त्राधार से यह आकर्षक भी है।

वस्त्र ॐ हनुमते नमः वस्त्रं समर्पयामि।

श्री हनुमानजी को लाल, पीले रंग का वस्त्र समर्पण करना चाहिये।

यज्ञोपवीत ॐ हनुमते नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

गन्ध ॐ हनुमते नमः गन्धं समर्पयामि।

श्रीहनुमानजी को शुद्ध केसर के साथ घिसा हुआ मलयगिरि चन्दन या लाल चन्दन का लेप समर्पण करना चाहिग।

अक्षत ॐ हनुमते नमः अक्षतान् समर्पयामि।

पुष्प ॐ हनुमते नमः पुष्पाणि समर्पयामि।

श्रीहनुमानजी की पूजा में पुरुषवाची नामवाले लाल-पीले गम्भीर और दीर्घकाय पुष्प जैसे—कमल, केवड़ा, हजारा और सूर्यमुखी आदि अर्पण करें।

पुष्प माला ॐ हनुमते नमः पुष्पमालां समर्पयामि।

धूपं ॐ हनुमते नमः धूपमाघ्रापयामि।

तुलसीपत्र ॐ हनुमते नमः तुलसी पत्र-तुलसी मञ्जरीम् समर्पयामि।

तुलसीपत्र तथा तुलसी मञ्जरी को श्री हनुमानजी के मस्तक पर चढ़ाना चाहिये। चरणों पर नहीं चढ़ाना चाहिये। तुलसीपत्रों पर चन्दन से 'राम' नाम लिखकर चढ़ाने का अधिक माहात्म्य है। यदि हो सके तो आषाढ़ शुक्लैकादशी (देवशयनी) से कार्तिक शुक्लैकादशी (देव-प्रबोधनी) तक (१२१) दिनों में प्रतिदिन तुलसी-पत्रों पर कदम वृक्ष की लकड़ी (काष्ठ) की कलम बनाकर अष्टगन्ध (चन्दन, अगरु, कर्पूर, तमाल, नेत्रवाला, केसर, लालचन्दन और कूट की लकड़ी) इन सबको घिस कर चन्दन की तरह लेप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तैयार कर उससे 'राम' नाम लिख कर उनकी पूजा करें। पूजन करने के पश्चात् ॐ हनुमते नमः इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए एक-एक पत्र को श्री हनुमानजी के मस्तक पर चढ़ावें। इस प्रकार से तुलसीपत्र श्रीहनुमानजी को समर्पण करने से अनेक प्रकार के अनिष्ट दूर होते हैं। वाञ्छित शुभ कार्यों की सिद्धि प्राप्त होती हैं।

दीप ॐ हनुमते नमः दीपं दर्शयामि। हस्त प्रक्षालनम्।

पूजा समय के अतिरिक्त सायंकाल तिल तैल में रुई की बत्ती भिगोकर श्री हनुमानजी को दीपक समर्पण करना चाहिये। श्रीहनुमानजी को दीपदान करने के विषय में बहुत बड़ा प्रकरण है। उसमें दीपदान द्वारा ही अनेक प्रकार की कामना सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। इस विषय को पूर्णरूप से देखना चाहें, वे नारद पुराण पूर्वभाग-तृतीयपाद अध्याय ७४-७५ को देख लेवें।

नैवेद्य ॐ हनुमते नमः नैवेद्यं निवेदयामि।

श्रीहनुमानजी को नैवेद्य में गुड़, नारियल का गोला, लड्डू, गुड़ के साथ गोघृत मिला हुआ गेहूँ की रोटी का चूरमा, गाय के घृत में भिगोया हुआ रोट तथा वाटी, गुड़ तथा चीनी मिला कर बनाया हुआ गुलगुला, गुड़ मिलाया हुआ चना, चने के वेसन (आटे) में मिर्च मसाले डालकर बनाये हुये पकोड़े-पकोड़ी, जो तिल के तैल में पकाये हुए हों, समर्पण करें। इसी प्रकार के पदार्थों का लगाया हुआ भोग (प्रसाद) पावें तथा बाँटें। हो सके तो मंगलवार को एकभुक्त व्रत करें, भोजन में यही प्रसाद पावें।

मध्ये पानीय ॐ हनुमते नमः मध्ये पानीयं समर्पयामि।
हस्त प्रक्षालनम्।

फल ॐ हनुमते नमः फलं समर्पयामि।

श्रीहनुमानजी को आम, अमरूद, केला आदि पुल्लिङ्ग वाचक फल समर्पण करें।

पुनः-आचमनीय ॐ हनुमते नमः पुनः-आचमनीयं समर्पयामि।

ताम्बूल ॐ हनुमते नमः ताम्बूलं समर्पयामि।

शुद्ध पवित्र योग्य विधि द्वारा अच्छे उत्तम पान, सुपारी, कत्था, इलायची, लवङ्ग, कर्पूर, पीपरमेण्ट आदि मसाले द्वारा बनाया हुआ पान का उत्तम सुन्दर बीड़ा समर्पण करें।

दक्षिणा ॐ हनुमते नमः द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

आरती

आरती अथवा किसी पात्र में कुछ चावल रखकर उस पर कर्पूर रखें फिर कर्पूर को प्रज्वलित करके आरती करें या गोघृत में शुद्ध रूई की बत्ती एक या

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाँच भिगोकर उन्हें प्रज्वलित करके करें। ऐसी बत्तियाँ ११, ५१, १०८ संख्या में भी रखकर आरती अपनी इच्छा व श्रद्धानुसार सकते हैं। आरती चरणों की चार बार, नाभि की दो बार, मुख की एक बार या तीन बार तथा सर्वाङ्ग की सात बार करें। इसके पश्चात् एक पात्र में जल भर कर उस पात्र द्वारा भी इसी प्रकार से आरती करें। फिर उस पात्र में से श्रीहनुमानजी के बायें, दायें तीन-तीन बार थोड़ा-थोड़ा जल छोड़ें। फिर आरती के साथ जो घन्टा बजायें उस पर भी कुछ जल छोड़ें। तत्पश्चात् उस पात्र में से भक्तों पर भी जल के छीटे देवें। तदनन्तर भक्त उपासकों को उस प्रज्वलित आरती में हाथ ताप कर अपने मस्तक पर लगाना चाहिये।

श्री हनुमानजी की आरती गायन

आरती कीजै हनुमानजी लला की। दुष्टदलन रघुनाथ कला की। टेक।
जाके बल से गिरवर काँपै। रोग दोष जाके निकट न झाँपै।
अंजनिपुत्र महाबलदाई। संतन के प्रभु सदा सहाई।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सिया सुधि लाये।
लंका-सो कोट समुद्र-सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।
लंका जारि असुर संहारे। सीतारामजी के काज सँवारे।
लक्ष्मण मूर्च्छित पड़े सकारे। आनि सजीवन प्रान उबारे।
पैठि पताल तोरि जम-कारे। अहिरावन की भुजा उखारे।
बायें भुजा असुरदल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जज जय जय हनुमान उचारें।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरति करत अंजना माई।
जो हनुमान की आरती गावै। बसि बैकुंठ परम पद पावै।

आरती करते समय शङ्ख, रणसींगा, विजयघंटा, नंगारा, घड़ावल आदि बाजे बजाने चाहियें।

पुष्पाञ्जलि	ॐ हनुमते नमः	पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।
प्रदक्षिणा	ॐ हनुमते नमः	चार बार प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करें।
साष्टांग प्रणाम	ॐ हनुमते नमः	लेट कर दण्डवत् प्रणाम करें।

सामने खड़े होकर हाथ जोड़कर वन्दना करें।

वन्दना

मंगल-मूरति मारुत-नन्दन। सकल-अमंगल-मूल-निकन्दन।
पवन-तनय सन्तन-हितकारी। हृदय विराजत अवध-विहारी।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मातु-पिता, गुरु, गनपति सारद । सिवा-समेत संभु, सुक-नारद ।
चरन बंदि बिनवौं सब काहू । देहु रामपद-नेह निबाहू ।
बंदौं राम-लखन-बैदेही । जे तुलसी के परम सनेही ।

इसके पश्चात् चरणामृत, प्रसाद ग्रहण कर हाथ धो लेवें ।

श्री हनुमानजी के प्रसन्नतार्थ हनुमान चालीसा, बजरंगबाण का पाठ करें । तुलसीकृत रामायण, केवल सुन्दरकाण्ड, वाल्मीकीय रामायण, केवल सुन्दरकाण्ड तथा अन्य किसी भी रामायण का पाठ करें । श्लोकबद्ध रामायण का पाठ करने में श्लोक के 'रां रामाय नमः' का सम्पुट लगाने से श्रीहनुमानजी शीघ्र प्रसन्न होते हैं । अपनी रक्षा और अभीष्ट-लाभ के लिये नीचे लिखे हुए किसी श्लोक का सम्पुट देकर पाठ करें ।

मर्कटेश महोत्साह सर्वशोकविनाशन ।
शत्रून् संहर मां रक्ष श्रियं प्रयच्छ मे प्रभो ।।

हे वानराधीश ! महान उत्साही, सब प्रकार के शोकों का नाश करने वाले प्रभो ! मेरे शत्रुओं का नाश करो, मेरी रक्षा करो और मुझे लक्ष्मी प्रदान करो ।

शत्रुनिवारण, आत्मसंरक्षण और सम्प्राप्ति के लिये निम्न श्लोकों का सम्पुट देकर पाठ करें ।

जयत्यतिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबल ।
राजा जयति सुग्रीवो राघवेणाभिपालितः ।।

अत्यन्त बलवान् भगवान् श्रीराम तथा महाबली लक्ष्मण की जय हो । श्रीरघुनाथजी द्वारा सुरक्षित राजा सुग्रीव की जय हो ।

दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।
हनुमान्शत्रुसैन्यानां निहन्ता मारुतात्मजः ।।

'मैं अनायास ही महान् पराक्रम करने वाले कोसल नरेश श्री रामजी का दास हूँ । मेरा नाम हनुमान है । मैं वायु का पुत्र हूँ और शत्रुसेना का संहार करने वाला हूँ ।'

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ।।

इसी प्रकार से रामचरितमानस का पाठ करते समय निम्न सम्पुट लगाकर पाठ करें ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

जय रघुनन्दन जय सियाराम । जानकी बल्लभ सीताराम ।

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदि माला द्वारा जप करना हो तो 'ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय महा-बलाय स्वाहा' इस मन्त्र का जप करें।

अधिक जिज्ञासा हो तो रामायण, नारदपुराण, हनुमदुपासना कल्पद्रुम, मन्त्र संग्रह, मन्त्र महोदधि, मन्त्र महार्णव, अनुष्ठानप्रकाश, तथा इस प्रकार के अनेक ग्रन्थ हैं, उनमें देखना चाहिये।

आदिनारायणं विष्णुं ब्रह्माणं च वसिष्ठकम्।
श्री रामं मारुतिं वन्दे रामदासं जगद्गुरुम्॥

पाञ्चजन्य (दक्षिणावर्त) शङ्ख परिचय माहात्म्य, पूजा-विधि

सोपान ५

भगवान् विष्णु की चतुर्भुज प्रतिमाओं (मूर्तियों) के चित्रों में एक हाथ में शङ्ख दिखायी देता है। इस शङ्ख का नाम पाञ्चजन्य है, यह दक्षिणावर्त होता है। साधारणतया आप-हम सब ही मन्दिरों में अथवा शङ्ख विक्रय करने वाले दूकानदार व्यापारियों के पास विविध प्रकार की आकृति व रंगों में देखते हैं। उनको यदि हम अपने हाथों में लेकर सीधे रूप में रखें तो उस शङ्ख का खुला हुआ भाग बायीं ओर होगा। किन्तु जिसको पाञ्चजन्य कहा जाता है, उसको यदि अपने हाथों में लेकर सीधे रूप में रखें तो उस शङ्ख का खुला हुआ भाग दायीं ओर होगा। इसको ही दक्षिणावर्त शङ्ख कहा जाता है। यही भगवान विष्णु के हाथ में होता है। इसकी भगवान् विष्णु के आयुधों में गणना की जाती है।

ऐसे शङ्ख अलभ्य तो नहीं, किंन्तु हजारों शङ्खों में ढूँढने पर कोई प्राप्त हो जाता है। इसको महामाङ्गलिक, शुभफलप्रदायक, सर्वकार्य सिद्धि प्रदान करने वाला माना गया है।

इस प्रकार का पाञ्चजन्य (दक्षिणावर्त) शङ्ख किसी को किसी विशेष दशा में प्राप्त हो जाता है तो भी पहले तो उसके वास्तविक होने न होने की बड़ी आशंका बनी रहती है और फिर मन्त्रों द्वारा सिद्धि की साधना की विधि का पूर्ण ज्ञान नहीं होने से इसका लाभ भी नहीं प्राप्त किया जा सकता। अतएव इसका परिज्ञान,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

माहात्म्य, उपयोग एवं साधना के लिये सम्पूर्ण परिचयात्मक विवरण जो हमको एक विद्वान् महात्मा द्वारा प्राप्त हुआ था, इसे सर्वसाधारण के लाभार्थ लिखा जा रहा है।

श्री गणेशाय नमः

अथ श्री दक्षिणावर्त शङ्ख लक्षण पूजनादिकम्।

अस्य परीक्षा —शीतले च जले क्षिप्तः शीर्यते दिन पञ्चकात्।
कृत्रिमश्चेद् भवेत्कंबुः परीक्षेयं यथास्थिति॥
शुभाशुभ समायातः स्वयं यच्छति पूजितः।
वर्णेन दधितुल्योऽसो प्रशस्तो वा घृतोपमः॥
दक्षिणावर्त शंखोऽयं धूम्रवर्णस्तु शंखिनी।
शंखोऽसावुत्तमो ज्ञेयः पञ्चगद्याणकाधिकः॥ ❀
चतुर्गद्याणको मध्यस्ततो हीनः कनिष्ठकः।
प्रमाणतः फलं ज्ञेयमुत्तमं मध्यमाधमम्॥

दक्षिण-शंख प्रयोगः—दक्षिणावर्त शंखोऽयं यस्य सद्मणि तिष्ठति।
मङ्गलानि प्रवर्तन्ते तस्य लक्ष्मी स्वयं स्थिरा॥
काञ्चनी मेखला कृत्वा शुचिस्थाने निधापयेत्।
शुचिस्तं पूजयेन्नित्यं कुसुमैश्चन्दनैस्तथा॥
दुग्धेन स्थापनीयोऽयं नैवेद्यैस्तोषयेत्सदा।
दक्षिणावर्त शंखोऽयं सर्वलक्ष्मीफलप्रदः॥

अथ संकल्पः।—अद्याद्य अमुक वर्षे अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरे शुभ नक्षत्र करण योग लग्ने अमुक गोत्रोत्पन्नोऽहं .....अमुक नामाहं.....शर्माहं, वर्माहं, गुप्तोऽहं मम मनोवांच्छितकार्यसिद्धार्थे हिरण्य, धन, धान्य, गो, दासी, वाहनादि सर्वापिच्छान्ति पूर्वकं स्वास्थ्य, दीर्घायु, विपुलधन, पुत्रपौत्रादि, विच्छिन्न-सन्तति वृद्धि, स्थिरलक्ष्मी, कीर्तिलाभ शत्रुपराजय, सद्बुद्धि, समृद्धि-प्राप्तये श्री दक्षिणावर्तशङ्ख-पूजनमहं करिष्ये।

पूजन मन्त्रः।—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीधरकरस्थाय पाथोनिधिजाताय श्री दक्षिणावर्तशंखायाह्रीं श्रीं क्लीं श्रीकराय पूजाय नमः। इति॥

❀ एक गद्याण (गदियाण) चार माशे के बराबर होता है और बारह माशे का एक तोला होता है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनेन मन्त्रेण अष्टोतरशतपरिमितैः १०८ जाति पुष्पैः पूजयित्वा नैवेद्यं तन्मुखाग्रे धारयेत् ॥

अथास्य ध्यानं ॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीधरकरस्थाय पाथोनिधिजाताय लक्ष्मी-सहोदराय चिंतितार्थसम्पादकाय श्री दक्षिणावर्तशंखाय श्री-कराय पूज्याय स्थिताय कामधेनुचिन्तामणि नवनिधिरूपाय चतुर्दशरत्नपरिवृताय अष्टादशमहसिद्धिसहिताय श्री लक्ष्मी देवता सहित श्री कृष्णादेवकरतललालिताय श्री शंख-निधये नमः ॥ इति ध्यानम् ॥

॥ जपं कृत्वा देवायार्पयेत् ॥

गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपं ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥

जप मन्त्र ॥ ॐ ह्रीं क्लीं ब्लूं दक्षिणमुखाय शंखनिधये समुद्रप्रभवाय शंखाय नमः ।

इमं मन्त्रं नित्यमष्टोतर शतं वा सहस्रं जपेत ।

फलश्रुतिः ॥ चन्दनागरुकर्पूरैः पूजयेद्यो गृहेन्वहम् ।
स सौभाग्ये कृष्णसमो धने स्याद् धनदोपमम् ॥
क्षीरं तस्मिन् घृतं पीत्वा नारी सूते सुतं ध्रुवम् ।
मृतवत्सा जीवपुत्राऽनपत्या स्यात्पतिन्वित ॥
॥ शौचेन श्रद्धया चैव पूजितः शुभकृतो भवेत् ।
। तयोरभावेत्व शुभप्रदा शंखः स्मृतो बुधैः ॥
॥ दक्षिणावर्तशंखेन गत्वा प्राक्स्रोतसीं नदीम् ।
[illegible] कृत्वाभिषेकं विधिवत् ततः पापैः प्रमुच्यते ॥
[illegible] दक्षिणावर्तशंखेन तिलमिश्रितोदकेन तु ।
[illegible] उदकेनाभिमात्रं तु यः कुर्यादभिषेचनम् ॥
[illegible] प्राक्स्त्रोतस्यां नरो नद्यां नारीं तत्राम्भसा प्लुता ।
[illegible] यावज्जीवकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥
[illegible] दक्षिणावर्तशंखेन नद्यास्तीर्थस्थलस्य वा ।
उदकं यः प्रतीच्छेत शिरसा हृष्टमानसः ॥
तर्पयति पितरस्तस्य नश्यन्ति पातिकानि च ।
न शंखेन पिवेत्तोयं न हन्यान्मत्स्यशूकरौ ॥
[illegible] दक्षिणावर्तशंखाय तोयेन चार्चयेद्धिरम् ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सप्तजन्मकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ।।
दक्षिणावर्त शखस्तु कुर्यादायुयशोधनम् ।
तेनैव शिरसा यस्तु श्रद्धधानः प्रतोच्छति ।।
वारि हित्वा स पापानि पुण्यमाप्नोति मानवः ।
वृत्तत्वस्निग्धताच्छत्व शंखस्येति गुणत्रयं ।।
आवर्तभङ्ग दोषो हि हेनयोग विनश्यति ।
द्विजाति जाति भेदेन सः पुनस्तु चतुर्विधः ।।
श्वेतो रक्तः पीतकृष्णे ब्रह्मक्षत्रादिवर्णनाः ।
शङ्खशब्दो भवेद्यत्र तत्र लक्ष्मीश्च सुस्थिता ।।
स स्नातः सर्वतीर्थेषु यः स्नातः शङ्खवारिणा ।
शंखे हरेरधिष्टानं यत्र शंखस्ततो हरिः ।।
तत्रैव सततं लक्ष्मीर्दूरीभूतममङ्गलम् ।
स्त्रिशूद्रैश्च कृतैः शंखध्वनिभिश्च विशेषतः ।।
भीता रुष्टा याति लक्ष्यःस्थलमन्यत्स्थलात्ततः ।।

इति श्री दक्षिणावर्त शंख लक्षण पूजनादिकम् सम्पूर्णः ।

भगवान् विष्णु, लक्ष्मीनारायण, शेषशायी, वराह, नृसिंह, श्रीराम, श्रीकृष्ण, सत्यनारायण, शालग्राम, लड्डूगोपाल, बालमुकुन्द आदि विष्णु-स्वरूपों अवतारों की प्रतिमा (मूर्तियों) की वेदोक्त बृहत्पूजा विधि

सोपान ६

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।]

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्नानादि द्वारा पवित्र शुद्ध होकर शुद्ध वस्त्र धारण कर आसन पर बैठकर चावल, गेहूँ आदि की छोटी ढेरी बनाकर उस पर कलश में जल भर कर स्थापन करें। कलश में सर्वोषधि पञ्चपल्लव पुष्पादि रखें। श्रीफल पर लाल वस्त्र लपेट कर कलश के ऊपर स्थापित करें। श्रीगणेश, नवग्रह, षोडशमातृका, वरुण, श्रीभगवान् के वाहन, पार्षदादि विष्णुभक्तों का स्मरण कर भगवान् लक्ष्मीनारायण आदि विष्णु भगवान् के जिस अवतार स्वरूप का पूजन करना हो, उनका स्मरण ध्यान करें। तत्पश्चात् प्राणायाम करके संकल्प बोल कर (उच्चारणकर) संकल्प वाक्य के अन्त में 'ममेह जन्मजन्मान्तरे वा श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान् की प्रीति द्वारा सर्वापच्छान्तिपूर्वकं दीर्घायुर्विपुलधन पुत्रपौत्रादिअविच्छिन्न सन्तति-वृद्धि स्थिर लक्ष्मी, कीर्तिलाभ, शत्रु-पराजय, प्रमुख चतुर्विध पुरुषार्थसिद्धयर्थं, कलश स्थापनं भगवान् लक्ष्मीनारायणपूजनं तत्र निर्विघ्नतापूर्वकं पूजाकार्य सिद्धचर्थं, स्वस्तिवाचनम्, पुण्याहवाचनम्, गणपत्यादि पूजनं च करिष्ये।' (सकल्प में उच्चारण करने योग्य वाक्य इसी पुस्तक के चतुर्थ स्कन्ध की श्रीगणपतिपूजन में लिखे हैं, वहाँ देख लेवें।)—उच्चारण करके संकल्प जल छोड़ें। पश्चात् नीचे लिखे संकल्प से ब्राह्मण पण्डित का वरण करें।

केवल पूजन कराना हो, तो पूजन के ही लिये अथवा श्रीमद्भागवत, रामायणादि किसी ग्रन्थ-पुस्तकादि का पाठ कराना हो तो उसके लिये, मन्त्र जपादि कराने हों तो उसके लिये पण्डित का वरण करना होता है।

अद्य श्री भगवान् लक्ष्मीनारायण पूजनार्थं अथवा श्रीभगवान् लक्ष्मीनारायण पूजन तथा श्रीमद्भागवत, रामायण पाठ, अथवा अमुक मंत्रादि जप करणार्थं अमुक.....गोत्रोत्पन्नोऽहं.....अमुक शर्माणं ब्राह्मणं त्वामहं वृणे ।। इसके पश्चात् ब्राह्मण पण्डित 'वृतोऽस्मि' कहें।

प्रथम स्वस्तिवाचन, पुण्याहवाचन, दीपकस्थापन, गणपतिपूजन, कलश स्थापन, वरुण पूजन, नवग्रह, षोड़शमातृका, रक्षाविधान, पंचलोकपाल, दश-दिक्पाल, तथा चतु.षष्टि योगिनी का पूजन करके भगवान् विष्णु के वाहन पार्षद् उदाहरण जैसे विष्णु की पूजा हो तो गरुड़, भगवान् नृसिंह की पूजा हो तो प्रह्लाद, श्रीराम की पूजा हो तो श्री हनुमान, श्रीकृष्ण की पूजा हो तो श्री राधाजी का पूजन ध्यान प्रथम होना चाहिये। इनके ध्यान स्तुति निम्न प्रकार हैं—

श्रीगरुड़-स्तुति-ध्यान

श्रीविष्णुवाहं प्रणमामि भक्त्या सर्पासनं दुःखहरं खगेशम्।
मनोहरं वायुसमानवेगं छन्दोमयं ज्ञानघनं प्रशान्तम्।।
विष्णुप्रियाय शान्ताय बलबुद्धियुताय च।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पक्षीन्द्रायातिवेगाय गरुडाय नमोनमः ।।

गरुड गायत्री मन्त्र—'पक्षिराजाय विद्महे पक्षि देवाय धीमहि तन्नोः गरुडः प्रचोदयात् ।' (आग्नेय महापुराण अध्याय ३९५ श्लोक २७)

भक्त प्रह्लाद—ध्यान-स्तुति

प्रह्लादजी भगवान् नृसिंह से प्रार्थना कर रहे हैं । ऐसा ध्यान करें ।

सोऽहं प्रियस्य सुहृदः परदेवताया
लीला कथास्तव नृसिंहविरिञ्चगीताः ।
अञ्जास्ततर्म्यनुगृणन् गुणविप्रमुक्तो
दुर्गाणि ते पदयुगालयहंससङ्गः ।।

(श्रीमद्भागवत पुराण ७।९।१८)

श्रीहनुमान-स्तुति-ध्यान

मनोजवं मारुततुल्यवेगं, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं, श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ।।
उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं,
यः शोकवह्नि जनकात्मजायाः ।
आदाय तेनैव ददाह लङ्कां,
नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ।।

श्रीराधा-ध्यान-स्तुति

त्वं देवी जगतां माता विष्णुमाया सनातनी ।
कृष्णप्राणाधिदेवी च कृष्णप्राणाधिका शुभा ।।
कृष्णप्रेममयी शक्तिः कृष्णसौभाग्यरूपिणी ।
कृष्णभक्तिप्रदे राधे नमस्ते मङ्गलप्रदे ।। (ब्रह्मवैवर्त पु०प्र०अ० ५५।४४-४५)

इनके ध्यान स्मरण पूजन के पश्चात् भगवान् विष्णु के जिस स्वरूप प्रतिमा की पूजा हो, उन्हीं भगवान् विष्णु, नृसिंह, श्रीराम, तथा श्रीकृष्ण आदि के अनेक ध्यान स्तुति इसी पुस्तक के स्कन्ध (१) सोपान (१) मङ्गलाचरणाध्याय में तथा स्कन्ध (३) सोपान (१) विष्णु-तत्त्व विवेचन में लिखे हैं । उनमें से ग्रहण कर ध्यान स्मरण करे ।

यहां एक ध्यान लिख रहे हैं—

सशङ्खचक्रं सकिरीट कुण्डलं,
सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सहारवक्षः स्थलकौस्तुभश्रियं
नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ।।

भगवान् विष्णु का इस प्रकार से नमन, स्मरण, ध्यान करने के पश्चात् प्रधान देवता का पूजन आरम्भ करें।

पूजन-विधि

शालग्राम और प्रतिष्ठा की हुई प्रतिमा (मूर्तियों) में आवाहन नहीं करें। केवल पुष्प छोड़ें।

(१) आवाहन—ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
सभूमिं सर्वतः स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।। (आवाहनम्)

(२) आसन—ॐ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।। (आसनं समर्पयामि)

(३) पाद्य—ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ।। (पाद्यं समर्पयामि)

(४) अर्घ्य—ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ।। (अर्घ्यं समर्पयामि)

(५) आचमन—ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ।।
(आचमनं समर्पयामि)

(६) स्नान—ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशुस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ।। (स्नानं समर्पयामि)

(७) दुग्ध—ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।। (दुग्धस्नानं समर्पयामि)

(८) दधि—ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयूंषि तारिषत्। (दधिस्नानं समर्पयामि)

(९) घृतस्नान—ॐ घृतङ्घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः।
पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा दिशः आदिशो
विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ।। (घृतस्नान समर्पयामि)

(१०) मधु स्नान—ॐ मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः
सन्त्वोषधीः। मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः।
मधुद्यौरस्तु नः पिता ।। मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमांअस्तु
सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः ।। (मधुस्नानं समर्पयामि)

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(११) शर्करा स्नान—ॐ अपां रसमुद्वयसं सूर्ये सन्त समाहितम् ।
अपां रसस्य यो रसस्तं वो गृहणाम्युत्तममुपयाम
गृहतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृहणाम्येष ते योनिरि-
न्द्राय त्वा जुष्टतमम् ॥ (शर्करास्नानं समर्पयामि)

(१२) पञ्चामृत स्नान—ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः ।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥
(पञ्चामृतं समर्पयामि)

(१३) शुद्धोदक स्नान – कावेरी नर्मदा वेणी तुङ्गभद्रा सरस्वती । गङ्गा च
यमुना चैव ताभ्यः स्नानार्थमाहृतम् ॥ गृहाण त्वं
रमाकान्त स्नानाय श्रद्धया जलम् ॥ (शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि)

(१४) वस्त्र—ॐ तस्मा द्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दांसि
जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ (वस्त्रं, उपवस्त्रं समर्पयामि)

(१५) यज्ञोपवीत—ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः गा वोह जज्ञिरे
तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥ (यज्ञोपवीतं समर्पयामि)

(१६) मधुपर्क—दधि मध्वाज्य संयुक्तं पात्रयुग्म समन्वितम् । मधुपर्कं गृहाण
त्वं वरदो भव शोभन ॥ मधुपर्कं समर्पयामि पुनः शुद्ध आचमनीयं समर्पयामि)

(१७) गन्ध—ॐ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ।। (गन्धं समर्पयामि)

अक्षत—(श्वेत तिल चढ़ावें किन्तु चावल न चढ़ावें)

(१८) अक्षत—ॐ अक्षन्न मिमदन्त ह्यवप्रिया अधूषत प्रस्तोषतस्वभानवो
विप्रा न विष्टया मतियो जान्विन्द्र ते हरि ।। (अक्षतं समर्पयामि)

(१९) पुष्प—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ।
समूढ़मस्य पांसुरे स्वाहा ।। (पुष्पं समर्पयामि)

(२०) पुष्प माला—ॐ औषधीः प्रतिमोदध्वम्पुष्पवतीः प्रसुवरीः । अश्वाइव
सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ।। (पुष्पमाला समर्पयामि)

(२१) तुलसी पत्र—ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहू किमुरुपादा उच्येते ।।१
तुलसी हेमरूपां च रत्नरूपाञ्च मञ्जरीम् ।
भव मोक्षप्रदा तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् ।।२
ब्रह्मन्नस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।।३ (तुलसीपत्रं मञ्जरीं समर्पयामि)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(२२) बिल्वपत्र—तुलसी विल्वनिम्बैश्च जंबीरैरामलैः शुभैः।
पञ्चबिल्वमिति ख्यातं प्रसीद परमेश्वर ॥ (बिल्वपत्रं समर्पयामि)

(२३) दुर्बा—विष्णुवादिसर्वदेवानां दूर्वे त्वं प्रीतिदा सदा।
क्षीर सागरसंभूते वंशवृद्धिकरी भव ॥ (दुर्वा कुरान् समर्पयामि)

(२४) शमीपत्र—शमी शमयते पापं शमी शत्रुविनाशिनी।
धारिण्यर्जुनबाणानां रामस्य प्रियवादिनी। (शमीपत्रं समर्पयामि)

(२५) आभूषण—ॐ रत्नकङ्कण वैदूर्य मुक्ताहारादिकानि च।
सुप्रसन्नेन मनसा दत्तानि स्वीकुरुष्व भोः॥
(आभूषणं समर्पयामि)

(२६) अबीर गुलाल—नानापरिमलैर्द्रव्यै निर्मितं चूर्णमुत्तमम्।
अबीरनामकं चूर्णं गन्धं चारु प्रगृह्यताम्॥
(अबीर गुलाल समर्पयामि)

(२७) सुगन्ध तैल—ॐ तैलानि च सुगन्धीनि द्रव्याणि विविधानि च।
मया दत्तानि लेपार्थं गृहाण परमेश्वर॥
(सुगन्ध तैलं समर्पयामि)

(२८) धूप - ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥१
ॐ धूरसि धूर्व धूर्वं तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्वयं
वयं धू र्वामः देवानामसि वह्नितमं सस्नितमं पप्रितमं
जुष्टतमन्देवहूतमम् ॥२ (धूपमाघ्रापयामि)

(२९) दीप—ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥
(दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्)

(३०) नैवेद्य—(तुलसी नैवेद्य में छोड़कर मुद्रा दिखावे, अन्तः पट देकर भोग लगावें)

(१) यथा शक्ति अनेक प्रकार के मिष्टान्न भोग लगावें।

(२) भगवान् सत्यनारायण की पूजा, कथा करें तो गेहूँ के आटे की पञ्जीरी, हलवा अवश्य भोग लगावें।

मुद्रा—"प्राणाय स्वाहा"—कनिष्ठा, अनामिका और अंगूठा मिलावे ॥१
" —"अपानाय स्वाहा"—अनामिका, मध्यमा और अंगूठा मिलावे ॥२
" —"व्यानाय स्वाहा"—मध्यमा, तर्जनी और अंगूठा मिलावें ॥३
" —"उदानाय स्वाहा"—तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और अंगूठा मिलावें ।४।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मुद्रा—"समानाय स्वाहा"—तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा तथा अंगूठा मिलावें ॥५

भोग-समय मन्त्रोच्चारण

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत। पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां ३ अकल्पयन्। यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वतः। वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः। सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिःसप्त समिधः कृतः। देवा यद्यज्ञन्तन्वाना अवध्नन्पुरुषम्पशुम्। यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। ते ह नाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः। अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्तताग्रे। तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानसग्रे। वेदाहमेतम्पुरुषम्महान्तमादित्यवर्णन्तमसः परस्तात्। तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय। प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते। तस्य योनिम्परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा॥ यो देवेभ्य आतपति यो देवानाम् पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रूचाय ब्राह्मये। रुचम्ब्राह्मज्जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन्। यस्त्वैवम्ब्रह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे। श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणमुं मइषाण सर्वलोकम्म इषाण। (नैवेद्यं निवेदयामि)

(३१) मध्ये पानीय—एलोशीर लवङ्गादि कर्पूर परिवासितम्।
प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर॥
(मध्ये पानीयं समर्पयामि)

(३२) ऋतुफल—वीजपूराम्र-पनस खर्जूरीकदलीफलम्।
नारिकेलफलं दिव्यं गृहाण परमेश्वर॥ (ऋतुफलं समर्पयामि)

(३३) आचमन—कर्पूरवासितं तोयं मन्दाकिन्या समाहृतम्।
आचम्यतां जगन्नाथ मया दत्तं हि भक्तितः॥
(आचमनीयं समर्पयामि)

(३४) अखण्ड ऋतुफल—फलेन फलितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम्।
तस्मात् फलप्रदानेन पूर्णाः सन्तु मनोरथाः॥
(अखण्ड ऋतुफलं समर्पयामि)

(३५) ताम्बूल पूगीफल—ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्म; शरद्धविः।
(ताम्बूल पूगीफलं समर्पयामि)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(३६) दक्षिणा—पूजाफल - समृद्धयर्थं दक्षिणा च तवाग्रतः।
स्थापिता तेन मे प्रीतः पूर्णान् कुरु मनोरथान् ॥
(द्रव्य दक्षिणां समर्पयामि)

आरती—१

(३७) आरती—कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ॥

वैदिक आरती—२

ॐ ये देवासो दिव्येकादश स्थ पृथिव्या मध्येकादश स्थ ॥
अप्सुक्षितो महिनैकादश स्थ ते देवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ॥
(यजुर्वेद ७।१९)

ॐ आ रात्रि पार्थिवँ रजः पितुरप्रायि धामभिः।
दिवः सदाँसि बृहती वितिष्ठत्स आ त्वेषं वर्तते तमः ॥
(यजुर्वेद ३४।३२)

ॐ इदँ हविः प्रजननं मे अस्तु दशवीरँ सर्वगणँ स्वस्तये।
आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि ॥ (यजुर्वेद ३४।३३)

अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त।
(यजुर्वेद १९।४८)

आरती जय जगदीश हरे—३

ॐ जय जगदीश हरे, प्रभु जय जगदीश हरे।
भक्तजनों के संकट छिन में दूर करे ॥ॐ
जो ध्यावै फल पावै, दुख विनसै मन का ॥प्रभु०
सुख-सम्पति घर आवै, कष्ट मिटै तन का ॥ॐ
मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी ॥प्रभु०
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी ॥ॐ
तुम पूरन परमात्मा, तुम अन्तर्यामी ॥प्रभु०
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी ॥ॐ
तुम करुणा के सागर, तुम पालन-कर्ता ॥प्रभु०
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता ॥ॐ
तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपती ॥प्रभु०
किस बिधि मिलूँ दयामय ! मैं तुमको कुमती ॥ॐ
दीनबन्धु दुखहर्ता तुम ठाकुर मेरे ॥प्रभु०

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे ॥ॐ
विषय-विकार मिटाओ, पाप हरो देवा ॥प्रभु०
श्रद्धा-भक्ति बढ़ाओ, संतन की सेवा ॥ॐ

आरती श्री लक्ष्मीनारायण—३

जय लक्ष्मी—विष्णो !

जय लक्ष्मीनारायण, जय लक्ष्मी-विष्णो ।
जय माधव, जय श्रीपति, जय जय जय विष्णो ॥जय०

जय चम्पा सम-वर्णे, जय नीरदकान्ते ।
जय मन्द-स्मित-शोभे, जय अद्भुत-शान्ते ॥जय०

कमल वराभय-हस्ते, शङ्खादिकधारिन् ।
जय कमलालयवासिनि, गरुडासनचारिन् ॥जय०

सच्चिन्मयकरचरणे, सच्चिन्मयमूर्ते ।
दिव्यानन्द-विलासिनि, जय सुखमयमूर्ते ॥जय०

तुम त्रिभुवन की माता, तुम सबकी त्राता ।
तुम लोक-त्रय-जननी, तुम सब की धाता ॥जय०

तुम धन-जन-सुख-सन्तति-जय देने वाली ।
परमानन्द-विधाता, तुम हो वनमाली ॥जय०

तुम हो सुमति घरों में, तुम सबके स्वामी ।
चेतन और अचेतन के अन्तर्यामी ॥जय०

शरणागत हूं, मुझ पर कृपा करो माता ।
जय लक्ष्मीनारायण नव-मङ्गल-दाता ॥जय०

आरती भगवान् सत्यनारायण—४

जय लक्ष्मीरमणा, श्री लक्ष्मीरमणा ।
सत्यनारायण स्वामी, जन-पातक-हरणा ॥जय० ।टेक

रत्नजटित सिंहासन, अद्भुत छवि राजै ।
नारद करत निराजन घण्टा ध्वनि बाजे ॥जय०

प्रकट भये कलि कारण, द्विज को दरश दियो ।
बूढ़े ब्राह्मण बनकर, कञ्चन-महल कियो ॥जय०

दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी ।
चन्द्रचूड़ एक राजा, जिनकी बिपति हरी ॥जय०

वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्ही ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सो फल भोग्यो प्रभुजी, फिर अस्तुति कीन्ही ।।जय०
भक्ति-भाव के कारण, छिन-छिन रूप धरचो ।
श्रद्धा धारण कीनी, तिनको काज सरचो ।।जय०
ग्वाल-बाल संग राजा, वन में भक्ति करी ।
मनवाञ्छित फल दीन्हो दीनदयालु हरि ।।जय०
चढ़त प्रसाद सवायो, कदली-फल, मेवा ।
धूप-दीप-तुलसी से, राजी सत्यदेवा ।।जय०
सत्यनारायणजी की आरती जो कोई नर गावे ।
तन-मन-सुख-सम्पति मन-वाञ्छित फल पावै ।।जय०

आरती भगवान् श्रीराम—६

आरती कीजै श्रीरघुवर की ।
सत चित आनन्द शिव सुन्दर की ।।टेक

दशरथ-तनय कौसिला-नन्दन,
सुर-मुनि-रक्षक दैत्य-निकन्दन,
अनुगत-भक्त भक्त-उर-चन्दन,
मर्यादा-पुरुषोत्तम-वर की ।।सत चित०

निर्गुण-सगुण अरुप-रूपनिधि,
सकल लोक-वन्दित विभिन्न विधि,
हरण शोक-भय, दायक सब सिधि,
माया रहित दिव्य नर-वर की ।।सत चित०

जानकीपति सुराधिपति जगपति,
अखिल लोकपालक त्रिलोक-गति,
विश्ववन्द्य अनवद्य अमित-मति,
एकमात्र गति सचराचर की ।।सत चित०

शरणागत - वत्सल - व्रतधारी,
भक्त-कल्पतरुवर असुरारी,
नाम लेत जग पावनकारी,
वानर-सखा-दीन-दुख-हरकी ।।सत चित०

आरती भगवान् युगलकिशोर—७

आरती युगल किशोर की कीजै, तन मन धन न्योछावर कीजै ।
गौर श्याम मुख निरखन कीजै, प्रेम स्वरूप नयन भर पीजै ।।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रवि ससि कोटि बदन की सोभा, ताहि देखि मेरो मन लोभा।
मोर मुकट कर मुरली सौहै, नटवर वेष निरख मन मोहे॥
ओढ़ें पीत नील पट सारी, कुंजन ललना-लाल बिहारी॥
श्रीपुरुषोत्तम गिरिवरधारी, आरति करत सकल ब्रजनारी।
नन्दनंदन वृषभानु-किसोरी, परमानन्द प्रभु अविचल जोरी॥

(३८) स्तुति

विष्णु-स्तुति

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं।
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम्॥
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं।
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥१

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगङ्काञ्चनम्।
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसम्भाषणम्॥
बालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्।
पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननं एतद्धिरःमायणम्॥२

आदौ देवकी देवगर्भजननं गोपीगृहे वर्द्धनम्।
मायापूतनजीवितापहरणं गोवर्द्धनोद्धारणम्॥
कंसच्छेदन कौरवादिहननं कुन्तीसुतापालनम्।
एतद्भागवतं पुराणकथितं श्रीकृष्णलीलामृतम्॥३

कस्तूरीतिलकं ललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभम्।
नासाग्रे वरमौक्तिकं करतले वेणु करे कङ्कणम्॥
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली।
गोपस्त्रीपरिवेष्टितो विजयते गोपालचूडामणिः॥४

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियम्।
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्॥
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसंघावृतम्।
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे॥५

यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुवन्ति दिव्यैः स्तवै-
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो।
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः॥६

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आदौ पाण्डवधार्तराष्ट्रजननं लाक्षागृहे दाहनम् ।
द्यूतस्त्रीहरणं वने विचरणं मत्स्यालयावेषनम् ॥
लीला गोहरणं रणे विचरणं सन्धाक्रियावर्धनम् ।
पश्चाद्भीष्मसुयोधनादिहननं एतन्महाभारतम् ॥७

श्रियः पतिर्यज्ञपतिः प्रजापतिर्धियां पतिर्लोकपतिर्धरापतिः ।
पतिर्गतिश्चान्धकवृष्णिसात्वतां प्रसीदतां मे भगवान् सतां पतिः ॥८

मत्स्याश्च कच्छपनृसिंहवराहहंसराजन्यविप्रविबुधेषु कृतावताः ।
त्वं पासि नस्त्रिभुवनश्च यथाधुनेश भारं भुवो हर यदूत्तम वन्दनं ते ॥९

सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये ।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्नाः ॥१०

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥११

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥१२

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् ।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति ॥१३

मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥१४

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥१५

पापोऽहं पाप कर्माहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष सर्व पापहरो भव ॥१६

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः ॥१७

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं ।
तीर्थास्पदं शिवविरंचिनुतं शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहं प्रणतपालभवाब्धिपोतम् ।
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् । १८

त्यक्त्वा सुदुस्त्यज सुरेप्सित राज्यलक्ष्मीं ।
धर्मिष्ठ आर्यवचसा यदगादरण्यम् ॥
मायामृगं दयितयेप्सितमन्वधावद् ।
वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥१९

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अपराधसहस्रभाजनं पतितं भीमभवार्णवोदरे ।
अगतिं शरणागतं हरे कृपया केवलमात्मसात्कुरु ॥२०

एकोऽपि कृष्णश्च कृतः प्रणामो दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः ।
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय ॥२१

(३९) पुष्पाञ्जलि

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥
ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने । नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे ॥
स मे कामान् कामकामाय मह्यम् । कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु ॥
कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ।

ॐ स्तस्ति साम्राज्यं भोज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराजमाधिपत्यमयं समन्तपर्यामी स्यात् सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति । तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्या वसन् गृहे । आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासदः । (पुष्पाञ्जलि समर्पयामि)

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरूतविश्वतःस्यात् । संबाहुभ्यां धमति संपतत्रैद्यावाभूमी जनयन्देव एकः । कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा । बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावात् । करोमि यद्यत् सकलं परस्मै । नारायणायेति समर्पयेतत् ।

(४०) प्रदक्षिणा—ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ।
तेषां सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ॥

(४१) क्षमा-प्रार्थना—मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन ।
यत्पूजितं मया देव ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ·
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ॥

(४२) दण्डवत प्रणाम—नमः सर्व हितार्थाय जगदाधारहेतवः ।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्तु प्रयत्नेन मया कृतः ॥
सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ॥

(४३) विसर्जन—यजमान हितार्थाय पुनरागमनाय च ।
गच्छन्तु च सुरश्रेष्ठा ! स्वस्थानं परमेश्वराः ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यदि किसी के घर—स्थान में किसी विष्णु स्वरूप या उनके अवतार स्वरूप प्रतिमा स्थापित हो तो उस देवता का विसर्जन नहीं करना चाहिये।

(४४) यजमान को आशीर्वाद तथा अक्षत देवे

अक्षतान् विप्रहस्तात्तु नित्यं गृह्णन्ति ये नराः।
चत्वारि तेषां वर्धंते आयुः कीर्तिर्यशोबलम् ॥
श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्य मविधात् पवमानं महीयते।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः ॥
मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णा सन्तु मनोरथाः।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ॥

तुलसी, चरणामृत, पञ्चामृत तथा नैवेद्य ग्रहण विधि

बायें हाथ पर दोहरा वस्त्र रखकर, उस पर दाहिना हाथ रखकर, उसमें तुलसी, चरणामृत, पञ्चामृत ग्रहण कर पान करें तथा नैवेद्य ग्रहण कर भक्षण करें। यह पूर्ण ध्यान रहे, कि तुलसी, चरणामृत, पञ्चामृत एवं नैवेद्य पृथ्वी पर न गिरें।

(४५) तुलसी ग्रहण-मन्त्र

पूजनानन्तरं विष्णोरपि तं तुलसीदलम्।
भक्षये देहशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणशताधिकम् ॥

(४६) चरणामृत-ग्रहण-मन्त्र

कृष्ण कृष्ण महाबाहो भक्तानामार्तिनाशनम्।
सर्वपापप्रशमनं पादोदकं प्रयच्छ मे ॥

पश्चात् नीचे लिखा हुआ मन्त्र बोलते हुए, चरणामृत पान करें।

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णु पादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

(४७) पञ्चामृत-ग्रहण-मन्त्र—दुःखदौर्भाग्यनाशाय सर्वपापक्षयाय च।
विष्णोः पञ्चामृतं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

(४८) नैवेद्य ग्रहण-मन्त्र

नैवेद्यमन्नं तुलसीविमिश्रितं विशेषतः पादजलेन विष्णोः।
योऽश्नाति नित्यं पुरतो मुरारेः प्राप्नोति यज्ञायुतकोटिपुण्यम् ॥

(४९) जप करने के लिये भगवान् विष्णु, श्रीराम. श्रीकृष्ण के मन्त्र।

(१) ॐ विष्णवे नमः। (2) ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। (३) ॐ नमो नारायणाय। (४) ॐ शं रामाय नमः। (५) श्रीरामः शरणं मम। (६) ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। (७) ॐ कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नः कृष्ण प्रचोदयात्।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(५०) पाठ करने के लिए कतिपय संकेत

(१) यदि भगवान् सत्यनारायण का व्रत या पूजा करें तो सत्यनारायण की कथा करानी चाहिए।

(२) भगवान् विष्णु, राम, कृष्ण, शालग्राम, लड्डू गोपाल आदि किसी विष्णु अवतार स्वरूपादि की पूजा करें तो उनके स्तोत्र प्रार्थनादि का पाठ वा गायन करें। श्रीमद्भागवत्, भगवद्गीता, किसी भी प्रकार की विष्णु एवं उनके अवतारों की पुराण-कथाओं तथा रामायणादि का पाठ करें। विष्णु, गोपालसहस्रनामादि का पाठ करें।

किसी कारण से उपर्युक्त इतनी बड़ी पूजा नहीं कर सकें। उनके लिए षोडशोपचार, द्वादशोपचार, पञ्चोपचार पूजा विधियाँ भी इसी पुस्तक में आगे लिखी हैं। उनको देखकर अपनी सुविधानुसार ग्रहण कर सकते हैं।

□

मन्त्र श्लोकों द्वारा षोडशोपचार पूजाविधि

सोपान ७

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है]

षोडशोपचार पूजा में निम्नलिखित सोलह उपचार प्रयोग किये जाते हैं। १—आसन, २—पाद्य, ३—अर्घ्य, ४—आचमन, ५—वस्त्र, ६—गंध, ७—चंदन, ८—अक्षत (चावल) के स्थान पर श्वेत तिल, ९—पुष्प, विल्वदत्र, तुलसी अन्य पत्र पुष्पादि, १०—धूप (अगरबती), ११—दीप, १२—पुष्पमाला, १३—नैवेद्य, ऋतु-फल, १४—जल, आचमन, १५—ताम्बूल, पूगीफल, १६—दक्षिणा।

षोडशोपचार पूजा के मन्त्र श्लोकादि वही हैं जो वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। उससे ही ग्रहण कर सकते हैं। ध्यान, आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा), पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थना, प्रणाम विसर्जनादि उसी के अनुसार करें।

□

मन्त्र श्लोकों द्वारा द्वादशोपचार पूजाविधि

सोपान ८

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।]

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्वादशोपचार पूजा में निम्नलिखत बारह उपचार प्रयोग किये जाते हैं १—आसन, २—पाद्य, ३—अर्घ्य, ४—आचमन, ५—वस्त्र, ६—चन्दन, ७—पुष्प, विल्वपत्र, तुलसी, पुष्पमालादि, ८—धूप (आरती), ९—दीप, १०—नैवेद्य, ऋतु-फल, ११—जल, आचमन, १२—भेंट, दक्षिणा।

द्वादशोपचार पूजा के श्लोक मन्त्रादि वही हैं, जो वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। उससे ग्रहण कर सकते हैं। ध्यान, आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा), पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थना, प्रणाम, विसर्जनादि उसी के अनुसार करें।

□

मन्त्र श्लोकों द्वारा पञ्चोपचार पूजा विधि

सोपान ९

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।

१—पाद्य, २—अर्घ्य, ३—आचमन, ४—पुष्प, विल्वपत्र, पुष्पमाला, तुलसी आदि, ५—नैवेद्य, दक्षिणा।

पञ्चोपचार पूजा के मन्त्र श्लोकादि वही है, जो वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। उसी से ग्रहण कर सकते हैं। ध्यान, आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा), पुष्पाञ्जलि क्षमा-प्रार्थना, प्रणाम, विसर्जनादि उसी के अनुसार करें।

□

विष्णु-स्वरूप अवतारों की प्रतिमा की हिन्दी भाषा में बृहत्पूजा विधि

सोपान १०

परम पिता भगवान् विष्णु की पूजा अनेक प्रकार से वेदों, पुराणों आदि ग्रन्थों में लिखी हुई है। किन्तु केवल हिन्दी भाषा द्वारा कोई सरल विधि ऐसी दृष्टिगोचर नहीं होती कि वेद व संस्कृत से अनभिज्ञ पूजक भी हिन्दी में परमपिता भगवान् लक्ष्मीनारायण की पूजा का लाभ प्राप्त कर सकें। अतएव सरल रूप से कुछ पूजाविधियाँ केवल हिन्दी भाषा में लिखी जा रही हैं भक्तजन इन विधियों द्वारा पूजा कर भक्ति लाभ प्राप्त करें।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कई परमपिता परमेश्वर भगवान् विष्णु के अवतार स्वरूप श्रीराम, श्रीकृष्ण, भगवान् लक्ष्मीनारायण आदि की प्रतिमा (मूर्तियों) की प्रतिदिन भक्तिभाव से अनेक प्रकार के उपचारों द्वारा पूजन करते हैं। जैसे जिसकी शक्ति व भावना हो उसी के अनुसार पूजा की जा सकती है। पूजा की मुख्य जड़ (मूल) तो परमपिता परमेश्वर भगवान् विष्णु, श्रीराम, कृष्ण आदि के प्रति भक्ति होना है।

भगवान् लक्ष्मीनारायण की पूजा विधि

पूजन करने वाला प्रातःकाल उठकर श्रीगणेशजी का अपने इष्ट देवका तथा भगवान् लक्ष्मीनारायण का स्मरण करे। फिर शौच दन्तधावन स्नानादि द्वारा शुद्ध पवित्र हो, शुद्ध पवित्र वस्त्र धारण कर आसन पर बैठे। सन्ध्या नित्य नियम करने वाला हो तो वह भी करके फिर आचमन, प्राणायाम करे। पूजन सामग्री द्रव्यादि पदार्थों को शुद्ध कर सम्हाल कर थालों में भरकर पास में रख लेवे। सबको जल का छींटा देकर पवित्र कर लेवे। फिर संकल्प करे। दाहिने हाथ में या चम्मच में पुष्प, जल, अक्षत तथा द्रव्यादि रखकर, फिर संकल्प उच्चारण करता हुआ, संकल्प वाक्य के अन्त में 'भगवान् लक्ष्मीनारायण की प्रीति द्वारा मेरी समस्त आपत्तियों की शान्ति तथा मेरे इस जन्म के, पूर्व जन्मों के समस्त पाप दोष दूर होकर, दीर्घायु, विपुलधन, पुत्र पौत्रादि की अविच्छिन्न सन्तति वृद्धि, स्थिर लक्ष्मी, कीर्तिलाभ और शत्रु पराजय, चारों प्रकार की पुरुषार्थ सिद्धि प्राप्त होने के लिये परम पिता परमेश्वर भगवान् लक्ष्मीनारायण का पूजन निर्विघ्नता पूर्वक पूर्ण होने के लिये स्वस्तिवाचन, (मङ्गल वचन) निवेदन करते हुए श्रीगणेशजी महाराज का, कलश-वरुण, नवग्रह, षोडश-मातृका, रक्षाविधान तथा वाहन, पार्षदों सहित श्रीभगवान् लक्ष्मीनारायण की प्रसन्नता हेतु यह पूजा करता हूँ।' यह उच्चारण कर जल के साथ रखे हुए पुष्प, अक्षतादि (चावल आदि) संकल्प द्रव्यों को किसी पात्र (बर्तन) में छोड़ कर हाथों को जल से धो लेवे।

दीपक-स्थापन—चावलों की एक छोटी ढेरी पर दीपक रख कर प्रज्वलित करें। घृत का दीपक हो तो बाईं ओर, तैल का दीपक हो तो दाहिनी ओर स्थापित करें। तत्पश्चात् प्रार्थना करें।

हे देवस्वरूप दीपक देव! आप कर्म के साक्षी हो, हमारे इस कर्म में कोई विघ्न न हो, इसलिये हमारे इस पूजा कार्य की समाप्ति न हो, तब तक आप यहाँ स्थिर रूप से विराजमान रहें।

श्रीगणेश-पूजन—सर्व प्रथम श्रीगणेशजी महाराज का पूजन करें। काठ के (लकड़ी के) पट्टे पर वस्त्र बिछाकर एक साबुत सुपारी पर मोली (नाल) लपेट कर चावलों की ढेरी पर गणेशजी स्वरूप उस सुपारी को स्थापित करें। श्रीगणेश

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जी महाराज का ध्यान करके उनकी प्रार्थना करें कि हे प्रभो ! आप समस्त विघ्नों का नाश करने वाले, सभी प्रकार की सफल सिद्धि प्रदान करने वाले हैं। श्रीगणेशजी महाराज ! आप पधारिये। मैं परम पिता भगवान् लक्ष्मी नारायण की पूजा करता हूँ, इसमें किसी प्रकार का विघ्न न हो, इसमें आप मेरी सहायता व रक्षा करें।

इसके पश्चात् श्रीगणेशजी के सामने चार बार जल छोड़कर, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान के लिये निवेदन करें। फिर पंचामृत हो तो पंचामृत का छींटा देकर शुद्ध स्नान निवेदन करें। फिर वस्त्र हो तो वस्त्र, नहीं तो मोली (नाल) का तीन तार वस्त्र के रूप में अर्पण करें। तत्पश्चात् गन्ध (चन्दन, रोली) तिलक अनुलेपन हेतु चढावें। फिर अक्षत (साबुत) चावल चढावें, फिर पुष्प फिर दूर्वा के अङ्कुर चढ़ावें। फिर विल्वपत्र चढ़ावें। फिर यज्ञोपवीत (जनेऊ) चढावें। जेवर (आभूषण) चढावें। जेवर (आभूषण) न हों तो पुष्पमाला व अक्षत ही चढ़ा देवें। फिर सुगन्ध तैल, इत्तर चढ़ावें। धूप अगरबत्ती जलाकर अर्पण करें। गाय के शुद्ध घृत में शुद्ध रूई की बती भिगोकर प्रज्वलित कर (जलाकर) समर्पण करें। फिर लड्डू, पेड़ा, गुड़ बताशा आदि जो भी मिष्टान्न (नैवेद्य) प्रसाद हो, वह अर्पण करें। फिर चार बार जल चम्मच द्वारा आचमन के लिये छोड़ें। ऋतु के अनुसार जो भी फल हों वह समर्पण करें। फिर चार बार आचमन के लिये दूसरी बार छोड़ें। फिर कैथफल, जम्बू फल मिल सकें तो श्री गणेशजी को अवश्य अर्पण करें। फिर पूगीफल (सुपारी), पान (नागरपान) लवङ्ग, इलायची अर्पण करें। फिर दक्षिणा भेंट द्रव्यादि अर्पण करें। फिर कर्पूर प्रज्वलित (जलाकर) आरती करें या अन्य सब ही देवी-देवताओं की पूजा कर लेवें, तत्पश्चात् सबकी आरती एक साथ ही कर लेवें, ऐसा भी किया जाता है। आरती के पश्चात् अखण्ड ऋतुफल (नारियल) आदि चढ़ावें। फिर पुष्प अक्षत (चावल) हाथों में लेकर पुष्पाञ्जलि अर्पण करें। फिर पूजा में कोई कमी (त्रुटि) रही हो, इसके लिये क्षमा प्रार्थना करें कि हे गणेशजी महाराज ! विघ्नों के नाश करने वाले सभी शुभ कार्यों में सफलता व सिद्धि प्रदान करने वाले मेरे द्वारा की हुई इस पूजा में जो त्रुटि (कमी) रही हो, उसके लिये आप क्षमा करें। जैसी भी मुझ से यह पूजा बन सकी है, इसको ही मेरे पर अनुग्रह करके पूर्ण स्वीकार करें।

कलश-पूजन – कलश चाँदी का, ताम्बे का पीतल का, मिट्टी का नया जैसा भी पूजा करने वाले की श्रद्धा शक्ति हो वैसा ही लेकर मार्जन (माँजकर) धो पौंछकर शुद्ध व चमत्कृत करें और फिर उसमें शुद्ध पवित्र जल भरें और उसमें गन्ध (चन्दन, रोली, हल्दी, सुपारी, आदि), सर्वोषधि, दुर्वा, सप्तमृतिका (सात स्थानों की मिट्टी), पञ्चरत्न, स्वर्ण (नहीं तो दक्षिणा के स्वरूप में यथाशक्ति

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्रव्य) रख देवें। उस कलस पर वस्त्र लपेट देवें। कुछ एक पञ्चापल्लव अन्दर रखें, कुछ को नाल द्वारा कलश के गले (कण्ठ) पर बांध देवें। कलश के ऊपर एक पात्र में चावल भर कर रख देवें। उसके ऊपर एक श्रीफल (नारियल) को कपड़ा लपेट कर रख देवें। 'यदि पूजा का अनुष्ठान कई दिनों तक चलता रखना हो तो मिट्टी में जो या गेहूँ जँवाहरा बोने के लिये मिला कर (रोपण कर) उस पर जल डालकर गीला करके उस मिट्टी की ढेरी पर कलश स्थापित करें; नहीं तो केवल चावलों की छोटी ढेरी पर उसी को आठ पँखडियों द्वारा अष्ट कमलदल का रूप बनाकर उस पर स्थापित करें। फिर जिस विधिक्रम द्वारा श्रीगणेशजी महाराज का पूजन किया, उसी प्रकार से कलश-वरुण का पूजन भी कर लेवें। कई लोग जँवाहरा कलश के नीचे न बो कर अलग से मिट्टी के पात्र झावा तथा पीतल के खुले हुए पात्र टैनिया, टोपिया आदि में बो लेते हैं। इस प्रकार से भी बो सकते हैं।

नवग्रह-पूजन—काष्ठ (लकड़ी) के पट्टे पर वस्त्र बिछा कर उस पर नौ कुड्डी (ढेरी) चावलों की छोटी-छोटी स्थापित करें। उन कुड्डियों (ढेरियों) को ही नवग्रह मानकर श्रीगणेशजी की पूजा विधि के अनुसार ही पूजा करें।

षोडशमातृका-पूजन—काष्ठ (लकड़ी) के पट्टे पर लाल वस्त्र बिछाकर या तो चावलों की रोली द्वारा लाल रंगकर या गेहूँ (अन्न) की छोटी-छोटी सोलह ढेरी (कुड्डी) षोडश मातृकाओं के रूप में स्थापित कर उनका भी पूजन श्रीगणेशजी महाराज की पूजा के अनुसार ही कर लेवें।

रक्षा-विधान—बायें हाथ में पीली सरसों अथवा चावल द्रव्य और तीन तार (तीन सूत्र) की मोली (नाल) लेकर दाहिने हाथ से ढक कर नमस्कार और प्रार्थना करें।

ॐ गणों के अधिपतिजी को नमस्कार, भगवान् विष्णु, रुद्र, लक्ष्मीजी, भगवती जगदम्बाजी, सरस्वतीजी, स्थान के अधिपति देवता, समस्त ग्रहों के अधिपति देवता, समस्त ग्रहों के अधिपति भगवान् सूर्यनारायण, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि. राहू तथा केतु आदि नौंग्रों ग्रहों को इस पूजा यज्ञ के आरम्भ में विशेष रूप से नमस्कार करता हूँ। समस्त देवताओं, महातपोधन मुनि गर्ग, नारद, वसिष्ठ, विश्वामित्रादि समस्त शास्त्र-विशारद महाविद्याओं के आचार्यगणों को प्रणाम करता हूँ। यह सब ही हमारे इस पूजायज्ञ की सर्वदा रक्षा करें।

रक्षासूत्र जो तीन तार वाली मोली (नाल) है, उसको तो अपने हाथ में रख लेवें और पीली सरसों या चावल जो हाथों में रखे थे, उनको दो-दो दाने करके दसों दिशाओं में छोड़ते हुए कहें कि इन दसों दिशाओं की ओर से कोई भी विघ्न होने वाला हो तो, उससे हमारे इस पूजा यज्ञ की भगवान् जनार्दन वासुदेव

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रक्षा करें। भूत-प्रेतादि दूषित बुद्धि आत्माएं हमारे इस पूजा यज्ञ में विघ्न करने को आयें या आक्रमण करें तो उनको आप वहीं रोककर नियन्त्रण कर देवें। और हमारे इस पूजा कर्म को निर्विघ्न पूर्ण कराने का अनुग्रह करें। इसके पश्चात् उस रक्षासूत्र मोली (नाल) को हाथ में लेकर प्रथम गणेशजी को फिर अन्य सभी देवताओं को चढ़ाकर रक्षा बांध लेवें, उस समय यदि वहाँ ब्राह्मण हों तो पहले ब्राह्मण को, ब्राह्मण न हो तो अपने पूज्यों को भेंट देकर रक्षा बांधें। तत्पश्चात् ब्राह्मण तथा पूज्यों को तिलक करें। फिर ब्राह्मण या अपने पूज्यों द्वारा स्वयं को रक्षा बंधाना चाहिये। फिर ब्राह्मण या अपने पूज्यों द्वारा स्वयं को पूजक को तिलक कराना चाहिये। इसके पश्चात् ब्राह्मण तथा पूज्यों द्वारा आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिये।

भगवान् विष्णु के पार्षद, द्वारपाल वाहनादि का पूजन

यद्यपि भगवान् के अनेक पार्षद् द्वारपाल व वाहन हैं, उनका यहाँ पूर्ण वर्णन शक्य नहीं है। मुख्य रूप से सौलह पार्षद् हैं, आठ द्वारपाल हैं। मुख्य वाहन गरुड़ जी हैं। इनका भी पूजन गणेशजी महाराज की पूजा के अनुसार ही कर लेना चाहिए और यदि भगवान् नृसिंह स्वरूप का पूजन करना हो तो उनकी पूजन करने से पहले प्रह्लाद भक्त की पूजन करें। श्रीराम का पूजन हो तो पहले श्री हनुमानजी का पूजन करें। श्रीकृष्ण का पूजन करना हो तो उनके पहले श्रीराधाजी का पूजन करें। इन सब का पूजन श्रीगणेश जी की पूजन के समान ही कर लेवें। जिनका पूजन करें उनका ध्यानस्तुति भी करें।

गरुड़-ध्यान-स्तुति

भगवान् विष्णु की सेवा-भक्ति में लगे रहने वाले, भक्तों का दुःख दूर करने वाले, पक्षियों के राजा, वायु समान वेग वाले मनोहर. शान्तिमय स्वरूप विद्या ज्ञान, बल, बुद्धि के सागर, जिनके पंखों से वेद रूपी ज्ञान का सर्वदा गायन होता रहता है। भगवान् विष्णु के वाहन, वैनतेय, पक्षिराज गरुड़जी को नमस्कार है।

भक्त प्रह्लाद का ध्यान-स्तुति

बारहवर्ष की अवस्था वाले, घुंघराले बालों से युक्त, सुन्दर गौरवर्ण, वैष्णव भक्तों के चिह्नों को धारण करने वाले, भक्तों में अग्रगण्य, प्रह्लादजी भगवान् नृसिंह के सामने खड़े हुए, करबद्ध प्रार्थना कर रहे हैं। ऐसे भक्तराज प्रह्लाद जी को नमस्कार है।

श्री हनुमान-ध्यान-स्तुति

अतुलबल के धाम, सोने के पर्वत के समान कान्तियुक्त शरीर वाले, दैत्य-रूपी वन का नाश करने के लिए अग्निरूप, ज्ञानियों में अग्रगण्य, सम्पूर्ण गुणों के

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निधान वानरों के स्वामी श्री रघुनाथजी के प्रियभक्त पवनपुत्र श्री हनुमानजी को मैं प्रणाम करता हूँ।

श्री राधा जी का ध्यान-स्तुति

हे देवी ! आप ही जगत् की माता हो, सनातनी विष्णु-माया हो, भगवान् कृष्ण के प्राणों की अधिष्ठात्री और उनके प्राणों को आनन्द प्रदान करने वाली हो। आप भगवान् कृष्ण को सौभाग्य प्रदान करने वाली, उनकी प्रेममयी शक्ति हो। भगवान् कृष्ण की भक्ति और मङ्गल प्रदान करने वाली श्रीराधा जी मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

भगवान् विष्णु-ध्यान-स्तुति

जो शङ्ख-चक्र धारण किये हैं, किरीट कुण्डलों से विभूषित हैं, पीताम्बर ओढे हुए हैं, सुन्दर कमल के समान जिनके नेत्र हैं, और हारयुक्त वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि की अनोखी शोभा हो रही है। उन चतुर्भुज भगवान् विष्णु को मैं सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ।

यहाँ कतिपय ही ध्यान-स्तुतियाँ उदाहरण स्वरूप लिखी गई हैं। इस पुस्तक में अनेक ध्यान-स्तुतियाँ स्कन्ध (१) सोपान (१) मङ्गलाचरणाध्याय तथा स्कन्ध (३) सोपान (१) विष्णु-तत्त्व-विवेचन में लिखी हुई हैं; भक्तजन अपनी इच्छानुसार और भी ग्रहण कर सकते हैं। पार्षद, वाहनादि का ध्यान-पूजन-स्तवन करने के पश्चात् देवता का ध्यान स्मरण कर उनकी पूजा आरम्भ करना चाहिए।

भगवान् विष्णु, राम, कृष्णादि विष्णु-स्वरूप प्रतिमा (मूर्तियों) की पूजाविधि

शालग्राम और प्रतिष्ठित प्रतिमा (मूर्तियों) में आवाहन नहीं करें। केवल उनके पास पुष्प छोड़ देवें।

आवाहन – सब प्रकार के दुःख, दरिद्र, अनिष्ट और पापों का नाश करने वाले, सब प्रकार के शुभफल प्रदान करने वाले, भक्तों पर दया करने वाले, भगवान् लक्ष्मीनारायण मैं आपकी पूजा करना चाहता हूँ। आप यहाँ पधारने का अनुग्रह करें।

आसन—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अमूल्य रत्नों द्वारा निर्मित सिंहासन नाना प्रकार के रंग चित्रों द्वारा शोभायमान अनेक गद्दे तकियों द्वारा सजाया हुआ है। जो आराम आनन्द और सुख प्रदान करने वाला है। आप स्वीकार कर इस पर विराजमान हों। इस प्रकार उच्चारण कर उस सिंहासन पर भगवान् की प्रतिमा (मूर्ति) को विराजमान करें।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पाद्य—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! बहुमूल्य पात्र में रखे हुये, निर्मल गङ्गाजल या गङ्गा समान शुद्ध पवित्र निर्मलजल आपको अर्पण करता हूँ । यह पैर धोने के लिये पाद्य रूप में स्वीकार करें ।

अर्घ्य—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! पवित्र सुन्दर पात्र में रखा हुआ स्वर्ग गङ्गा का जल, दूर्वा, पुष्प और अक्षत, श्वेत तिलों से युक्त अर्घ्य के रूप में अर्पित करता हूँ । आप स्वीकार करें ।

आचमन—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! मैं भक्ति भाव से आवाहनीय के रूप में कर्पूर आदि से सुसंस्कृत एवं सुवासित शीतल जल आचमन हेतु अर्पित करता हूँ । आप ग्रहण करें ।

स्नान सामग्री—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! सुगन्धित ! आँवले और स्निग्ध द्रव्य और परम दुर्लभ सुपक्व स्नानीय तैल सामग्री के रूप में प्रस्तुत है । आप स्वीकार करें ।

जल-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! शुद्ध पवित्र कपड़े से छना हुआ ठण्डा गङ्गाजल या उत्तम प्रकार से पवित्रता पूर्वक लाया हुआ जल बड़े और सुन्दर पात्र में रखा हुआ आपके स्नान हेतु अर्पण करता हूँ । आप स्वीकार करें ।

दुग्ध-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! पवित्र गो माता जिसको शुद्ध पवित्र खाद्य खिलाये गवे हैं और उसके बछड़े को भली प्रकार से उसके दुग्ध से तृप्त होने के पश्चात् अवशेष बच गया था, वह शुद्ध पवित्र बर्तन में दोहन करके पवित्रतापूर्वक छानकर रखा हुआ है वह दुग्ध तृप्ति और पुष्टि करने वाला है, आप इसको स्नान हेतु स्वीकार करें ।

दधि-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! परम पवित्र पूजनीय उत्तम गो माता का यथाविध दोहन किया हुआ दुग्ध अग्नि तापन कर पवित्र बर्तन में यथा विधि जमाकर रखा हुआ दधि जो शरीर को तृप्त और तुष्टि प्रदान करने वाला है । आपके स्नान हेतु अर्पण है । आप स्वीकार करें ।

घृत-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! उत्तम प्रकार से गाय के शुद्ध पवित्र दुग्ध को जमाकर उत्तम प्रकार से आलोडन करके निकाल हुआ पवित्र घी उत्तम पात्र में रखा है, जो शरीर को पुष्टि, तुष्टि, तृप्ति, स्निग्धता प्रदान करने वाला है स्नान हेतु अर्पित है । आप स्वीकार करें ।

मधु-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! उत्तम-उत्तम सुन्दर पुष्पों के पराग से झरते हुये कणों से मधुमक्खियों द्वारा संचित किया हुआ और उत्तम प्रकार के छत्तों से ग्रहण किया हुआ और उत्तम पवित्र सुन्दर पात्र में रखा हुआ, मधु (शहद) जो अत्यन्त स्वादिष्ट व तृप्तिदायक है । वह मधु आपके स्नान

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हेतु अर्पण है। आप स्वीकार करें।

शर्करा-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! उत्तम प्रकार से ईख के रस को इकट्ठा करके उत्तम प्रकार से निर्मित की हुई शर्करा (चीनी), जो तृप्ति, आनन्द, शान्ति, सुख व बलवर्द्धक है। आपको स्नान हेतु समर्पित है। आप स्वीकार करें।

पञ्चामृत स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! गो माता का पवित्र दुग्ध, दधि, घृत और मधु व शर्करा को उत्तम प्रकार से मिला कर कपड़े से छानकर शुद्ध पवित्र पात्र में रखा है। यह सब प्रकार की व्याधियों से छुटकारा दिलाने वाला है। सब प्रकार के शरीर के अवयवों को तृप्ति, तुष्टि, पुष्टि, स्निग्धता तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाला है। यह पञ्चामृत स्नान हेतु प्रस्तुत है। आप स्वीकार करें।

शुद्धोदक-स्नान—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! समशीतोष्ण शुद्धपवित्र गङ्गाजल या गङ्गाजल के समान जल लाकर उत्तम पवित्र सुन्दर, बर्तन में रखा है। जो शरीर को शुद्ध पवित्र उत्तम सुन्दरता प्रदान करने वाला है। यह उत्तम प्रकार का शुद्ध जल आपके स्नान हेतु प्रस्तुत है। आप स्वीकार करें।

वस्त्र व उपवस्त्र—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! असंख्य उत्तम शुद्ध पवित्र सूत्रों द्वारा ईश्वरेच्छा से निर्मित, प्रज्वलित अग्नि द्वारा शुद्ध चमत्कृत मनमोहक दिव्य सुन्दर वस्त्र व उपवस्त्र (दो वस्त्र) शरीर रक्षार्थ व सौन्दर्य वृद्धि हेतु आपको समर्पित है। आप स्वीकार करें। वस्त्र न हों तो नाल (मोली) के तीन रंगीन तार ही समर्पित कर देवे।

आभरण-वस्त्र—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! उत्तम शुद्ध चमत्कृत रेशमी वस्त्र, चतुर निर्माताओं द्वारा मनमोहक कलाकृतियों द्वारा बनाये हुए, उत्तम शरीर की कान्ति व शोभा वृद्धि करने वाले आभरण (पोशाक) आपकी सेवा में प्रस्तुत हैं। आप इन्हें स्वीकार करें। वस्त्र न हो तो, अक्षत (चावल) श्वेत तिल ही चढ़ा देवें।

यज्ञोपवीत—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! उत्तम प्रकार के नवीन नरम सूत्रों द्वारा शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ यह यज्ञोपवीत जो बल, बुद्धि, तेज, ज्ञानवर्द्धक है, आपकी सेवा में समर्पित है। आप स्वीकार करें।

गन्ध—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! विभिन्न वृक्षों के मूल का चूर्ण गन्ध-द्रव्य से युक्त परमपवित्र एवं मङ्गलोपयोगी, गन्ध के रूप में आपकी सेवा में समर्पण है। आप स्वीकार करें।

अनुलेप—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! कस्तूरी, अगर, उत्तम गन्ध युक्त चन्दन

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

और कुंकुम केशर और कर्पूर मिश्रित सुगन्ध युक्त लेप अनुलेपन हेतु आपकी सेवा में प्रस्तुत है। आप इसको स्वीकार करें।

उर्ध्वपुण्ड्र-गोपी चन्दन—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! अयोध्या, मथुरा, श्रीरङ्गम्, द्वारका के पवित्र उत्तम स्थानों से लाई हुई, रजकणों को भली प्रकार से पीसकर आपके उर्ध्वपुण्ड्र हेतु चन्दन के रूप में तैयार कर प्रस्तुत करता हूँ। आप स्वीकार करें।

अक्षत (चावल) श्वेत तिल—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! पृथ्वी माता के गर्भ के महागर्भ से उत्पन्न हुए यह देवान्न, जिनको घर में रखने से घर धन, धान्य से परिपूर्ण समृद्धि युक्त होता है, इनके द्वारा किये हुए पूजा के धर्मादि यज्ञ कार्य कभी क्षय नहीं होते। इसलिये इनको अक्षत नाम दिया गया है। ऐसे अक्षत आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूँ। आप स्वीकार करें।

पुष्प—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! पारिजात वृक्षों से उत्पन्न हुए अनेक प्रकार से सुन्दर उत्तम गन्ध युक्त नाना प्रकार के मनमोहक रंग विरंग कलाओं से युक्त श्रेष्ठ कमल, शतपत्री (गुलाब) केतकी, वेला, मालती, चमेली, जूही, कर्णिकार (कनेर) पुष्प जैसे-जैसे भी प्राप्त हुए हैं, आपकी सेवा में समर्पित करता हूँ। आप इनको स्वीकार करें।

पुष्प-माला—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! नाना प्रकार के पारिजात वृक्षों से उत्पन्न हुए पुष्प कमल, गुलाब, वेला, केतकी, चमेली, जूही, भृङ्गराज आदि रङ्ग-बिरङ्गे मन मोहक उत्तम गन्ध युक्त पुष्पों के बीच-बीच में तुलसी, विल्वपत्र, अशोक पत्रादि लगा कर उत्तम प्रकार से सूत्रों में पिरोकर सुन्दर माला शोभा बढ़ाने वाली तैयार कर आपकी सेवा में प्रस्तुत है। आप स्वीकार करें।

तुलसीपत्र-दल-मंजरी—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! उत्तम गन्ध युक्त, नाना-रोग निरोधक, त्रिविध ताप नाशक, स्वर्णरूपिणी, रत्नरूपिणी, पापों के पाशों से मुक्ति प्रदान करने वाली, मोक्ष-प्रदायिनी तुलसी के अनेक पत्रों के दल तथा कोमल-कोमल मञ्जरी के दल आपकी सेवा में समर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें।

विल्वपत्र—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! उत्तम सुन्दर कोमल तीन-तीन पत्रों वाले विल्वपत्रों के अनेक दल, जिनकी डंडी की वज्रग्रन्थी तोड़कर (जिसमें अनेकों दोष रहते हैं) अखंड विल्वपत्रों का बड़ा समूह संग्रह किया हुआ है। इसमें श्री महालक्ष्मी का सर्वदा वास रहता है। इसके दर्शन, स्पर्श से ही पापों का नाश हो जाता है। इनमें उत्तम सुन्दर गन्ध आ रही है। यह कन्यादान के समान फल प्रदान करने वाला है। ऐसे विल्वपत्रों को आपकी सेवा में

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रस्तुत करता हूँ। आप स्वीकार करें। विल्वपत्रों को उल्टे (मोधे) करके चढ़ावें।

दूर्वा—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! शत्रुओं पर वज्र समान प्रहार करने वाले, अपने वंश की वृद्धि करने वाले, कोमल-कोमल दूर्वाङ्कुर आपको समर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें।

शमीपत्र—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अमङ्गलों का नाश करने वाले दुष्कृत (खोटे) दूषित विचारों और पापों का नाश करने वाले, दुःस्वप्न (खोटे सपने) के दोष व भय को दूर करने वाले शमीवृक्ष के शुभफल प्रदायक पत्रों को आपकी सेवा में समर्पण करता हूँ। आप स्वीकार करें।

पंच विल्वपत्र—तुलसी, विल्वपत्र, मीठानीम (यदि मिल सके) जम्बीरा, आमला के पत्रों को मिलाकर एक साथ ही चढ़ा देवें। इसको पञ्च विल्वपत्र समर्पण कहते हैं।

आभूषण—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अत्यन्त मूल्यवान् सब प्रकार के रत्नों से जड़े हुए, तपाये हुए शुद्ध स्वर्ण से उत्तम कलाकारों द्वारा सुन्दर मनमोहक प्रकार से निर्मित ईश्वरेच्छा से निर्माण हुए तथा समस्त अङ्गों की शोभा सम्पन्न करने वाले आभूषण (अलङ्कार) आपकी सेवा में प्रस्तुत हैं। आप स्वीकार करें। यदि आभूषण निर्माण कराने की श्रद्धा व शक्ति न हो तो आभूषण के स्थान पर पुष्प माला चावल (अक्षत) श्वेत तिल ही चढ़ा देवें।

मधुपर्क—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! रत्नपात्र में सुन्दर ढंग से बनाकर रखा हुआ परम पवित्र एवं परम मङ्गलमय माध्विक मधुपर्क रूप में प्रस्तुत है। आप इसको स्वीकार करें।

सुगन्ध तैल, अतर फुलेल—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अनेक प्रकार के परम पवित्र पारिजात पुष्पों की केशर से उड़ने वाली सुमनोहर गन्धों को तैल में मिश्रित करके, यह अतर फुलेल तैयार किया हुआ है और इसमें अनेक प्रकार की सुवासित सुन्दर औषधियों के मूल द्वारा निकाली हुई गन्ध भी मिश्रित है तथा चन्दनादि चूर्णों से सुवासित किया गया है। यह आपकी सेवा में समर्पित है। आप इसे स्वीकार करें।

धूप-अगरबती—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अनेक प्रकार के शुद्ध पवित्र गोंद गुग्गलादि तथा अनेक प्रकार के पार्थिव द्रव्य चन्दनादि अतर-तेल-फुलेल संयुक्त यह धूप प्रज्वलित अग्नि-शिखा से निर्मित धूम (धूवाँ) के रूप में प्रस्तुत है। आप स्वीकार करें। धूपबती को प्रज्वलित कर धूप को भगवान् आदि सब ही देवताओं के समक्ष आरती के प्रकार से घुमाकर किसी स्थान पर या धूपदानी

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में लगा देवें। जिसके द्वारा उस स्थान में उत्तम सुन्दर गन्ध सुवास फैलती रहे, या बत्ती नहीं हो, ऐसी बनी हुई चूर्ण के रूप में धूप ही हो तो किसी पात्र में अग्नि रख कर उस पर वह धूप चूर्ण डालें उससे धूम (धूँवा) उठे उसको ही भगवान् के सामने घुमा कर वहाँ रख देवें।

दीपक—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अमूल्य रत्नों द्वारा निर्मित यह परम उज्ज्वल शोभा वाला और घनघोर अन्धकार को दूर करने वाला प्रदीप्त दीपक अनेक प्रकार से प्रकाश करने वाला है यह आपको समर्पण करता हूँ। आप स्वीकार करें। दीपक पात्र में शुद्ध गो घृत रखें और शुद्ध रूई की बत्ती बनाकर घृत में भिगोयें। इसके पश्चात् प्रज्वलित कर भगवान् को दिखला कर ठीक स्थान पर स्थापित कर देवें।

नैवेद्य—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अनेक प्रकार के दिव्य अमृतमय सिद्धान्न, आमान्न, हलवा, पूवा, खीर, लड्डू, पेड़ा आदि अनेक प्रकार के सुन्दर पवित्र मीठे, बनाये हुए मिष्टान्न व अनेक प्रकार के चोष्य, लेह्य, पेय, चर्वण, योग्य पदार्थ खट्टे, पूड़ी, सब्जी आदि-आदि सब ही प्रकार के निर्माण किये हुए छप्पन उत्तम व्यञ्जन आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूँ। आप प्रेम पूर्वक स्वीकार करें। एक या दो थालों में या अधिक थालों में जितने पदार्थ यथाशक्ति बनाये गये हों, सभी को शुद्ध पवित्र उत्तम ढंग से सजाकर भगवान् के सामने रक्खें। सब में तुलसीपत्र रखकर उपर्युक्त प्रकार से मनोभाव बनाये हुये इसी प्रकार से निवेदन कर भोग लगावें।

मध्ये पानीय—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! अनेक प्रकार के उत्तम पदार्थ मिष्टान्न, व्यञ्जन, चोष्य, लेह्य, पेय, पूड़ी, सब्जी, चर्वण विभिन्न प्रकार के प्रसाद नैवेद्य रूप में अर्पण किये हैं। उन्हें भली प्रकार से पचाने व तृप्ति करने हेतु शुद्ध पवित्र सुन्दर चमत्कृत पात्र में ठण्डा जल भर कर आपकी सेवा में मध्य-पानीय के रूप में अर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें।

ऋतुफल—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! देशकाल व ऋतु अनुसार जो फल उपलब्ध हुये हैं। आम्र, केला, अमरूद, अंगूर, खजूर, अखरोट, बादाम, नारंगी, नीम्बू, मीठे नाशपाती, सेव, अनार आदि नाना भाँति के फल आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूँ। जिससे अनेक जन्म-जन्मान्तरों के शुभ कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। आप इनको स्वीकार करें। फलों को शुद्ध जल से धोकर फल का मुख भगवान् लक्ष्मीनारायण की ओर करके समर्पण करें।

आचमनीय फल—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! शुद्ध पवित्र उत्तम ठण्डा जल जो भली प्रकार से प्रसाद (भोजन) पचाने में समर्थ है। सभी प्रकार की तृप्ति करने योग्य है। इसके द्वारा मुख हस्त आदि भी शुद्ध पवित्र होते हैं। यह

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आपकी सेवा में समर्पण करता हूँ। आप स्वीकार करें। शुद्ध पवित्र चमत्कृत पात्र में जल भर कर भगवान् लक्ष्मीनारायण के समक्ष रखें। चार बार जल पात्र में भरकर उनके समक्ष दूसरे बर्तन में छोड़ें।

अखण्ड ऋतुफल—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! उत्तम प्रकार का सुन्दर नूतन नारिकेल (नारियल) अखण्ड ऋतुफल के रूप में आपको समर्पित करता हूँ। यह शुभ कामनाओं की पूर्णरूप से फल सिद्धि प्राप्त कराने वाला है। आप इसे स्वीकार करें। दोनों हाथों में नारियल को लेकर नाका लगने वाले ओर को भगवान् लक्ष्मीनारायण की ओर करके समर्पित करें।

ताम्बूल-पूगीफल—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! उत्तम प्रकार का पका हुआ शुद्ध सुन्दर नागरपान, जिसमें पूगीफल (सुपारी), चूना, शुद्ध कत्था, कर्पूर, इलायची, लवङ्ग, जावित्री, जायफल, आदि अनेक स्वादिष्ट सुगन्धित पदार्थ मिश्रित किये हुए हैं। जो भोजन पचाने, उत्साह प्रदान करने, आलस्य दूर करने की क्षमता वाला है, मुख स्वादिष्ट और शुद्ध करता है। आपकी सेवा में अर्पित है। आप स्वीकार करें। उपर्युक्त प्रकार के सभी पदार्थ पान में रख कर बीड़ा बना कर उपर्युक्त वाक्यों को उच्चारण करते हुये, भगवान् की सेवा में अर्पण करें।

भेंट-दक्षिणा—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! जिस प्रकार के पदार्थ पूजन सामग्री द्रव्य मिल सकें, उनसे और जिस प्रकार हल्के भारी ढंग से जो पूजन द्रव्य निर्मित हो सके, उनके द्वारा, यह आपकी पूजा सम्पन्न की है। हो सकता है, इनमें कई प्रकार की त्रुटि रही होंगी। इसलिये उन त्रुटियों की पूर्ति हेतु और जो भूल या असमर्थतावश त्रुटि रही हो, उनको पूर्ण करने हेतु यह भेंट (दक्षिणा) आपकी सेवा में समर्पण करता हूँ। आप इसे स्वीकार करें। उपर्युक्त वाक्य उच्चारण करते हुये, जैसी अपनी सामर्थ्य हो, स्वर्ण मुद्रा, (मोहर, गिन्नी), चाँदी की मुद्रा, यह भी नहीं हो सके, नोट आदि जैसी श्रद्धा-शक्ति हो सके, उतनी ही संख्या में श्रद्धा-भक्ति भाव से भगवान् लक्ष्मी-नारायण! के चरणों में दोनो हाथों से समर्पित कर देवें।

शय्या—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! उत्तम दिव्य पर्यङ्क रत्नों के सार भाग द्वारा निर्मित चतुर कलाकारों द्वारा बनाया हुआ, जो उत्तम वस्त्र गद्दा तकिया आदि भली प्रकार से बिछाकर सजाया गया हैं, ऊपर सुन्दर चमकीले रेशमी चादरों से ढ़का हुआ है, जिस पर नाना प्रकार के रंग-बिरंगे कोमल ताजा सुगन्धित पुष्प बिछाये हुए हैं व अनेक प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों द्वारा सुवासित किया हुआ है, ऊपर से ओढ़ने का नूतन उत्तम चमत्कृत नर्म रोयेंदार, अनेक प्रकार के बेल बूटों द्वारा सजाया हुआ वस्त्र रखा है, आपके शयन, आनन्द व विश्राम करने हेतु समर्पित करता हूँ। आप इसे स्वीकार करें। उपर्युक्त

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाक्यों को उच्चारण करते हुये, सुसज्जित उत्तम शय्या को भगवान् लक्ष्मी-नारायण के सामने प्रस्तुत कर देवें।

आरती— आरती

कदलीगर्भ सम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम्।
आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

किसी पात्र या आरती में कुछ चावल रखकर उन चावलों के ऊपर कर्पूर रखें और कर्पूर को प्रज्वलित करके भगवान् के सामने घुमावें। यदि कर्पूर नहीं हो तो शुद्ध रुई की बत्ती बनाकर शुद्ध गाय के घृत में भिगोकर आरती या किसी पात्र में रखकर प्रज्वलित करके भगवान् के सम्मुख घुमावें। उपर्युक्त आरती श्लोक उच्चारण करते हुये सर्व प्रथम भगवान् के चरणों की चार बार, नाभि की दो बार, मुख की एक बार या तीन बार, तथा सर्वाङ्ग की सात बार इस प्रकार पूर्ण रूप से आरती करें। इसके पश्चात् शुद्ध कपड़े में रखी हुई तुलसी भी इसी प्रकार घुमावें। इसके बाद में शङ्ख में जल भर कर उसमें तुलसी रखकर शङ्ख को भी इसी प्रकार से घुमावें। फिर भगवान् के बायें, दायें थोड़ा-थोड़ा जल छोडें। आरती के साथ बायें हाथ से जो घंटा बजाया जाता है, उस पर भी थोड़ा जल छिड़कें। फिर उसी शङ्ख का जल अपने दायें हाथ में लेकर भक्तों पर भी छिड़क देवें।

आरती-गायन—भगवान् लक्ष्मीनारायण की, जय जगदीश हरे की, भगवान् सत्य-नारायण की, भगवान् श्रीराम की तथा युगल किशोर राधाकृष्ण आरती की इसी पुस्तक में वेदोक्त बृहत्पूजा विधि में लिखी हैं। वहाँ देख लेवें।

पुष्पाञ्जलि—इस ऋतु के अनुसार होने वाले नाना प्रकार के पुष्प जिनमें उत्तम प्रकार की सुगन्ध भरी हुई है और इसके साथ अक्षत (चावल) भी रखे हैं। यह पुष्पाञ्जलि आपको समर्पित करता हूँ। आप स्वीकार करें। इस प्रकार उच्चारण करते हुये वह पुष्पाञ्जलि याने पुष्प और अक्षत (चावल) भगवान् के चरणों में चढ़ा देवें और साष्टांग प्रणाम करें।

प्रदक्षिणा-परिक्रमा— हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! जान में, अनजान में जो भी पाप मुझ से कभी हुये हों। मैं आपकी प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करता हुआ निवेदन करता हूँ, उन सब पापों को आप नष्ट (दूर) कर दें। इस प्रकार उच्चारण करते हुये भगवान् की चार परिक्रमा करें और भगवान् के सामने खड़े होकर हाथ जोड़ें।

क्षमा-प्रार्थना—हे परमपिता परमेश्वर भगवान् लक्ष्मीनारायण! मुझको किसी प्रकार से भी आपको आह्वान (बुलाना) करना नहीं आता, न किसी प्रकार

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का स्वागत-सत्कार ही करना आता है और न विसर्जन (विदा) करना आता है। किसी प्रकार से न कोई पूजा विधि ही आती है। फिर मैं आपके लिये क्या करूँ और क्या निवेदन करूँ, मेरी समझ में कुछ नहीं आता। इसलिये मैं तो केवल आपकी शरण में आया हूँ, आप ही मुझ पर करुणा करके परमपिता परमेश्वर! मेरी रक्षा करें। ऐसा उच्चारण करके हाथ जोड़ें और नत मस्तक होवें, अन्य किसी प्रकार की प्रार्थना स्तुति गायन करना चाहें, वह करें। तत्पश्चात् उच्चारण करें—ॐ भगवान् लक्ष्मी-नारायणार्पणमस्तु।

विसर्जन—ऋद्धि, सिद्धि, श्रीभगवान् गणेशजी, धर्म, कर्म ये देवता तो हमारे यहाँ ही सर्वदा विराजमान रहें। अन्य सब देवता अपने-अपने स्थान पधारें। जब हम फिर बुलायें उस समय फिर पधारने का अनुग्रह करें। इसमें यह भी ध्यान रखना चाहिये यदि किसी देवता को अपने घर में या उस स्थान पर पहले कभी से स्थापित कर रखा है और उसकी नित्य पूजा की जाती है तो उस देवता का विसर्जन नहीं करें। उसका नाम जिन देवताओं को यहाँ विराजमान रहने की प्रार्थना करते है, उनके साथ जोड़कर उच्चारण करना चाहिये।

आशीर्वाद—पूजा करने वाले ब्राह्मण-पण्डित एवं अपने पूज्य जो वहाँ हों, उनसे आशीर्वाद ग्रहण करें। उनको भेंट देकर प्रणाम करें। वे प्रसन्नता पूर्वक आशीर्वाद प्रदान करें। इससे पूजा की सिद्धि होती है और पूजक के आयु, आरोग्य, कीर्ति, यश, बल की वृद्धि होती है।

तुलसी-चरणामृत, पञ्चामृत तथा नैवेद्य ग्रहण

बायें हाथ पर दोहरा वस्त्र रख कर, उस पर दाहिना हाथ रख कर, उसमें तुलसी, चरणामृत, पञ्चामृत ग्रहण कर पान करें तथा नैवेद्य (प्रसाद) ग्रहण कर भक्षण करें। यह पूर्ण ध्यान रहे कि तुलसी, चरणामृत, पञ्चामृत, नैवेद्य (प्रसाद) पृथ्वी पर न गिरे।

तुलसी-ग्रहण—भगवान् विष्णु पर चढ़ाया हुआ तुलसी पत्र भगवान् विष्णु की पूजा के पश्चात् ग्रहण करने से एक सौ चान्द्रायण व्रत करने से भी अधिक शरीर की शुद्धि होती है। इस प्रकार उच्चारण कर तुलसी पत्र ग्रहण करें।

चरणामृत-ग्रहण—हे भगवान् लक्ष्मीनारायण! भक्तों के दुःख दूर करने वाले, पापों का नाश करने वाले आपकी कृपा अनुग्रह द्वारा आपके चरणामृत का पान करने का अवसर प्रदान हो रहा है। यह अकाल मृत्यु तथा सर्व व्याधियों को दूर करने वाला है। इसका पान करने से पुनर्जन्म नहीं होता है। ऐसा उच्चारण करके चरणामृत भगवान् पर चढ़ाया हुआ तुलसीपत्र मिलाकर पान करें।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पञ्चामृत-ग्रहण—यह पञ्चामृत समस्त दुःख, दुर्भाग्य और सर्वपापों का नाश करने वाला है। भगवान् विष्णु का स्नान कराया हुआ, यह पञ्चामृत पान करने से सभी प्रकार की व्याधियों का शमन होता है, त्रिविध तापों की शान्ति होती है और पुनर्जन्म भी नहीं होता है। इस प्रकार से उच्चारण करके पञ्चामृत पान करें।

नैवेद्य-ग्रहण—भगवान् को अर्पण किया हुआ नैवेद्य (प्रसाद) जिसमें भगवान् के स्पर्श की हुई तुलसी मिली हुई हो, इस प्रकार का नैवेद्य (प्रसाद) जो कोई भक्षण करता है। वह करोड़ों यज्ञ किये हुए का फल प्राप्त करता है। ऐसा उच्चारण करते हुए भक्षण करें।

जप करने के लिये भगवान् विष्णु, श्रीराम तथा श्री कृष्ण के मन्त्र ये हैं—

(१) ॐ विष्णवे नमः। (२) ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। (३) ॐ नमो नारायणाय।

(१) ॐ रां रामाय नमः। (२) श्रीरामः शरणं ममः।

(१) ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनबल्लभाय स्वाहा। (२) ॐ क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। (३) ॐ कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नः कृष्ण प्रचोदयात्।

पाठ, स्तवन करने के लिये कतिपय ग्रन्थ संकेत।

(१) भगवान् विष्णु, राम, कृष्ण, लड्डू गोपाल, बालमुकुन्दादि किसी विष्णु अवतार स्वरूपादि की पूजा करें तो उनके स्तोत्र प्रार्थनादि का पाठ या गायन करें। श्रीमद्भागवत, भगवद्गीता, विष्णुपुराण, नृसिंहपुराण, नारदपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण, रामायण आदि अन्य विष्णु अवतारों के गुणानुवाद पूर्ण पुराणादि की कथा व पाठ करें। विष्णुसहस्रनाम, गोपालसहस्रनाम का पाठ करें।

(२) यदि भगवान् श्रीसत्यनारायण का व्रत पूजा करें तो श्रीसत्यनारायण की कथा अवश्य करें।

किसी कारण से इतनी बड़ी पूजा नहीं कर सकें, उनके लिये षोडशोपचार, द्वादशोपचार, पञ्चोपचार पूजाविधियाँ भी इसी पुस्तक में लिखी हैं। उनको देखकर अपनी सुविधानुसार ग्रहण कर सकते हैं।

□

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हिन्दी में षोडशोपचार पूजाविधि

सोपान ११

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है]

षोडशोपचार पूजा में निम्नलिखित सोलह उपचार प्रयोग किये जाते हैं। १—आसन, २—पाद्य, ३—अर्घ्य, ४—आचमन, ५—वस्त्र, ६—गंध, ७—चंदन, ८—अक्षत (चावल) के स्थान पर श्वेत तिल. ९—पुष्प, विल्वपत्र, तुलसी अन्य पत्र पुष्पादि, १०—धूप (अगरबती), ११—दीप, १२—पुष्पमाला, १३—नैवेद्य, ऋतु-फल, १४—जल, आचमन, १५—ताम्बूल, पूगीफल, १६—दक्षिणा।

षोडशोपचार पूजा के मन्त्रादि के भावार्थ वही हैं. जो हिन्दी वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। उससे ही ग्रहण कर सकते हैं तथा ध्यान, आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा), पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थना, साष्टांग प्रणामादि उसी के अनुसार करें।

□

हिन्दी में द्वादशोपचार पूजाविधि

सोपान १२

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।]

द्वादशोपचार पूजा में निम्नलिखित बारह उपचार प्रयोग किये जाते हैं १—आसन, २—पाद्य, ३—अर्घ्य, ४ · आचमन, ५—वस्त्र. ६—चन्दन, ७—पुष्प, विल्वपत्र, तुलसी, पुष्पमालादि, ८—धूप (अगरबती), ९—दीप, १०—नैवेद्य-ऋतु-फल, ११—जल-आचमन, १२—भेंट-दक्षिणा।

द्वादशोपचार पूजा के मन्त्रादि के भावार्थ वही हैं, जो हिन्दी वृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। उससे ग्रहण कर सकते हैं तथा ध्यान, आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा), पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थना, साष्टांग प्रणामादि उसी के अनुसार करें।

□

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हिन्दी में पञ्चोपचार पूजाविधि

सोपान १३

[किसी भी प्रकार से कोई भी पूजा करने वाले को पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है।

पंचोपचार पूजा में निम्नलिखित पाँच उपचार प्रयोग किये जाते हैं।

१—पाद्य, २—अर्घ्य, ३—आचमन, ४—पुष्प, विल्वपत्र, पुष्पमाला, तुलसी आदि, ५—नैवेद्य, दक्षिणा।

पञ्चोपचार पूजा के मन्त्रादि के भावार्थ वही हैं, जो हिन्दी बृहत्पूजा प्रकार में लिखे हैं। उसी से ग्रहण कर सकते हैं तथा ध्यान, आरती, प्रदक्षिणा (परिक्रमा), पुष्पाञ्जलि, क्षमा-प्रार्थना, साष्टांग प्रणामादि उसी के अनुसार करें।

□

भगवान् नारायण की मानस-पूजा

सोपान १४

[पूजा करने से पहले इस पुस्तक का स्कन्ध (३) सोपान (१८) पढ़ लेना आवश्यक है]

भगवान् विष्णु का ध्यान

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम्।
सहारवक्षः स्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्।

'भगवान् शङ्ख और चक्र (तथा गदा-पद्म) धारण किये हुए हैं, उनके मस्तक पर सुन्दर किरीट-मुकुट और कानों में कुण्डल हैं। वे पीताम्बर पहने हुए हैं, उनके नेत्र कमल-दल के सदृश कोमल, विशाल, और खिले हुए हैं। वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि, रत्नों का चन्द्रहार और श्री का चिह्न (स्वर्ण रेखा) सुशोभित है। ऐसे चतुर्भुज भगवान् विष्णु (नारायण) को मैं मस्तक झुकाकर नमस्कार करता हूँ।'

अपने मन में इस प्रकार से भगवान् का ध्यान व नमस्कार करने के पश्चात् ध्यान करें कि भगवान् को पधारे हुए बहुत समय हो गया, अब भगवान् की पूजा करना चाहिये फिर ध्यान करें कि मैं अब भगवान् की मानसिक पूजा कर

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रहा हूँ। भगवान् मेरे सामने विराजमान हैं। भगवान् स्नान करके पधारे हैं। उन्होंने वस्त्र धारण कर रखे हैं और उनके कन्धे पर यज्ञोपवीत शोभा दे रहा है।

अब मैं पाद्य—चरण धोने का जल लेकर आया हूँ और भगवान् के चरणों को धो रहा हूँ, बायें हाथ से जल डाल रहा हूँ और दाहिने हाथ से चरण धो रहा हूँ तथा मुख से यह मन्त्र बोल रहा हूँ—

ॐ पादयोः पाद्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।

फिर उस बर्तन को बाईं ओर चौकी पर रखकर हाथ धोकर दूसरा सुगन्धयुक्त गङ्गाजल से भरा हुआ पात्र (बर्तन) लेता हूँ और भगवान् को अर्घ्य देता हूँ। भगवान् दोनों हाथों की अञ्जलि पसार कर अर्घ्य ग्रहण करते हैं। इस समय उन्होंने अपने चारों हाथों के आयुध दो हाथों में ले लिये हैं। अर्घ्य अर्पण करते समय मैं मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

भगवान् अर्घ्य ग्रहण करके उस जल को छोड़ देते हैं। मैं उस बर्तन को लेकर चौकी पर रख देता हूँ तथा हाथ धोकर, आचमन का जल लेकर भगवान् को आचमन करवाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ आचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

भगवान् के हाथ धुलाता हूँ। फिर एक कटोरी दाहिनी ओर की चौकी से उठाता हूँ, जिसमें केशर, चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्य घिसे हुए रखे हैं। उस उस कटोरी को मैं बायें हाथ में लेकर दाहिने हाथ से भगवान् के मस्तक पर तिलक करता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ गन्धं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

इसके पश्चात् उस कटोरी को बाईं ओर की चौकी पर रखकर फिर दूसरी कटोरी लेता हूँ, जिसमें छोटे आकार के सुन्दर मोती हैं, जिनको 'मुक्ताफल' कहते हैं। मैं बायें हाथ में मोती की कटोरी लेकर दाहिने हाथ से भगवान् के तिलक पर मोती लगाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ मुक्ताफलं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

इसके पश्चात् सुन्दर सुगन्धित पुष्पों से, जिनमें तुलसीपत्र व मञ्जरी भी है, दोनों की अञ्जलि भर कर भगवान् पर चढ़ाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पत्रं पुष्पं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

यह मन्त्र बोलकर भगवान् पर पत्र पुष्प चढ़ा देता हूँ। इसके अनन्तर एक अत्यन्त सुन्दर सुगन्धपूर्ण बड़ी पुष्पमाला दोनों हाथों में लेकर मुकुट के ऊपर से उनके गले में पहनाता हूँ और यह मन्त्र बोलता हूँ—

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
'ॐ पुष्पमालां समर्पयामि नारायणाय नमः।'

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

फिर देखता हूँ कि एक धूपदानी है, जिसमें निर्धूम अग्नि प्रज्वलित हो रही है। मैं एक कटोरी में जो चन्दन, कस्तूरी, केशर आदि नाना प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों से मिश्रित धूप रखी है, उसे अग्नि में डालकर भगवान् को धूप की गन्ध देता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ धूपमाघ्रापयामि नारायणाय नमः।'

तदनन्तर दाहिनी ओर जो गो-घृत का दीपक प्रज्वलित हो रहा है उसे, हाथ में लेकर भगवान् को दिखाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ दीपं दर्शयामि नारायणाय नमः।'

फिर दीपक को बायीं ओर की चौकी पर रखकर हाथ धोता हूँ। एक सुन्दर बड़ी थाली में ५६ प्रकार के भोग परोस कर उसे भगवान् के सामने रत्न-जड़ित चौकी पर रख देता हूँ। भगवान् एक दूसरी रत्नजड़ित चौकी पर विराजमान हैं। उनके सामने दूसरी चौकी पर भोग की सामग्री भरी हुई थाली रखी है। भोग लगाते समय मैं मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ नैवेद्यं निवेदयामि नारायणाय नमः।'

फिर उस चौकी को धोकर उस पर एक थाली जिसमें सुन्दर, सुमधुर फल भरे हुए हैं, वह रख देता हूँ। भगवान् उन फलों का भोग लगाते हैं और मैं मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ ऋतुफलं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

थोड़े से फलों का भोग लगाने पर जब भगवान् फल खाना बन्द कर देते है, तब मैं प्रसाद रूप में बचे हुए फलों की थाली को उठाकर बाईं ओर की चौकी पर रख देता हूँ। फिर अपने हाथ धोकर भगवान् के हाथ धुलाता हूँ। तदनन्तर पवित्र जल से उन्हें पुनः आचमन कराता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पुनराचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

आचमन कराकर उस पात्र को बाईं ओर की चौकी पर रख देता हूँ। और उस चौकी को धोकर अलग रख देता हूँ। तदनन्तर हाथ धोकर एक दूसरी थाली उठाता हूँ, जिसमें उत्तम सुन्दर पानों के बीड़े बनाये हुए रखे हैं। उस थाली को मैं भगवान् के सामने प्रस्तुत करता हूँ। भगवान् पान का बीड़ा लेकर चबाते हैं। और मैं यह मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पूगीफलमेलालवङ्ग सहितं च ताम्बूलं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

इसके बाद उस पान की थाली को बाईं ओर चौकी पर रख देता हूँ। फिर पवित्र जल से अपने हाथ धोकर और भगवान् के हाथों को धुलाकर मुख-शुद्धि के लिये उन्हें पुनः आचमन करवाता हूँ और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ पुनर्मुखशुद्ध्यर्थमाचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आचमन कराकर फिर भगवान् के हाथ धुला देता हूँ और उस जल पात्र को बाईं ओर की चौकी पर रख देता हूँ। यह अमूल्य द्रव्यरत्न भगवान् की ही निधि है, भगवान् की वस्तु भगवान् को वैसे ही प्रस्तुत करता हूँ, जैसे सेवक अपने स्वामी को भेंट करता है और मन्त्र बोलता हूँ—

'ॐ दक्षिणाद्रव्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।'

भगवान् को दक्षिणा अर्पण करके मैं अपने आप को भी उनके श्रीचरणों में अर्पण कर देता हूँ। फिर एक थाली लेता हूँ। उसके बीच में एक कटोरी रखी है। उसमें कर्पूर प्रज्वलित हो रहा है। उसके चारों ओर माङ्गलिक द्रव्य, तुलसी, पुष्प, नारियल, दही, दूर्वा आदि सजाये हुए हैं। मैं दोनों हाथों में थाली लेकर भगवान् की आरती उतार रहा हूँ। और बोलता हूँ—

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम्।
आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

आरती उतार कर आरती की थाली को बाईं ओर की चौकी पर रख देता हूँ। फिर श्वेत सुन्दर शङ्ख में जल, तुलसी रख कर उस शङ्ख द्वारा भी भगवान् की आरती उतार कर भगवान् के बायें-दायें दोनों ओर थोड़ा-थोड़ा जल छोड़ता हूँ। इसके पश्चात् उस शङ्ख का जल दायें हाथ में लेकर आरती के समय भगवान् के सामने खड़े हुए सब भक्तों पर छींटे देता हूँ। फिर हाथ धोकर दोनों हाथों में पुष्प, अक्षत लेकर खड़ा होता हूँ और भगवान को पुष्पाञ्जलि अर्पण करता हूँ। फिर मैं भगवान् के चारों ओर चार परिक्रमा करता हूँ। साष्टांग प्रणाम करता हूँ। प्रणाम करके भगवान् की स्तुति गाता हूँ—

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै—
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः॥
(श्रीमद्भागवत १२।१३।१)

'ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र, रुद्र और मरुद्गण दिव्य स्तुतियों के द्वारा जिनके गुणगान में संलग्न रहते हैं, साम संगीत के मर्मज्ञ ऋषि-मुनि, अङ्ग, पद, क्रम, एवं उपनिषदों के सहित वेदों द्वारा जिनका गान करते रहते हैं योगी लोग ध्यान के द्वारा निश्चल एवं तल्लीन मन से जिनका भावमय दर्शन प्राप्त करते रहते हैं; किन्तु यह सब करते रहने पर भी जिनके वास्तविक स्वरूप को पूर्णतया न जान सका, उन स्वयंप्रकाश परमात्मा को नमस्कार है।'

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आप ही मेरे माता और पिता हो, आप ही भाई व सखा हो, आप ही विद्या व धन हो, हे देवाधिदेव ! मेरे तो सब कुछ आप ही हो। मैं आपकी शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ।

इस प्रकार भगवान् की स्तुति करने के पश्चात् सबको आरती देकर, सब के हाथ धुला कर, सब को भगवान् का चरणामृत और भगवान् को भोग लगाया हुआ प्रसाद बाँटता हूँ। सब भक्तगण चरणामृत प्रसाद पाकर पुनः हाथ धोकर भगवान् के दिव्य स्तोत्रों का पाठ करते हैं। दिव्य स्तुति गाते है। भगवान् के दिव्य गुणों व नामों का कीर्तन कर रहे हैं। मैंने भी भगवान् का चरणामृत प्रसाद पा लिया है और हाथ धो लिये हैं। मैं भी भगवान् के दिव्य गुण नामों का कीर्तन कर रहा हूँ। भगवान् मुग्ध हो रहे हैं, और हम लोग भी मुग्ध हो रहे हैं। इस प्रकार सब मिलकर भगवान् के नामों का कीर्तन कर रहे हैं—

श्रीमन्नारायण नारायण नारायण,
श्रीमन्नारायण नारायण नारायण।
हरि ॐ हरि ॐ हरि ॐ

नोट—इस उपर्युक्त विधि द्वारा ॐ सीतारामाय नमः, ॐ राधाकृष्णाय नमः आदि नामों का उच्चारण करके पूजोपचार समर्पण करते हुए भगवान् की प्रतिमा (मूर्ति) की पूजा भी की जा सकती है। इस प्रकार का मन में स्मरण करते हुए मानसिक पूजा भी की जा सकती है।

ॐ नारायणाय नमः।

जप करने के लिये नारायण गायत्री मन्त्र है—

(१) ॐ नारायणाय विद्महे। वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।
(२) ॐ नारायणाय नमः, (३) ॐ रां रामाय नमः मन्त्र भी है।

□

विष्णु-लक्ष्मी की एकरूपता, सर्वमयता तथा मन्त्रों द्वारा उनका स्तवन

सोपान १५

भगवान् विष्णु और लक्ष्मी भिन्न-भिन्न नहीं, एक ही हैं तथा सर्वमय हैं।

श्रीपाराशर उवाच—

नित्यैवैषा जगन्माता विष्णोः श्रीरनपायिनी।
यथा सर्वगतो विष्णुस्तथैवेयं द्विजोत्तम ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अर्थो विष्णुरियं वाणी नीतिरेषा नयो हरिः ।
बोधो विष्णुरियंबुद्धि र्धर्मोऽसौ सत्क्रिया त्वियम् ।।
स्रष्टा विष्णुरियं सृष्टिः श्रीर्भूमिर्भूधरो हरिः ।
सन्तोषो भगवांल्लक्ष्मीस्तुष्टिर्मैत्रेय शाश्वती ।।
इच्छाश्रीर्भगवान्कामो यज्ञोऽसौ दक्षिणा त्वियम् ।
आज्याहुतिरसौ देवी पुरोडाशो जनार्दनः ।।
पत्नीशाला मुने लक्ष्मीः प्राग्वंशो मधुसूदनः ।
चितिर्लक्ष्मीर्हरिर्यूप इध्मा श्रीर्भगवान् कुशः ।।
सामस्वरूपी भगवानुद्गीथीः कमलालया ।
स्वाहा लक्ष्मीर्जगन्नाथो वासुदेवो हुताशनः ।।
शंकरो भगवाञ्छौरिर्गौरी लक्ष्मीर्द्विजोत्तम ।
मैत्रेय केशवः सूर्यस्तत्प्रभा कमलालया ।।
विष्णुः पितृगणः पद्मा स्वधा शाश्वतपुष्टिदा ।
द्यौः श्रीः सर्वात्मको विष्णुरवकाशोऽतिविस्तरः ।।
शशाङ्कः श्रीधरः कान्तिः श्रीस्तथैवानपायिनी ।
धृतिर्लक्ष्मीर्जगच्चेष्टा वायुः सर्वत्रगो हरिः ।।
जलधिर्द्विज गोविन्दस्तद्वेला श्रीर्महामुने ।
लक्ष्मीस्वरूपमिन्द्राणो देवेन्द्रो मधुसूदनः ।।
यमश्चक्रधरः साक्षाद्धूमोर्णा कमलालया ।
ऋद्धिः श्रीः श्रीधरो देवः स्वयमेव धनेश्वरः ।।
गौरी लक्ष्मीर्महाभागा केशवो वरुणः स्वयम् ।
श्रीर्देवसेना विप्रेन्द्र देवसेनापतिर्हरीः ।।
अवष्टम्भो गदापाणिः शक्तिर्लक्ष्मी द्विजोत्तम ।
काष्ठालक्ष्मीर्निमेषोऽसौ मुहूर्त्तोऽसौ कला त्वियम् ।।
ज्योत्स्ना लक्ष्मीः प्रदीपोऽसौ सर्वः सर्वेश्वरो हरिः ।
लताभूता जगन्माता श्रीर्विष्णुर्द्रुमसंज्ञितः ।।
विभावरी श्रीर्दिवसो देवश्चक्रगदाधरः ।
वरप्रदो वरो विष्णुर्वधूः पद्मनिवासिनी ।।
नदस्वरूपी भगवाञ्छ्रीर्नदीरूपसंस्थिता ।
ध्वजश्च पुण्डरीकाक्षः पताका कमलालया ।।
तृष्णा लक्ष्मीर्जगन्नाथो लोभो नारायणः परः ।
रतिरमश्च मैत्रेय लक्ष्मीर्गोविन्द एव च ।।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

किं चातिबहुनोक्तेन संक्षेपेणेदमुच्यते ।।
देवतिर्यङ्मनुष्यादौ पुन्नामा भगवान् हरिः ।
स्त्रीनाम्नी श्रीश्च विज्ञेया नानयोर्विद्यते परम् ।।
(श्रीविष्णुपुराण १।८ १७-३५)

(श्रीमैत्रेयजी के प्रश्न के उत्तर में) श्रीपराशरजी बोले—हे द्विजोत्तम ! भगवान् का कभी सङ्ग न छोड़ने वाली जगज्जननी लक्ष्मीजी नित्य हैं और जिस प्रकार श्री विष्णु भगवान् सर्व व्यापक हैं, वैसे ही यह भी हैं। विष्णु अर्थ हैं तो लक्ष्मीजी वाणी हैं, हरि न्याय हैं तो ये नीति हैं, भगवान् विष्णु हैं तो ये बुद्धि हैं तथा वे धर्म हैं तो लक्ष्मी जी सत्क्रिया हैं। मैत्रेय ! भगवान् जगत् के स्रष्टा हैं तो लक्ष्मीजी सृष्टि हैं। श्रीहरि भूदर (पर्वत अथवा राजा) हैं तो लक्ष्मीजी भूमि हैं, भगवान् संतोष हैं तो लक्ष्मीजी नित्य-तुष्टि हैं। भगवान् काम हैं तो लक्ष्मीजी इच्छा हैं, वे यज्ञ हैं तो ये दक्षिणा हैं, श्री जनार्दन पुरोडाश हैं तो देवीजी लक्ष्मी जी आज्याहुति (घृत की आहुति) हैं। मुने ! मधुसूदन यजमानगृह हैं तो लक्ष्मीजी पत्नीशाला हैं, श्रीहरि यूप (यज्ञ स्तम्भ) हैं तो लक्ष्मी जी चिति (इष्टका चयन) हैं, भगवान् कुशा हैं तो लक्ष्मीजी समिधा हैं। भगवान् सामरूप हैं तो श्रीकमलादेवी उद्गीथी हैं, जगत्पति भगवान् वासुदेव हुताशन हैं तो लक्ष्मीजी (उनकी पत्नी) स्वाहा हैं। द्विजोत्तम ! भगवान् विष्णु शंकर हैं तो लक्ष्मीजी गौरी हैं. इसी प्रकार हे मैत्रेय ! श्रीकेशव सूर्य हैं तो कमलवासिनी लक्ष्मीजी उनकी प्रभा हैं। श्री विष्णु पितृगण हैं तो श्रीकमला नित्य पुष्टिदायिनी (उनकी पत्नी) स्वधा हैं, विष्णु अति विस्तीर्ण सर्वात्मक आकाश हैं तो लक्ष्मीजी स्वर्गलोक हैं। भगवान् श्रीधर चन्द्रमा हैं तो लक्ष्मी जी उनकी अक्षय कान्ति हैं; श्रीहरि सर्वगामी वायु हैं तो लक्ष्मीजी जगच्चेष्टा (जगत् की गति) और धृति (आधार) हैं। हे महामुने ! श्रीगोविन्द समुद्र हैं तो हे द्विज ! लक्ष्मीजी उनकी तटभूमि हैं। भगवान् मधुसूधन देवराज इन्द्र हैं तो लक्ष्मी जी इन्द्राणी हैं। चक्रपाणि भगवान् साक्षात् यम हैं तो श्री कमला यमपत्नी धूमार्णा हैं. देवाधिदेव श्री विष्णु स्वयं कुबेर हैं तो श्री लक्ष्मीजी साक्षात् ऋद्धि हैं। श्रीकेशव स्वयं वरुण हैं तो महाभागा लक्ष्मीजी गौरी हैं, हे द्विजराज ! श्रीहरि देवसेनापति स्वामी कार्तिकेय हैं तो श्री लक्ष्मीजी देवसेना हैं। हे द्विजोत्तम ! भगवान् गदाधर (शक्ति के) आधार हैं तो लक्ष्मीजी शक्ति हैं, भगवान् निमेष हैं तो लक्ष्मीजी काष्ठा हैं, वे मुहूर्त हैं तो ये कला हैं। सर्वेश्वर सर्वरूप श्रीहरि दीपक हैं तो श्रीलक्ष्मी जी ज्योति हैं, श्री विष्णु वृक्षरूप हैं तो जगन्माता श्रीलक्ष्मी जी लता हैं। चक्रगदाधर देव श्री विष्णु दिन हैं तो लक्ष्मीजी रात्रि हैं, वरदायक श्रीहरि वर (दूल्हा) हैं तो पद्मनिवासिनी श्रीलक्ष्मी जी वधू (दुलहन) हैं। भगवान् नद हैं तो श्री जी नदी हैं। कमल नयन भगवान् ध्वजा हैं तो कमलालया लक्ष्मीजी पताका हैं। जगदीश्वर परमात्मा नारायण लोभ हैं तो श्रीलक्ष्मी जी तृष्णा हैं. तथा हे मैत्रेय !

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रति और राग भी साक्षात् लक्ष्मी और गोविन्द रूप ही हैं। अधिक क्या कहा जाय, संक्षेप में यह कहना चाहिये कि देव, तिर्यक् और मनुष्य आदि में पुरुषवाची तत्त्व भगवान् श्रीहरि हैं और स्त्रीवाची तत्त्व श्री लक्ष्मीजी, इनके परे और कोई नहीं है।

श्रीपुरुषसूक्त-मन्त्रों द्वारा परम पुरुष (श्रीविष्णु) का स्तवन

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम्'।

'उन परम पुरुष के सहस्रों (अनन्त) मस्तक, सहस्रों नेत्र और सहस्रों चरण हैं। वे इस सम्पूर्ण विश्व की समस्त भूमि (पूरे स्थान) को सब ओर से व्याप्त करके इससे दस अंगुल (अनन्त योजन) ऊपर स्थित हैं। अर्थात् वे ब्रह्माण्ड में व्यापक होते हुए उससे परे भी हैं।' (यह मन्त्र भगवान् विष्णु के देशगत विभुत्व का प्रतिपादक है।

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति॥

'यह जो इस समय वर्तमान (जगत्) है, जो बीत गया और जो आगे होने वाला है, यह सब वे परम पुरुष ही है। इसके अतिरिक्त वे देवताओं के तथा अन्न से (भोजन द्वारा) जीवित रहते हैं, उन सबके भी ईश्वर (अधीश्वर-शासक) हैं।' (यह मन्त्र भगवान् के सर्वकाल व्यापी रूप का वर्णन करता है।)

एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पुरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि॥

'यह भूत, भविष्य, वर्तमान से सम्बद्ध समस्त जगत् इन परम पुरुष का वैभव है। वे अपने इस विभूति-विस्तार से भी महान् हैं। उन परमेश्वर की एक-पाद्विभूति (चतुर्थांश)—में ही यह पञ्चभूतात्मक विश्व है। उनकी शेष त्रिपाद्विभूति में शाश्वत दिव्यलोक (वैकुण्ठ, गोलोक, साकेत, शिवलोक आदि) हैं।' (यह मन्त्र भगवान् के वैभव का वर्णन करता है और नित्य लोकों के वर्णन द्वारा उनके मोक्षपदत्व को भी बतलाता है।

त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि॥

'वे परम पुरुष स्वरूपतः इस मायिक जगत् से परे त्रिपाद्विभूति में प्रकाशमान हैं। (वहाँ माया का प्रवेश न होने से उनका स्वरूप नित्य प्रकाशमान है।) इस विश्व के रूप में उनका एक पाद ही प्रकट हुआ है अर्थात् एक पाद से वे ही विश्वरूप भी हैं। इसलिए वे ही सम्पूर्ण जड़ एवं चेतनमय—उभयात्मक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जगत् को परिव्याप्त किये हुए हैं।' (इस मन्त्र में भगवान् के चतुर्व्यूह रूप में से अनिरुद्ध रूप का वर्णन हुआ है। यह रूप एकपाद ब्रह्माण्ड-वैभव का अधिष्ठान है।)

तस्माद् विराडजायत विराजो अधि पुरुषः।
स जातो अतिरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः॥

'उन्हीं आदिपुरुष से विराट् (ब्रह्माण्ड) उत्पन्न हुआ। वे परम पुरुष ही विराट् के अधिपुरुष—अधिदेवता (हिरण्यगर्भ) रूप से उत्पन्न होकर अत्यन्त प्रकाशित हुए। पीछे उन्होंने भूमि (लोकादि) तथा शरीर (देव, मानव, तिर्यक् आदि) उत्पन्न किये।' (इस मन्त्र में श्रीनारायण से माया एवं जीवों की उत्पत्ति का वर्णन है।)

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥

'ब्राह्मण इसका मुख था (मुख से ब्राह्मण उत्पन्न हुए)। क्षत्रिय दोनों भुजाएँ बना (दोनों भुजाओं से क्षत्रिय उत्पन्न हुए)। इस पुरुष की जो जङ्घाएँ थीं, वे ही वैश्य हुईं अर्थात् उनसे वैश्य उत्पन्न हुए और पैरों से शूद्र-वर्ग प्रकट हुआ।'

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद् वायुरजायत॥

'इस परम पुरुष के मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुए, नेत्रों से सूर्य प्रकट हुए, मुख से इन्द्र और अग्नि तथा प्राण से वायु की उत्पत्ति हुई।'

नाभ्यां आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन्॥

'उन्हीं परम पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष लोक उत्पन्न हुआ, मस्तक से स्वर्ग प्रकट हुआ, पैरों से पृथिवी, कानों से दिशाएँ हुईं। इस प्रकार समस्त लोक उस पुरुष में ही कल्पित हुए।'

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिःसप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम्॥

'देवताओं ने जब यज्ञ करते समय (संकल्प से) पुरुष रूप पशु का बन्धन किया, तब सात समुद्र इसकी परिधि (मेखलाएँ) थे। इक्कीस प्रकार के छन्दों को (गायत्री, अतिजगती और कृति में से प्रत्येक के सात-सात प्रकार से) समिधाएँ बनीं। (इस मन्त्र में सृष्टि-यज्ञ की समिधा का वर्णन है।)

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'देवताओं ने (पूर्वोक्त रूप से) यज्ञ के द्वारा यज्ञस्वरूप का यजन (आराधन) किया। उस यज्ञ से सर्वप्रथम सब धर्म उत्पन्न हुए। उन धर्मों के आचरण से वे देवता महान् महिमावाले होकर उस स्वर्गलोक का सेवन करते हैं, जहाँ प्राचीन साध्य-देवता निवास करते हैं।' (ऋग्वेद १०।९०।१-५, १२-१६)

ॐ नारायणाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्॥ (तैत्तिरीयारण्यक १०।१।२५)

'भगवान् नारायण को हम गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उन भगवान् वासुदेव का ध्यान करते हैं। वह श्री विष्णु भगवान् हमको ज्ञान-ध्यान के लिए प्रेरणा करें।'

श्रीसूक्त मन्त्रों द्वारा श्रीलक्ष्मी-स्तवन

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह॥

'हे जातवेदा (सर्वज्ञ) अग्निदेव! आप सुवर्ण के-से रंगवाली, किंचित् हरितवर्ण-विशिष्टा, सोने चाँदी के हार पहनने वाली, चन्द्रवत् प्रसन्न कान्ति, सुवर्णमयी लक्ष्मीदेवी का मेरे लिये आह्वान करें।'

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥

'हे जातवेदा (सर्वज्ञ) अग्निदेव। आप सुवर्ण, गाय, अश्व एवं नौकर-चाकर (धन-धान्यादि) भौतिक (धनलक्ष्मी) सहित अनपायिनी, अनपगामिनी (स्थिर रहने वाली) लक्ष्मीदेवी का मेरे लिये आह्वान करें।'

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥

'अश्व, रथ-हाथियों आदि से सुसज्जित सैन्य का रूप धारण करनेवाली (राज्य-शक्ति वैभव सहित) लक्ष्मी मुझे प्राप्त हो एवं उनका चिरंतन (सर्वदा) निवास मेरे घर में हो।'

कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्॥

'जो साक्षात् ब्रह्मरूपा, मन्द-मन्द मुस्कराने वाली, सोने के परकोटे से आवृत, दयार्द्र, तेजोमयी, स्वयं पूर्णकामा, भक्तों को पूर्णकाम बना देने वाली, कमल के आसन पर विराजमान तथा पद्मवर्णा हैं, उन लक्ष्मी देवी का मैं यहाँ आह्वान करता हूँ।'

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।।

'जो चन्द्र के समान शुभ्र कान्ति वाली, अमित-द्युतिशालिनी, यश से दीप्तिमती, स्वर्गलोक में देवगणों के द्वारा सेवित, उदारशीला और पद्महस्ता हैं, उन लक्ष्मीदेवी की मैं शरण ग्रहण करता हूँ। मेरी (लौकिक-पारमार्थिक) दरिद्रता दूर हो जाय। मैं आपको शरण्या के रूप में वरण करता हूँ।'

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु या अन्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ।।

'हे सूर्य के समान प्रकाश स्वरूपे ! तुम्हारे ही तप से वृक्षों में श्रेष्ठ मङ्गल-मय विल्ववृक्ष उत्पन्न हुआ। उसके फल हमारे बाहरी और भीतरी दारिद्र्य को दूर करें।'

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।

'जिनका कोई पराभव नहीं कर सकता, जो नित्य पुष्टा हैं तथा गोबर से (पशुओं से) गन्ध गुणवती पृथ्वी ही जिनका स्वरूप है, सब भूतों की स्वामिनी उन लक्ष्मी-देवी का मैं यहाँ अपने घर में आह्वान करता हूँ।'

आर्द्रां पुष्करणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ।।

'अग्ने ! आर्द्र स्वभावा, कमलहस्ता, पुष्टिरूपा, पीतवर्णा, पद्मों की माला धारण करने वाली, चन्द्रमा के समान शुभ्र कान्ति से युक्त स्वर्णमयी लक्ष्मी देवी को आप मेरे यहाँ ले आवें।'

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ।।

'अग्ने ! जो दुष्टों का निग्रह करने वाली होने पर भी कोमल स्वभाव वाली हैं, मङ्गलदायिनी, अवलम्बन प्रदान करने वाली यष्टिरूपा, सुन्दर वर्णवाली सुवर्णमालाधारिणी, सूर्य-स्वरूपा तथा हिरण्मयी हैं, उन लक्ष्मीदेवी को आप मेरे घर में ले आयें।' (ऋग्वेद परिशिष्ट)

ॐ महालक्ष्म्यै विद्महे, विष्णुप्रियायै धीमहि । तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात् ।

'श्री लक्ष्मीजी को हम गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उन विष्णुप्रिया का ध्यान करते हैं। वह लक्ष्मीदेवी हमको ज्ञान-ध्यान के लिये प्रेरणा करें।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णु-सूक्त-मन्त्रों द्वारा श्री विष्णु-स्तवन

भवा मित्रो न: शेव्यो घृतासुतिर्विभूतद्युम्न एवया उ सपृथाः ।
अधा ते विष्णो विदर्घ्यः स्तोमो यज्ञश्च राध्यो हविष्मता ।।१।।

यः पूर्व्याय वेधसे नवीयसे सुमज्जानये विष्णवे ददाशति ।
यो जातमस्य महतो महि ब्रवत्सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिदभ्यसत् । २।।

तमु स्तोतारः पूर्व्यं यथा विद ऋतस्य गर्भं जनुषा पिपर्तन ।
आस्य जानन्तो नाम चिद्विवक्तन महस्ते विष्णो सुमतिं भजामहे ।।३।।

तमस्य राजा वरुणस्तमश्विना क्रतुं सचन्त मारुतस्य वेधसः ।
दाधार दक्षमुत्तममहर्विदं व्रजं च विष्णुः सखिवाँ अपोर्णुते ।।४।।

आ यो विवाय सचथाय दैव्य इन्द्राय विष्णुः सुकृते सुकृत्तरः ।
वेधा अजिन्वत् त्रिषधस्थ आर्यमृतस्य भागे यजमानमाभजत् । ५।।

(ऋग्वेद मं० १ अ० २ सूक्त १५६)

हे सर्वव्यापी विष्णुदेव ! आप हमारे सूर्य के समान प्रकाशक मित्र हैं। आप ही हमारी सीमाओं के सम्पूर्ण बन्धन काटकर सर्वविध दुःखों से त्राण करते हैं और असीम बन्धनमुक्त सुख का दान करते हैं। आप घृत के जन्मदाता हैं तथा घृताहुतियों के द्वारा पूजित होते हैं। आपका यश एवं अन्न महान् है। आप ही सबको सुरक्षित रखते हैं। और सबसे बड़े हैं। सचमुच ही आप हमारे लिए भी ऐसे ही हों। हृदयेश्वर ! यतः आप ऐसे हैं, इसलिये आपके माहात्म्य के ज्ञाता यजमान को बारम्बार आपके स्तोत्र की वृद्धि करनी चाहिये। यज्ञों के द्वारा हाथ में हविष्य लेकर आपकी पूजा करनी चाहिये ।।१।। जो मनुष्य सनातन, जगत्कर्ता, नित्यनूतन, परम सुन्दर, स्तवनीय, स्वयम्भू एवं ललनाललाम, प्रमदाशिरोमणि लक्ष्मी के पति विष्णु भगवान् को हविष्य आदि का समर्पण करता है और इन महानुभाव के महान्, पूजनीय हिरण्यगर्भादिरूप जन्म का संकीर्तन करता है, वह भी अन्न और कीर्ति से युक्त होकर सबके परम गन्तव्य भगवत्पद को प्राप्त होता है ।।२।। हे भगवद्गुणानुवादरसिक सत्पुरुषो ! उस अनादि-सिद्ध सनातन परमात्मा को तुम जैसा जानते हो, वैसा ही अपने सहज निष्काम जीवन से आजीवन तृप्त करो, प्रीति पूर्वक उसकी भक्ति करो, क्योंकि वही कारणवारि का जनक, यज्ञात्मा, परम सत्य, ऋतदेव हैं। [इस सर्वात्मा विष्णु के चिन्मय नाम को ही सर्वत्र परिपूर्ण देखते हुए उसका संकीर्तन करो। हे सर्वव्यापी सर्वकारण-कारण प्रभो ! आप महान् हैं। हम आपकी सुमति का भजन-करते हैं।]।।३।। भगवान् विष्णु सम्पूर्ण देवगणों के विधाता हैं। उन्हीं के स्थिति, पालनादि रूप कर्मका सेवन-अनुगमन राजा वरुण, अश्विनी कुमार आदि देवता करते हैं, क्योंकि सम्पूर्ण पालन-क्रिया विष्णु के अधीन है। वही इन्द्र आदि सहायकों से युक्त होकर अत्यन्त उत्कृष्ट

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वर्गोत्पादक एवं दक्षता से युक्त बल धारण करते हैं और वही व्रज को निरावरण करते है ॥४॥ विष्णु भगवान् दिव्य प्रकाशमय लोक में निवास करते हैं। शुभ फल दाताओं में वही सर्वश्रेष्ठ हैं। वह शुभ कर्म यज्ञात्मक समर्पण में सहायता करने के लिये अपने गुणानुवाद गायक स्तुतिकर्ता सर्वस्वार्पणशील यजमानभक्त के पास स्वयं पधारते हैं। अर्थात् भक्त को दर्शन देते हैं। विष्णु का निवास-स्थान है तीनों सवन अथवा द्युलोक, अन्तरिक्ष और पृथिवी। वे ही विधाता हैं। वे अपने श्रेष्ठ सर्वमेधी यजमान भक्त को तृप्त करते हैं। वे यज्ञभाग में यजमान को भी अपने साथ बैठाते हैं अथवा भक्त को यज्ञफल का स्वामी बना देते हैं। [इस मन्त्र में अनेक उपयोगी पदार्थों का निरूपण हुआ है। विष्णु का निवास-स्थान दिव्य एवं त्रिलोक है। वे शुभकर्म में सहायक और उसके फलदाता हैं। वे अपने भक्त के पास आकर वरदान देते हैं, उसको प्रसन्न करते हैं, पास बैठाते हैं, उसके साथ भोजन करते हैं और उसमें भी भक्ति का फल देने वाली शक्ति का सञ्चार कर देते हैं।]॥५॥

□

स्तोत्र-प्रार्थना

सोपान १६

मङ्गलम्

स जयति सिन्धुरवदनो देवो यत्पादपङ्कजस्मरणम् ।
वासरमणिरिव तमसां राशीन्नाशयति विघ्नानाम् ॥१॥
सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥२॥
धूमकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥३॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥४॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥५॥
व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् ।
पाराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम् ॥६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे।
नमो वै ब्रह्मनिधये वसिष्ठाय नमो नमः ॥७॥
अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः।
अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः ॥८॥

मङ्गलं सम्पूर्णम्

उन गजवदन देवदेव की जय हो, जिनके चरण कमल का स्मरण सम्पूर्ण विघ्न समूह को इस प्रकार नष्ट कर देता है, जैसे सूर्य अन्धकार-राशि को ॥१॥ जो पुरुष विद्यारम्भ, विवाह, गृहप्रवेश, निर्गमन (घर से बाहर जाने), संग्राम अथवा संकट के समय सुमुख, एकदन्त, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्न नाशक, विनायक, धूमकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन इन बारह नामों का पाठ या श्रवण भी करता है, उसे किसी प्रकार का विघ्न नहीं होता ॥२-४॥ जो श्वेत वस्त्र धारण किये हैं, चन्द्रमा के समान जिनका वर्ण है तथा जो प्रसन्न वदन है, उन देवदेव चतुर्भुज भगवान् विष्णु का सब विघ्नों की निवृत्ति के लिये ध्यान करना चाहिये ॥५॥ जो वसिष्ठजी के नाती (प्रपौत्र) शक्ति के पौत्र पराशरजी के पुत्र तथा शुकदेव जी के पिता हैं, उन निष्पाप, तपोनिधि व्यासजी की मैं वन्दना करता हूँ ॥६॥ विष्णुरूप व्यास अथवा व्यासरूप श्रीविष्णु को मैं नमस्कार करता हूँ। वसिष्ठवंशज ब्रह्मनिधि श्रीव्यासजी को बारंबार नमस्कार हैं ॥७ भगवान् वेद व्यासजी बिना चार मुख के ब्रह्मा हैं; दो भुजा वाले दूसरे विष्णु हैं और ललाट लोचनं (तीसरे नेत्र) से रहित साक्षात् महादेवजी हैं ॥८॥

श्रीगणपति-स्तोत्राणि

श्री गणेश प्रातःस्मरणम्

प्रातःस्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम्।
उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्डमाखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम् ॥१॥
प्रातर्नमामि चतुराननवन्द्यमानमिच्छानुकूलमखिलं च वरं ददानम्।
तं तुन्दिलं द्विरसनाधिपयज्ञसूत्रं पुत्रं विलासचतुरं शिवयोः शिवाय ॥२॥
प्रातर्भजाम्यभयदं खलु भक्तशोक-दावानलं गणविभुं वरकुञ्जरास्यम्।
अज्ञानकाननविनाशनहव्यवाहमुत्साहवर्धनमहं सुतमीश्वरस्य ॥३॥

श्लोकत्रयमिदं पुण्यं सदा साम्राज्यदायकम्।
प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान् ॥

जो इन्द्र आदि देवेश्वरों के समूह से वन्दनीय हैं, अनाथों के बन्धु हैं, जिनके युगल कपोल सिन्दूर राशि से अनुरञ्जित हैं, जो उद्दण्ड (प्रबल) विघ्नों का खण्डन करने के लिये प्रचण्ड दण्ड स्वरूप हैं, उन श्री गणेशजी को मैं प्रातः काल स्मरण

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करता हूँ ॥१॥ जो ब्रह्मा से वन्दनीय हैं, अपने सेवक को उसकी इच्छा के अनुकूल पूर्ण वरदान देने वाले हैं, तुन्दिल हैं, सर्प ही जिनका यज्ञोपवीत है, उन क्रीड़ा कुशल शिव-पार्वती के पुत्र (श्री गणेशजी) को मैं कल्याण प्राप्ति के लिये प्रातः काल नमस्कार करता हूँ ॥२॥ जो अपने जन को अभय प्रदान करने वाले हैं, भक्तों के शोकरूप वन के लिये दावानल (वनाग्नि) हैं, गणों के नायक हैं, जिनका मुख हाथी के समान और सुन्दर है और जो अज्ञानरूप वन को नष्ट करने (जलाने) के लिये अग्नि हैं, उन उत्साह बढ़ाने वाले शिवसुत (श्री गणेशजी) को मैं प्रातःकाल भजता हूँ ॥३॥ जो पुरुष प्रातः काल उठकर संयत चित्त से इन तीनों पवित्र श्लोकों का नित्य पाठ करता है, उसको यह स्तोत्र सर्वदा साम्राज्य के समान सुख देता है।

सङ्कटनाशनगणेशस्तोत्रम्

नारद उवाच

प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं विनायकम्।
भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुः कामार्थसिद्धये ॥१॥
प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्।
तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम् ॥२॥
लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च।
सप्तमं विघ्नराजं च धूमवर्णं तथाष्टकम् ॥३॥
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्।
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ॥४॥
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं प्रभो ॥५॥
विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम्।
पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥६॥
जपेद्गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासैः फलं लभेत्।
संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ॥७॥
अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयेत्।
तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ॥८॥

श्रीनारदपुराणे सङ्कटनाशन गणेशस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

नारद बोले—पार्वतीनन्दन देवदेव श्रीगणेशजी को सिर झुकाकर प्रणाम करें और फिर अपनी आयु, कामना और अर्थ की सिद्धि के लिये उन भक्त निवास का नित्य प्रति स्मरण करे ॥१॥ पहला वक्रतुण्ड (टेड़े मुखवाले), दूसरा एकदन्त (एक दाँत वाले), तीसरा कृष्णपिङ्ग (काली और भूरी आँखों वाले), चौथा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गजवस्त्र (हाथी के से मुखवाले) ॥२॥ पाँचवाँ लम्बोदर (बड़े पेट वाले), छटा विकट (विकराल), सातवाँ विघ्नराजेन्द्र (विघ्नों का शासन करने वाले राजाधिराज) तथा आठवाँ धूसरवर्णवाले) ॥३॥ नवाँ भालचन्द्र (जिसके ललाट पर चन्द्रमा सुशोभित है), दसवाँ विनायक, ग्यारहवाँ गणपति और बारहवाँ गजानन ॥४॥ इन बारह नामों का जो पुरुष (प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल) तीनों संध्याओं में पाठ करता है, हे प्रभो ! उसे किसी प्रकार के विघ्न का भय नहीं रहता, इस प्रकार का स्मरण सब प्रकार की सिद्धियाँ देने वाला है ॥५ इससे विद्याभिलाषी विद्या, धनाभिलाषी धन, पुत्रेच्छु पुत्र तथा मुमुक्षु मोक्षगति को प्राप्त कर लेता है ॥६॥ इस गणपति स्तोत्र का जप करे तो छः मास इच्छित फल प्राप्त हो जाता है। तथा एक वर्ष में पूर्ण सिद्धि प्राप्त हो जाती है। इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है ॥७॥ जो पुरुष इसे लिखकर आठ ब्राह्मणों को समर्पण करता है, गणेशजी की कृपा से उसे सब प्रकार की विद्या प्राप्त हो जाती है ॥८॥

श्रीगणपतिस्तोत्रम्

जेतुं यस्त्रिपुरं हरेण हरिणा व्याजाद्बलिं बध्नता
स्रष्टुः वारिभवोद्भवे भुवनं शेषेण धर्तुं धराम्।
पार्वत्या महिषासुरप्रमथने सिद्धाधिपैः सिद्धये
ध्यातः पञ्चशरेण विश्वजितये पायात्स नागाननः ॥१॥

विघ्नध्वान्तनिवारणैकतरणिर्विघ्नाटवीहव्यवाड्
विघ्नव्यालकुलाभिमानगरुडो विघ्नेभपञ्चाननः
विघ्नोत्तुङ्गगिरिप्रभेदनपविर्विघ्नाम्बुवेर्वाडवो
विघ्नाघौघवनप्रचण्डपवनो विघ्नेश्वरः पातु नः ॥२॥

खर्वं स्थूलतनुं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरं
प्रस्यन्दन्मदगन्धलुब्धमधुपव्यालोलगण्डस्थलम्।
दन्ताघातविदारितारिरुधिरैः सिन्दूरशोभाकरं
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम् ॥३॥

गजाननाय महसे प्रत्यूहतिमिरच्छिदे।
अपारकरुणापूरतरङ्गितदृशे नमः ॥४॥

अगजाननपद्माकं गजाननमहर्निशम्।
अनेकदन्तं भक्तानामेकदन्तमुपास्महे ॥५॥

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः
क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्।
दोर्भिः पाशांकुशाब्जाभयवरमनसं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं
ध्यायेच्छान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम् ॥६॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आवाहये तं गणराजदेवं रक्तोत्पलाभासमशेषवन्द्यम् ।।
घ्नान्तकं विघ्नहरं गणेशं भजामि रौद्रं सहितं च सिद्धया ।।७
यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुष तथान्ये ।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ।८
विघ्नेश वीर्याणि विचित्रकाणि वन्दीजनैर्मागधकैः स्मृतानि ।
श्रुत्वा समुत्तिष्ठ गजानन त्वं ब्राह्मे जगन्मङ्गलकं कुरुष्व ।।९
गणेश हेरम्ब गजाननेति महोदर स्वानुभवप्रकाशिन् ।
वरिष्ठ सिद्धिप्रिय बुद्धिनाथ वदन्त एवं त्यजत प्रभीतीः ।।१०
अनेकविघ्नान्तक वक्रतुण्ड स्वसंज्ञसिश्च चतुर्भुजेति ।
कवीश देवान्तकनाशकारिन् वदन्त एवं त्यजत प्रभीतीः ।।११
अनन्तचिद्रूपमयं गणेशं ह्यभेदभेदादिविहीनमाद्यम् ।
हृदि प्रकाशस्य धरं स्वधीस्थ तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।१२
विश्वादिभूतं हृदि योगिनां वै प्रत्यक्षरूपेण विभान्तमेकम् ।
सदा निरालम्ब समाधिगम्यं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः । १३
यदीयवीर्येण समर्थभूता माया तया संरचितं च विश्वम् ।
नागात्मकं ह्यात्मतया प्रतीतं तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।१४
सर्वान्तरे संस्थितमेकमूढं यदाज्ञया सर्वमिद विभाति ।
अनन्तरूपं हृदि बोधकं वै तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।१५
य योगिनो योगबलेन साध्यं कुर्वन्ति तं कः स्तवनेन नौति ।
अतः प्रणामेन सुसिद्धिदोऽस्तु तमेकदन्तं शरणं व्रजामः ।।१६

देवेन्द्रमौलिमन्दारमकरन्दकरणारुणाः ।
विघ्नान् हरन्तु हेरम्बचरणाम्बुजरेणवः ।।१७
एकदन्तं महाकायं लम्बोदरगजाननम् ।
विघ्ननाशकर देवं हेरम्ब प्रणमाम्यहम् ।।१८
यदक्षरं पदंभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ।।१९

इतिगणपति स्तोत्रं सम्पूर्णम्

त्रिपुरासुर को जीतने के लिये शिव ने, बलि को छल से बाँधते समय विष्णु ने, ये जगत् को रचने के लिये ब्रह्मा ने, पृथ्वी धारण करने के लिये शेषनाग ने महिषासुर को मारने से समय पार्वती ने, सिद्धि पाने के लिये सिद्धों के अधिपतियों (सनकादि ऋषियों) ने और सब संसार को जीतने के लिये, कामदेव ने जिन गणेशजी का ध्यान किया है, वे हम लोगों का पालन करे ।।१ विघ्नरूप

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अन्धकार का नाश करने वाले एक मात्र सूर्य, विघ्नरूप वन के जलाने वाले अग्नि: विघ्नरूप सर्पकुल का दर्प नष्ट करने के लिये गरुड़, विघ्नरूप हाथी को मारने वाले सिंह, विघ्नरूप ऊँचे पहाड़ को तोड़ने वाले वज्र, विघ्नरूप महासागर के वडवानल, विघ्नरूपी मेघसमूह को उड़ा देने वाले प्रचण्ड वायु सदृश, गणेशजी हमको पालन करें।२। जो नाटे और मोटे शरीर वाले हैं, जिनका गजराज के समान मुँह और लम्बा उदर है, जो सुन्दर है तथा बहते हुए मद की सुगन्ध के लोभी भौरों के चाटने से जिनका गण्डस्थल चपल हो रहा है, दाँतों की चोट से विदीर्ण हुए शत्रुओं के खून से जो सिन्दूर की-सी शोभा धारण करते हैं, कामनाओं के दाता और सिद्धि देने वाले उन पार्वती के पुत्र गणेशजी की मैं वन्दना करता हूँ।३। विघ्नरूप अन्धकार का नाश करने वाले, अथाह करुणारूप जलराशि से तरङ्गित नेत्रों वाले गणेश नामक ज्योति को नमस्कार हो।४। जो पार्वती के मुखरूप कमल को प्रकाशित करने में सूर्यरूप हैं, जो भक्तों को अनेक प्रकार के फल देते हैं, उन एक दाँत वाले गणेशजी की मैं सदैव उपासना करता हूँ।५। जिनका शरीर श्वेत है, कपड़े श्वेत हैं श्वेत पुष्प, चन्दन और रत्नदीपों से क्षीर समुद्र के तटपर जिनकी पूजा हुई है, देवता और मनुष्य जिनको अपना प्रधान पूज्य समझते हैं, जो रत्न के सिंहासन पर बैठे हैं, जिनके हाथों में पाश (एक प्रकार की डोरी); अंकुश और कमल के फूल हैं, जो अभयदान और वरदान देने वाले हैं, जिनके सिर में चन्द्रमा रहते हैं, और जिनके तीन नेत्र हैं, निर्मल लक्ष्मी के साथ रहने वाले उन प्रसन्न प्रभु गणेशजी का अपनी शान्ति के लिये ध्यान करें।६। जो देवताओं के गण के राजा हैं, लाल कमल के समान जिनके देह की आभा है, जो सबके वन्दनीय हैं विघ्न के काल हैं, विघ्न के हरने वाले हैं, शिवजी के पुत्र हैं, उन गणेशजी का मैं सिद्धि के साथ आवाहन और भजन करता हूँ।७। जिनको वेदान्ती लोग ब्रह्म कहते हैं और दूसरे लोग परम प्रधान पुरुष अथवा संसार की सृष्टि के कारण या ईश्वर कहते हैं, उन विघ्नविनाशक गणेशजी को नमस्कार है।८। हे विघ्नेश ! हे गजानन ! मागध और वन्दीजनों के मुख से गाये जाते हुए अपने विचित्र पराक्रमों को सुनकर, ब्राह्म मुहूर्त में उठो और जगत् का कल्याण करो।९। हे गणेश ! हेरम्ब ! हे गजानन ! हे लम्बोदर ! हे अपने अनुभव से प्रकाशित होने वाले ! हे श्रेष्ठ ! हे सिद्धि के प्रियतम ! हे बुद्धिनाथ ! ऐसे कहते हुए, हे मनुष्यो ! अपना भय छोड़ दो।१०। हे अनेक विघ्नों का नाश करने वाले ! हे वक्रतुण्ड ! गणेश आदि अपने नाम वालों मे भी निवास करने वाले ! हे चतुर्भुज ! हे कवियों के नाथ ! हे दैत्यों का नाश करने वाले ! ऐसा कहते हुए, हे मनुष्यों ! अपने भय को भगा दो।११। जो गणेश अनन्त हैं, चेतन रूप हैं, अभेद और भेद आदि से रहित और सृष्टि आदि के कारण हैं, जो हृदय में सदा प्रकाश करते हैं तथा अपनी ही बुद्धि में स्थित रहते हैं, उन एक

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

दन्त गणेशजी की शरण में हम जाते हैं ।।१२ जो संसार के आदि कारण हैं, योगियों के हृदय में अद्वितीय रूप से साक्षात् प्रकाशित होते हैं और निरालम्ब समाधि के द्वारा ही जानने योग्य हैं, उन एक दन्त गणेशजी की शरण में हम जाते हैं ।१३। जिनके बल से माया समर्थ हुई है और उसके द्वारा यह संसार रचा गया है, उन नाग स्वरूप से आत्मा रूप से प्रतीत होने वाले एक दन्त गणेश की शरण में हम जाते हैं ।१४। जो सब लोगों के अन्तः करण में अकेले गूढभाव से स्थित रहते हैं, जिनकी आज्ञा से यह जगत् विराजमान है, जो अनन्तरूप हैं, और हृदय में ज्ञान देने वाले हैं, उन एकदन्त गणेशजी की शरण में हम जाते हैं ।१५। जिनको योगीजन योगबल से साध्य करते (जान पाते) हैं, स्तुति से उनका वर्णन कौन कर सकता है ? इसलिये हम उनको केवल प्रणाम करते हैं कि हमें सिद्धि दें, उन प्रसिद्ध एकदन्त की शरण में हम जाते हैं ।१६। जो इन्द्र के मुकुट में गुँथे हुए मन्दार कुसुमों के मकरन्द कणों से लाल हो रही है, वह गणेशजी के चरण कमलों की रज विघ्नों का हरण करे ।१७। एक दन्त वाले, बड़े शरीर वाले, स्थूल उदर वाले, हाथी के समान मुखवाले और विघ्नों का नाश करने वाले गणेशदेव को मैं प्रणाम करता हूँ ।१८। हे देव ! जो अक्षर, पद अथवा मात्रा छूट गयी हो, उसके लिये क्षमा करो और हे परमेश्वर ! प्रसन्न हो ओ ।१९।

श्रीसूर्य प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं
रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि ।
सामानि यस्य किरणाः प्रभवादि हेतुं
ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम् ।।१

प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाङ्मनोभि-
र्ब्रह्मेन्द्रपूर्वकसुरैर्नतमर्चितं च ।
वृष्टिप्रमोचनविनिग्रहहेतुभूतं
त्रैलोक्यपालनपरं त्रिगुणात्मकं च । २

प्रातर्भजामि सवितारमनन्तशक्तिं
पापौघशत्रुभयरोगहरं परं च ।
तं सर्वलोककलनात्मककालमूर्तिं
गोकण्ठ बन्धनविमोचनमादिदेवम् ।।३

श्लोकत्रयमिदं भानोः प्रातःकाले पठेत्तु यः ।
स सर्वव्याधिनिर्मुक्तः परं सुखमवाप्नुयात् ।।४

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

सूर्य प्रातःस्मरणं सम्पूर्णम्

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मैं सूर्यनारायण भगवान् के उस श्रेष्ठ रूप को प्रातः समय स्मरण करता हूँ, जिनका मण्डल ऋग्वेद है. तनु यजुर्वेद है, किरणें सामवेद हैं, और जो ब्रह्मा का दिन हैं, जगत् की उत्पत्ति, रक्षा और नाश का कारण है तथा अलक्ष्य और अचिन्त्य स्वरूप है ।१। मैं प्रातःसमय शरीर, वाणी और मन के द्वारा ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं से स्तुत और पूजित, वृष्टि के कारण एवं अवृष्टि के हेतु, तीनों लोकों के पालन में तत्पर और सत्त्व आदि त्रिगुणरूप धारण करने वाले तरणि (सूर्य भगवान्) को नमस्कार करता हूँ ।२। जो पापों के समूह तथा शत्रु जनित भय एवं रोगों का नाश करने वाले हैं, सबसे उत्कृष्ट हैं, सम्पूर्ण लोकों के समय की गणना के निमित्त भूतकाल स्वरूप है, और गौओं के कण्ठ बन्धन छुड़ाने वाले हैं, उन अनन्त शक्ति सम्पन्न आदिदेव सविता (सूर्य भगवान्) को मैं प्रातःकाल भजता हूँ ।३। जो मनुष्य प्रातःकाल सूर्य के स्मरण रूप इन तीनों श्लोकों का पाठ करता है, वह सब रोगों से मुक्त होकर परम सुख प्राप्त कर सकता है ।४।

सूर्याष्टकम्

आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर ।
दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तुते ।।१
सप्ताश्वरथमारूढं प्रचण्डं कश्यपात्मजम् ।
श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।२
लोहितं रथमारूढं सर्वलोकपितामहम् ।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।३
त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्माविष्णुमहेश्वरम् ।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।४
बृंहितं तेजःपुञ्जं च वायुमाकाशमेव च ।
प्रभुं च सर्वलोकानां तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।५
बन्धूकपुष्पसङ्काशं हारकुण्डलभूषितम् ।
एकचक्रधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।६
तं सूर्यं जगत्कर्तारं महातेजः प्रदीपनम् ।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।७
तं सूर्यं जगतां नाथं ज्ञानविज्ञानमोक्षदम् ।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ।।८

श्रीशिव प्रोक्त सूर्याष्टकं सम्पूर्णम्

हे आदिदेव भास्कर ! आपको प्रणाम है, आप मुझ पर प्रसन्न हो, हे दिवाकर ! आपको नमस्कार है । हे प्रभाकर ! आपको प्रणाम है ।१। सात घोड़ों वाले

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रथ पर आरूढ़, हाथ में श्वेत कमल धारण किये हुए प्रचण्ड तेजस्वी कश्यपकुमार सूर्य को मैं प्रणाम करता हूँ ।२। लोहितवर्ण, रथारूढ़ सर्वलोकपितामह महापापहारी सूर्यदेवको मैं प्रणाम करता हूँ ।३। जो त्रिगुणमय ब्रह्मा, विष्णु और शिव रूप हैं, उन महापापहारी महान् वीर सूर्यदेव को मैं नमस्कार करता हूँ ।४। जो बढ़े हुए तेज के पुञ्ज हैं और वायु तथा आकाश स्वरूप हैं, उन समस्त लोकों के अधिपति सूर्य को मैं प्रणाम करता हूँ ।५। जो बन्धूक (दुपहरिया) के पुष्प के समान रक्तवर्ण और हार तथा कुण्डलों से विभूषित हैं, उन एक चक्रधारी सूर्यदेव को मैं प्रणाम करता हूँ ।६। महान् तेज के प्रकाशक, जगत् के कर्ता, महापापहारी उन सूर्य भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ ।७। उन सूर्यदेव को, जो जगत् के नायक हैं, ज्ञान, विज्ञान तथा मोक्ष को भी देते हैं, साथ ही जो बड़े-बड़े पापों को भी हर लेते हैं, मैं प्रणाम करता हूँ ।८।

सूर्यमण्डलाकष्टम्

नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे ।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरञ्चिनारायणशङ्करात्मने ।।१
यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालं रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम् ।
दारिद्र्यदुःखक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।२
यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम् ।
तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।३
यन्मण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम् ।
समस्ततेजोमयदिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।४
यन्मण्डलं गूढमतिप्रबोधं धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम् ।
यत्सर्वपापक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।५
यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं यदृग्यजुः सामसु संप्रगीतम् ।
प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।६
यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः ।
यद्योगिनो योगजुषां च संघाः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।७
यन्मण्डलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके ।
यत्कालकल्पक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।।८
यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्धमुत्पत्तिरक्षाप्रलयप्रगल्भम् ।
यस्मिञ्जगत्संहरतेऽखिलञ्च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।९
यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णोरात्मा परं धाम विशुद्धतत्त्वम् ।
सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।१०

CC-0. Jangamwadi Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः ।
यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।११

यन्मण्डलं वेदविदोपगीतं यद्योगिनां योगपथानुगम्यम् ।
तत्सर्ववेदं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।१२

मण्डलाष्टतयं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते ।।१३

श्रीमदादित्यहृदये मण्डलाष्टकं सम्पूर्णम्

जो जगत् के एकमात्र नेत्र (प्रकाशक) हैं, संसार की उत्पत्ति, स्थिति और नाश के कारण हैं, उन वेदत्रयी स्वरूप, सत्त्वादि तीनों गुणों के अनुसार ब्रह्मा, विष्णु और महेश नामक तीन रूप धारण करने वाले सूर्य भगवान को नमस्कार है ।१। जो प्रकाश करने वाला, विशाल रत्नों के समान प्रभा वाला, तीव्र अनादिरूप और दारिद्र्य दुःख के नाश का कारण है, वह सूर्य भगवान का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।२ जिनका मण्डल देवगण से अच्छी प्रकार पूजित है, ब्राह्मणों से स्तुत है और भक्तों को मुक्ति देने वाला है, उन देवाधिदेव सूर्य भगवान् को मैं प्रणाम करता हूँ और वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।३। जो ज्ञानघन अगम्य, त्रिलोकीपूज्य, त्रिगुण स्वरूप, पूर्ण तेजोमय और दिव्यरूप है, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।४। जो सूक्ष्म बुद्धि से जानने योग्य है और सम्पूर्ण मनुष्यों के धर्म की वृद्धि करता है तथा जो सबके पापों के नाश का कारण है, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।५। जो रोगों का विनाश करने में समर्थ है, जो ऋक्, यजुः और साम इन तीनों वेदों में सम्यक् प्रकार से गाया गया है तथा जिसने भूः, भुवः और स्वः इन तीनों लोकों को प्रकाशित किया है, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।६। वेदजाता लोग जिनका वर्णन करते हैं, चारणों और सिद्धों का समूह जिसका गान किया करता है तथा योग का सेवन करने वाले और योगी लोग जिसका गुणगान करते हैं, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।७। जो समस्त जनों में पूजित है और इस मर्त्यलोक में प्रकाश करता है तथा जो काल और कल्प के क्षय का कारण भी है, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।८। जो संसार की सृष्टि करने वाले ब्रह्मा आदि में प्रसिद्ध हैं, जो संसार की उत्पत्ति, रक्षा और प्रलय करने में समर्थ हैं और जिसमें समस्त जगत् लीन हो जाता है वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।९। जो सर्वान्तर्यामी विष्णु भगवान् का आत्मा तथा विशुद्ध तत्त्व वाला परमधाम है और जो सूक्ष्म बुद्धि वालों के द्वारा योगमार्ग से गमन करने योग्य है, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।१०। वेद के जानने वाले जिनका वर्णन करते हैं, चारण और सिद्धगण जिसको गाते

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं और वेदज्ञलोग जिसका स्मरण करते हैं, वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।११। जिनका मण्डल वेदवेत्ता के द्वारा गाया गया है, और जो योगियों से योगमार्ग द्वारा अनुगमन करने योग्य है, उन सब वेदों के स्वरूप सूर्य भगवान् को प्रणाम करता हूँ और वह सूर्य भगवान् का श्रेष्ठ मण्डल मुझे पवित्र करे ।१२। जो पुरुष परम पवित्र इस मङ्गलाष्टक स्तोत्र का पाठ सर्वदा करता है, वह सब पापों से मुक्त हो विशुद्धचित्त होकर सूर्यलोक में प्रतिष्ठा पाता है ।१३।

श्रीविष्णोः प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि भवभीति महार्त्तिशान्त्यै नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभम् ।
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम् ।।
प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः ।
नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ।।
प्रातर्भजामि भजतामभयङ्करं तं प्राक्सर्वजन्मकृतपापभयापहर्त्यै ।
यो ग्राहवक्त्रपतिताङ्घ्रिगजेन्द्रघोर-शोकप्रणाशनकरो धृतशङ्खचक्रः ।।

श्री विष्णोः प्रातः स्मरणं सम्पूर्णम्

गरुड़वाहन, कमलनाभ, ग्राह से ग्रसित गजेन्द्र की मुक्ति के कारण, सुदर्शन चक्रधारी, नवविकसित कमलपत्र-से नेत्र वाले नारायण का भवभयरूपी महान् दुःख की शान्ति के लिये, मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ ।।१ वेदों का स्वाध्याय करने वाले विप्रों के परम आश्रय, नरकरूप संसार समुद्र से तारने वाले, उस परमपुरुष के चरणारविन्द युगल में सिर झुकाकर मन वचन से प्रातःकाल नमस्कार करता हूँ । २ जिसने शङ्ख-चक्र धारण करके ग्राह के मुख में पड़े हुए चरण वाले गजेन्द्र के घोर संकट का नाश किया, भक्तों का अभय करने वाले उन भगवान् को मैं अपने पूर्वजन्मों के सब पापों का नाश करने के लिये प्रातःकाल भजता हूँ ।।३

श्री विष्णोरष्टाविंशति नाम स्तोत्रम्

अर्जुन उवाच

किं नु नाम सहस्राणि जपते च पुनः पुनः ।
यानि नामानि दिव्यानि तानि चाचक्ष्व केशव ।।

श्रीभगवानुवाच

मत्स्यं कूर्मं वराहं च वामनं च जनार्दनम् ।
गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं माधवं मधुसूदनम् ।।
पद्मनाभं सहस्राक्षं वनमालिं हलायुधम् ।
गोवर्धनं हृषीकेशं वैकुण्ठं पुरुषोत्तमम् ।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विश्वरूपं वासुदेवं रामं नारायणं हरिम् ।
दामोदरं श्रीधरं च वेदाङ्गं गरुडध्वजम् ।।
अनन्तं कृष्णगोपालं जपतो नास्ति पातकम् ।
गवां कोटिप्रदानस्य अश्वमेधशतस्य च ।।
कन्यादानसहस्राणां फलं प्राप्नोति मानवः ।
अमायां वा पौर्णमास्यामेकादश्यां तथैव च ।।
सन्ध्याकाले स्मरेन्नित्यं प्रातःकाले तथैव च ।
मध्याह्ने च जपेन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।

श्री विष्णोरष्टाविंशति नाम स्तोत्रं सम्पूर्णम्

अर्जुन ने पूछा—केशव ! मनुष्य बारंबार एक हजार नामों का जप क्यों करता है ? आपके जो दिव्य नाम हों, उनका वर्णन कीजिये ।

श्री भगवान् (श्री कृष्ण) बोले—अर्जुन ! मत्स्य, कूर्म, वराह, वामन, जनार्दन, गोविन्द, पुण्डरीकाक्ष, माधव, मधुसूदन, पद्मनाभ, सहस्राक्ष, वनमाली, हलायुध, गोवर्धन, हृषीकेश, वैकुण्ठ, पुरुषोत्तम, विश्वरूप, वासुदेव, राम, नारायण, हरि, दामोदर, श्रीधर, वेदाङ्ग, गरुडध्वज, अनन्त और कृष्ण गोपाल—इन अट्ठाईस नामों का जप करने वाले मनुष्य के भीतर पाप नहीं रहता । वह एक करोड़ गोदान, एक सौ अश्वमेध-यज्ञ और हजारों कन्यादान का फल प्राप्त कर लेता है । अमावस्या, पूर्णिमा तथा एकादशी तिथि को और प्रतिदिन सायं-प्रातः एवं मध्याह्न के समय इन नामों का जप करने वाला पुरुष सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है ।

श्री कमलापत्यष्टकम्

भुजगतल्पगतं घनसुन्दरं गरुडवाहनमम्बुजलोचनम् ।
नलिनचक्रगदाकरमव्ययं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ।।१
अलिकुलासितकोमलकुन्तलं विमलपीतदुकूलमनोहरम् ।
जलधिजाङ्कितवामकलेवरं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ।।२
किमु जपैश्च तपोभिरुताध्वरैरपि किमुत्तमतीर्थनिषेवणैः ।
किमुत शास्त्रकदम्बविलोकनै भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ।।३
मनुजदेहमिमं भुवि दुर्लभं समधिगम्य सुरैरपि वाञ्छितम् ।
विषयलम्पटतामपहाय वै भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ।।४
न वनिता न सुतो न सहोदरो न हि पिता जननी न च बान्धवः ।
व्रजति साकमनेन जनेन वै भजत रे मनुजाः कमलापतिम् । ५
सकलमेव चलं सचराचरं जगदिदं सुतरां धनयौवनम् ।
समवलोक्य विवेकदृशा द्रुतं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ।।६

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विविधरोगयुतं क्षणभंगुरं परवशं नवमार्गमलाकुलम् ।
परिनिरीक्ष्य शरीरमिदं स्वकं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् ।।७
मुनिवरैरनिशं हृदि भावितं शिवविरिञ्चिमहेन्द्रनुतं सदा ।
मरणजन्मजराभयमोचनं भजत रे मनुजाः कमलापतिम् । ८
हरिपदाष्टकमेतदनुत्तमं परमहंसजनेन समीरितम् ।
पठति यस्तु समाहितचेतसा व्रजति विष्णुपदं स नरो ध्रुवम् ।।९

ब्रह्मानन्दविरचितं श्रीकमलापत्यष्टकं सम्पूर्णम्

रे मनुष्यो ! जो शेषशय्या पर पौढ़े हुए हैं, नीलमेघ-सदृश श्याम सुन्दर हैं, गरुड़ जिनका वाहन है और जिनके कमल-जैसे नेत्र हैं, उन शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी अव्यय श्रीकमलापति को भजो ।१। भौरों के समान जिनकी काली-काली कोमल अलकें हैं, अतिनिर्मल सुन्दर पीताम्बर है और जिनके वामाङ्क में श्रीलक्ष्मीजी सुशोभित हैं, रे मनुष्यो ! उन कमलापति को भजो ।२। जप, तप, यज्ञ अथवा उत्तम-उत्तम तीर्थों के सेवन में क्या रखा है ? अथवा अधिक शास्त्रावलोकन के पचड़े में पड़ने से ही क्या होना है ? रे मनुष्यो ! बस श्रीकमलापति को ही भजो ।३। इस संसार में यह मनुष्य-शरीर अति दुर्लभ और देवगणों से वाञ्छित है—ऐसा जानकर विषय-लम्पटता को त्यागकर रे मनुष्यो ! श्रीकमलापति को भजो ।४। इस जीव के साथ स्त्री, पुत्र, भाई, पिता, माता और बन्धुजन कोई भी नहीं जाता, अतः रे मनुष्यो ! श्रीकमलापति को भजो ।५। यह सचराचर जगत्-धन और यौवन सभी अत्यन्त अस्थिर हैं—ऐसा विवेक दृष्टि से देखकर रे मनुष्यो ! शीघ्र ही श्रीकमलापति को भजो ।६। यह शरीर नाना प्रकार के रोगों का आश्रय, क्षणिक, परवश तथा मल से भरे हुए नौ मार्गों वाला है—ऐसा देखकर रे मनुष्यो ! श्रीकमलापति को भजो ७। मुनिजन जिनका अहर्निश हृदय में ध्यान करते हैं, शिव, ब्रह्मा, तथा इन्द्रादि समस्त देवगण जिनकी सर्वदा वन्दना करते हैं तथा जो जरा, जन्म और मरणादि के भय को दूर करने वाले हैं, रे मनुष्यो ! उन श्रीकमलापति को भजो ।८। दास परमहंस द्वारा कहे गये इस अत्युत्तम भगवान् हरि के अष्टक को जो मनुष्य समाहित चित्त से पड़ता है वह अवश्य ही भगवान् के परमधाम को प्राप्त होता है ।९।

मङ्गलगीतम्

श्रितकमलाकुचमण्डल धृतकुण्डल ए ।
कलितललितवनमाल जय जय देव हरे ।।१
दिनमणिमण्डलमण्डन भवखण्डन ए ।
मुनिजनमानसहंस जय जय देव हरे ।।२

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कालियविषधरगञ्जन जनरञ्जन ए।
यदुकुलनलिनदिनेश जय जय देव हरे ॥३
मधुमुरनरकविनाशन गरुडासन ए।
सुरकुलकेलिनिदान जय जय देव हरे ॥४
अमलकमलदललोचन भवलोचन ए।
त्रिभुवनभवननिधान जय जय देव हरे ॥५
जनकसुताकृतभूषण जितदूषण ए।
समरशमितदशकंठ जय जय देव हरे ॥६
अभिनवजलधरसुन्दर धृतमन्दर ए।
श्रीमुखचन्द्रचकोर जय जय देव हरे ॥७
तव चरणे प्रणता वयमिति भावय ए।
कुरु कुशलं प्रणतेषु जय जय देव हरे ॥९
श्री जयदेवकवेरुदितमिदं कुरुते मुदम्।
मङ्गलमञ्जुलगीत जय जय देव हरे ॥८

श्रीजयदेव विरचितं मङ्गलगीतं सम्पूर्णम्

श्रीलक्ष्मीजी के कुच कुम्भों का आश्रय करने वाले, कुण्डलधारी और अतिमनोहर वनमाली हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।१। सूर्यमण्डल को सुशोभित करनेवाले, भवभय के नाशक और मुनियों के मनरूप सरोवर के हंस हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो. जय हो ।२। कालिय नाग का दमन करने वाले भक्तों को आनन्दित करने वाले एवं यदुकुलकमलदिवाकर हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।३। मधु, मुर और नरकासुर के संहारकर्ता, गरुड़वाहन, देवताओं की क्रीड़ा के आश्रय हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।४। निर्मल कमल दल के समान नेत्रों वाले, भवबन्धन को काटनेवाले एवं त्रिभुवन के आश्रयभूत हे देव, हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।५। सीताजी के साथ शोभा पानेवाले, दूषण दैत्य को जीतनेवाले और युद्ध में रावण को मारनेवाले हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।६। नवीन मेघ के समान श्यामसुन्दर मन्दराचल को धारण करनेवाले और लक्ष्मीजी के मुख चन्द्र के लिए चकोर रूप हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो ७। आपके चरणों की शरण लेते हैं, आप भी इधर दया दृष्टि कीजिये और हम शरणागतों का कल्याण कीजिये। हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।८। इस प्रकार श्री जयदेव कवि का बनाया हुआ यह मङ्गलमय मधुर गीत भक्तों को आनन्द देनेवाला है। हे देव ! हे हरे ! आपकी जय हो, जय हो ।९।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीदीनबन्ध्वष्टकम्

यस्मादिदं जगदुदेति चतुर्मुखाद्यं
यस्मिन्नवस्थितमशेषमशेषमूले ।
यत्रोपयाति विलयं च समस्तमन्ते
दृग्गोचरो भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः ॥१

चक्रं सहस्रकरचारु करारविन्दे
गुर्वी गदा दरवरश्च विभाति यस्य ।
पक्षीन्द्रपृष्टपरिरोपितपादपद्मो दृग्गोचरो० ॥२

येनोद्धृता वसुमती सलिले निमग्ना
नग्ना च पांडववधूः स्थगिता दुकूलैः ।
सम्मोचितो जलचरस्य मुखाद्गजेन्द्रो दृग्गोचरो० ॥३

यस्यार्द्रदृष्टिवशतस्तु सुरा समृद्धिं
कोपे क्षणेन दनुजा विलयं व्रजन्ति ।
भीताश्चरन्ति च यतोऽर्कयमानिलाद्या दृग्गोचरो० ॥४

गायन्ति सामकुशला यमजं मखेषु
ध्यायन्ति धीरमतयो यतयो विविक्ते ।
पश्यन्ति योगिपुरुषाः पुरुषं शरीरे दृग्गोचरो० ॥५

आकाररूपगुणयोगविवर्जितोऽपि
भक्तानुकम्पननिमित्तगृहीतमूर्तिः
यः सर्वगोऽपि कृतशेषशरीरशय्यो दृग्गोचरो० । ६

यस्याङ्घ्रिपङ्कजमनिद्रमुनीन्द्र वृन्दै-
राराध्यते भवदवानलदाहशान्त्यै
सर्वापराधमविचिन्त्य ममाखिलात्मा दृग्गोचरो० ॥७

यन्नामकीर्तनपरः श्वपचोऽपि नूनं
हित्वाखिलं कलिमलं भुवनं पुनाति
दग्ध्वा ममाघमखिलं करुणेक्षणेन दृग्गोचरो० । ८

दीनबन्ध्वष्टकं पुण्यं ब्रह्मानन्देन भाषितम् ।
यः पठेत् प्रयतो नित्यं तस्य विष्णुः प्रसीदति ॥९

श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं श्रीदीनबन्ध्वष्टकं सम्पूर्णम्

जिन परमात्मा से यह ब्रह्मा आदि रूप जगत् प्रकट होता है और सम्पूर्ण जगत् के कारण भूत जिस परमेश्वर में यह समस्त संसार स्थित है तथा अन्तकाल में यह समस्त जगत् जिनमें लीन हो जाता है—वे दीनबन्धु भगवान् आज मेरे

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नेत्रों के समक्ष दर्शन दें ।१। जिनके कर कमल में सूर्य के समान प्रकाशमान चक्र, भारी गदा और श्रेष्ठ शङ्ख शोभित हो रहा है, जो पक्षिराज (गरुड़) की पीठ पर अपने चरण कमल रखे हुए हैं, वे दीनबन्धु भगवान् आज मुझे प्रत्यक्ष दर्शन दें ।२। जिन्होंने जल में डूबी हुई पृथ्वी का उद्धार किया, नग्न की जाती हुई पाण्डव वधू (द्रौपदी) को वस्त्रों से ढक लिया और ग्राह के मुख से गजराज को बचा लिया—वे दीनबन्धु भगवान् आज मेरे नेत्रों के समक्ष हो जायँ ।३। जिनकी स्नेह दृष्टि से देखे जाने के कारण देवता लोग ऐश्वर्य पाते हैं और कोप दृष्टि के द्वारा देखे जाने पर दानव लोग नष्ट हो दाते हैं तथा सूर्य, यम और वायु आदि जिनके भय से भीत होकर अपने-अपने कार्यों में प्रवृत्त होते हैं, वे दीनबन्धु भगवान् आज मेरे नेत्रों के सामने हो जायँ ।४। सामवेद के गान में चतुर लोग यज्ञ में अजन्मा भगवान् के गुण गाते हैं धीर बुद्धि वाले संन्यासी लोग एकान्त में जिनका ध्यान करते हैं, और योगीजन अपने शरीर के भीतर पुरुष रूप से जिनका साक्षात्कार करते हैं, वे दीनवन्धु भगवान् आज मेरे नेत्रों के सामने हों ।५। जो भगवान् आकार, रूप और गुण के सम्बन्ध से रहित होकर भी भक्तों के ऊपर दया करने के निमित्त अवतार धारण करते है और जो सर्वत्र विद्यमान रहते हुए भी शेष नाग के शरीर को अपनी शय्या बनाये हुए हैं, वे दीनवन्धु भगवान् आज मेरे नेत्रों के प्रत्यक्ष हो ।६। आलस्यहीन मुनिवरों का समूह संसार के दुःख रूपी दावानल की जलन शान्त करने के लिये जिन भगवान् के चरण कमल की आराधना करता है, वे समस्त जगत् के आत्मभूत दीनबन्धु मेरे सब अपराधों को भूलकर आज मेरे नेत्रों के समक्ष दर्शन दें ।७। जिन भगवान् के नाम कीर्तन में तत्पर चाण्डाल भी निश्चय ही सम्पूर्ण कलिमल (पाप) को त्याग कर जगत् को पवित्र कर देता है, वे दीनबन्धु भगवान् मेरे समस्त पाप को अपनी करुण दृष्टि से जलाकर आज मेरे नेत्रों को प्रत्यक्ष दर्शन दें ।८। जो लोग ब्रह्मानन्द के कहे हुए इस दीनवन्धवष्टक नामक पवित्र स्तोत्र का नित्य संयत चित्त से पाठ करेंगे उनके ऊपर विष्णु भगवान् प्रसन्न रहेंगे ।९।

श्री विष्णु चालीसा

नील वर्ण पीताम्बर सोहै। भक्त जनों के मन को मोहै ॥१
चरण-सरोरुह अतिशय सुन्दर। नानाविध भव-संभव भयहर ॥२
पीत वसन अभिराम मनोहर। तडित कान्ति सुर-चाप-विभाकर ॥३
कटि तनु शोभित वक्ष विशाला। उर सज्जित सुन्दर वनमाला ॥४
वरद हस्त चारों अति सजैं। करतल जिनके अरुण विराजैं ॥५
अंगुलि सकल मुद्रिका-युक्ता। जिनमें जडी विविध मणिमुक्ता ॥६
एक हाथ में शंख विराजै। कुन्दइन्दु-सी शोभा छाजै ॥७

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चक्र दूसरे कर में धारी। दानव सेना का संहारी ॥८
गदा तीसरे हाथ विराजै। सूर्य समान सदा जो भ्राजै ॥९
पद्म चतुर्थ हाथ में लीन्हें। भक्त-मनोरथ पूरन कीन्हें ॥१०
चिबुक भक्त के भय की हारी। शरणागत की रक्षाकारी ॥११
मन्द मधुर मुसकान अनोखी। देख देख सुर धारैं तोखी ॥१२
दन्त-पंक्ति अति शुभ्रकली-सी। हंसी विद्रुम-मध्य पली-सी ॥१३
नासा नरक-भीति की नासी। पुण्यरूप की कीर्ति-लता-सी ॥१४
नयन युगल है कमल समाना। भृकुटि-चाप के सम अनुमाना ॥१५
मुकुट मनोहर रवि सम शोभी। रत्न-जटित स्वर्णिम सुर-लोभी ॥१६
अंगद कंकण चारु विचित्रा। कांची नूपुर नित्य पवित्रा ॥१७
उज्ज्वल चमचम चमकैं भूषण। भागैं दर्शक के सब दूषण ॥१८
गरुड मनोगति वाहन प्यारा। संसृति-सर्प- निवारण- हारा ॥१९
आप सदा पर-पद के वासी। निज जन हृदय-सरोज निकासी ॥२०
त्रिगुणातीत परम पद शोभा। मुनि जन मन में अतिशय शोभा ॥२१
अमितौजा पर नित्य विराजें। माँ भी संग में वहीं विराजैं ॥२२
वाम अङ्ग में वे छबि छाजैं। अपनी द्युति से हरि को साजैं ॥२३
भक्त अनुग्रह - विग्रह देवी। रमा-विष्णु के हैं हम सेवी ॥२४
रमा इन्दिरा लक्ष्मी माता। नाम उन्हीं के वेद बताता ॥२५
जो लक्ष्मी नारायण सोई। उनमें भेद कहीं नहीं कोई ॥२६
जो माधव सो राधा प्यारी। वृन्दावन में कुञ्ज - विहारी ॥२७
जो सीता सो राघव भी हैं। इनमें भेद कदापि नहीं हैं ॥२८
लें अवतार जभी प्रभु भू पै। धरैं रमा भी रूप अनूपै ॥२९
जहाँ सूर्य है कान्ति वहीं है। जहाँ चन्द्र है शान्ति वहीं है ॥३०
विष्णु जहाँ हैं वहीं रमा हैं। सदा माधव भी विष्णु-समा हैं ॥३१
विश्व-नियन्ता अन्तर्यामी। लोकविनत त्रिभुवन के स्वामी ॥३२
भव्य रूप मंगलमय शीला। सदा करैं रुचिकर शुभलीला ॥३३
जो नर हरि-गुण-गण को गावै। सो निज हृदय मनोरथ पावै ॥३४
धार्मिक धर्म करै मन लाई। धन-रुचि द्रव्य अनेक कमाई ॥३५
और अनेक कामना-कारी ! पावै प्रभु से सम्पत्ति सारी ॥३६
जो चाहै सब बंधन नाशा। पूर्ण करें प्रभु वह भी आशा ॥३७
जो हरि-पद में रति लावैं। कृपा करें प्रभु वह भी पावै ॥३८
जय जय नारायण श्रीवासा। कीजै नित मम उर-पुर वासा ॥३९

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हरिये प्रभु मम संकट भारी। हे गजराज-विपत्ति - विदारी ॥४०
त्रिगुण-रहित निज गुण-सहित दिव्य-रूप श्री वास।
रमा-सहित मम हृदय मे करिये नित्य निवास ॥
श्री विष्णु-चालीसा सम्पूर्णम्

इन्द्रकृत लक्ष्मी-स्तोत्र

इन्द्र उवाच

नमामि सर्वभूतानां जननीमब्जसम्भवाम्।
श्रियमुन्निद्रपद्माक्षी विष्णोर्वक्षःस्थलस्थिताम् ॥१
त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा सुधा त्व लोकपालिनी।
सन्ध्या रात्रिः प्रभा भूमिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ॥२
यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने।
आत्मविद्या च देवी त्वं विमुक्तिफलदायिनी ॥३
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च।
सौम्या सोम्यैर्जगद्रूपैस्त्वैतद्व्याप्तं पूरितम् ॥४
का त्वन्या त्वामृते देवि सर्वयज्ञमयं वपुः।
अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचिन्त्यं गदाभृतः ॥५
त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम्।
विनष्टप्रायमभवत् त्वयेदानीं समेधितम् ॥६
दारापुत्रास्तथागारं सुहृद्धान्यंधनादिकम्।
भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम् ॥७
शरीरारोग्यमैश्वर्य्यमरिपक्षक्षयः सुखम्।
देवि त्वद्दृष्टिदृष्टानां पुरुषाणामदुर्लभम् ॥८
त्वं माता सर्वभूतानां देवदेवो हरिः पिता।
त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद्व्याप्तं चराचरम् ॥९
मानः कोषं तथा कोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम्।
मा शरीरं कलत्रञ्च त्यजेथाः सर्वपाविनि ॥१०
मा पुत्रान् मा सुहृद्वर्गान् मा पशून् मा विभूषणम्।
त्यजेथा देवदेवस्य विष्णोर्वक्षःस्थलालये ॥११
सत्येनशौचसत्त्वाभ्यां तथा शीलादिभिर्गुणैः।
त्यज्यन्ते ते नराः सद्यः सन्त्यक्ता ये त्वयाऽमले ॥१२
त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैर्निखिलैर्गुणैः।
कुलैश्वर्य्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणापि च ॥१३

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स श्लाघ्यः स गुणी-धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान् ।
स सुरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥१४
सद्यो वैगुण्यमायान्ति शीलाद्याः सफला गुणाः ।
पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णुवल्लभे ॥१५
न ते वर्णयितुं शक्ता गुणान् जिह्वापि वैधसः ।
प्रसीद देवि पद्माक्षिः मास्मांस्त्याक्षीः कदाचन ॥१६

पराशर उवाच

एवं श्रीः संस्तुता सम्यक् प्राह हृष्टा शतक्रतुम् ।
शृण्वतां देवदेवानां सर्वभूतस्थिता द्विज ॥१७
परितुष्टास्मि देवेश स्तोत्रेणानेन हेतुना ।
वरं वृणीष्व यस्त्विष्टो वरदाहं समागता ॥१८

इन्द्र उवाच

वरदा यदि देवि त्वं वरार्हो यदि वाप्यहम् ।
त्रैलोस्यं न त्वया त्याज्यमेष मेऽस्तु वरः परः ॥१९
स्तोत्रेन यस्तवैतेन त्वां स्तोष्यत्यब्धिसम्भवे ।
स त्वया न परित्याज्यो द्वितीयस्तु वरो मम ।२०

लक्ष्मीरुवाच

त्रैलोक्यं त्रिदशश्रेष्ठ न सन्त्यक्ष्यामि वासव ।
दत्तो वरो मया त्वां तु स्तोत्रेण परितुष्टया ॥२१
यश्च सायं तथा प्रातः स्तोत्रेणानेन मानवः ।
मां स्तोष्यति न तस्याहं भविष्यामि पराङ्मुखी ॥२२

इति श्रीविष्णुपुराणे पराशर मैत्रेय संवादे इन्द्रमुखोच्चारित श्रीलक्ष्मी स्तोत्रं समाप्तम्

देवराज इन्द्र सुरगुरु वृहस्पति के अभिशाप से विगतश्री होकर स्तव द्वारा कमलासना की आराधना करते हुए कहते हैं—

जो निखिल जीवों की जननी हैं, कमलदल जिनका उत्पत्ति स्थान है, जिनके नयन विकसित पत्रवत् आयत है और जो विष्णु के हृदय में निरन्तर विराजमान रहती हैं, मैं उस लक्ष्मीदेवी को नमस्कार करता हूँ ।१। हे देवी ! तुम सिद्धि, तुम स्वधा, तुम स्वाहा, तुम सुधा, तुम सन्ध्या, तुम रात्रि, तुम प्रभा, तुम भूमि, तुम मेधा, तुम श्रद्धा, तुम सरस्वती और तुम्हीं सब की पालनकारिणी हो ।२। हे शोभने ! तुम ही यज्ञविद्या, तुम ही महाविद्या, तुम ही गुह्यविद्या, तुम ही आत्मविद्या और एकमात्र तुम ही मुक्ति प्रदान करती हो ।३। हे देवी ! तुम ही

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तर्कविद्यारूपिणी, तुम ही सामादि वेद चतुष्टय स्वरूपा, तुम ही दण्डनीति स्वरूपिणी और तुम ही सौम्यरूपिणी हो। तुम्हारे विविध रूपों से निखिल विश्व परिपूरित है।४। देवदेव गदाधर हरि का देह सर्वयज्ञमय है, वह एकमात्र योगियों के चिन्तनीय हैं। हे देवी! सिवा तुम्हारे और कौन रमणी उस देह में विराजमान हो सकती है।५। हे देवी! पहले भी इस संसार को त्यागकर आपके सागर में प्रवेश करने पर त्रिभुवन विनष्टप्राय हुआ था, किन्तु तुमने ही फिर इसको बचाया।६। हे महाभागे! तुम्हारी कृपा दृष्टि होने से मानवगण क्या स्त्री, क्या पुत्र, क्या बन्धु, क्या धान्य, क्या धन, सभी लाभ कर सकता है।७। हे देवी! तुम जिस पर कृपा दृष्टि करती हो उसके लिए क्या आरोग्य, क्या ऐश्वर्य, क्या शत्रुनाश, क्या सुख, कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता।८। हे कल्याणी! तुम निखिल जीवों की माता और देवदेव हरि सबके पिता हैं। तुमसे और विष्णु से यह चराचर संसार परिव्याप्त है।९। हे विष्णुहृदयवासिनी! तुम जिसका त्याग करती हो, उसके मान, धनागार, गृह, परिच्छद, शरीर, स्त्री, पुत्र, सुहृत, पशु, भूषण सब विनष्ट हो जाते हैं।१०-११। हे विमले! तुम जिसका परित्याग करती हो, उसके सत्य, शौच, बल, शीलादि सब दूरीभूत हो जाते हैं।१२। हे सुखदे! जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, उसके गुणहीन होने से भी वह सद्य शीलादि गुण, कुल और ऐश्वर्य को प्राप्त होता है।१३। हे योगमाये! जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, वही श्लाघ्य, वही गुणी, वही धन्य, वही कुलीन, वही बुद्धिमान, वही शूर और वही विक्रमशाली माना जाता है।१४। हे विष्णुवल्लभे! आप जगत् की जननी हो आप जिससे विमुख होती हो, उसके शीलादि यावतीय गुण समूह सद्य विनाश होते हैं।१५। हे कमललोचने! विधाता की जिह्वा भी तुम्हारे गुण कीर्तन में समर्थ नहीं है। हे जननि! मुझ पर प्रसन्न होओ, मुझको परित्याग मत (नहीं) करो।१६ पराशर बोले, शतक्रतु पुरन्दर के इसी प्रकार सब देवताओं के सामने स्तव करने पर सर्व्वभूतस्थिता कमला प्रसन्न होकर बोली।१७। हे देवराज! मैं तुम्हारे इस स्तव से प्रीति लाभ करके वर देने को समागत हुयी हूँ, तुम मनोवाञ्छित वर प्रार्थना करो।१८। इन्द्र बोले, हे देवी! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हुई हो, यदि मैं वर पाने के योग्य पात्र समझा गया हूँ, तो प्रार्थना करता हूँ, कि तुम त्रिभुवन को त्याग कर प्रस्थान नहीं करो। हे जननि! यही मेरा प्रथम प्रार्थनीय वर है।१९। हे सागरसम्भवे! जो व्यक्ति इस स्तव से तुम्हारा प्रीति साधन करेगा, आप उसको परित्याग नहीं करना। जननि! यही प्रार्थनीय द्वितीय वर है।२०। लक्ष्मी बोली, हे त्रिदश श्रेष्ठ! मैंने तुम्हारी स्तुति से सन्तुष्ट होकर वर दान किया। मैं त्रिभुवन को त्याग नहीं करूंगी।२१। हे वासव! जो व्यक्ति प्रातःकाल और सन्ध्या समय में इस स्तव का पाठ करके मेरी प्रीति साधन करेगा, मैं कदापि उस पर विमुख नहीं होऊंगी॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लक्ष्मीकवच

लक्ष्मी मे चाग्रतः पातु कमला पातु पृष्ठतः ।
नारायणीशीर्षदेशे सर्वाङ्गे श्रीस्वरूपिणी ।१।
रामपत्नी प्रत्यङ्गे तु सदावतु रामेश्वरी ।
विशालाक्षी योगमाया कौमारी चक्रिणी तथा ।२।
जयदात्री धनदात्री पाशाक्षमालिनी शुभा ।
हरिप्रिया हरिरामा जयङ्करी महोदरी ।३।
कृष्णापरायणा देवी श्रीकृष्णमनोमोहिनी ।
जयङ्करी महारौद्री सिद्धिदात्रीशुभङ्करी ।४।
सुखदा मोक्षदा देवी चित्रकूटनिवासिनी ।
भयं हरतु सदावतु भवबन्धं विमुञ्चतु ।५।
कवचन्तु महापुण्यं यः पठेत् भक्तिसंयुतः ।
त्रिसन्ध्यमेक सन्ध्यं वा मुच्यते सर्वसङ्कटात् ।६।
एतत्कवचस्य पठनं पुत्रधनविवर्द्धनम् ।
भीति विनाशनञ्चैव त्रिषु लोकेषु कीर्त्तितम् ।७।
भूर्जपत्रे समालिख्य रोचना कुङ्कुमेन तु ।
धारणात् गलदेशे च सर्वसिद्धिर्भविष्यति ।८
अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ।
मोक्षार्थी मोक्षमवाप्नोति कवचस्य प्रसादतः ।९
गर्भिणी लभते पुत्रं वन्ध्या च गर्भिणी भवेत् ।
धारयेत् यदि कण्ठे च अथवा वामबाहुके ।१०
यः पठेत् नियतो भक्त्या स एव विष्णुवत् भवेत् ।
मृत्युर्व्याधिभय तस्य नास्ति किञ्चित् महीतले ।११
पठेत् वा पाठयेद्वापि शृणुयात् श्रावयेदपि ।
सर्वपापविमुक्तस्तु लभते परमां गतिम् ।१२
सङ्कटे विपदे घोरे तथा च गहने वने ।
राजद्वारे च नौकायां तथा च रणमध्यतः ।
पठनाद्धारणाद्यस्य जयमाप्नोति सर्वदा ।१३
अपुत्रा च तथा वन्ध्या त्रिपक्षं शृणुयाद् यदि ।
सुपुत्रं लभते सा तु दीर्घायुष्कं यशस्विनम् ।१४
शृणुयाद् यो शुद्धबुद्धाद्द्वौमासौ विप्रवक्तृतः ।
सर्वान् कामान् वाप्नोति सर्वबन्धयाद्विमुच्यते ।१५
मृतवत्सा जीववत्सा त्रिमासं श्रवणं यदि ।
रोगी रोगाद्विमुच्यते पठनात् मासमध्यतः ।१६

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लिखित्वा भूर्जपत्रे च अथवा ताड़पत्रके।
स्थापयेद् यो नियतं गेहे नाग्निचौरभयं क्वचित् ॥१७
शृणुयाद्धारयेद्वापि पठेत् वा पाठयेदपि।
यः पुमान् सततं तस्मिन् प्रसन्नाः सर्वदेवता ॥१८
बहुना किमिहोक्तेन सर्वजीवेश्वरेश्वरी।
आद्याः शक्ति सदा लक्ष्मीभक्तानुग्रहकारिणी ॥१९

इति तन्त्रोक्त लक्ष्मी कवचं समाप्तम्

लक्ष्मी मेरे अग्रभाग की रक्षा करें,कमला मेरे पृष्ठदेश की रक्षा करें, नारायणी मेरे मस्तक की और श्रीस्वरूपिणी देवी मेरे सर्वाङ्ग की रक्षा में निरत रहें। जो रामपत्नी और रामेश्वरी हैं, वही विशालाक्षी योगमाया लक्ष्मी मेरे प्रत्यङ्गों की रक्षा करें। वही कौमारी, चक्रिणी, जयदात्री, पाशाक्षमालिनी, कल्याणी, हरि-प्रिया, हरिरामा, जयङ्करी, महोदरी, कृष्णपरायणा, श्रीकृष्णमनोमोहनी. महारौद्री, सिद्धिदात्री, शुभङ्करी, सुखदा, मोक्षदा, चित्रकूटनिवासिनी नाम से अभिहिता होती हैं। वही अनपायिनी लक्ष्मी देवी मेरा भय दूर करें, सर्वदा रक्षा करें, और मेरा भवपाश छेदन कर दें।१-५। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक तीन बार अथवा एक बार मात्र प्रतिदिन इस लक्ष्मी कवच का पाठ करता है, वह सर्व-संकट से मुक्ति लाभ करता है, इसमें सन्देह नहीं है।६। इस कवच का अध्ययन करने से पुत्र और धनादि वृद्धि को प्राप्त होते हैं और भयराशि विदुरित होती है,इसका माहात्म्य त्रिभुवन में कीर्त्तित है।७। रोचना और कुङ्कुम के द्वारा भोजपत्र पर इस कवच को लिखकर कण्ठ में धारण करने से सर्वकामना सिद्ध होती हैं।८। इस कवच के प्रसाद (प्रभाव) से अपुत्रक पुत्र, धनार्थी धन, मोक्षार्थी मोक्ष प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं है।९। यदि स्त्री जाति इस कवच को कण्ठ में अथवा बायीं भुजा में धारण करे तो गर्भिणी उत्तम पुत्र लाभ करती है, और वन्ध्या नारी भी गर्भिणी होती है।१०। जो व्यक्ति नियम से इस कवच को भक्ति पूर्वक पढ़ता है वह विष्णु तुल्य होता है, और संसार में मृत्यु अथवा व्याधिभय उसको आक्रमण नहीं कर सकता।११। जो व्यक्ति इस कवच का अध्ययन करता है अथवा अध्ययन कराता है, स्वयं श्रवण करता वा दूसरों को श्रवण कराता है, वह सर्व पापों से विमुक्त होकर परमगति को प्राप्त कर लेता है।१२। क्या संकट में, क्या घोर विपद में, क्या गहन वन में, क्या राजद्वार में, क्या जल में, क्या रण में, जहां कहीं भी क्यों न हों, इस कवच का पाठ करने या धारण करने से सर्वत्र ही जय लाभ प्राप्त करता है।१३। वन्ध्यानारी अथवा जिसको पुत्र नहीं हुआ है, वह यदि तीन पक्ष तक इस कवच को श्रवण करे तो वह आयुष्मान महायशा सुपुत्र लाभ प्राप्त करती है, इसमें सन्देह नहीं है।१४। जो व्यक्ति शुद्ध मन से विद्वान ब्राह्मण के मुख से दो मास तक यह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कवच श्रवण करता है, उसकी यावतीय कामना सिद्ध होती है, वह सब प्रकार के बन्धन से मुक्ति लाभ प्राप्त करता है।१५। जिस स्त्री का पुत्र जन्म लेकर नहीं बचता, वह यदि तीन मास तक इस कवच को भक्ति पूर्वक सुने, तो जीववत्सा होती है, और रोगी एक मास में रोग से मुक्त होता है।१६। जो व्यक्ति भोजपत्र अथवा तालपत्र पर इस कवच को लिखकर घर में स्थापन करता है, उसको अग्नि चौरादिका भम नहीं रहता है।१७। जो व्यक्ति प्रतिदित इस कवच को सुनते हैं, पाठ करते हैं अथवा दूसरों को पाठ कराते हैं: और जो इसको धारण करते हैं, उन पर सब देवता लोग सर्वदा प्रसन्न रहते हैं।१८। अधिक और क्या कहा जाय, जो व्यक्ति इसका पाठ करता हैं अथवा धारण करता हैं, उसके घर में सर्वजीवेश्वरेश्वरी, भक्तजनों पर अनुग्रह करने वाली आद्याशक्ति लक्ष्मी देवीजी निश्चला होकर विराजमान रहती हैं।१९।

श्री रामस्य प्रातःस्मरणम्

प्रातः स्मरामि रघुनाथमुखारविन्दं
मन्दस्मितं मधुरभाषि विशालभालम्।
कर्णावलम्बिचलकुण्डलशोभिगण्डं
कर्णान्तदीर्घनयनं नयनाभिरामम् ॥१
प्रातर्भजामि रघुनाथकरारविन्दं
रक्षोगणाय भयदं वरदं निजेभ्यः।
यद्राजसंसदि विभज्य महेशचापं
सीताकरग्रहणमङ्गलमाप सद्यः ॥२
प्रातर्नमामि रघुनाथपदारविन्दं
वज्राङ्कुशादिशुभरेखि सुखावहं मे।
योगीन्द्र — मानसमधुव्रतसेव्यमानं
शापापहं सपदि गौतमधर्मपत्न्याः ॥३
प्रातर्वदामि वचसा रघुनाथनाम
वाग्दोषहारि सकलं शमलं निहन्ति।
यत्पार्वती स्वपतिना सह भोक्तुकामा
प्रीत्या सहस्रहरिनामसमं जजाप ॥४
प्रातः श्रये श्रुतिनुतां रघुनाथमूर्तिं
नीलाम्बुजोत्पलसितेतररत्ननीलाम्।
आमुक्तमौक्तिकविशेषविभूषणाढ्यां
ध्येयां समस्तमुनिभिर्जनमुक्तिहेतुम् ॥५

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यः श्लोकपञ्चकमिदं प्रयतः पठेद्धि
नित्यं प्रभातसमये पुरुषः प्रबुद्धः।
श्रीरामकिङ्करजनेषु स एव मुख्यो
भूत्वा प्रयाति हरिलोकमनन्यलभ्यम् ॥६

श्रीरामस्य प्रातः स्मरणं सम्पूर्णम्

जो मधुर मुस्कान युक्त, मधुरभाषी और विशाल भाल से सुशोभित हैं, कानों में लटके हुए चञ्चल कुण्डलों से जिनके दोनों कपोल शोभित हो रहे हैं तथा जो कर्णपपन्त विस्तृत बड़े-बड़े नेत्रों से शोभायमान और नेत्रों को आनन्द देने वाले हैं, श्रीरघुनाथजी के ऐसे मुखारविन्द का मैं प्रातःकाल स्मरण करता हूँ ।१। मैं प्रातःकाल श्रीरघुनाथजी के कर कमलों का स्मरण करता हूँ, जो राक्षसों को भय देने वाले और भक्तों को वरदायक हैं तथा जिन्होंने राजसभा में शंकर का धनुष तोड़कर शीघ्र ही सीता का मङ्गलमय पाणिग्रहण किया था ।२। मैं प्रातः काल श्रीरघुनाथजी के चरण कमलों को नमस्कार करता हूँ, जो वज्र, अंकुश आदि शुभ रेखाओं से युक्त, मेरे सुखदायी, योगियों के मन-मधुप द्वारा सेवित और गोतम पत्नी अहल्या के शाप को दूर करने वाले हैं ।३। मैं प्रातः काल अपनी वाणी से श्रीरघुनाथजी के नाम का जप करता हूँ जो वाणी के दोषों को नाश करने वाले और सर्वपापों को हरने वाले हैं तथा जिसे पार्वतीजी ने अपने पति (शंकर) जी के साथ भोजन करने की इच्छा से भगवान् के सहस्र नाम के सदृश प्रीति सहित जपा था ।४। मैं प्रातःकाल श्रीरघुनाथजी की वेदवन्दित मूर्ति का आश्रय लेता हूँ, जो नील कमल और नीलमणि के समान नीलवर्ण, लटकते हुए मोतियों की माला से विभूषित, समस्त मुनियों की ध्येय तथा भक्तों को मोक्ष प्रदान करने वाली है ।५। जो पुरुष प्रातःकाल नींद से जगकर जितेन्द्रिय भाव से इन पाँच श्लोकों का नित्य पाठ करता है, वह श्रीरामजी के सेवकों में मुख्य होकर श्रीहरि के लोकों को, जो दूसरों के लिये दुर्लभ हैं, प्राप्त होता है ।६।

रामाष्टकम्

कृतार्तदेववन्दनं दिनेशवंशनन्दनम्।
सुशोभिभालचन्दनं नमामि राममीश्वरम् ॥१
मुनीन्द्रयज्ञकारकं शिलाविपत्तिहारकम्।
महाधनुर्विदारकं नमामि राममीश्वरम् ॥२
स्वतातवाक्यकारिणं तपोवने विहारिणम्।
करे सुचापधारिणं नमामि राममीश्वरम् ॥३
कुरङ्गमुक्तसायकं जटायुमोक्षदायकम्।
प्रविद्धकीशनायकं नमामि राममीश्वरम् ॥४

CC-0. Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्लवङ्गसङ्गसम्मतिं निबद्धनिम्नगापतिम् ।
दशास्यवंशसङ्क्षतिं नमामि राममीश्वरम् ।।५
विदीनदेवहर्षणं कपीप्सितार्थवर्षणम् ।
स्वबन्धुशोककर्षणं नमामि राममीश्वरम् ।।६
गतारिराज्यरक्षणं प्रजाजनार्तिभक्षणम् ।
कृतास्तमोहलक्षणं नमामि राममीश्वरम् ।।७
हृताखिलाचलाभरं स्वधामनीतनागरम् ।
जगत्तमोदिवाकरं नमामि राममीश्वरम् ।।८
इदं समाहितात्मना नतो रघूत्तमाष्टकम् ।
पठेन्निरन्तरं भयं भवोद्भवं न विन्दते ।।९
श्रीपरमहंस स्वामी ब्रह्मानन्दविरचितं रामाष्टकं सम्पूर्णम्

आर्त देवताओं ने जिनकी वन्दना की है, जो सूर्यवंश को आनन्दित करने वाले हैं तथा जिनके ललाट पर चन्दन सुशोभित है, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।१। जो मुनिराज विश्वामित्र का यज्ञ सम्पन्न कराने वाले पाषाणरूपा अहल्या का कष्ट निवारण करने वाले तथा श्रीशंकर का महान् धनुष तोड़ने वाले हैं, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।२। जो अपने पिता के वचनों का पालन करने वाले और हाथों में धनुषबाण धारण करने वाले हैं, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।३। जिन्होंने माया मृग पर बाण छोड़ा था, जटायु को मोक्ष प्रदान किया था तथा कपिराज वाली को विद्ध किया था, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।४। जिन्होंने वानरों के साथ मित्रता की, समुद्र का पुल बाँधा और रावण के वंश का विनाश किया, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।५। जो अतिदीन देवताओं को प्रसन्न करने वाले, वानरों की इच्छित कामनाओं को पूर्ण करने वाले और अपने बन्धुओं का शोक शान्त करने वाले हैं, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।६। जो शत्रुहीन (निष्कण्टक) राज्य के पालक, प्रजाजन की भीति के भक्षक और मोह की निवृत्ति करने वाले हैं, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।७। जिन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वी का भार हरण किया, जो सकल नगर-निवासियों को अपने धाम को ले गये तथा जो संसाररूप अन्धकार के लिये सूर्यरूप हैं, उन परमेश्वर राम को मैं नमस्कार करता हूँ ।८। जो पुरुष इस रामाष्टक को एकाग्र चित्त से निरन्तर पढता है, उसे संसार जनित भय की प्राप्ति नहीं होती ।९।

श्रीराम रक्षास्तोत्रम्

अस्य श्री रामरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य बुध कौशिक ऋषिः श्रीसीताराम-चन्द्रो देवता अनुष्टुप् छन्दः सीताशक्तिः श्रीमान् हनुमान कीलकं श्रीराम-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

चन्द्र प्रीत्यर्थे रामरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः ।

इस रामरक्षास्तोत्र मन्त्र के बुध कौशिक ऋषि हैं। सीता और रामचन्द्र देवता हैं, अनुष्टुप् छन्द है, सीता शक्ति हैं, श्रीमान् हनुमानजी कीलक हैं तथा श्रीरामचन्द्रजी की प्रसन्नता के लिये रामरक्षा स्तोत्र के जप किया जाता है।

ध्यानम्

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं
पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् ।
वामाङ्कारूढसीतामुखकमलमिल्लोचनं नीरदाभं
नानालंङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम् ।।

ध्यान—जो धनुष-बाण धारण किये हुए हैं, बद्ध पद्मासन से विराजमान हैं, पीताम्बर पहने हुए हैं, जिनके प्रसन्न नयन नूतन, कमल दल से स्पर्धा करते तथा वाम भाग में विराजमान श्रीसीताजी के मुखकमल से मिले हुए हैं, उन आजानुबाहु, मेघश्याम, नाना प्रकार के अलङ्कारों से विभूषित तथा विशाल जटा जूटधारी श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करें।

स्तोत्रम्

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् ।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ।।१
ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् ।
जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम् । २
सासितूण धनुर्बाणपाणिं नक्तंचरान्तकम् ।
स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम् ।।३
रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम् ।
शिरो मे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ।।४
कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुति ।
घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रवत्सलः ।।५
जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरतवन्दितः ।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ।।६
करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित् ।
मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रयः ।।७
सुग्रीवेशः कटीं पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः ।
ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षः कुलविनाशकृत् ।।८

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

जानुनी सेतुकृत्पातु जङ्घे दशमुखान्तकः ।
पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ।९
एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृति पठेत् ।
स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ।।१०
पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः ।
न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ।।११
रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् ।
नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ।।१२
जगज्जैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाभिरक्षितम् ।
यः कण्ठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः ।।१३
वज्रपञ्जरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत् ।
अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमङ्गलम् ।।१४
आदिष्टवान्यथा स्वप्ने रामरक्षामिमांहरः ।
तथालिखितवान्प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः । १५
आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम् ।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान् स नः प्रभुः ।।१६
तरुणौ रूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ ।
पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ।।१७
फलमूलाशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ ।
पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ।।१८
शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् ।
रक्षःकुलनिहन्तारौ त्रायतां नो रघूत्तमौ ।।१९
आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषङ्गसङ्गिनौ ।
रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ।।२०
सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा ।
गच्छन्मनोरथान्नश्च रामः पातु सलक्ष्मणः ।।२१
रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली ।
काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः ।।२२
वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः ।
जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ।।२३
इत्येतानि जपेन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः ।
अश्वमेधाधिकं पुण्यं सम्प्राप्नोति न संशयः ।।२४

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् ।
स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः ।।२५
रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं
काकुत्स्थं करुणार्णव गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् ।
राजेन्द्रं सत्यसन्धं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्तिं
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ।।२६
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे ।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ।।२७
श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम
श्रीराम राम भरताग्रज राम राम ।
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम
श्रीराम राम शरणं भव राम राम ।।२८
श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि ।
श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ।।२९
माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः
स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः ।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालु—
र्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ।।३०
दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा ।
पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम् ।।३१
लोकाभिराम रणरङ्गधीरं
राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् ।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं
श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ।।३२
मनोजवं मारुततुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ।।३३
कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ।।३४

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ।।३५
भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम् ।
तर्जनं यमदूतानां रामरामेति गर्जनम् ।।३६
रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे
रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः ।
रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं
रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भो राम मामुद्धर ।।३७
राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ।।३८

श्री बुध कौशिक मुनि विरचितं श्रीरामरक्षा स्तोत्रं सम्पूर्णम्

श्री रघुनाथजी का चरित्र सौ करोड़ विस्तार वाला है और उसका एक-एक अक्षर भी मनुष्यों के महान् पापों को नष्ट करने वाला है ।१। जो नील कमल दल के समान श्यामवर्ण, कमल नयन, जटाओं के मुकुट से सुशोभित, हाथों में खड्ग, तूणीर, धनुष और बाण धारण करने वाले राक्षसों के संहारकारी तथा संसार की रक्षा के लिये अपनी लीला से ही अवतीर्ण हुए है, उन अजन्मा और सर्वव्यापक भगवान् राम का जानकी और लक्ष्मणजी के सहित स्मरण कर प्राज्ञ पुरुष इस सर्वकामप्रदा और पापनाशिनी रामरक्षा का पाठ करें, मेरे शिर की राघव और ललाट की दशरथात्मज रक्षा करें ।२-४। कौशल्यानन्दन नेत्रों की रक्षा करें, विश्वामित्र प्रिय कानों को सुरक्षित रखें तथा यज्ञरक्षक घ्राणकी और सौमित्रवत्सल मुख की रक्षा करें ।५। मेरी जिह्वा की विद्यानिधि, कण्ठ की भरतवन्दित, कन्धों की दिव्यायुध और भुजाओं की भग्नेशकार्मुक (महादेवजी का धनुष तोड़ने वाले) रक्षा करें ।६। हाथों को सीतापति, हृदय की जामदग्न्यजित् (परशुरामजी को जीतनेवाले) मध्यभाग की खरध्वंसी (खरनाम के राक्षस का नाश करने वाले), और नाभिकी जाम्बवदाश्रय (जाम्बवान् के आश्रय स्वरूप, रक्षा करें ।७। कमरकी सुग्रीवेश (सुग्रीव के स्वामी , सक्थियों की हनुमत्प्रभु और उरुओं की राक्षसकुल विनाशक रघुश्रेष्ठ रक्षा करें ।८ जानुओं की सेतुकृत, जङ्घाओं की दशमुखान्तक (रावण को मारने वाले), चरणों की विभीषण-श्रीद (विभीषण को ऐश्वर्य प्रदान कराने वाले) और सम्पूर्ण शरीर की श्री राम रक्षा करें ।९। जो पुण्यवान् पुरुष रामबल से सम्पन्न इस रक्षा का पाठ करता है, वह दीर्घायु, सुखी, पुत्रवान्, विजयी और सम्पन्न हो जाता है ।१०। जो जीव पाताल, पृथ्वी अथवा आकाश में विचरते हैं और जो छद्मवेष में घूमते रहते हैं, वे रामनामों से सुरक्षित पुरुष को देख भी नहीं सकते ।११। 'राम' 'रामभद्र', 'रामचन्द्र', इन नामों का स्मरण करने से मनुष्य पापों से लिप्त नहीं होता तथा भोग और मोक्ष प्राप्त कर लेता है ।१२। जो पुरुष जगत् को विजय करने

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वाले एक मात्र मन्त्र रामनाम से सुरक्षित इस स्तोत्र को कण्ठ में धारण करता है (अर्थात् इसे कण्ठस्थ कर लेता है), सम्पूर्ण सिद्धियाँ उसके हस्तगत हो जाती हैं।१३। जो मनुष्य वज्रपञ्जर नामक इस रामकवच का स्मरण करता है, उसकी आज्ञा का कहीं भी उल्लङ्घन नहीं होता और उसे सर्वत्र जय और मङ्गल की प्राप्ति होती है।१४। श्रीशंकर ने रात्रि के समय स्वप्न में इस रामरक्षा का जिस प्रकार आदेश दिया था उसी प्रकार से प्रातःकाल जागने पर, बुध कौशिक ने लिख दिया।१५। जो मानों कल्पवृक्ष के बगीचे हैं तथा समस्त आपत्तियों का अन्त करने वाले हैं, जो तीनों लोकों में परम सुन्दर हैं वे श्रीराम हमारे प्रभु हैं।१६। जो तरुण अवस्थावाले रूपवान् सुकुमार, महाबली, कमल के समान विशाल नेत्रवाले, चीरवस्त्र और कृष्णमृगचर्मधारी, फल-मूल आहार करने वाले, संयमी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, सम्पूर्ण जीवों को शरण देनेवाले, समस्त धनुर्धारियों में श्रेष्ठ और राक्षस कुल का नाश करने वाले हैं, वे रघुश्रेष्ठ दशरथकुमार राम और लक्ष्मण दोनों भाई हमारी रक्षा करें।१७-१९। जिन्होंने सन्धान किया हुआ धनुष ले रखा है, जो बाण का स्पर्श कर रहे हैं तथा अक्षय बाणों से युक्त तूणीर लिये हुए हैं वे राम और लक्ष्मण मेरी रक्षा करने के लिये मार्ग में सदा ही मेरे आगे चलें।२०। सर्वदा उद्यत, कवचधारी, हाथ में खड्ग लिये, धनुषबाण धारण किये तथा युवा अवस्था वाले भगवान् राम लक्ष्मणजी के सहित आगे-आगे चलकर हमारे मनोरथों की रक्षा करें।२१। (भगवान् का कथन है कि) राम, दाशरथि, शूर, लक्ष्मणानुचर, बली, काकुत्स्थ, पुरुष, पूर्ण, कौसल्येय, रघूत्तम, वेदान्तवेद्य, यज्ञेश, पुराण पुरुषोत्तम, जानकी वल्लभ, श्रीमान् और अप्रमेयपराक्रम-इन नामों का नित्य प्रति श्रद्धापूर्वक जप करने से मेरा भक्त अश्वमेध यज्ञ से भी अधिक फल प्राप्त करता है—इसमें कोई सन्देह नहीं २२-२४। जो लोग दूर्वादल के समान श्यामवर्ण, कमलनयन, पीताम्बरधारी, भगवान् राम का इन दिव्यनामों से स्तवन करते हैं वे संसार चक्र में नहीं पड़ते।२५। लक्ष्मणजी के पूर्वज रघुकुल में श्रेष्ठ सीताजी के स्वामी, अति सुन्दर काकुत्स्थकुलनन्दन, करुणासागर, गुणनिधान, ब्राह्मणभक्त, परम धार्मिक, राजराजेश्वर, सत्यनिष्ठ, दशरथपुत्र, श्याम और शान्तमूर्ति सम्पूर्ण लोकों में सुन्दर, रघुकुलतिलक, राघव और रावणारि भगवान् राम की मैं वन्दना करता हूँ।२६। राम, रामभद्र रामचन्द्र, विधातृस्वरूप, रघुनाथ प्रभु सीतापति को नमस्कार है।२७। हे रघुनन्दन श्री राम! हे भरताग्रज भगवान् राम! हे रणधीर प्रभुराम! आप मेरे आश्रय होइये।२८। मैं श्रीरामचन्द्र के चरणों का मन से स्मरण करता हूँ, श्रीरामचन्द्र के चरणों का वाणी से कीर्तन करता हूँ श्रीरामचन्द्र के चरणों को सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ तथा श्रीरामचन्द्र के चरणों की शरण लेता हूँ।२९। राम मेरी माता हैं, राम मेरे पिता हैं, रामस्वामी हैं और राम ही मेरे सखा हैं। दयामय रामचन्द्र ही मेरे सर्वस्व हैं, उनके सिवा और किसी को

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मैं नहीं जानता ।३०। जिनकी दायीं ओर लक्ष्मणजी, बायीं ओर जानकीजी और सामने हनुमानजी विराजमान हैं उन रघुनाथजी की मैं वन्दना करता हूँ ।३१। जो सम्पूर्ण लोकों में सुन्दर, रणक्रीड़ा में धीर, कमलनयन, रघुवंशनायक, करुणामूर्ति और करुणा के भण्डार हैं, उन श्रीरामचन्द्रजी की मैं शरण लेता हूँ ।३२। जिनकी मन के समान गति और वायु के समान वेग है, जो परम जितेन्द्रिय और बुद्धिमानों में श्रेष्ठ हैं, उन पवननन्दन वानराग्रज श्रीरामदूत की मैं शरण लेता हूँ ।३३। कवितामयी डाली पर बैठकर मधुर अक्षरों वाले 'राम-राम' इस मधुर नाम को कूजते हुए वाल्मीकि रूप कोकिल की मैं वन्दना करता हूँ ।३४। आपत्तियों का हरण करने वाले तथा सब प्रकार की सम्पत्ति प्रदान करने-वाले लोकाभिराम भगवान् राम को बारंबार नमस्कार करता हूँ ।३५। 'राम-राम' ऐसा घोष करना सम्पूर्ण संसार बीजों को भून डालने वाला, समस्त सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति कराने वाला तथा यमदूतों को भयभीत करने वाला है ।३६। राजाओं में श्रेष्ठ श्रीरामजी सदा विजय को प्राप्त होते हैं। मैं लक्ष्मीपति भगवान् राम का भजन करता हूँ। जिन रामचन्द्रजी ने सम्पूर्ण राक्षस सेना का ध्वंस कर दिया था, मैं उनको प्रणाम करता हूँ। राम से बड़ा और कोई आश्रय नहीं है। मैं उन रामचन्द्रजी का दास हूँ। मेरा चित्त सदा राम में ही लीन रहे, हे राम! आप मेरा उद्धार कीजिये ।३७। (श्रीमहादेवजी पार्वतीजी से कहते हैं—) हे सुमुखि! 'रामनाम' विष्णु सहस्र नाम के तुल्य है। मैं सर्वदा 'राम, राम, राम' इस प्रकार मनोरम राम-नाम में ही रमण करता हूँ ।३८।

श्रीकृष्णस्तोत्राणि

श्रीकृष्णः शरणं मम

श्रीकृष्ण एव शरणं मम श्रीकृष्ण एव शरणम् ।।
(ध्रुव पदम्)

गुणमप्येषा न यत्र माया न च जनरपि मरणम् ।
यद्यतयः पश्यन्ति समाधौ परममुदाभरणम् ।।१
यद्धेतोर्निवहन्ति बुधा ये जगति सदाचरणम् ।
सर्वापद्भ्यो विहितं महतां येन समुद्धरणम् ।।२
भगवती यत्सन्मतिमुद्वहतां हृदयतमोहरणम् ।
हरिपरमा यद्भजन्ति सततं निषेव्य गुरुचरणम् ।।३
असुरकुलक्षतये कृतममरैर्यस्य सदादरणम् ।
भुवनतरुं धत्ते यन्निखिलं विविधविषयपर्णम् ।।४
अवाप्य यद् भूयोऽच्युतभक्ता न यान्ति संसरणम् ।
कृष्णलालजी द्विजस्य भूयात्तदघहरस्मरणम् ।।५

श्रीकृष्णलालजी द्विज विरचितं श्रीकृष्ण शरणं मम नामकं स्तोत्रं समाप्तम् ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मेरे लिये कृष्ण ही शरण है, एक मात्र कृष्ण ही शरण हैं। जहाँ वह त्रिगुणमयी माया और जन्म-मृत्यु नहीं हैं तथा योगी लोग समाधि में जिस आनन्दमय का यहीं दर्शन करते हैं।१। जिनकी प्राप्ति के लिये विद्वान् लोग संसार में अनेक धर्माचरण करते हैं और जिन्होंने सभी आपत्तियों से महात्माओं का उद्धार किया।२। जो भगवान् में सद्बुद्धि रखने वालों के हृदय का अज्ञानान्धकार नष्ट कर देते हैं और भगवद्भक्तजन गुरुचरणों की सेवा करके जिनका सदा भजन करते हैं।३। असुरों के विनाश के लिये देवताओं ने जिनका सदा आदर किया है और जो अनेक विषय-रूपी पत्री वाले इस संसार वृक्ष को धारण किये हुए हैं।४। जिनको प्राप्त करके भगवद्भक्त फिर आवागमन के चक्र में नहीं फँसते उन्हीं की पापनाशक स्मृति कृष्ण-लाल द्विज के हृदय में बनी रहे।५।

श्रीकृष्णाष्टकम्

भजे व्रजैकमण्डनं समस्तपापखण्डनं
स्वभक्तचित्तरञ्जनं सदैव नन्दनन्दनम्।
सुपिच्छगुच्छमस्तकं सुनादवेणुहस्तकं
अनङ्गरङ्गसागरं नमामि कृष्णनागरम् ॥१

मनोजगर्वमोचनं विशाललोललोचनं
विधूतगोपशोचनं नमामि पद्मलोचनम्।
करारविन्दभूधरं स्मितावलोकसुन्दरम्
महेन्द्रमानदारणं नमामि कृष्णवारणम् ॥२

कदम्बसूनकुण्डलं सुचारुगण्डमण्डलं
व्रजाङ्गनैकवल्लभं नमामि कृष्णदुर्लभम्।
यशोदया समोदया सगोपया सनन्दया
युतं सुखैकदायकं नमामि गोपनायकम् ॥३

सदैव पादपङ्कजं मदीयमानसे निजं
दधानमुत्तमालकं नमामि नन्दबालकम्।
समस्तदोषशोषणं समस्तलोकपोषणं
समस्तगोपमानसं नमामि नन्दलालसम् ॥४

भुवो भरावतारकं भवाब्धिकर्णधारकं
यशोमतीकिशोरकं नमामि चित्तचोरकम्।
दृगन्तकान्तभङ्गिणं सदासदालसङ्गिनं
दिने दिने नवं नवं नमामि नन्दसम्भवम् ॥५

गुणाकरं सुखाकरं कृपाकरं कृपाकरं
सुरद्विषन्निकन्दनं नमामि गोपनन्दनम्।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नवीनगोपनागरं नवीनकेलिलम्पटं
नमामि मेघसुन्दरं तडित्प्रभालसत्पटम् ॥६

समस्तगोपनन्दनं हृदम्बुजैकमोदनं
नमामि कुञ्जमध्यगं प्रसन्नभानुशोभनम् ।
निकामकामदायकं दृगन्तचारुसायकं
रसालवेणुगायकं नमामि कुञ्जनायकम् ॥७

विदग्धगोपिकामनोमनोज्ञतल्पशायिनं
नमामि कुञ्चकानने प्रवृद्धवह्निपायिनम् ।
यदा तदा यथा तथा तथैव कृष्णसत्कथा
मया सदैव गीयतां तथा कृपा विधीयताम् ।
प्रामाणिकाष्टकद्वयं जपत्यधीत्य यः पुमान्
भवेत्स नन्दनन्दने भवे भवे सुभक्तिमान् ॥८

श्रीमच्छङ्कराचार्य कृतं श्रीकृष्णाष्टकं सम्पूर्णम्

ब्रज भूमि के एक मात्र आभूषण, समस्त पापों को नष्ट करने वाले तथा अपने भक्तों के चित्तों को आनन्दित करने वाले नन्दनन्दन को सर्वदा भजता हूँ, जिनके मस्तक पर मनोहर मोर-पंख का मुकट है, हाथों में सुरीली बाँसुरी है तथा जो काम कला के सागर हैं, उन नटनागर श्रीकृष्णचन्द्र को नमस्कार करता हूँ ।१। कामदेव का मान-मर्दन करने वाले, बड़े-बड़े सुन्दर नेत्रों वाले तथा ब्रजगोपों का शोक हरनेवाले कमलनयन भगवान् को नमस्कार करता हूँ, जिन्होंने अपने कर-कमलों पर गिरिराज को धारण किया था तथा जिनकी मुस्कान और चितवन अति मनोहर है, देवराज इन्द्र का मान-मर्दन करने वाले उन श्रीकृष्णरूपी गजराज को नमस्कार करता हूँ ।२। जिनके कानों में कदम्ब-पुष्पों के कुण्डल हैं, परम सुन्दर कपोल हैं तथा वृजबालाओं के जो एक मात्र प्राणाधार हैं, उन दुर्लभ कृष्णचन्द्र को नमस्कार करता हूँ, जो गोपगण और नन्दजी के सहित अति प्रसन्न यशोदाजी से युक्त हैं और एक मात्र आनन्द दायक हैं, उन गोपनायक गोपाल को नमस्कार करता हूँ ।३। जिन्होंने अपने चरण कमलों को मेरे मनरूपी सरोवर में स्थापित कर रखा है, उन अति सुन्दर अलकों वाले, नन्दकुमार को नमस्कार करता हूँ तथा समस्त दोषों को दूर करनेवाले समस्त लोकों का पालन करने वाले और समस्त वन गोपों के हृदय तथा नन्दजी की लालसा रूप श्री कृष्ण चन्द को नमस्कार करता हूँ ।४। भूमि का भार उतारने वाले, संसार सागर के कर्णधार मनोहर यशोदाकुमार को नमस्कार करता हूँ, अति कमनीय कटाक्षवाले, सदैव सुन्दर भूषण करने वाले नित्य नूतन नन्दकुमार को नमस्कार करता हूँ ।५। गुणों के भण्डार, सुखसागर, कृपानिधान और कृपालु गोपाल को, जो देव-शत्रुओं को ध्वंस करने वाले हैं, नमस्कार करता हूँ, नित्य नूतन लीला

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विहारी, मेघश्याम नटनागर गोपाल को जो बिजली की-सी आभावाला अतिसुन्दर पीताम्बर धारण किये हुए हैं, नमस्कार करता हूँ ।६। जो समस्त गोपों को आनन्दित करने वाले और हृदय कमल को विकसित करने वाले, देदीप्यमान सूर्य के समान शोभायमान हैं, उन कुञ्जमध्यवर्ती श्याम सुन्दर को नमस्कार करता हूँ। जो कामनाओं को भली भाँति पूर्ण करने वाले हैं, जिनकी चारु चितवन बाणों के समान है, सुमधुर वेणु बजाकर गान करने वाले उन कुञ्जनायक को नमस्कार करता हूँ ।७। चतुर गोपियों के मनरूपी सुकोमल शय्या पर शयन करने वाले तथा कुञ्जन में बढ़ती हुई दावाग्नि को पान कर जाने वाले श्रीकृष्णचन्द्र को नमस्कार करता हूँ, मेरे ऊपर ऐसी कृपा हो कि जब तब जैसी भी परिस्थिति में रहूँ सदा श्रीकृष्णचन्द्र की सत्कथाओं का गान करूँ। जो पुरुष इन दोनों प्रामाणिक अष्टकों का पाठ या जप करेगा, वह जन्म-जन्म में नन्दनन्दन श्यामसुन्दर की भक्ति से युक्त होगा ।८।

मधुराष्टकम्

अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम् ।
हृदयं मधुरं गमनं मधुराधुपतेरखिलं मधुरम् ।।१
वचनं मधुरं चरितं मधुरं वसनं मधुरं वलितं मधुरम् ।
चलितं मधुर भ्रमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।२
वेणुर्मधुरो रेणुर्मधुरः पाणिर्मधुरः पादौ मधुरौ ।
नृत्यं मधुर सख्यं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।३
गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।४
करणं मधुरं तरणं मधुरं हरणं मधुरं स्मरणं मधुरम् ।
वमितुं मधुरं शमितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।५
गुञ्जा मधुरा माला मधुरा यमुना मधुरा वीची मधुरा ।
सलिलं मधुरं कमलं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।।६
गोपी मधुरा लीला मधुरा युक्तं मधुरं भुक्तं मधुरम् ।
इष्टं मधुर शिष्टं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।.७
गोपा मधुरा गावो मधुरा यष्टिर्मधुरा सृष्टिर्मधुरा ।
दलितं मधुरं फलितं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।.८

श्रीमद्वल्लभाचार्य कृतमधुराष्टकं सम्पूर्णम्

श्रीमधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है। उनके अधर मधुर हैं, मुख मधुर हैं, नेत्र मधुर हैं, हास्य मधुर है, हृदय मधुर है, और गति भी अति मधुर है ।१। उनके वचन मधुर हैं, चरित्र मधुर है, वस्त्र मधुर हैं, अंगभंगी मधुर हैं, चाल

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मधुर है और भ्रमण भी अति मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है।२। उनकी वेणु मधुर है, चरणरज मधुर हैं, करकमल मधुर हैं, चरण मधुर हैं, नृत्य मधुर है और सख्य भी अति मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है।३। उनका गान मधुर है, पान मधुर है, भोजन मधुर है, शयन मधुर है, रूप मधुर है और तिलक भी अति मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है।४। उनका कार्य मधुर है, तैरना मधुर है, हरण मधुर है, स्मरण मधुर है, उद्धार मधुर है और शान्ति भी अति मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है।५। उनकी गुञ्जा मधुर है, माला मधुर है, यमुना मधुर है, उनकी तरंगें मधुर हैं, उनका जल मधुर है, और कमल भी अति मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सभी कुछ मधुर है।६। गोपियाँ मधुर हैं, उनकी लीला मधुर है, उनका संयोग मधुर है, भोग मधुर है, निरीक्षण मधुर है और शिष्टाचार मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सब कुछ मधुर है।७। गोप मधुर हैं, गौएँ मधुर हैं, लकुटी मधुर है, रचना मधुर है, दलन मधुर है और उसका फल भी अति मधुर है, श्रीमधुराधिपति का सब कुछ मधुर है।८।

चतुःश्लोकी

सदा सर्वात्मभावेन भजनीयो व्रजेश्वरः।
करिष्यति स एवास्मद्दैहिकं पारलौकिकम् ।।१
अन्याश्रयो न कर्तव्यः सर्वथा बाधकस्तु सः।
स्वकीये स्वात्मभावश्च कर्तव्यः सर्वथा सदा ।।२
सदा सर्वात्मना कृष्णः सेव्यः कालादिदोषनुत्।
तद्भक्तेषु च निर्दोषभावेन स्तेयमादरात् ।३
भगवत्येव सततं स्थापनीयं मनः स्वयम्।
कालोऽयं कठिनोऽपि श्रीकृष्णभक्तान्न बाधते ।।४
श्रीविट्ठलेश्वरोक्ता चतुःश्लोकी समाप्ता

सबके आत्म रूप से व्याप्त, भगवान् व्रजराज श्रीकृष्ण का ही सदैव भजन करना चाहिये। वे ही हम लोगों के लौकिक और पारलौकिक लाभ सिद्ध करेंगे।१। दूसरे का आश्रय नहीं लेना चाहिये, क्योंकि वह सर्वथा बाधक होता है, सदा स्वावलम्बी होकर सब तरह से आत्मभाव का पालन करना चाहिये।२। कालादि दोषों को दूर करने वाले भगवान कृष्ण का सदा-सर्वदा सेवन करना चाहिये और दोष दृष्टि को त्यागकर श्रद्धापूर्वक उनके भक्तों का सङ्ग करना चाहिये।३। भगवान् कृष्ण में ही सदैव अपने मन को लगाये रखना चाहिये, क्योंकि उनके भक्तों को यह कठिन काल भी बाधा नहीं पहुँचा सकता।४।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीयमुनाजी-वन्दन

मुरारिकायकालिमा ललामवारिधारिणी
तृणीकृतत्रिविष्टपा त्रिलोकशोकहारिणी ।
मनोऽनुकूलकूलकुञ्जपुञ्जधूतदुर्मदा
धुनोतु मे मनोमलं कलिन्दनन्दिनी सदा ।।

जय कालिंदी, हरिप्रिया जय ।
जय रवि- तनया, तपोमयी जय ।।१
जय श्यामा, अति अभिरामा जय ।
जय सुखदा श्रीहरि रामा जय ।।२
जय व्रज-मण्डल-वासिनि जय जय ।
जय द्वारकानिवासिनि जय जय ।।३
जय कलि-कलुष-नसावनि जय जय ।
जय यमुने जय पावनि, जय जय ।।४
जय निर्वाण - प्रदायिनि जय जय ।
जय हरि-प्रेम-दायिनी जय जय ।।५

□

श्रीहनुमानजी की प्रार्थना

मनोजवं मारुततुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ।।१
अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपति प्रियभक्तं वातजातं नमामि ।।२
मर्कटेश महोत्साह सर्वशोकविनाशन ।
शत्रून् संहर मां रक्ष श्रियं दापय मे प्रभो ।।३
अञ्जनागर्भसम्भूत कपीन्द्रसचिवोत्तम ।
रामप्रिय नमस्तुभ्यं हनुमन् रक्ष सर्वदा ।।४

जिनकी मन के समान गति और वायु के समान वेग है, जो परम जितेन्द्रिय और बुद्धिमानों में श्रेष्ठ हैं, उन पवन नन्दन वानरराज श्रीरामदूत की मैं शरण

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

लेता हूँ ।१। अतुल बल के धाम, सोने के पर्वत (सुमेरु) के समान कान्ति युक्त शरीर वाले, दैत्यरूपी वन [को ध्वंस करने] के लिये अग्निरूप, ज्ञानियों में अग्रगण्य, सम्पूर्ण गुणों के निधान, वानरों के स्वामी श्री रघुनाथजी के प्रियभक्त, पवनपुत्र श्रीहनुमानजी को मैं प्रणाम करता हूँ ।२। हे वानराधीश ! महान् उत्साही सब प्रकार के शोक का नाश करने वाले प्रभो ! मेरे शत्रुओं का नाश कर दो, मेरी रक्षा करो और अपनी लक्ष्मी मुझे प्रदान करो ।३। हे अञ्जना के गर्भ से उत्पन्न हुए, सुग्रीवजी के श्रेष्ठ मन्त्री, श्रीराम के प्यारे हनुमानजी आपको प्रणाम हैं। आप मेरी सदा रक्षा करें ।४।

□

ग्रन्थ समापन प्रार्थना

सोपान १७

सच्चिदानन्दघन परमपिता परमात्मा की अर्चना, वन्दना करने वाले आस्तिक ग्रन्थकार आरम्भ में इष्टदेव की प्रार्थना तथा अन्त में क्षमा प्रार्थना करते हैं। उन परमपूज्य, सम्माननीय महाविद्वानों का अनुसरण करते हुये, इस 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ की समापन प्रार्थना परममिता परमेश्वर भगवान् सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण आदि अनन्तस्वरूप, अनन्त नाम धारण करने वाले की सेवा में अर्पण करता हूँ।

परमपिता परमात्मा भगवान् विष्णु के विषय में सम्यक् रूप से कुछ कहना, लिखना देवाधिदेव महादेव, सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माजी के लिए भी संभव नहीं, तो मुझ जैसे अल्प बुद्धि मानव के लिये भगवान् लक्ष्मीनारायण ! आपके प्रति कुछ भी लिखने की इच्छा करने के विषय में 'पारिजात-हरण' नामक अभिनव महाकाव्य में लिखे हुए एक श्लोक का स्मरण हो रहा है—

पित्रापि मेऽगम्यतमप्रभावे
भवत्यसावप्यसती मदुक्तिः।
किं जातपक्षाऽपि हरे कदाचित्
पिपीलिका चुम्बति चन्द्रचिम्बम्॥
(पारिजातहरण काव्य)

(नारदजी भगवान् श्रीकृष्ण से कहते हैं) हरे ! आपका प्रभाव मेरे पिता-ब्रह्माजी के लिए भी अगम्य है—उसे जान पाना उनके लिये कठिन ही नहीं, असम्भव

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है। ऐसे अगम्य प्रभावशाली आप परमेश्वर के विषय में मैंने जो कहा है, जो भी स्तुति करने की धृष्टता की है, वह मेरी उक्ति क्या कभी सती-श्रेष्ठ या समुचित हो सकती है ? नहीं-नहीं, उसमें आपके गुण-वर्णन की क्षमता कहाँ हैं ? वह तो सर्वथा असमर्थ होने के कारण असती है—असाधु या अनुचित है। क्या चींटी के पंख निकल आने पर भी वह कभी चन्द्रमण्डल का चुम्बन कर सकती है ? कदापि नहीं। इसी प्रकार यह मेरी उक्ति आपके गुण-प्रभाव का निरूपण कदापि नहीं कर सकती। किंतु परमपिता परमात्मा देव ! जब मैंने सन् १९६४ में जीविकोपार्जन भार से मुक्त होकर वानप्रस्थाश्रम ग्रहण कर लिया और मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हुआ, अपनी जीवन नैया को डावाँडोल स्थिति में देखकर निराश तथा उदास हो गया। उस समय करुणासागर भगवान् आपने ही आशा की प्रेरणा देते हुए आशीर्वाद प्रदान किया—

उद्यानं ते पुरुष नावयानं जीवातुं
ते दक्षतातिं कृणोमि।
आ हि रोहेमामृतं सुखं रथम्
अथ जिर्विदथ मा वदासि ॥ (अथर्व ८।१।६)

किस लिये नैराश्य छाया !

किसलिये कुम्हला रहा यह सोम्य-सा चेहरा तुम्हारा।
तुम स्वयं आदित्य ! दुर्दिन का न गाओ गान रोकर।
हे सुदिव्य महारथी ! संकल्प एक महान् होकर।
कुछ लिखो, फिर-फिर लिखो, चिर तक लिखो अभिमान खोकर।
फिर तुम्हारी हार भी विख्यात होगी जीत बनकर।
फिर तुम्हारी मृत्यु गूँजेगी अमर संगीत होकर।
काल यह सन्देश लाया, किसलिये नैराश्य छाया।

आपके इस प्रेरणा आशीर्वाद को शिरोधार्य कर सर्व प्रथम 'शिव-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ का लेखन किया, तत्पश्चात् शक्ति-तत्त्व-दर्शन' की रचना की। इन दोनों ग्रन्थों का आपके ही अनुग्रह द्वारा प्रकाशन हो चुका है और धार्मिक जगत् में उनका उत्कृष्ट समादर किया गया। अब यह मेरी वाङ्मयी तृतीय पूजा का पुष्प 'विष्णु-तत्त्व दर्शन' है। जिस प्रकार की प्रेरणा समय-समय पर प्रदान करने का अनुग्रह आपने इस चरण किंकर पर किया है, उसी का यह प्रतिफल आपके ही चरणों में समर्पित है। इसमें अनेक भूल त्रुटियाँ भरी हुयी हैं, वह सब मेरी स्वल्प बुद्धि के कारण ही रही हैं, इसके लिये आप मुझ पर करुणाभाव करके अवश्य क्षमा करें।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यद्क्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर ।।

'हे भगवान् जनार्दन ! मेरी यह पूजा मन्त्र, पूजा विधि एवं भक्ति से हीन है, इसको आप ही पूर्ण करेंगे । इसमें प्रयुक्त जो अक्षर पदभ्रष्ट एवं मात्राहीन हों, उन्हें भी हे भगवान् परमेश्वर ! आप क्षमा करें ।

ॐ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ।।

हे भगवान् लक्ष्मीनारायण ! न मुझे आपका आह्वान आता है और न आपकी पूजा की विसर्जन क्रिया ही आती है । अतः हे परमब्रह्म परमेश्वर ! आप मुझे क्षमा करें । आपकी शरण ग्रहण करने के अतिरिक्त मेरे पास कोई भी अन्य मार्ग नहीं है । अतः हे भगवान् परमेश्वर ! हे प्रभो ! आप दया भाव से मेरी रक्षा करें ।

सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं
सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये ।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं
सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्नाः ।।
(श्रीमद्भागवत १०.२।२६)

'सत्य जिनका व्रत है, जो सत्यपरायण, तीनों काल में सत्य, सत्य (भाव) स्वरूप, संसार के उद्भव स्थान और अन्तर्यामी रूप से सत्य (संसार) में निहित हैं तथा सत्य और ऋत जिनके नेत्र हैं, उन सत्य के सत्य आप सत्य स्वरूप की हम शरण हैं ।

वपुरादिषु योऽपि कोऽपि वा
गुणतोऽसानि यथातथा विधः ।
तदयं तव पादपद्मयो—
रहमद्यैव मया समर्पितः ।।
(श्री आलवन्दार स्तोत्र २५)

'हे नाथ ! शरीर, इन्द्रिय, मन, प्राण और बुद्धि आदि में मैं जो कोई भी होऊँ, गुण के अनुसार (भला-बुरा) जैसा भी होऊँ, मैं तो आज ही अपने को आपके चरण कमलों में समर्पण कर चुका ।'

पिता त्वं माता त्वं दयिततनयस्त्वं प्रिय सुहृत्—
त्वमेव त्वं मित्रं गुरुरपि गतिश्चासि जगताम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वदीयस्त्वद्भृत्यस्तव परिजनस्त्वद्गतिरहं
प्रपन्नश्चैवं सत्यहमपि तवैवास्मि हि भरः ॥
(श्री आलवंन्दार स्तोत्र ६३)

'हे हरे ! आप ही विश्व के पिता माता, प्रिय पुत्र, प्यारे सुहृद, मित्र, गुरु और गति हैं, मैं आपका ही सम्बन्धी आपका ही दास, आपका ही परिचारक, आपको ही (एकमात्र) गति मानने वाला और आपके ही शरण हूँ। इस प्रकार अब आप पर ही मेरा सारा भार है।'

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥
(पाण्डवगीता)

'हे भगवान् ! तुम ही मेरी माता हो, तुम ही पिता हो, तुम ही बन्धु हो, तुम ही सखा हो. तुम ही विद्या हो, तुम ही धन हो और तुम ही मेरे सर्वस्व हो।'

यो वा अनन्तस्य गुणाननन्तान—
नुक्रमिष्यन् स तु बालबुद्धिः।
रजांसि भूमेर्गणयेत् कथंचित्
कालेन नैवाखिलशक्तिधाम्नः ॥
(श्री मद्भागवत ११।४।२)

'भगवान् अनन्त हैं। उनके गुण भी अनन्त हैं। जो यह सोचता है कि मैं उनके गुणों की गणना कर लूँगा, वह मूर्ख है, बालक की-सी बुद्धिवाला है। यह तो संभव है कि कोई किसी प्रकार कभी पृथ्वी के धूलि कणों को गिन ले, परन्तु समस्त शक्तियों के आश्रय भगवान् के अनन्त गुणों का कोई कभी किसी प्रकार पार नहीं पा सकता।'

तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।
यादृशः त्वं महादेव तादृशाय नमो नमः ॥

'हे महेश्वर ! आपका तत्त्व कैसा है, यह जानने में नहीं आता है। महादेव ! जैसा देखने में आता है. उसी को नमस्कार है।'

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्सुरेश्वर ॥

'हे भगवान् सुरेश्वर ! आप गोपनीय से भी गोपनीय वस्तु की रक्षा करने वाले हो। मेरे इस जप को ग्रहण करो। आपकी कृपा से मुझे सिद्धि प्राप्त हो।'

हे भगवान् ! परम पिता परमेश्वर मेरे तो जो कुछ भी हो, आप ही हो। मैं अन्य किस की शरण ग्रहण करूँ। मैं तो आपकी ही शरण हूँ, शरण हूँ, शरण हूँ।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतो याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥

'जिनके स्मरण से ही नहीं, नामोच्चारण मात्र से तप, यज्ञ एवं कर्मकाण्ड आदि में हुई त्रुटि तत्काल पूर्ण हो जाती है, उन भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ ।'

॥ ॐ ॥

अनेन पूजनेन सच्चिदानन्दघन परमात्मा सर्वेश्वर भगवान् विष्णु, अनन्तनाम, अनन्त स्वरूप धारणकर्ता महाप्रभो ! श्रीसीताराम, श्रीराधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण प्रीयताम् न मम । श्रीभगवान् वासुदेवार्पणमस्तु । शुभमस्तु ।

□

प्रार्थना, स्वस्ति, सर्वमङ्गल-कामना, भगवान् विष्णु की आरती, अन्धकार का परिचय एवं ग्रंथ समाप्ति, विष्णु-तत्त्व-दर्शन माहात्म्य, भविष्य कामना

सोपान १८

प्रार्थना

ॐ यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति ।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥
(अथर्व. १०।८ १)

ॐ नमः सायं नमः प्रातर्नमो रात्र्या नमो दिवा ।
भवाय च सर्वाय चोभाभ्यामकरं नमः ॥
(अथर्व. ११।२।१६)

'जो भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान कालिक समस्त जगत् का अधिष्ठाता-नियन्ता है एवं केवल स्वः (विशुद्ध अनन्त आनन्द) ही जिसका स्वरूप है, उस ज्येष्ठ (अति प्रशस्त महान्) ब्रह्म को नमस्कार है । उसे सायंकाल नमस्कार हो,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रातःकाल नमस्कार हो। रात्रि में नमस्कार हो एवं दिवस में नमस्कार हो अर्थात् सर्वदा उसी की ओर हमारी भक्ति-भाव से भरी बुद्धिवृत्तियाँ झुकी रहा करें, उस विश्व-उत्पादक एवं विश्व-उपसंहारक भगवान् को मैं दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करता हूँ।'

उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।
सुपर्ण्ययातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्रमृण रक्ष इन्द्र! ॥
(ऋग्वेद ९।७।६, अथर्व ८ ४२।२२)

'हे इन्द्रस्वरूप जीवात्मन्! दिवान्ध उलूक के समान आचरण करने वाले मोहरूपी राक्षस का, शुशुलूक (भेड़िये) के समान आचरण करने वाले क्रोध रूपी राक्षस का, श्वा (कुत्ता) के समान आचरण करने वाले मत्सररूपी राक्षस का तथा कोक (चकवा-चकवी) पक्षी के समान आचरण करने वाले कामरूपी राक्षस का, सुपर्ण (गरुड़) के समान आचरण करने वाले मदरूपी राक्षस का तथा गृध्र (गीध) के समान आचरण वाले लोभरूपी राक्षस का सदुपायों के द्वारा विध्वंस कर और जैसे पत्थर से मिट्टी के ढेले को पीस दिया जाता है, वैसे ही उन छः मोहादि दोषरूपी राक्षस शत्रुओं को पीस डालें।'

माध्वीर्गावो भवन्तु नः। (ऋ. १।९०।६, शु. य. १३।२७)

'हे प्रभो! मेरी इन्द्रियाँ मधुर अर्थात् संयम-सदाचार द्वारा प्रसन्नतायुक्त बनी रहें—इनमें असंयम रूपी कटुता-विक्षेप न रहे, ऐसी कृपा करें।'

गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्।
ज्योतिष्कर्त्ता यदुश्मसि ॥ (ऋग् १।८६।१०)

'हे प्रियतम! हृदय-गुहा के अन्धकार को विलीन कर दो, नाशक पाप को भगा दो और हे ज्योतिर्मय! हम जिस ज्योति को चाहते हैं वह हमें प्रदान करो।'

हे भगवान्! आप ही अशरणों को शरण प्रदान करने वाले हैं। आपकी ही कृपा से मेरा उद्धार हो सकता है—

त्वमग्ने व्रतपा असि देव आ मर्त्येष्वा।
त्वं यज्ञेषु ईड्यः ॥
(ऋग्वेद ८।११।६, यजु. ४।६१, अथर्व १९।५९।१)

चतुर्दिक् तुम्हीं नाथ छाये हुए हो,
मधुर रूप अपना बिछाये हुए हो।
तुम्हीं व्रत-विधाता, नियन्ता जगत् के,
स्वयं भी नियम सब निभाये हुए हो।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रभो ! शक्तियाँ दिव्य अनुपम तुम्हारी,
तुम्हीं दूर, तुम पास आये हुए हो।
करें हम यजन, पुण्य शुभकर्म जितने,
सभी में प्रथम स्थान पाये हुए हो।
तुम्हारी करें वन्दना देव ! निशिदिन,
तुम्हीं इस हृदयमें समाये हुए हो।
यस्य भूमिः प्रभा अन्तरिक्षमुतोदरम्।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः॥
(अथर्व. १०।७ ३२)

सत्यज्ञान की परिचायक यह पृथ्वी जिसके चरण महान्।
जो इस विस्तृत अन्तरिक्ष को रखता है निज उदर समान॥
शीर्षतुल्य है जिसके शोभित यह नक्षत्र लोक द्युतिमान्।
उस महान् जगदीश्वर को है अर्पित मेरा नम्र प्रणाम॥

स्वस्ति

हरि ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥१

वृद्धश्रवा (बड़ी कीर्तिवाले) इन्द्र हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, सर्वज्ञ पूषा हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, अरिष्टनेमि तार्क्ष्य (तार्क्ष्य-रथ अर्थात् जिस रथ की नेमि की गति अर्थात् चक्रधारी की गति कोई भी रोकने में समर्थ नहीं है, उसको ही अरिष्टनेमि तार्क्ष्य कहते हैं, यहाँ पर रथरूप से वर्णन हुआ।) हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें, बृहस्पति हमारे निमित्त स्वस्ति विधान करें।१।

ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥२

पृथिवी देवी हमारे निमित्त (अर्थात् हमको देने के लिये) रस धारण करें, ओषधियाँ भी हमारे निमित्त रस धारण करें, स्वर्गलोक और अन्तरिक्ष लोक भी हमारे निमित्त रस धारण करें अर्थात् आहूति के परिणाम से पृथिवी आदि हमको भगवत्कृपा से अभीष्ट देने वाले हों।२।

ॐ विष्णोरराटमसि विष्णो श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णो-ध्रुवोऽसि॥ वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥

हे तिर्यक वंशचीर ! तुम इस यज्ञिय मण्डप के रराटी (द्वार के दो खम्भों पर नीचे को मुखवाला अर्द्धवृताकार जो तिरछा वंशतीर होता है, उसको रराटी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कहते है, यह मण्डप का माथा रूप है) होते हो। ररांटी प्रान्तद्वय ! तुम दोनों इस यज्ञिय मंडप की ओष्ठ संधिरूप होते हो, हे लस्यूजानि ! (बड़ी सूई सूजा) तुम ही इस यज्ञ मंडप की सूची हो। हे रस्सी की गाँठ ! तुम इस यज्ञिय मडप की गांठ हो, इससे दृढ़ होवो। हे प्राग्वंश ! पूर्व-पश्चिम को लम्बा करके स्थापित वांस इस मण्डप की छत का प्रधान अवलम्बन बडावाँस (आडा) तुम इस यज्ञिय मंडप की छत के मध्यवाले प्रधान वांस हो, इस मंडप की दृढ़ता को परीक्षा करने के लिये तुमको स्पर्श करता हूँ, इस मन्त्र में वंशादि में स्थित सर्वज्ञ देव की प्रार्थना उस-उस रूप से वर्णन की है।३।

ॐ एकदष्ट्राय विद्महे, वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो बुद्धि प्रचोदयात् ॥४

भगवान् एक दन्त सर्व प्रथम पूज्य श्रीगणेशजी महाराज को गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, उन वक्रतुण्ड महाराज का ध्यान करते हैं। वह बुद्धिसागर हमको ज्ञान ध्यान के लिये प्रेरणा करें।४।

ॐ नारायणाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥५

भगवान् श्रीनारायण को गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, उन भगवान् वासुदेव का ध्यान करते हैं। वह भगवान् विष्णु हमको ज्ञान ध्यान के लिये प्रेरणा करें।५।

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवतादित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।६।

अग्नि देवता की प्रार्थना करता हुआ, यह इष्टका स्थापन करता हूँ ? (१) वायु देवता का ध्यान करता हुआ इष्टका स्थापन करता हूँ, (२) सूर्य्य देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (३) चन्द्रमा देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (४) वसु देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (५) रुद्र देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (६) आदित्य देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (७) मरुत देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (८) विश्वेदेवा देवताओं का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (९) बृहस्पति देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (१०) इन्द्र देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ, (११) वरुण देवता का ध्यान करता हुआ यह इष्टका स्थापन करता हूँ।६।

ॐ जलबिम्बाय विद्महे, नीलपुरुषाय धीमहि। तन्नो वरुणो प्रचोदयात् ।७।

श्रीवरुण देवता को हम जल रूप में गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उस

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नील पुरुष का ध्यान करते हैं। वह वरुण देवता हमको ज्ञान ध्यान के लिये प्रेरणा करें।७।

ॐ पृथ्वी देव्यै विद्महे, सहस्रमूर्त्यै धीमहि। तन्नो पृथ्वी प्रचोदयात्।८।

पृथ्वी देवी को हम गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उनका सहस्रों मूर्तियों में ध्यान करते हैं। वह पृथ्वी देवी हमको ज्ञान-ध्यान के लिये प्रेरणा करें।८।

ॐ गिरिजायै विद्महे, शिवप्रियायै धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्।९।

श्रीगिरिजादेवी को हम गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उन शिवप्रिया का ध्यान करते हैं। वह दुर्गा देवी हमको ज्ञान-ध्यान के लिये प्रेरणा करें।९।

ॐ महालक्ष्म्यै विद्महे, विष्णुप्रियायै धीमहि। तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात्।१०

श्री महालक्ष्मी को हम गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उस विष्णु प्रिया का ध्यान करते हैं। वह लक्ष्मीदेवी हमको ज्ञान-ध्यान के लिये प्रेरणा करें।१०।

ॐ सरस्वत्यै विद्महे, ब्रह्मपुत्र्यै धीमहि। तन्नो देवी प्रचोदयात्।११।

श्रीसरस्वतीजी को हम गुरु-शास्त्र मुख से जानते हैं, हम उन ब्रह्मपुत्री का ध्यान करते हैं। वह देवी हमको ज्ञान-ध्यान के लिये प्रेरणा करें।११।

अग्निश्च म इन्द्रश्च मे, सोमश्च म इन्द्रश्च मे, सविता च म इन्द्रश्च मे, सरस्वती च म इन्द्रश्च मे, पूषा च म इन्द्रश्च मे, बृहस्पतिश्च म इन्द्रश्च मे, यज्ञेन कल्पन्ताम्।१२। मित्रश्च म इन्द्रश्च मे, वरुणश्च म इन्द्रश्च मे, धाता च म इन्द्रश्च मे, त्वष्टा च म इन्द्रश्च मे, मरुतश्च म इन्द्रश्च मे, विश्वे च मे देवा इन्द्रश्च मे, यज्ञेन कल्पन्ताम्।१३। पृथिवी च म इन्द्रश्च मे, अन्तरिक्षं च म इन्द्रश्च मे, द्यौश्च मे, समाश्च म इन्द्रश्च मे, नक्षत्राणि च म इन्द्रश्च मे, दिशश्च म इन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्।१४।

(शुक्ल यजुः १८।१६-१८)

अग्नि भी इन्द्र है, सोम भी इन्द्र है, सविता भी इन्द्र है, सरस्वती भी इन्द्र है, पूषा इन्द्र है, बृहस्पति भी इन्द्र है, वे सब इन्द्र-परमात्मा स्वरूप अग्नि आदि देव जपादि विविध यज्ञों के द्वारा हमारे अनुकूल सहायक हो।१२। मित्र भी इन्द्र है, वरुण भी इन्द्र है, धाता भी इन्द्र हैं, त्वष्टा भी इन्द्र है, मरुत् भी इन्द्र हैं, विश्वेदेव भी इन्द्र हैं, वे सब इन्द्र स्वरूप देव यज्ञ के द्वारा हम पर प्रसन्न हों।१३। पृथिवी भी इन्द्र है, अन्तरिक्ष भी इन्द्र है, द्यौ-स्वर्ग भी इन्द्र है, समा—संवत्सर की अधिष्ठात्री देवता भी इन्द्र हैं, नक्षत्र भी इन्द्र है, दिशाएँ भी इन्द्र हैं, वे सब इन्द्राभिन्न देव यज्ञ के द्वारा हमारे रक्षक हों।१४।

(ये देवता उस एक इन्द्र—परमात्मा की ही शक्ति एवं विभूति के विशेषरूप हैं) परमात्मा इन्द्र को सर्वदेवमय कहा गया है—'यो देवानां नामधा एक एव' (ऋ० १०।८२।२, शु० य० १७।२७) 'यत्र देवा समगच्छन्त विश्वे' (ऋ. १०।८२।६)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ॐ यो देवोऽग्नौ योऽप्सु यो विश्वं भुवनामाविवेशः ।
य ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नमः ॥१५

जो सर्वशक्तिमान् पूर्ण ब्रह्म परमदेव अग्नि में हैं, जो जल में हैं, जो समस्त लोकों में अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट हो रहे हैं, जो औषधियों (अन्न आदि) में हैं और जो वनस्पतियों में हैं, अर्थात् जो सर्वत्र परिपूर्ण हैं, जिनका अनेक प्रकार से पहले वर्णन हो चुका है, उन परम देव परमात्मा को नमस्कार है, नमस्कार है ।१५।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवा शान्तिः सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।।१६।।

द्युलोक रूप शान्ति और अन्तरिक्ष रूप शान्ति, पृथिवी रूप शान्ति, जलरूप, औषधिरूप शान्ति, वनस्पति रूप शान्ति, विश्वदेवा सम्बन्धी शान्ति व सर्वदेव रूप शान्ति, त्रयी-लक्षण युक्त शान्ति, सर्व जगत् रूप शान्ति, जो स्वरूप से ही शान्ति शान्ति है वह वह हमारे प्रति हो अर्थात् ये सब हमारे को शान्तरूप हों ।१६।

ॐ शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु सर्वारिष्ट शान्तिर्भवतु ! अनेन विष्णु-तत्त्व-दर्शनाख्येन ग्रन्थेन परमपिता परमात्मा सच्चिदानन्द भगवान् सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण प्रीयतां न मम । ॐ श्रीवासुदेवार्पणमस्तु ।। श्री शुभमस्तु ।। श्रीरस्तु ।।

सर्व मङ्गल कामना

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ।।

इस विश्व में सब सुखी हों, सब नीरोग हों, सब कल्याण मङ्गलों का दर्शन करें, कोई भी दुःख को प्राप्त न हों ।

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वः भद्राणि पश्यतु ।
सर्वः सद्बुद्धिमाप्नोतु सर्वः सर्वत्र नन्दतु ।।

सब कठिनाइयों से, विपत्तियों से, त्राण पाएँ, सब मङ्गलों का दर्शन करें, सब सद्बुद्धि को प्राप्त हों और सब सर्वदा सर्वत्र आनन्द लाभ करें ।

दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात् ।
शान्तः मुच्येत् बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् विमोचयेत् ।।

दुष्टजन सज्जन हो जायें, सज्जन शान्ति को प्राप्त करें, शान्तजन बन्धन से मुक्त हो जायं और मुक्तजन दूसरों को बन्धन से मुक्त करें ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां, न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः ।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं, लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ।।

प्रजाजनों का कल्याण हो, राज्याधिकारी न्याययुक्त मार्ग से पृथ्वी पर शासन करें। गौओं एवं ब्राह्मणों का सर्वत्र मङ्गल हो। सम्पूर्ण लोक सुखी हो जायें।

काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी शस्यशालिनी ।
देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः सन्तु निर्भयाः ।।

बादल समय पर वर्षा करें, पृथ्वी धान्य से समृद्ध हो। यह देश (भारतवर्ष) क्षोभ रहित हो जाय, ब्राह्मण, सन्त (महात्मा) निर्भय हो जायें।

शरणं त्वां गतो नाथ संसारार्णवतारक ।
दिशः पश्य अधः पश्य व्याधिभ्यो रक्ष नित्यशः ।
प्रसीद स्वस्य राष्ट्रस्य राज्ञः सर्वबलस्य च ।।
गर्भिणीनां च वृद्धानां ब्रीहिणां च गवां तथा ।
ब्राह्मणानां च सततं शान्तिं कुरु शुभं कुरु ।।
अन्नं कुरु सुवृष्टिं च सुभिक्षमभयं तथा ।
राष्ट्रं प्रवर्द्धतु विभो शान्तिर्भवतु नित्यशः ।।
देवानां ब्राह्मणानां च भक्तानां कन्यकासु च ।
पशूनां सर्वभूतानां शान्तिर्भवतु नित्यशः ।।

संसार-सागर से उद्धार करने वाले प्रभो ! हम आपकी शरण आये हैं (आप सर्वथा प्रसन्न हों)। आपकी दिव्य रक्षा-दृष्टि चतुर्दिक् बनी रहे, आधि-व्याधियों से हमारी सदैव रक्षा करते रहें। हमारे राष्ट्र, शासन और सब प्रकार के (त्रिविध) सैन्य-बलों पर आपकी विजयिनी वरद-दृष्टि सतत बनी रहे। गायों गर्भिणी स्त्रियों और वृद्धजनों (अशक्त-दीन-हीनजनों) तथा ब्राह्मणों (विद्वानों) पर आपकी शुभ, अनुग्रह-दृष्टि सदैव बनी रहे—आप इन सब पर प्रसन्न रहें। हमारे देश में धन-धान्य (सम्पदा) की श्रीवृद्धि करते रहें आप सर्वत्र सुवृष्टि (समयोपयोगी वर्षा) करें। पर्याप्त अन्न तथा और सुभिक्ष प्रदान करें। हमारे अन्न का भण्डार भरते रहें। सर्वतः अभय-दान दें। हे विभो ! आप हमारे राष्ट्र का संवर्द्धन करें एवं सर्वत्र ही (विश्व भर में) शुभ-शान्ति व्याप्त रहे, पुन,—देव, ब्राह्मण, भक्त, संत-महात्मा, कन्याओं, पशु-पक्षियों, अर्थात् समस्त जीव-जगत् पर सदैव शान्ति बरसती रहे। (सभी सर्वत्र सुख-चैन से रहें !)।

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां
CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

मनश्च भद्रं भजतादधोक्षजे
आवेश्यतां नो मतिरप्यहैतुकी ।।

विश्व ब्रह्माण्ड का कल्याण हो, दुष्ट लोग शान्त हो जायें, सभी प्राणी अपनी बुद्धि के द्वारा एक दूसरे का भला सोचें, मन सर्वदा भलाई और मङ्गल का चिन्तन करे एवं हम सब की बुद्धि बिना किसी हेतु के भगवान् में आविष्ट हो जाय।

ॐ असतो मा सद्गमय । तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्माऽमृतंगमय ।। ॐ शान्तिः.....

असत् से मुझे सत् की ओर ले जाओ, अन्धकार से प्रकाश में लाओ, मृत्यु से बचाकर मुझे अमर कर दो !

क्षमेऽहं सर्वान् वै जीवान् ते च क्षाम्यन्तु मां सदा ।
मैत्री स्यात्सर्वभूतेषु न मे द्वेषोऽस्ति केनचित् ।।
ॐ शान्तिः .....

मैं सब जीवों को क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझे क्षमा करें, सब भूतों से मेरी मित्रता हो, किसी से द्वेष न हो।

न त्वहं कामये राज्यं च स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानां प्राणनामार्तिनाशनम् ।।
ॐ शान्तिः .....

मैं राज्य की, स्वर्ग की, मोक्ष की भी कामना नहीं करता हूँ, मैं कामना करता हूँ कि दुःख से पीड़ित प्राणियों का दुःख दूर हो।

ॐ सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै ।।
ॐ शान्तिः .....

हम सब परस्पर एक दूसरे की रक्षा करें, विरोध को छोड़कर सुखों का भोग करें, हमारी विद्या तेजस्वी हो, हम आपस में द्वेष न करें।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।
ॐ शान्तिः .....

ॐ वह (पूर्णब्रह्म) पूर्ण है और यह (कार्यब्रह्म) भी पूर्ण हैं, क्योंकि पूर्ण से पूर्ण की ही उत्पत्ति होती है तथा (प्रलय काल में) पूर्ण (कार्यब्रह्म) का पूर्णत्व लेकर (अपने में लीन करके) पूर्ण (परब्रह्म) ही बच रहता है। त्रिविध ताप की शान्ति हो।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ।।

हे सविता देव ! हमारे सब दुःखों को दूर करो । जिससे हमारा कल्याण (भला) हो, वही प्राप्त कराओ । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

सर्वरूप भगवान् की आरती

जय जगदीश हरे, प्रभु ! जय जगदीश हरे ।
मायातीत, महेश्वर, मन-वच-बुद्धि परे ।टेक।
आदि, अनादि, अगोचर, अविचल, अविनाशी ।
अतुल, अनन्त, अनामय, अमित शक्ति-राशी ।१। जय०
अमल, अकल, अज, अक्षय, अव्यय, अविकारी ।
सत-चित - सुखमय, सुन्दर शिव सत्ताधारी ।२। जय०
विधि - हरि-शंकर - गणपति - सूर्य-शक्तिरूपा ।
विश्व चराचर तुम ही, तुम्हीं विश्वभूपा ।३। जय०
माता - पिता - पितामह - स्वामी-सुहृद-भर्ता ।
विश्वोत्पादक पालक, रक्षक - संहर्ता ।४। जय०
साक्षी, शरण, सखा, प्रिय, प्रियतम, पूर्ण प्रभो ।
केवल-काल कलानिधि, कालातीत विभो ।५ जय०
राम - कृष्ण, करुणामय, प्रेमामृत - सागर ।
मन - मोहन मुरलीधर, नित-नव-नटनागर ।६। जय०
सब विधि हीन, मलिन-मति, हम अति पातकि-जन ।
प्रभु पद-विमुख अभागी, कलि-कलुषित तन-मन ।७। जय०
आश्रय-दान दयार्णव ! हम सब को दीजै ।
पाप-ताप हर हरि ! सब, निज-जन कर लीजै ।८। जय०

नमस्ते देवतानाथ नमस्ते गरुडध्वज ।
शङ्खचक्रगदापाणे वासुदेव नमोऽस्तुते ।।

'देवताओं के अधीश्वर ! आपको नमस्कार है । अपनी ध्वजा में गरुड़-चिह्न धारण करने वाले भगवान् आपको प्रणाम है । हाथों में शङ्ख-चक्र-गदा धारण करने वाले वासुदेव ! आपको अभिवादन है ।'

ग्रन्थ लेखक परिचय एवं ग्रन्थ समाप्ति

इति श्री भारतवर्षे राजस्थान प्रान्तीय झुंझुनू मण्डलान्तर्गत खेतड़ी नगर निवासिना भूतपूर्व खेतड़ी राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद श्रीरूड़मल्ल श्रीबल्देव शर्माणां प्रपौत्रेण राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् धर्माध्यक्ष श्रीमहासुख शर्माणां पौत्रेण राजकीय संस्कृत विद्यालय

CC-0, Kanchi Kamya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

प्रधानाचार्य राजकीय प्रधान पण्डित ज्योतिर्विद् श्रीरघुनाथ शर्मा शास्त्रीणा आत्मजः सीकर मण्डलान्तर्गत भूतपूर्व खण्डेला राज्यपण्डित श्रीनन्दकुमार शर्माणामात्मजा श्रीभगवती देव्यास्तु गर्भजः श्रीभगवान् सीता-राम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण शरणानुरागी गौड़ वंशावतंस त्रिप्रवरस्य माध्यन्दिनी शाखा, शुक्ल यजुर्वेदीय कात्यायनी सूत्र, गोतम गोत्रोद्भवेन वैद्यपण्डित रामप्रसाद शर्मणा शास्त्रिणा विरचितं 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' इत्याख्यस्य ग्रन्थस्य स्कन्ध चतुर्थयोऽध्यायाश्च द्विसप्ततितमो समाप्ता ।। शुभमस्तु ।।

विष्णु-तत्त्व-दर्शन माहात्म्य

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का वाचन - श्रवण, सर्व सुखकर है,
पूर्णकाम होकर अकाम - होने का पावन वर है,
श्रद्धा के अवगाहन का यह मञ्जुल रत्नाकर है,
'परमानन्द प्रपूर्ण तत्त्व,' यह श्रुति-सम्मत सत्स्वर है।
सब पर्वत स्याही करूँ, घोलूँ सागर माहिं।
पृथ्वी का कागज करूँ, महिमा लिखी न जाहिं।।

भविष्य-कामना

दिवि वा भुवि वा ममास्तु वासो
नरके वा नरकान्तक प्रकामम्।
अवधीरितशारदारविन्दौ
चरणौ ते मरणेऽपि चिन्तयामि।।

'हे नरकनाशक! मैं चाहे स्वर्ग में, पृथ्वी पर या नरक में रहूँ, किन्तु शरत्कालीन कमल को तिरस्कृत करने वाले आपके चरण-युगल को मरते समय भी याद करता रहूँ।'

स्वकर्मफलनिर्दिष्टां यां यां योनिं व्रजाम्यहम्।
तस्यां तस्यां हृषीकेश त्वयि भक्तिदृढास्तु मे।।

'हे इन्द्रियों के सूत्रधार! मैं अपने कर्मों के अनुसार जिस-किसी भी योनि में जाऊँ, वहां आपसे मेरा अटूट प्रेम बना रहे।'

न धर्मनिष्ठोऽस्मि न चात्मवेदी
न भक्तिमांस्त्वच्चरणारविन्दे।
अकिंचनोऽनन्यगतिः शरण्यं
त्वत्पादमूलं शरणं प्रपद्ये।।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'मैं न धर्मनिष्ठ हूँ, न आत्मज्ञानी है, और न आपके चरणों में भक्तिमान हूँ, मैं तो अकिंचन हूँ, अनन्यगति और शरणागत रक्षक ! आपके चरण कमलों की शरण में आया हूँ।'

परब्रह्म ! मिल सके सुखद तल श्रद्धा-सिंधु अगाध का,
रमे सदा पद-अरविन्दों में उर-अलि रामप्रसाद का।

परमानन्द कृपायतन मन परि पूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्रीराम ॥

ॐ लक्ष्मीनारायण प्रीयतां न मम। ॐ वासुदेवार्पणमस्तु। श्रीशुभमस्तु ॥
ॐ शान्तिः ! ॐ शान्तिः !! ॐ शान्तिः !!!

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिशिष्ट

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

आशीर्वाद, मङ्गल कामना तथा सम्मतियाँ

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य महासंस्थानम् शारदापीठम्, शृङ्गेरी (कर्नाटक) का आशीर्वाद

श्रीपण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्रीजी सादर नमस्कार।

आपकी लेखनी द्वारा लिखे हुए 'शिव-तत्त्व-दर्शन' तथा 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' दोनों ग्रन्थों को पढ़कर श्री गुरु महाराज को अत्यन्त सन्तोष एवं प्रसन्नता हुई थी। यह दोनों ही ग्रन्थ बड़े ही अन्वीक्षण के पश्चात् लिखे गये हैं। उनमें तत्तद्भक्तों के जानने योग्य अनेक विषय मन्त्र, तन्त्रों के आधार पर सप्रमाण प्रतिपादित किये गये हैं। अब इस तृतीय ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' में भी उसी प्रकार से विष्णु भक्तों के ज्ञात करने योग्य नाना विषयों को शास्त्राधार पर प्रतिपादित करके विष्णु भक्तों का बड़ा उपकार किया है। अब श्री जगद्गुरु महाराज आशीश प्रदान करते हैं कि यह 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' विष्णु भक्तों के हाथों को शीघ्र अलंकृत करे।

दिनांक १९-१२-७८

गिरिधर शास्त्री
निजी सचिव
हिज होलीनेस श्री जगद्गुरु शंकराचार्य,
श्री शारदापीठम् शृङ्गेरी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य श्री स्वामी शान्तानन्द सरस्वतीजी महाराज, ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम (हिमालय) का आशीर्वाद

श्रीपण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री (खेतड़ी वाला) अनन्य साधक एवं परम एकान्तनिष्ठ हैं। उन्होंने अपनी सशक्त लेखनी द्वारा 'शिव-तत्त्व-दर्शन' एवं 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थों की रचना की है। अध्यात्म जगत् में दोनों ही ग्रन्थों का उत्तम समादर हुआ है।

प्रस्तुत ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' श्री शास्त्री जी की अप्रतिम कृति है। इस महान् ग्रन्थ में विष्णु सम्बन्धी सभी तत्त्वों की अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण विवेचना की गई है। इस ग्रन्थ को विष्णु तत्त्व का महान् कोश कहना समीचीन होगा। मेरा पूर्ण विश्वास है कि इसके अध्ययन के अनन्तर साधक पूर्ण तृप्ति और शान्ति की अनुभूति करेगा। अन्त में मेरी मङ्गल कामना है कि शास्त्रीजी की इस अनुपम कृति का अत्यधिक प्रचार-प्रसार हो। ऐसी उत्तम एवं सुन्दर रचना के लिए शास्त्री जी हमारे अत्यन्त स्नेह एवं बधाई के पात्र हैं।

दिनांक १७-११-१९७८

परम शुभैषी
शान्तानन्द सरस्वती

अनन्त श्री विभूषित श्रीमज्जगद्गुरु शङ्कराचार्य श्रीपुरीक्षेत्रस्थ गोवर्धनपीठाधीश्वर स्वामी श्रीनिरञ्जनदेवतीर्थजी महाराज का आशीर्वाद

श्री पण्डितजी,

मेरा आपको सदा ही शुभाशी है।

श्री निरञ्जनदेवतीर्थ

॥ श्री ॥

अनन्त श्री विभूषित श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्यवर्य श्रीकाञ्ची कोटिपीठाधिप जगद्गुरु श्रीशंकराचार्य श्रीमठसंस्थानम् काञ्चीपुरम् (तामिलनाडु) का आशीर्वाद

श्रीपण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्रिभ्यो नमांसि भूयांसि। भवल्लिखितस्य श्री विष्णु-तत्त्व-दर्शनग्रन्थस्य संक्षिप्त परिचयः अत्र प्रेषित प्रायः श्री चरण सन्निधौ समर्पितश्च। अत्र श्री विष्णु विषयकाः अनेके विशेषा प्रतिपादिताः श्री चरणैः सन्तुष्टैः अनुगृहितः प्रसादः अनेन लेखेन साकं प्रेषितो विद्यते इति निवेद्यते।

तिथि २७-१२-७८
काञ्चीपुरम्।

आज्ञानुसारम्
सुब्रह्मण्यन्
श्रीमठीयनिर्वाहक

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्री ॥

अनन्त श्री आनन्द गिरि (त्रोटकाचार्य) परम्परा प्राप्त ज्योतिर्मठाधिपत्योत्तराम्नाय ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी रामाश्रमजी महाराज मूलस्थान-ज्योतिर्मठ बद्रिकाश्रम अवान्तर स्थान—भानपुरा (म. प्र.) का आशीर्वाद

श्रीमद्विद्वद्धौरेया: शैशवेऽभ्यस्ताखिलविद्या. परावरविद्याविद्योतितान्त:करणा: इदानीं वानप्रस्थाचारा: शास्त्रिण: श्रीरामप्रसादा: विरलाग्राम नागदायां कृत वसतय: सप्रेम शुभाशीराशिभिर्युज्यन्तुन्तांतराम् ।

स्वस्तिमद्भिश्चिरायुर्भिलिखितं शिवतत्त्वदर्शन, शक्तितत्त्वदर्शनेतिद्वय क्वचित्क्वचित्. स्थालीपुलाकन्यायेन व्यलोकि । तत्रानाद्यनवच्छिन्न वैदिक गुरुपरम्पराऽविरुद्ध सिद्धान्ताचयन विज्ञाय मोमुद्यते मदीयं मन:। तादृशं विष्णुतत्त्वदर्शनमपि। एतत्कृतित्रयं भाषाविदां भूयसे श्रेयसे भूयात् भावत्कम् ।

दिनांक २२-१२-७८ भ शु. का.
गौघाट लुधियाना रामाश्रम

श्री हरि:

अनन्त श्री विभूषित धर्मसम्राट् स्वामी करपात्रीजी महाराज अखिल भारतीय धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड वाराणसी का आशीर्वाद

श्रीमता पण्डितप्रवरेण रामप्रसादशास्त्रिणा विष्णु तत्त्व निबन्ध: भगवतो महाविष्णोश्चतुर्विंशत्यवताराणां परिचय मुपस्थापयतीति । एतादृशेन निबन्धेन नास्तिकार्धनानास्तिकविकृतमस्तिष्कादीनां शङ्काकलङ्कपङ्कान् साधू निरस्य आस्तिक जनता स्वीयेषु स्वान्तेषु भगवतो महाविष्णो परम कल्याण कारिणीं भक्तिमाधास्यतीति । मार्कण्डेय: ।

श्रीमतां श्रीस्वामि करपात्रि चरणान्तं शिष्यगणोक्तय:, श्री १००८ मतां श्रीगुरुचरणानामाज्ञया अभिप्राय वेदय:-शमिति-मार्गशीर्ष कृष्णा द्वादश्यां सं. २०३५ दिनांक २७-११-७८ ।

श्रीयै नम:

जगदाचार्य श्री१००८ श्रीमद्विष्वक्सेनाचार्य त्रि-दण्डिस्वामिपादीय अयोध्या कोसलेशसदनपीठाधीश्वर जगद्गुरुरामानुजाचार्य वेदान्तमार्तण्ड यतीन्द्र स्वामी रामनारायणाचार्य जी महाराज की शुभाशंसा

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अध्यात्म प्रधान भारत का विशाल वाङ्मय भगवान् विष्णु के रूप वैविध्य के चित्रों से परिपूर्ण है। वेद उसी व्यापक तत्त्व की अभिन्न निमित्तोपादान कारणता का प्रतिपादन करते हुए सम्पूर्ण जड़ चेतनात्मक जगत् को उनका शरीर बतलाते हैं। वेदापरावतार श्रीरामायण "जगत् सर्वं शरीरं ते" की सूक्ति के माध्यम से भगवान् विष्णु की महिमा का वर्णन करते हुए नहीं अघाता। पृथक्-पृथक् पुराण भगवान् विष्णु के पृथक्-पृथक् अवतारों के वर्णन में पर्यवसित होते हैं। भारतीय वसुन्धरा भगवान् विष्णु के अवतारों की पावनता से अपने पूर्णपावितत्त्व की गौरवानुभूति का गुणगान करती है।

अत एव अपेक्षित था कि इन भगवान् विष्णु के भारतीय वाङ्मय मे क्रान्त-दर्शी महर्षियों द्वारा चिन्तित समग्र रूपों के तत्त्वयाथात्म्य का समुदित साक्षात्कार किया जाय, प्रस्तुत "विष्णु तत्त्व दर्शन" ग्रन्थ के प्रणेता का इस दिशा में प्रयास संस्तुत्य है। मैं इस ग्रन्थ के विपुल प्रचार-प्रसार की कामना करता हूँ।

शुभाकांक्षी:—
जगद्गुरु रामानुजाचार्य यतीन्द्र
स्वामी रामनारायणाचार्य

॥ श्री सर्वेश्वरो जयति ॥
॥ श्रीनिम्बार्क महामुनीन्द्राय नमः ॥

जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीजी श्रीराधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य जी महाराज सलेमाबाद, अजमेर (राजस्थान) का आशीर्वाद

श्रीयुत् विद्वद्वरेण्य पण्डित श्री रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री द्वारा विनिर्मित 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का सुन्दर दर्शन कर हर्षातिरेक से स्वकीय मानस अतिशय उल्लसित हो उठा। वस्तुतः यह अनुपम ग्रन्थ न केवल वैष्णव भावुक रसिक जन के लिये ही अपितु समस्त धार्मिक जगत् के लिये परमोपादेय होगा।

आपके द्वारा लिखित 'शिव-तत्त्व-दर्शन' तथा 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' की भाँति ही यह ग्रन्थ भी अमूल्य निधि है। शास्त्रीजी द्वारा यह अक्षुण्ण सेवा परमहित-कारिणी एवं भक्त जन मन तोषिणी है। भगवान् श्रीराधा-सर्वेश्वर प्रभु से श्री शास्त्रीजी के सर्वविध अभ्युदय के लिये मङ्गलमयी अभिकामना करते हैं।
मिति पौष कृष्ण ९ शनिवासरे दिनांक २३-१२-७८

श्रीआचार्य चरणों के आज्ञानुसार
पं. गोविन्ददास 'सन्त' मन्त्री

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

श्रीनाथजी

वल्लभ-सम्प्रदायाचार्य जगद्गुरु गोस्वामी तिलकायत श्री गोविन्दलाल जी महाराज नाथद्वारा का आशीर्वाद

श्री पंडित रामप्रसादजी शर्मा,

श्रीमानों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि शिव-तत्त्व-दर्शन और शक्ति-तत्त्व-दर्शन के पश्चात् एक और परमोपयोगी शोध ग्रन्थ विष्णु-तत्त्व-दर्शन का आपकी लेखनी द्वारा प्रणयन हुआ है। दर्शन और धर्मशास्त्र के विद्वान् भलीभाँति से जानते हैं कि विष्णु का तत्त्व महान् तथा अत्यन्त गम्भीर विषय है। अतएव जनसाधारण के लिये प्राचीन धर्मग्रन्थों के प्रमाणों के आधार पर भगवान् विष्णु एवं उनके अवतारों के सम्बन्ध में जो परमोपयोगी सामग्री आपने इस ग्रन्थ में प्रस्तुत की है। वह कार्य निःसन्देह अनुकरणीय एवं सराहनीय है। इसके लिए श्रीमानों ने अपनी शुभ-कामनाएँ तथा शुभाशीर्वाद प्रदान कराया है। दिनांक २-१-७९

पोद्दार हाउस, पोद्दार स्ट्रीट,
बम्बई

भवदीय
डॉ. वल्लभदास तिवारी
सचिव

श्री गोपालो जयति

जगद्‌आचार्य वैष्णवपीठाधीश्वर श्री १०८ विट्ठलेशजी महाराज, मथुरा का आशीर्वाद

स्वस्ति श्रीमते रामप्रसाद शर्मणे।

शिव-शक्ति-तत्त्व-दर्शनाभिधे द्वे पुस्तके समुपलब्धे दृष्टे च। इदानीं विष्णु-तत्त्व-दर्शनाख्यो ग्रन्थः प्रकाशनीयः। तथा चास्माकं मते श्रीकृष्ण एव पर शब्दाभिधेयः। अन्ये तस्यै वां शकलावेशावताराः। अंशी तु कृष्ण एव। 'एते चांशकलाः पुंसः कृष्णास्तु भगवान् स्वयम्' इति समाधिभाषा वचनादव गम्यते। षोडश कलत्वं तस्यैवातः पूर्णं पुरुषोत्तमत्वं ध्वन्यते। इतरेतु न्यूनांशत्वान्न पूर्णांशाः। 'गोपालोह वै परमं दैवतं इति तापिन्युपनिषद् वचना परमदैव तत्त्वं तस्यैवास्ति। कृष्णामेन मवेहित्वं आत्मानं सर्व देहिनाम्। इति दशमे शुकोक्तेः सर्वान्तर्यामित्वं सर्वप्रकाशकत्वं सर्व नियंतृत्वं सर्वप्रेरकत्वञ्च तस्यैव सिद्धम्। गुणावतारः कलावतारः अंशावतारः आवेशावतारश्च तस्यैव समये समये भवन्ति। नायं कृष्णा कस्याप्यं शकलाद्यवतारः इति ज्ञात्वा विविध प्रकाश्यताम्। भगवन्तं श्री कृष्णचन्द्रं प्रार्थये यद् भवतां परिश्रुभं सफलं करोत्वितिशम्। दिनांक २५-११-७८

भवदीयो
विट्ठलेश

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्री ॥

अनन्त श्री विभूषित महामण्डलेश्वर स्वामी भजनानन्दजी सरस्वती महाराज, स्वर्गाश्रम–ऋषिकेश का आशीर्वाद

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का परिचय पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। यह ग्रन्थ साम्प्रदायिक संकीर्णता से मुक्त विष्णु-तत्त्व की शास्त्रीय व्यापकता को प्रतिपादित करने वाली अनूठी कृति है। विद्वानों और साधकों की दृष्टि में रखकर लिखा गया यह ग्रन्थ सर्व साधारण के लिये लाभकारी होगा ऐसा मेरा विश्वास है।

दिनांक २०-१२-७८

भजनानन्द

ॐ

स्वामी रामचन्द्र गिरिजी महाराज महामण्डलेश्वर अध्यक्ष श्री वराह मन्दिर (सूकर क्षेत्र) सोरों का आशीर्वाद

पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री सादर सप्रेम जयनारायण,

आपने विष्णु तत्त्व दर्शन की रचना करके विष्णु भक्तों की ही नहीं अपितु समस्त सनातन धर्म एवं मानव मात्र के लिये अमूल्य ज्ञान भण्डार ही खोल दिया है। एक ही ग्रन्थ में अनेक वेद-वेदाङ्ग के सैंकड़ों महाग्रन्थों से भगवान् विष्णु विषयक समस्त सामग्रियाँ सविस्तार चयन कर विद्वतापूर्ण हिन्दी अनुवाद सहित प्रस्तुत करने का प्रशंसनीय कार्य किया हैं। वर्तमान युग में संस्कृत विद्वानों की संख्या कम होती जा रही है, इसलिये हिन्दी भाषा के माध्यम द्वारा इस ज्ञान निधि का लेखन अधिक लाभकारी होगा। यह राष्ट्र तथा जनता की महान् सेवा है। इसमें लेखक की विद्वत्ता-बहुमुखी प्रतिभा एव अथक परिश्रम की झाँकी दिखाई देती है। हम भूत भावन् भगवान् विश्वनाथ से प्रार्थना करते हैं कि लेखक को स्वस्थता पूर्वक दीर्घायु प्रदान करें। जिससे धार्मिक जगत् की और भी सेवा हो सके।

दिनांक १४-१२-७८

स्वामी रामचन्द्र गिरि

श्री:

अनन्त श्री स्वामी रामदासजी शास्त्री महामण्डलेश्वर चार सम्प्रदाय आश्रम वृन्दावन का आशीर्वाद

विष्णु-तत्त्व-दर्शन अपने ढंग का निराला तथा अद्वितीय ग्रन्थ रत्न है। वेद, उपनिषद् पुराण, इतिहास, धर्म ग्रन्थों में भगवान् विष्णु विषयक महिमा के भण्डार भरे हैं। किन्तु उनका मन्थन कर जन साधारण की भाषा में सम्पूर्ण रहस्यों के उद्घाटन सहित अब तक किसी ने ग्रन्थ निर्माण नहीं किया। ग्रन्थ प्रणेता पंडित

CC-0. Prabhu Kunja Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रामप्रसाद शास्त्री एक असाधारण प्रतिभा के धनी हैं, वे वेद, पुराण इतिहास, धर्मशास्त्र के मूर्धन्य विद्वान् हैं। आपने इस ग्रन्थ की रचना कर सनातन धर्म की अपूर्व महान् सेवा की है। विष्णु-तत्त्व दर्शन में समस्त वेदवाणी, संस्कृत वाङ्मय का निचोड़ भरा हुआ है। ग्रन्थ का मूलाधार भागवत है। अधिक विशेषता यह कि उनकी भक्ति लाभ प्राप्त करने के समग्र किया योग पूजा विधियाँ भी लिखी गयी हैं। यह महान् ग्रन्थ अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगा।

रामदास शास्त्री

श्रीमते रामानुजाय नमः

महन्त सीतारामाचार्यजी महाराज व्याकरण वेदान्ताचार्य अध्यक्ष श्री वेङ्कटेश मन्दिर, दारागंज प्रयाग का शुभाशीर्वाद

श्री विष्णु-तत्त्व-दर्शन के परिचय मात्र से विष्णु-तत्त्व का दर्शन हो रहा है, फिर सम्यग विष्णु-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ से तो विष्णु-तत्त्व-दर्शन का साक्षात्कार हो जाना स्वाभाविक ही है।

विष्णु-तत्त्व का जानना परमावश्यक है। वेदान्त दर्शन की प्रतिज्ञा है—'एकेन विज्ञातेत् सर्वं मविज्ञातं ज्ञातं भवति' अर्थात् एक ही विष्णु तत्त्व को जान लेने पर सब अविज्ञात विषय भी स्वतः समझ में आ जाते हैं। प्रस्तुत परिचय में इस प्रकार की उपयोगिता के अनेक प्रमाणित संकेत हैं।

ग्रन्थ के प्रणेता स्वनामधन्य वैद्य पण्डित श्रीरामप्रसाद शर्मा शास्त्री आयुर्वेद, धार्मिक आध्यात्मिक विषयों के निष्णात विद्वान् हैं। उनके इस विष्णु-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ के द्वारा जन साधारण हिन्दी भाषी भी विष्णु-तत्त्व का दर्शन लाभ प्राप्त कर सकेगा।

भगवान् वेङ्कटेश का स्मरण करते हुए हम शास्त्रीजी के इस स्तुत्य प्रयास की सफलता की कामना प्रकट करते हैं।

महन्त सीतारामाचार्य

दिनांक १५-११-७८

श्री गुरुवशिष्ठाय नमः

महान्त ब्रह्मचारी युगलशरणजी महाराज अध्यक्ष श्री गोमुख वशिष्ठाश्रम, आबू पर्वत (राजस्थान) का आशीर्वाद

पंडित रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री सादर सप्रेम जय श्रीराधे।

आज जबकि आध्यात्म गुरु भारत का अधिकांश जनमानस अपनी मातृमयी आध्यात्मिक निधि से विलग होकर पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण कर अपने को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

धन्य मान रहा है। इस प्रकार के विषम समय में जनमाधारण एवं राष्ट्र मान्य हिन्दी भाषा के माध्यम से प्राचीन वेद, वेदाङ्ग धर्म ग्रन्थों के प्रमाणों द्वारा महान् अध्यात्म का 'पाञ्चजन्य' 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' के रूप में फूँक कर समस्त जनमानस को जागृत करने का आपका सुप्रयास अत्यन्त उपयोगी एव सराहनीय है।

परमपिता परमेश्वर से आपके प्रति अनेक माङ्गलिक एवं शुभकामनाएँ प्रदान करने हेतु प्रार्थना करते हैं।

दिनांक ७ नवम्बर ७८

भवदीय
युगलशरण

॥ ॐ ॥

अनन्त श्री अखण्डानन्दजी सरस्वती महाराज श्रीकृष्णाआश्रम, श्री उड़िया बाबा आश्रम, वृन्दावन (मथुरा) का आशीर्वाद

शास्त्रीजी के शिव-तत्त्व-दर्शन और शक्ति-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थों का अवलोकन करके प्रसन्नता हुई। शीघ्र विष्णु तत्त्व दर्शन का प्रकाशन होना चाहिये। उसकी योजना संग्रह वस्तु विन्यास एव विचार शैली सभी उत्तम है। शास्त्रीजी इसी प्रकार वैदिक सनातन धर्म की सेवा करते रहें—यह अभिलाषा है।

दिनांक ७-१-७९

अखण्डानन्द सरस्वती

॥ श्रीः ॥

अन्नपूर्णा माँ के परमभक्त सिद्ध महापुरुष बाबा रामेश्वरदासजी ब्रह्मचारी रामेश्वरानन्द आश्रम ग्राम टोवा-बसई तहसील खेतड़ी (राजस्थान) का आशीर्वाद

परम पूज्य के चरणों में लेखक स्वयं उपस्थित हुआ और विष्णु-तत्त्व-दर्शन का परिचय सुनाया। परम पूज्य श्री ने ग्रन्थ की सफलता के लिये अपने हस्त कमलों द्वारा प्रसाद प्रदान करते हुए आशीर्वाद प्रदान किया। दिनाङ्क चैत्र कृष्णा १ सम्वत् १९३४ विक्रम।

॥ श्रीः ॥

श्री गणेशजी महाराज के परमभक्त सिद्ध महापुरुष गुरुवर्य्य श्रीहर्षजी महाराज बीकानेर (राजस्थान) का आशीर्वाद

इस विश्व निर्माण के आदि कारण भगवान् विष्णु उनकी महिमा तथा उनके रहस्यमय तात्त्विक विषयों का शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा सरल भाषा में विवेचन, वस्तुतः एक महान् विद्वत्वा पूर्ण अनुष्ठान है। जिसका प्रणयन कर शास्त्रीजी ने सनातन धर्म की उत्तम सेवा की है। मैं भगवान् गणेशजी के चरणों में श्रीशास्त्रीजी

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

के उत्तम भविष्य की कामना निवेदन करता हूँ। दिनांक १५ सितम्बर १९७८

श्री गोपालहर्ष, हर्षों का चौक,
बीकानेर (राजस्थान)

॥ श्रीः ॥

डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन' पूर्व कुलपति विक्रम विश्व महाविद्यालय

आदरणीय शास्त्रीजी,

आपने शिव तत्त्व-दर्शन, शक्ति-तत्त्व-दर्शन एवं विष्णु-तत्त्व-दर्शन में प्रत्येक तत्त्व की मीमांसा में दर्शन पथ के साथ-साथ कर्मकाण्ड को भी समन्वित कर तत्त्व-दर्शी जिज्ञासुओं के साथ ही भक्तों के लिये भी पञ्चोपचार से वृहत्पूजोपचार तक सब विधियाँ भी सुलभ कर दी हैं। गहन शास्त्र प्रतिपादित विषयों का सरल हिन्दी में स्वरूप उपलब्ध करके तो आपने कोटि-कोटि धर्मप्राण जनता का महोपकार किया है, जिसके लिये आप बधाई के पात्र हैं। इन विराट् दुर्ज्ञेय परिवेशों का सम्यक् स्वरूप प्रस्तुत करने की साधना के प्रति मेरा हार्दिक साधुवाद स्वीकार कीजिये। दिनांक १४।११।७८

३१, आजाद नगर, देवासमार्ग उज्जैन

डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन'

॥ श्रीः ॥

डॉ. शुकदेव पांडेय, पूर्वकुलपति विद्याविहार, पिलानी

देवी-देवताओं के तात्त्विक विवेचनाओं की परम आवश्यकता प्रतीत हो रही थी 'शिव-तत्त्व-दर्शन', 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन', तथा 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थों के माध्यम से आपने अनेक देवी-देवताओं की आगम-निगम शास्त्र प्रमाणों द्वारा पुष्टित भारत की बहुमुखी भाषा में सुन्दर तात्त्विक व्याख्या प्रस्तुत कर एक बड़े अभाव की पूर्ति की है और कर रहे हैं। इसके लिये अनेक धन्यवाद।

दिनांक ५-१२-७८

ॐ तत्सत्

महामहोपाध्याय, वयोवृद्ध आचार्य हरिशंकर वेणीराम शास्त्री, यज्ञकर्मकाण्डज्योतिषाचार्य, विद्याभूषण, संस्कृतरत्न, विद्यालंकार हलवद, (सौराष्ट्र) का आशीर्वाद

स्वस्ति श्रीः। श्रीमतां विविध पदमालालंकृतानाम् विद्यावारिधीनां तत्र भवतां भवता मन्वर्थ नामधेयानां पंडित रामप्रसाद शास्त्रि महोदयानां पुरतो मे श्रद्धा प्रसूनाञ्जलिर्नमता शिरसोपतिष्टताम्। 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' पुस्तक दर्शने नैव परमानन्दानुभवो जातः महती प्रसन्नता जाता।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी में वेद, उपनिषद्, संहिता, पुराण, इतिहास, स्मृति-धर्म शास्त्रादि आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण-उदाहरणों से पुष्ट कर राष्ट्र एवं सनातन धर्म की महान् सेवा की है। यह अपूर्व ग्रन्थ विद्वानों के लिये ही नहीं जन साधारण के लिये भी अत्यन्त उपादेय होगा। सब ही देवता भगवान् विष्णुमय हैं। वे तो "पुरुरूपईयते" इस वेदोक्ति को चरितार्थ करते हैं। वे "ॐ विश्वं विष्णुः" हैं। इस ग्रन्थ में भगवान् विष्णु तथा उनके अवतार, विविध नाम, स्वरूप, वैकुण्ठ-धाम, उनके वाहन-पार्षद एवं उनकी उपासना प्रक्रिया योगों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन किया गया है। विष्णु तत्त्व से सम्बद्ध: ऐसा कोई विषय अछूता नहीं जिसका इसमें निरूपण न हुआ हो।

विष्णु-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ के लेखन में आपका परिश्रम अत्यन्त ही श्लाघ्य है। हमको पूर्ण विश्वास है कि श्रद्धालु जनता इस अनुपम ग्रन्थ का पूर्ण समादर करते हुए लाभ प्राप्त करेगी। इस ग्रन्थ रचना द्वारा एक बड़े अभाव की पूर्ति हुई है। इस कृति के लिये आपको मैं हार्दिक वेदोक्त आशीर्वाद प्रदान करता हूँ। दिनांक ७-११-१९७८

आचार्यस्य प्रणामान्ये हरिशङ्कर शर्मणः।
स्वी कुर्वन्तु महाभागाः प्रेषयन्तूत्तरं शुभम्॥

महामहोपध्याय
आचार्य हरिशंकर वेणीराम शास्त्री

॥ श्रीः ॥

डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली ज्योतिषाचार्य एम.ए., पी-एच.डी, जोधपुर (राजस्थान) की सम्मति

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ रत्न आपके यश को वर्षों तक दीपित रखेगा। मेरी समस्त शुभकामनाएं आपके साथ हैं।

आपके पूर्व प्रणीत दो ग्रन्थ 'शिव-तत्त्व-दर्शन' एवं 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' हमारे पूजा कक्ष में रखे हुए हैं। उनका घर में नियमित पाठ होता है। विष्णु तत्त्व-दर्शन की मैं आतुरता से प्रतीक्षा करता हूँ। दिनांक ६-११-७८

सम्पूर्ण स्नेह के साथ
डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीः ॥

'महर्षि' डॉ. हरिकृष्ण छंगाणी ज्योतिषाचार्य-साहित्याचार्य एम. ए., पी-एच. डी. (ज्योतिष) फलोदी (राजस्थान) की सम्मति

विद्वान् अधिकारी लेखक ने विष्णु-तत्व सम्बन्धी बहुविध सामग्री को अनेक ग्रन्थों से चुनकर संकलित किया है। यह ग्रन्थ आपके प्रौढ पाण्डित्य और अथक परिश्रम का प्रतिफल है। मैं ऐसे सुन्दर शोधपूर्ण ग्रन्थ की रचना के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ। दिनांक १५-११-७८ ई.

'महर्षि' डॉ. हरिकृष्ण छंगाणी

ज्योतिषशास्त्रमार्तण्ड; खगोलशास्त्रदिवाकर, ज्योतिषभास्कर, सिद्धान्तज्योतिषरत्न, विद्यारत्न, सिद्धान्तज्योतिषाचार्य, व्याकरणशास्त्री, काव्यतीर्थ, ज्योतिषशास्त्रवाचस्पति, शास्त्री हिम्मतराम महाशंकर याज्ञिक (ज्ञानी) अध्यक्ष प्राच्यविद्याभवन वेधशाला, अहमदाबाद (गुजरात) की सम्मति

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' 'एक अनुपम ग्रन्थ'

माननीय पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री विविधोपाधिलंकृत ने सतत अध्ययन, मनन चिन्तनशील प्रवृत्ति के मधुर फल स्वरूप विष्णु-तत्त्व-दर्शन नामक महाग्रन्थ का प्रणयन किया है। इसके विषय विवरण को देखकर ही मन मुग्ध हो जाता है। ग्रन्थकार ने जिन-जिन महाग्रन्थों के संदर्भ प्रमाण निर्देश संकेत दिये हैं, उनके नाम सुनकर आश्चर्य सा प्रतीत होता है कि इतने बड़े-बड़े ग्रन्थों का अध्ययन कैसे और कितने वर्षों में किया होगा ? परन्तु लेखक के साथ गत फरवरी सन् १९७८ में कुछ दिनों तक रहने का अवसर प्राप्त हुआ था, उससे इस प्रश्न का समाधान उस समय ही हो गया था। वे विद्याव्यासंगी, महाविद्वान्, निःस्वार्थवृत्ति शुद्ध सच्चे ब्राह्मण हैं। अब आप भगवान् विष्णु के विषय को पूर्ण कर चुके हैं। हम भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि शास्त्रीजी स्वस्थ, प्रसन्न तथा दीर्घायु हों जिससे भगवान् गणेश एवं सूर्य के तत्त्वज्ञान का ग्रन्थ भी निर्माण कर सकें। दिनांक ३-१-७९

शास्त्री हिम्मतराम महाशंकर
याज्ञिक (ज्ञानी)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

'दूरस्थोऽपि न दूरस्थो यो यस्य हृदये स्थितः'

साहित्यमार्तण्ड, प्रोफेसर रंजन सूरिदेव एम. ए. त्रय (संस्कृत-हिन्दी एवं प्राकृत-जैन शास्त्र), साहित्य-आयुर्वेद-पुराण-जैनदर्शन-पाल्याचार्य, व्याकरणतीर्थ, साहित्यरत्न, साहित्यालंकार, सम्पादक-बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्-पत्रिका, पटना (बिहार)

पं. रामप्रसाद शर्मा शास्त्री भारतीय अध्यात्म विद्या के पारंगत विद्वान् हैं। हिन्दू देवी-देवताओं में शिव, शक्ति और विष्णु का पार्यन्तिक प्रभाव और महत्त्व स्वीकृत किया गया है। शास्त्र-दीक्षित लेखक महोदय ने शिव और शक्ति के तत्त्व का दर्शन पूर्व लिखित तन्नामक दो ग्रन्थों में, सुधी पाठकों के लिए सुलभ किया है। इसके बाद उन्होंने 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' लिखकर पूर्वस्वीकृत विषय के अध्ययन की परम्परा में एक और नई कड़ी जोड़ी है।

भारतीय शास्त्रकारों ने विष्णु-तत्त्व का चिन्तन बड़ी व्यापकता के साथ किया है। वेदों में तो विष्णु को निखिल चराचरात्मक जगत् की सृष्टि का आदि कारण ही माना गया है। इसके अतिरिक्त, वे अखिल जीवों के पिता तो हैं ही। विष्णु के अवतार की कल्पना और उनकी उपासना के सम्बन्ध में, लोक जीवन में विभिन्न दृष्टियाँ पाई जाती हैं। साथ ही, आधुनिक भौतिकवादी वैज्ञानिक युग में साम्प्रदायिक विचार धाराओं की अनेकता के कारण, विष्णु की सत्ता और महत्ता को नकारा भी जा रहा है।

इस प्रकार की देवमान्यता-विषयक द्वन्द्वात्मक युगीन स्थिति में युगचेता शास्त्रीजी ने प्राच्यशास्त्रों के अगाध समुद्र का मन्थन करके विष्णु की विराट् विभूति का जो अमृतकल्प सार हिन्दी जगत् को प्रदान किया है, वह उनकी अखण्ड सारस्वत साधना का ही एक मूल्यवान् पक्ष है। लेखक ने यह सिद्ध किया है कि विष्णु, भारतीय लोक जीवन से अनुस्यूत नित्य उपास्य देवता हैं। इस ग्रन्थ को यदि विष्णु की व्यापक महिमा का ज्ञान कराने वाला 'विश्वकोश' कहा जायगा, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

चार स्कन्धों और बहत्तर सोपानों में विभक्त प्रस्तुत कृतिरत्न विष्णुपुरुष की आकृति का ही मुद्रित प्रतिरूप है। हिन्दी के लिये दिव्य अवदान स्वरूप इस ज्ञानोन्मेषक ग्रन्थ का सम्पूर्ण हिन्दी प्रेमियों की ओर से हम हार्दिक स्वागत करते हैं। अथच, भारतीय संस्कृति के उन्नायक शास्त्रीजी की दीर्घायुष्कता की कामना

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

करते हुए, उनकी अविराम, अप्रतिहित एवं क्रोशशिला-संस्थापक सारस्वत यात्रा की अनन्तता के लिये अहर्निश प्रभु-प्रार्थी हैं।

'स श्रीहरिर्जनयतात्तव सुप्रभातम्।'

दिनांक १८-१२-७८

सद्भावना-सहित
श्री रंजन सूरिदेव

॥ श्रीः ॥

आयुर्वेदचक्रवर्ती वैद्यरत्न पण्डित शिव शर्मा, अध्यक्ष केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद्, अध्यक्ष, साइण्टिफिक एडवाइजरी बोर्ड (आयुर्वेद) नई दिल्ली की सम्मति

पं. रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा निर्मित तथा संकलित साहित्य के अध्ययन का सुअवसर मुझे पहले प्राप्त हो चुका है। उनके प्रकाण्ड पाण्डित्य और विशाल अध्ययन से मैं परिचित हूँ।

मैं समझता हूँ कि सनातनधर्म-संबंधी साहित्य के सृजन और संकलन के क्षेत्र में उनकी कृतियाँ अविस्मरणीय घटनाएँ होती हैं।

मुझे विश्वास है कि उनका नवीन ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' भी उनकी पूर्व रचनाओं के उच्च तथा उत्कृष्ट आदर्शों के अनुरूप ही होगा। अपने क्षेत्र में यह रचना बेजोड़ सिद्ध होगी। दिनाङ्क ८।११।७८

शिव शर्म्मा

बहारिस्तान, बोमनजी पेटिट रोड,
कवालाहिल बम्बई-३६

॥ श्रीः ॥

डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोतम जोशी एम. ए., पी-एच. डी, डाइरेक्टर राज्य संग्रहालय उत्तर प्रदेश, लखनऊ की सम्मति

शिव-तत्त्व-दर्शन, 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन के पश्चात् 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का प्राकट्य हम सब के लिये एक बड़े हर्ष का विषय है। 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ विष्णु एवं उनके चौबीस अवतारों तथा उन सबकी साधना पूजा क्रिया योग विषयक वर्णन में पारम्परिक दृष्टिकोण को पूर्ण सशक्त रूप से स्थापन करता है। विभिन्न महाग्रन्थों में छितराये हुए, विष्णु सम्बन्धित अनेक विषयों को चुन-चुन कर उपस्थापित करने का सफल प्रयास प्रशंसनीय है। यह समाज के लिये अवश्य वरदान सिद्ध होगा। अभिलाषा है कि आपकी सशक्त लेखनी द्वारा

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अचिरात् सूर्यतत्त्व-दर्शन और गणपति-तत्त्व-दर्शन भी प्रकट होंगे। दिनांक २३ दिसम्बर १९७८

भवदीय

नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी

॥ श्री ॥

डॉ. मोतीलाल गुप्त, एम. ए., बी. टी., पी-एच. डी., डी. लिट्., डी. पी-एच. (लंदन) यू. जी. सी शोध-प्राध्यापक, आगरा विश्वविद्यालयान्तर्गत मानद शोध-निदेशक श्री बृन्दावन शोध-संस्थान

इन कृतियों से आपने अपने वानप्रस्थ आश्रम का पूर्ण सदुपयोग किया है। भगवान् शिव, भगवती शक्ति एवं भगवान् विष्णु आपकी इस वाङ्मयी पूजा से प्रसन्न होंगे—ऐसी हम लोगों की आशा एवं विश्वास है।

विष्णु-तत्त्व-दर्शन के परिचय का अवलोकन करने से प्रतीत होता है कि इसमें सभी तत्त्वों का सम्यक् समावेश है। आपके इस सत्प्रयास की प्रशंसा करते हुए कामना करता हूँ कि आपके द्वारा इस जगत् में अनेक उपलब्धियाँ साहित्य एवं धार्मिक आस्था को महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान करेंगी। अभिवादन सहित। दिनांक २-१२-७८

—मोतीलाल गुप्त

॥ ॐ ॥

महता शिखरचन्द्र कोचर बी.ए., एल. एल. बी, एफ. एस. आर. आई., साहित्यशिरोमणि, साहित्याचार्य, अवकाश प्राप्त डिस्ट्रिक्ट एण्ड सेसन्स जज, बीकानेर

विद्वान् लेखक ने 'शिव-तत्त्व-दर्शन' तथा 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' नामक वृहत्काय ग्रन्थ-रत्नों का प्रणयन कर शिव एवं शक्ति-तत्त्व सम्बन्धी हिन्दी वाङ्मय के बड़े अभाव की पूर्ति करके पर्याप्त ख्याति अर्जित की है। यों तो भारतीय वाङ्मय में विष्णु-तत्त्व-सम्बन्धी सामग्री प्रचुर मात्रा में विद्यमान है, किन्तु उसके अधिकांशतः संस्कृत भाषा में होने तथा उसके अनेकानेक ग्रन्थों में विकीर्ण होने के कारण जन-साधारण उससे पूर्णरूपेण लाभान्वित होने में असमर्थ रहा। अत्यन्त हर्ष का विषय है कि इन विद्वान् लेखक का ध्यान इस अभाव की ओर भी आकृष्ट हुआ, और वे इसकी पूर्ति के लिए अहर्निश घोर परिश्रम कर रहे हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस महद् ग्रन्थ में वेद, पुराण, उपनिषद् धर्मशास्त्र आदि अनेकानेक सर्वमान्य ग्रन्थों के आधार पर विष्णु-तत्त्व के विभिन्न अङ्गों पर पूर्ण प्रकाश डाला गया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस ग्रन्थरत्न का भी जनता जनार्दन द्वारा समादर किया जायगा। किम्बहुना सुज्ञेषु। दिनांक १६।१२।७८

भवदीय

शिखर चन्द्र कोचर

॥ श्रीहरिः ॥

डॉ. डी. आर. सोनार, एफ. आर. सी. एस. (सर्जिकल), इंगलेंड, एम. बी. बी. एस. पूना, चीफ मेडिकल औफीसर, ग्रेसिम जनसेवा ट्रष्ट होस्पिटल, विरलाग्राम (नागदा) मध्यप्रदेश।

निगमागम के सिद्धान्त हों या समस्त दर्शनकारों का प्रकारान्त निर्णय हो, विश्वकल्याण के लिये वे एक ही विचार प्रस्तुत करते हैं—और वह है—श्री हरिः शरणं मम।

य शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो,
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसका,
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छित फलं त्रैलोक्यनाथो हरिः॥

समस्त विश्वसंसार का जगत्पालक अर्थात् रक्षणकर्ता यह गोरवान्वित पद श्री हरि विभूषित कर रहे हैं (Chief of Maintanance Dept.) इसलिये वे 'विश्वाधारं' भी कहलाते हैं।

हम भी हमारे छोटे से कुटुम्ब का पालन करके यशस्वी प्रयत्न में जुटे हुए हैं, किन्तु हम कितनी कठिनाइयों का अनुभव करते हैं—क्या हम कुटुम्बाधारं पद को भी यशस्विता से निभाने में समर्थ हैं? श्री हरि के और हमारे संसार में क्या अन्तर है? श्री हरि शान्ताकार हैं, हम चिन्ताकार हैं। हम भवसागर में डूब रहे हैं, वे क्षीरसागर में तैर रहे हैं। वे मायातीत हैं, हम मायाधीन हैं। लक्ष्मी उनके चरण दबाती हैं, और हम लक्ष्मी और लक्ष्मीपतियों के चरण दबाते रहते हैं। विश्वसंसार का बोझ होते हुए भी वे शान्तचित्त लेटे हुए हैं, हम छोटे से संसार चलाने के लिये भागदौड़ करने में व्यस्त, त्रस्त हैं। लक्ष्मी प्राप्त करके भोगनिद्रा में रहने की हमारी आदत है, लक्ष्मी के साथ होते हुए भी वे योगनिद्रा में रहना पसन्द करते हैं। और अंततोगत्वा हम दुःख भोगते हैं, और वे हमेशा प्रसन्नचित्त आनन्दी हैं।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भगवान् श्रीहरि का अनन्यभाव से चिन्तन करने से वे हमारा योगक्षेम वहन करने की प्रतिज्ञा करते हैं।

अनन्याश्चिन्तयन्तो माम् ये जना पर्युपासते।
तेषाम् नित्याभियुक्तानाम् योगक्षेमम् वहाम्यहम् ॥

यदि हमें यशस्वी कुटुम्बाधार बनना है तो, हमें विश्वाधार की शरण लेना आवश्यक है। कहते हैं—श्रीहरि योगिभिः ध्यानगम्य हैं, इसलिये संसार में रहते हुए भी योगी होना है। श्रीहरि के श्रवण, मनन, चिन्तन और निदिध्यासन से साधक योगी या मुमुक्ष योगी तो निश्चित हो सकते हैं। यदि हमें श्रीहरि ध्यानगम्य हो गये तो भवभयहरण और हमारा जीवन आनन्दमय, शान्तिमय और कल्याणमय होना सरल हो जायगा।

साधक योगियों को पर्याप्त ज्ञानप्राप्ति के पश्चात् श्रीहरि सच्चिदानन्द अनुग्रहरूप जो मूलभूत सगुण स्वरूप में वे दर्शन देते हैं, उस आविष्कार को ही हम महाविष्णु आदिनारायण नाम से जानते हैं। समस्त रूप अवतारों का यही मूलस्वरूप होने से उसकी श्रद्धामय सेवा-अर्चा करना नितान्त आवश्यक है। श्रीहरिचरणों में हरि से भी भारी शक्ति है।

लक्ष्मी चंचल होते हुए भी स्वयं लक्ष्मी ने बड़ी सावधानी और निश्चय पूर्वक हरि के चरणों को अपने हाथों से पकड़ रखा है। इसलिये लक्ष्मी में इतनी शक्ति आ गई कि हम लक्ष्मीपति को छोड़कर लक्ष्मी पर ही अधिक ध्यान देते हैं।

अविस्मृतिः विष्णुपदारविन्दयोः क्षुणोत्यभद्राणि शंतनोति।

हमें भी श्रीहरि के चरणों में लगना अधिक लाभदायक और हितकारक रहेगा।

इस भगवान् विष्णु के तत्त्व को समझाने के लिये भारत विख्यात प्रकाण्ड पण्डित श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने अपनी लेखनी प्रणीत विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ में अथक कठिन परिश्रम द्वारा अत्युत्तम सफल प्रयास करके हम समस्त भारतीयों का बहुत उपकार किया है।

विरलाजी ने नागदा में शेषशायी भगवान् विष्णु का अत्युत्तम कलापूर्ण बृहत् मन्दिर निर्माण कराया है। इसी नागदा ग्राम में रहकर शर्मा शास्त्रीजी ने 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का यह वाङ्मय मन्दिर अपनी लेखनी के माध्यम से निर्माण किया है। अपनी प्रखर बुद्धि चातुर्य एवं विद्वत्ता का पूर्ण कोश खोलकर इसका निर्माण किया है। इसको पाठक पढ़ने के साथ ही समझ सकेंगे।

अठारह-अठारह सोपानों तथा चार स्कन्धों द्वारा निर्मित यह मन्दिर बड़ा आकर्षक, रुचिकर और सर्वजन हितकारी है। प्रथम एवं द्वितीय स्कन्धों में भगवान् विष्णु के अवतारों, उनके स्वरूपों तथा उनके तीर्थ मन्दिरों, पुण्यप्रद स्थानों की कथा,

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

एवं परिचय लिखे गये हैं। इनके पढ़ने से ही सर्वम् विष्णुमयं जगत् की कल्पना दृढ़ और साकार हो जाती है। तृतीय स्कन्ध में भगवान् विष्णु, श्रीराम, महेश, गणेश, सूर्य, आद्याशक्ति की ब्रह्मतत्त्व में अभिन्नता, उनकी महिमा, उनके अर्चा क्रिया योग, उनके अनेक व्रत, नामोच्चारण भक्ति प्रकारादि का साङ्गोपाङ्ग विवेचन किया है। चतुर्थ स्कन्ध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, इसमें विष्णु भक्तों के लिये अनेक प्रकार की लघु-वृहत् पूजा-अर्चना विधि प्रार्थना लिखी गई हैं। शर्मा शास्त्री का यह स्तुत्य प्रयास है। यह आध्यात्मिकता की साधना सम्पत्ति मानी जायगी। इसको हम विष्णु-तत्त्व-दर्शन मन्दिर का स्वर्णमय कलश कहने का सौभाग्य कह सकते हैं।

दिनांक २० दिसम्बर ७८ डॉ. दीनानाथ रामचन्द्र सोनार

॥ श्री ॥

पण्डित गोविन्दनारायण शर्मा न्याय-साहित्याचार्य सेवानिवृत्त अध्यक्ष एवं प्राचार्य महाराज संस्कृत कालेज, जयपुर (राजस्थान) की सम्मति

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ देखा। विद्वान् लेखक ने विष्णु सम्बन्धी सभी प्रकार के साहित्य एवं अनेक प्रकार की पूजा पद्धतियों का संकलन करके गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। इस ग्रन्थ में वैदिक, पौराणिक तथा अनेक धर्मशास्त्रीय प्रौढ़ ग्रन्थों का सूक्ष्म अध्ययन करके आवश्यक-आवश्यक ज्ञातव्य तत्वों का संकलन किया है। राष्ट्रभाषा में लिखे जाने के कारण तथा शास्त्रीय प्रमाण वचनों के अविकल उद्धृत होने के कारण, इस ग्रन्थ से उच्चकोटि के विद्वानों से लेकर साधारण जनता तक सभी स्तर के व्यक्ति लाभान्वित होंगे।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक भगवान् विष्णु के मौलिक तत्त्व को समझ कर उपासना के क्षेत्र में यह ग्रन्थ अनुपम रत्न है। प्रयास सर्वथा स्तुत्य है। मैं विष्णु भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि—श्री शास्त्रीजी चिरायु होते हुए इस प्रकार के साहित्य का सर्जन करते रहें। शुभम्। दिनांक ५-१-७८

गोविन्दनारायण शर्मा नैयायिक

राजकीय महाराणा आचार्य संस्कृत महाविद्यालय उदयपुर के प्राचार्य डॉ. रामनारायण चतुर्वेदी, वेदव्याकरण-मीमांसाचार्य, निदेशक संस्कृत शिक्षा, जयपुर की ओर से शुभाभिनन्दन

परमादरणीयानां वैद्य रामप्रसाद महोदयानां श्री विष्णुतत्त्वदर्शनात्मकं संक्षिप्त परिचयं सभ्यताद्योचितम्। परमाराध्यस्य भगवतः श्री विष्णोः लोकोपादेय-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

तत्त्वानां सन्दर्शनेनाध्यवसायेन च महदुपकृताः भविष्यन्ति लोकाः । सुवर्णमालिकयान-याऽभिनन्दामि ग्रन्थरत्नं तत्रभवन्तं चेति ।

लोकानां त्रयतापनाशनपरैस्साहित्य संयोजने,
हार्दध्वान्त विनाशनपटुतरैर्ज्योतिर्मयैवाङ्मयैः ।
तत्त्वाराधन सावधानहृदयै विद्वद्वरेण्यै बुधैः,
अन्तर्बाह्यचिकित्स्यतेतु भिषजैः रामप्रसादाभियैः ॥
संसृष्टं शिव-शक्तितत्त्वममलं सन्मार्गसन्दर्शकम्,
दिव्यं विष्णुपरं सदा कलिमलध्वंसाय भूयादलम्,
वृत्तं स्कन्धचतुष्टयेषु कलितं विष्णोश्चरित्रात्मकम्,
भक्तेभ्यः श्रयताच्चतुर्भुजः श्रेयः सदाकामदम् ॥

दिनांक: २८-१२-७८

शुभाभिनन्दयतोत्थम्
रामानारायण चतुर्वेदः

श्री गुरुः शरणम्

वेद-न्यायाचार्य, प्राचार्य पण्डित रामचन्द्र शास्त्री होसमने तथा आचार्य पण्डित विश्वेश्वर शास्त्री द्राविड साङ्गवेद महाविद्यालय वाराणसी

प्रस्तुत ग्रन्थ में श्री शास्त्रीजी ने वेद, पुराण, इतिहास, धर्म शास्त्रों में उल्लिखित प्रमाणों द्वारा भगवान् विष्णु एवं उनके अवतारों के तत्त्व ज्ञान को सामान्य जनता को लाभान्वित करने के अभिप्राय से हिन्दी में निबद्ध कर अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया हैं। इसके द्वारा अधिकाधिक जनता लाभ प्राप्त करें एवं श्रीशास्त्रीजी चिरायु हों, यही हमारी भगवान् से प्रार्थना है । इति ।

दिनांक १६-११-७८

रामचन्द्र शास्त्री होसमने
विश्वेश्वर द्राविड

पण्डित रमेश तैलंग शास्त्री एम. ए. शिक्षा शास्त्री, बी. एड., संगीतसरोज, कोविदमणि प्राचार्य गवर्नमेण्ट संस्कृत कोलेज धोलपुर

विविधोपाधिभिरलंकृतानां विरलाग्रामनिवासिनां श्रीमतां रामप्रसाद शास्त्री-णांकृति विष्णु-तत्त्व-दर्शन तिमिरमिव सूर्येण मृणालमिव मरालेन पीयूषमिव राहुनो-दधिरिव घटयोनिना सकल हृदयातिथि कृता मया । विविध स्कन्ध सोपानेषु सकल कला

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कलन कराल कालस्य विविधयोनि समुत्पन्नानां पाप पंक पतिता पूत प्राणि पालन परायणस्य कल्पान्तरेषु भगवद्भक्ति परायणाना भक्तानां भूरि भीति भार भंजकरण वामांके समुद्र तनया गात्र प्रभासणीकृत शरीरस्य कमला मुखाम्बुज निश्च्यूतामृताधरोष्ठ पानोल्लसित लोचन चंचरीकस्य लीलया गृहित वराह, कूर्म, नृसिंह, वामन, हयग्रीव, परशुराम, राम; कृष्ण, व्यासादि विग्रहस्य द्रोपदीगणिकागजगृध्राजामिल गणादि प्रभृतिनां भक्तानां भयहरण कीलस्य विष्णो चरित्रस्य पठनेन पवित्री कृतं मया स्वीकेय कलेवरम् । दिनांक २२-११-७८

पं. रमेश तैलंग

॥ श्रीः ॥

पण्डित विश्वनाथ मिश्र व्याकरण साहित्याचार्य, एम. ए., प्रधानाचार्य शार्दूल संस्कृत विद्यापीठ बीकानेर

श्रीरामप्रसाद शास्त्रि शर्मा द्वारा लिखितस्य विष्णु-तत्त्व-दर्शनस्य संक्षिप्त परिचयोऽक्षि पथगोचरीकृतः । विभाजितमिदं पुस्तकं चतुर्षु स्कन्धेषु । प्रथम द्वितीय स्कन्धयोः प्रतिपाद्य भगवतोऽवतारस्य प्रयोजनं सकथानकं प्रस्तुतीकृता स्तदीया विभिन्ना अवताराः । तृतीय स्कन्धे समुपवर्णितानि विष्णुरामकृष्णादितत्त्वानि । सविशदमुपवर्णितमेषां पूजन विधिविधानं चतुर्थ स्कन्धे ।

पुस्तकस्यास्य लेखने न च न कृतः श्रमो वेदेषु पर्यालोचितानि पुराणानि, पर्यवेक्षितानि धर्मशास्त्राणि, चिन्तनपथमानीता उपनिषदः । एवं रीत्याऽपौरुषेय वेद तदनुबन्धिपुराणादि परम्परानुस्यूतं पुस्तकमिदं विष्णुतत्त्वावबोधने महदुपयोगीति संशयातीतोऽर्थः । यद्यपि विष्णु तत्त्वमचिन्त्यानिर्वाच्यं परं तत्त्वमेवास्ते तथापि तस्याचिन्त्यस्य चिन्तने द्वारमिदमिति मे मतिः । दिनांक १४-११-७८

विश्वनाथ मिश्रः

॥ श्रीः ॥

डॉ. रामचरण 'महेन्द्र' एम. ए., पी-एच डी., प्राचार्य विरला कॉलेज भवानी मण्डी की सम्मति

भारतीय धर्म संस्कृति वेद, पुराण, धर्मशास्त्र गहन ज्ञान के अध्येता व शोधकर्ता पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री का 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' निश्चय ही भारतीय-हिन्दू धर्म की अमूल्य कृति है । भारतीय धर्म में विष्णु सृष्टि के संचालक हैं । विष्णु का स्वरूप, उनके अवतार, अवतारों की प्रेरणा कथा व प्रयोजन आदि सामग्री धर्म ग्रन्थों में बिखरी हुई है । विष्णु अवतार का तात्त्विक मन्थन

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कर कर लेखक ने गहन अध्यवसाय व अथक परिश्रम कर क्षीरसागर के रत्नवत् विष्णु-तत्त्व-दर्शन को जनसुलभ कर भारतीय ज्ञान प्रज्ञा का पवित्र अनुष्ठान किया है।

विष्णु तत्त्व का इतना विशद विश्लेषण भारतीय साहित्य में पहली बार हुआ है। यह हमारे भारतीय धर्म व संस्कृति की 'इन्साइक्लोपीडिया' जैसा है। मेरी शत-शत शुभकामनाएँ। दिनांक २१-११-७८ डॉ. रामचरण 'महेन्द्र'

॥ श्रीः ॥

डॉ. विद्याधर धस्माना एम. ए., एम. ओ. एल., पी-एच. डी., अवकाश प्राप्त प्राध्यापक गान्धी मेमोरियल नेशनल कॉलेज, अम्बाला छावनी की शुभकामना

शिवस्य शक्तिः किल सत्यसंगा
सत् सुन्दरोऽसावपि विष्णु रूपः।
समुच्य पूर्वं शिवशक्तितत्त्वे
रामप्रसादा ब्रुवते तृतीयम् ।१।

प्रकाशते शब्दमयः प्रदीपः
यस्मिंस्तु धन्यस्स हि वानप्रस्थः।
तपः परं तद् भुवि येन शश्वद्
पश्यन्ति मार्गं तिमिरावरुद्धाः।२।

कृतः प्रयासो नितरां प्रशस्यः
स्वाध्यायशीलैरपवर्गदोऽयम् ।
सुगुम्फितं विष्णुमयैः प्रसूनैः
केभ्यो न रोचेत सुमञ्जरं तद् ।३।

पठन्तु सर्वे भवभाव मुक्त्यै
ग्रन्थं महान्तं शुभ चेतसैनम् ।
प्रकामयेऽहं प्रकृतावच्छन्नो
विष्णुस्तु साक्षाद् भवताद नेन ।४।

विद्याधर धस्माना

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पण्डित नरनाथ झा शास्त्री, अध्यक्ष एवं प्रधानाचार्य ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम चूरु, शुभकामना पञ्चकम्

शास्त्राब्धि मतिमन्दरेण महता यत्नेन नक्तं दिवम्
मन्थं मन्थभवाप्त मौलिक कला लक्ष्मीलसन्मेधया ।
दोषज्ञैरभिनन्दिताः बहुविधाः लोकोपयुक्ताः भृशम्-
येनाध्यात्मशिवादि तत्त्व विषयाः ग्रन्थाः प्रणीताः पुरा ।१।

सम्मान्येन नतेन तेन विदुषां मूर्धन्यभूतेन च,
श्रीमद् राम[1]प्रसाद-शर्मा-सुधिया सद्भाव सम्प्रेषितम् ।
श्रीविष्णोः लघुतत्त्वदर्शनमिदं बीज यथा सारव
दर्शं दर्शमविन्ददुत्क हृदयं हर्षं प्रकर्षं मम ।२।

जिज्ञासां किल विष्णुतत्त्वविषयां जिज्ञासमानात्मनाम्
साकल्येन समादधत्प्रतिदिशं शुभ्रं वितन्वद् यशः ।
सम्मानं परिवर्धयत्सुकृतिनो रामप्रसादस्य वै
एतत्स्वं समुदाहरत्प्रचरताच्चानन्वयालङ्कृतिम् ।३।

रामोयज्ञमिदं[2] सुदुर्लभतमं सदग्रन्थरत्नं वृहद्
संगृन्हणत्वनुशीलयन्तु सकला आनन्दथुं यान्तु च ।
निर्माता वुध वन्द्य एष मतिमान् रामप्रसादाभिधः
सेवायै जगतां ध्रुवं हिलमतामायुः समानां शतम् ।४।

निष्णाताय सुगूढतत्त्वचयने वैदुष्यवित्ताय च
नानोपाधिविभूषितात्र भिषजां श्रेष्ठाय[3] पृष्ठाय नः ।
श्रीमच्छास्त्रि महोदयाय बहुशस्ते धन्यवादाञ्जलिः
सोल्लासं नरनाथ विदुषा प्रत्यर्प्यते सादरम् ॥५॥

त्यविकहृदा सफलं कामयते । झोपाह्व नरनाथ शास्त्री, मार्ग—कृ.८सं.२०३५

पण्डित ब्रह्मदत्त त्रिवेदी. एम. ए. ,व्याकरणाचार्य, धर्मशास्त्र-प्रचार-परिषद्, मोर प्राच्य शोध-प्रतिष्ठान, ५ क्लाइव रोड़ कलकत्ता-१

अद्यैव प्राप्तं भवदीयवृतं
शुभाभिराशीर्भिरनुगृहीतम् ।

१-३ प्रह्ववेति पिङ्गलसूत्रेण वैकल्पिकं गुरुत्वम् ।
२ नामैक देश ग्रहणे नाम मात्र ग्रहण मिति नयेन रामप्रसादो यज्ञमिति ज्ञेयम् ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गुत्वेन रुत्वेन समर्ह नीयतां
तनोति भावान्सकलान्हितैषिणः ।१।
रामप्रसादविदुषा सुनियोजितेन
पीनेन विष्णुयशसाऽमृतवर्द्धितेन ।
अभ्यस्य सर्वाणि सुतन्त्रजानि
वस्तूनि संग्राह्य कराणि सन्ति ।२।

सम्भावितः काण्डछना भवद्भि-
रभूत पूर्वोऽस्ति प्रयत्न एषः ।
तेनातितुष्येन्नितरां दयालु-
स्त्रिलोकनाथः स हरिः शरण्यः ।३।

अहन्तु जाने भवदीय कृत्यं
स्वपूर्व सम्पादित सङ्ग्रहाभ्याम ।
स्वभक्तियुक्तस्य नरस्य मानसे
भवद्विधानां हि सशक्तिपात ।४।

किमधिकेन कलेवरवर्द्धनं
भवति भावजुषां भवतां गुणः ।
विततमेव यशो भवतात्सदा
हरिगिरा परितोषणयत्नकम् ।५।

नाम्ना विष्णुः कार्यभाक्त्वेन विष्णुः
दैवीसम्पत्प्राप्तये विष्णु हेतुः ।
दिव्यः सोऽयं तस्य सारं वितन्वन्
ग्रन्थो भूयाद्विश्वकेकोण व्यापिः ।६।

भो गुरुरूपेण सम्मानभाजन रामप्रसाद शास्त्रिन्
नाहं जाने तव महिमानं
पाहि दयामय मामज्ञानम् ।
दूरीकुरु मम दुष्कृतिभारं
विष्णो ! कुरु भवसागर पारम् ।७।

सर्वं हि ध्येयं विततं हि ब्रह्म
अनाद्य विद्या पिहितं जगच्च ।
कस्यैष माया विततस्य गौरवं
भवेज्जनस्यातितरां हि शङ्च ।८।

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यथा यथा सर्वजनोचितं यशो
भवेद्धि विष्णोः स्थिर लक्ष्मिकस्य ।
तथा तथा वृद्धजनाभिशंसनं
नित्यं हि विष्णोः परितोषणं स्यात् ।९।
नवकेन कृतं प्रशंसनं
स्तुतियुक्तेन मया विकासितम् ।
तदुपास्य जनो विशेषतः
हरिणा श्रीसहितेन योजितः स्यात् ।१०।

इति विद्वच्चरणसरसीरुहेषु मोद भरे ।

दिनांक १२-१२-७८ ब्रह्मदत्तस्य त्रिवेदिज, लक्ष्मणगढ़

आयुर्वेदवाचस्पति, विद्यावारिधि, वैद्य विश्वनाथ जोशी, साहित्य-व्याकरण-आयुर्वेदाचार्य, साहित्यरत्न व्याकरण-काव्यतीर्थ, तुमसर (महाराष्ट्र)

शिवस्य शक्तेरपि तत्त्वदर्शने
महानिबंधात्मतपोबृंहिते ।
प्रकाश्य विष्णोरपि तत्त्वदर्शनं
निबद्धवानेषु सुधीषु शेखरः ॥
अनन्यशास्त्राम्बु निधिं वगाह्य
विष्णोः समस्तानवतार भेदान् ।
निरूपयामास सविस्तरं यत्
तत् कर्तुर्यशोह्ययमेवनान्यः ॥
रामप्रसादाभिध एव विद्वान्
वाग्देवताया हि नवावतारः ।
अल्पेन कालेन यदत्रलोके
सद्ग्रन्थरत्नानि ददौ सुधीभ्यः ॥
अस्मिन् निबंधे निगमागमानां
प्रमाणवाक्यानपि सार्थकानि ।
यथास्थलं साधुतया निवेश्य
ग्रन्थस्य शोभां प्रगुणीचकार ॥

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विद्याराम विहारिणां सुमनसा-
मन्तः प्रमोदावहो,
लोके संस्कृतभाषया विरहिणां
चार्चाविधेः शिक्षकः ।
विष्णोर्नैकविधावतारप्रतिमा
पीठादिबोधोज्ज्वलः,
सद्ग्रन्थोऽयममन्दमोदसरणिं
कुर्यात् सतां सन्ततम् ॥

विद्वद्वृन्द कृताभिनन्दनतया लोके प्रतिष्ठां गतः,
शास्त्रांभोधि वगाह्य चारुरसिकः सद्धर्म सेवाव्रती ।
श्रीमान् रामप्रसाद इत्यविधया जेगीयमानोदयः,
सोऽयं साम्ब.सदाशिवस्य दयया जीव्यात् समानां शतम् ॥

दिनांक १०-११-७८ प्रस्तोता—वैद्य विश्वनाथ जोशी

पण्डित नटवरलाल जोशी साहित्याचार्य, एम. ए., प्राचार्य ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत महाविद्यालय लक्ष्मणगढ़ (सीकर)

शेखावाटी के गौरव विद्वद्वरेण्य आदरणीय पंडित रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री ने श्री विष्णु-तत्त्व-दर्शन में भगवान् विष्णु विषयक प्रायः समस्त विपुल साहित्य सामग्री महोदधि समान अनेक महान् ग्रन्थों से चुन-चुनकर संयोजित करने का दुरुह सर्वश्रेयस्कर कार्य करके वस्तुतः एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण उद्धरणों सहित राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रणयन कर सर्वसाधारण हिन्दीभाषी को भी लाभान्वित करने का अत्यन्त प्रशंसित सफल प्रयास किया है। लेखक महोदय परमश्रेयोभागी हैं, जो इस भाँति के श्रेयाधिष्ठान परमप्रभु के गुणानुवाद में मनसा वाचाकर्मणा में लगे हुए हैं। मैं परमप्रभु से इस मंगलमय सद्नुष्ठान की सर्वतोभावेन साफल्य की कामना करता हूँ। दिनांक २८-३-७९

नटवरलाल जोशी

॥ श्रीः ॥

विद्यावाचस्पति, वेदश्रमी, जीवानन्द 'आनन्द' शास्त्री, सिद्धान्तालंकार, साहित्यभूषण, कुलसचिव राजस्थान ब्रह्मचर्याश्रम, रतनगढ़ (राजस्थान) अध्यक्ष जनपदीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शास्त्रीजी का यह प्रयास अभिनन्दनीय एवं स्तुत्य है। आज जबकि हिन्दू धर्मावलम्बी जन भौतिकवाद के प्रकम्पन से प्रकम्पित है तथा समाज दिग्भ्रमित हो चुका है, ऐसे युग में भगवान् विष्णु के विषय में शास्त्रीय आधार पर प्रमाणभूत ग्रन्थ का प्रणयन लोकमानस के हृदय में धर्म के प्रति आकर्षण, श्रद्धा, भक्ति एवं निष्ठा उत्पन्न करेगा। मेरी यह मङ्गलकामना है कि भगवान् त्रिलोचन एतद् ग्रन्थों के लेखन, सम्पादन तथा प्रकाशन हेतु पण्डित रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री को असाधारण शक्ति प्रदान करें।

दिनांक ६-११-१९७८

भवन्निष्ठः—
जीवानन्द 'आनन्द'

॥ श्रीः ॥

डॉ गोपालचन्द्र मिश्र, आचार्य वेद-धर्मशास्त्र-मीमांसा एम. ए., पी-एच डी., आचार्य एवं अध्यक्ष वेदविभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी

वैद्य पं. श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्री जी अपने वानप्रस्थ आश्रम के समय का सदुपयोग देवचिन्तन तथा आर्षशास्त्रों के स्वाध्याय में कर रहे हैं। यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि श्री शास्त्री जी ने अपने अध्यात्म उपासना एवं शास्त्रीय विषयों के अनुभवों को स्थिर रीति से जनसाधरण के उपयोग हेतु विभिन्न देवतत्त्वों के परिज्ञान तथा आराधना विधि के लिये अनेक ग्रन्थों की रचना की है। इस समय श्री शास्त्रीजी अपनी प्रतिभा तथा लेखनी का स्थिरीकरण विष्णु-तत्त्व-दर्शन नामक ग्रन्थ से कर रहे हैं। श्री शास्त्रीजी ने अपने अनुभवों एवं रचना की प्रमाणिकता हेतु मूल पुस्तकों का निर्देश तथा आवश्यकतानुसार प्रमाणों का उद्धरण देकर अनुसन्धाताओं का मार्ग भी प्रशस्त किया है। यह पुस्तक अपने ढंग की अनूठी है। मैं शुभकामना के साथ शास्त्रीजी के प्रयास की सराहना करता हूँ।

दिनांक ११-११-७८

शुभाशंसी
गोपाल चन्द्र मिश्र

डॉ जयमन्त मिश्र, व्याकरण-साहित्याचार्य एम ए., पी-एच. डी., आचार्य एवम् अध्यक्ष, संस्कृतविभाग, अध्यक्ष कला-संकाय विहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपूर

अनादि परम्परा से प्राप्त वैदिक वाङ्मय में श्री विष्णु के स्वरूप, धाम,

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऐश्वर्य, पराक्रम आदि का विस्तृत विवेचन उपलब्ध होता है। वहाँ सूक्ष्मरूप से निर्दिष्ट विष्णु के विभिन्न अवतारों का रामायण, महाभारत, पुराणादि साहित्यों में साङ्गोपाङ्ग विवेचन मिलता है। इन परवर्ती इतिहास, पुराण आदि से वैदिक साहित्य के गम्भीर रहस्यों का समुद्घाटन होता है। इसीलिये कहा गया है—

"इतिहास-पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।"

अलौकिक अचिन्त्य भावों का स्पष्टीकरण तर्क आदि के द्वारा नहीं हो सकता।

"अचिन्त्याः खलु ये भावान् तांस्तर्केण योजयेत्।"

संस्कृत वाङ्मय में सविस्तार प्रतिपादित विष्णु-तत्त्व का इस ग्रन्थ में हिन्दी माध्यम से सरल, सुबोध, हृदयग्राह्य, रुचिकर शैली द्वारा विस्तृत विवेचन किया गया है। विष्णु सम्बन्धी अनेक विषयों का एकत्र सप्रमाण संकलन इस ग्रन्थ की अपनी विशेषता है। इस ग्रन्थ के परिशीलन से विष्णु-तत्त्व सम्बन्धी सम्पूर्ण जिज्ञासाओं का समाधान होता है। साथ ही उपासना पूजा-पाठ आदि विषयों का भी इससे समुचित ज्ञान प्राप्त होता है। इससे निस्सन्देह जिज्ञासुओं को महान्-लाभ होगा।

अनन्त स्वरूप भगवान् श्री विष्णु के अनन्त गुणों का बखान सर्वथा असंभव ही है। समस्त भूमण्डल के कणों की गणना काल-क्रम से हो सकती है, पर अखिल सत्त्वधाम अनन्त स्वरूप भगवान् श्री विष्णु के गुणों की गणना नहीं की जा सकती। अतएव भगवान् वेद व्यास ने कहा है—

"यो वा ह्यनन्तस्य गुणाननन्ता-
ननुक्रमिष्यन् स तु बालबुद्धिः।
रजांसि भूमेर्गणयेत् कथञ्चित्
कालेन नैवाखिलसत्त्वधाम्नः।"

(श्रीमद्भागवत)

इस दिशा में श्रीशास्त्रीजी का प्रयास परम स्तुत्य है। हम इस ग्रन्थ के सम्यक् प्रचार-प्रसार की कामना करते हैं। इतिशम्।

दिनांक ५-१०-७९

जयमन्तमिश्र

डॉ कल्याणमल लोढ़ा आचार्य हिन्दी विभाग,

कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता,

पण्डित रामप्रसादजी के 'शिव-तत्त्व-दर्शन' व 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थों का अनेक विद्वानों द्वारा सम्मान हुआ है। आपकी यह तृतीय कृति असाधारण पाण्डित्य-

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पूर्ण, चतुर्मुखी गरिमायुक्त है जिसमें भगवान् विष्णु एवं उनके अवतार विषयक सर्वाङ्गपूर्ण विषयों का प्रतिपादन किया गया है। कई अध्याय तो अत्यन्त मौलिक हैं। विभिन्न पुराणों का आधार ग्रहण कर आपने विवेक और न्याय से अत्युत्तम पठनीय तथा उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है। इससे मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ हूँ। भारतीय वाङ्मयमें आपकी पैनी मार्मिक पहुँच है। वेद, वेदान्त धर्मशास्त्र पुराणादि महान् ग्रन्थों के दुर्ज्ञेय गूढ़ तात्त्विक बिन्दुओं की पकड़ भी गहरी है।

मैं आपका साधुवाद करता हूँ। दिनांक ३१ मार्च १९७९

२-ए., देशप्रियपार्क ईस्ट
कलकत्ता-७०००२९

आपका
कल्याणमल लोढ़ा

॥ श्रीः ॥

पण्डित रामनारायण त्रिपाठी व्याकरण-वेदान्त-धर्मशास्त्राचार्य, एम. ए., अध्यक्ष प्राच्य संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

श्रेयसे प्रेयसे च वैदिककालादेवास्यां भारतभुवि प्रवहन्त्योऽक्षुण्णास्तिस्त्रो ज्ञानकर्मोपासनानां धारा आध्यात्मिक क्षेत्रे जाग्रति। तत्र यथारुचि भारतीया जना एकैकां यथाशक्ति सर्वां वाऽऽश्रित्य परमार्थं लभन्ते। अत्र ज्ञानकर्मणोरपेक्षया उपासनाया मार्गः सरलः सर्वसाध्यः सर्वजनोपादेयः सुकरश्चास्ति। येनाऽत्र भारतीयानां स्वाभाविकी प्रवृत्तिरवलोक्यते। सैषोपासना भारते विष्णुशिवशक्तिसूर्य-गणपतिभैरवादितत्तद्दिष्टदेवतोपासकभेदाद् वैविध्यं भजति। भारतीयोपास्यदेवेषु विष्णोर्माहात्म्यं सर्वमतिशेत इति सर्वविदितम्। भारतीयवाङ्मये सर्वत्र वेद-पुराणागमेषु भगवतो विष्णोश्चरित्रं माहात्म्यं कर्म सर्वमुपलभ्यते अस्यार्चना-पद्धतिश्च प्राप्यते किन्तु सम्प्रति आवश्यकता एकत्रीकरणस्यास्ति याऽनेन विद्वद्वरेण सफलीकृता।

अस्मिन् विषये पण्डित प्रवरेण रामप्रसाद शर्मणा भूरिश्रमेण विविधां सामग्रीं संग्रह्य विष्णु-तत्त्व-दर्शन नामकं ग्रन्थं निर्माय यो लोकोपकारो विहितः स सर्वथा श्लाघ्यः प्रशंसनीयः। वैष्णवानामुपासकानां कृते शास्त्रिमहाभागेन यः प्रशस्तमार्ग-उपस्थापितस्तर्थदमयं मनीषी तत्प्रयासश्चाभिनन्द्यो भविष्यति भूवीति। आशासे विष्णु-तत्त्व-दर्शनस्य साङ्गोपाङ्गविवेचनं वीक्ष्य जनाः सर्वदैतद् भजिष्यन्तीति।

विदुषां वशंवदः—
रामनारायण त्रिपाठी

दिनांक १५-११-१९७९

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीः ॥

डॉ. शिवशङ्कर अवस्थी संस्कृत विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय

श्री पं. रामप्रसाद शर्मा शास्त्री की यह तृतीय अभिनव कृति है। 'शिव-तत्त्व-दर्शन' एवं 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थों से जिज्ञासु जनता का अत्यन्त उपकार हुआ है।

विष्णु, परमात्मा एवं सूर्य का वाचक शब्द है। इसकी विभिन्न व्युत्पत्तियाँ मिलती हैं। यथा--

(१) वेवेष्टि (विष्लृ व्याप्तौ जु.) व्याप्नोति विश्वमिति विष्णुः। जो विश्व को व्याप्त करता है, वह विष्णु है।

(२) वेषति (विषु सेचने भ्वा.) सिञ्चति आप्यायते विश्वम्। संसार को अपनी शक्ति या रस से सींचने वाला।

(३) विष्णाति (त्रिष विप्रयोगे क्र्यादि.) वियुनक्ति भक्तान् मायापसारणेन संसारात्। माया को दूर करके भक्तों को संसार से पृथक करने वाला।

(४) विशति (विश प्रवेशने तु.) सर्वभूतानि। सम्पूर्ण प्राणियों में प्रविष्ट।

(५) विशन्ति सर्वभूतानि अत्र। समस्त प्राणियों का निवास-स्थान।

प्रस्तुत ग्रन्थ में विष्णु-तत्त्व की जो चतुर्मुखी व्याख्या सम्पन्न हुई है वह अत्यन्त श्लाघनीय है। आशा है इस ग्रन्थ का भी जनता के बीच समादर होगा। मैं पं. रामप्रसाद शर्माजी शास्त्री को हार्दिक बधाई देता हूँ। दिनांक २८-११-७८

शिवशङ्कर अवस्थी

॥ श्रीः ॥

डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' एम.ए.(हिन्दी-संस्कृत),पी-एच.डी., डी. लिट्, आचार्य-हिन्दी-विभाग, अधिष्ठाता मानविकी संकाय उदयपुर विश्वविद्यालय

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' में लेखक ने भारतीय वाङ्मय का गम्भीर मन्थन करके समस्त नवनीत एकत्र कर दिया है। भगवान् विष्णु और उनके अवतारों के सम्बन्ध में यह ग्रन्थ समस्त प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करता है। दर्शन, इतिहास, धर्म, नीति और संस्कारों का एक अद्भुत पंचामृत है। यह ग्रन्थ विद्वानों में समादृत होगा तथा इसके लेखक यशस्वी बनेंगे। दिनांक ६-११-१९७८

डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली, एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत), साहित्यरत्न, पी-एच.डी., वरिष्ठ हिन्दी प्राध्यापक, राजकीयमहाविद्यालय, अजमेर

विष्णु परमेष्ठी शक्ति के नाम से समस्त शक्तियों के प्रेरक और आराध्य के रूप में जाने जाते रहे हैं। उनके विक्रम प्रवचनीय माने गये हैं। उनका परम-पद

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

काम्य माना गया है। वहाँ उनके सांनिध्य में विद्यमान भूरिश्रृंगा-गौएँ प्रकृति-निबद्ध जीवात्मा के अतिरिक्त और क्या हो सकती हैं। पुराण-पुरुष, परम पुरुष, विराट् पुरुष आदि विष्णु की महिमा को द्योतित करने वाले नाम हैं। उनका स्थान तेतीस कोटि के देवताओं से ऊपर चौंतीसवाँ है। पुराणों में वे अवतारपुरुष के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं। त्रिदेवों में वे पालन और रक्षण के व्यापार से सम्बद्ध हैं।

परम पुरुष की आराधना करना, उनके विषय में तत्त्व चिन्तन करना, प्रवचन और व्याख्या करना मानवीय श्रम को सार्थक बनाने की विधियाँ हैं। पं. रामप्रसाद शर्मा ने 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का प्रणयन करके विष्णु भक्तों के लिए बड़े महत्त्व का काम किया है। कामना है कि पंडितजी शतायु होकर और भी ऐसे सुन्दर और समाजोपयोगी ग्रन्थों की रचना करते रहें।

॥ श्रीः ॥

डॉ. प्रभाकर शास्त्री, साहित्य-धर्मशास्त्राचार्य, एम. ए. (हिन्दी-संस्कृत) पी-एच. डी., डी. लिट्, अध्यक्ष, राजस्थान संस्कृत परिषद्, अध्यक्ष संस्कृत-विभाग, राज० विश्वविद्यालय, जयपुर

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का मैंने अवलोकन किया। लेखक ने इससे पूर्व 'शिव-तत्त्व-दर्शन' व 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ लिखकर भारतीय धर्मप्राण जनता का महदुपकार किया है। वैष्णव सम्प्रदायों के लोग भगवान् विष्णु के विभिन्न स्वरूपों का अर्चन करते हैं। अर्चना विधि में अन्तर हो सकता है परन्तु आराध्य देव का मूल स्वरूप सभी के लिए एक है। 'यस्माद् विश्वमिदं सर्वं तस्य शक्त्या महात्मनः। तस्मादेवोच्यते विष्णुर्विश् धातोः प्रवेशनात्।' यह समस्त चराचर संसार उसी सर्व शक्तिमान् की लीला है। देवत्रयी में विष्णु भगवान् का दूसरा स्थान निर्धारित है, पालक के रूप में। अवतार भी विष्णु के ही प्रसिद्ध हैं। २४ अवतारों में भी १० अवतार उल्लेखनीय हैं—

"मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहोऽथ वामनः।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्की च ते दश॥"

विष्णु ने विभिन्न अवतार लेकर विभिन्न कार्य सम्पन्न किये हैं—

"वेदानुद्धरते, जगन्निवहते, भूगोलमुद् विभ्रते,
दैत्यं दारयते, बलिं छलयते, क्षत्रक्षयं कुर्वते।
पौलस्त्यं जयते, हलं कलयते, कारुण्यमातंचते,
म्लेच्छान्मूर्छयते, दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः॥"

लेखक ने ग्रन्थ को चार स्कन्धों में विभक्त किया है, क्योंकि विष्णु चतुर्भुज

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हैं। प्रत्येक स्कन्ध में १८-८१ निर्धारितनोपसा विषय का विवेचन किये हैं। औचित्य में परिधि की है।

यह ग्रन्थ पठनीय, मननीय व अनुकरणीय तथा संग्रहणीय भी है। मैं विद्वान् लेखक को हार्दिक बधाई देता हूँ। परमात्मा इस सारस्वत साधना के लिए उन्हें यश, सौख्य, चिरायुष्य व शक्ति प्रदान करे, यही मेरी शुभकामनायें हैं।

डॉ. प्रभाकर शास्त्री

॥ श्रीः ॥

पण्डित शिवसागर त्रिपाठी एम. ए., (हिन्दी-संस्कृत), साहित्याचार्य, साहित्यरत्न, प्राध्यापक संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है कि पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री की तत्त्व-दर्शन-माला के तृतीय पुष्प 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का प्रकाशन होने जा रहा है। यह भक्तों, जिज्ञासुओं और अनुसन्धित्सुकों के हृदय को सुवासित करेगा। लेखक ने ग्रन्थ में भगवान् विष्णु से सम्बद्ध समस्त जानकारी को सप्रमाण प्रस्तुत करने का स्तुत्य प्रयास किया है और हिन्दी भाषा में निबद्ध कर बहुजनोपयोगी बना दिया है। ग्रन्थ प्रणेता साधुवाद के पात्र हैं।

मैं ग्रन्थ के अधिकाधिक प्रचार-प्रसार की कामना करता हूँ।

दिनांक १-१२-७८ शिवसागर त्रिपाठी

॥ श्रीः ॥

डॉ. आर. सी. द्विवेदी एम. ए. पी-एच. डी., साहित्य-दर्शनाचार्य प्राध्यापक, संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

सनातन धर्म में विष्णु, शिव, शक्ति, सूर्य, गणपति पञ्चदेवोपासना अनादि काल से प्रचलित रही है। विद्वद्वरेण्य पं. रामप्रसाद शास्त्री ने आगम, पुराण, धर्मशास्त्रादि का मन्थन कर शिव तथा शक्ति-तत्त्व-दर्शन दो ग्रन्थों का प्रणयन कर शैव, शाक्त भक्तों का महदुपकार किया है। इन ग्रन्थों का शास्त्रनिष्णात विद्वानों से जनसाधारण तक हिन्दू समाज में सम्मान हुआ है। अब इसी प्रकार का तृतीय ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' निबद्ध किया जाकर विष्णु भक्त हिन्दू जन मानस का उपकार किया है। विश्वास है कि शास्त्री जी द्वारा प्रणीत इस ग्रन्थ का भी सनातन धर्मावलम्बी जनता समादर करेगी। मैं हृदय से इस ग्रन्थ के प्रचार-प्रसार की कामना करता हूँ। दिनांक २१-११-७८ रामचन्द्र द्विवेदी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीः ॥

डॉ कल्याणसिंह शेखावत, राजस्थानी विभागाध्यक्ष, जोधपुर विश्वविद्यालय

इस प्रौढ पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थरत्न में हिन्दी भाषा में भगवान् विष्णु के विषय में प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में वर्णित परम्पराओं के गूढ़ साहित्य को अत्यन्त व्यवस्थित रूप में एकत्र उपलब्ध करा दिया गया है। यह कार्य सरल नहीं है। लेखक ने अत्यन्त महत्त्व पूर्ण कार्य किया है। यह बृहत् ग्रन्थ हिन्दी साहित्य के एक बड़े अभाव की पूर्ति करेगा। मैं इसको किसी अनुसंधान कार्य से कम नहीं मानता। लेखक के इस प्रयास से हिन्दू धर्म तथा दर्शन के प्रति फैली हुई भ्रान्त धारणाओं का निराकरण होगा और भगवान् विष्णु विषयक गम्भीर अध्ययन तथा उनकी भक्ति करने का मार्ग प्रशस्त होगा। दिनांक २-१२-७८

डॉ. कल्याण सिंह शेखावत

डॉ. श्यामा भटनागर एम. ए., पी-एच. डी., शास्त्री, संस्कृतविभागाध्यक्ष, ज्ञान-विज्ञान महाविद्यालय वनस्थली विद्यापीठ (राजस्थान)

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' को परिचय के मैंने सुरुचि पूर्वक एकाग्र मन से पढा, ऐसे सुन्दर मङ्गलमय एवं सर्वाङ्ग पूर्ण ग्रन्थ की अवतारणा से हार्दिक प्रसन्नता हुई। प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वारा 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' के आत्मनिवेदन के अन्त में व्यक्त हुई लेखक महोदय श्री शास्त्रीजी की 'कामना' की ही पूर्ति नहीं हुई, अपितु 'उरुगाय' विष्णु के व्यापक स्वरूप को शब्द मय रूप देकर उन्होंने इस क्षेत्र में एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। अतः साधुवाद एवं बधाई के पात्र हैं।

विभिन्न उपलब्ध स्रोतों से विष्णु के चौबीस अवतारों के एकत्र ऐतिहासिक निरूपण, विष्णु, राम एवं श्रीकृष्ण के तत्त्व विवेचन आदि ग्रन्थ की महत्ता में और भी अधिक वृद्धि कर दी है।

'शिव-तत्त्व-दर्शन' व 'शक्ति-तत्त्व दर्शन' के समान इस कृति में भी यह वैशिष्ट्य है कि लेखक का सर्वभूतहितरत उदार व्यक्तित्व ज्ञानपक्ष के आलोचन के उपरान्त साधना पक्ष के निरूपण एवं साधना-पथ के प्रदर्शन के बिना विश्रान्ति का अनुभव नहीं करता। विविध व्रत, उपासना, पूजाविधियों एवं तीर्थस्थलों का निरूपण इसी का सुफल है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ अवश्य ही शिक्षित जन समाज का 'कंठ-विभूषण' बनेगा। दिनांक ५-१२-७८

श्यामा भटनागर

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीः ॥

डॉ. कृष्णकान्त चतुर्वेदी, साहित्याचार्य, एम. ए., (संस्कृत-पालिप्राकृत) पी-एच. डी., संस्कृत, पालि तथा प्राकृत स्नातकोत्तर शिक्षण तथा अनुसंधान, विभाग, जबलपुर विश्वविद्यालय

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का मैंने अवलोकन किया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतीय मनीषा द्वारा रचित समस्त पौराणिक वाङ्मय आपके लेखन का आधार है। उस आधार का आपने बहुत ढंग से उपयोग किया है। प्रमाण में अनेक स्थलों पर वैदिक वाङ्मय द्वारा पुष्टि भी की गई है।

चार स्कन्धों में विभाजित यह ग्रन्थ न केवल विष्णु अपितु अन्य तत्सम्बन्धी दिव्य तत्त्वों का विवरण एवं व्याख्यान भी प्रस्तुत करता है। आपने सामग्री संकलन में व्यापकता तथा व्यावहारिक प्रयोग को ध्यान में रखा है। यह ग्रन्थ विद्वानों तथा विष्णु तत्त्व के अभ्यास करने वाले साधकों के लिए ही नहीं, सामान्य भक्त गृहस्थों के उपयोग का भी है। वैदिक धर्म की प्राथमिक धारा से प्राप्त विष्णु-तत्त्व का जो ऐतिहासिक विकास क्रम है, वह भी आपने निरूपित किया है।

विश्वास है कि आपकी यह महत्वपूर्ण कृति विद्वज्जनों द्वारा बहुत आदर प्राप्त करेगी। मैं इस श्रेष्ठ महत्वपूर्ण विद्वत्ता मण्डित उपयोगी कृति के प्रणयन हेतु आपको साधुवाद देता हूँ। २१-११-७८

कृष्णाकान्त चतुर्वेदी

॥ श्री ॥

डॉ. कृष्णदत्त वाजपेयी सेवानिवृत टैगोर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, पूर्व अध्यक्ष भारतीय मुद्राशास्त्रपरिषद्, उपाध्यक्ष भारतीय पुरालेख परिषद्, विजिटिंग प्रोफेसर सागर विश्वविद्यालय

हिन्दू धर्म और दर्शन के प्रख्यात विद्वान् पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री जी ने शिव और शक्ति के तत्त्व दर्शन पर बृहत् ग्रन्थ प्रणयन कर प्रकाशित कराये हैं, जिनकी विद्वज्जगत् में बड़ी प्रशंसा हुई है। अब 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' निर्माण किया है। इस ग्रन्थ में भी पण्डितजी ने प्राचीन शास्त्रों तथा अनेक पुरातत्त्वीय प्रमाणों के आधार पर विष्णु-तत्त्व की उत्तम विस्तृत मीमांसा की है। विष्णु के अवतारों, प्रमुख विग्रहों तथा अन्य देवों के साथ विष्णु के संबंधों पर सप्रमाण प्रकाश डाला गया है। यह ग्रन्थ अत्यधिक उपादेय है। लेखक ने सराहनीय श्रम किया है। उन्हें साधुवाद। दिनांक १४-११-७८ कृष्णदत्त वाजपेयी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीः ॥

डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी एम.ए., पी-एच.डी., डी.लिट, साहित्याचार्य, अध्यक्ष हिन्दी प्राध्ययन केन्द्र तथा कला संकाय विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन

आज आवश्यकता है अपनी सांस्कृतिक उपलब्धियों के प्रेरणाप्रद केन्द्रों का आज की बोधगम्य भाषा में रोचक निरूपण की ताकि भौतिक अपेक्षाओं से ऊपर उठकर समाज मानव मूल्यों को जी सके । इन मानव मूल्यों को जीने में अपरिहार्य बाधाएं आती हैं और उन बाधाओं के बावजूद उन्हें जीने में आध्यात्मिक आस्था को रीझ-रीझकर कहने वाला यह ग्रन्थ है । आपने ऐसी ही प्रेरणाप्रद वृहत् पुस्तक हिन्दी में तैयार कर आज की संतप्त मानवता को एक घनच्छाय वटवृक्ष दिया है । आपको इस पुस्तक से निश्चय ही यश प्राप्त होगा । ऐसे पुनीत प्रयास के लिए हार्दिक बधाइयां । दिनांक १०-११-७८

राममूर्ति त्रिपाठी

॥ श्रीः ॥

आचार्य डॉ. शुकरत्न उपाध्याय, एम.ए., पी-एच. डी., साहित्य-आचार्य, क्षिक्षाशास्त्री तीर्थ-द्वय, रत्न-द्वय, केन्द्रीय विद्यालय, शक्तिनगर ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

भगवान् विष्णु ही अद्वितीय देवता हैं । वैदिक साहित्य में विष्णु को जीवन के आधारभूत तत्त्वों के साथ एक रूप देखने का प्रयत्न हुआ है । ऋग्वेद, अथर्ववेद तथा शतपथ ब्राह्मण आदि में अन्न, घृत, मधु को भी विष्णु रूप स्वीकार किया गया है । देवताओं को सर्व व्यापकता की शक्ति विष्णु से ही प्राप्त होती है(ऋ०१।१२ ।१८) । ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञ को भी विष्णुरूप कहा गया है—'यज्ञो वै विष्णुः ।' शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ, यजमान, यज्ञस्तूप को भी विष्णु स्वीकार किया गया है । पुराणों में नारायण, भगवान् और वासुदेव आदि अनन्त अभिधान विष्णु के पर्याय-रूप में व्यवहृत हुए हैं । भागवत में उनको अध्यात्म दीप कहा है (भाग. १०।३।४)-विष्णुरध्यात्मदीपः । विष्णु पुराण में कहा गया है कि 'यह जगत् विष्णु से उत्पन्न हुआ है, उन्हीं में स्थित है, वे ही इसकी स्थिति और लय के कर्त्ता हैं तथा यह जगत् भी वे ही हैं ।' (१।१।३१) श्री विष्णु की महिमा अनन्त है । सभी अवतार श्रीविष्णु से ही सम्बन्धित हैं ।

पण्डित प्रवर श्री रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने 'विष्णु-तत्त्व दर्शन' लिखकर विविध शास्त्रों के स्वाध्याय के प्रति उदासीन भारतीय जनता तथा विश्व मानवता

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

का महान् उपकार किया है। इतना गहन तथा विस्तृत विवेचन सर्वथा अपूर्व है। वेद, पुराण, उपनिषद्, नारद पञ्चरात्र तथा बृहद् भागवतामृत आदि वैष्णव गोस्वामियों के ग्रन्थों के आधार पर विष्णु-तत्त्व का विवेचन, वैष्णव सम्प्रदायों पर अनुसन्धान करने वाले सैकड़ों रिसर्च-स्कालरों के लिए भी अनुपम संग्रह प्रस्तुत करता है। ऐसा क्या है जो इस ग्रन्थ में नहीं है। यह विष्णु तत्त्व और सनातन धर्म का विश्वकोष है। देश-विदेश के विश्वविद्यालयों तथा पुस्तकालयों में इस ग्रन्थ की प्रतियों को सुरक्षित रखा जाना भी आवश्यक है, जिससे सदियों तक लाखों-करोड़ों लोग इस गहन ज्ञान के प्रकाश में अपनी उलझी हुई गांठों को खोलकर जीवत को धन्य तथा सार्थक बना सकें। भारतीय-जनता ऐसे महान् मनोषी से और भी बहुत सी आशा लगाए हुए है। दिनांक २१।१।७९

डॉ. शुकरत्न उपाध्याय

॥ श्री ॥

डॉ. निखिलेश शास्त्री एम. ए.; एम. लिट्, पी-एच. डी., सचिव भारती शोध संस्थान, इन्दौर

जगत् एक तात्त्विक सत्ता है और इसका सर्जन, पालन एवं संहार ईश्वर की अनादि-अनन्तशक्तिद्वारा किया जाता है। वह ईश्वर परम कारुणिक है तथा जो जीवात्मा उसकी अनन्यशक्ति पर निर्भर रहते हैं ईश्वर उनका योगक्षेम स्वयं वहन करता है; अतः ईश्वर-भक्ति जीवात्मा के लिए परम उपादेय धर्म है, जिसके बल से जीवात्मा अपने जीवन को कृतार्थ कर जन्म-जरा-मरण-आधि-व्याधि से सदा मुक्त होकर अनुपम एवं शाश्वत सुख प्राप्त कर सकता है।

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ में विष्णु के चरित्र एवं उनके अवतारों की पावन-महिमा को धार्मिक जगत् के समक्ष उपस्थित किया गया है।

भगवद्-महिमा से ओत-प्रोत यह ग्रन्थ अति प्राञ्जल भाषा में निबद्ध है और विद्वान् लेखक ने अपने प्रतिपाद्य को अत्यन्त सरस शैली में अत्यन्त निपुणता से संयोजित किया है। निःसंकोच कहा जा सकता है कि ग्रन्थकार ने कठोर परिश्रम एवं प्रगाढ़-पाण्डित्य का परिचय दिया है।

इस ग्रन्थ के अध्ययन-मनन द्वारा निश्चित ही जिज्ञासु, साहित्यिक तथा भक्तजन सकल आपत्तियों केविराम, परमकारुणिक भगवान् विष्णु के दिव्य अनुग्रह की प्राप्ति द्वारा अपना जीवन कृतार्थ करेंगे। शुभम्। दिनांक ३०-१२-७८

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

डॉ. निखिलेश शास्त्री

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

हरिः ॐ

डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण', रीडर एवं अध्यक्ष (हिन्दी विभाग) बी. एस. एम. कॉलेज, रुड़की (उत्तर प्रदेश)

परम मनीषी, तत्त्वदर्शी एवं भारतीय पौराणिक संस्कृति के मर्मज्ञ अध्येता पं. रामप्रसाद शर्मा शास्त्री प्रणीत 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का संक्षिप्त परिचय ही इस ग्रन्थ रत्न की उच्चता एवं श्रेष्ठता का उद्घोष कर रहा है। अवतारवाद की भारतीय-दार्शनिक-चिन्तना का मूलाधार भगवान् विष्णु ही हैं, जिनके माध्यम से 'एकोऽहं बहु स्याम' की हमारी धारणा स्थापित हुई है। विष्णु ही वस्तुतः 'जगदीश' हैं और 'सृजन-सिंचन-संहार' की इस त्रिगुणात्मिका सृष्टि के सर्वोच्च दायित्व 'सिंचन' को सम्हालते हैं। विष्णु भारतीय धर्म, दर्शन, कला, संस्कृति, साहित्य—सभी को अनुप्राणित करते रहे हैं।

विद्वान् लेखक ने 'विष्णु-तत्त्व' का सर्वाङ्ग विवेचन ज्ञात, अज्ञात, अल्पज्ञात सूत्रों को जोड़कर इस कृति में प्रस्तुत किया है। 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' प्रत्येक धर्म-प्राण भारतीय चिन्तक के हृदय का शृङ्गार बन सकेगा, यह मुझे पूर्ण विश्वास है। परमात्मा पण्डित रामप्रसाद शास्त्री को दीर्घायुष्य प्रदान करें।"

दिनांक ६ नवम्बर १९७८

डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'

॥ श्रीः ॥

डॉ. ए. कमलनाथ 'पंकज' एम. ए., पी-एच. डी., अध्यक्ष हिन्दी विभाग, आदोनी आर्ट्स एण्ड साइंस कॉलेज, जिला कर्नूल (आन्ध्र प्रान्त)

'शिव-तत्त्व-दर्शन', 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' के पश्चात् अब 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का प्रणयन कर आप हिन्दी के पाठकों का महान् उपकार कर रहे हैं। 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' में श्रुति, स्मृति, धर्मशास्त्र, पुराणादि अनेक ग्रन्थों में उल्लिखित विष्णु सम्बन्धी अनेक विषयों का निचोड़ आ गया है। यह ग्रन्थ भी हिन्दी साहित्य का अनुपम ग्रन्थ प्रमाणित होगा। दिनांक ६-११-७८

डॉ. ए. कमलनाथ 'पंकज'

॥ श्रीः ॥

डॉ. धनवती मिश्र एम. ए., बी. टी., पी-एच. डी., व्याख्याता केम्ब्रिज विद्यालय, भोपाल

सनातन धर्म का मूलाधार 'देव-तत्त्व-दर्शन' ही है। देवताओं में त्रिदेव और त्रिदेवों में सार शिरोमणि भगवान् विष्णु। जग के पालन कर्ता, ऐश्वर्य के प्रदाता।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

उनके विषय में सर्व साधारण की अज्ञता, अनभिज्ञता का कारण संस्कृत भाषा से दूरी तथा पौराणिक, धर्मशास्त्र साहित्य की गुत्थियों को सुलझाने, समझने में असमर्थता ही है।

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' पढ़कर मन में दो विचार एक साथ ही उत्पन्न हुए।

प्रथम वेनी कवि के शब्दों में—

"वेद मत सोधि, सोधि-सोधि कै पुरान सबै
....
जो पै यह रामायन तुलसी न गावतो।"

तुलसी की रामकथा के समान ही 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थ का प्रणयन साधारण हिन्दी भाषी के लिए किया गया है। यह पंडित जी के गहन शास्त्र वैदूष्य का परिचायक एवं स्तुत्य प्रयास है।

शास्त्रीजी ने 'शिव-तत्त्व-दर्शन', 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' तथा 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' ग्रन्थों की रचना कर प्रमाणित कर दिया कि वानप्रस्थ आश्रम के समय का सदुपयोग किस प्रकार किया जा सकता है। वर्तमान समय की अनेक गुत्थियों का सरल समाधान इन ग्रन्थों में प्राप्त है।

दिनांक १३-८-७९ डॉ. धनवती मिश्र

॥ श्रीः ॥

पण्डित द्वारका प्रसाद शर्मा शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, काव्य-सांख्य-स्मृतितीर्थ, कविराज, आयुर्वेदकेशरी-भूषण, रत्नादि पदवीलंकृत राजगांगपुर (सुन्दरगढ़) उड़ीसा प्रान्त

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' का अनेक महाग्रन्थों के सार तत्त्वों का कठिन परिश्रम द्वारा चयन कर उनके प्रमाणों को यथा स्थान प्रस्तुत कहते हुए प्रणयन किया गया है। लेखक ने अत्यन्त सरल सुबोध मधुर भाषा में तात्त्विक विषयों को प्रतिपादित किया है। ईश्वर चिन्तन एवं सर्वजनहितार्थ ऐसे महान् ग्रन्थों का आलोडन, विलोडन कर महाविद्वान् लेखक अनेक ग्रन्थ निर्माण में अहर्निशरत हैं। पं. रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री का यह परिश्रम स्तुत्य है।

दिनांक १८-११-७८ कविराज द्वारकाप्रसाद वैद्य

॥ श्रीः ॥

श्रीमती प्रोफेसर कादम्बरी शर्मा एम. ए., संगीत-विशारद, संगीत प्रभाकर, सिल्लीगुड़ी (पश्चिम बंगाल)

विष्णु-तत्त्व-दर्शन वेद-पुराणादि अनेक धर्म-ग्रन्थों के सन्दर्भ प्रमाणों पर आधारित अनुपम ग्रन्थ है। आगम-निगम विश्लिष्ट दुर्ज्ञेय ग्रन्थों का मन्थन कर उनके

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

सुमधुर नवनीत को शास्त्रीय वैज्ञानिक शैली द्वारा नियोजित कर इस ग्रन्थ का प्रणयन किया गया है। लेखन शैली सरल एवं आकर्षक है। इस ग्रन्थ के पठन, मनन, चिन्तन द्वारा प्रत्येक मनुष्य भौतिक सुखोपभोग करता हुआ अन्त तक ईश्वर कृपा भी प्राप्त कर सकता है। ऐसे अद्वितीय उत्तम ग्रन्थ निर्माणकर्त्ता पं. रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री को हिन्दी ससार सर्वदा स्मरण करता रहेगा।

दिनांक १६-११-७८ प्रोफेसर कादम्बरी शर्मा

॥ श्रीः ॥

पण्डित नरोत्तमलाल जोशी, काव्यतीर्थ एम. ए., एल-एल. बी., एडवोकेट, अध्यक्ष राजस्थान संस्कृत सम्मेलन (१९५४), जोशी-सदन, झुंझनू (राजस्थान) की सम्मति

पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री के शिव-तत्त्व-दर्शन व शक्ति-तत्त्व-दर्शन नामक ग्रन्थों का भक्तों एवं विद्वानों द्वारा बड़ा स्वागत हुआ है। 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' की रचना का आभास पण्डित जी ने पहले ही दे दिया था।

वैदिक वाङ्मय से प्रारम्भ होकर जिस तरह विष्णु-तत्त्व का वर्णन हमारे साहित्य में आता रहा है, उसकी चरम परिणति कदाचित् अवतारवाद के सिद्धान्त में है। वैसे तो 'वासुदेव' का वर्णन परब्रह्म के रूप में श्रीमद्भगवद्गीता में आया है; परन्तु साहित्य में 'विष्णु' को 'उपेन्द्र' या 'इन्द्रावरज' कह कर ही सम्बोधित किया गया है। आदि कवि महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में 'राम' का चरित्र-चित्रण एक आदर्श सर्वगुण सम्पन्न पुरुष के रूप में किया है। हो सकता है कि अवतारवाद का दर्शन बाद में हमारे यहां आया हो। अस्तु

पण्डित जी ने अथक परिश्रम और लगन से श्रुति-स्मृति और बाद के साहित्य ग्रन्थों में इतस्ततः बिखरी हुई सामग्री और साहित्य को एकत्र किया, विविध मान्यताओं, पूजा विधि, उपचार मन्त्रों को संकलन कर लोक सुलभ भाषा में जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत किया है।

'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' उतना ही उपादेय, पाण्डित्यपूर्ण व गहन है जितने कि पूर्ववर्ती दोनों ग्रन्थ हैं। श्री शास्त्री जी इसके लिए साधुवाद के अधिकारी हैं। हम उनके स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन की कामना करते हैं।

दिनांक ६-११-७८ विदुषां वशंवदः
नरोत्तमलाल जोशी

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीः ॥

पण्डित जगदीश प्रसाद दीक्षित बी. ए., एल-एल. बी., आर. ए. एस. रिटायर्ड मजिस्ट्रेट, १६ जोबनेर बाग, जयपुर की सम्मति

पण्डित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री द्वारा विरचित 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' नामक ग्रन्थ देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। प्राचीन वृहत्काय सैंकड़ों ग्रन्थों के सहस्रों प्रमाण संदर्भों द्वारा यह ग्रन्थरत्न पण्डितजी ने अनेक वर्षों तक अहर्निश अकाट्य परिश्रम द्वारा तैयार किया है। यह अमूल्य निधि है। पाठकगण इसका लाभ प्राप्त कर अपना जन्म सफल करेंगे। यह कृति विद्वत् समाज में समादर की जायगी।

दिनांक ५-६-७९ जगदीशप्रसाद दीक्षित

॥ श्रीः ॥

वैद्यराज निरंजनलाल मिश्र भिषगाचार्य, अवकाशप्राप्त अध्यक्ष औषधि निर्माणशाला जयपुर, अधुना मैनेजर श्रीधन्वन्तरि औषधि निर्माण शाला, जयपुर की सम्मति

पंडित रामप्रसाद शर्मा शास्त्री ने सर्वशक्तिमान् भगवान् विष्णु विषयक आगम, निगम, इतिहास, पुराणादि धर्मशास्त्रों की बिखरी हुई बहुविध साहित्य सामग्री को संकलित कर, 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' नामक वृहत्काय ग्रन्थरत्न की उत्तम रचना की है। लेखक का प्रयास स्तुत्य है।

दिनांक ११-११-७८ वैद्य निरंजनलाल मिश्र

॥ श्रीः ॥

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि पं रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री ने अपनी तत्त्व-दर्शन शृङ्खला में एक और अनुपम कड़ी जोड़ दी है—शिव-तत्त्व-दर्शन तथा शक्ति-तत्त्व-दर्शन पहले ही प्रकाशित हो चुके थे। अब यह तृतीय ग्रन्थ 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' सैकड़ों वृहत् ग्रन्थों का सार तत्त्व चुनकर लेखक ने अथक परिश्रम द्वारा प्रस्तुत कर आस्तिक जनता का महदुपकार किया हैं। सनातन धर्मावलम्बी जनता एवं वैष्णव भक्तों के लिए तो यह अमृत कलश है। जिज्ञासु पाठक इसके द्वारा अपनी ज्ञान पिपासा शान्त कर भगवान् विष्णु की शरण ग्रहण करके अपना इहलौकिक तथा पारलौकिक जीवन सफल करेंगे। इस कठिन सफल प्रयास के लिए मैं लेखक को बधाई देता हूँ। आशा करता हूँ कि पण्डित जी अपना शेष जीवन इसी प्रकार सनातन धर्म की सेवा में लगाते रहेंगे।

दिनांक १३-१०-७८ सूर्य्यनारायण माथुर, बी. ए., सी.टी.,
शान्ति निकेतन ईशावास्योपनिषद् के हिन्दी व्याख्याकार
आर्यनगर, अजमेर अवकाशप्राप्त निरीक्षक, शिक्षा विभाग
(राजस्थान) भूतपूर्व खेतड़ी राज्य

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्री हरिः ॥

'ऋतंच सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत'—सत्यात्मा भगवान् विष्णु के वाङ्मय रूप वेद शास्त्रों का गूढार्थ ज्ञान होना बिना उग्र तपस्या के दुःसाध्य है। इस गुहानिहित धर्मतत्त्व को साधारण स्वाध्यायप्रेमी भक्तजनों के लिये सुलभ एवं सुविज्ञेय बना देना पण्डित रामप्रसाद जी शास्त्री के अनवरत तप का ही फल है। वास्तव में आपकी यह निष्काम तपस्या प्रशंसनीय है।

इस अर्थप्रधान युग में मनोरञ्जक साहित्य लिखने वाले लेखक मिल सकते हैं; परन्तु ब्रह्मार्पण बुद्धि से सहस्रों पृष्ठों के ग्रन्थ लेखक, सहस्रों वेद-वेदाङ्ग ग्रन्थों के पठन-मनन द्वारा सार तत्त्वों को सरल सुबोध भाषा में सँजोकर प्रस्तुत करने वाले निष्काम कर्मयोगी विरले ही मिलेंगे। भक्तिज्ञान उपासना रूपी त्रिपथगा बहाने में जो आपने भगीरथ प्रयत्न किया है उसके लिए कोटि-कोटि धन्यवाद।

किं च—पाठकों के प्रति —

किं ससार सुखेप्सया भ्रमथ भो तृष्णातृषाकातरा।
विष्णोस्तत्त्वविवेचनं सर इदं हंगं त्वावगाह्यं शनैः ॥१
सोपानैरवतारवर्णनमयैः स्कन्धैश्चतुर्भिर्युतम्।
साक्षात् क्षीरनिधिर्यथा भगवता श्रीविष्णुनाधिष्ठितम् ॥२
प्राप्ता सन्मतिमन्दरेण महता निर्मथ्य शास्त्राणवम्।
श्रीवेदोपनिषत्पुराणपयसा पूर्णं प्रसादात् प्रभोः ॥३
विष्णोर्नाम चरित्रचित्र खचित प्रत्येक मुक्तामयी।
मालेयं त्रिगुणात्मिका किल सतां कंठे सदा शोभताम् ॥४

दिनांक १८ जून १९७९

पं. हनुमत्प्रसादमिश्रः शास्त्री
पं. रत्नलाल जोशी शास्त्री
खेतड़ी (झुंझनू) राजस्थान

॥ श्रीः ॥

सम्मति

विष्णु-तत्त्व-दर्शन ग्रन्थ का अवलोकन किया। भगवान् विष्णु एवं उनके अवतारों के कारण तथा उनके चरित्र कथाएं, उनकी तात्त्विक विवेचना, भगवान् के आयुध, वाहन, पार्षद, वैकुण्ठधाम का वर्णन, उनको प्रसन्न करने वाले पूजा-विधान, क्रियायोगों का साङ्गोपाङ्ग वर्णन, अनेक वेद, पुराण, धर्मशास्त्रों के प्रमाणों सहित एक ही ग्रन्थ में प्राप्त कराने का कठिन सफल प्रयास किया गया है। वस्तुतः भगवान् विष्णु विषयक हिन्दी भाषा में सर्व प्रथम इस बेजोड़ ग्रन्थ का निर्माण किया गया है। हम ग्रन्थ प्रणेता शास्त्रीजी का अभिनन्दन करते हैं। दिनांक ८-११-७८

शिवगोपाल मेहरोत्रा
प्रबन्ध सम्पादक आनन्द प्रचार मण्डल, देहरादून, (उ. प्र.)

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

।। श्रीः ।।

पंडित योगेश्वरदत्त शास्त्री दैवज्ञभूषण कविराज एवं भृगु ज्योतिषी वाराणसी

भारतीय मानव समाज चरमोत्कर्ष प्राप्ति के लिए सर्वदा ही प्रयत्नशील रहा है। उत्तमोत्तम धार्मिक कर्मों द्वारा ही मनुष्य देव-स्वरूप एवं अधमातिअधम कर्मों द्वारा प्राणी दानव रूप धारण करता चला आ रहा है। उत्तम धर्म-कर्म संस्कृति के प्रभाव द्वारा ही विश्व की सभ्यता में भारत सर्वदा अग्रगण्य रहा है। अधर्म वृद्धि होने पर भगवान् मिष्णु बारम्बार अवतरित होकर दुष्टों का दमन करते हैं। निष्काम कर्मयोगी परमहंस विदेहराज जनकादि उत्तम कर्मों के प्रभाव से परम-सिद्धि को प्राप्त हुए हैं।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में सभी प्रकार के उपकरण अलङ्कारों से समृद्ध होने पर भी यदि हम अपने भारतीय प्राचीन आध्यात्मिक परम सम्पदा की अवहेलना कर भूल जायेंगे, तो भीषण कालमुख से पतित होकर मनुष्य जीवन नष्ट करके नीचकर्म भोगने के लिए ही बाध्य होना पड़ेगा। कर्मफल से बचाने वाला कोई नहीं है। इसीलिये ऋषि-महर्षियों की गति एवं मति रही है कि धर्म-ज्ञान पिपासुओं को उत्तम सन्मार्ग ज्ञान प्रदान करने वाले शास्त्रों की रचना होती रहे। प्राचीन धर्मशास्त्र, अध्यात्मज्ञान शास्त्र सभी वेदवाणी तथा संस्कृत में होने के कारण संस्कृत भाषा में हैं। इसलिए पण्डित रामप्रसाद जी शर्मा शास्त्री ने वेद, वेदान्त, पुराण, धर्मशास्त्रादि के नवनीत के रूप में प्रथम 'शिव-तत्त्व-दर्शन', द्वितीय 'शक्ति-तत्त्व-दर्शन' की रचना सरल मृदुभाषा हिन्दी में की है जिनका धार्मिक साहित्य जगत् में यथेष्ट समादर हुआ है। अब 'विष्णु-तत्त्व-दर्शन' देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिसमें कई एक दुर्लभ धर्मशास्त्रों का सारभूत तत्त्व प्रस्तुत किया है। इस अद्वितीय ग्रन्थ की रचना द्वारा धार्मिक जनता तथा विद्वानों का कल्याण मार्ग प्रशस्त कर अद्भुत् आश्चर्यमय विद्वत् वरेण्यता का परिचय दिया है।

मुझे आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास है कि यह ग्रन्थ प्रकाशित होने पर धार्मिक जिज्ञासु विद्वत् समाज में अत्यधिक समादर प्राप्त करेगा।

भगवान् विष्णु विषयक इस प्रकार का साङ्गोपाङ्ग सरल सुबोध ज्ञानमय अनेक शास्त्र प्रमाण पुष्ट ग्रन्थ हिन्दी भाषा में सर्वप्रथम प्रकाशित हो रहा है। इसके लिए श्री शास्त्रीजी अनेक धन्यवाद के पात्र हैं। मैं भगवान् विष्णु के चरणों में श्री शास्त्रीजी के स्वस्थ और दीर्घायुष्य की करबद्ध प्रार्थना करता हूँ।

दिनांक १५ मार्च १९८०

योगेश्वरदत्त शास्त्री

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

॥ श्रीहरिः ॥

शुभसम्मति

सनातन धर्म के महान् विद्वान् पूज्यपाद पं. रामप्रसादजी शर्मा शास्त्री द्वारा निर्मित विष्णु-तत्त्व-दर्शन देखने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ और देखकर हृदय गद्‌गद् हो गया।

पूज्यपाद शास्त्रीजी महाराज ने यह अद्‌भुत ग्रन्थरत्न प्रदान करके सनातन धर्म की उत्तम ठोस सेवा का अद्‌भुत विलक्षण कार्य किया है। सनातनधर्मी जगत् इनका सर्वदा ऋणी रहेगा। इस ग्रन्थ को देखकर हृदय भगवान् श्री विष्णु के प्रेम में निमग्न हो जाता हैं। आशा है, विष्णु भक्त इस अद्‌भुत विलक्षण ग्रन्थ का पूर्ण लाभ प्राप्त करेंगे और भगवान् विष्णु की भक्ति द्वारा अपना जन्म सफल करेंगे।

भक्त रामशरण दास
पिलखवा, जिला गाजियाबाद

दिनांक २३-१२-७८

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

विष्णु-तत्त्व-दर्शन

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	२०	वंन्देः	वंदेः
६	१४	पाते हैं (मुद्रण में रह गया है) अतः	भगवद्भक्त के लिए सब काल, स्थिति तथा दिशाएं सुखमय हो जाती हैं।
६	२७	निर्माण किया है। (मुद्रण में रह गया है) उन्होंने	और भी उन्होंने अत्यन्त विस्तीर्ण त्रिलोकाश्रम अन्तरिक्ष का निर्माण किया है।
७	२०	जन्म और (मुद्रण में रह गया है) दिव्य	कर्म
२६	८	पति	पीत
४०	१५	निश्चयार्थ	निःस्वार्थ
४१	२२	बाधा डाली	बाधा न डाली
४४	१४	महाराज ! हटा दें। आपके ही हैं।	महाराज ! आपके ही हैं।
४७	२९	होता हटा दें कि सारांश	उत्तम होता कि कतिपय सारांश
४८	१	यावत्—	याव—
६२	१८	क्षत्र	क्षेत्र
७२	२	सोपान ४१	सोपान १४
७३	१५	असृत	अमृत
९०	१५	३१।४७	३१।४९
९६	१	पाकर	न पाकर
९८	१८	साधयात्मान	साधयात्मानं
१०२	२३	क्षीहरि	श्रीहरि
१०२	२४	नित्थकर्मों	नित्यकर्मों
१२१	१	वे भी	ने भी
१३२	५	क्ररैरनार्यैः	क्रूरैरनार्यैः
१३२	२५	कहने के	कहने से
१३७	४	सभी	भी
१५१	९	है	था
१६७	६	बससे	सबसे
१७४	१२	त्रान	त्राण

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७९	१७	बहद्वादी	वृहद्वादी
१८०	२२	मा	मां
१८७	२२	निष्प्रञ्च	निष्प्रपञ्च
१९५	२८	यस्तु लसीं	यस्तुलसीं
२००	२९	सुभ्र	सुभ्रू
२०२	४	जिज्ञास	जिज्ञासु
२१२	२१	सर्वतीर्थफफ	सर्वतीर्थफलं
२२१	१२	प्रसन्नतापूवक	प्रसन्नतापूर्वक
२२६	२७	भुजङ्गभूषण	भुजङ्गभूषण
२२८	२९	परमोत्कुष्ठ	परमोत्कृष्ट
२३३	९	चक्रवती	चक्रवर्ती
२३६	२१	योगिविज्ञानगम्यं	योगिभिर्ज्ञानगम्यं
२३६	२२	सम्प्रद्यस्व	सम्प्रपद्यस्व
२३७	२२	नाम भेदः	नामभेदैः
२३९	१३	धर्माविबम्बी	धर्मावलम्बी
२४२	३०	पाठों	पीठों
२४५	१	कालीय	कालिय
	४	(रंगमहल,	(रंगमहल),
२४६	१५	कृम्भपर्व	कुंभपर्व
२५२	१८	तैरमुक्ता	तैरभुक्ता
२५४	३	वरम	वरम्
२६०	१६	ओंकारेश्वर	ओंकारेश्वर
२६४	२०	चर्मवन्ती	चर्मण्वती
२६८	६	गुलाबी	गुलाबी
२७०	३१	वेंकटेश्वर	वेंकटेश्वर
		,,	,,
२७१	२		
२७५	३	वृहस्पति	बृहस्पति
२७९	१७	उपर	ऊपर
२८१	२८	सर्वपापैः	सर्वपापैः
२८६	२५	स्वंगलोके	स्वर्गलोके
२९०	२१	नामावनी	नामावली
२९२	१८	लोकाश्चचैत०	लोकाश्चैत०
२९३	२३	स्तुन्वन्ति	स्तुवन्ति

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

२९९	१४	चन्द्रविम्ब	चन्द्रविम्ब
३०५	११	चतुभुजं	चतुर्भुजं
	१२	नमः	मनः
३११	२०	बृहपस्ति	बृहस्पति
३१५	६	विप्लृ	'विष्लृ
३१६	३	अमुसार	अनुसार
	८	त्रिर्थादिकों	तीर्थादिकों
३१८	४	स्रष्ट्ट	स्रष्टृ
	४	त्वडसंस्थितम्	त्वंडसंस्थितम्
	२१	आवागमन)	(आवागमन)
३१२	१५	षोडषाशोऽयं	षोडशांशोऽयं
३२०	२१	प्रकिर्तिता	प्रकीर्तिता
३२२	३	त्व	त्वं
३२४	१६	द्विव्यं	दिव्य
३२६	२७	० त्ममाययमा	० त्ममायया
३२८	८	फँसात	फँसता
३२९	१९	गोपङ्गनाओ	गोपाङ्गनाओं
३३१	१	त्वमप्येयां	त्वमप्येषां
	२	में	मे
	२	तिष्ट	तिष्ठ
३३२	४	युधिष्ठर	युधिष्ठिर
	७	"	"
३३३	६	अपकी	आपकी
३३७	२३	अवाप्स्यासि	अवाप्स्यसि
३४१	८	उच्छिष्ठ	उच्छिष्ट
	२४	अमुच्यते	प्रमुच्यते
३४६	२३	निति	नीति
३५०	२८	म	में
३५३	३	पृच्छासि	पृच्छामि
६५४	५	आरूड़	आरूढ़
३५६	१	इत्यं	इत्थं
३५७	१७	पुण्डरीकांक्ष	पुण्डरीकाक्ष
	२२	द्वन्द	द्वन्द्व
३६५	२४	भुड़क्ष्व	भुङ्क्ष्व

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३७३	२०	गरन	मरन
३७७	२८	मरीच	मारीच
३८०	१४	ऋषिय	ऋषियों
३८१	१०	कुमारभाव	कुमारभाव
३८३	२१	सितकृष्णो	सितकृष्णे
३८४	१७	स्वयम	स्वयम्
३८५	८	विवुधान्	विबुधान्
	१९	ब्रह्मण्ड	ब्रह्माण्ड
३८६	९	एवेद	एवेदं
३८८	१०	अनुगृहित	अनुगृहीत
	२३	अहमेव०	अहमेवं
३८९	५	कष्णं	कृष्णं
३९२	२१	गणेश	गणेशः
	१३	गणेशगीता)	(गणेशगीता)
३९३	२२	विष्णुरिश्यते	विष्णुरिष्यते
३९४	५	भुर्भुवः	भूर्भुवः
	६	वगाः	बागाः
	२५	अीर	और
	२८	हैं	है
३९५	२०	प्रष्ठित	प्रतिष्ठित
३९८	२४	० मिद् सर्वम	० मिदं सर्वम्
३९९	६	घटस्थलजल०	घटस्थजल०
४०१	१७	अस्तित्त्व	अस्तित्व
४०७	७	सर्वज्ञ	सर्वत्र
४०९	२४	राजर्जसिहासन	राजर्सिहासन
४१०	२२	ययति	ययाति
४११	३२	हृषिकेश	हृषीकेश
४१३	३३	विहरेण	विरहेण
४१८	३	चाहिथे	चाहिए
४१९	२०	अङ्गार	शृङ्गार
४२१	१७	प्राप्ति	प्राप्त
४२४	१३	सों	सो
४२७	१७	गङ्गसामं	गङ्गासमं

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४२८	८	मुनिश्वर	मुनीश्वर
४३१	१८	पारण	पारणा
४३५	२०	यददूतों	यमदूतों
४३६	११	स्वामा	स्वामी
४४०	२९	उल्लङ्घन	उलङ्घन
४४७	१८	पूजने	पूजने
४५१	१६	गह्वां	गङ्गां
४५५	२१	ना पुनर्भवम्	नापुनर्भवम्
४६१	१३	सिद्धिनां	सिद्धीनाम्
४६२	४	ब्रवन्	ब्रुवन्
	१८	वासु देवा०	वासुदेवा०
४६७	१३	पापेम्यो	पापेभ्यो
४७०	१२	में में	में
	२०	मृत्युदिकाणजा	मृत्युद्रेष्काणजाः
४७१	६	परवार्थवित्	परमार्थवित्
	३२	प्रमी	प्रेमी
४७९	१३	० ताङ्घ्रिनपद्मं	० ताङ्घ्रिपद्मं
	२६	दीष्यन्ते	दीप्यन्ते
४९२	८	FORCESS	FORCES
४९३	१५	SUBCONCI—	SUBCONSCI—
५९७	२२	सर्वेश्वरी	सर्वेश्वरी
४९९	१५	यया	गया
५०२	१४	सक्षेप्यते	संक्षेप्यते
	३०	परिस्थिति में भी अनुपूर्णरूप	अनुपस्थिति में भी पूर्ण रूप से
५०३	२	ऐस	ऐसा
५०४	१६	चौबीत	चौबीस
	२७	अधोवस्त्रधृतं	अधोवस्त्रधृतं
५०५	३	करवीर)	(करवीर)
	१६	विल्लवपत्र	विल्वपत्र
	२२	वृन्तहनै	वृन्तहीनै०
५०९	१७	अगुष्ट	अंगुष्ठ
	२०	,,	,,
५१६	३१	समर्पण करते समर्पण करते	समर्पण करते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५१८	३	हयविघ्नकृत	हयविघ्नकृत
५१९	१८	भुति०	भूति
	२२	श्रीभद्भगवतो	श्रीमद्भगवतो
	२६	अमुयतौं	अमुकतौं
५२४	९	—आरती	आरती—
५२७	२१	पूजनावधि	पूजनविधि
५२९	६	आत्म सस्थ०	आत्मसंस्थ०
५३३	१०	भूभुवः	भूर्भुवः
५३५	७	भगवानू	भगवान्
५३६	१	मघामिघे	मघाभिधे
५४३	२	विद्वानू	विद्वान्
	५	दशिणावर्त	दक्षिणावर्त
५४४	६	०महसिद्ध०	०महासिद्धि०
	२५	प्राकस्त्रोतस्यां	प्राक्स्रोतस्यां
५४५	३	श्रद्धधानः	श्रद्धधानः
५४८	२४	शुखाकर०	मुखाकर०
५४९	१	सन्त	सन्तं
५४९	२९	०मपयामि	मुपयामि
५५०	४	दुर्वा कुरान्	दूर्वाङ्कुरान्
५५१	६	परिधयस्त्रि०	परिधयस्त्रि०
	१५	रूचाय	रुचाय
५५२	१	समृद्धयर्थं	समृद्धयर्थं
	११	दिव	दिवः
५५७	११	स्तस्ति	स्वस्ति
	१६	बाहुरुत०	बाहूरुत
	१९	सवर्पयेतत्	समर्पये तत्
५५८	६	०मारोग्य ा०	०मारोग्यमा०
५६१	२०	महाराज	महाराज
५६२	१४	बती	बत्ती
५६३	१	पञ्चा०	पञ्च०
५६६	१७	गवे	गये
५६९	१६	प्रभ्तुत	प्रस्तुत
५७९	२	बाइ	बाइं

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

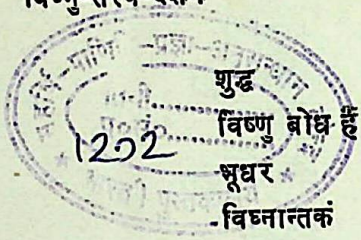

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५८२	८	विष्णु हैं	विष्णु बोध हैं
	१०	भूदर	भूधर
५९२	२	घ्नान्तकं	विघ्नान्तकं
	१७	सर्वमिद	सर्वमिदं
	२४	०नाशकर	नाशकरं
५९३	४	बडबानल	बडवानल
	२१	धर्मस्य	धर्मस्य
५९८	१२	प्रातर्भजामि	प्रातर्भजामि
५९९	३३	द्रतु	द्रुतुं
६०३	३	प्रत्यक्ष	प्रत्यक्ष
	३१	सजै	साजै
६०५	३	मे	में
६०७	१३	सुहृत	सुहृद्
६०८	३२	कामानू वा०	कामानवा०
	३२	०बन्धया०	०बन्धना०
६०९	३	शृणुयाद्धा०	शृणुयाद्धा०
६१०	२४	०धर्म०	०धर्म०
६११	८	कर्णपपन्त	कर्णपर्यन्त
६१३	४	के जप	का जप
६१५	२०	नान्य	नान्यं
६१७	२०	श्रद्धा०	श्रद्धा
६१८	२४	समाधा	समाधौ
६२१	४	कुञ्न	कुञ्ज
६२२	२७	चाहिथे	चाहिए
६२५	२६	उकृष्ट	उत्कृष्ट
६२६	२४	वपुर ०	वपुरा
	२७	समति	समर्पित
६३०	१६	नस्तर्क्यो०	नस्ताक्ष्यो०
६३१	३	मडप	मंडप
६३३	९	सर्व्	सर्वं
६३४	१	न्यास्येन	न्याय्येन
	१२	स्वस्य	स्वस्य
६४०	३१	अनुगृहितः	अनुगृहीतः

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४३	३१	जगद्‌ाचार्य	जगदाचार्य
	२३	वां शकला०	वांशकला०
	२४	०दव गम्यते	०दवगम्यते
	२९	कस्पाप्यं शक०	कस्याप्यंशक०
	३१	करोत्वि०	करोत्वि०
६४५	५	किया योग	क्रियायोग
	१६	विज्ञातेत्	विज्ञातेन
	३१	आध्यात्मक	आध्यात्मिक
६४६	३	फूंख	फूंक
	१०	कृष्णाआश्रम	कृष्णआश्रम
६४७	३०	दर्शने नैव	दर्शनेनैव
		०तिष्टताम्	तिष्ठताम्
६४८	२४	प्रगीत	प्रणीत
६५३	१२	पा	या
	१८	वी	वो
६५६	६	०प्रसादामियै	०प्रसादामिधैः
६५७	४	गृहित	गृहीत
	६	०हरण कीलस्य	०हरणशीलस्य
६५७	२७	अध्येताव	अध्येता व
६५९	१६	संगृन्हणत्वनु०	संगृह्‌णन्नु०
६६१	१५	तपोबृंहिते	तपोपबृंहिते
६६२	११	इत्यबिधया	इत्यभिधया
६७०	१९	कृष्णाकान्त	कृष्णकान्त
६७७	१३	ससार	संसार
६७८	८	मिष्णु	विष्णु

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र जी
वेदविभागाध्यक्ष
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी
द्वारा प्रदत्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र जी
वेदविद्याध्यक्ष,
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी
द्वारा प्रदत्त

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By SIddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized By Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

CC-0, Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.